TIGHT BINDING BOOK

Uneven Number Pages With In The Book Only

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182890

UNIVERSAL
LIBRARY

Nagari-Pracharini Granthmla Series No. 4-14

THE PRITHVÍRÁJ RÂSO

OF

CHAND BARDÂI,

EDITED

BY

Mohanlal Vishnulal Pandia, & Syam Sundar Das, B. A.

WITH THE ASSISTANCE OF KUNWAR KANHIYA JU.

CANTOS LVIII to LXI.



महाकवि चंद बरदाई

कृत

पृथ्वीराजरासो

जिसको

मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या और श्यामसुन्दरदास बी. ए. ने

कुँअर कन्हैया जू की सहायता

से

सम्पादित किया।

पर्व्व ५८ से ६१ तक।

PRINTED BY THAKUR DAS, MANAGER AT THE TARA PRINTING WORKS, AND PUBLISHED BY THE NAGARI-PRACHARINI SABHA, BENARES.

1908.

मूल्य १) Issued 15th July 1908. [*Price Re. 1/4/.*

सूचीपत्र ।

—:o:—

(६८) दुर्गा केदार समय	पृष्ठ	१६६४	से १६६१ तक
(६९) दिल्ली वर्णन	,,	१६६३	,, १६६४ ,,
(७०) जंगम कथा	,,	१६६६	,, १६७६ ,,
(७१) कनवज्ज समय (अपूर्ण)	,,	१६७७	,, १६७२ ,,
रासोसार	,,	१०९	,, २३० ,,

———o———

अमि पटापेलय मेल [1]मेलय खूर तुट्टहि सुभ्भरं ॥ छं० ॥ २३० ॥
परि सोम हक्कहि धर हहक्कहि अंत पाइ अलुभ्भरं ॥
उठि उट्ठि क्कसि केम उक्कमि सांइ सुथ्थल [2]जुभ्भरं ॥
एकेक चंपहि पीठ नंपहि धरनि धर परिपूरयं ॥
हक्कियं सु वेगं अल्लिय महमद करिय ट्रग्ग करूरयं ॥ छं० ॥ २३१ ॥
सम चलै गज्जह देपि रज्जह जीह हनि हनि जंपियं ॥
आवंत दून मसंद राजह देपि चच्चर चंपियं ॥
हनि मंग जरह प्रान पूरह दो कलेवर गोड़यं ॥
विट्ठ वि राजह परे गाजह संगि एक पराड़यं ॥ छं० ॥ २३२ ॥
रस रुद्र बीर भयान मच्चिय काल नच्चिय नोदयं ॥
हक्कीय राज दुअप्प सुभ्भर बीर बीरह मोदयं ॥
हुंकि खूर मंत गयन्द लग्गिय बाह चंपिय आवधं ॥
ढिल्लि असुर मयंन पिंड पंचह चंपि जंपिय मावधं ॥ छं० ॥ २३३ ॥
जामेक जुद्ध अरुझ लग्गिय बीर जंपिय बीरयं ॥
सिद्धीय सिद्धय मंत रामह ग्रध्र सोनह मीरयं ॥
... ॥
... ... ॥ छं० ॥ २३४ ॥

वरनी युद्ध वर्णन ।

कवित्त ॥ हय गय हय हय अरथ । रथ्थ नर नर सों लग्गा ॥
हय सों हय पायल सु । पाय कर सों कर भग्गा ॥
ईस आन बर चवै । खूर खूरन हक्कारिय ॥
मार धार झिल्लै । प्रहार बीरा रस धारिय ॥
घरि एक भयानक रुद्र हुअ । मीस माल गंठी सु कर ॥
कविचंद दंद दुअ दल भयौ । मुगति मग्ग पुल्लै विदर ॥छं०।२३५॥

लोहाना का फुर्तीलापन ।

साटक ॥ मौतं [3]गोप सरेत भीतय बरं नर जोति दिष्पी गुरं ॥
रंभं रंभ सुरथ्थयं च अमृतं आलंब बाहं बरं ॥

(१) ए. कृ. को.-सेलहि । (२) ए. कृ. को.-जुथ्थरं । (३) ए. कृ. को.-तोप ।

दिस्टी दिस्टि विभारथोवि सरसा भारथ्थ बिय बुद्धयं ॥
गोरी सा सुरतान रुक्कति तयं आजानबाहं बरं ॥ छं० ॥ २३६ ॥

लोहाना और पहाड़राय का शाह पर आक्रमण करना और यवन सेना का उन्हें रोकना।

दूहा ॥ लोहानो आजान वर। लोहा खंगरि राव ॥
कट्ठे लंबी तेग वर। साह सनंमुष धाव ॥ छं० ॥ २३७ ॥
मज्झि [1]सेन तूंअर सुभर। [2]वट्टिय हय चढ़ि षेत ॥
समुह साहि दिष्पी सु द्रग। बंध्यौ बंधन नेत ॥ छं० ॥ २३८ ॥

नराच ॥ सु दिट्ठि दिष्पि फौजयं, पहार साहि सम्मयं।
चढ्यो सु राव सूर मंत, दिष्पि सम्म रम्मयं ॥
मचे सु राम बीर बीचि, माजि गाज उट्ठए।
कढ़े सु सस्त्र मारि झारि, मीर सीम तुट्ठए ॥ छं० ॥ २३९ ॥
मिली दु फौज हक्कि धक्कि, अन्य अन्य आवधं।
जयं सु अप्प बंछि बंधि, बीर संधि मावधं ॥
तुटे सु पग्ग भग्ग भार, दंत उट्ठि दामिनी।
बरंत सूर मीर धीर, काम [3]बंछि कामिनी ॥ छं० ॥ २४० ॥
बरंति सूर अच्छरी, सु देह रोहि रथ्थयं।
ग्रहंत अग्नि एक पंति, उड्ढ जात तथ्थयं ॥
मच्चो करार धार मार, मार सार धारयं।
परंत एक तुट्टि तेग, उट्ठि झार मारयं ॥ छं० ॥ २४१ ॥
करें किलक्क बीर हक्क, सद्दि कंठ पूरयं।
रमंत रासि भीर भासि, नंदि नंचि नूरयं ॥
तुटंत सीस रोम रीस हक्कयं धरप्परं।
. . . .

वहंत सार बार पार ता करंत अंतरं।
ग्रहंत दंत दंत एक कंठ कंठ मंतरं ॥ छं० ॥ २४३ ॥
झटा सु डाक झाक धाक साल सेल संमुहं।
करंत घाव जंम 'डाव घाव घाव रंमहं ॥
हुअंत पंड पंड घाउ सुन्नरं वगत्तरं ॥
परंत बाजि पंड भाजि मुंडरं सु पय्परं ॥ छं० ॥ २४४ ॥
झरंत मत्त सुंड दंत पंड पंड चिक्करं।
ठिलं सु मोर एक धोर नट्ठि षेत निक्करं ॥
चली सु फौज खप्पि साहि रोहि गज्ज सज्जियं ॥
इकारि मोर बग्गकारि षग्ग धारि गज्जयं ॥ छं० ॥ २४५ ॥

क्षत्रिय वीरों का तेज और शाह के वीरों का धैर्य्य से युद्ध करना।

कवित्त ॥ बीर बीर घुट्टए। बीर बीरह आहट्टे ॥
मार धार बज्जे प्रहार। मद झों दुअ जुट्टे ॥
रन इक्कारें राव। सिंघ पर रन सु छुट्टे ॥
वर उतंग भर सुभर। अप्प पर अनत न छुट्टे ॥
बर बीर साहि दिष्यौ निजरि। सां घुल्लै कुल चादि मह ॥
जाने कि काल जोहा उक्कसि। उद्दिग बाह [2]पगार बह ॥
छं० ॥ २४६ ॥

दूहा ॥ हय गय रथ्थ अरथ्थ हुअ। नर सों नर नर लग्ग ॥
मघन घाद्द उर बज्जते। भय भौंभर द्रग भग्ग ॥ छं० ॥ २४७ ॥
हुअ इकार गज्जिय सु भर। जुटे साहि तसीख ॥
मानों मत्त गयद दा। जुटि अंकस बिन पीख ॥ छं० ॥ २४८ ॥

उक्त दोनों वीरों का युद्ध और अन्य सामंतों का उनकी सहायता करना।

(१) प. क. को.-दाव। (२) मो. पमार।

भुजंगी ॥ जुटे जोध जोधं अभंगं करालं। उठे मुष्य नामा नयन्नं बरालं॥
मिले लोह कोहं अमम्मान लग्गे। परे लोह लत्तं निघत्तं करग्गे ॥
छं० ॥ २४९ ॥

दुअं दीन दीदेर ते लोह [1]छक्के। फिरै गेंन देवी हकारंत हक्के ॥
भए चाल बधं [2]ममंदं ममंदं। करें हूक हक्कं सु आवंत मद्दं ॥
छं० ॥ २५० ॥

ढरें मंध बंधं बहैं पग्ग धारें। मनों चक्क पंकं कुलालं उतारें ॥
लगे [3]मेंग अंगं कढ़ें बार पारं। बहै जानि जादक्क ओनं प्रनारं ॥
छं० ॥ २५१ ॥

लगै गुर्ज सीसं दुअं हथ्थ जोरं। दधी भाजनं जानि हरि ग्वाल फोरं॥
मिले हथ्थ बथ्थं गहै सीस केसं। जरे जम्म दहूं महा मल्ल भेसं ॥
छं० ॥ २५२ ॥

करें छुल्लिका जुद्ध [4]कित्तेति वीरं। दिपें भेज अंगं मनों मुंड चीरं॥
रुपे बीर सामंत डिग्गे न पग्गं। तुटै सीस धक्कै धरं हक्क अग्गं ॥
छं० ॥ २५३ ॥

चले ओन पारं मची कीच भूमी। अभूतं सु कंकं महाबीर भूमी॥
जहा पान तत्तार रुपि राह रूपं। तहां चक्क रुपी प्रथीराज भूपं ॥
छं० ॥ २५४ ॥

मिले मुष्य गोयंद चहुआन कन्हं। जुरे जैत बल्लिभद्र परमंग नन्हं ॥
परे मेच्छ व्यूहं सु पावै न जानं। करी पारमं कोपि चहुआन आनं॥
छं० ॥ २५५ ॥

गहों साहि गोरी हरों स्वामि चामं। बहै सथ्थ लोहान ओं काल ग्रामं॥
मुच्यौ पान तत्तार अप्पार मारं। परे सेत अंगं अभंगं अपारं ॥
छं० ॥ २५६ ॥

लिये जोति वाजिच हस्ती तुरंगं। तक्यौ तोमरं साहि मज्यौ कुरंगं॥

(१) प. क्र. को. छक्के, ढक्के। (२) प. क्र. को. ममंदं।
(३) प. क्र. को. मंग। (४) मा. किने म।

* .... । .... ॥ छं० ॥ २५७ ॥

यवन सेना का पराजित होकर भागना।

कवित्त ॥ [1]लुथ्थि लुथ्थि आहुट्टि । लुथ्थि पर लुथ्थि अहुट्टिय ॥
यां पुरमान ततार । पान रुस्तम बे जुट्टिय ॥
अबर सेन अध लथ्य । तेह घाइल भर भग्गिय ॥
महम [2]मत्त परि पित्त । मुष्य सामंत विलग्गिय ॥
मर्त्तंति लोह छक्के गरुअ । हरुअत्तन करि गरुअ किय ॥
भग्गौ सु तूल सुरतान दल । क्रम्म क्रम्म उट्ठं बरिय ॥छं० ॥ २५८ ॥

छः सामंतों का शाह को घेर लेना।

चढ़त गज्ज साहाब । दिट्ठ पाहार सु दिप्पिय ॥
रा जदव जामानि । राव भोंहा भर लप्पिय ॥
लोहानों आजान । बाह उद्दिग पग्गारह ॥
बिंभराज चालुक्क । देषि पट सामँत मारह ॥
दौरे सु मज्जि असिवर सुमुष । गहो गहो जंपेव सुर ॥
आय ममंद अट्ठे दुदस । मुझझ अलुझिझय साह पर ॥
छं० ॥ २५९ ॥

उत्तह बीस ममंद । दुत्त सामंत मत्त पट ॥
बज्जै मार करार । झार उट्ठंत रुक्क झट ॥
[3]पमरन श्रोन प्रवाह । गाहि रन बीर समथ्थं ॥
परे ममंद ममंद । धरनि सामंत सु हथ्थं ॥
चंप्यौ सु गज्ज गारी गरुअ । रा भोंहा हय सीस गय ॥
घ-यौ सु सब्ब सामंत मिलि । लोहानों गज रोह हय ॥छं०॥२६०॥

लोहाना का शाह के हाथी को मार गिराना।

दूहा ॥ हक्कि तुरी लोहान तब । हन्यौ कंध गज पग्ग ॥
ढरिग सीस पुंतार सम । धरनि दंत दोय लग्ग ॥ छं० ॥ २६१ ॥

*मालूम होता है यहां के कुछ छन्द खण्डित हो गए हैं।

(१) मो.-लुंथ्य। (२) पृ. रा. को. मित्त। (३) पृ. रा. को.-पमरा।

शाह का पकड़ा जाना।

कवित्त ॥ ढरत कंध गज साहि। गह्यौ पाहार पंचि कर ॥
कसिय बाह तूंवर सतेन। हय डारि कंध पर ॥
गह्यौ देषि सुरतान। सेन भग्गे सब आसुर ॥
परी लूटि हय गय समूह। बर भरे दरक 'जर ॥
परे मीर सत्तह सहस। सहस अट्ठ हय 'पंचि गय ॥
दिन अस्त साहि साहाब गहि। दियौ इछ्थ अप्पन सु रय ॥
छं० ॥ २६२ ॥

मृत वीरों की गणना।

दूहा ॥ सय चत्तिय परि हिंदु रन। सत्त एक हय यान ॥
सामंता सब तन कुसल। जय लह्यौ चहुआन ॥ छं० ॥ २६३ ॥

लोहाना की प्रशंसा, शाही साज सामान की लूट होना।

कवित्त ॥ लोह हद मंडीय। मोहि विसमै द्रिग लिन्निय ॥
अहत कंट मंडयौ। होम पासंग सु किन्निय ॥
सकति अग्ग दुभ्भरी। किन्न पूजा कज बद्धिय ॥
सुजस पवन छुट्टयौ। कित्ति चाव दिसि फुट्टिय ॥
आवद्ध रतन लोहान बर। लोहा लंगर धाइयां ॥
आजान बाह बहु भूप बल। गहन तेग उच्चाइयां ॥ छं० ॥ २६४ ॥
गह्यौ साहि सुरतान। जोध हय गय तहं भग्गे ॥
जमदट्ठां जम दट्ठ। असम असिवर नर लग्गे ॥
चामर छत्र रयत्त। तयत्त लुट्टे सुरतानी ॥
बंधि साह सु विहान। सुकर दीनौ चहुआनी ॥
बर बंध गए ढिल्ली तपत। जै बज्जा बज्जे सघन ॥
सोमेस सुअन संभरि धनी। रबि समान तप मान [3]धन ॥
छं० ॥ २६५ ॥

---

(२) ए.-जारन। (३) ए. कृ. को.-पंचि। (३) ए. कृ. को.-सम।

पृथ्वीराज का सकुशल दिल्ली जाना और शाह से दंड लेकर उसे छोड़ देना।

गहिय साहि आसम्म। गए प्रथिराज अप्प ग्रह॥
पोस मास पंचमिय। सेत गुरवार क्रत्ति कह॥
जोग सक्क गहि साह। सज्जि दिल्ली संपत्तौ॥
अति मंगल तोरन। उछाह नीसान घुरत्तौ॥
दिन तीस रष्पि गोरी गरब्ब। अति आदर आसन वर॥
करि दंड सहस अट्ठइ सु दय। गय सु सत्त खिय मुक्ति कर॥
छं॰॥ २६६॥

दंड वितरण।

दूहा॥ अर्द्ध दंड [1]प्रथिराज पहु। दीनौ राव पधार॥
अवर पंच सामंत अध। दीनौ प्रभुक पधार॥ छं॰॥ २६७॥

इति श्री कविचंद विरचिते प्रथिराज रासके दुर्ग्गा केदार संवादे पातिसाह ग्रहनं नाम अट्ठावनवौं प्रस्ताव संपूर्णम्॥ ५८॥



(१) गो.-पतिसाह।

अथ दिल्ली वर्णनं लिष्यते ।

(उनसठवां समय ।)

पृथ्वीराज की राजसी ।

दूहा ॥ साष साष भट भाष षट । । दर सम वर पुर इंद ॥
तपै सूर सामंत इछ । दिल्लिय चंद कविंद ॥ छं० ॥ १ ॥

दिल्ली के राज्य दरबार की शोभा ।

अति अति रूप अनंत बर । जरि जराव बहु भंति ॥
सभा सिंगारिय सकल भर । मनु सुरपति ओपंति ॥ छं० ॥ २ ॥
मधुरिति छत्र विराज महि । सिंघासन बहु साज ॥
जनु [1]कि मेर उतकंठ महि । सामंत रिद्धि सकाज ॥ छं० ॥ ३ ॥

कवित्त ॥ षट सुभाष षट इंन । बहुत बज्जन तहं बज्जत ॥
रंग राषि षट भंति । करिय सें अट्ठह गज्जत ॥
वपु सुमेर गति सर्प्प । छके षट रिति मद मत्तह ॥
मनहु काम प्रतिबिंब । । लयौ अवतार [2]दिल्लि यह ॥
चल चलत राइ चिहुं चक्क के । आयस रन डंडक गहन ॥
चहुआन भान सम भान तप । रहन वास उड़पति धरन ॥
छं० ॥ ४ ॥

निगमबोध के बाग की शोभा वर्णन ।

नराच ॥ सुधं निगंम बोधयं, जमंन तट्ट सोधयं ।
तहां सु बाग ब्रच्छयं, बने सु गुल्ल अच्छयं ॥ छं० ॥ ५ ॥
समीर तासु बासयं, फलं सु फूल रासयं ।
बिरष्य बेलि डंबरं, सुरंग पान अंमरं ॥ छं० ॥ ६ ॥
जु केसरं कुमंकुमं, मधुप्प वास तं भ्रमं ।

(१) मो.-जनु किरन्न । (२) ए. तिनह ।

अनार दाष पल्लवं, सु छच पत्ति छिल्लवं ॥ छं० ॥ ७ ॥
श्री षंड थंड [1]वासयं, गुलाब फूल रासयं ।
जु चंपकं कदंबयं, षजूरि भूरि अंबयं ॥ छं० ॥ ८ ॥
सु अंननास जीरयं, सतूतयं जँभीरयं ।
अषोट सेव दामयं, अवाल बेलि स्यामयं ॥ छं० ॥ ९ ॥
जु श्रीफलं नरंगयं, सबद्द स्वाद इीतयं ।
चवंत मोर वायकं मनो सँगीत गायकं ॥ छं० ॥ १० ॥
उपम्म बग्ग राजयं, मनों कि इंद्र साजयं ।
.... , ... ॥ छं० ॥ ११ ॥

दूहा ॥ उड़ि सु वास गुलाल अति । उड़ि अबीर असमान ॥
मनहु भान अंबर सुरत । बजी तंति सुरगान ॥ छं० ॥ १२ ॥

दरबार की शोभा और मुख्य दरबारियों के नाम ।

* बेलीविद्रुम ॥ बजि तंति तंचिय बज्जनं । सुरगान [2]सज्जिय सुरगनं ॥
गुलाल लल्लिय अंगनं । आरक्त रंगि परंगनं ॥ छं० ॥ १३ ॥
चहुआन ओपिय छचयं । बंधान बंधिय सचुअं ॥
सामंत दरगह [3]सज्जयं । करतार कोन सु कज्जयं ॥ छं० ॥ १४ ॥
ढरि चमर दुअ भुज छिल्लयं । मधु उपम मधुवन मिल्लयं ॥
गोयंद निद्दुर मलप्पयं । धुर धरन गहिय नप्पयं ॥ छं० ॥ १५ ॥
बनि इंद देव सु वन्नयं । सोमेस बंधव कन्हयं ॥
चष पटिय चप्पन बट्टयं । दस लष्प मीर दवट्टयं ॥ छं० ॥ १६ ॥
रिषि आप आप विधुन्नयं । थिर रहै रिद्धि न युत्तयं ॥
गुररास पिट्ठ विराजयं । जनु वेद ब्रह्म सु साजयं ॥ छं० ॥ १७ ॥

---

(१) ए.-धामयं ।

* इस छन्द को मो. प्रति में दण्डमालची करके लिखा है । वास्तव में कौन छन्द ठीक है इसके लिये हमने प्रचलित हिन्दी पिंगलों की छानबीन की परन्तु कुछ भी पता न चला अस्तु हमने ए. क. को. तीनों प्रतियों के पाठ के मान कर मो. प्रति के पाठ को पाठान्तर में दिया है।

(२) ए. क. को.-सज्जि कि सरगनं । (३) ए. सज्जियं ।

मुष अग्ग चंद [1]सु भष्पनं। रज रीति इह सु रष्पनं ॥
पुंडीर चंद सु पाइरं। नर नाथ दानव नाइरं ॥ छं० ॥ १८ ॥

बनि अन्यो अन्य सु ठौरयं। सुनि तंति सुरगन मोरयं ॥
पिट्ठै स दिट्ठय पासनं। रचि अंब सेत हुतासनं ॥ छं० ॥ १९ ॥

चामंड लष्य सु लष्पनं। रजि हिंदु राज सु रष्पनं ॥
रनधीर सामँत सुभयं। भिरि भंजि मीर सु द्रभ्भयं ॥ छं० ॥२०॥

मुष अग्ग बाजन ठट्टयं। पहु दीप मझ्झल कट्टयं ॥
दोसत्त जुर रा दुष्पनं। चिहु चक्क चारु सु [2]पिष्पनं ॥ छं० ॥ २१ ॥

घुरि चंब सुर तहं बज्जनं। गहि छंड गोरिय गज्जनं ॥
रचि महुल मधुरिति मधुरयं। भ्रम छंडि मंडि सु पिथ्थयं ॥
छं० ॥ २२ ॥

दिल्ली नगर की शोभा वर्णन।

चोटक ॥ घुरि घुम्मिय चंब निसान घुरं। पुर है प्रथिराज कि इंद्रपुरं ॥
प्रथमं दिलियं किलयं कहनं। ग्रह पौरि प्रसाद घना सतनं ॥
छं० ॥ २३ ॥

धन भूप अनेक अनेक भती। जिन बंधिय बंधन छचपती ॥
जिन अश्व चढ़ै [3]घरि अस्सि लषं। बल श्री प्रथु मच्च अनेक भषं ॥
छं० ॥ २४ ॥

दह पोरि सु सोभत पिथ्थ वरं। नरनाह निसंकित दाम नरं ॥
भर हट्ट सु [4]लष्पनयं भरयं। धरि बस्त अमोल नयं नरयं ॥
छं० ॥ २५ ॥

तिहि बीच महल्ल सतष्पनयं। लष कोटि धजी सु कवी गनयं ॥
नर सागर तारँग [5]सुद्ध परें। परि राति सुरायन बादुपरें ॥
छं० ॥ २६ ॥

---

(१) मो. सु भूषनं। (२) ए. कृ. को.-चष्पनं। (३) ए. कृ. को.-घटि।
(४) ए. कृ. को.-सुप्पनयं। (५) ए.-सद्ध।

मचि कीच ओगाहन इट्ठ मझ्झें । दिषि देव कैलासन दाव दझ्झें ॥
[1]रजितार वितारन भंति नवी । परिआनि हुतासन लत्त छवी ॥
छं० ॥ २७ ॥

मनु सावक पावक मद्द, कियं । विन तार अतारन मारि लियं ॥
इन रूप टगं मग चाहनयं । मनों सूर सबै ग्रह राहनयं ॥
छं० ॥ २८ ॥

तिन तट्ट कलिंदय तट्ट सजं । धर मझ्झन तार अनेक सजं ॥
तिन अग्ग सुभंत सु बग्गनयं । लषि लष्पि चौरासिय उद्धनयं ॥
छं० ॥ २९ ॥

पचि लष्पिय नीलिय मालकयं । रतनं जतनं मनि तेज कयं ॥
सुभ दिष्पिय इट्ठ सु नैर मझ्झें । करि दंत मिलंत गिरंत सझ्झें ॥
छं० ॥ ३० ॥

इय सामँत दामित रूप कला । वर बीर उठै घरि सत्त कला ॥
जिन सामँत सामँत सुद्धरयं । घटि बद्धि मँडे गिर दुभ्भरयं ॥
छं० ॥ ३१ ॥

कवित्त ॥ परिहारह बन बीर । आय इय जोरि सु उभ्भिय ॥
भोजन सद्द प्रमान । तहां [2]प्रथु सामँत सुभ्भिय ॥
सभा विसरजिय सूर । आय बैठक बैठारिय ॥
बहुत मंस पकवान । जबुकि प्रथमी आधारिय ॥
घट व्रन्न दरग्गह मोम सुअ । केसर अगर कपूर उर ॥
सामंत नाथ चरचिय सबन । सिव दड्डौ ढुंढा सहर ॥
छं० ॥ ३२ ॥

राजसी पारिकर और सजावट का वर्णन ।

तोटक ॥ इह इंद्र पुरं किधौं दिव्य पुरं । इम उप्पिय मंदिर सोम [3]सुरं ॥
इह मेर किधौं इंद्र चापनयं । बहु भंति जरे मनि पट्टिनयं ॥
छं० ॥ ३३ ॥

(१) ए. कृ. को.-रचिता विरलारन । (२) ए.-प्रिथा, ए. कृ. को.-प्रिथ ।
(३) मो.-मुअ ।

सुर मध्य विराजत सूर समं । सु मनों सुर उप्पर भान भ्रमं ॥
घन मद्धि तड़ित्त कला विकलं । पुर धाम सुभट्ट सधा प्रबलं ॥
छं० ॥ ३४ ॥

सुभ रूप तहां गनिका गनयं । भ्रमि मानव सिद्ध सुरं भ्रमयं ॥
गद्दि तंचिय जंचिय डक्क बजै । जनु मार किधों कुरु कोक सभै ॥
छं० ॥ ३५ ॥

उड़ि बीर अबीर म झारनयं । जनु मेर सुधा गिर धारनयं ॥
लप एक लियै रजनी सजनं । ग्रह रूप अनूपम काम मनं ॥
छं० ॥ ३६ ॥

भरि द्रव्य रमै सब हीर मनं । रमि जूप बदै रमनी गमनं ॥
सब हारि निहारि कोपीन सभै । जब लिद्धिय नारि अपारि दभै ॥
छं० ॥ ३७ ॥

इन मान अमान सु रूप रमै । मनु सिद्धि करामति क्रम्म क्रमै ॥
बनि पंति सुकंत निसान लयं । मुष दिट्ठिय ढिल्लिय माखनयं ॥
छं० ॥ ३८ ॥

मनु रूप अनूप सितं विकनं । भर भीर बढ़ी नह दिट्ठ नयं ॥
[1]घन घोरत सोर अमोघ नयं । मनु वाल सजोवन प्रौढ बनं ॥
छं० ॥ ३९ ॥

सु जहां चहुआन सु भोन सजै । सु मनों ससि कोरन कोर मभै ॥
ग्रह दिप्पिय दासि अवासनयं । तिन सोभ सुकाम करी [2]तनयं ॥
छं० ॥ ४० ॥

बहु रूप रवंन रवंन भतौ । मुष अम्रित सम्रित प्रान पतौ ॥
सुर अट्ठ सषी अँग रप्पि कला । मनु सेस बधू प्रभु की अवला ॥
छं० ॥ ४१ ॥

तिन धाम कलस्सन कोर बनी । जनु अंबर डंबर भान घनी ॥

(१) ए. कृ. को.-घन सोर अमोर ! (२) ए. कृ. को.-नटयं, नठयं ।

सित सत्त कलस्स सु [1]सुंदरयं । तिन मझ्झ सषी बहु सुंदरयं ॥
छं० ॥ ४२ ॥

गज राजत राज सु छचपती । प्रथिराज कैमास इन्यौ सु मती ॥
चहुआन बधू दसयं भनयं । भिरि लिद्धि मंडोवर दंपतियं ॥
छं० ॥ ४३ ॥

सुभ इंछिनियं कनयं [2]सुनयं । रिति छच कला सुर संपतयं ॥
तिय पिथ्थह व्याह पुंडीर कियं । मनु अंबर मद्धि तड़ित्त बियं ॥
छं० ॥ ४४ ॥

भनि नाम चंद्रावति चंद सुती । सुष भाग सुहागन चंद सुती ॥
घर दाहुर दाहिम पुचि दयं । तिन पेट रयन्न कुमार भयं ॥
छं० ॥ ४५ ॥

ससि वृत्त सु भंतिय छष्ण करी । मनु आनिय पीय सु कंध धरी ॥
तिन रूप [3]रुपं मनि लिद्ध रजं । चहुआन सु आनिय देव सजं ॥
छं० ॥ ४६ ॥

बरि लिन्निय षग्ग इंद्रावतियं । जनु मुष्प सरस्वति गावतियं ॥
कुल भान सती सुत हाहुलियं । जनु किस्न रुकंमनयं मिलयं ॥
छं० ॥ ४७ ॥

ग्रह पान सुती सु पजून घरं । मनु चिच कि पुत्तरि आनि धरं ॥
रिनथंभ हंसावति काम कला । तिन दीपति छिप्पत चंद कला ॥
छं० ॥ ४८ ॥

सुर अच्छर मच्छर मान वती । किय अप्प [4]जँजोग संजोग सती ॥
वह रूप अनूप सरूप मती । नह दिप्पिय नागिनि इंद्र सुती ॥
छं० ॥ ४९ ॥

मनु काम [5]धनुंक करी चढ़यं । किधौं षंभ द्रुमं सु हिमं [6]चढ़यं ॥
सुर कोटि चिषंड नयन्न सुजं । तट तास सुबास जमुंन [7]सजं ॥
छं० ॥ ५० ॥

(१) मो.-सन्दरयं । (२) ए.कृ.को.-सुभयं । (३) ए.कृ.को.-रपंमनि । (४) ए.कृ.को..संजोग ।
(५) ए. कृ. को.-धनंक । (६) ए.-चढ़यं । (७) ए. कृ.-सझं ।

तिन तट्ट अनेक [1]गयंद सढं । पग नट्ट गिरं पवनंति बढ़ं ॥
बहु रूप अनूप सरूप भती । दिषि जानि कला सुर देव पती ॥
छं० ॥ ५१ ॥

गज षंभ छुटंत उमह्ह मदं । मनुं गाजत गज्ज अषाढ़ भदं ॥
कि मनों घह उट्ठिय कंठ खयं कि बढ़े मनु उप्पर बहरयं ॥
छं० ॥ ५२ ॥

बहु रंग सुरंग सु वस्त्र दिपै । तिन मेर [2]सिषंन सुभान छिपै ॥
तिन मध्य रयंन कुमार नयं । सुत हूर गयंन विदारनयं ॥
छं० ॥ ५३ ॥

दिनप्रति रमें तट कूलनयं । सुर पेषि सुराथह भूलनयं ॥
तट रेष रिषी सर पालनयं । क्रित नाम सुधारन कालनयं ॥
छं० ॥ ५४ ॥

राजकुमार रेनसी का ढुंढा की गुफा पर जाकर उसका दर्शन करना, ढुंढा की संक्षेप में पूर्व कथा ।

[3]सत तौन बरष्य असी अगलं । जब ढूंढ़ ढँढोरिय भू सगरं ॥
तिन सिद्ध गुफा अवतार लियं । मुनि जानि ब्रह्मा समयं दिषयं ॥
छं० ॥ ५५ ॥

तिन ढिग्ग रयंन कुमार गयं । मुनि जानि कृपाल कृपाल भयं ॥
बजि तारिय भारिय सह बधं । प्रति जीव सु जोति गयंन सिधं ॥
छं० ॥ ५६ ॥

जट जूट विकट्ट भकुट्ट भरं । मधि क्रन्न सुकी सुक मंडि घरं ॥
सुत चंद सु पानि जुगं जुरयं । सिधद्रिग्ग उघारि दिषं नरयं ॥
छं० ॥ ५७ ॥

तिन पुच्छिय बत्त महीं रिषयं । तुम बीसल पुच नरं [4]भषयं ॥
अब किल्लिय दुल्लिय बास कियं । प्रथमं अजमेर कुबेर दियं ॥
छं० ॥ ५८ ॥

---

(१) ए.-मयंद । (२) ए. कृ. को.-सपंन ।
(३) मो.-सित दोय वरष्य असी अलगं । (४) मो.भषनं ।

दूहा ॥ जब उतपंन सु कुंड मझि । दिय रिषि नें बर ताम ॥
जाहु सु पहिलै [1]अजय बन । जुग्गिनि वास सु ठ्ठाम ॥ छं० ॥ ५९ ॥

कवित्त ॥ पुर जोगिनि सुर थान । [2]जुग्गहने ताथें तारिय ॥
सतजुग संकर सधर । परत प्रथिराज सु पालिय ॥
द्वापर पंडव राव । सप्त कौरव संघारिय ॥
कलिजुग पति चहुआन । जिन सु गोरी घर ढारिय ॥
घर जारि पंग [3]पारन रवरि । फिरि दिल्ली चिहुं चक्क धर ॥
मेवात पत्ति इक छच महि । [4]निव अमेव आवट्टि नर ॥छं०॥६०॥

रेनु कुमार की सवारी और उसके साथी सामंत कुमारों का वर्णन ।

दूहा ॥ सुभट सीष दिय भर सबन । रिषि प्रमान करि भीर ॥
बिन तारी करतार बर । तट बहि जमना तीर ॥ छं० ॥ ६१ ॥

घुरि निसान सद्दह धमकि । चढ़ि गज रेन कुमार ॥
मनों इंद्र ऐराप धरि । करिय असुर संघार ॥ छं० ॥ ६२ ॥

पद्धरी ॥ अरोहि गज्ज रेनं कुमार । चढ़ि चले सुतन सामंत सार ॥
सुत कन्हु मन्नि ईसरह दास । दिय देस रहन षट्टू सु वास ॥
छं० ॥ ६३ ॥

सुत निडर बीर चंद्रह [5]जु सेन । पल मारि झारि कर बघ्घ रेन ॥
सम जैत सुअन करनह सु जाव । जिन लिये सच सिर सिद्ध दाव ॥
छं० ॥ ६४ ॥

गोयंद सुतन सामंत सोंह । जिन स्वामि काम नहि खोपि खोह ॥
कैमास सुअन परताप आप । जिन रष्पि धम्म घर वट्ट बाप ॥
छं० ॥ ६५ ॥

पुंडीर धीर सुत चंद्रसेन । जिन चलै सहस है उड्डि रेन ॥

---

(१) ए. कृ. को.-अज्ज । (२) ए. कृ को.-जुगह तेता ते तारिय ।
(३) ए. कृ. को पारि । (४) ए. कृ. को.-निहच मेव आवट्टि नर ।
(५) ए. सु

परिहार पीय सुअ तेज पुंज । मनु दाघ पक्ष कै केलि कुंज ॥
छं० ॥ ६६ ॥

गुररांम सुअन हरिदेव रूप । सुष मिद्ध दिट्ठ कलि परन भूप ॥
हम्मीर सुतन नाहर पहार । दस पंच बरष महि बजिय मार ॥
छं० ॥ ६७ ॥

जग जेठ कुँअर चामंड जांव । जिन लिये कोट दस भंजि राव ॥
सुत महनसिंह जैसिंघ बीर । जिन रष्पि वंस पिचवठ नीर ॥
छं० ॥ ६८ ॥

पंमार सिंघ सुअ राजसिंघ । जुरि जुद्ध रुद्ध उड़ि बाह जंघ ॥
रिनधीर सुतन गुज्जरह राम । दस देस लिद्ध ग्रह अप्प धाम ॥
छं० ॥ ६९ ॥

बरदाइ सुतन जल्हन कुमार । सुष वसै देवि अंबिका सार ॥
हरिसिंघ सुतन पातस नरिंद । गज दंत कढ़े जनु भील कंद ॥
छं० ॥ ७० ॥

विंझा नरिंद सुत देवराज । सो जंग मंझ गज करत पाज ॥
अचलेस सुतन देवराज पट्ट । तन तरुन तेज गंगा सु घट्ट ॥
छं० ॥ ७१ ॥

सोंअर सुतन किरनाल कन्ह । जिन करी रिद्ध दुज दे अमंत ॥
पज्जून सुअन पाहारराइ । चहुआन इला कलि करन न्याइ ॥
छं० ॥ ७२ ॥

नरसिंघ सुतन [1]हरदास इट्ठ । गुर ग्रब्ब मान हम्मीर गट्ठ ॥
घोची प्रसंग सुअ मल्हनास । वचि देव धम्म बंकट्ठ बास ॥
छं० ॥ ७३ ॥

सुत तेज डोड अचला सुमेर । दीपंत देह मानों कि मेर ॥
जंघार भीम [2]सुअ सिवहदास । कट्ठियाराइ सुत कब्बिलास ॥
छं० ॥ ७४ ॥

अतताइ सुतन आरेन रूप । भिरि भीम बद्ध मारंत भूप ॥
चंदेल माल प्रथिराज सूअ । भिरि जंग मझ्झ गज गहन भूअ ॥
छं० ॥ ७५ ॥

(१) मो.-सिवदास । (२) ए.-सुह ।

संग्राम सुअन सहसो समथ्थ । जुरि जुद्ध भान रोकै सुरथ्थ ॥
.... । .... ॥ छं० ॥ ७६ ॥
दूहा ॥ स्वामि दरग्गह चलि सुवन । मनहु प्रथीपुर इंद ॥
[1]कलि सोभन मोहन कवी । मनो सरद्दह चंद ॥छं०॥ ७७ ॥

बसंत उत्सव के दरबार की शोभा, राग रंग और उपस्थित दरबारियों का वर्णन।

पद्धरी ॥ रितराज राज आगंम जानि । पंचमि बसंत उच्छव सुठानि ॥
किय हुकुम सचिय सम बोलि तब्ब । प्रभु सेव साज मंगाय सब्ब ॥
छं० ॥ ७८ ॥
परजनन जुक्त तह मझ्झ आइ । घिल्लहि बसंत गोपालराइ ॥
परधान हुकुम सिर पर चढ़ाइ । सब बस्त रष्पि कन पहि कढ़ाइ ॥
छं० ॥ ७९ ॥
घनसार अगर सत कासमीर । मृगमद जवाद बहु मोल चीर ॥
बहु बर्न पुष्फ को लहै पार । मन हरत मुनिन सुरगंध तार ॥
छं० ॥ ८० ॥
बदंन अबीर रोरी गुलाल । अति चोल रंग जनु भूड लाल ॥
मिष्ठान पान मेवा असंष । मन चिपति होत निरषंत अंषि ॥
छं० ॥ ८१ ॥
सुभ साल विसद अंगन अवास । विच्छाय सु पट जाजिम नवास ॥
अंमोल मोल दुल्लीच झारि । षंचाइ पुंट रहितानि धारि ॥
छं० ॥ ८२ ॥
छिरकाव छिरकि गुलाब पूरि । दिषियंत उड़ति अब्बीर धूरि ॥
रहि उमड़ि घुमड़ि तहं धूप वास । तन बढ़त जोति सुब्बास रास ॥
छं० ॥ ८३ ॥
तहं धरिय सिंघासन मध्य आनि । नग जरित हेम बिसकर्म जानि ॥
बैठाय पाट गोपालराइ । घन घंट संष झल्लरि बजाइ ॥
छं० ॥ ८४ ॥

(१) ए.-कवल।

मिरदंग ताल जहं पौंन धार। बीनादि जंच झिनकार सार॥
नपफेरि भेरि सहनाइ चंग। दुर बरी ढोल [1]आवज्ज उपंग॥
छं० ॥ ८५ ॥
दम्मामं सबद बज्जत विनोद। बंसी सरल्ल सुर उपजि मोद॥
[2]अनि अनि चरिच नर नारि आनि। सक्कै न होइ तिन जाति जानि॥
छं० ॥ ८६ ॥
धरि कनक दंड सिर चमर सेत। रष्यंत पवन विष बिप्र हेत॥
[3]विद्वान चतुर दस विद्य अच्छ। सम अग्ग सिंघासन बैठि पच्छ॥
छं० ॥ ८७ ॥
बैठिय सु कन्ह चहुआन आनि। झलहलत क्रोध उर अगनि जानि॥
गहिलोत राव गोयंद आय। जिन सुनत नाम अरिदल पुलाइ॥
छं० ॥ ८८ ॥
निढ्ढुर नरिंद कमधज पधारि। आदर [4]अनंत न्रप करि उचारि॥
कूरंभ कहर बलिभद्र आय। जिहि सुनत नाम अरिनह दहाय॥
छं० ॥ ८९ ॥
फुनि आय अप्प अब्बू नरेस। भय भीम रूप जमनेस भेस॥
अतताइ आइ तहं सिव सरूप। बैठिय सु उट्ठि [5]भहराय भूप॥
छं० ॥ ९० ॥
चावंड बिना भट सब्ब आय। अरि धरनि धरनि जे देत दाय॥
पुंडीर आय तहं थीर चंद। अरि तिमिर तेज जिन फटति दंद॥
छं० ॥ ९१ ॥
कूरंभ कहर पाल्हन देव। जिहि वियन काम बिन स्वामि सेव॥
बय वृद्ध बाल सामंत सब्ब। अवधारि राज प्रथिराज तब्ब॥
छं० ॥ ९२ ॥
फुनि आइ चंद [6]बरदाइ माइ। जिहि प्रसन जीह दुरगा सहाइ॥
आये सु नृत्य नाटक अधीन। गंधरव राग विद्या प्रवीन॥
छं० ॥ ९३ ॥

(१) मो.-आवझ। (२) मो.-अनेक चरित। (३) मो.-पंडित।
(४) ए. कृ. को. अनंत। (५) ए. भरराय। (६) ए. कृ. को.-वरदास।

छह ग्राम मुरछना गुनं वास। सुर संपत ताल विद्या विलास ॥
संगीति रीति अभ्यास बाल। उच्चारि राग रिझ्झिय भुवाल ॥
छं० ॥ ९४ ॥

अनेक चरित श्रीकृष्ण कीन। ते सब्ब प्रगट कीने प्रवीन ॥
तिन सुनत तवत तन पाप छीन। न्रप राइ रिझ्झि बहु दान दीन॥
छं० ॥ ९५ ॥

रस रह्यो रंग सभ उट्ठि राज। सामंत सब्ब निज ग्रह समाज ॥
अनसंक कंक बंकन पधोर। यों तपै पिथ्थ दिल्ली सजोर ॥
छं० ॥ ९६ ॥

इति श्रीकविचंद विरचिते प्रथिराज रासके दिल्ली वर्णनं नाम उनसठ्ठवों प्रस्ताव संपूर्णम् ॥ ५९ ॥



अथ जंगम कथा लिष्यते ।

(साठवां समय ।)

सुसज्जित सभा में पृथ्वीराज का विराजमान होना ।

चौपाई ॥ बैठौ राजन सभा विराजं । सामँत सूर समूहति साजं ॥
विस्तरि राग कला क्रत भेदं । हरषित [1]हृदय असम सर षेदं ॥
छं० ॥ १ ॥

सज्जिय थान न्वपति कै पातुर । गुन रूपक विचरति श्रुत चातुर ॥
नाटिक कला संगीत आन रचि । अति [2]न्वत्यत करि विगति सु गति सचि ॥
छं० ॥ २ ॥

चंद चारु माठा रूपक धरि । गीत प्रवीन प्रबंध कीन थरि ॥
उघट चिघट [3]अंग प्रमुष्प यह । निंदत चिचरेष अच्छरि गह ॥
छं० ॥ ३ ॥

राजा को एक जंगम के आने की सूचना का मिलना ।

दूहा ॥ तत्त समै राजिंद वर । अपि सु षवरि अच्छत्त ॥
जंगम [4]एक सु आय कहि । कमधज पुर पति वत्त ॥ छं० ॥ ४ ॥
दिष्पि रहसि न्वप निरति रस । गुन अनेक कल भेद ॥
निरषि परषि प्रति अंग अलि । पातुर कला अषेद ॥ छं० ॥ ५ ॥

राजा का नृत्यकी को विदा करना ।

सत्त हेम है राज इक । दिय पातुर प्रति दान ॥
व्रत्ति विगति अवलोकि गुन । दई सीष यह मानि ॥ छं० ॥ ६ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-हृदय, रिदय ।
(२) ए. कृ. को.-सु नृत्य ।
(३) ए. कृ. को.-अंड ।
(४) ए. कृ. को.-इक्कें ।
(५) ए.-वत्ति ।

पृथ्वीराज का जंगम से प्रश्न करना और जंगम का उत्तर देना।

पुनि जंगम प्रति उच्चरिय। कमधज्जन की कथ्थ॥
बहुरि भिन्न करि उच्चरिय। सुनि सामंत सु नथ्थ॥ छं० ॥ ७॥

चौपाई॥ राज जग्ग सज्ज्यौ कमधज्जं। देस देस हुंकारत सज्जं॥
मिलि इक कोटि खूर भर हासं। नृप आदेस देस रचि तासं॥
छं० ॥ ८॥
यपि दर द्वारपाल चहुआनं। लकुटिय कनक इथ्थ परिमानं॥
आय पंग तट इष्ष समाजं। आनि अप्प चहुआन सु लाजं॥
छं० ॥ ९॥
इह सु कथा पहिली सुनि राजन। आय कही सो फीफनि साजन॥
लग्यौ राग श्रोतान रजानं। बुझ्झी बहुरि सु जंगम जानं॥
छं० ॥ १०॥

संयोगिता का स्वर्ण मूर्ति को जयमाल पहिराना।

कवित्त॥ [1]आवलि पंग नरेस। देस मंड सुबेस बर॥
बरन कज्ज चौसर। विचार संजोग दीन कर॥
देवनाथ कवि अग्ग। बरनि नृप देस जाति गुन॥
फुनि अष्पै संजोग। कनक विग्रह सु द्वार उन॥
चहुआन राव सोमेस सुअ। प्रथीराज सुनि नाम बर॥
गंधव्व [2]वचन विचारि उर। धरि चौसर प्रथिराज गर॥ छं० ॥ ११॥

संयोगिता का दूसरी वार फिर से स्वर्ण मूर्ति को माला पहिराना।

दूहा॥ देषि फेरि कहि नाथ पति। फुनि मुक्कलि कथिराज॥
बहुरि आइ पंगानि अग। विचरै नृपति समाज॥ छं० ॥ १२॥

कवित्त॥ बहुरि नाम गुन जाति। देस पित प्रपित बिरद बर॥
लै लै नाम पराम। देवआनी स देव कर॥

(१) मो.-आचलि। (२) मो. वयन।

फुनि चहुआन सु पास। जाय ठट्ठे भए जामं॥
कछु कवि रहिय राज। कछुक जंपे गुन तामं॥
नृप लज्ज पंग ग्रह भट्ट बर। तुच्छ संषेप सु उच्चयौ॥
संजोग समझ्झे उर रहइ। कंठ प्रथ्थ, चौसर धय्यौ॥
छं० ॥ १३॥

पुनः तीसरी वार भी संयोगिता का पृथ्वीराज की प्रतिमा पर जयमाल डालना।

दूहा॥ दुसर राज इह देषि सुनि। तिय सु नाथ उर जाम॥
सपत इथ्थ सुर जा धरिय। प्रचरि नरेसनि ताम॥ छं० ॥ १४॥

कवित्त॥ फुनि नरेस अदेस। नाथ फिरि आय मझ्झ दर॥
आदि वंस रचि नाम। चवत विक्कम्म क्रम्म बर॥
दई पानि कवि जानि। होत काह्ह कर मंडं॥
भूत भविष्यत बत्त। भव्वि जानौ उर चंडं॥
उतकंठ लोकि प्रतिमा प्रतषि। दिष्पि देव देवाधि सचि॥
बरनौ संजोग चहुआन बर। पहुप दाम ग्रीवा सु रचि॥
छं० ॥ १५॥

जयचन्द का कुपित होकर सभा से उठ जाना।

दूहा॥ कोप कलंमल पंग पहु। समय विरंचि विचारि॥
रोस सोस उर धारि तब। क्रम भति भई न चारि॥ छं० ॥ १६॥
उट्ठि राज अंदरह दर। कियौ प्रवेस अपान॥
विमुष निमुप दिष्यौ न्वपति। देव कृत्य परमान॥ छं० ॥ १७॥

पंगराज का दैवी घटना पर संतोष करना।

कवित्त॥ दइय काल सुनि पंग। जग्गय विग्गय्यौ दच्छ पति॥
द्रुपद राय पंचाल। जग्गय विग्गय्यौ इष्ट रति॥
दइय काल दुजराज। जग्य विग्गय्यौ सु जानं॥
[1]न्वघुष राइ [2]राज ह्व। गत्त जानौ परमानं॥

(१) ए. कृ. को. नघुष। (२) ए. राजरु।

श्रुति वर पुरान श्रोतास वख। विधि विचार मंडिय सकल ॥
चय काल काल सामंत कहि। दइय काल मानै अकल ॥
छं० ॥ १८ ॥

राजा जयचन्द का संयोगिता को गंगा किनारे निवास देना।

दूहा ॥ आदि कथा संजोग की। पहिलें सुनी नरेस ॥
अब इह जंगम आय कहि। विधि मिलवन संदेस ॥ छं० ॥ १९ ॥

कवित्त ॥ रचि अवास रा पंग। गंग दंगह उतंग तट ॥
दासि सहस सुंदरिय। प्रसँग काल ग्यान भाव पट ॥
हत उचार चहुआन। धरत कर करत अप्प पर ॥
पंच धेन पूजंत। बचन मन क्रम्म गवरि हर ॥
सुनि पुनि नरेस संदेस दिढ़। सोफी फुनि जंगल कहिय ॥
आरत्ति चरित चहुआन मन। दइय भेद चित्तह गहिय ॥
छं० ॥ २० ॥

दूहा ॥ पहिल ग्यान जंगम कहिय। दुतिय सो सोफी आनि ॥
तब प्रथिराज नरिंद ने। दैव काल पहिचान ॥ छं० ॥ २१ ॥

पृथ्वीराज का अपने सामंतों से सब हाल कहना।

उठि राजन तब हुकम किय। बहुरि हूर सामंत ॥
पारिहार केहरि कमल। काम नाम भर संत ॥ छं० ॥ २२ ॥

बुलिय स भूपति साधनह। दुतिय स ईसर दास ॥
बरन नेह विस्तार तन। आन रंग इतिहास ॥ छं० ॥ २३ ॥

गंग जमन जल उभय करि। करि असनान नरिंद ॥
क्रत हरि हर उर ध्यान प्रभु। उठ्यौ थान सुरिंद ॥ छं० ॥ २४ ॥

असन मार आराम सुष। सुष सयन्न क्रत राज ॥
उर सल्लै संजोग हत। संभरि नाथ समाज ॥ छं० ॥ २५ ॥

*तब परिहार सु हुकम दिय। गए सु भोजन साल ॥
व्यंजन रस रस सेष परि। सुनि सुनि कथा रसाल ॥ छं० ॥ २६ ॥

* यह दोहा मो. प्रति में नहीं है।

पृथ्वीराज की संयोगिता प्रति चाह और कन्नौज को चलने का विचार ।

पद्धरी ॥ लग्गयौ सु राज श्रोतान राग । संजोग इत्त संभरि समाग ॥
अति असम बान बेधे सरीर । नह धीर इसं [1]नह भाव धीर ॥
छं० ॥ २७ ॥
[2]रिति राज आनि रंगे सदंग । फुल्लेस विकट नव कुसुम [3]चंग ॥
कलयंठ कंठ उपकंठ अंब । पाठंत विरहनी पति सितंब ॥छं०॥२८॥
कुंजत उतंग गिरि तुंग सार । ताखीस धार [4]उद्दार धार ॥
सति मान जानि सिंदन सु तात । संजोग सुपद विरहिन निपात ॥
छं० ॥ २९ ॥
उन श्रवन सान गाजंत जोर । मधु इत्त समागध पठत घोर ॥
[5]साहीत सिषी चढ़ि सिपर टेरि । विज्जोग भगनि तिय उप्प वेर ॥
छं० ॥ ३० ॥
सासन सुरंम धरि चिविध पोन । वारह मत्त लघुमात गोंन ॥
लगि दहन गहन मदनह सु भाम । रति नाथ नाथ विन सज्जि ताम ॥
छं० ॥ ३१ ॥
संवत्त संभ पंचास मेक । पष स्याम असित [6]उद्धार नेक ॥
पित नछित्र जोग सुभ नवमि दीह । नृप मन विचार उर चलन कीय॥
छं० ॥ ३२ ॥

दूहा ॥ लग्गि बान अनुराग उर । मनमथ प्रेरि वसंत ॥
सहै नृपति अप्पै न कहुं । षेदे रिदय असंत ॥ छं० ॥ ३३ ॥

कवित्त ॥ दंग सुरंग पलास । जंग जीते बसंत तपु ॥
मदन मानि मन मोद । लीन छेदे [7]प्रछेद वपु ॥
देस नरेस अहेस । देस आदेस काम कर ॥
नीर तीर नाराच । पंग बेधे अबेध पर ॥

---

(१) ए. कृ. को.-चित । (२) ए. कृ. को.-रति ।
(३) ए. कृ. को.-जंग । (४) ए.-उद्दास । (५) ए. कृ. को.-साहात ।
(६) ए. कृ. को.-उज्जार। (७) ए. कृ.को.-अछेद ।

कलमलत चित्त चहुआन तब। उर उपजै संजोग वृत ॥
वरदाय बोलि तिहि काल कवि। मन अनंत मति पर उथ्थति ॥
छं० ॥ ३४ ॥

कविचन्द का दरबार में आना और राजा का अपने मन की बात कहना।

दूहा ॥ आय चंद वरदाय वर। दिय आदर नृप ताम ॥
आनि बहुरि दीने सु तब। रच्चे तथ्थ सु काम ॥ छं० ॥ ३५ ॥
द्वारपाल कमधज्ज यपि। इम रच्चे दरबार ॥
अब जीवन बंछै कहा। कहौ सु कवि विचार ॥ छं० ॥ ३६ ॥
अरु दिढ़ वृत्त पँगानि लिय। तुम जानो सब तंत ॥
चलन नयर कमधज्ज कै। सु वर विचारहु मंत ॥ छं० ॥ ३७ ॥

कवि का कहना कि कन्नौज को जाने में कुशल नहीं है।

तब कवि [1]एम सु उच्चरिय। सुनि संभरी नरेस ॥
चलत नृपति वरजिय न कहुं। विधि न्यमान सुदेस ॥ छं० ॥ ३८ ॥
पंग सु जानहु तुम नृपति। चलि कीनौ तुम देस ॥
गाम ठाम बाहर विचल। पारि जारि किय रेस ॥ छं० ॥ ३९ ॥

कवित्त ॥ [2]कोरि जोर कमधज्ज। सयन आयौ पर ढिल्ली ॥
जारि पारि बेहाल। चलक कीनौ धर मिल्ली ॥
[3]गोपर मार उत्तंग। तोरि उच्छारि झारि भर ॥
दंग जंग परजारि। [4]ठाम कीनौ अठाम नर ॥
कर सांप काल मुष को धरै। को जम पानि पसारि लय ॥
सोमेस नंद विचारि चलि। भवसि सोय [5]देवाधि भय ॥ छं० ॥ ४० ॥

कवन भुजा [6]बलवंत। गयन प्रस्थानन कीनौ ॥
पारावार अपार। कवन पलवन तन कीनौ ॥

(१) ए. कृ. को.-राम। (२) मो.-कारि।
(३) ए. कृ. को.-गोपरि गिर। (४) ए. कृ. को.-नाम, छाम।
(५) ए. कृ. को.-देवास। (६) ए. कृ.-बलबंड।

हेम सैल करताल। धर्‌यौ सिष नष्प सुन्यौ नृप ॥
कवन धनंजय पानि। करै संभरि नरेस दप ॥
जम जोर इष्य को जोर रहि। जवन अरुन रन जित्तियै ॥
चल्लहु नरेस परदेस मन। दै विधान मन चिंतियै ॥ छं० ॥ ४१ ॥

पृथ्वीराज का फिर भी कन्नौज चलने के लिये आग्रह करना।

दूहा ॥ चलन नरिंद कविंद पिय। पुर कनवज मत मंडि ॥
दूय सीष कविचंद कहु। बहुते आसन छंडि ॥ छं० ॥ ४२ ॥

रात्रि को दरबार बरखास्त होना, सब सामंतों का अपने अपने घर जाना, राजा का सयन।

जाम एक रजनी रहिय। तथ्थ सुबर कविचंद ॥
ताम काम परिहार कौं। दई सीष उनमंद ॥ छं० ॥ ४३ ॥
तब सु चंद ग्रह अप्प गय। उठिय सु पिथ्थ नरिंद ॥
आभूषन बस बास धरि। ससि दुति तेज द्रुमंद ॥ छं० ॥ ४४ ॥

राजसी प्रभात वर्णन।

कवित्त ॥ आय राज दीवान। जानि नाकेस अमर गन ॥
उट्ठि [1]सुभर नृप करि। जुहार आरोहि सोह थन ॥
आय तब्ब बर बुद्धि। [2]बीन धर नमित क्रत्त पहु ॥
सुधरि तंत सुर सपत। कंठ कलरव कलंठ सहु ॥
जुग घटिय सु घट अनुराग मन। राग ओत ओता धरत ॥
पांवार तार उभ्भय [3]अभय। जर सभीत तारन धरत ॥ छं० ॥ ४५ ॥
ताम समय बंदियन। आय बरदाय बीर बर ॥
दिष्पि सभा राजिंद। इंद निदंत नाक पर ॥
नथ्थि सुहर वाइनह। नथ्थि काखिंद्र वार भर ॥
नथ्थि बरुन बखिराइ। नथ्थि दनुनाथ लंकधर ॥
अनजीत निगमबोधह नयर। बयर साख [4]कट्टन [5]महन ॥

(१) मो. सुभयं। (२) मो.-"बीन धरन मिल ब्रत्त पहुं।
(३) ए. कृ. को.-उभय। (४) ए. कट्टन। (५) ए. मनह।

सोमेस नंद अनलह कुलह। अंब किति भंजन दहन ॥छं०॥४६॥
गाथा ॥ दिष्पि सुभट्टह दिवानं। राजत बीर धीर अरोहं ॥
निरषि ताम प्रतिसारं। आगम निगम जान सह कब्बी ॥छं०॥४७॥

कविचन्द का विचार।

कवि जानी करतारं। रचना [1]सचन सब्ब भर सुभरं ॥
कवन सु मेटन हारं। विधि लिषयं भाल अंकेन ॥ छं० ॥ ४८ ॥
दूहा ॥ गत सभांन भर थान उठि। आयति समय पुलिंद ॥
गहन मद्धि वाराह वर। निंदत कोहर किंद ॥ छं० ॥ ४९ ॥
तत कोहर इक भाल वर। घात अराम भिराम ॥
विहुरि नृपत्ति नदेस किय। व्याधि स रष्यहु ताम ॥ छं० ॥ ५० ॥

पृथ्वीराज का कतिपय सामंतों सहित शिकार को जाना।

कवित्त ॥ उठि प्रातह चहुआन। [2]चढ़ि सु क्रमत नरेस पिथ ॥
सथ्थ सूर सामंत। मंत जान्यो अषेट पथ ॥
सुभट जाम जद्दों जुवान। बलिभद्र बीझ वर ॥
महनसीह सम पीप। बंधि लंगिय अभंग भर ॥
गुज्जरहराम आजानभुज। जैतराव भट्टी अचल ॥
हाहुलियराव मंडन हर। मिले सुभट तहं क्रमत भल ॥छं०॥५१॥

बाराह का शिकार।

दूहा ॥ जाय संपते भर गहन। जोजन इक इक [3]कोह ॥
तहं सूकर सूतौ त्रिमय। कोहर तथ्थ सु [4]घोह ॥ छं० ॥ ५२ ॥
धरि छत्तिय दिढ़ तुपक नृप। इक्किय व्याधि वराह ॥
उट्ठि भयंकर घात तजि। तिच्छन संचरि ताह ॥ छं० ॥ ५३ ॥

वाराह का वर्णन और राजा का उसे मारना।

कवित्त ॥ कविय व्याधि वाराह। उट्ठि धायौ चंचल सम ॥
बदन भयंकर भूत। दंत दीरघ ससि बीय सम ॥

(१) मो.-सचनं। (२) मो.-"चढ़ि संक्रम्भ नरेस पिथ"।
(३) मो.-ग्रेह। (४) मो.-पेह।

सनमुष क्रमत नरेस। दिष्पि छत्तिय धरि जंतिय॥
सबद रोस संचार। छूर जोवंत [1]सु पंतिय॥
संचष्पि उभय भ्रकुटिय सहय। लग्गिय गोरिय [2]परचरिय॥
उच्छरत योत धुक्किय धरनि। भल जंपिय भर सारथिय॥
छं० ॥ ५४ ॥

दूहा॥ किय सिकार वर छूर पति। ग्रेह संपतौ जाय॥
चल्यौ प्रात प्रथिराज पहु। सिव सेवन सद भाय॥ छं० ॥ ५५ ॥

शिकार करके राजा का शिवालय को जाना। शिव जी के शृंगार का वर्णन।

पद्धरी॥ आवन्त ईस ईसान थान। पुर अलक असुर सुर इंद मान॥
जट विकट चुकुट झलकंत गंग। तिन दरसि भरत पातिग पतंग॥
छं० ॥ ५६ ॥

तट भाल चंद दुति दुतिय दीह। हरि सुजस रेष राजन अतीह॥
तिन निकट नयन झलकंत अंग। सिर पंच [3]सोह रजिकय उदंग॥
छं० ॥ ५७ ॥

आभा अनूप विभ्भूति बार। प्रगटे सुषीर दधि करि विहार॥
झलकंत तरल तिच्छन सुरंग। [4]तम रहै मेर उपकंठ संग॥
छं० ॥ ५८ ॥

रजि उरग हार उदार धार। रुचि सेत स्याम तन तिन प्रकार॥
आरोपि उभर वर रुंडमाल। उड़पंति कंति हिम गिरिय [5]भाल॥
छं० ॥ ५९ ॥

कटि तटि लपेटि लंकाल षाल। आवरिग अंग गज [6]तुज विसाल॥
कर तरल तुंग तिरसूल सोह। चयलोक सोक संकत समोह॥
छं० ॥ ६० ॥

डहडहत डमरू कर दच्छि पानि। क्रत उंच उंच भय भगति [7]भानि॥

(१) ए. कृ. को.-सयत्तिय। (२) ए. कृ. को.-परचारिय।
(३) ए. कृ. को.-सीह। (४) ए. कृ. को.-तन।
(५) ए. कृ.-पघाल। (६) मो.-गज तुव। (७) ए. कृ. को.-सांनि।

अरधंग उमय सरवंग देव। नाटिक्क कोटि को लहत भेव ॥
छं० ॥ ६१ ॥
चवरँग विसाल [1]माली प्रमथ्थ। अरोहि वृषभ मन [2]सुमन रथ्थ ॥
घट बदन बदन गज मदन अग्ग। गन जंत गज्ज अन्नेक बग्ग ॥
छं० ॥ ६२ ॥
कैलास वास सिवरंग रोध। बर बसत आय थिर निगमबोध ॥
आहुत्ति परसि क्रित प्रथियराज। उपवास व्याधि कारन सुभाज ॥
छं० ॥ ६३ ॥
निसि जगत ईस तिय रथ परिथ्थ। हरिहरि समेत कलि कलन कथ्थ॥
अन्नेक विधी रिष गन प्रसंग। उर हरन करन क्रमि आय तंग ॥
छं० ॥ ६४ ॥

दूहा ॥ राज दरसि हर सरस बर। उर उद्दित आनंद ॥
कर कलंक तिरसूल कर। जै जै समर निकंद ॥ छं० ॥ ६५ ॥
नमित दान शिव प्रमित सुष। वारह वार नरेस ॥
हर हर हर उर ध्यान गुर। दिष्पन दरसन तेस ॥ छं० ॥ ६६ ॥
श्रुति उचार संचय सु रिषि। उज्जल अरचि अचार ॥
मन सु ब्रह्म तन माम सी। ते देषे हरद्वार ॥ छं० ॥ ६७ ॥

पृथ्वीराज का स्नान करके शिवार्चन करना, पूजा की सामग्री और विधान वर्णन।

करि सनान संभरि स पहु। स च सुवास तन धार ॥
अंदर शिव मंदिर परसि। आरोहन क्रत कार ॥ छं० ॥ ६८ ॥
पद्धरी ॥ करि नमसकार संभरि नरेस। अवलोकि अंग उमया वरेस ॥
रिषि रुष षटंग उचरंत चार। ओरहि राज दुज सम सुसार ॥
छं० ॥ ६९ ॥
धरि ध्यान [3]उरध नाटेस राय। मधु दूब घीर दधि तंदुलाय ॥
घट उभय सहस [4]सुर सुरिय अंब। चव सहस कलस जमना प्रसंब॥
छं० ॥ ७० ॥

---

(१) ए. कृ. को.-मानी। (२) ए. समन।
(३) ए. कृ. को.-अरध। (४) मो. रसुरीय अंब।

दधि सहस एक घट सहस षीर । मधु पंच सत्त सुच्छव सहीर ॥
घट सहस [1]रष्पि अद्धह प्रवान । घट कासमीर सय पंच थान ॥
छं० ॥ ७१ ॥

रस उभय दून घट विसल बानि । अस्तूति चंद जंपै विधान ॥
वरकुंभ सत्त गुल्लाब पंच । घट उभय नाग संभव सुरंच ॥
छं० ॥ ७२ ॥

घट उभय जष्पि कहम सु सत्त । घट उभय सात बहु विधि प्रबत्त ॥
सिव सिर अवंत नृप अप्प हाथ । सद् भाय अर्चि अलकेस नाथ ॥
छं० ॥ ७३ ॥

तंदुल सु दूब मधु षीर नीर । दधि सार पंच तुछ मंडि सीर ॥
सिव संषि सुघट पुज्जै चिअंब । सु प्रसन्न ईस [2]कारन तिअंब ॥
छं० ॥ ७४ ॥

सतपच कमुद ससि सूर वंस । मंदार पहुप केतकि सुअंस ॥
मालती पंच जाती अनेव । फल पहुप पच पल्लव सु भेव ॥
छं० ॥ ७५ ॥

मालूर पंग श्रीषंड धूप । नैवेद ईस आराधि जप ॥
आराह नंत आगम प्रदोष । रचि सयन अयन राजन सु कोष ॥
छं० ॥ ७६ ॥

प्रस थारि कथा ग्रहि संभरेस । अन्नेक दांन रिषि दिय नरेस ॥
.... । .... ॥ छं० ॥ ७७ ॥

पूजन के पश्चात कविचन्द का राजा से दिल्ली चलने को कहना।

दूहा ॥ पूजा [3]हर घन हित करी । धूप दीप सब साज ॥
चंद भट्ट बोल्यौ तबै । चल्यौ सु गृह फिरि राज ॥ छं० ॥ ७८ ॥

इति श्री कविचंद विरचिते प्रथिराजरासके जंगम सोफी कथा, सिव पूजा नाम साठवों प्रस्ताव सम्पूर्णम्॥६०॥

(१) ए. कृ. को.-सरपि। (२) ए. कृ. को.-कारनीन। (३) ए. कृ. को. घन हर।

अथ कनवज्ज समयो लिष्यते ।

(एकसठवां समय ।)

[अथ षट् ऋतु वर्णन लिष्यते ।]

पृथ्वीराज का कविचन्द से कन्नौज जाने की इच्छा प्रगट करना ।

दूहा ॥ सुक वरनन संजोग [1]गुन । उर लग्गे छुटि बान ॥
पिन पिन सल्ल वार पर । न लहै वेद विनान ॥ छं० ॥ १ ॥
भय ओतान नरिंद मन । पुच्छै फिरि कविरज्ज ॥
दिष्पावै दलपंगुरौ । धर ग्रीषम कनवज्ज ॥ छं० ॥ २ ॥

कवि का कहना कि छद्म वेष में जाना उचित होगा ।

कवित्त ॥ दीसै वह विध चरिय । सुअन नर दुअन भनिज्जै ॥
बल कलियै अप्पान । कित्ति अप्पनी सुनिज्जै ॥
हौंडिज्जै तिहि काज । दुष्प सुष्पह भोगिज्जै ॥
तुच्छ आव संसार । चित मनोरथ पोषिज्जै ॥
दिष्पियै देस कनवज्ज वर । कही राज [2]कवि चंद कहि ॥
[3]मुक्कही सूर छल संग्रहै । तौ पंग दरसन तत्त लहि ॥ छं० ॥ ३ ॥

यह सुनकर राजा का चुप हो जाना और सामंतों का कहना कि जाना उचित नहीं ।

दूहा ॥ सुनिय सुकवि इह चंद वच । ना बुल्ल्यौ सम राज ॥
अंबुज को दोज कठिन । उदय अस्त रविराज ॥ छं० ॥ ४ ॥
श्लोक ॥ गमनं न क्षियते राजन् । सूर सामंतमेवच ॥
[4]प्रस्थानं च प्रयाणं च । राजा [5]मध्ये गतं तदा ॥ छं० ॥ ५ ॥

---

(१) मो.-सुन (२) ए. कृ. को.-कहि । (३) मो.-मुक्कहि सूर रछ संग्रहे ।
(४) ए. कृ. मो.- प्रच्छानं । (५) ए. कृ. को.- मध्य ।

राजा का इंछिनी के पास जाकर कन्नौज जाने को पूछना।

दूहा ॥ पुच्छि गयौ कविचंद को। इंछिनि महल नरिंद ॥
सुंदरि दिसि कनवज्ज कौ। चलै कहै धर इंद ॥ छं० ॥ ६ ॥

रानी इच्छिनी का कहना कि वसंत ऋतु में न जाइए।

इन रिति सुन चहुवान वर। चलन कहै जिन जीय ॥
हौं जानूं पहिलै चलै। प्रान प्रयान कि [1]पीय ॥ छं० ॥ ७ ॥
प्रान ज्वाव दूनों चलै। आन अटक्कै घंट ॥
निकसन कों झगरौ पर्‍यौ। रुक्यौ गद्गद कंठ ॥ छं० ॥ ८ ॥

बसंत ऋतु का वर्णन।

साटक ॥ स्यामंगं कलधूत नूत सिषरं, मधुरे मधू वेष्टिता।
[2]वाते सीत सुगंध मंद सरसा, आलोल संचेष्टिता ॥
काँठी कंठ कुलाहले मुकलया, कामस्य उद्दीपने।
रत्तं रत्त वसंत मत्त सरसा, संजोग भोगायते ॥ छं० ॥ ९ ॥
कवित्त ॥ मवरि अंब फुल्लिग। कदंब रयनी दिघ दीसं ॥
भवर भाव भुल्लै। भ्रमंत मकरंदव सीसं ॥
वहत [3]बात उज्जलति। मौर अति विरह अगनि किय ॥
कुहकुहंत कल कंठ। पच रापस रति अग्गिय ॥
पय लग्गि प्रान पति वीनवों। नाह नेह मुझ चित धरहु ॥
दिन दिन अवद्धि जुव्वन घटय। कंत वसंत न [4]गम करहु ॥ छं० ॥ १० ॥
धुम्र चलिय बन पवन। भ्रमत मकरंद कंवल कलि ॥
भय सुगंध तहँ जाइ। करत गुंजार अलिय मिलि ॥
बल हीना [5]डगमगहि। भाग आवै भोगी जन ॥
उर धर लगै समूह। कंपि भौ सीत भयत नन ॥
लत परी ललित सब पहुप रति। तन सनेह जल पवित किय ॥
निकरै भृंग अंवुज हरुअ। सीत सुगंध सुमंद लिय ॥ छं० ॥ ११ ॥

(१) को. कु-पीउ। (२) ए. कु. को.- वातो।
(३) ए. कु. को.- वाव। (४) ए. कु. को.- गमन। (५) मो.-डत।

साटक ॥ लैवंधं सुर यद्द डंक्कित मधू, उन्मत्त भृंगी धुनी ।
कंद्रप्पे सु मनो वसंत रमनं, प्राप्तो धनं पावनं ॥
कामं तेग मनं धनुष्य सजनं, भीतं वियोगी मुनी ।
विरहिन्या तन ताप पत्त सरसा, संजोगिनी सोभनं ॥ छं० ॥ १२ ॥
कुंडलिया ॥ इहि रिति मुक्कि न बाल प्रिय । सुष [1]भारी मन लुट्टि ॥
कामिनि कंत समीप बिन । हुई षंड उर फुट्टि ॥
हुई षंड उर फुट्टि । रसन कुह कुह आरोहै ॥
चलन कहै जो पीय । गात वर [2]भग्गो सोहै ॥
नयन उमगि कन बीय । सोभ ओपम पाई जिहि ॥
मनों पंजन बिय बाल । गहिय नंवत सुत्तिय [3]इहि ॥ छं० ॥ १३ ॥

ग्रीष्म ऋतु आने पर पृथ्वीराज का रानी पुंडीरनी के पास जाकर पूछना ।

दूहा ॥ इहि रिति रष्पिय इंछिनिय । भय ग्रीषम रितु चारु ॥
कांम रूप करि गय नृपति । पुंडीरनी दुआर ॥ छं० ॥ १४ ॥
सुनि सुंदरि पहु पंग की । दिसि [4]चालन कौ सज्ज ॥
बर उत्तम धर दिष्पियै । पिष्पन भर कनवज्ज ॥ छं० ॥ १५ ॥

रानी पुंडीरनी का मना करना ।

नृप ग्रीषम ग्रिह सुष्पनर । ग्रेह मुक्कि नन राज ॥
गोमगांम छादिय अमर । पंथ न सुझै आज ॥ छं० ॥ १६ ॥
कवित्त ॥ दीरघ [5]दिन निम हीन । छीन जल धरवैसंनर ॥
चकवाक चित मुदित । उदित रवि थकित पंथ नर ॥
चलत पवन पावक । समान परसत सु ताप मन ॥
सुकत सरोवर मचत । कीच तलफंत मीन तन ॥
दौसंत दिगम्बर सम सुरत । तरु लतान गय पत्त झरि ॥
अकुलं दीह संपति विपति । कंत गमन ग्रीषम न करि ॥ छं० ॥१७॥

(१) ए.- भासे । (२) ए. भग्गै-ए.-भगो ।
(३) ए. .क्र को.-जिहि । (४) ए. क्र. को.-दिस ।
(५) ए. क्र. को.-पस्पत ।

साटक ॥ दीहा दिघ्घ सदंग कोप अनिला, आवर्त मित्ता करं।
रेनं सेन दिसान थान मिलनं, गोमग्ग आडंबरं ॥
नीरे नीर अपीन छीन छपया, तपया तरुन्या तनं।
मलया चंदन चंद मंद किरनं, ग्रीष्म च आषेवनं ॥ छं० ॥ १८ ॥

कवित्त ॥ पवन त्रिविध गति मुक्कि। सेन भुअ पत्ति जूथ चलि ॥
विरह [1]जाम बर कदन। मदन मैं मंत पौल हलि ॥
पथिक बधू भरै। आस आवन चंदाननि ॥
जो चालै चहुआन तौ। मरै फुटि उर व्रंननि ॥
मन भुअन आन दैतो फिरै। प्रिय आगम गज्जै मयन ॥
कंता न मुक्कि वर कित्ति गर। कहूं सुनो सोनिय बयन ॥छं०॥१९॥
पिन तरुनी तन तपै। वहै नित बाव रयन दिन ॥
दिसि च्यारों परजलै। नहिं कहों सीत अरध षिन ॥
जल जलंत पीवंत। रुहिर निसि वास निघट्टै ॥
कठिन पंथ काया। कलेस दिन रयनि सघट्टै ॥
चिय लहै तत्त अप्पर कहै। गुनिय न ग्रब्ब न मंडियै ॥
सुनि कंत सुमति संपति विपति। ग्रीषम ग्रेह न छंडियै ॥छं०॥२०॥

*गीतामालची ॥ चिय ताप अंगति दंग दवरित दवरि छव रित भूषनं।
कुरु भेह षेहति ग्रेह लंपिति स्वेद संवित अंगनं ॥
नर रहित अनहित पंथ पंगति पंगयौ जित गोधनं।
रवि रत्त मत्तह अभ्भ उद्दिक कोप कर्कस मोघनं ॥ छं० ॥ २१ ॥
जल बुद्दि उट्ठि समूह बल्लिय मनों सावन आवनं।
हिंडोल लोलति बाल सुष सुर ग्राम सुर सुर गावनं ॥
कुसमंग चीर गंभीर गंधित मुंद बुंद सुहावनं।
ढलकंत बेनिय तट्ठ रेनिय चंद्र सें निय आननं ॥ छं० ॥ २२ ॥
ताटंक चंचल लज्जित अंचल मधुर मेषल रावनं।
रव रंग नूपुर हंस दो सुर कंज ज्यौं पुर पावनं ॥
नष द्रप्प द्रप्पन देषि अप्पन कोपि कंपि सु नावनं।
दमकंद दामिनि दसन कामिनि जूथ जामिनि जाननं ॥छं०॥२३॥

(१) ए.कृ.को.-जातु। * आधुनिक हिन्दी पिंगलों में इस छन्द को प्रायः हरिगीतिका करके लिखा है।

तंबोल रत घनसार भारइ बेलि विद्रुम छावनं।
अलि गुंज मालहि देषि लालहि रंभ राज रिझावनं॥
.... ॥ छं० ॥ २४ ॥

वर्षा के आने पर राजा का इन्द्रावती के पास जा कर पूछना।

दूहा ॥ मानि रूप मानिनि वचन। रहि ग्रीषम वर नेह॥
पावस आगम धर अगम। गय इंद्रावति गेह॥ छं० ॥ २५ ॥

इन्द्रावती का दुखी होकर उत्तर देना।

पीय वदन सो प्रिय परषि। हरष न भय सुनि गोंन॥
आसू मिसि असु उप्पटै। उत्तर [1]देय सलोन॥ छं० ॥ २६ ॥

वर्षा ऋतु वर्णन।

साटक ॥ अब्दे वद्दल मत्त मत्त विसया, दामिन्य दामायते।
दादूरं दर मोर सोर सरिसा, पप्पीह चीहायते॥
[2]शृंगारीय वसुंधरा मलिलता, लीला समुद्रायते।
जामिन्या सम वासुरो विसरता, पावस्स पंथानते॥ छं० ॥ २७ ॥

कवित्त ॥ मग सज्जल सुझझैन। दिसा धुंधरी सघन करि॥
रति पहुवी कि चरित। लता तरु वींटि सुमन भरि॥
आलिंगत धर अभ्भ। मान मानिन खलचावत॥
बर भद्रव कद्रव मचंत। कद्रव विरुझावत॥
चतुरंग सेन वै गढ दहन। घन सज्जिय न्रप चढ़िन तिन॥
भरतार संग वंछै चिया। बिन क्रतार [3]भत्तार बिन॥ छं० ॥२८॥
घन गरजै घरहरै। पलक निसरेनि निघट्टै॥
सजल सरोवर पिष्षि। हियौ तत छिन धन फट्टै॥
जल वद्दल बरषंत। पेम पल्हरै निरंतर॥
कोकिल सुर उच्चरै। अंग पहरंत पंच सर॥

---

(१) ए. कृ. को. देति। (२) ए. कृ. को.-श्रगाराय।
(३) ए. कृ. को.-भरतार।

दादुरह मोर दामिनि दसय । अरि चवथ्थ [1]चातक रटय ॥
पावस प्रवेस वालम न चलि। विरह अगनि तनतप घटय ॥छं०॥२८॥
घुमड़ि घोर घन गरजि । करत आडंबर [2]अंमर ॥
पूरत जलधर धसत । धार पथ थकित दिगंबर ॥
झझकित द्रिग सिसु मृग । समान दमकत दामिनि द्रसि ॥
विहरत चाचग चुवत । पीय दुषंत समं निसि ॥
ग्रीषंम विरह द्रुम लता तन । परिरंभन कृत सेन हरि ॥
सज्जंत काम निसि पंचसर । पावस [3]पिय न प्रवास करि ॥
छं० ॥ ३० ॥

चंद्रायना ॥ विजय विहसि द्रिगपाल पायननि पंच किय ॥
विरहनि [4]विस गढ़ दहन मघव धनु अग्र लिय ॥
गरजि गहर जल भरित हरित छिति छच किय ।
मनहु दिसान निसानति आनि अनंग दिय ॥ छं० ॥ ३१ ॥

गीतामालचौ ॥ द्रिग भरित [5]धूमिल जुरति भूमिल कुमुद न्निम्मल सोभिलं ॥
द्रुम अंग वल्लिय सीस हल्लिय कुरलि कंठह कोकिलं ॥
कुसुमंज कुंज सरोर सुभ्भर सलित दुभ्भर सद्दयं ।
नद रोर दद्दुर मोर नद्दुर बनसि बद्दर बद्दयं ॥ छं० ॥ ३२ ॥
झम झमकि विज्जल काम किज्जल अवति सज्जल कद्दयं ।
पप्पीह चौहति जौह जंजरि मोर मंजरि मंद्दयं ॥
जगमगति झिंगन निसि सुरंभन भय अभय निसि हृद्दयं ।
मिलि हंस हंसि सुवास सुंदरि उरसि आनन निद्धयं ॥छं०॥३३॥
[6]उट सास आस सुवास वासुर [7]छलित कलि वपु सद्दयं ।
* करत आडंबर अमर प्रम्त जलधर धार पयथ्थयं ॥
संयोग भोग संयोग [8]गामिनि विलसिराजन भद्दयं॥छं०॥३४॥

---

(१) मो. चत्रिक, चातिक ।
(२) ए. कृ. को.-डमर ।
(३) मो.-प्रिय ।
(४) ए. कृ. को. मन ।
(५) ए. कृ. को.-भूमिल ।
(६) ए. कृ. को. उव ।
(७) ए. कृ. को. कलिल ।
* यह पंक्ति मो० प्रति के सिवाय अन्य प्रतियों में नहीं है ।
(८) मो. माननि ।

साटक ॥ जे [1]विज्जु झक्कत फुट्टि तुट्टि तिमिरं, [2]पुन अंधनं दुस्सहं ।
बुंदं घोर तरं सहंत असहं, वरषा रसं संभरं ॥
बिरहीनं दिन दुष्ट दारुन भरं, भोगी सरं सोभनं ।
मा मुक्के पिय गोरियं च अवलं, प्रीतं तथा तुच्छया ॥छं०॥३५॥

शरद ऋतु के आरंभ में तैयारी करके राजा का हंसावती के पास जाकर पूछना ।

दूहा ॥ सुनि [3]श्रावन वरिषा सघन । सुष निवास न्विप कीय ॥
बर पूरन पावस कियौ । राज पयान सु दीय ॥ छं० ॥ ३६ ॥
हंसावति सुंदरि सुग्रह । गयौ प्रीय प्रथिराज ॥
धर उत्तिम कनवज्ज दिसि । चलन कहत नृप आज ॥छं०॥३७॥

हंसावती के वचन ।

दिष्पि वदन पिय पोमिनी । फुनि जंपै फिरि बाल ॥
सरद रवन्नी चंद निसि । कित लभ्भै छुटि काल ॥ छं० ॥ ३८ ॥

शरद् वर्णन ।

साटक ॥ पित्ते पुत्त सनेह गेह [4]गुपता, जुगता न दिष्या दने ।
[5]राजा छत्रनि साज राज छितिया, निंदायि नीवासने ॥
कुसुमेषं तन चंद न्विमल कला, दीपाय वरदायने ।
मा मुक्के प्रिय बाल नाल समया, सरदाय दर दायने ॥छं०॥३९॥
दूहा ॥ आयौ सरद स इंद्र रिति । चित पिय पिया सँजोग ॥
दिन दिन मन केली चढ़े । रस जु लाज [6]अलि भोग ॥छं०॥४०॥
कवित्त ॥ पिष्पि रयनि न्विमलिय । फूल फूलंत अमर धर ॥
श्रवन सबद नहिं सुझै । हंस कुरलंत मान सर ॥
कवल कद्दय विगसंत । तिनह हिमकर परजारै ॥
तुमहि चलत परदेस । नहीं कोइ सरन उबारै ॥

---

(१) मो.-निज्जुल । (२) मो.-पुनंधन ।
(३) को.-सावन । (४) ए. कृ. को.- भुगता ।
(५) ए. कृ. को.- राजा छत्र निसान (६) ए. कृ. को.-अति ।

निग्रहन रत्त भरपंच सर । अरि अनंग अंगै वहै ॥
जौ कंत गवन सरदै कहै । तौ विरहिनि सिष ह्वै दहै ॥छं०॥४१॥
द्रष्यन सम आकास । स्रवत जल अम्रत हिमकर ॥
उज्जल जल सलिता सु । सिद्धि सुंदर सरोज सर ॥
प्रफुलित ललित लतानि । करत गुंजारव [1]भंमर ॥
उदति सित्त निसि नूर । अंगि अति उमगि अंग बर ॥
तलफंत प्रान निसि भवन तन । द्वेषत दुति रिति मुष जरद ॥
नन करहु गवन नन भवन तजि । कंत दुसह दारुन सरद ॥छं०॥४२॥

माधुर्य ॥ लहु वरन षट विय सत्त, चामर बीय तीय पयो हरे ।
माधुर्य छंदय चंद जंपय, नाग वाग समोहरे ॥
अति सरद सुभगति राज राजति सुमति काम उमद्दयं ।
ग्रह दीप दीपति जूप जूपति भूप भूपति सद्दयं ॥ छं० ॥ ४३ ॥
नव नलिनि अलि मिल अलिन अलि मिल्लि अलिनि अलिव्रतमंडियं॥
चक चकी चकि्रत चकोर चष्पित चच्छ छंडित चंदयं ।
दुज अलस अलसनि कुसुम अच्छित कुसुम मुद्दित मुद्दयं ॥
भव भवन उच्छव तरु असोकहि देव दिव्य नि नद्दयं ॥छं०॥४४॥
नौरता मंचहि न्रपति राजत बीर झंझरि बग्गयं ।
महि महिल लच्छिर सुश्रित अच्छिर सकति पाठ सु दुग्गयं ॥
अद्धार भारह पुषित अम्रित अधर अम्रत भामिनी ।
रस तीय राजन लहय सोजन सरद दीपक जामिनी ॥छं०॥४५॥

कवित्त ॥ नव नलिनी अलि मिलहि । अलिन अलिमिलि वृत मंडै ॥
तनु न्रम्मल [2]यह चंद । चष्प [3]चक्कोरति छंडै ॥
दुज अलसित बर निगम । कुसुम अच्छित मुद्रावलि ॥
[4]पिच नेह ग्रेहरचें । बाल छुट्टे अलकावलि ॥
करि स्नान धूत बसतर रचें । कंज वदन चिचंग चरि ॥
आनूप जूप अंजन रचै । बिना कंत तिय गुन सुगरि ॥
छं० ॥ ४६ ॥

---

(१) मो.-संभर । (२) ए. कृ. को.- वह ।
(३) ए. कृ.-चकोरन । (४) ए.कृ. मो.-पित्र ग्रेह नेह रचें ।

चंद रयनि त्रिमली। सरिस आकास अभ्यासित ॥
पिया वदन सो चंद। दोइ कुच चिकुर प्रगासित ॥
खंजन नयन अलोल। कीर नासा [1]न्यमल मुति ॥
दसन वस्त्र अनूप। पुहप भाजन रजता भति ॥
नव गात त्रिमल सुंदरि सरस। नवल नेह नित नित भलौ ॥
चित चतुर रीति बुझ्झै न्रपति। सरद दरद करि मति चलौ ॥
छं० ॥ ४७ ॥

हेमंत ऋतु आने पर राजा का रानी कूरंभा के पास जाकर पूछना और उसका मना करना।

दूहा ॥ हिम आगम वित्तें सरद। गवन चित्त न्रप इंद ॥
पुछन कुरंभी महल गय। सरद मेह वर चंद ॥ छं० ॥ ४८ ॥

रानी का वचन और हेमंत ऋतु का वर्णन।

साटक ॥ छिन्नं वासुर सीत दिघ्घ निसथा, सीतं अनेतं वने।
सेजं सज्जर वानया वनितया, आनंग आलिंगने ॥
यों वाला तरुनी वियोग पतनं, नलिनी दहन्ते हिमं।
मा मुक्के हिमवंत मन्त गमने, प्रमदा निरालम्बनं ॥ छं० ॥ ४९ ॥

रोला ॥ कुच वर जंघ नितंव निसा बहुत धन बड्ढी।
लंक छीन उर छीन छीन दिन सीत सुचड्ढी ॥
गिरकंदर तप जुगति जागि जोगीसर मंनं।
ते लग्भे कविचंद वाम कामी सर धंनं ॥ छं० ॥ ५० ॥

कवित्त ॥ देह धरें दोगत्ति। भोग जोगह तिन सेवा ॥
कै वन कै वनिता। अगनि तप कै कुच लेवा ॥
गिरि कंदर जल पीन। पियन अधरारस भारी ॥
जोगिनोद मद उमद। कै छगन वसन [2]सवारी ॥
अनुराग वीत कै राग मन। वचन तीय गिर झरन रति ॥
संसार विकट इन विधि तिरय। इही विधी सुर असुर अति ॥छं०॥५१॥

(१) ए. कृ. को.-भूमल। (२) ए. कृ. को.-सचारी।

रोमावलि वन जुथ्थ। वीच कुच कूट मार गज ॥
हिरदै[1] उजल विसाल। चित्त आराधि मंडि सज ॥
विरह करन क्रीलई। सिद्ध कामिनी डरप्पै ॥
तो चलंत चहुआन। दीन छंडै पै रुप्पै[2] ॥
हिमवंत कंत मुक्कै न चिय। पिया पद्म पोमिनि परषि ॥
ग्रहि कंठ कंठ जठन[3] अवनि। चलत तोहि[4] लगिवाय रूष ॥छं०॥५२॥

न चलि कंत सुभचिंत। धनी बहु[5] चिंत प्रगासी ॥
गह गहि ऐसौ प्रेम। सौज आनंद उहासौ ॥
दीरघ निसि दिन तुच्छ। सीत संतावै अंगा ॥
अधर दसन घरहरै। प्रात परजरै अनंगा ॥
[6]जा ऐनि रैनि हर हर जपत। चक्क सह चक्की कियौ ॥
हिमवंत कंत सुग्रह ग्रहति। हहकरंत फुट्टै हियौ ॥ छं० ॥ ५३ ॥

चोटक ॥ गुरु पंच सुभै दस मत्तपयो। थ्रिय नाग ह्यौ हरबाहनयो ॥
इति छंद विछंद विलास लहै। तत चोटक छंद सुचदं कहै॥ छं० ॥५४॥
दिव दुर्ग निसा दिन तुच्छ रवै। जरि सीत बनं बनवारि जवै ॥
चक्क चक्कि चकी जिम चित्त भवै। नितवांम प्रिया मुष [7]मोरि ठवै ॥
छं० ॥ ५५ ॥

बिरही जन रंजन हारि भियं। घनसार[8] मृगंमद पुंज कियं ॥
षटुपंकति पुंजति कन्त जियं। परिरंभन रंभन रे रतियं॥
करि भिभ्रम निभ्रम लग्ग तियं। .... ॥
छिन भाजत लाजत लोचनयं। तन कम्पत जम्पत मोचनयं॥
छं० ॥ ५६ ॥

नव कुंडल मंडल क्रन्न रमै। कच अभ्रपटी जनु वीज भ्रमै ॥
कुसमावलि तुट्टि खवंग खगं। बरनं रचि छुट्टति पंति बगं ॥ छं० ॥ ५७॥

---

(१) मो.-हिरेदे उज्जल जल विसाल चित्त आविति मंडि गज। (२) मो.-रुक्कै
(३) ए. कृ. को.-अवत। (४) ए. कृ. को.-चलन तोहि लग्गीय रुप।
(५) मो.-चत्त। (६) ए. कृ. को.-जथ नह रैनि।
(७) ए. कृ. को.-कोलि जवै। (८) ए. कृ. को.-मृदंमद।

अम बुंदति सुत्ति झरं उरनं। झलती जनु गिम्ह सिवं सरनं ॥
कटि मंडल घंटि रमन्नि रवै। सुरमंजु[1] मंजीर अमीय स्रवै ॥
छं० ॥ ५८ ॥
रति ओज मनोज तरंग भरी। हिमवंत महा रित[2] राज करी ॥
॥ छं० ॥ ५९ ॥

शिशिर ऋतु का आगम।

दूहा ॥ संगम सुष सुत्तौ नृपति। ग्रिह विन एक न होइ ॥
सुनि चहुआन नरिंदं वर। सीत न मुक्कै तोइ ॥ छं० ॥ ६० ॥
हिम वित्यौ आगम शिशिर। चलन चाइ चहुआन ॥
सुनि पिय आगम शिशिर कौ। क्यों मुक्कै ग्रिह थान ॥ छं० ॥ ६१ ॥
साटक ॥ [3]रोमाली वन नीर निद्ध[4] चरयो[5] गिरिदंग [6]नारायने ॥
पव्वय पीन कुचानि जानि मलया, फुंकार झुंकारए ॥
सिसिरे सर्वरि वारूनी च विरहा माहह मुव्वारए ॥
मांकंते म्रिगबद्ध मध्य गमने, किं दैव उच्चारए ॥ छं० ॥ ६२ ॥
*दूहा ॥ अरिय सघन जीतन दिसा। चलन कहत चहुआन ॥
रतिपति चल होइ पिछ्थ गय। ग्रह हमीर ग्रिह जानि ॥
छं० ॥ ६३ ॥
कवित्त ॥ आगम फाग अवंत। कंत सुनि मित्त सनेही ॥
सीत अंत तप तुच्छ। होइ आनंद सब ग्रेही ॥
नर नारी दिन रैनि। मैन मद्माते डुल्लैं ॥
सकुच न हिय छिन एक। बचन मनमानै बुल्लैं ॥
सुनौ कंत सुभ चिंत करि। रयनि गवन किम कीजइय ॥
कहि नारि पीय बिन कामिनी। रिति ससिहर किम जीजइय ॥
॥ छं० ॥ ६४ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-पुंज।
(२) ए. कृ. को.-रति
(३) ए. कृ. को. रोमावलि।
(४) ए. कृ. को. निचयो।
(५) ए. कृ. को.-गिरिदंत।
(६) ए. कृ. को. नारायने।
* यह दोहा मो. प्रति में नहीं है।

इनुफाल ॥ गुर गरुअ चामर नंद । लघु वरन विच विच इंद ॥
विवहार पय पय बंद । इति इनूमानय छंद ॥ छं० ॥ ६५ ॥
रिति ससिर सरवरि सोर । परि पवन पत्त चकोर ॥
वन चिगुन तुल्ल तमोर । घन अगर गंध निचोर ॥ छं० ॥ ६६ ॥
भुअ भोज व्यंजन भोर । लव अमर तिथ्य कटोर ॥
रस मधुर मिष्टित घोर । रति रसन रमनति जोर ॥ छं० ॥ ६७ ॥
कल कलस न्हित्ति किलीर । वय स्याम गुन अति गोर ॥
परि पेम पेम सजोर । अवलोक लोचन चोर ॥ छं० ॥ ६८ ॥
सुष अंत मुक्कति सकोर । .... ॥
रस रमति पिथ्थ न्हपत्ति । मनों भुवन वनि सुरपत्ति ॥छं०॥६९॥
इति ससिर सुष विलसंत । रिति राइ आय वसंत ॥
षटु रित्तु, षट रमनीय । रवि चंद वरनन कीय ॥ छं० ॥ ७० ॥
तरु लता गहवरि फेरि । प्रति कुंज कुंजन हेरि ॥
... . । .... ॥ छं० ॥ ७१ ॥
कवित्त ॥ कुंज कुंज प्रति मधुप । पुंज गुंजत वैरनि धुनि ॥
खलित कंठ कोकिल । कलाप कोलाहल सुनि सुनि ॥
राजत वन मंडित । पराग सौरंभ सुगंधिन ॥
विकसे किंसुक विहि । कदंब आनंद विविध धुनि ॥
परिरंभ लता तरवरह सम । भए समह वर अनग तिवि ॥
विच्छुरन छिनक संपत्ति पति । कंत असंत वसंत रिति ॥छं०॥७२॥

पृथ्वीराज का कविचन्द से पूछना कि वह कौनसी ऋतु है जिसमें स्त्री को पति नहीं भाता।

दूहा ॥ षट रिति वारह मास गय । फिरि आयो ह वसंत ॥
सो रिति चंद बताउ मुहि । तिया न भावै कंत ॥ छं० ॥ ७३ ॥

(१) प. कृ. को. सभ ।

कविचन्द का कहना कि वह ऋतु स्त्री का ऋतु समय (मासिक धर्म्म) है।

जौ नलिनी नीरहि तजै। सेस तजै सुरतंत ॥
जौ सुबास मधुकर तजै। तौ तिय तजै सु कंत ॥ छं० ॥ ७४ ॥
रोस भरै उर कामिनी। होइ मलिन सिर अंग ॥
उहि रिति चिया न भावई। सुनि चुहान चतुरंग ॥ छं० ॥ ७५ ॥

रानियों के रोकने पर एक साल सुख सहबास कर पृथ्वीराज का पुनः बसंत के आरंभ में कन्नौज को जाने की तैयारी करना।

चौपाई ॥ षट्ट सु [1]वरनीं विय षट मासं। रष्पे बर चहुआन विलासं ॥
ज्यों भवरी भवरं कुसुमंगा। त्यों प्रथिराज कियौ सुष अंगा ॥
छं० ॥ ७६ ॥

दूहा ॥ बर वसंत अग्गें जिपति। सेन सजी बहु भार ॥
दिसि कनवज वर चढ़न कों। चितवति संभरिवार ॥ छं० ॥ ७७ ॥
कै जानै कविचंदई। कै प्रयान प्रथिराज ॥
सित सामंत सु संमुहै। पंगराय ग्रह काज ॥ छं० ॥ ७८ ॥

गुरुराम का कूच के लिये सुदिन सोधना।

मतौ मंडि संभरि [1]न्रपति। चलन चिंत [2]पहु अज्ज ॥
दिन अप्पौ गुरराज मिलि। चिंत चलन कनवज्ज ॥ छं० ॥ ७९ ॥

राजा का रविवार को अरिष्ट महूर्त में चलने का निश्चय करना।

कवित्त ॥ चैत तीज रविवार। सुद्ध संपज्यौ सूर जब ॥
एकादस ससि होइ। छंडि दस थान मान तब ॥
बर मंगल नृप राशि। पंच अक्कूर मेछ वर ॥
दुष्ट भाव चहुआन। राशि अष्टम ढिल्ली धर ॥

(१) ए. कृ. को.-वरुनी। (१) मो.-सुपहु। (२) मो.-वर।

भर रासि राह षोटौ नृपति। देषि पुच्छि चहुआन चलि॥
भावी विगत्ति मति उरह उर। जु कछु कह्यौ कविचंद षुलि॥
छं० ॥ ८० ॥

पृथ्वीराज का कैमास के स्थान पर जैतराव को राजमंत्री नियत करना।

दूहा॥ नन मानी चहुआन नृप। भावी चिंति प्रमान॥
सलष वोलि मंतह नृपति। मत कैमासह थान॥ छं० ॥ ८१ ॥

कवित्त॥ मंचिय थपि पामार। मंति कैमास थान वर॥
ता मंची पन अप्पि। सूर सामंत मंझ भर॥
मंच दिट्ठ दिढ़ वाच। काछ दिट्ठौ दिढ़ लोभै॥
लोह दिट्ठ जुध काल। मामध्रम्मह दिढ़ सोभै॥
पुरुषह सु दिट्ठ काया प्रचंड। दिढ़ दुरग्ग भंजन सुहर॥
गुरराज राम इम उच्चरै। सो मंची नृप करन धर॥ छं० ॥ ८२ ॥

राज्य मंत्री के लक्षण।

सो मंची नृप करिय। पुव्व बंसह सु वीय सुधि॥
दृत भेद अनुसार। मोह रस बसिन ईछ मुधि॥
न्याय ध्रंम अनुसार। न्याय नंदन परगासै॥
रोगजीत मन होइ। तान चिय लछि अभ्यासै॥
परधान ध्यान जानै सकल। अध्रम द्रव्य नन संग्रहै॥
पम्मार सलप मंची नृपति। बल गोरी मुष संग्रहै॥ छं० ॥ ८३ ॥

राजा का जैतराव से पूछना कि भेष बदल कर चलें या योंही।

सो मंची पुच्छौ नृपति। चलन चाइ चहुआन॥
दिसि कनवज धर दिष्पियै। पंग जोग परमान॥ छं० ॥ ८४ ॥
छग्गल पान नरिंद वर। अदभुत चरित विराज॥
चंद भेष चहुआन कौ। थेट सुपत्तौ साज॥ छं० ॥ ८५ ॥

जैतराव का कहना कि छद्मवेष में तेजस्वी कहीं नहीं छिपता इससे समयोचित आडंबर करना उचित है।

चौपाई ॥ राजन चंद वदन ढंकि किन्नं। छिपै न छिप कर सूर सघन्नं ॥
छिप्पत कवहुँ न मोमभ्भर तिन। रंकति न छिपै वित परघन घिन॥
छं० ॥ ८६ ॥

सुभग मन मधि विदुष सु कव्वी। देषि सुजान न छिपै गुनव्वी ॥
गैपति मैपति समद न छिप्पै। न [1]छिप्पै न रज रजपूत सुदिप्पै ॥
छं० ॥ ८७ ॥

कवित्त ॥ जो आडंवर तजिय। राज सोभै न राज गति ॥
आडंबर बिन भट्ट। कव्वि पुनगार मेट थति ॥
आडंबर बिन नट्ट। गोरि गावै नह रुक्कहि ॥
आडंबर विन वेस। रूप रत्ती न सोय कहि ॥
जन एक सुभर वंदन विदुष। हरुअत आडंवरह विन ॥
पर धर नरिंद बंदन मतौ। करि आडंबर बीर तन ॥ छं० ॥ ८८ ॥

पुनः जैतराव का कहना कि मुझसे पूछिए तो मैं यही कहूंगा कि सब सेना समेत चल कर यज्ञ उथल पथल कर दिया जावै।

दूहा ॥ मत पुछ्छै चहुआन मुहि। सज्जि सवै चतुरंग ॥
अजै विजै जानै नहीं। जग्य विनट्ठै पंग ॥ छं० ॥ ८९ ॥
तुच्छह सथ्थ नरिंद सुनि। जो जानै पहुपंग ॥
वंधि देए करतार अरि। चोर लग्ग निय संग ॥ छं० ॥ ९० ॥
अरि भंजै भंजौ सु पुनि। सम वरि समर सु पंग ॥
जौ पुच्छै चहुआन वर। [2]तौ सज्जौ चतुरंग ॥ छं० ॥ ९१ ॥

गोयन्द राय का कहना कि ऐसा करना उचित नहीं क्योंकि शहाबुद्दीन भी घात में रहता है।

मतौ गरुअ गोयंद कहि। वर ढिल्ली सुर पान ॥

(१) ए. कृ. को.-नन छिपै रजपूत मरकति वह दिप्पै। (२) ए. कृ. को.-बर।

इष्य वीर विरुझाइ चलि । धर लग्गो सुरतान ॥ छं० ॥ ९२ ॥
जिम लग्गो आखेट अगि । डिल्ली वे सुरतान ॥
विन वुझाय वुझि अग्गिया । जिम [1]घट्टै जम पानि ॥ छं० ॥ ९३ ॥
चित्त चलन चहुआंन को । जिन अप्पी मति नन्ह ॥
सव भूत मझझनटारि लष । रूप ढुंढिय धन खिन्ह ॥ छं० ॥ ९४ ॥

अन्त में सब सेना सहित रघुवंश राय को दिल्ली की गढ़ रक्षा पर छोड़कर शेष सौ सामंतो सहित चलना निश्चय हुआ।

सौ समंत छ खूर भय । ते इक एकइ देह ॥
जोगिनपुर रघुवंश सौ । सो रष्यौ तख लेह ॥ छं० ॥ ९५ ॥
तत्त मत्त चालन कियौ । महल विसरजन कीन ॥
सत्त घरी घरियार वजि । वर प्रस्थान सुदीन ॥ छं० ॥ ९६ ॥
एक वरष प्रस्थान ते । विय प्रस्थान सुपत्त ॥
ग्यारह से कनवज्ज कौ । चैत तीज रविरत्त ॥ छं० ॥ ९७ ॥

रात्रि को राजा का शयनागार में जाकर सोना और एक अद्भुत स्वप्न देखना।

कवित्त ॥ विपन महल चहुआन। राज प्रस्थान सुपत्तौ ॥
निसा निद्र उत्तरिय । सघन उम्मयौं सु रत्तौ ॥
बीज तेज छूभंत । तमत उद्यौ व्रत भारी ॥
निसा पत्ति सुर आय । बोल वर वर उच्चारी ॥
चरि चित्त चित्त चहुआन करि । वान विषम गुन बंधयौ ॥
वल श्रवन दिष्ट संभरि धनी । सुर चिंतइ लष संधयौ ॥
छं० ॥ ९८ ॥

प्रथमं खर चहुआन। वान संध्यौ गुन मंगइ ॥
विय अचुक्क सुर बोलि । चित्त मुक्यौ तिन संगइ ॥

(१) मो.-हट्टै ।

तीय वचन अपि जीह । जीव सथ्थह लुक छुट्टिय ॥
कर चारहु मन राज । कछो छंदे अंग जुट्टिय ॥
निस पतन भई जोगथ विपन । इंकाऱ्यौ दुजराज वर ॥
घरियार प्रात बज्जै सुघर । रत्त मार वर उग्गि धर ॥
छं० ॥ ९९ ॥

कविचन्द का उस स्वप्न का फल बतलाना

सु गुन विद्र कविचंद । अग्र भय छंद विचारिय ॥
'सामि इथ्थ अस चढ़न । सुअत आतुर रन पारिय ॥
कलह केलि आगंम । सामि परिगह आइट्ठिय ॥
बल सगपन किय दान । हीन हीनह अप छुट्टिय ॥
कहुई चंद कवि मुष्य तत । आरुष राज न मानइयं ॥
सो भूत्त गति न्निमान सति । नन मिट्टै जुग जानइयं ॥
छं० ॥ १०० ॥

दूहा ॥ नहिं वरज्यो कविचंद नृप । कहि सुनाय सब सथ्थ ॥
ज्यों विधिना वर न्निंमयौ । 'जम कग्गद चढ़ि इथ्थ ॥छं०॥१०१॥

११५१ चैतमास की ३को पृथ्वीराज का कन्नौज को कूच करना

ग्यारह से इकानवै । चैत तीज रविवार ॥
कनवज देषन कारनें । चल्यो सु संभरिवार ॥ छं० ॥ १०२ ॥

पृथ्वीराज का सौ सामंत और ग्यारह सौ चुनिंदा सवारों को साथ में लेकर चलना।

कवित्त । ग्यारह से असवार । लष्य लीने मधि लेषैं ।
इसे छूर सामंत । एक अरि दल बल भष्यैं ॥
[3] तनु तुरंग वर वज्र । वज्र ठेलै वज्रानन ॥
वर भारथ सम छूर । देव दानव मानव नन ॥
नर जीव नाम भंजन अरिय । रूद्र भेस दरसन नृपति ॥
भेटयौ सु यह भर सभ्भई । दिपति दीप दिवलोक पति ॥छं०॥१०३॥

(१) ए. कृ. को.-स्वामि। (२) मो०,-सो, (३) ए.० कृ० को०-तनु तन गब्बर वजू ।

चल्यौ सु सेंभरिवार। सथ्थ सामंत सूर भरं॥
हनिग राज कयमास। अवनि आकंप राज वर॥
सर वर संभरिवार। साहि बंध्यौ गज्जनवै॥
इय गय नर भर वीय। सिंधि छंड्यौ पुनि है वै॥
सामंत सूर सथ्थह नृपति। देव वत्त कारन सुगति॥
कनवज्ज राज जग्गह कलन। चल्यौ राज संभरि सुभति॥
छं० ॥ १०४ ॥

कनवज्जह जयचंद। चल्यौ दिल्लीपति पिथ्थन॥
चंद बरद्दिय तथ्थ। सथ्थ सामंत सूर घन॥
चाहुआन कूरंभ। गौर गाजी बड़गुज्जर॥
जादव रा रघुवंस। पार पुंडीरति पथ्थर॥
दुत्तने सहित भूपति छज्जौ। उड़ी रेन छीनौ नभौ॥
[2]दूक लथ्थ लथ्थ वर लेषिए। चले सथ्थ रजपूत सौ॥छं०॥ १०५॥

दूहा॥ करि सुनंद संभरि सु पहु। चढ़िक्रम्यौ [3]लय मग्ग॥
हर हर सुर उच्चार मुष। उर आराधन लग्ग॥ छं० ॥ १०६॥

साथी सामंतों का ओज वर्णन।

कवित्त॥ एक सत्त बल सूर। एक बल सहस पानि वर॥
एक अयुत साधंत। [4]दुरद रद दहन तत्त कर॥
एक लथ्थ आरूढ़। जुद्ध जम जेम भयंकर॥
एक कोटि अंगवन। धरत हर उर सु ध्यान वर॥
रवि तन समान तन उज्जले। सत घट अग्ग सु वीर तन॥
तिन सथ्थ सज्जि संभरि स पहु। तिथ्थ क्रम न विच्चारअन॥
छं० ॥ १०७॥

सामंतों की इष्ट आराधना॥

एक ईस आराधि। एक उमया आरोहन॥
[5]एक दुंमनि चित जपत। एक गजवदन प्रमोहन॥

(१) मो० करन (२) ए. कृ. को.-एकेक लथ्थ वर लिखिए।
(३) ए. कृ. को.-मय। (४) ए. कृ. को.-उर। (५) मो.-एकदिन मन।

इक्क सट्ठि चय रचित । इक्क पंचास उभय रत ॥
इक्क इनू त्रिय ध्यान । इक्क भैरव घोरत[1] मत ॥
इक्क जपत अंत अंतक मनह । इक्क पुरंदर रत्त उर ॥
इक्क उर विदार विहर मिरग । धरत ध्यान खंकाल मुर ॥

छं० ॥ १०८ ॥

राजा के साथ जानेवाले सामंतों के नाम और पद वर्णन ।

भुजंगी ॥ गुरं अंत मत्तं [2]पयं पाय पायं । असी मत्त सब्बै गयंनं मठायं ॥
लह्ह घोडसं [3]गोचवं अट्ठ सायं । चवै चंद छंद भुजंगंप्रियायं ॥

छं० ॥ १०९ ॥

चल्यौ जंगलीराव कनवज्ज पथ्थं । चले खूर सामंत सथ्थं [4]समथ्थं ॥
चल्यौ सथ्थ सामंत कन्हं समथ्थं ॥ जिनै बंदियं खूर संग्राम हथ्थं ॥

छं० ॥ ११० ॥

विरद्दं नरंनाह उग्गाह सोहं । कुलं चाहुआनं चयं पट्ट रोहं ॥
गुरू राव गोयंद बंदै सु इंदं । सुतं मंडलीकं सबै सेनचंदं ॥

छं० ॥ १११ ॥

धरै धंम सामित्त सा रायलंगा । सुतं राव संयम्म रन में अभंगा ॥
सदा सेवसों चित्त इनमंत बीरं । रमै रोस रंगं तवै आय भीरं ॥

छं० ॥ ११२ ॥

चल्यौ स्वामि सन्नाह सा देवराजं । सुतं बग्गरीराव सामंत[5]जाजं ॥
सदा इष्ट आभिष्ट खांमित्त चित्तं । वियं बीर चित्तं सु आनै न हित्तं ॥

छं० ॥ ११३ ॥

रनंधीर पावार सथ्थं सलथ्थं । चल्यौ जैत[6]सिंघं सु कंकं अलथ्थं ॥
भरं जामजद्दों सु धीची प्रसंगं । करं कच्छवाहं सु पज्जून संगं ॥

छं० ॥ ११४ ॥

बलीभद्द कूरंभ पालहंन सथ्थं । करंबाह कथ्थं सु कंकं अकथ्थं ॥
नरं निद्धुरं धज्ज कामधज्जराजं । वडंगुज्जरं राम सो सामि काजं ॥

छं० ॥ ११५ ॥

---

(१) मो.- मन । (२) ए. कृ. को-पाद्य । (३) ए.-गोचर ।
(४) कृ. को.-सनर्थ्थं । (५) मो.-राजं । (६) मो.-संगं ।

सदा ईस सेवं सुरं अत्तताई। चले इंद्र इम्मीर गंभीर भाई॥
वरंसिंघ दाहिम्म जंघार भीमं। वरं तास चंपै न को जोर सीमं॥
छं० ॥ ११६ ॥
सज्यौ वाह पम्मार उद्दिग्ग सथ्थं। चल्यौ चंद पुंडीर संग्राम सथ्थं॥
वर चाहुआनं वरसिंघ वीरं। हरसिंघ संगं सु संग्राम धीरं॥
छं० ॥ ११७ ॥
सज्यौ राव चालुक्क सारंग संगं। समं विभराजं सु बंधं अभंगं॥
सथं जागरं सूर सागौर गोरं। वरं वाररंसिंह सा सूर[1]घोरं॥
छं० ॥ ११८ ॥
वली वाररं रेन रावत्त रामं। दलं दाहिमा रूव संग्राम धामं॥
निरद्वान वीरं सु नारेन नीरं। समं सूर चंदेल भोंडा सधीरं॥
छं० ॥ ११९ ॥
वड़ंगुजरं कंक राजं कनक्कं। सहं सूर सामंत बंधैति अंकं॥
चल्यौ माल चंदेल भट्टी सु भानं। समं सामलं सूर कमधज्जरानं॥
छं० ॥ १२० ॥
वरं सिंघ वीरं सु मोडिल्ल बंधं। नृपं राय बंधं वरंनं सुसिद्धं॥
दलं देवरा देवराजं सु सोहं। महा मंडलीराव सीहं अरोहं॥
छं० ॥ १२१ ॥
धनू धावरं धीर पांवार सथ्थं। चल्यौ तोमरं पाइरा [2]वारि वथ्थं॥
सज्यौ जावलौ जग्ग चालुक्क भारौ। चलं वग्गरी वाय घेता घ[3]गारौ॥
छं० ॥ १२२ ॥
वली राय वीरं सु सारंग गाजी। घरीहार राना दलं रूव राजी॥
वरं वीर जादौं भरं भोजराजं। समं सांषुला सीह सामल्ल साजं॥
छं० ॥ १२३ ॥
कमंधज्ज बीकम्म सादल्ल जोरी। अरी ठंठरी टाक सारंन [1]जोरी॥
जयंसिंघ चंदेल वारू कठेरौ। भरं भीम जादौं अरी गो उजेरौ॥
छं० ॥ १२४ ॥

(१) ए. कृ. को.-घोरं।
(२) सो.-सथ्थं।
(१) ए. कृ. को.-वारि।
(३) ए. कृ. को.-मोरी।

सुतं नाहरं परिहारं महल्लं । समं पीष संग्राम साहं गहल्लं ॥
वरं वारडं मंडनं देवराजं । रनं अच्चलं पाय अचलेस साजं ॥
छं० ॥ १२५ ॥

चल्यौ कच्चरारावं चालुक्क बंभं । सुतं भीम संगं सदा देव संभं ॥
कमधज्ज आरज्ज आहं कुमारं । भरं भीम चालुक्क वीरंबरारं ॥
छं० ॥ १२६ ॥

गनै लष्यनं लष्य वघ्घेल एकं । सुतं पूरन[1]सूर बंदै सुतेकं ॥
परीहार तारन्न तेजल्ल डोडं । अचल्लेस भट्टी अरीसाल सोढं ॥
छं० ॥ १२७ ॥

बड़ंगुज्जरं चंद्रसेनं सुधीरं । सुतं कट्ठियं सिंघ संग्राम वीरं ॥
विजैराज वघ्घेल गोहिल्ल चाचं । लघंनं पवारं नही क्रूर राचं ॥
छं० ॥ १२८ ॥

भरं रंघरी भूम्म सामँत पुडीरं । भिरै सूर भग्गै नहीं सारभीरं ॥
कमध्धज्ज जैसिंघ पुंज पहारं । भरं भारथंराय भारथ्थ भारं ॥
छं० ॥ १२९ ॥

सुतं जागरं केहरी मल्लनासं । बँधंनौरवं कट्ठ संग्राम बासं ॥
चल्यौ टांक चाटा सु रावत्त राजं । हरी देवतीराइ जादौं सु जाजं ॥
छं० ॥ १३० ॥

बली राइ कच्छं [2]ओहट्टी गँभीरं । हुआं हाडुलीराव सथ्थं हमीरं ॥
पहू पुहकरंराव कन्हं सुराजं । दलं दाहिमा जंगली राय साजं
छं० ॥ १३१ ॥

मुषं पंच पंचाइनं चाहुआनं । सुअं पारिहारं रनंबीर रानं ॥
रसं सूर सामंत सथ्थं ससथ्थं । वरं लष्यियै एक एकं मुलथ्थं ॥
छं० ॥ १३२ ॥

इनूफाख ॥ इक सेवक छिंगन कंन्ह तनौ । निरष्पे कविचंद गुरुष्प घनौ ॥
छह अग्गर सुभ्भट सत्त सुतं । कनवज्ज चल्यौ नृप सोमसुतं ॥
छं० ॥ १३३ ॥

(१) ए. कृ. को.-पूर (२) के.-एहट्टी ।

पृथ्वीराज का जमुना किनारे पड़ाव डालना।

कवित्त ॥ तट कालिंदी तीर। कियौ मुकाम दिल्लेसुर॥
अवर सूर सामंत। सब्ब उत्तरे आय तुर॥
समै निसा निज सिवरि। बीस सामंत सूर सब॥
मधूसाह परधान। राज उच्चैर सूर तब॥
तीरह बन अंतर धरिय। अंतर बेध सुगंग धर॥
आवासि मंत कारन सुनहु। चलौ सुभट्ट सर्मग भर ॥छं०॥१३४॥

दूहा॥ तट कालिंद्री तह विमल। करि मुकाम नृप राज॥
सथ्थ सयन सामंत भर। सूर जु आये साज॥ छं० ॥ १३५ ॥

कवित्त ॥ अप्प जाति विन सब्ब। चले सामंत सथ्थ तब॥
पहु निकट्ट कनवज्ज। ताहि प्रछन्न गवन कब॥
मधूसाह गुररान। रहे दिल्ली रह कज्जं॥
गुर बीठल समदेव। अनुज रामह सथ सज्जं॥
अह अट्ठ राज आवागमन। सजी सेन सथ्थं सुविधि॥
काज दान द्रव्य गंगह सजी। जिम सिझ्यै तीरथ्थ सिधि॥
छं० ॥ १३६ ॥

जमुना के किनारे एक दिन रात विश्राम करके सब सामंतों को घोंड़े आदि बांटकर और गढ़रक्षा का उचित प्रबन्ध करके दूसरे दिन पृथ्वीराज का कूच करना।

दूहा॥ [1]किय आयस संभरि स पहु। सुनौ सगुर वर साह॥
सत कम्मेखक सथ्थ घन। सजौ सक्क मन राह॥ छं० ॥ १३७ ॥

एकादस सर एक नृप। सौ सामंत जु सूर॥
दिसि कनवज दिल्ली नृपति। चैतह वज्जि [2]स तूर॥ छं०॥ १३८ ॥

कवित्त ॥ पारिहार रनवीर। राज अग्गें आभासिय॥
प्रछन्नह कनवज्ज। तिथ्थ संक्रमन सु भासिय॥

---

(१) मो.-कार (२) मो..सनूर।

साज सब्ब वर [1]ताह । भरी वासन ध्रुव रज्जिय ॥
अवर सङ्ग परिहार । काज. भोजन सब सज्जिय ॥
साहनी सहि अगमाल तहँ । देहु सवन सामंत इय ॥
सारङ्ग सिंघ तेजङ्ग इय । सजे सब्ब परवार तय ॥ छं० ॥ १३९ ॥

दूहा ॥ बोलि साहनी सोच मन । दल खण्यन अस लज्ज ॥
सामंतन कारन विल्लन । समपि समर अस काज्ज ॥ छं० ॥ १४० ॥

प्रथम संवोधे सथ्थ सह । सुत दुज रथ्थे साह ॥
जाम सेष रजनी चली । सिखह सु सज्जी ताह ॥ छं० ॥ १४१ ॥

पृथ्वीराज का नाओं पर यमुना पार करना ।

इन प्रपंच भुअपति चल्यौ । अह कविचंद अनूप ॥
जमुना [2]नाघनि उत्तरिय । निकट मङ्गल अनुरूप ॥ छं० ॥ १४२ ॥

पृथ्वीराज के नांव पर पैर देते ही अशुभ दर्शन होना ।

कवित्त ॥ चढ़त राज प्रथिराज । सगुन भय भीत उपन्नौ ॥
स्याम अंग तन छिद्र । कलस संमुह संपन्नौ ॥
एक अंग तिय सकल । एक आमिस मेस वर ॥
एक अंग शृंगार । एक अंगह सुंदर [1]नर ॥
दिष्यौ सु नयन राजन रमनि । पुच्छि वत्त धारह धनिय ॥
शृंगार वीर दुअ संचरहि । अहूवै अथ्थन भनिय ॥ छं० ॥ १४३ ॥

नांव से उतरने पर एक स्त्री का मिलना ।

दूहा ॥ तीन बंधि भुअपति उभय । अह कविचंद अनूप ॥
जमुन उतरि नावह निकट । मिलिय महिल इन रूप ॥ छं०॥१४४॥

उक्त स्त्री के स्वरूप का वर्णन ।

कवित्त ॥ पानि नाक दाहिनी । हास मुष नैन रोस निज ॥
उरसि माल गो छुल । कमल कनवर सिरसी रज ॥

(१) ए. कु. को.-ताह । (२) मो.-नावसु ।
(१) ए. कु. को.-वर ।

वाम हेम आधंन । लोह दच्छिन दिसि मंडिय ॥
अद्ध केस सलवंध । अद्ध [1]मुकलित तिहि छंडिय ॥
विपरीत पीत अंवर पहरि । पिछि राज अचरिज्ज करि ॥
किन महिली किन घर न सुवर । किन सु राज अरधंग धरि ॥
छं० ॥ १४५ ॥

इनूफाल ॥ मिलि महिल सगुन सरूप । द्रग अष्प निरषत भूप ॥
दछि दोर नासि सु लोन । कर वाम समकर भौन ॥ छं० ॥ १४६ ॥
अधकेस मुकुलित संधि । [2]अध कुंत लंकल बंधि ॥
अवतंस इक श्रव लोन । दिसि कंक आसिय वोन ॥ छं० ॥ १४७ ॥
द्रिग वाम अंजन दीन । दछि नैंन नागवि कौन ॥
सल वाल भाल सुपत्ति । परसात कंकि [3]घत्ति ॥ छं० ॥ १४८ ॥
मुष हास नेन विरोस । [4]नासाग्र उग्गन जोस ॥
कर रतन दच्छिन राज । पहु पानि वल्लिय वाजि ॥ छं०॥ १४९ ॥
मुकतावली अध सेत । अध साल माल मवेत ॥
दुति वरन भूषन रूप । जालंक कलसा नूप ॥ छं० ॥ १५० ॥
अधसेत आसुरि स्याम । रत पीत अंवर काम ॥
सुर गुनिय जा तिल तंत । सिर कमल कल इय यंत ॥ छं० ॥ १५१ ॥
तंडीव तरल तरंग । जालंक तंड सुरंग ॥
अध मत्त गवन अनूप । अध चंचलं मद जप ॥ छं० ॥ १५२ ॥
पद जेहरी धरि हेम । क्रम क्रम्यौ उरजत नेम ॥
सच साध वाम सु पुछि । पद दच्छिनी क्रत गुछि ॥ छं० ॥ १५३ ॥
को महिल को वर गेह । पुछि राज अचरिज एह ॥
.... । .... ॥ छं० ॥ १५४ ॥

राजा का कवि से उक्त माहिला के विषय में पूछना ।

दूहा ॥इहि विधि नारि पयान मिलि । मुष कल रत्त फुनिंद ॥
उहिम आदर चलिय रूप । तव नह बुझिअय चंद ॥ छं० ॥ १५५ ॥

---

(१) मो.-मुक्कित वर । (१) ए. कृ. को.-धर ।
(२) मो.-मुक्कित वर । (२) ए. कृ. को.-पत्ति ।
(३) ए. कृ. को.-नासाग्र उग्र उग्गन ने ।

*कहै चंद नृप ईस सुनि। दरस देवि दिय तोहि ॥
जग्गि भंजि अरि गंजिकै। दुलह संजोगिय होइ ॥ छं० ॥ १५६ ॥

राजा का कविचंद से सब प्रकार के सुगुन असगुनों का फल वर्णन करने को कहना।

बहुरि सगुन राजन्न हुअ। फल जंपै कविचंद ॥
उत्तिम मज्झिम विवह परि। कहि समझावत [1]छंद ॥ छं० ॥१५७॥
पद्धरी ॥ चहुआन चवै सुनि चंद भट्ट। संक्रमन [2]मग्ग उद्दछंग यट्ट ॥
तुम लहौ अर्थ विद्या सु सार। जंपौ सु सगुन सब्बै प्रचार ॥
छं० ॥ १५८ ॥

कविचंद का नाना प्रकार के सगुन असगुनों का वर्णन करना

कविचंद कहै सुन दिल्लिराज। विधि कहौं सगुन रुब्बें सु साज ॥
दष्पिनद्दि वादि वामंग वादि। सम थान देवि उत्तिम उमादि ॥
छं० ॥ १५९ ॥
अति बृद्धि रिद्धि [3]अप्पै सु लोय। जस कुसल सुफल पंथी सजोइ ॥
सुर दून तीन दाहिनी देय। वर्ज्जंत गमन पथिकं परेय ॥
छं० ॥ १६० ॥
मंडलह सूर तरि संझ सद्दि। मुक्कंत सीम पंथिक परद्दि ॥
बायंब हुंत दष्पिन प्रवेस। तारायं तास जंपे सु तेस ॥
छं० ॥ १६१ ॥
एकीक कुसल दुअ कुसल काज। [4]तीसरी होत फल रिद्धि राज ॥
दाहिनी हुंत दिसि वाम आय। पंथी गवंन वरजंत ताइ ॥
छं० ॥ १६२ ॥
दूसरौ घात बंधनह वृत्त। तीसरी गवन [5]खूचंत सुत्त ॥
तारायं उंच फल उंच [6]देस। मज्झिम अधम अद्धौ सु [7]तेस ॥
छं० ॥ १६३ ॥

*यह दोहा मो. प्रति में नहीं है। (१) ए. कृ. को.-चंद। (२) ए. कृ. को.-लग्ग। (३) ए. कृ. को.-अप्पै। (४) ए. कृ.-नीसरी। (५) मो.-सयूंत। (६) ए. कृ को.- देह। (७) ए. तेय। को. मो. नेस।

दष्पिनी सगुन सुर दष्पि चारि । वांईय वाय प्रसरंत रारि ॥
कारज्ज सिद्धि सूचंत नाम । विपरीत सुफल विपरीत काम ॥
छं० ॥ १६४ ॥

सुर एक एक कंटक अरोहि । अंगार तूर भसमं वरोहि ॥
सूकें सु कट्ठ गोवर सु इंडि । आहट्ठि सहि गुनयंग छंडि ॥
छं० ॥ १६५ ॥

उत्तरै तार सहै सु सद्द । पूरन्न चित्त कारिज्ज मंद ॥
आवंत होय जो ग्रेह नाम । वांईय सहि सिद्धंत काम ॥
छं० ॥ १६६ ॥

केदार कूप नै तट्टवाय । परहरै सिद्ध वंछै सु जाय ॥
तौतरह घरह नाहर जंबूक । सारस्स चिल्ह चाचिग अलूक
छं० ॥ १६७ ॥

कपि कंठनील सुक सद्धि नाम । दिस संति सुष्प पूरंत वाम ॥
पंचाइन दिस दाहिन प्रचार । सादंत अर्थ दष्पित सचार ॥
छं० ॥ १६८ ॥

सूचंत सुभय दारुन सथ्य । पति सथ्य निद्धि निंदं अतिथ्य ॥
चै पंच सत्त एकं उभार । पहु काल सूग्ग दाहिन सुचार ॥
छं० ॥ १६९ ॥

भोजनं पच्छ वाईय माल । पूरंत अर्थ अर्थीव ढाल ॥
एकली असित सूग अम्म रूप । बूडंत किरनि अंतकह जूप ॥
छं० ॥ १७० ॥

निक्काम सगुन जो होइ सिद्धि । प्रावेस सोय विपरीत रिद्धि ॥
सहै जो सिवा सद्दह कराल । वाईंय दिसा सुभ भेव ढाल ॥
छं० ॥ १७१ ॥

चाचिग्ग निकुल अज भारद्वाज । चामर सु छच वीणा सवाज ॥
भृंगार बार विरही कनक्क । दुर्वास[1] दद्धि सुरसुर[2] धनंक ॥
॥छं०॥१७२ ॥

(१) ए. कृ. को.-दुर्वास। (२) मो.-सुरि।

द्रष्पन कलाल वेसाह गज्ज ।[1]सारद्ध सिद्धि अष्पै सुरज्ज ॥
मूषक करम्भ गोधह भुअंग । .... छं० ॥ १७३ ॥
अंगार कद्ध भसमंग पास । गुड़ लवण तक्क गोबर दुरास ॥
[2]प्रवरज्ज अंध मूकंत केस । गरदम्भ रूढ़ तजि अंदरेस ॥
॥छं०॥१७४॥
प्रनयाम पंच छह करहि जाम । या दुष्ट सगुन छंडै सु राम ॥
सागुन्न पुरिष सह वाम नाम । चिय नांम सुम्भ दच्छिनह ताम ॥
॥ छं० ॥ १७५ ॥

दूहा ॥ बनबिलाव घूघू घरह । परत परेव पंडूक ॥
एक थान दच्छिन दिसह । कहिय न श्रवन समूक ॥ छं० १७६ ॥
रासभ उभय कुलाल करि । सिर बंधन निस भारि ॥
वाम दिसा संमुह मिलिय । अवसि होइ प्रभु रारि ॥छं०॥१७७॥
अतिलक बंभन स्याम असु । जोगी हीन विभूति ॥
संमुह राज परछियै । गमन वरज्जै नित्त ॥ छं० १७८ ॥
सिर पंछी दच्छिन रवै । वामी उवहि सियाल ॥
मृतक रथी समुंह मुषह । कीजै गवन न्विपाल ॥छं०॥१७९॥
कलस केलि उज्जल वसन दीपक पावक मच्छ ॥
सुनिय राज बरदाय भनि । एह सगुन अति अच्छ ॥छं०॥१८०॥
राज सगुन संमुह हुअ । धुअ तन [3]सिंघ दहारि ॥
मृग [4]दच्छिन छिन छिन घुरहि । चलहित संभरिवार
॥ छं० ॥ १८१ ॥
सुनत सीस [5]सारस सबद । उदय सुबहस्त भान ॥
परनि भाजि प्रतिहारसौ । करहित काज प्रमान ॥ छं० ॥ १८२ ॥
कल कलार सद्धो समुह । इमि न्वप बुझयो चंद ॥
इक रवि मंडल मेदि है । इक करिहै आनंद ॥ छं० ॥ १८३ ॥

(१) ए. कृ. को.-साहसन । (२) ए. घवरज्ज ।
(३) मो. "सिंघह" । (४) मो. दच्छिन घिन घिन ।
(५) ए. कृ. को.- सारद ।

कवि का कहना कि आप सफल मनोरथ होंगे परंतु साथही हानि भी भारी होगी।

एक करहि ग्रह नंद वह। इक छिन [1]भिन्न सरीर ॥
इक भारथ्थ सु जीतिहै। जे वज्रंग सु बीर ॥ छं० ॥ १८४ ॥

यह सुन कर पृथ्वीराज का कैमास की मृत्यु पर पश्चाताप करके दुचित्त होना।

सुबर बीर सोमेस सुअ। गुन अवगुन मन धारि ॥
दुष अति दाहिम्मा दहन। मरन सु मंगल रारि ॥ छं० ॥ १८५ ॥

सामंतों का कहना कि चाहे जो हो गंगा तीर पर मरना हमारे लिये शुभ है।

सम सामंतन राज कहि। पहु परमारथ मत्ति ॥
समर तिथ्थ गंगा उदक। उभय अनूपम गत्ति ॥ छं० ॥ १८६ ॥

वसंत ऋतु के कुसमित वन का आनंद लेते हुए सामंतों सहित राजा का आगे बढ़ना।

रति माधव मोरै सु तरु। पुहप पत्र बन बेलि ॥
राज कवी करतह चले। सम सामंतन केलि ॥ छं० ॥ १८७ ॥

राजा के चलने पर सम्मुख सजे बजे दूलह का दर्शन होना।

कवित्त ॥ चलत मग्ग चहुआंन। जांम पिगीय पहु निकरि ॥
मजि दुल्लह सनमुष्य। सुमन सेहरौ सीस धरि ॥
सजे पिट्ठ वामंग। रंग निज नेह प्रकम्मे ॥
पिष्पि राज प्रथिराज। मन्नि सा सगुन सु [2]मम्मे ॥
उदयंत दिवाकर चीय मिलि। सुभट अंत किय जुद्ध जुरि ॥
जय जंपि सथ्थ साहा गवन। बज्जे बज्जनि [3]सिंधु सुर ॥ छं० ॥ १८८ ॥

(१) ए. छ. को.-भीन। (२) को.-भ्रंमे। (३) मो.-सिधुसुरन।

आगे चलकर और भी शकुन होना और राजा का मृग को वाण मे मारना ।

बाग षंचि दिस्सेस । जाम उभया षिन उत्तरि ॥
दिसि दाहिनि सजि द्रुग्ग । बास वित्ती तर [1]उप्परि ॥
दिसि बाइ बर सद्दि । भसम उप्पर आरुन्नी ॥
ताम तंमि उत्तरी । इष्पि राजन सरसम्मी ॥
एकल्ल मृग्ग सन्हौ मिल्यौ । हयो राज संधेव सर ॥
उत्तरी ताम देवी दुहर । देषि सर्व दुम्मन्न भर ॥ छं० ॥ १८६ ॥

और भी आगे चलने पर देवी के दर्शन होना ।

चल्यौराज प्रथिराज । उभय षिन तथ्थ विलंबे ॥
मिलि संमुह जुग्गिनिय । दरस दीये न्रप अंबे ॥
कर षप्पर तिरसूल । सवद उच्चरि जय जंपे ॥
मधि षप्पर [2]धरि हेम । प्रनमि राजंग पयंपे ॥
माकत्ति सज्जि हय हंकि सब । अवर वारि आरोहि चिय ॥
ग्रह जाइ अप्प अपगुन कियं । मिलिय राज सा संमुहिय ॥
छं० ॥ १९० ॥

इसी प्रकार शुभ सूचक सगुनों से राजा का बत्तीस कोस पर्य्यंत निकल जाना ।

दूहा ॥ इन सग्गुन दिल्लिय न्रपति । संपत्तौ भूसाम ॥
कोस तीस दुअ अग्गरौ । कियौ मुकाम सु ताम ॥ छं० ॥ १९१ ॥

एक रात्रि विश्राम करके पृथ्वीराज का आगे चलना ।

सहि राज रनबीर तहं । किय भोजन सु उताम ॥
सब आहारे अन्न रस । चच्या जाम निसि जाम ॥ छं० ॥ १९२ ॥
अरिल्ल ॥ किय भोजन सबसथ्थ ब्रहासन ग्रास दिय ।
तिथ्थि चवथ्थिय सीम जाम इक नींद लिय ॥

(१) ए. कृ. को.- उत्तरि । (२) मो.-पर ।

फुनि चढ़ि चल्यो राज न बुझ्यो कोइ भत्त।
नट्ट सु बुझ्झै राज समझि न अप्पि वत्त ॥ छं० ॥ १६३ ॥

उक्त पड़ाव से राजा का चलना और भांति भांति के भयानक अपशगुन होना।

भुजंगी ॥ चल्यो राज प्रथिराज कनवज्ज राजं। लिए सहस एकं सतं एक साजं॥
रवीवार वारं तिथी ताइ रूपं। सवं इन्द्र जोगं छठं राह रूपं ॥
छं० ॥ १६४ ॥

दुरं वार आकास वाअंक लज्जी। दुहूं पष्य नीचं सवं दाव नज्जी ॥
मिली नारि पंचं सिरं कुंभ धारी। सुरी मध्य विद्धी उभै रूपकारी ॥
छं० ॥ १६५ ॥

न्वपं जोग तीरं जु जै जै करंती। दई दच्छिनं वाम पंथी फिरंती ॥
मिल्यो रूपराअं करै सह वामं। गरज्जंत मेघं अकालं सु तामं ॥
छं० ॥ १६६ ॥

सुवं अग्गि झालं मृतं कास उट्ठी। वज्जैजा करीरं सुषं मंस छुट्ठी ॥
खियं मंस गिद्धी उषं इंनि मग्गी। वुलै सारसं वाम कुरवंत डग्गी ॥
छं० ॥ १६७ ॥

एक ग्राम में नट का भगल (अंग छिन्न दृश्य) खेल करते हुए मिलना।

कवित्त ॥ चलत मग्ग चहुआन। निकट इक गाम समंतर ॥
नट खेलत नाटक्क। भगल मंड्यो भ्रम तंतर ॥
सत्त संगु उप्परै। नट्ट सुत्तो जय जंपत ॥
कहुँत सीस कहुं पानि। धरनि धर पर्‍यो सु कंपत ॥
दुइ चरित पिष्पि सामंत सब। अप्प चित्त विभ्रम लहै ॥
पिष्पंत परसपर सुष [1]सकल। नको बुझ्झ राजन कहै ॥छं०॥१६८॥

(१) ए. क. को.- सयल।

जैतराव का कन्ह से कहना कि राजा को रोको यह अशगुन भयानक है। कन्ह का कहना कि मैं पहिले कह चुका हूं।

इक्क कहै कोइ तिथ्थ। कवन थानक को देवह ॥
जिहि असगुन चल्लियै। कोइ न जानै यह भेवह ॥
कहिय जैत सम कन्ह। तुमहिं रथ्यौ कहि राजन ॥
कहै कन्ह नन लहौ। प्रथम बरज्यौ बहु जाजन ॥
पज्जून कहै बुझ्झहु [1]सकल। इह अवस्य कनवज क्रमै ॥
जानै सुभट्ट कारज सयल। मति सु कोइ चिंता भ्रमै ॥छं०॥१९९॥

कन्ह का कहना कि कहने सुनने से होनी नहीं टरती।

कहै कन्ह नरनाह। सुनहु क्रूरंभराव धुअ ॥
जो भविस्य [2]न्हिमान। सोइ मिट्टै न भूर [3]धुअ ॥
धरम सुअन [4]क्रत दृत। सोई बरज्यौ नहिं मानिय ॥
जनमेजै कहि जग्य। सु हित निष्षेध न जानिय ॥
सौमिच बरज्जित राज रघु। कनक मृग संधेव सर ॥
दसकंध [5]निषेधिय मंचियन। सीय न अप्पिय काल वर ॥छं०॥२००॥

किय जहव चिय रूप। आप दुर्वास सुधारिय ॥
काल विनस निर्घोष। विप्र वाहै नन हारिय ॥
इहि राजा प्रथिराज। हन्यौ कैमास अप्प कर ॥
भरि वेरी चामंड। किये दुम्मंन सब्ब भर ॥
इह गमन भट्ट बुझ्झै नृपति। करै कहा सुभ्भै न मन ॥
उप्पजी कोइ क्रत्या अतुल। सोइ प्रहूचिय राज म तन ॥ छं० ॥२०१॥

*बार सोम पंचमी। जाम एकह निसि बित्ती ॥
कें दुर्वल वर पट्ट। तहां उतरी नृप रत्ती ॥

---

* यह २०२ और २०३ दोनों छन्द मो.-और ए. प्रतियों में तो हैं ही नहीं। कृ. प्रति में लिख कर काट दिए गए हैं।

(१) ए. कृ. को- सयल (२) मो.-निरमान। (३) मो. कृ. ए.-भुअ।
(४) ए. कृ. को.-अम। (५) ए. कृ. को. निषेधन।

करि स्तुति सब सथ्थ। अश्व तजि नींदह ग्रासं॥
घटी पंच निसि शेष। सु पहु चल्यौ चढ़ि तासं॥
पत्तौ सु जाय संकरपुरह। दिवस अंत बरथान नय॥
आहारि अन्न आसन्न सय। सब बुल्ले सामन्त तय॥ छं०॥ २०२॥

पृथ्वीराज का सब सामंतों को समझाना।

इह जंपी प्रथिराज। करिव अस्तुति सामंतं॥
धरि छग्गर कविचंद। महल दिष्पन मन संतं॥
जब जानौ युध समय। तुमै सब काम सुधारौ॥
मो चिंता मन मांहि। होय तुमतैं निसतारौ॥
संभलिव सकल सामन्त मत। भयौ वीर आभास तन॥
चिंतिय सु इष्ट अप्पान अप। आश्रम्में सब्बा सुमन॥ छं०॥ २०३॥

पंचमी सोमवार को पहर रात्रि गए पड़ाव पड़ना।

दूहा। जानि सगुन चहुआन नें। मन भावी सो गत्ति॥
सो न मिटै पर ब्रह्म सौं। ब्रह्म चीत भैभित्त॥ छं०॥ २०४॥

सामंतों का कहना कि सब ने हटका पर आप न माने।

[1]सह समद्दि नारंजुलै। सो इच्छिनि मोकल्लि॥
गुरू सज्जन सैसव[2] सु बंध। बरजंतै नृप चल्लि॥ छं०॥ २०५॥

सामंतों का कहना कि हमें तो सदा मंगल है परंतु आप हमारे स्वामी हो इस लिये आपका शुभ विचार कर कहते हैं।

रवि मंडल भेदै स [3]फुटि। प्रथम चित्त [4]फुनि होइ॥
[5]तन जंपै भट जीह करि। नृपहि अमंगल [6]जोइ॥ छं०॥ २०६॥

(१) ए. कृ. को.- सम। (२) ए. कृ. को.- सैसव्व।
(३) मो.- फुनि। (४) मो.- पुनि।
(५) मो.- नन। (६) ए. कृ को.- होइ।

प्रातःकाल पुनः चाहुआन का कूच करना। स्वामी की नित्य सेवा और उनका साहस वर्णन।

पद्धरी ॥ चढ़ि चल्यौ राज चहुआन सूर। त्रिमलिय किति रवि प्रात नूर॥
इक्क एक वीर दह दहति सूर[1]। देवत्त वाह दुज्जन करूर ॥
छं० ॥ २०७ ॥

तिन सथ्थ पंच भर पंच जित्त। सज्जोति सेन सिरदार इत्त ॥
इक्क इक्क संग हुअ दुअन दाह। जनु दार पच्छ बाराह राह ॥
छं० ॥ २०८ ॥

सजि चली संग देवियं प्रचंड। उनमन्न[2] रूप कर सजे दंड ॥
सजि चल्यौ संग भैरूं उभंत। सेवक सहाय अरि करत अंत ॥
छं० ॥ २०९ ॥

सजि चले दय पंचाम बीर। कौतक्क कहल मन हरषि धीर ॥
जुग्गिनिय सट्ठि चव चल्लि संग। किलिकिलत काल सम रमन जंग॥
छं० ॥ २१० ॥

भहरांति भीत भूतन जमांति। घहरांति घोरि सुर प्रेत पांति ॥
अनि अन्नि इष्ट सबदेव साधि। चल्ल सुमंच जंचनि अराधि ॥
॥ छं० ॥ २११ ॥

अकलंक कंक अनसंक चित्त। रच्चे सु स्वामि सब सेव हित ॥
माया न मग्ग जिन चित्त जाइ। पोइनिय पत्त जल ज्यौं जनाइ ॥
॥ छं० ॥ २१२ ॥

ऐसे जु मित्त सामंत सूर। उनमत्त अंग जनु नंदिय पूर ॥
ढलहलिय ढाल मालह सजूर। वस्संत जानि हल्लत षजूर ॥
॥ छं० ॥ २१३ ॥

निरषंत नयन तिय तेज ताप। चढ़ि चल्यौ राज चहुआन आप ॥
सामंत सूर[3] सूरहि नरंभ। दिष्पियै लाज तिन मुष्प अंभ ॥
॥ छं० ॥ २१४ ॥

(१) ए.- रूर। (२) ए. क्र. को.- उनमत्तं। (३) ए. क्र. को.- सुरद।

सामंत किरनि प्रबिराज सूर। अरि तिमिर तेज कहुन करूर॥
पूहवी न वीर इन समह कोइ। कवि कहै वरनि जो आन होइ॥
॥ छं० ॥ २१५ ॥

रहि पंड समय भूभार पथ्थ। तिहि काज भयो अवतार 'तथ्थ॥
भय अभय चिंति छद सुषहि जोति। उग्गंत इंस छवि आनि होत॥
॥ छं० ॥ २१६ ॥

इस पड़ाव से पांच योजन चलने पर पृथ्वीराज का कन्नौज की हद मे पहुंचना।

जोजनह पंच गय चाहुआन। पर पुरह आनि उग्गयो सुभान॥
... ... । .... .. ॥ छं० ॥ २१७ ॥

दूहा॥ पर पुहमी पग्गे सु पहु। उग्ग भान पयान॥
दस वहस सहस दिसह। पूरन [2]छयत गयान। छं० ॥ २१८॥

एक दिन का पड़ाव करके दूसरे दिन पुनः प्रातः काल से पृथ्वीराज का कूच करना।

उदय इंस सज्जे सगुन। वज्जे अनहद सद्द॥
दिप्पत दरसन परस तप। पुज्जे दस दिस जह॥ छं० ॥ २१९॥

प्रभात समय वर्णन।

कवित्त॥ [3]चढ़ि चतुँरग चहुआन। राइ संभरिय सुयंभर॥
सकल सूर सामंत। मंत भंजन समथ्थ वर॥
पर अहंन सम समय। होत सकुन कुल मोरं॥
वज्जि पंचजन देव। सेव अंबर [4]मग ओरं॥
अस्व पात आत मिलि विच्छुरत। रोर अखिन सखिन सुषद॥
[5]लंपट कपाट विट चिय तजत। तम चर चर कीनी मुषद॥
छं० ॥ २२० ॥

(१) मो.- पिथ्थ। (२) ए. कृ. को.-मयन। (३) ए. कृ. को.-चढि चतुरंग चतुरंग। (४) ए. कृ. को.- मन। (५) मो.-लंपट किपाट विट चिय तजन। चम चर चर कीनी मुखद।

पद्धरी ॥ तव सज्जि सुद्दल विहल विसाल । पूरंन [1]गेन मूरंन [2]भाल ॥
[3]डंबरिय धरनि आरोह गेंन । दिसि विदिसि पवनपरसंत [4]ऐन ॥
॥ छं० ॥ २२१ ॥

सामंत सूर हैवर अरोहि । आकृत्त [5]क्रत्त मलि अगम मोह ॥
ढलवोय पीय ढलकंत ढाल । दधि झाल पलव वैरष विसाल ॥
॥ छं० ॥ २२२ ॥

हय हींमधरा पुर विहर बाह । तारच्छ सु तन अंतर उलाह ॥
ऐसे सुबीर रिन [6]विषम धार । अरि अंब [7]अचन अग्गथि करार ॥
॥ छं० ॥ २२३ ॥

चहुआंनभान अरि तिमिर तार । मानंत खूरकरिकर प्रचार ॥
दरसंत परसपर सुभट नैन । मींभंत भंति तन धरिग्ग मेन ॥
छं० ॥ २२४ ॥

विहँसत विहाय सथ्थान थान । मतपच फुल्लि मिलि भ्रमर मान॥
छूटंत गंधि [8]मिलि मंद वात । मिलि चलं भ्रमर परमन्न सुधात ॥
॥ छं० ॥ २२५ ॥

परजंक प्रीय नह तजत प्रौढ़ । नव पंज रंज [9]तल मलत मौढ़॥
सहंत चक्क साहीत बैन। अनुभान मत्त क्रम छंडि सेन॥
॥ छं० ॥२२६ ॥

दिसि विदिसि नयन परमान करंत । रसना रसान हरि वर धरंत ॥
संफटि तमाघ [10]तिमरनि तरार । अंजनह नगर उठि पवन धार ॥
छं०॥ २२७ ॥

संभरिय राय संभरि सु [11]साम । अवलोक देव बंदन सु राम ॥
.... । .... छं० ॥ २२८ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-गोंन । (२) । ए.-भूरंत । (३) मो.- डम्मरि ।
(४) मों. पसरंत । (५) ए. कृ. को.-क्रम्म । (६) मो.-निरमले ।
(७) ए. कृ. को.-मो. अचपन । परंत अक्षर बढ़ता है । (८) ए. कृ. को. जागि ।
(९) मो.-नल । (१०) ए. कृ. को.-तमूनि । (११) मो.-राम, को. कृ.-समान ।

कवित्त ॥ है सजि संभरि राय । चढ़िव चौहान प्रनं मन ॥
क्रमत मग्ग पिंगलह । मान उद्यान विषंनन ॥
नेंन दरसि दिसि विदिसि । निंद सभगिय पल अंगन ॥
अवलोकित दिन लोक । लोकनर वर है दंगन ॥
दिष्यिये बदन दूलह हगनि । सदन रंग [1]दुलही क्रमत ॥
बंदेवि पाय निंदे अगुन । फल सुभाव अंबर प्रमत ॥
छं० ॥ २२९ ॥

वन प्रान्त में एक देवी का दर्शन करके राजा का चकितचित होना।

दूहा ॥ बन सु थान इक देवि मिलि । मंग स्वान गन माल ॥
जट विभूति कर कंबयनि । लषि अचिज्ज भूपाल ॥ छं० ॥ २३० ॥

देव का स्वरूप वर्णन।

हनूफाल ॥ जट विकट सिर जट जूट । श्रव सचिय मुद्र विनूट ॥
चरचर्थ चरचित अंग । द्रग दिपै लोल सुरंग ॥ छं० ॥ २३१ ॥
गर गुंज गुंथित बंध । बनि सेत नेत सुकंध ॥
सजि पानि तानि कराल । मंग रंग स्वानह माल ॥ छं० ॥ २३२ ॥
रव हक्क गज्जत गन । लघु दिघ्घ चुट्टत बैंन ॥
हिय रक्त स्याम सु थान । कटि नील पीत उरान ॥ छं० ॥ २३३ ॥
भुज गेंन [2]रंग रसाल । कंबु ग्रीव [3]पीत सु आल ॥
श्रव सेत भ्रूव स भूर । लिल्लाट केसरि नूर ॥ छं० ॥ २३४ ॥
तन रंग नान प्रकार । चर चरन रंग सु चार ॥
नष नील घन परवान । मुष मुदित दिष्षि न्रपान ॥ छं० ॥ २३५ ॥
कविचंद दीन असीम । हसि जंपि नंमिय सीस ॥
दिष दंत नील सुरंग । रसना सुरंग दुरंग ॥ छं० ॥ २३६ ॥
मित अमित तन के भाव । सुद देव भूतनि राव ॥

(१) मो.-हुल्ली। (२) ए. कृ. को.-रेंन। (३) ए. कृ. को.-पीतल।

राजा का पूछना कि तू कौन है और कहां जाती है।

किन थान सों गम कौन। किन ठौर पर मनदीन ॥ छं० ॥ २३७ ॥

उसका उत्तर देना कि कन्नौज का युद्ध देखने जाती हूं।

सतिजुग्ग मो पित जुद्ध। रन चिपुर षंड विरुद्ध ॥
च ता सु रघुकुल राम। हनि लंक रावन ताम ॥ छं० ॥ २३८ ॥
द्वापुर सु अर्जुनराय। [1]घटवंश घव्यौ घाय ॥
कलिजुग्ग कनवज राज। चहुआन कुल [2]प्रथिराज ॥ छं० ॥ २३९ ॥
अरछी सु कमधज बंस। जुन्हाइ उदर प्रसंस ॥
दिय सुमति ताहि दुसीस। कलिप्रिया नाम मरीस ॥
छं० ॥ २४० ॥
पित पत्ति कुल संघार। मम पानग्रहन सु बार ॥
सो चरित दिष्पन काज। मिव हार कंठ समाज ॥ छं० ॥ २४१ ॥
यह जंपि गवन सु कौन। न्रिप चंद हसि रसभौन ॥
.... । .... छं० ॥ २४२ ॥

पृथ्वीराज का चंद से अपने सपने का हाल कहना

तिघट तौय माया सरिय। द्रिग लग्गिय तिहि काल ॥
सजि संवेग सु सुंदरिय। रचि शृंगार रसाल ॥ छं० ॥ २४३ ॥

पूर्व की ओर उजेला होना, एक सुंदरा स्त्री का दर्शन होना।

हनूफाल ॥ पहु ओर प्रगटि [3]प्रहास। छिन प्राचि ओर उजास ॥
तिहि समय न्रप द्रग लग्गि। तिन मध्य सुपन सुपग्गि ॥
छं० ॥ २४४ ॥

उक्त सुन्दरी का स्वरूप वर्णन।

हिय नेन सेन बिहास। नवरंग नारि इहास ॥
तिहि समय सुथ्रम चंद। सुष अग्ग न्रप बर संद ॥ छं० ॥ २४५ ॥

(१) ए. कृ. को.-घन। (२) ए. कृ. को.-युगराज।
(३) ए. कृ. को.-प्रकास।

कच कुसुमकवरि सुरंग । जनु ग्रसिय [1]इंद उरंग ॥
नग मुत्ति सुमन सुभाल । हर रूढ़ कालि कपाल ॥ छं० ॥ २४६ ॥
मधि भाग केसरि [2]आट । हर इंद तिलक लिलाट ॥
श्रुत मंडि कुंडल लोल । रथ भान भंग अलोल ॥ छं० ॥ २४७ ॥
[3]भुअ बंक धनु सुरराइ । कर अंचि [4]चाय सुचाइ ॥
द्रिग दिपत चंचल चार । अलि जुगल कुमुद विहार ॥छं०॥२४८॥
नव नासिका सुकनंद । रति बिंब बढ़िय अनंद ॥
तिन अग्र मुकति सु नंद । रस सुक्र ससि नष कंद ॥ छं० ॥ २४९ ॥
कल काम आल कपोल । तहँ अलक झलकत लोल ॥
[5]दुरि रदन दारिम बीज । रव काल कोकिल सी ज ॥छं०॥२५०॥
बनि चिबुक स्याम सु व्यंद । बसि कुमुदनी अलिइंद ॥
कलग्रीव रेष सुभेष । हरि कंज अंगुल [6]तेष ॥ छं० ॥ २५१ ॥
करकुमुद अमुद अनूप । जटि रतन रूप सनूप ॥
कुच मद्धि हार विराज । हरद्वार गंग जु राज ॥ छं०॥ २५२ ॥
कटि छीन छवि नगराज । पचि अंग पीत समाज ॥
रचि और कंचन थंभ । लजि दुग्गि कुल कल रंभ ॥छं० ॥ २५३॥
बनि पिंड नाभँगि रंग । जनु कनक दंड सुरंग ॥
नष चरन बरन अनूप । रवि चंद अंबुज जूप ॥ छं० ॥ २५४ ॥
कलहंस गमन विसाल । बरनी सु चंदति काल ॥

राजा का उससे पूछना कि तू कौन है और कहां जाती है।

[7]को नाम को तुम मात । को बंध को पित जात ॥ छं० ॥ २५५ ॥
जाती सु कोपति थान । किहि आत कून पयान ॥
मो देवि पुर जुगिनाथ । मो प्रकृति भिन्न अकाथ ॥ छं० ॥ २५६ ॥

(१) ए. कृ.-इन्द्र । (२) ए. कृ. को.-आड़ ।
(३) मो.- भुअ बंक धनुप सु गाह । (४) कृ. ए. वाय ।
(५) ए. कृ. को. रद कनक । (६) ए. कृ.- भेष, को.-नेक ।
(७) मो. को.-को नाम तम तात को बंध को पित मात ॥

उस सुन्दरी का उत्तर देना।

गाथा ॥ पयं पीयं गत नयं। घट्ट कट्टंति सूरयं ॥
भरता पित कुल बद्धं। सापं सुमंतयो मुनी ॥ छं० ॥ २५७ ॥
कलह प्रिया मो नामं। मंजु घोषापि रंभया सोरं ॥
समरस्य जग्य समये। प्रछन्नं कथितं मया ॥ छं० ॥ २५८ ॥

कवि का कहना कि यह भविष्य होनहार का आदर्श दर्शन है।

दूहा॥ पल प्रगट्टि कवि चंद सों। कह्यौ कौन इह भाव ॥
कह्यौ जु इह ह्वै है अवसि। सुन डंकिनिपुर राव ॥ छं० ॥ २५९ ॥

भविष्य वर्णन।

कवित्त ॥ कहर कंक कल कलिय। भार फनिमन कर भज्जिय ॥
सजिय सेन चहुआन। किन्न कारन अरि कज्जिय ॥
अप्प अप्प सजि इट्ठ। चलै जैचंद सभानन ॥
बर अप्पन चौसट्ठि। करह सो कर दैवानन ॥
रुधि गहन पच दारुन दिवहि। चंद भट्ट आसिष्य दिय ॥
सुर करिय कित्ति भय भीत भर। करन कथ्थ आगम कहिय ॥
छं० ॥ २६० ॥

चिहुर बंध बंधियहि। काल षड्डियहि कुलाहल ॥
... ... । ... . ॥
अधर पाइ धर धरनि। कंठ रुधि पियै सु नड्डिय ॥
मनो पुज्ज प्रति पाउ। पच पचन उरि लड्डिय ॥
संजोग व्याह [1]विध जोग सुनि। चलत राह उद्यान मग ॥
रन राग रंग पचन भरन। दुरति रूप दानव सु द्रग ॥छं०॥२६१॥

देवी का पृथ्वीराज को एक बाण देकर आप अलोप होजाना।

एन बान असुरान। भिरन महिषासुर भग्गिय ॥
एन बान राघिसन। राम रावन्न उल्लग्गिय ॥

(१) ए. कृ. को. जध।

एन बान कौरव ममथ्थ । पथ्थ भर करन पछारिय ॥
एन बान संकर सुभग्ग । चिपुरारि सु पारिय ॥
इन बान पराक्रम बहु करिय । सजिय हथ्थ चहुआन वर ॥
इन बान मारि पंगुर पिसुन । करन कंक चल्लै कहर ॥छं०॥२६२॥

पृथ्वीराज को शिवजी के दर्शन होना और शिवजी का राजा की पीठ पर हाथ देकर आशीर्वाद देना।

चलत मग्ग चहुआन । भान सम देखि भयंकर ॥
गिर तरु लग्गिय गेन । षलन षंडन तरु षंषर ॥
वैल गैल जट जूट । पिट्ठ तठ काम विराजै ॥
गंग उदक उछलै । सार चंमर सिर राजै ॥
जब चष्प पिष्प चौहान भट । तब उत्तरि सब भरनि भर ॥
पेषंत पाइ दुज्जन दुमह । धज्यौ पिट्ठ सवि अप्प कर ॥छं०॥२६३॥
उदक गंग विभ्भूत । अंग सारंग सुरंगह ॥
बरन अनँत मन हरत । निरषि गिरजा मन रंजह ॥
करी चर्म गरलह विक्रंम । रच्छिस उर दाहन ॥
ट्रिग्ग चयन ज्वाला बयन्न । क्रंद्रप्प न मानह ॥
तरु तरुन तार चिय बर चमह । रिसह सचु चहुआन रषि ॥
भरि भूत धूत दिद्विय पिथह । लिय अग्या सिर नाइ सिष ॥
छं० ॥ २६४ ॥

पुनः पृथ्वीराज का पयान वर्णन।

दूहा ॥ चले राइ पहु फट्टतें । सत सामंत सुराह ॥
मनों पथ्थ भारथ करन । दल कौरव धरि दाह ॥ छं० ॥ २६५ ॥

कन्ह को एक ब्राह्मण के दर्शन होना। उसका कंन्ह को असीस देकर अन्तर्ध्यान होना।

कवित्त ॥ दुज [1]उद्धो दल नाह । प्रवल तन जोति प्रगासिय ॥
मुष विद्धी भर कन्ह । मानि अप्पन मन भासिय ॥

(१) ए. कृ. को.-उभौ।

द्रग पट्टिय छुटि पट्ट। लग्यौ उद्योत उरानह॥
भान रूप भज नाह। दिव्व नाराजी [1]दानह॥
लगि पाय धाय कर पिट्ठ दिय। मम संके जुद्धह निपुन॥
फिरि तथ्थ विप्र नह [2]पिष्पयौ। तुम हम मंडल रवि मिलन॥
छं० ॥ २६६ ॥

हनुमान जी के दर्शन होना।

चलिय अग्ग चहआन। एक जोजन ता अग्गिय॥
घटा रूप घन सज्जि। निजरि ता ताहि न लग्गिय॥
जीह वीज विकराल। धजा घन वद्दल रंगिय॥
हथ्थ गदा सोभंत। भूत प्रेतह ता संगिय॥
सामंत राज पिष्पिय सलष। हनूमान चंदह कहिय॥
बाजंत नह विधि विधि वसुह। चह सुबज्जि चंबक दहिय॥
छं० ॥ २६७ ॥

कविचन्द का हनुमान जी से प्रार्थना करना।

दूहा॥ चंद गयौ अग्गें सुवर। तोतन रूप अथाह॥
हम मानुष्यी मति अधम। करहु रूप कल नाह॥ छं० ॥ २६८॥

लंगरीराव को सहस्रबाहु का दर्शन और आशीर्वाद देना।

कवित्त॥ सहस हथ्थ सोहन्न। धूअ छन्नह मुष मग्गह॥
अंष तेज अगि जानि। पानि पलचर [3]ता संगह॥
धनुष धजा फरकंत। हथ्थ डंकिनि फिक्कारै॥
जै जै मुष उचरंत। सिंह वह वर वल्लारै॥
लंगोट वंध काया प्रचंड। लोहालंगर समुष करि॥
धारंत हथ्थ मथ्थें धरिय। सासु पंष मथ्थें सुहरि॥ छं० ॥ २६९॥

गोयन्दराय को इन्द्र के दर्शन होना।

जोजन तीन जलद्धि। गय गोयंद सु भारिय॥
आप इष्ट तन सिद्धि। इन्द्र इंद्रासन धारिय॥

(१) ए. कृ. को.-दोनह। (२) ए. कृ. को. दिष्पई। (३) ए. कृ. को.-ता संगह।

एक कोस आकंप। भद्र जाती उच्चल्ल तन ॥
सहस दंत सित हथ्थ। मनो राका जोतिंवन ॥
विंजान देव बहु जटित मय। चमर छत्र अच्छरि चलिग ॥
गोयंदराव सिर हथ्थ दिय। कहिय तुम्हम हम ग्रह मिलिग ॥
॥ छं० २७० ॥

एक बावली के पास सब का विश्राम लेना। कवि को देवी का दर्शन देना।

विवर एक वट मंझ। तास मझ्झह कंदल ग्रह ॥
भान तेज [1]भलकंत। आय सेना उत्तरि [2]सह ॥
चंद गयो चलि अग्ग। देवि पूजा घन विद्धिय ॥
वघ्घ रूप आरोहि। आय उम्भी हर सिद्धिय ॥
मम करहि चंद आदेस मन। लेय राज संजोगि ग्रहि ॥
चौसट्ठि सुभर भेटें सुहरि। जय जय करि अपछरि वरहि ॥
छं० ॥ २७१ ॥

दूहा ॥ चयत दिवस चय जामिनिय। चयत जाम फल उन्न ॥
जोजन दुन्नि संचरिग। प्रथीराज संपन्न ॥ छं० ॥ २७२ ॥

समस्त सैनिकों का निद्रागस्त होना और पांच घड़ी रात से चल कर शंकरपुर पहुंचना।

कवित्त ॥ बार सोम पंचमी। जाम एकह निसि वित्तिय ॥
के दुब्बल वर पट्ट। तहां उत्तरि पहु रत्तिय ॥
करि अस्तुति सब सथ्थ। अस्व तजि नींद सु ग्रासं ॥
घटी पंच निसि सेष। सु पहु चढ़ि चल्यौ तासं ॥
पत्तो सु जाइ संकरपुरह। दिवस अंन वर थान नय ॥
आहारि अन्न आसन्न मय। सब बोले सामंत तय ॥ छं० ॥ २७३ ॥

(१) को०- झलंत। (२) ए. के. का.-तहां।

राजा का सामंतों से कहना कि मैं कन्नौज को जाता हूं वाजी तुम्हारे हाथ है।

इह जंपिय प्रथिराज। करिव अस्तुति सामंतं ॥
धरि छग्गर कविचंद। महल [1]पिष्यन मन संतं ॥
जब जानौ सुध समै। तुमै सब काम सुधारौ ॥
मो चिंता मन मांहि। होइ [2]तुमतें निसतारौ ॥
संभलत सब्ब सामंत मत। भयौ बीर आभासि तन ॥
चिंतिय सु इष्ट अप्पान अप। आअम्में सब्बां सुमन ॥
छं० ॥ २७४ ॥

दूहा ॥ चयति जांम वासुर विसरि। घटिग हंस तन रात ॥
जु कुछु चष्य इच्छा हुती। सोइ दिष्षी परभात ॥ छं० ॥ २७५ ॥

कवित्त ॥ कहै राज प्रथिराज। [3]श्रमित सामंत सुरेसं ॥
मो चिंत्यौ तुम कंध। सुनौ कारन कत एसं ॥
चितिया दिन वाईस। कोस चौवीस चवथ्थी ॥
षट चौसह पंचमी। तीस अठ षष्टि सपथ्थी ॥
जोजन उभय कनवज्ज कहि। इन थानक कमधज्ज अगि ॥
देषनह पंग अभिलास अति। छत्य सब्ब तुम कंध लगि ॥छं०॥२७६॥

पृथ्वीराज प्रति जैतराव के बचन कि छद्मवेष में आप छिप नहीं सकते।

कवविक्का ॥ वहल चंद किरन। छिपै नन सूर छांह घन ॥
भूपति छिपै न भोग। रंक नन छिपत वसन तन ॥
नाह नेह नह छिपत। छिपै नन पुहप वास तर ॥
कुलट * कुटंब न छिपै। छिपै नन दान अधर धर ॥
छिप्पै न सुभर जुद्धह समै। चतुर पुरष कवितह कला ॥
पंमार कहै प्रथिराज सुनि। तू न छिपै छग्गर मला ॥छं०॥२७७॥

(१) ए. कृ. को.-दिष्पन। (२) ए. लम।
(३) ए. कृ. को.-सब्ब। * कुढ़ंग

सामंतों का कन्नौज आकर जयचन्द का दरबार देखने की अभिलाषा में उत्सुक होना।

दूहा ॥ करि अस्तुति सामंत नृप। जंपि विगति रति बत्त ॥
उतकंठा दिष्पन नयन। कमधज राज दरत्त ॥ छं० ॥ २७८ ॥

मुख्य सामंतों के नाम और उनका राजासे कहना कि कुछ परवाह नहीं आप निर्भय होकर चलिए।

पद्धरी ॥ सुनि तहां सभा ए राज बेंन। उभरे [1]रोम लग्गे सु गेंन ॥
अप्पानि अप्प [2]दैवत्त चिंत। संमान सुचित चिंते सुचिंत ॥
छं० ॥ २७९ ॥

मंडौ मराज दीवान राज। जानै कि देव देवन समाज ॥
बैठे सु कंन्ह गोयंदराज। पज्जून सलष निङ्गर समाज ॥
छं० ॥ २८० ॥

पुंडीर चंद तूंवर पहार। जामानिजह आजान बार ॥
पंमार सिंह लष्मन बघेल। चहुआन अत्तताई अभंल ॥
छं० ॥ २८१ ॥

बलिभद्रराइ षीची प्रमंग। गुज्जरह कनकरामह अभंग ॥
अनि अन्नि छूर सामंतरेस। बैठे स राज आवरि अस्वेस ॥
छं० ॥ २८२ ॥

इक्कारि चंद बरदाइ ताम। उथ्थान मान वर जथ्थ ठाम ॥
इह जंपि राज भर सुमत संम। दिष्यौ सपंग [3]दीवान तंम ॥
छं० ॥ २८३ ॥

कत काल कथ्य लय पान वीर। अवलोकि पंग भर सुभर तीर ॥
सब महिल वरित अन अन्नि रंच। कंधेव तंम सोभानि संच ॥
छं० ॥ २८४ ॥

दूहा ॥ [4]विहसि सुभर विकसे सुमन। नृप न करहु अंदेस ॥
धनि धनि मुष जंपिरू विनय। दिष्पहु महल नरेस ॥ छं० ॥ २८५ ॥

(१) मो.-रोस। (२) मो.-दैवान।
(३) ए. कृ.-पंग। (४) ए. विहंर।

तुच्छ निद्रा लेकर आधीरात्रि से पृथ्वीराज का पुनः कूच करना

मानि मंत मामंत । राज सुष सेन विचारिय ॥
भूम सेज सुष सयन। गंग मंडल वर धारिय ॥
घटिय पंच जुग अग्ग । तलप अलपह आनंदति ॥
फुनि चढ़ि चल्यौ राज । पुरह मंकर मानंदति ॥
सुनियै निसान ईसान घन । जनु दरिया पाहार गुरि ॥
निस अद्ध घरिय ऊपर चतुर । पंग सु उत्तरि गंजि धर ॥
छं० ॥ २८६ ॥

दूहा ॥ चढ़त राज चहुआन निस । घोर मपंग निसान ॥
जान कि मेघ असाढ़ सम । उठिय घोर दरमान ॥छं०॥२८७॥
चलत मग्ग मंभरि सपहु । सुर बज्जे सहनाइ ॥
रस दारुन भय संचरिग । घोर गंभीर विभाइ ॥ छं० ॥ २८८ ॥

कवित्त ॥ [1]घटिय च्यार पष्परह । अद्ध जामनिय जरत तम ॥
चढ़िग राज मंभरि नरेस । मामंत सकल सम ॥
देवगुरू सप्तमी । अश्वनि अभि जाग प्रमानह ॥
चलत मग्ग अहुआन । [2]गंग मंडल वर थानह ॥
अग्गह सुभट्ट मारग सुमग । कहत कथा जाहन्नविय ॥
कलमल बिछोह तन होत जल । जाल बाल चूरन [3]कविय ॥
छं० ॥ २८९ ॥

पृथ्वीराज का कहना कि कन्नौज निकट आया अब तुम भी वेष बदल डालो।

बचनिका ॥ राजा सामंतन सों बोल्यौ । हूं पंगुरे कौ दिवान देषन चल्यौ॥
प्रगट रूप सरूप [4]दुराओ ॥ और सरूप करि साथ आओ ॥
ऐसो कहत सामंतन मानी । सो निसा जुग एक बराबरि जानी ॥

(१) मो.-घरिय । (२) मो.-गगन मंडल वर मानह ।
(३) ए. कृ. को. करिय । (४) ए. कृ. को.-दुरावौ आवो ।

सामंतों की तैयारियां और वह प्रभात वर्णन।

पद्धरी ॥ चंपो सुभीमि कनवज्ज जाइ। दसगुनौ सूर बर चढ़त भाइ ॥
उच्चन्यौ भट्ट कवि चंद सथ्थ। दीसई राज रवि सम समथ्थ ॥

छं० ॥ २६० ॥

जिम जिम सु निकट कनवज्ज आय। डरपहि न सूर तिम तिम दृढ़ाय ॥
ओपंम चंद जंपी सुराथ। बल बंधि पीय संगम दिढ़ाय ॥

छं० ॥ २६१ ॥

उत्तरिय चित्त चिंता नरेस। वेतरहि सूर सुरलोक देस ॥
इक कहत लेहि बल इंद्र राज। जस जियन मरन प्रथिराज काज॥

छं० ॥ २६२ ॥

कर करहिं सूर असनान दान। बर भरत सूरसुनि कन निसान ॥
सरबरिय साल बंछहित भांन। सुध बाल जेम इच्छत बिहान ॥

छं० ॥ २६३ ॥

गुरु दयत उदित स्मित मुदित इत्त। झलमलिग तार तरु हलिग पत्त॥
देषियत इंद किरनीन मंद। उडिमह हीन जिम न्वपति चंद ॥

छं० ॥ २६४ ॥

धरहरिग [1]चित्ति सुर [2]मुह मुंद। उप्पज्जौ जुद्ध आवद्ध दुंद ॥
पहु फटिग घटिग सर्वरि सरीर। झलकंत कलस दिषि गमन नीर ॥

छं० ॥ २६५ ॥

बिरहीन रैनि छुट्टि [3]मित मान। नष्यंत तोरि भूषन प्रमान ॥
असुवंत अंसु उस्सास आइ। बिरहीन कंत चंदहु बुलाइ ॥

छं० ॥ २६६ ॥

पहु फट्टि घट्टि भूषननि बाल। दिसि रत्त दरसि दरसी कसाल ॥
[4]न्विप भंमि गंग सब पुन्न देस। आरक्क अरिन उत्तरि नरेस ॥

छं० ॥ २६७ ॥

---

* ए. कृ. को.-बल बंधि पिय संग दिन दिढ़ाय। ओपंम चंद जांनी समाय।

(१) ए. कृ. को.-वित्त। (२) ए. कृ. को. सह।

(३) ए कृ. को.-नमानि। (४) को.-नृप भूमिग जानि यह पुन्न देस।

नृप थ्रमिग जानि दुइ पुत्र देस। अरि नयर [1]नीर उत्तरे कहेस॥
हर सिद्ध दिन्न कनवज्ज राव। तिन बज्जी अंग धर भंम चाव॥
छं० ॥ २९८ ॥

दूहा ॥ पहु फट्टिय घट्टिय तिमिर। तमचूरिय कर भान॥
पहुमिय पाय [2]प्रहारनह। उद्दोतं असमान॥ छं० ॥ २९९ ॥
रत्तंबर दीसै सुरबि। किरन परष्पिय खेत॥
कलस पंग महिं होय यह। बिय रबि बंध्यो नेत॥छं०॥३००॥

सब का राह भूलना परंतु फिर उचित दिशा बांध कर चलना।

रबि तंमुह संमुह [3]उग्गौ। इह है मग्ग समुझिक्क॥
भूलि भट्ट पुन्नह [4]चल्लिय। कहि उत्तर कनवज्ज॥ छं० ॥ ३०१ ॥
कंचन फूलिय अकै बन। रतनह किरनि [5]प्रमार॥
सुभ कलस जयचंद घर। संभरि संभरिवार॥ छं० ॥ ३०२ ॥

पास पहुचने पर पंगराज के महलों का देख पड़ना।

कवित्त ॥ एह कलस कवि चंद। दंद मंद्यौ मुष रब्बिय॥
जग उप्पर जगमगत। [6]भूलि कैलासह छब्बिय॥
जगत पत्ति जग धज्ज। षग्ग कमधज्ज बांहबर॥
दान षग्ग अनभंग। धजा बिय दान बंधि पर॥
आभंग अवंग कनवज्ज पति। सुष नरिंद [7]दुनि इंद बर॥
पाइये बंस छत्तीस तहाँ। नवै रस्स षट भाष गुर॥छं०॥३०३॥

कन्नौज पुरी की सजावट और सुखमा का वर्णन।

दूहा ॥ गंगा तट साधन सकल। करहि जु भंति अनेक॥
नट [8]नाटिक संभरि धनौ। बर विष्यात छवि केक॥छं०॥३०४॥

---

(१) मो.-जानि। (२) ए. कृ. को.-प्रहारनल, पहार नर।
(३) ए. कृ. को.-उचौ। (४) ए. कृ. को. चल्यौ।
(५) ए. कृ. को.-प्रचार। (६) ए. कृ. को.-ईस कैलास भुल्लि छवि।
(७) ए. कृ. को.-दुति। (८) ए. कृ. को.-नागर।

भुजंगी ॥ कहूं मंभरे नाह बट्टे गयंदा। मनूं पिष्पियै रूप ऐराप इंदा ॥
कहूं फेरिछिंत भूप अच्छे तुरंगा। मनों प्रब्बतं बाय बट्टे कुरंगा ॥
छं० ॥ ३०५ ॥

कहूं मल्ल भूदंड तें [1]रोस साधैं। तिकै मुष्टिकं जोर चानूर बाधैं ॥
कहूं पिष्पि पाइक्क बानैत बाधैं। नचं इंद्र [2]आहेस कै बज्ज साधैं॥
छं० ॥ ३०६ ॥

कहीं विप्र उट्ठंत ते प्रात चल्ले। कहूं देवता सेवते स्वर्ग भुल्ले ॥
कहूं जग्य जापन्न ते राज काजैं। कहूं देवात देव न्वित्यान साजैं॥
छं० ॥ ३०७ ॥

कहूं तापसी तप्प ते ध्यान लागै। तिनं दिष्पियै रूप संसार भागै॥
कहूं षोड़सा राय अप्पंत दानं। कहूं हेम सम्मान प्रथ्थी समानं ॥
छं० ॥ ३०८ ॥

कहूं बोलही भट्ट छंदं प्रमानं। कहूं [3]औघटं बीर संगीत गानं ॥
कहूं दिष्पि सिद्धं लगी तारि भारी। मनों नैर प्रातं कपाटं उघारी॥
छं० ॥ ३०९ ॥

कहूं बाल गावैं विचित्रं सुग्यानं। रहै चित्त मोहन्न डुल्लै न [4]पानं॥
इत चरित पेषंत ते गंग तीरे। स्वयं देषतें पाप नट्ठे सरीरे ॥
छं० ॥ ३१० ॥

पृथ्वीराज का कवि से गंगा जी का माहात्म पूछना।

दूहा ॥ कह महंत दरसंन तिम। कह महत तिन न्हान ॥
कह महत सुमिरंत तिन। कहि कविचंद गियान ॥छं०॥३११॥

कवि का गंगा जी का महत्व वर्णन करना।

गाथा ॥ जो फल नीरह नयनं। जो फल गुनी गाइयं गेयं ॥
सोइ फल न्हात सरीरं। सोइ फल पीयंत अंजुलं नीरं ॥
छं० ॥ ३१२ ॥

---

(१) मरों। (२ ए. कृ. को.-आसेह।
(३) ए. कृ. को.-देवान। (४) मा.-औपटं।
(५) ए. कृ. को.-प्रानं। *छन्द ३१२ मा.-प्रति में नहीं है।

जं जय भाव सु बुद्धं । तं तं कहियंपि सुंदरी कथ्यं ॥
महिलान बाल अच्छं । सामं घनं सोभियं सारं ॥ छं० ॥ ३१३ ॥

पुनः कवि का कहना कि गंगास्नान कीजिए ।

अरिल्ल ॥ जंतं न्हान महातम जानों । दरसन तंत महंत बषानों ॥
सुमिरन पाप हरै हर गंगे । सो प्रभु आज परस्सहु अंगे ॥छं०॥३१४॥

सब सामंतों सहित राजा का गंगा तीर पर उतरना ।

कवित्त ॥ अंबुज सुत उमया विलोकि । वेद पढ़त घलि बीरज ॥
सहस बहत्तरि कुँअर । उपजि भीजंत गंगा रज ॥
आभूषण अंबर सुगंध । कवच आयुध रथ संतर ॥
रविमंडल के पास । रहत चौकी सु निरंतर ॥
चहुवांन चमूं तिन समर जत । सु कविचंद ओपम कथिय ॥
सामंत सूर परिगह सकल । उतरि तट्ट भागीरथिय ॥छं०॥३१५॥

कवि का गंगा के माहात्म्य के संबंध मे एक पौराणिक कथा का प्रमाण देना ।

साटक ॥ सोरंभं कमलं तजों न मधुपं, मध्ये रह्यौ संपुटं ॥
सो लैजाय सरोज संकर सिरं, चढ़ाइयं अच्छरी ॥
सिंघं तंत स उप्परं घट भर, गंगा जलं धारयं ॥
बारं लग्गि न चंद लब्धि कहियं संभू भयौ लुप्पयं ॥ छं०॥३१६॥
दूजं सृज्ज पियंत नीर डसियं, काली रयं पंनगं ॥
साई व्यासन सूझछालय बहो, शृंगो बही सुरसुरी ॥
धारं रूप पवित्रपतो पसू तहां, भागीरथी संगती ॥
* आनंदी दुज दैख लेन क्रमियं, कैलास ईसं दिसं ॥छं०॥३१७॥

राजा का गंगा को नमस्कार करना. गंगा की उत्पत्ति और माहात्म्य वर्णन ।

दूहा ॥ हो सामंत सुमंत कहु । सु हरि चिंति तजि बाज ॥

* "३१५ से ३१७ तक ये छंद मो.-प्रति में नहीं है ।

त्रिपथ लोक प्रथिराज सुनि । नमसकार करि राज ॥छं०॥३१८॥

कवित्त ॥ पाप मनंमथ हरन । गंग नव बंध अनै पर ॥
हरि चरनन करि जनम । काम छंडै सु दुष्प वर ॥
तीन लोक भर भवन । तहां प्राक्रंम सु यानन ॥
निगम न हरि उर धरी । ब्रम्म तट काय प्रमानन ॥
वंछहि सु चतुर नर नाग सुर । दुति दरसन परसन [1]विहर ॥
[2]ढिल्लीवनाथ सो गंग दिषि । जस सम उज्जल वसु अपर ॥छं०॥३१९॥

साटक ॥ ब्रह्मा कष्प कमंडले कलिकले, कांताइरे कंकवी ॥
तं तुष्टा त्रयलोक संपद पदं, तंबाय सहसंनवी ॥
अघ काष्टं ज्वलने हुतासन हवी, अध विष्णु आगामिनी ॥
जंजालं जग तार पार करनी, दरसाय आइंनवी ॥ छं० ॥ ३२० ॥

अरिल्ल ॥ ब्रह्म कमंडल तें कल गंगा । दरसन राज भयौ दिवि संगा ॥
तामस राजस धरि उर पारह । [3]सातुक उदक गंग मझ्झारह ॥
छं० ॥ ३२१ ॥

दूहा ॥ अस्तुति कहि बरदाय बर । पढ़िय कवींद्र विचार ॥
सो गंगा उर जंपई । क्रम उत्तारन पार ॥ छं० ॥ ३२२ ॥

जैचन्द की दासी का जल भरने को आना।

वचनिका ॥ राजा दल पंगुरे की दासी गंगोदक भरन आनि ठाढ़ी भई ॥
चंद कह्यौ राजा इह काम तीरथ मुगति तीरथ हथलेषा मिलत है॥

कवि का दासी पर कटाक्ष करना।

दूहा ॥ जरित रयन घट सुंदरी । पट क्रूरन तट सेव ॥
मुगति तिथ्थ अरु काम तिथ । मिलहि इथह इथ लेव ॥छं०॥३२३॥

काव्य ॥ उभय कनक सिंभं भृंग कंठीव लीला । पुहप पुनर पूजा विप्रवे कामराजं॥
चिवलिय गंग धारा मज्जि घंटीव सबदा । मुगति सुमति भौरे नंग रंगं चिवेनी॥
छं० ॥ ३२४ ॥

---

(१) ए. क्र. को.-विहर । (२) ए.-ढिल्लीच ।
(३) ए.-सादुक ।

दूहा ॥ रहसि केलि गंगह उदक । सम नरिंद त्रिय केलि ॥
चिरन चिभंगी छंद पदि । चंद सु पिंगल मेलि ॥ छं० ॥ ३२५ ॥

गंगाजी की स्तुति ।

चिभंगी ॥ हरि हरि गंगे तरल तरंगे अघ त्रित भंगे त्रित चंगे ॥
हर सिर परसंगे जटनि विलंगे विहरति दंगे अस अंगे ॥
गुन गंभव छंदे जै जै वंदे त्रित अघ कंदे सुष चंदे ।
मति उच गति मंदे दरसत नंदे पदि वर छंदे गत दंदे ॥
छं० ॥ ३२६ ॥
वपु अपु विलसंदे जम भृत जंदे सुर धुनि नंदे कह गंदे ।
.... । .... ॥
षिति मति उर माखं सुगति विसाखं विर धुत काखं मद काखं ।
हिम रिति प्रतिपाखं सुर तट ताखं हर हर भाखं विधिवाखं ॥
छं० ॥ ३२७ ॥
दरसन रस राजं सुमरित साजं जय जुग काजं भय भाजं ॥
अंमर छर करिजं चामर वरिजं वर वहु पाजं सुर साजं ॥
'अंमर तरु मंजरि त्रिय तन अंजरि वर वर रंजरि अघ खंजरि ॥
करुना रस मंजरि जनम पुनंगिरि हसि हसि संकरि मासंकरि ॥
छं० ॥ ३२८ ॥
कलिमल हरि मंजन भव भृत भंजन जन हित संजन अरि गंजन॥
.... । .... ॥ छं० ॥ ३२९ ॥
दूहा ॥ हरि जस जिम उज्जल सजल । तरल तरंगति अंग ॥
पाप विडारन अंग तें । भ्रंम तरन्नि विहंग ॥ छं० ॥ ३३० ॥

राजा का गंगा स्नान करना ।

वचनिका ॥ राजा षीरोदक पहिर स्नान कर्यो ।
तब चंद बहुरि और अस्तुति करत है ॥

कवि का पुनः गंगा जी की स्तुति करना ।

(१) ५-अमरत ।

भुजंगी ॥ तिके दिष्पियै गंग चिहु पास बालं । तहां उप्पमा चंद जंपै विसालं
जरै कामनार्थं दया गंग आई । मनों हार धारी रती तत्त छाई ॥
छं० ॥ ३३१ ॥

भरै घट्ट भारं घटं नीरझाई । तहा चंद बंदी सु ओपम्म पाई ॥
ग्रसे चंद कुंभं करं इंद दंदं । मनों विश्व पारीर मेटै फुनिंदं ॥
छं० ॥ ३३२ ॥

करै बाल अन्हान सोभै प्रकारं । तहां चिंतियं चंद ओपंमभारं ॥
चमक्कंत लक्कं सु कप्पोल सोहै । मनों उट्ठितम चंद कै पास रोहै ॥
छं० ॥ ३३३ ॥

झलक्कं कनक्कं कलस्संत नीरं । मनों मज्ज सथ्थै सुपंतीज सीरं ॥
दिष्पै गंग तट्टं कहै कव्वि कथ्थं । किधों मुगति तिथ्थं किधों काम तिथ्थं ॥
छं० ॥ ३३४ ॥

कविचन्द का उस दासी का रूपलावण्य वर्णन करना ।

चंद्रायन ॥ दिष्पो नगर सुहावो कवियन इह कहै ।
चष चंचल तन सुद्ध जु सिद्धति मन रहै ॥
कंचन कलस झकोरति गंगह जल भरै ।
सु कविचंद वरदाय सु ओपम तहँ करै ॥ छं० ॥ ३३५ ॥

चपतिष्पी वरबाल बाल मति सहस वर ।
आप मनोरथ करै कवीश्रति मंडिनर ॥
सहज तमारि स फुल्लि आलन ग्रीवाति मन ।
मधुसहज्ज वरषंत विहंगन सुर नन ॥ छं० ॥ ३३६ ॥

संक्षेप नख सिख वर्णन ।

कवित्त ॥ राह चंद इकलास । पास कोवंड कुरंगा ॥
कीर बिंबफल जुगल । उभय भूतस अनंगा ॥
मग्गराज गजराज । राज पिष्पिय एकंतं ॥
पुच्छि तांम कविराज । कहा इह अचरिज वत्तं ॥

(१) ए. कृ. को. मृगति ।

बरदाइ ज्वाब दीनों बहुरि । निरषि तट गंग दासि तन ॥
बांनक प्रताप जयचंद के । बैरभाव छंडिय[1] सु इन ॥ छं० ॥ ३३७ ॥

दासी के जल भरने का भाव वर्णन ।

दूहा ॥ दिग चंचल चंचल तरुनि । चितवत चित्त हरंति ॥
कंचन कलस झकोरि कैं । सुंदरि नीर भरंति ॥ छं० ॥ ३३८ ॥

जल भरती हुई दासी का नख सिख वर्णन ।

लघुनराज ॥ भरंति नीर सुंदरी । सु पांनि पत्त अंगुरी ॥
कनक्क बंक जे जुरी । तिलग्गि कट्टि जेहरी ॥ छं० ॥ ३३९ ॥
सुभाव सोभ पिंडुरी । जु मेन चिचही भरी ॥
मकोल लोल जंघया । सुनील कच्छ रंभया ॥ छं० ॥ ३४० ॥
कटिंत सोभ मंसुरी । बनी जु बांन केसरी ॥
अनंग छव्वि छत्तियां । कहतं चंद बत्तियां[2] ॥ छं० ३४१ ॥
दुगंद कुच्च उभ्भरे । मनो अनंग ही भरे ॥
हलंत हार सोहए । विचित्र चित्त मोहए ॥ छं० ॥ ३४२ ॥
उठंत हथ्थ अंचले । हलंत मुत्ति सजले ॥
कपोल लोल उज्जले । लहंत मोल मिंघले ॥ छं० ॥ ३४३ ॥
अरुन्न अन्न रत्तए । सुकील कीर वत्तए ॥
सुहंत दंत आलिमी । कहंत बीय दालिमी ॥ छं० ॥ ३४४ ॥
गहंग कंठ नासिका । बिनाग राग सासिका ॥
जुभाय मुत्ति सोभए । दुभाय गंज लोभए ॥ छं० ३४५ ॥
दुराय कोय लोचने । प्रतष्य काम मोचने ॥
अवद्ध भौट भौंह ए । चलंत मौंह सोहए ॥ छं० ॥ ३४६ ॥
लिलाट राज आड़ ए । सरद चंद लाजए ॥
.... ॥ छं० ॥ ३४७ ॥

(१) ए. क. को.-मंडिय । (२) ए. क. को.-रत्तियां ।

पृथ्वीराज का कहना कि क्या इस दासी को केश हैं ही नहीं।

दूहा ॥ हसि प्रथिराज नरिंद कहि । कवि चुक्कौ अंदेस ॥
पंग दास आचिज्ज इह । बाल बरनि बिन केस ॥ छं० ॥ ३४८ ॥

कवि का दासी के केशों की उपमा वर्णन करना।

ढिल्ली सुह अलि की लता । श्रवन सुनहु चहुआन ॥
जनु भुजंग संमुष चढ़ै । कंच न षंभ प्रमान ॥ छं० ॥ ३४९ ॥

कवि का कहना कि यह सुंदरी नागरी नहीं वरन पनिहारिन है।

[1] रहि रहि चंद म गव्व करि । करहित कवित विचारि ॥
जे तुम नयर सुंदरि कही । सह दिष्पिय पनिहारि ॥ छं० ॥ ३५० ॥
गाथा ॥ जे जंपी कविराजं । साजं सुष्पाय कित्तियं बलयं ॥
तिरए छित्ति समस्तं । जानिज्जे भूलयो कव्वी ॥ छं० ३५१ ॥

कन्नौज नगर की गृह महिलाओं की सुकोमलता और मर्य्यादा का वर्णन।

दूहा ॥ जाहनवी तट दिषि दरस । रूपरासि ते दासि ॥
नगर सु नागर नर घरनि । रहहिं अवास अवास ॥ छं० ॥ ३५२ ॥
ते दरसन दिनयर दुलह । निय मंडन भरतार ॥
सुह कारन विह निरमई । दुह कत्तरि करतार ॥ छं० ॥ ३५३ ॥
पाव न धरनि परट्ठियै । उंच थांन जे बाल ॥
कै रवि देषत सतषननि । कै मुष कंत विसाल ॥ छं० ॥ ३५४ ॥
कुवलय रवि लज्जा रहसि[2] । रहि भगि भ्रंग सरन्न ॥
सरस वुद्धि इंनन कियौ । दुलह तरुन तरुन्न ॥ छं० ॥ ३५५ ॥

उनके पतियों की प्रशंसा।

गाथा ॥ दुलह तरुनिति मुष्पं । घन दीहंति इंस सेवायं ॥

(१) ए. कृ. को.-रहहि चन्द मम गर्व करि। (२) ए. कृ. को.-विहसि।

जानिज्जै मन[1] अप्पं। [2]प्रीतमयं तप्प अधिकायं ॥ छं० ॥ ३५६ ॥

कन्नौज नगर की महिलाओं का सिख नख शृंगार वर्णन।

दूहा ॥ पुनर मंडि जनमेज जगि। पित अरि कुल दइ अग्गि ॥
भग्गि प्रेषकुल प्रेष रहि। रहि चिय पौठनि लग्गि ॥छं०॥३५७॥

भुजंगी ॥ पुनर्जन्म जेते रहे जांनि जग्गे। सु ये सेस सेसा तिके पिट्ठ लग्गे॥
मनुं मग्ग[3] मोहव्व मोती न बानी। मनों धार आहार कै दूध तांनी॥
छं० ॥ ३५८ ॥

तिलक्कं नगं देषि जगजोति जग्गी। मनों रोहिनी रूप उर इंद लग्गी॥
रुअं अब्बरेषं भुअं देषि जग्यौ। मनों कांम चापं करं उद्धि लग्ग्यौ॥
छं० ॥ ३५९ ॥

[4]प्रगट्ठे नयंनं विचिं ऐन दीसं। मनों जोति सारंग निर्वात रीसं ॥
तेज चाटंक ते ओन डोलं। मनों अर्क राका उदै अस्त लोलं ॥
छं० ॥ ३६० ॥

कही चंद कव्वी उपम्मा प्रमानं। मनों चंद रथभंग दैभान जानं ॥
उरज्जं जंभीरं भई मंझ झोलं[5]। उवं दिष्यदर्शी अरूढीस बोलं ॥
छं० ॥ ३६१ ॥

अधर आरत्त तारत्त सांई। मनों चंद बिय विंब अरुने बनाई ॥
कहों ओपमा दंत मोतीन कंती। मनों बीज माला जुगं सोभ पंती॥
छं० ॥ ३६२ ॥

कपोलं कलागी कली दीव सोहं। अलक्कं अरोहं प्रवाहंत मोहं ॥
सितं स्वाति बुंदं जिते[6] हार भारं। उभै ईस सीसं मनो गंग धारं॥
छं० ॥ ३६३ ॥

करं कोक नहंति कंचू समुभ्भं। मनो तिष्यराया चिबल्ली अलुझ्झं॥
तिनं ओपमा पांनि आनंन[7] लभ्भं। लाजि कुल केलि दुरिमभ्भ गभ्भं॥
छं० ॥ ३६४ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-नन। (२) ए. कृ. को.-प्रीतम पंत अप्प अधिकाय।
* यह दोहा मो.-प्रति में नहीं है। (३) ए. कृ. को.-मगं। (४) मो.-प्रगुर।
(५) मो. जोलं। (६) ए. कृ. को.-जिसे। (७) ए.-आनंत।

नितंबं उतंगं जुरे वे गयंदं । तिनं मज्झ रिपुछीन रथ्यौ मयंदं ॥
कटी कांम मापी सुकामी कराल । मनों काम की जोति बट्टी सराल ॥
छं० ॥ ३६५ ॥

जघं वन्न सोवन्न भोहन्न[1] डांभं । मनों सीत उस्नेव रितु दोषरंभं ॥
नरंगी निरंगी सुपिंडी छछोटी । मनों कनक कुंदीरु कुंकु अलोटी ॥
छं० ॥ ३६६ ॥

किधौं केसरं रंग हेमं भकोरं । किधौं बद्धियं बांम मनमथ्थ जोरं ॥
सदं रोह आरोह मंजीर वादे । मदं छिद्द तेजं परंकार वादे ॥
छं० ॥ ३६७ ॥

पगं एड़िअं डंबरं ओन बानी । मनो कच्च चीनीन में रत्त पांनी ॥
नषं न्निमलं द्रप्पनं भाव दीसं । समीपं सुपीयं कियं मांन रीसं ॥
छं० ॥ ३६८ ॥

रगं अम्मरं[2] रत्त नीलंत पीतं । मनों पावसं धनुक सुरपत्ति कीतं ॥
सुकोवं सुजोवं जियं स्वामि जानं । रवी पंग दरसं अरंब्यंद मानं ॥
छं० ॥ ३६९ ॥

दासी का घूंघट उघर जाना और उसका लज्जित होकर भागना।

कुंडलिया ॥ दरस चियन ढिल्ली नृपति । सोवन घट वर इथ्थ ॥
वर घुंघट लुटि पट्ट गौ । सटपट परि मनमथ्थ ॥
सटपट परि मनमथ्थ । भेद[3] वच कुच तट अद्दं ॥
उष्ट कंप जल द्रगन । लग्गि जंभायत भेदं ॥
सिथल सु गति लजि भगति । गलत पुंडरि तन सरसी ॥
निकट निजल[4] घट तजै । मुहर मुहर पति दरसी ॥ छं०॥ ३७०॥

दासी के मुखारविंद की शोभा वर्णन।

गाथा ॥ कमोदं वर विगासं । सरसीरुह सरसियं[5] तेजं ॥
चक्कति चक्क एकं । अरकं रकइ पृथ्थ संजोगं ॥ छं० ॥ ३७१ ॥

---

(१) ए. कृ. को. मोहन्न । (२) मो.-अंतर । (३) ए. कृ. को. भेद तट कुच वच्छेदं ।
(४) मो.-निज्जल । (५) ए. कृ. को.-ससीयं ।

रोरंत कच किलास । चंद मुखी दरसि सरसिय प्रतिय ॥
मवसं प्रांन बेसासी । दोइ मेक्कं मयं एक ॥ छं० ॥ ३७२ ॥

कुमुदं कुच प्रगासी । हार वीचं तनं तयं अंबं ॥
अभिकर तरंग ओपं । रोमं राजीव सेवालं ॥ छं० ॥ ३७३ ॥

पावस धनुक सुकंती । अंबर नीलाइ पीतमं बासे ॥
जानिज्जै परमासं । स्यांम घन मद्धि तड़िताय ॥ छं० ॥ ३७४ ॥

गंगा स्नान और पूजनादि करके राजा का चार कोस पश्चिम को चल कर डेरा डालना।

दूहा ॥ प्रथम स्नान गंगा निरषि । पुर रट्ठौर निवास ॥
फिरि पच्छिम दिसि उत्तरै । जोजन एक सुपास ॥ छं० ॥ ३७५ ॥

चौपाई ॥ जोजन एक गयौ चहुआनं । सोम सूअ तिथि षष्टी जानं ॥
अंतरि पट्ट सुनंत नरिंदं । भर विंटे जनु पारस चंदं ॥
छं० ॥ ३७६ ॥

कवित्त ॥ सो पट्टन तजि नृपति । चल्यौ कनवज्ज राज बल ॥
जाय [1]संपनौ राव । गंग सुरसर सुरंग जल ॥
करि मिलान परमान । थान आश्रम्म सु उज्जल ॥
दीप जाप मन करै । भ्रंम भंजै सु अभ्रम्म दल ॥
चहुआन दान षोड़स करिय । तिहि जय जय सुरलोक हुअ ॥
दिन पतत निसा बंधय सयन । रस षिल्लिय प्रथिराज जिय ॥
छं० ॥ ३७७ ॥

दूसरे दिन एक पहर रात्रि से तैय्यारी होना।

दूहा ॥ निसि नंषी चिंतान भर । भयग प्रात तम भग्गि ॥
तरुन अरुन प्रगटिय किरनि । वर प्रयान नृप जग्गि ॥ छं० ॥ ३७८ ॥

निसि चियाम बित्तिय सु जब । उच्छ सुषिन दा प्रान ॥
प्रात तेज उद्दित भयौ । चढ़ि चल्यौ चहुआन ॥ छं० ॥ ३७९ ॥

(१) ए. क्र. को. थानं । (२) ए. क्र. को.-सपन्नो ।

राजा पृथ्वीराज का सुख से जागना और मंत्री का उपस्थित होकर प्रार्थना करना।

कवित्त ॥ जग्गि[1] नृप चहुआन। थान सामंत हूर फिरि ॥
चहूं राज कर जोरि। मंत कीनो सुमंत करि ॥
दुहदू दिष्पि कनवज्ज। जहां बसि थान सुरत्तं ॥
दई विधिना न्हिम्मयौ। काल ग्रह आनि सु पत्तं ॥
मुष कालव्याल उंदर परै। ग्रास मुष्प मंषी जियन ॥
तुम सत्त ग्रहौ बंधौति षग। मंत अष्प देषौ वयन ॥ छं० ॥ १८० ॥

व्यूह बद्ध होकर पृथ्वीराज का कूच करना।

राज अग्ग गोयंद। बीर आहुट्ठ नरेसर ॥
दाहिमौ नरसिंघ। चंदपुंडीर हूर सर ॥
सोलंकी सारंग। राव कूरंभ पजूनं ॥
लोहा लंगरिराव। षग्ग मग्गह दह गूनं ॥
लष्पन बघेल गुज्जर कनक। बारहसिंघ सु अग्ग चलि ॥
बिय सेन सज्ज साईं सु पुछि। षग्ग मग्ग जिन बल अकल ॥ छं० ॥ १८१ ॥
दूहा ॥ दुह समग्ग सब सेन चलि। दिसि कनवज्ज नरिंद ॥
प्रथीराज ढिग राजई। मधि कविता [2]वरचंद ॥ छं० ॥ १८२ ॥

सबका मिलकर कन्ह से पट्टी खोलने को कहना और कन्ह का आखों पर से पट्टी उतारना।

एक दिसा उत्तरि नृपति। [3]आरन छिनक सपन्न ॥
मतौ करन साईं सु भृत। पुच्छहिं आय सु कन्ह ॥ छं० ॥ १८३ ॥
कवित्त ॥ सुनि कन्हा चहुआन। ग्रेह कैमास न मंची ॥
तंतसार बिन तंब। अंब बाजै छिन [4]अंची ॥
चंद छंद उप्पाय। गंज बिध अग्गि लगाई ॥
सुभर भ्रम्म रजपूत। पत्ति रष्पे पति पाई ॥

(१) ए. कृ. को. कविचन्द। (२) ए. कृ. को.-अरनि।
(३) गो. मंत्री। (४) ए. कृ. को.-आंग।

दरबार पंग दैवान भर । कल जलह सौ उल्लली ॥
पुच्छो सु दूच्छ बल मंत बर । दल भंजै पुज्जै दली ॥ छं० ॥ १८४ ॥
सुनि कन्ह चहुआन । कन्ह विद्यौ जु कन्ह जुगि ॥
कन्ह अनौ कुव्वेर । मेछ मोरन्न मुट्ठि घगि ॥
मामभ्रम्म अगि प्रान । नीति राघन राजंनिय ॥
तिहि कारन तुअ अंषि । निद्रि पाटी जुग जानिय ॥
आचिज्ज लाइ कनवज्ज वर । पूछि न दिषि तन तन नयन ॥
प्रथिराज काज तौ सुद्धरौ । छोरि पट्ट सद्धौ सयन ॥छं०॥१८५॥

तत्पश्चात् आगे चलना और प्रभात समय कन्नौज में जा पहुंचना ।

दूहा ॥ कूच करिग भावी श्रवन । बर बर चलि सहरत्त ॥
प्रात भयौ कनवज्ज फिरि । सुनि निसान धुनि पत्त ॥छं०॥१८६॥
कन्ह मंत मित्तेज बर । बर पुच्छन इग सब्ब ॥
बर भावी गति चिंतकिय । नयन सु बरजी तब्ब ॥ छं० ॥ १८७ ॥

देवी के मंदिर की शोभा और देवी की स्तुति ।

भुजंगी ॥ 'जहां दिष्पियै जासु संदेह सेहं । उभं अर्कसा कोटि संपन्न देहं॥
बने मंडपं जासु सोभ्रम्म गेहं । तिनं मुक्तियं छव दीसै न छेहं ॥
छं० ॥ १८८ ॥

रुधिं मित्त माहीष बहु मध्य रत्तौ । तिनं प्रात पूजंत नन्नेम अत्तौ।
भुजं डंड दुंदेस देसं प्रकारं । अमै देवता इंद्र लभ्भै न पारं ॥
छं० ॥ १८९ ॥

बजै दुंदभी देव देवाल निस्तं । बरं उट्ठि संगीत गानं पवित्तं ॥
बजै सद्द झंझै समं जोग भिद्दं । निरत्तं न पायं तिनं कब्बिचंदं॥
छं० ॥ १९० ॥

(१) ए. कृ. को.-तहां ।

सुषं पंड भारथ्थ विय वैर साजी। सुषं देषि चहुआन किलकारि गाजी॥
प्रभा भान तेजं विराजै अकारी। मनों अग्नि ज्वाला जलं में उजारी॥
छं० ॥ ३९१ ॥

[1]नमो तूंअ तातं नमो मात माई। तुअं सक्ति रूपं जगत्तं बताई॥
तुअं थावरं जंगमं थान थानं। तुअं सत्त पाताल सरतं सतानं॥
छं० ॥ ३९२ ।

तुअं मारुतं पानियं अग्गि मट्टी। तुअं पंचभूतं स्वयं देह यट्टी॥
तुअं खस्ति चंदं अनंदं अनंदी। भई मोह माया जपै जाप बंदी॥
छं० ॥ ३९३ ॥

तबै वैन आकास महि भयो ताजं। तुमं होइ जैपत्त प्रथिराज राजं॥
तवं दच्छिनं अंग करि नमसकारं। धुअं मध्यता नैर कीजै विचारं॥
छं० ॥ ३९४ ॥

सरस्वती रूप की स्तुति।

साटक ॥ वीना धारन अग्र अग्रति दिवं, देवं तमं भूतलं ॥
तूं वाले जल जी जगंत कलया, जोगिंद माया दुतिं ॥
त्वं सारं संसार पार करनी, तोयं तुअं सारमं ॥
दंदीनं दारिद्र दैत्य दलनी, मातं त्वया द्रुग्गया ॥ छं० ॥ ३९५ ॥

कवि का देवी से प्रार्थना करना कि पृथ्वीराज की सहायता करना।

दूहा ॥ [2]कै मातुल कै प्रकृति तू। कै पुरिषत्व प्रमान ॥
तुं सब छचिन मंझ है। तू रष्यै चहुआन ॥ छं० ॥ ३९६ ॥
गाथा ॥ लज्जा रूप सुदेवी। छवी छवीतेज [3]सुगति का गनया ॥
किय कमल्लं सु जेयं। बंधि पानि उच्चरै बलयं ॥ छं० ॥ ३९७ ॥
तूं धारन संसारं। चंदं चंद किर्त्तियो सुनियं ॥
ज्यों पंडव मंझ प्रगट्टी। अब हुज्जे राज मझ्झाइं ॥छं०॥३९८॥

---

(१) ए. कृ. को.-नमो तू अतानं।
(२) ए. कृ. को. "कै मातुल परकृति गति"। (३) ए. कृ. को. मंगति।

चौपाई ॥ इच्छा नाम छवि जो लेई। सार धार दुस्सिन बल कोई ॥
चो अग्गा छल दावें वीर। जो गुन होइ [1]जु मध्यसरीर ॥
छं० ॥ ३९९ ॥

कवि का कहना कि नगर को दहनी प्रादिक्षणा देकर चलना चाहिए।

दूहा ॥ किय विचार नृप नगर कौ। सह सामंत समेव ॥
चंद बुभिझ तब मन कियौ। चल्यौ सु [2]दच्छन देव ॥छं०॥४००॥
देत प्रदिच्छन नगर कों। होत तहां बहु बार ॥
राज देष पच्छै करै। एह सकल विचार ॥ छं० ॥ ४०१ ॥
हर सिद्धी परनाम करि। राषि समंत सु साज ॥
कनवज दिच्छन राज ग्रह। चल्यौ चंद बर राज ॥ छं० ॥ ४०२ ॥

पृथ्वीराज के नगर द्वार पर पहुंचते ही भांति भांति के अशकुन होना।

भुजंगी ॥ बजै पंग नीसान प्रातं प्रमानं। धरी अंक भोमं चली थान थानं ॥
कहै चंद कब्बी उपम्मा सु पत्तं। गजै मेघ मानो नछत्रं सहित्तं॥
छं० ॥ ४०३ ॥
धुनं संभरी कन्न साधंत भीतं। ग्रहै साध भम्मं सहै साधु नीतं॥
सधें मग्ग हेतं ग्रहं भम्म जीयं। [3]निहं दोस मंदेह छत्रं [4]पतीयं॥
छं० ॥ ४०४ ॥
सोई भ्रंम कन्हं चितंतं प्रमानं। दिषी खज्जि मत्तं कलं जोति मानं॥
धरै सामधमं जिनं धूम्र लीनं। जिनं जित्तियं जस्स देहं न कीनं ॥
छं० ॥ ४०५ ॥
सगुन्नं प्रथीराज दीसै नरिंदं। धुरं पैसते भोम पहु पंग इंदं ॥
बुलै देवि वामं घटं वास मथ्थै। बुलै वायसं वाम चढ़ि अस्ति रथ्थै॥
छं० ॥ ४०६ ॥

---

(१) पो.-सु।
(२) ए. कृ. को. दिष्यन।
(३) ए. कृ. को.-तिहं।
(४) ए. कृ. को.-पयहिं।

दिषी राज दिष्टं गलंती ज ईसं। लरै वाम नंदी अनंतं सुरीसं॥
दिसा दच्छिनी लोह भट्टी सु जागी। तहां चक्रितं चित्त कविचंद लागी॥
छं० ॥ ४०७ ॥

कवित्त ॥ असुभ सगुन मंगल न। चित्त चहुआन विचारी॥
मग्ग अग्ग मंजार। वाम दच्छिन निक्कारी॥
वर उचिष्ट पावक्क। विहन तिन मझ चमंकै॥
मेघ दृष्टि आकास। मध्य धुमंरिय गहक्कै॥
आरिष्ट भाव कविचंद कहि। तब चिंत्यौ नृपमान वसि॥
भावी विजत्ति भंजन गढ़न। सुनि चहुआन नरिंद हसि॥
छं० ॥ ४०८ ॥

दूहा ॥ सिंगिनि वंदि विरंम करि। बाग पंग नृप आइ॥
दिषि अराम सिष ग्रह परसि। रहि सुगंध वरछाइ॥छं०॥४०९॥

कन्नौज नगर का विस्तार और उसके चारों तरफ के बागानों का वर्णन।

भवर टोल झंकार वर। सुमन राइ फल लिद्ध॥
कूर दिष्ट मन रह वढौ। समि तारक श्रित रिद्ध॥छं०॥ ४१० ॥

पद्धरी ॥ वर मग्ग वग्ग चिहु कोद दिष्पि। विस्तार पंच जोजन लष्पि॥
कछ मग्ग भोमि चिहुं मग्ग दिस्सि। नारिंग सुमन दारिम विगस्सि
छं० ॥ ४११ ॥

प्रतिब्यंब झंभ झलकत सरूप। उप्पम तास वरनत अनूप॥
नव विद्ध गत्ति मह जल प्रवेस। मुमकंत झुंड दिष्पी सुदेस॥
छं० ॥ ४१२ ॥

प्रतिब्यंब झलकि चंपक प्रहून। उप्पंम देषि कविचंद दून॥
दीपक्क माल मनमथ्थ कीन। हरभयति दिष्पि दुह लोक दीन॥
छं० ॥ ४१३ ॥

हलहलत लता दमकंत वाय। मनु बध्धौ मयतसुर भंग पाइ॥
चल्लै सुगंध वर सीत वत्त। जानियै सब्ब इष्थीन जित्त॥
छं० ॥ ४१४ ॥

भुजंगी ॥ तहां प्रात प्रातं बिंबं अंब मौरे । सुरं कंठ कलियंठ रस प्रस्स भोरें ॥
फली फूल वेली तरं चढ़ि सोहै । तिनं ओपमा दैन कविचंद मोहै॥
छं० ॥ ४१५ ॥
रवी तेज देषी ससी बाल भागी । मनों तारिका उड़ि तर सब्ब लागी॥
कहीं जूहि जंभीर गंभीर बासी । तमी तप्पनी सेव सीसंम सासी ॥
छं० ॥ ४१६ ॥
असै मोर मकरंद उडि बाग मेंही । मनों विरहनी [1]दिघ उस्सास लेही॥
कितें एक बीजोर फल [2]भार लुट्टै । [3]मनों जीवनं पीउ पीयूष फुट्टै॥
छं० ॥ ४१७ ॥
कहूं सेवसत्ती फुलै ते प्रकारं । किधों दिष्पियं प्रगट मकरंद तारं ॥
कहूं मोभही बट्ट गुल्लाल फूलं । चषं भोर मकरंद सहफूल भूलं ॥
छं० ॥ ४१८ ॥
बरं बोरसरि फूल फूली सुरंगी । छके भोर भौरं मनं होइ पंगी ॥
कहूं कहली सेसुरंगं जु पंती । किधों [4]मंत मथ्थं कि बीचैं धमंती ॥
छं० ॥ ४१९ ॥
घरी एक चहुआन तिन थान राही । असंसार संसार संसार काही॥
तरं पिंड आकास फुल्लै निनारै । वरन्न वरन्नं अनेकं सवारे ॥
छं० ॥ ४२० ॥
सबैं कविराजं उपम्मा न पग्गी । मनों नौ ग्रहं वार रस आय मग्गी॥
कवी जे जुवानं मनं ओप जानै । कवी नेम वन्नं रसं सो बषानै ॥
छं० ॥ ४२१ ॥
न लालं न [5]पिंगी षजूरं अमग्गी । नरं उंच त्रिषंत सो सीस पग्गी॥
छं० ॥ ४२२ ॥

पृथ्वीराज का नगर में पैठना।

दूहा ॥ विग्गम सगुन चल्यौ नृपति । नैन दरसि मो मथ्थ ॥
वर दीनी छट नैर कौ । मिलन पमारन हथ्थ ॥ छं० ॥ ४२३ ॥

---

(१) ए. कृ. को. दीरघ, दीर्घ। (२) ए. कृ. को.-प्रात।
(३) ए. कृ. को.-"मनों जीवनं पीय पो पीउ फुट्टै"। (४) मो.-मनमथ्थ।
(५) ए. कृ. को. पीगी।

नगर प्रवेसनि देषि रूप। जूप साल जेठाइ॥
ता दृस्तन रस उप्पज्यौ। कहत चंद वरदाइ॥ छं० ॥ ४२४ ॥

नगर के वाह्यप्रान्त के वासियों का रूपक तदनन्तर नगर का दृश्य वर्णन।

भुजंगी॥ जिते लंगरी रूप दिन के प्रसंगा। तिते दिष्यिये कोटि कोपीन नंगा
जिते जूपकों चोप चोपें जु आरी। तिते उचरें सो आनंन पारी॥
छं० ॥ ४२५ ॥
जिते साधु संमारि षेलंत लष्ये। तिते दिष्यिये भूप दामंत पष्ये॥
जिते छैल संघाट वेस्यानि रत्ते। तिते द्रव्य के हीन हीनंत गत्ते॥
छं० ॥ ४२६ ॥
जिते दासि कै चास लग्गे सु रूपा। मनों मीन चाहंत बग मध्य कूपा॥
किते नाइका दिष्यि नर नैन डुल्लै। रहें सुरह लोकं सुरं दिष्यि भुल्लै॥
छं० ॥ ४२७ ॥
बचं उच्चरै बेंन निसि की उज्जग्गी। मनो कोकिला भाष संगीत लग्गी॥
उड़ै उंच अंधोर सेज्या समारै। मनों होइ वासंत भूपाल हारे॥
छं० ॥ ४२८ ॥
कुसम्मं समं चीर संकीर सोभा। मनो मध्यता काम कदली सु ग्रभा॥
रसं राग छत्तीस कंठं करंती। वरं बीन वाजिच हथ्थें धरंती॥
छं० ॥ ४२९ ॥
तिनें देषि असमान रुग्गी उठ्ठकी। मनो मेनिका नृत्य तें ताल चुक्की॥
बरन्नंत भावं लगें जुग्ग सारे। इसे पट्टनं ग्रेह दिष्ये सवारे॥
छं० ॥ ४३० ॥

दूहा॥ सो पट्टन रट्ठौर पुर। उज्जल पुण्य विपष्य॥
कोट नगर नायक सघन। धज बंधी तिन लष्य॥ छं० ॥ ४३१ ॥

नाराच॥ सु लाष लाष द्रव्य जासु नित्य एक उट्ठवै।
अनेक राइ जासु भाइ आय आय बिट्ठवै॥
सुगंध तार काल मानसा मृदंग सुभ्भवै।
सु दछिनं समस्त रूप स्याम काम सुभ्भवै॥ छं० ॥ ४३२ ॥

सु छंद चारु धुक्क देस सेस कंठ गावहीं।
उपंग बीन तासु पानि वालते बजावहीं॥
गमन्नि ते अनंग रंग मंग ए परच्चए।
सु बीर सा अरद्ध अंग पट्ठि पाच नच्चए॥ छं० ॥ ४३३ ॥

संवद सुभ्भ उच्चरें सु कित्ति का वषानिए॥
नरिंद इंद इत्त ने सु कीटि इंद जानिए॥ छं० ॥ ४३४ ॥

कन्नौज नगर के पुरजनों का वर्णन।

दूहा॥ अमग हट्ट पट्टन नयर। रत्न मुत्ति मनिहार॥
हाटक पट धन धात सह। तुछ तुछ दिष्पि सवार॥ छं० ॥ ४३५ ॥

मोतीदाम॥ अमग्गति हट्टति पट्टन मंझ। मनों द्रग देवल फूलिय रंझ॥
जु नष्पहि मोरि तमोरि सु ठार। उलिंचत कीच कि पौक उगार॥
छं० ॥ ४३६ ॥

मिलै पद पद्द सु वेदल चंप। सु सीत समीर मनो हिम कंप॥
जु वेलि सेवंतिय गुंथहि जाइ। दियै द्रव दासि सु लेहि ढहाइ॥
छं० ॥ ४३७ ॥

सुबुद्धि बजावत बीन अलाप। अनेक कथा कथ ग्रंथ कलाप॥
विवेक बजाज सु बेचहि सार। छुअंत नवासर छूअहि तार॥
छं० ॥ ४३८ ॥

ति देषहि नारि सकुंज पटोर। मनो दुज दष्पन लागहि थोर॥
सु मोति जराइ मढ़े बहु भाइ। जु कट्टहि कोरि कहै सुनि गाइ॥
छं० ॥ ४३९ ॥

सु लेतन सुष्प रहै अपनाइ। जु सेज सुगंध रचे पलटाइ॥
लहंलह तानक तानति वाम। बनी चिय दीसहि कामभिराम॥
छं० ॥ ४४० ॥

जराव कनक्क जरंज कसंत। मनो भयौ बासुर जामिन अंत॥
कसिक्कसि हेम सु काढ़त तार। उगंत कि हंसह कन्न प्रकार॥
छं० ॥ ४४१ ॥

करंकर कंकन अंकह जोव। मनों दुजहीन सरहहि सोव॥
जरे जिव प्रान प्रकारति लाल। मनों ससि सझ्झह तार विसाल॥
छं० ॥ ४४२ ॥

रुलंत जुधंतत राजनु जोप। मनों घन मद्धि तड़ित्तह ओप॥
जरेजिव नंग सुरंग सुघाटि। ति सुंदरि सोभ[1]उवावति पाट॥
छं० ॥ ४४३ ॥

दु अंगुलि जोरि निरष्पहि हीर। मनों फल बिंबहि[2]च पहि कीर॥
नषं नष चाहति मुत्तिय अंस। मनों मष छंडि रह्यौ गहि हंस॥
॥ छं० ॥ ४४४ ॥

दसों दिसि पूरि हयग्गय भार। सु पुच्छत च द गयौ दरवार॥
.... । .... ॥ छं० ॥ ४४५ ॥

कविचन्द का राजा सहित राजद्वार पर पहुंचना ॥

दूहा॥ हय गय दल सुंदरि सहर। जौ बरनों बहुबार॥
इह चरित्र कह[3] लगि[4]कहूं। चलि पहुपंग दुआर॥
॥छं० ॥ ४४६ ॥

चलत अग्ग दिष्यौ नृपति। हरि सिद्धी सु प्रसाद॥
चंद नम्मि अस्तुति करिय। हरिय अघ्घ अपराध॥ छं० ॥ ४४७॥
कौतूहल दिष्पै सकल। राकल अपूरव बट्ट॥
पानधार [5]छर छग्गरह। राजग्रही बर भट्ट॥ छं० ॥ ४४८॥

राजद्वार और दरवार का वर्णन।

कवित्त॥ गज घंटन हय [6]षेह। विविध पसुजन समाज [6]इव॥
घन निसान घुम्मरत। प्रवल परिजन समथ्थ नव॥
विविध बज्ज बज्जत सु। चंद भर भीर उमत्तिय।
इक्क लत्त आवत सु। इक्क नरपत्ति समथ्थिय॥

(१) ए. कृ. को.-पुंपावहि। (२) ए. कृ. को. जंपहि। (३) ए. कृ. को-गनों।
(४) ए. कृ. को.-छग्गल छल्लह। (५) मो.-हेप। (६) ए. कृ. को.-रत्त।

षुंभीय अवनि सुम्भय महल । जनु डुल्लित उभ्भिय करन ॥
दरबार राज कमधज्ज कौ । जग मंडन मभ्भह धरनि ॥
छं० ॥ ४४६ ॥

कौतूहल आलम अलाप । दिष्पिय दर चंदह ॥
पंगराइ दरबार । बार जागत जै विंदह ॥
मत जुग्गह वलिराइ । नगर पुर धंम प्रमानं ॥
चिंतिय जुग्ग रघुनाथ । अवधि पट्टन वर थानं ॥
द्वापरह नाग नागर नगर । जुरा जोध तप्पे सुतप ॥
जै चंद दंद दाह दलन। कलि कमधज कनवज्ज नृप ॥
॥ छं० ॥ ४५० ॥

दिष्पि चंद दरवार । छच धरि फिरिहि विनहमद ॥
भ्रमर गुंज पुंजरत । कत्त क्रमंत दुरद रद ॥
अनुचर अनुमंकरह । मत्त गम्मित कंठीरव ॥
वामुर मंझ विहारि । वारि अचवत अभंग भव ॥
दिष्पियै द्रुगम सुग्गम सुघन । सुगम द्रुगम जयचंद ग्रह ॥
सब जंत तंत जिम मर कटकि । समन दमन बस भूरि बह ।
छं० ॥ ४५१ ॥

कन्नौज राज्य की सेना और यहां की गढ़रक्षा का सैनिक प्रबंध वर्णन ।

लष्प सुभर आवंत । लष्प दरवार हरज्जै ।
लष्पह गोलंदाज । लष्प इक नालि भरिज्जै ॥
लष्प तानि सिलहान । गिरद रष्पै दरबारह ॥
पाइक लष्प प्रचंड । मंक मानै नह सारह ॥
लष अमिय सकल सेवा करै । द्वादस सूरज जोति कल ॥
लष तौन तुरय पष्पर सहित । पवन पाइ ऐराक मल्ल ॥
छं० ॥ ४५२ ॥

(१) ए. कृ. को. मुकत क्रमत दुरहु रद ।

नागाओं की फौज का वर्णन।

गज्जत जलधि प्रमान। संष धुनि बज्जत भारिय ॥
मनक्रम चिय बच रहित। सहित सन्नाह सुधारिय ॥
रिष सरूप जयचंद। सहस संषहधुनि रष्यन ॥
आवध साल प्रलंब। षंभ रष्यौ अति तिब्बन ॥
मन सिक्त एक इष्थिय फटक। इक्क हथ्थ श्रेलक्त बल ॥
भुज दंड प्रचंड उचाय कर। धरत जानि मद्गल कि मल ॥
छं० ॥ ४५३ ॥

नागा लोगों के बल और उनकी बहादुरी का वर्णन।

हथ सित जरध षंभ। बान नंषत सत भारिय ॥
फोरत लोह प्रचंड। मुट्ठि चौसट्ठि प्रचारिय ॥
किनकि संगि नंषंत। धरनि षुंभत तिष्यारिय ॥
कितक वथ्थ भरि षभ। कट्ठि नंषंत उछारिय ॥
इम रमत सहस संषह धुनिय। रिषि सरूप प्राक्रम अतुल ॥
उच्चर्यौ राज भट्टह सरस। इह कौतूहल पिष्षि भल ॥
॥ छं० ॥ ४५४ ॥

संखधुनी लोगों का स्वरूप और बल वर्णन।

मोरपंष तन वन्न। मोर सिर मुकुट विराजत ॥
मोर पंष वल्लभ अनँत। पंषे कर साजत ॥
तप सु तेज षिचीय। चष्प बघ्घह भुज सुंडह ॥
पग नेवर झनकार। समर मेरं गिरि मंडह ॥
अवतार रूप दरसंत भल। संष बजावत माधरिय ॥
लष असी मझ्झ पौरुष अतुल। धर कंपत पग्गह धरिय ॥
॥ छं० ॥ ४५५ ॥

पृथ्वीराज का उन्हें देख कर शंकित होना और कवि का कहना कि इन्हें अत्तताई मारेगा ।

दूहा ॥ पिष्पि पराक्रम राज इह । विरत भयौ मन मंझ ॥
चंद वरद्दिय उकति करि । सामंत सूर समंझ ॥
॥ छं० ॥ ४५६ ॥

कहिय चंद राजन्न प्रति । कहा सोचि मन मंडि ॥
अत्तताइय जुध जुरै । जब इन सस्चन षंडि ॥
॥ छं० ॥ ४५७ ॥

भाषनि भाष सु मिलिय दिस । दई सिसिर वनि इंद ॥
नव नव रस अरु सघन सघ । जोध सुपंग नंरिद ॥ छं० ॥ ४५८ ॥

पद्धरी ॥ संचरिय देस भाषा न भाष । राथान राय सामान साष ॥
नौवत्ति वज्जि भर तौन लाष ।[1]चक्रित सुनाथ दुअ निच विसाष ॥
छं० ॥ ४५९ ॥

सामंतो का कहना कि चलो खुल कर देखें कौन कैसा बली है ।

दूहा ॥ निसि नौवति मिलि प्रात मिलि । इय गय देषिय साज ॥
विचरि सुभर करिवर [2]गहिय । किनहि कहिय प्रथिराज ॥
॥ छं० ॥ ४६० ॥

कवि चंद का मना करना ।

कहहि चंद दंद न करहु । रे सामंत कुमार ॥
तौन लष्ष निसि दिन रहै । इह जैचंद दुआर ॥
॥ छं० ॥ ४६१ ॥

उसका कहना कि समयोचित कार्य करना बुद्धिमानी है देखो पहिले सब ने ऐसा ही किया है ।

(१) प. क. को. "चक्रित सुनाथ दुज निरषि साष" (२) मो.-गहिउ ।

कवित्त ॥ एक ठौर[1] पृथिराज । रास मंगै हल काजै ॥
समौ ताकि मोविंदि । अग जरासिंध सुभाजै ॥
समौ जानि श्रीराम । बैर पति कासिय मुक्किय ॥
समौ ताकि पंडवन । देह जस बल अप लुक्किय ॥
मतिमिष्ट पुरष तक्कै समौ । मनह मनोरथ चिंति मति ॥
कवि कहल केलि लागी विषम । टारी टरै न पुब्बगति ॥
छं० ॥ ४६२ ॥

राजा का कवि की बात स्वीकार करना ।

दूहा ॥ मानि राज रिस रीस मन । चिंति उदै प्रथुदुत्ति ॥
सो जागी श्रो तान जल । मन भौ कंद उर्थात्ति ॥ छं० ॥ ४६३ ॥

कवि का पूछते पूछते द्वारपालों के अफसर हेजम कुमार रघुवंशी के पास जाना ।

मुरिल्ल ॥ पुच्छत चंद गयौ दरवारह । जहां हेजम रघुवंस कुमारह ॥
जिहि हरि सिद्धि पास वर पायौ । सु कविचंद दिल्लिय तैं आयौ
छं० ॥ ४६४ ॥

द्वारपालों का वर्णन ।

कवित्त ॥ करनि कनक मय दंड । परम उद्दंड चंड बल ॥
दिब्ब देह सुंदर समथ्थ । अति सुमति सु न्निमल ॥
प्रति नर प्रीति प्रसन्न । परस सपन्न सब्ब जय ॥
अवर भूष पिष्पत नयन्न । परसाद लग्गि[1] नग ॥
सुकलभ्भ कलपतरु वग्ग जिम । पुन्य पुंज पुज्जिय सुभुअ ॥
प्रति द्वार राज दरवार महि । दिपि वरदाय नमित्त हुअ ॥
छं० ॥ ४६५ ॥

प्रतिहार का पूछना कि कौन हो? कहां से आए? कहां जाओगे?

(१) प्र. कृ. को पय ।

मुरिझ्झ॥इकि कंविद हेजम बुल्लिय हसि।कोंन थान बर चलिय कोंन दिस॥
को न्रप सब देव का नाम। किहि दिसि चिंत कैसौ परिनाम॥
छं० ॥ ४६६ ॥

कवि का अपना नाम ग्राम बतलाना।

हो हेजम रघुवंस कुमार। न्रिप चहुआन प्रथीअवतार॥
फिरि दिल्ली कवियान नरिंद। मो बर नाम कहै कविचंद॥
छं० ॥ ४६७ ॥

हेजम कुमार का कवि पर कटाक्ष करना।

द्वारपालवाक्य।

श्लोक ॥ मंगिवान विवारतो कविन, संधिवान् कि विग्रहात्॥
जड्डवान पंग राएन्। ना भूतो न भविष्यति॥ छं० ॥ ४६८॥
दूहा ॥ बैरी काटन राज बच। डंड भरन परधान॥
सेवा मानस भेदियन। हिंदू [1]मूसलमान॥ छं० ॥ ४६९ ॥

कवि का उत्तर देना

[2]असतिनि बोलहु हेजमन। ग्रब्ब करहु जिम आलि॥
जु कछु समर बित्तें रनह। इह देषहु तुम काल्हि॥ छं० ॥ ४७० ॥

हेजम कुमार का कवि को सादर आसन देना।

आदर करि आसन दियौ। पालक पंग नरिंद॥
छिनक विलंबहु सुहित करि। जब लगि कहौं कविंद॥
॥ छं० ॥ ४७१ ॥

हेजम कुमार का वचन।

पंग दरस जच्चन मिसह। कै मोकलिग बसीठ॥
कै मिलि यह मंडल न्रपति। राज राज सू दीठ॥ छं० ॥ ४७२ ॥

(१) ए. मुसलमान। (२) मो.-असते बोलहु हजमने।

कवि का कहना कि कवि लोग वसीठ पन नहीं करते।

कुंडलिया ॥ सुनि हेजम रघुवंस वर। भट्ट बसीठ न हुंति ॥
पति घट्टत्त छिनकह मरै। जस मंगन नन षंति ॥
जस मंगन नन षंति। कौन प्रथिराज दानं बरि ॥
का दिष्यन राज सूं। कहा नलराइ जुधिष्ठिर ॥
मंडली मोहि जाचन नियम। दरिद करिय चहुआन चुनि ॥
पंगुरौ न्हपति दंपन मनह। रघुबंसी हेजम्म सुनि ॥ छं० ॥ ४७३॥

कवित्त ॥ तू मंगन कविचंद। सथ्थ मंगन नन होइय ॥
तौ देषत तिय थान। इंद्र भुल्लिय [1]द्रग जोइय ॥
एह कपट कवि हस्यौ। नयन दिष्यिये निनारै ॥
न्हपन होइ दरबार। भूत भय छंद विचारै ॥
दरबार कब्बि बिरम्यौ न्हपति। [2]भर संमुह रष्यौ न दर ॥
तुम राज नीत जानहु सकल। हुकम बिना रष्यौ न बर ॥
॥ छं० ॥ ४७४ ॥

दूहा ॥ तहां बिरम कीनौं सु कबि। सथ सामंत बहोरि ॥
चंद फेरि दष्यिन दिसा। भरं उम्भै बरजोर ॥ छं० ॥ ४७५ ॥

हेजम कुमार का उसे बिठा कर जैचन्द के पास जाकर उसकी इत्तला करना।

न्हप कवि हेजम मब्बि दर। रष्यि गयौ न्हप पास ॥
भट्ट संपतौ राज पै। बैने चंद विलास ॥ छं० ॥ ४७६ ॥

आदर करि हेजम [3]कविहि। गयौ जहां न्हपति नंरिद ॥
दिल्लियपति चहुआन कौ। कह असीस कविचंद ॥
॥ छं० ॥ ४७७ ॥

सुनत हेत हेजम उठिग। दियत चंद बरदाइ ॥
न्हप आगे गुदरन गयौ। जहां पंग न्हप आहि ॥ छं० ॥ ४७८ ॥

(१) प्र. कृ. को.-जुग। (२) प्र. कृ. को.-तर। (३) प्र. कृ. को.-सुकवि।

हेजम गय पदु पंग पैं। स्वामि आय कविचंद ॥
मत जंपी बुल्ल्यौ सुभट। सुनि सुनि सोभ नरिंद ॥
॥ छं० ॥ ४७९ ॥

जो करिजै चिंतक सुतौ। जानत होइ अजान ॥
हरुअत्तन गरुअत करै। सोई न्वपति सयान ॥ छं० ॥ ४८० ॥

हेजम कुमार का जैचन्द को बाकायदे प्रणाम करके कवि के आने का समाचार कहना।

बस्तबंध रूपक ॥ तब सु हेजम तब सुहेजम। जुगम कर जोरि ॥
.... । .... ॥
सीस नयौ [1]दसवार तिहि। सेत छत्र पति मद[2]सुदिट्ठौ ॥
मकल बंध सथ्थह नयन। चकित चित दुलै गरिट्ठौ ॥
तब सु कियौ परनाम तिहि। बर करी राय [3]प्रतिहार ॥
जिहि प्रसन्न सरसति कहै। सुकविचंद दरबार ॥ छं० ॥ ४८१ ॥

दूहा ॥ सीस नायि बुल्लौ वयन। औसर पंग रजेस ॥
कवि जौ जुग्गिनि पुर कहै। संपत्तौ द्वारेस ॥ छं० ॥ ४८२ ॥

कवि की तारीफ।

कवि सरस बानी सरस। कित्ती रूप प्रमान ॥
चंद [4]बत्त हर बिदुष जन। गोपंथिती समान ॥ छं० ॥ ४८३ ॥
गुन आगंम समंद जौ। उक्त तिल हरि तरंग ॥
जुपति कवित्त ग्रज्जाद ज्यौं। रतन वच्च प्रघरंग ॥ छं० ॥ ४८४ ॥
संमिय अगुनि प्रगास ज्यौं। गत्ति जुगत्ति बिचार ॥
सुध्ध नरेस निधान धन। [5]जनु अर्जुन भटवार ॥ छं० ॥ ४८५ ॥
गुन [6]बिद्यौ नध्यै धनी। तीन प्रकारय कित्ति ॥
सरसे सर उतकंठ कर। ग्रब्बह तत कवि दित्त ॥ छं० ॥ ४८६ ॥

(१) कृ. को.-दरबार,दसार (२) ए. कृ. को नद। (३) मो.-प्रहार।
(४) मो.-बत्तहीं। (५) ए. कृ. को. धनु

आडंबर बर भट्ट बहु । भर बर सथ्थ कंबिद ॥
तब रक्यौ दरबार में । संग रष्यि कबिचंद ॥ छं० ॥ ४८७ ॥

राजा जैचन्द का दसोंधी को कवि की परीक्षा करने की आज्ञा देना।

बयन सुन्यौ रघुवंस कौ । भय सुभ सुभहि नरिंद ॥
तिन दसोंधिय सों कह्यौ । बोलि परष्यहु, चंद ॥ छं० ॥ ४८८ ॥
कवियन तन चाह्यौ न्रपति । जो मुष तकौ न जान ॥
जौ लाइक लष्यौ लषन । तौ लाओ इन थान ॥ छं० ॥ ४८९ ॥

* दसोंधी का कवि से मिलकर प्रसन्न होना।

चौपाई ॥ आयस भौगु तियन तन चाह्यौ । तिन परनाम कियौ सिर नायौ ॥
कैधौं डिंभ कवी परवानी । सरसें वर उच्चारहु, बानी ॥
छं० ॥ ४९० ॥
ते चवि आइ चंद पहि ठट्ठै । मिलतें हेत प्रीति रस बट्ठै ॥
हुअ आनंद चेद पहि आए । ज्यौं सक्कर पय भूषें पाए ॥
॥ छं० ॥ ४९१ ॥

कवि और डिबियों का भेद।

भुजंगी ॥ कितं दंडिया डंबरी भेष धारी । सु कब्बी कुकब्बी प्रकारं विचारी ॥
सुने भट्ट मेंजेह च्यारं प्रकारी । किधों ब्रह्म मुनि ब्रत वर ब्रह्म विचारी ॥
किधों ठग्ग कै ठोठ कै हेनगारी । .... ॥ छं० ॥ ४९२ ॥
कहै राइ पंगुं सुनौ कब्बि सब्बौ । परष्यौ सु पतं कुपतं गुनब्बौ ॥
छं० ॥ ४९३ ॥
किते भट्ट जाने दुरे ते कविंदं । तिनं पास आडंबरं नथ्थ इंदं ।
कला ग्यान अग ग्यान विग्यान जानं । अरथ्थं सुरथ्थं कुरथ्थं प्रमानं ॥
छं० ॥ ४९४ ॥

* दसोंधी एक जाति होती है जो कि आज कल जसोंधी भी कहलाती है, दरबार के नाजि या कड़खे कहने वाले जोगवर अबतक इस वंश में होते हैं।

कठोरं कुबोलं पंडते तिरष्यं । अदिष्टं अदानं प्रमानी निरष्यं ॥
जिते बाल बानी कवीचंद जानं । तिते पंग दिष्टं अदानं प्रमानं ॥
छं० ॥ ४९५ ॥

अहित्तं सुहित्तं सु वित्तं विचारौ ।रसं नौ छ भाषा स सापा उधारौ॥
परंमान ग्यानी विग्यनी विरूरं ।लषौ बुद्धि विद्या तौ आनौ हजूरं॥
छं० ॥ ४९६ ॥

दसोंधियों का कवि के पास आना और कविचन्द का कवित्त पढ़ना ।

चौपाई ॥ ति कवि आय कवि पहि संपत्ते । गुरु व्याकंन कहै मन मत्ते ॥
थकि प्रवाह गंगा सरसत्ती । सुर नर श्रवन मंडि रहै बत्ती ॥
छं० ॥ ४९७ ॥

मुष [1]परसंत परसपर रत्ते । मुन उच्चार कर्‍यौ सरसत्ते ॥
गुन उच्चार चार तन कीनौ । जनु भुष्यै पय सक्कर दीनौ ॥
छं० ॥ ४९८ ॥

सब रूपक कहि कहि कवि जित्ते । नव रस भास सु पुच्छहि तत्ते॥
गजपति गरूअ ग्रेह गुन गंजहु । श्रीधर बरनि पंग मन रंजहु॥
छं० ॥ ४९९ ॥

श्रीबर श्रीकर श्रीपति सुंदर । सुमिरन कियौ तथ्थ कविचंदर ॥
बीठल्ल विमल्ल बयन बसुधा बन । द्रुपद पुत्ति चिरु चीर बढ़ावन ॥
छं० ॥ ५०० ॥

ग्राह गहत गंधर्व गयंदह । रष्यहु मान सुमान नरिंदह ॥
तुअ चिंतत सच, सब मित्तिय । विष दातव्य विषा खड्डी चिय ॥
छं० ॥ ५०१ ॥

अब अर्जन कोवंड धरिय कर । तब [2]संघरिय सकल षोहिन भर ।
अब अर्जुन मन मोह उपायौ । तब भारथ मुष मभ्भ दिषायौ॥
छं० ॥ ५०२ ॥

(१) प. कृ. को.-परसंन । (२) प. संधिय ।

है हरता करता अविनासी। प्रकृति पुरुष भारथ श्री दासी॥
सा भारति मुष मझ्झ प्रसन्नी। तव न वरस साटक भाष छ भन्नी॥
छं० ॥ ५०३ ॥

साटक॥ अंबोरुह मानंद लोइ खरिसी, दारिम्म लो बीयली॥
[1]लोयन्न चल चालु, चालुय वरं, बिंबाइ कीयौ गही॥
के सीरी कै साइ बैनिय रसौ, चीकीमि की नागवी॥
इंदो मध्य सु इंद मानवि [2]हितो, ए रस्स भासा छठौ॥
छं० ॥ ५०४ ॥

दसोंधी का प्रसन्न होकर कवि को स्वर्ण आसन देना।

चौपाई॥ कवि पिष्यत कवि को मन रत्तौ। न्याय नयर कवंज संपत्तौ॥
कवि एकह अंगी क्रित कीनौ। हेम सिंघासन आसन दीनौ॥
छं० ॥ ५०५ ॥

दसोंधी का कवि की कुशल और उसके दिल्ली से आने का कारण पूछना।

दूहा॥ क्यौ मुक्यौ प्रथिराज बर। क्यों ढिल्ली पुर छेह॥
जंपि कह्यौ कविचंद तत। तुम कुसलत्तन ग्रेह॥छं०॥५०६॥

कवि का उत्तर देना कि भिन्न भिन्न राज्य दरबारों में विचरना कवियों का काम ही है।

गाथा॥ दीसै विविह चरियं। जानिज्जै सज्जन दुज्जनं॥
[3]अप्पानं चक लिज्जै। हिंडिज्जै तेन पुहवीए॥छं०॥५०७॥

दूहा॥ जिन मानो चहुआन भौ। सुलाइ आलई भट्ट॥
देषि ग्रव्व सुरपति गरै। पंग दरसि सो थट्ट॥छं०॥५०८॥
जगत समुद्दयकार जस। पग्ग सीस चहुआन॥
इह अचिज्ज बर भट्ट सुनि। तुछ निडुर संमान॥छं०॥५०९॥

(१) ए.-को लोदन्ने, लोहनें। (२) मो. हनौ। (३) ए.-अप्पानं तनक लिज्जै।

दसोंधी का कहना कि यदि तुम बरदाई हो तो यहीं से राजा के दरबार का हाल कहो।

चौपाई ॥ गजपति गरूअ ग्रेह मन रंजहु, । किन गुन पंग राय मन गंजहु ॥
जो सरसै बर है तुम रंचौ । [1]तौ अदिष्ट बरनौ कवि संचौ ॥
छं० ॥ ५१० ॥

मुरिल्ल ॥ तब सो देषै जान [2]प्रवीनं । भट्ट नयन मोहै रसलीनं ॥
दान षग्ग सरबंगै सूरौ । अनीवानि [3]अब्बंगै पूरौ ॥छं०॥५११॥

दूहा ॥ दीन वचन लहु करि कहौ । कविन करौ मन मंद ॥
जै सरसै बर कछु हुए । तौ बरनौ जयचंद ॥ छं० ॥ ५१२ ॥

अरिल्ल ॥ अहौ चंद बरदाइ कहावहु, । कनवज्जह नृप देषन आवहु, ॥
जौ सरसति [4]आनौ बर चाव । तौ अदिष्ट वरनौ नृप भाव ॥
छं० ॥ ५१३ ॥

कवि का कहना कि अच्छा सुनों मैं सब हाल आगु छन्द प्रबंध में कहता हूं।

दूहा ॥ जौ वरनौं जैचंद कौ । तौ सरसें बर मोहि ॥
छंद प्रबंध कवित्त जति । कहि समझाउं तोहि ॥ छं० ॥ ५१४ ॥

दसोंधी का कहना कि यदि आप अदिष्ट प्रबन्ध कहते हैं तो यह कठिन बात है।

कहहि पंग बुधिजन कवित । सुनहु चंद बरदाइ ॥
दिठि दिष्यौ बरनै सकल । अदिठ न बरन्यौ जाइ ॥ छं० ॥ ५१५ ॥

कविचन्द का जैचन्द के दरबार का वर्णन करना।

पद्धरी ॥ सभ साज पंग बैठौ नरिंद । गुनगहर सकल साजै सु इंद ॥
सिंघासन आसन सुध्ध साज । मानिक्क जटित बहु मोल बाज ॥
छं० ॥ ५१६ ॥

(१) मो.-तो अदिष्ट वरनहु नृप संचौ । (२) ए. प्रचीनं ।
(३) मो.-सरवंगै । (४) ए. कृ. को.-जानू ।

वासव्व सेत मधि पीति सोहि । ब्रह्मंत ताम कविराज मोहि ॥
मंडौ किरीट बररूव सीस । उत्तंग मेर हर सिषर दीस ॥
छं० ॥ ५१७ ॥

बैठो सु भूप मुष दिसि कुबेर । रजि रुद्र थान रचि जानि मेर ॥
दाहिनै वांम भर भर बयट्ठ । हूरत्त दत्त गुन सकल दिट्ठ ॥
छं० ॥ ५१८ ॥

सिर सेत छत्र मंडौ सु भूप । बहु देस रिद्धि बहु तास रूप ॥
सनमुष्य बैठि बर विप्र भट्ट । इह चव सु विद्य कलताम घट्टि ॥
छं० ॥ ५१९ ॥

तिन पच्छ बैठि गायन सु गेव । किन्नरह कंठ रस सकल भेव ॥
हिमदंड छत्र किय सेत पान । ठट्टौ सु पिट्ठ विस भूप जानि ॥
छं० ॥ ५२० ॥

दुहु पिट्ठ साजि वर चँवर ढार । रजि रूप जानि अश्वनि कुमार ॥
ठट्टौ सु पन्नधर दच्छि थान । प्रतिबिंब रूप दुअ इंद जानि ॥
छं० ॥ ५२१ ॥

बैठे सु पिट्ठवर पासवान । बनि रूप रेह जित राज जान ॥
रत्तौ सु कीर मुष अग्र जान । भुज्जंत पक्क फल करक पान ॥
छं० ॥ ५२२ ॥

थरि करह बाज ठट्टौ समुष्य । देयंत ताम तामो सुरुष्य ॥
इहि विद्धि बयट्ठौ पंगराज । आसनह जोति जोगिंद साज ॥
छं० ॥ ५२३ ॥

जैचन्द का वर्णन।

साटक ॥ जा सीसं चमरायते सित छतं, षं षिन्न इंदोपिता ॥
बाला अर्क समान तेज तपनं, कोटी तयं मौलिता ॥
सस्त्रे सस्त्र समस्त षिचि दहियं, सिंधुं प्रयाते पलं ॥
कंठे हार रुलंति आनक ममं, प्रथिराज हालाहलं ॥
छं० ॥ ५२४ ॥

दरबार में प्रस्तुत एक सुग्गे का वर्णन।

दूहा ॥ नील चंच अरु रत्त तन। कर करकटी भषंत ॥
जोइ जोइ अष्यै राज मुष। सोइ सोइ कीर कहंत ॥ छं० ॥ ५२५ ॥

कवित्त ॥ नील चंच तन अरुन। पानि आरोहि राज सुक ॥
रुचि संपार परंम। चरन पिंगल सुभंत जुक ॥
कंठ मुकत गुन रतन। जटित ओपत आभूषन ॥
[1]रूर वारु कर नषनि। दब्बि भष्यित तन पूषन ॥
जिम जिम उचार अष्यत न्रपति। तिम तिम कीर करंत सुर ॥
भूलंत सुनत क्रत बेद बर। रस रसाल बानी सु फुर ॥
छं० ॥ ५२६ ॥

दूहा ॥ सहस छच बज्जन बहल। बहुल बंस विधि नंद ॥
एक सहस संघहधुनी। महल जानि जयचंद ॥ छं० ॥ ५२७ ॥

दसोंधी का कहना कि सब सरदारों के नाम गाम कहो।

दूहा ॥ तब तिन कवियन उच्चरिय। अहो चंद बरदाइ ॥
[2]पृथुक पृथुक नर नाम सभ। बरनिहु हमहि सुनाइ ॥
छं० ॥ ५२८ ॥

कवि चन्द का सब दरबारियों का नाम गाम और उनकी बैठक वर्णन करना।

पद्धरी ॥ राजिय सुसभा राजै सपंग। बिहु बांह पंति रंगह सुरंग ॥
सोभत सुरंस सुर समय सार। हनि हतअसुर दरबार भार ॥
छं० ॥ ५२९ ॥

दष्षिनिय अंग रयसल कमंध। तिन अंग बीरचंदह सुबंध ॥
अहवह भांन जुगरान बीर। कासह नंरिंद रविबंस धीर ॥
छं० ॥ ५३० ॥

(१) ए.-रू चारू कर नषनि, कृ.-रूचिरु रनि षनि, मो. उरट चारु कर नषनि।
(२) ए., कृ. को.-"पृथुक नाम नर नाम सब"।

बरसिंघ राव बघेल सूर। 'कठ्ठिया राय केहरि करूर॥
परताप बीर तेजंप नाथ। रा राम रेन राहप्प पाथ॥
छं० ॥ ५३१ ॥

केलिया बंध कट्ठी सु आस। करनाट भर काहप्प तास॥
सारंग भट्ट सुग्रीव भाव। मोरी मुवंद परमार राव॥
छं० ॥ ५३२ ॥

बीरंमराव नर पाल बीर। नरसिंघ कन्ह सम भुज गंभीर॥
महदेव समह हरंसिघ बंक। मेहान इंद सद सार कंक॥
छं० ॥ ५३३ ॥

पूरन्नराव चालुक्क देव। गोयंदराव परमार मेव॥
हम्मीर धीर परताप तत्त। परबत पहार पाहार सत्त॥
छं० ॥ ५३४ ॥

सचसाल अवधि पाटन नंरिद। साषुला हीर भुज फर कंविद॥
हन्नू लंगूर रनबीर बाह। जसवंत उट्ठ द्रुग सबर नाह॥
छं० ॥ ५३५ ॥

बर बीरभद्र बघेल मेर। नृप कृष्णराय सत्रुन अरेर॥
श्री मकुँदराइ वीराधिधार। जै सिंघ सूर 'आकार भार॥
छं० ॥ ५३६ ॥

भुज बाम बंक सेनी सधीर। आघात पात वज्जंग बीर॥
रठवरह सूर रावत्त राज। रनवीर धीर आवट्ठ भाज॥
छं० ॥ ५३७ ॥

न्रप चंद्रसेन पांवार राव। न्रप भीमदेव आजान दाव॥
नरसिंघ सूर चालुक्क वीर। वर रुद्रसिंघ कंठी सधीर॥
छं० ॥ ५३८ ॥

श्री रामसेन राजेस राज। मांषुला देव दामह समाज॥
रा रामचंद्र रानिंग राव। हम्मीर सेन चतुरंग चाव॥
छं० ॥ ५३९ ॥

(१) प. कृ. को.-कठिमा। (२) कृ. को. आकार, प.-साकार।

जट्टह सुदेव सारंग सूर । बीरंम मवन धानी ममूर ॥
जैसिंध कमध आजानि पांनि । पंमार भीम रण सिंध थान ॥
छं० ॥ ५४० ॥

अरजुन्नदेव निमकुल नरेस । आसोक राइ साहन सुरेस ॥
चंदेल वीरभद्रह सबीर । सहदेव बंक भुज धज गँभीर ॥
छं० ॥ ५४१ ॥

केहरी ब्रह्म चालुक्क बीर । हरिचंद तेज चहुआन नीर ॥
हरसिंघ राइ रजि पास वान । निसुरत्ति वीर ममरेजपान ॥
छं० ॥ ५४२ ॥

इतमीस[1]मीर बहबल ममंद । [2]आरामपान पीरोज बंद ॥
कंमोदपान जद्दान भार । जुग बलिय अमिय अल्लिय करार ॥
छं० ॥ ५४३ ॥

महमुंद पान केलिय गंभीर । अबदुल्ल रोम राहिम्म मीर ॥
सल्लेम साहि [3]इसमित्त पान । [4]आरोज साहि असवद्द पान ॥
छं० ॥ ५४४ ॥

ढारंत चँवर जुग पच्छ भूप । हरि बीर रास सम वय सरूप ॥
ठट्ठौ सु दपिन कर मंचि राव । थट्टे मुकुंद पहु वाम थाव ॥
छं० ॥ ५४५ ॥

शिव राग होत हरि गुन [5]मिलंत । उर सुनत सत्त पत्तह [6]पिलंत ॥
श्रीकंठ सु गुर कवि कमल भट्ट । जुग जोर समुष कमधज्ज पट्ट ॥
छं० ॥ ५४६ ॥

जुग पुरुष आय विनतिय समान । पठ्ठए नाथ तिरहुंत्त थाम ॥

दूसोंधी का दरवार में जाकर कवि की शिफारिस करना।

कवि गमत बहुर फिरि पंग तीर । सुनि गुन गंभीर कमधज्ज बीर ॥
छं० ॥ ५४७ ॥

(१) ए. आरात । (२) ए. कृ. को.-इसमीर । (३) को.-आरज्ज ।
(४) कृ. ए.-मिलंत । (५) को.-लिपंत ।

कवि कमल विमल गुन अहरेस। अब्भियै अंषि निज वर नरेस॥
छं० ॥ ५५८ ॥

दूहा ॥ * मंगल बुध गुरु सुक्र सवि। सकल छूर उड़दिट्ठ॥
आत पच धुअ जिम तपै। सुभि जयचंद वयट्ठ॥छं० ॥ ५५९॥

नव रस सुनि छिठ अदिठरस। भाषा अंपि न्रपाल॥
सहइ पत्त कुपत्त लिषि। गुन दरसी चयकाल॥ छं० ॥ ५५० ॥

कवि का एक कलश लिए हुई स्त्री को देख कर उसकी छवि वर्णन करना।

आन्यौ वर वरदाइयन। वर संचौ कविचंद॥
कंद्रप कितो कि और वर। खेत पीठ जैचंद॥ छं० ॥ ५५१ ॥

चौपाई ॥ दस दिस कवि संसुहौ उहाई। घट धरि बाल [1]कुरित्तन आई॥
धरत सुधरि छाई सुष [2]छाइया तिहि कविराज सु औपम [3]पाइय॥
छं० ॥५५२॥

दूहा ॥ वर उपजै विपरीति गति। रहत सहायक इंद॥
तत्त विरम्मि निवेस किय। [3]चित्तहि तत्तहि चंद ॥छं०॥५५३॥

कवित्त ॥ तहां सुदिष्षि कविचंद। चंद दह दह संजुत परि॥
पूरानन आनंद। जुद्ध मकरंद सुद्ध जुरि॥
म्रगा मीन गुन गनै। गुनह लज्जीत छिपाकर॥
तहां अपुव उप्पनौ। छीर चक्रवाक प्रभाकर॥
सज्जीव मदन वेली विहसि। वरकमोद सामोद घटि॥
संजोग भोग सम जोग गति। रति प्रमान मनमथ अनटि॥
छं० ॥ ५५४ ॥

---

*यह दोहा मो. प्रति में इस छन्द पछरी के पहिले और दोहा छन्द ५१७ के बाद है।

(१) ए. कु. को.-कुरित्तिन। (२) ए. कु. को.-छाई पाई।

(३) ए. कु. चित्तरि ततरि चंद।

कवि की विद्वत्ता का वर्णन।

दूहा ॥ भाषा षट नव रस पढ़त। वर पुच्छै कविराज ॥
संप्रति पंग नंरिद कै। वर दरबार विराज ॥ छं० ॥ ५५५ ॥
भाष परिछा भाष छह। दस रस दुम्भर भाग ॥
वित्त कवित्त जु छंद सौं। पग सम पिंगल नाग ॥छं०५५६ ॥

कवित्त ॥ भेद भाव गुन कला। सुनत आचिज कविंद घन ॥
नृपति वरन अनदिट्ठ। सभा सद विवह वचन घन ॥
छंद कवित पारस प्रचार। सुरधार नंदि सुर ॥
रस रसाल बानी [1]पुनंत। गय भज्जि उरह जुर ॥
दीरघ दरस्स कविचंद वर। सुनि नंरिद कनवज्ज पति ॥
[2]अनि गुनिय कला गुन सब्बवै। सरसें वर धरि सरस मति ॥
छं० ॥ ५५७ ॥

कविचन्द का दरबार में बुलाया जाना।

दूहा ॥ प्रभु बोलिय कवि मझ्झ ग्रह। दरसि पंग असवान ॥
मनुं भान चरन नव ग्रस परसि। नक बैठो सुरवान ॥
छं० ॥ ५५८ ॥

राजा जैचन्द का ओज साज वर्णन।

कवित्त ॥ जिम सरद ससि ब्यंब। तिम सु [3]महि छच विरज्जिय ॥
जिम सु भ्रम्म पब्बय। पविच [4]छोरनिधि जिम छज्जिय ॥
अग मंडिम जिम मुत्ति। कित्ति तानिय वितान तिम ॥
जिन सु सत्त [5]मय पुंज। सेत सुरतरु फुल्लिय तिम ॥
सित सहस पच विगसिय जिमसु। दुरद मत्त अलि सुम्मयौ ॥
अति तुंग सुधा रस राजग्रह। पिषत कब्बि द्रग भुल्लयौ ॥
छं० ॥ ५५९ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-सुनत। (२) ए. कृ.-अति।
(३) ए. कृ. को.-माछि। (४) ए. कृ. को.-छीर निधि। (५) मो.-गय

हेजम का अलकाव बोलना और कविचन्द का आशीर्वाद देना

दूहा ॥ हक्कार्‌यो हेजम्म कवि। निकट बोलि नृप ईस ॥
सरसें बर संभारि करि। कवि दीनी आसीस ॥ छं० ॥ ५६० ॥

कवि का आशीर्वाद देना।

कवित्त ॥ जिम ग्रह पिति ग्रहपंति। जिम सु उड़पति तारायन ॥
मधि नाइक जिम लाल। जिम सु सुरपत नाराइन ॥
जिम विषयन संग मयन। सकल गुण संग सील जिम ॥
वरन मध्य जिम उगति। चित्त इन्द्रिय जालह तिम ॥
अनि अनि नरेस भर भौर सर। दारिम नृप मंदिर मरिय ॥
दिख पंग पानि उन्नित करिय। सुकविचन्द आसिष्ष दिय ॥
छं० ॥५६१॥

वचनिका ॥ साहि झार साहि विभ्भार। बलिय साहि कंध कुहार ॥
सबर साहि मान मरदान। निबर साहि मान भूमि वरदान ॥
अदतार राइ अंकुस्स सीम। दातार राइ सरसोभ दीस ॥
सुकृति राइ बाहन बरीस। विजैपाल रूय कनवज्ज ईस ॥

जैचंद की दरावरी बैठक वर्णन।

कवित्त ॥ मंगल बुध गुरू सोम। सुक्र सनि सोभ पाम तप ॥
इत तप [1]धुतम नरिंद। पंग सोहीज मंडि जप ॥
सकल सूर बर सुभट। सुबर मंडिली विराजै ॥
ट्रुग्ग देपि कविचंद। [2]सुभत सुरराज सुभाजै ॥
क्रम वेन सम उच्चर्‌यो। विरह तुंग द्रिगपाल तप ॥
क्रम अट्ठ अट्ठ पिटें सु बर। मध्य वीर मंडलिय अप ॥ छं० ॥५६२॥

जैचन्द की सभा की सजावट का वर्णन।

भुजंगी॥ सभा सोभियं बीर विजपाल नंदं। मनों मंडियं थान बिय इंद दंदं ॥
बरं थान थानं दुलीचै विराजै। तिनं देपि रंगं धनंपंति लाजै ॥
छं० ॥ ५६३ ॥

(१) ए. कृ. को.-पूतम। (२) ए. कृ. को.-मुदित मृगनाथ सु भाजै।

गुंथे रत्त पट्टं सुई डोरि हेमं। मनो भूमि रविक्रंन मिल चलहि तेमं॥
जरे रत्त नीलं नगं पट्ट साही। मनो आवरे बंधु धर नील माही॥
छं० ॥५६४॥
ढरैं चोर सेतं झपै मोज ताही। तिनंकी उपम्मा कवीचंद भाही॥
मनुं आरही भान लगि लग्गि आजं। डरं जान उग्गै रमै रथ्थ माजं॥
छं० ५६५॥
उठै छच पंगं उपम्मा ममग्गं। मनो नौग्रहं मान तजि सीम लग्गं॥
कवीचंद राइं बरहाय बीरं। कला काम कल कोटि दिप्पी मरीरं॥
छं० ५६६॥

राजा जैचन्द को प्रसन्न देख कर सब दरबारियों का कवि की तारीफ करना।

दूहा॥ पंग पयंप्यौ कवि कमल। अमर सु आदर कीन॥
पुव नरेस परसंन दिट्ठि। सब जंपयौ प्रवीन॥ छं०॥ ५६७॥
चंद अग्ग प्रथिराज बर। दुन्नौ फुनि फुनि एष॥
जिम जिम नृप पुच्छै बिरद। तिम तिम बढ़ै विसेष॥छं०॥५६८॥

पुनः जैचन्द का बल प्रताप और पराक्रम वर्णन

कवित्त॥ कोरि जोर दल प्रबल। अचल चल सुथिर थरथ्थर॥
नाग सु फनि फन सकुचि। कच्छ घुप्परिय घरघ्घर॥
चढ़त भान छावंत रेन। [1]गयनेव दसं दिस॥
दीपक ज्यौ बसि बात। आत पचं [2]आधारिस॥
कमधज्जराइ विजपाल सुअ। तो बर भूपति हय किसौ॥
बरदाइ चंद हैदेवि बर। जिसौ होइ अप्पै तिसौ॥ छं०॥५६९॥

इस समय की पूर्व कथा का संक्षेप उपसंहार।

प्रथम परसि संदेह। भयौ आनंद सबै जन॥
अरु गंगा जल न्हाय। पाप परहर्यौ ततच्छन॥

(१) ए. कृ. को. गयनेन दर्सज्जिय। (२) ए. कृ. को. आधारिय।

गयो चंदं दीवान। भनी बानी सु फुरंतो॥
सुफल द्रव्य सुष विरद। राय भिंबो सु तुरंतो॥
श्रुत सुनिय विरद पुच्छिय तुरत। संच पयंपइ भट्ट सुनि॥
जिम जिम अचार ढिल्लिय न्रपति। तिम तिम अंपइ पुनह पुन॥
छं० ॥ ५७० ॥

भुजंगी॥ जहां आसनैं सूर ठट्ठै सनाहं। जिनै जीति छितिराइ किय एक राहं॥
धरा भ्रम्म दिगपाल धर धरनि षंडं। धरै छत्र सिर सोभ दुति कनक [1]डंडं॥
छं० ॥ ५७१ ॥

जिनै साजतें सिंधु गाढें सु पंगा। उनै तिमिर तजि तेज भाजै कुरंगा॥
जिनें हेम परवत्त सें सब्ब ढाहे। [2]जिनें एक दिन अट्ठ सुरतान साहे॥
छं० ॥ ५७२ ॥

असं अंपियं [3]सब्ब सो चंद चंडं। जिनै अप्पियं जाय तिरहूत पिंडं॥
जिनै [4]दछिनी देस अप्पै विचारै। जिनैं उतर्‌यो सेतबंधं पहारै॥
छं० ॥ ५७३ ॥

जिनैं करन डाहाल दल्ल बान वेध्यौ। जिनैं सिद्ध चालुक्क कय बार वेध्यौ॥
तिनं दिल्ल जुद्धं भिरै भूमि रुंडं। परं तोरि तिल्लंग गोआल कंडं॥
छं० ॥ ५७४ ॥

जिनै छिंडियौ बंधि इक गुंड जोरा। ग्रहे लिद्ध वैरागरें सब्ब हीरा॥
जिने गज्जने सूर साहाब साही। तिने मोकल्यौ सेव निस्चिंत भाहीं॥
छं० ॥ ५७५ ॥

बरं भुल्लि भब्बी बनं जोव रोरै। तहां रोस कै सोस दरिया हिलोरै॥
जिनैं बंधि पुरसान किय मीर बंदा। इसौ [5]रट्ठवर राय विजपाल नंदा॥
छं० ॥ ५७६ ॥

जहां बंस छत्तीस आवैं इकारे। परं एक चहुआन घुंमान टारै॥
छं० ॥ ५७७ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-दंड। [२] मो.-जिते। [३] ए. कृ. को.-सब्च।
[४] ए. कृ. को.-दछिन। [५] मो.-रिटवर।

पृथ्वीराज का नाम सुनतेही जैचन्द का जल उठना।

दूहा ॥ सुनत नृपति रिपु कौ वयन । तन मन नयन सु रत्त ॥
दिय दरिद्र मंगन घरहु । को मेटै विधिपत्त ॥ छं० ॥ ५७८ ॥
रतन वुंद वरषै नृपति । इय गय हेम सु छह ॥
खग्गि न वुंद सु मग्ग तन । सिर पर छत्र दरिह ॥ छं० ॥ ५७९ ॥

पुनः जैचन्द की उक्ति कि हे*बरद्द दुबला क्यों है ?।

मुह दरिद्र अरु तुच्छ तन । अंगखराव सु छह ॥
वन उजार पसु तन चरन । क्यों दूवरौ वरह ॥ छं० ॥ ५८० ॥

कवि का उत्तर देना कि पृथ्वीराज के शत्रुओं ने सब घास उजार दी इसी से ऐसा हूं।

कवित्त ॥ चढ़ि तुरंग चहुआन । आन फेरीत परवर ॥
तास जुद्ध मंडयौ । जास जानयौ सवर वर ॥
केइक तकि गहि पात । केइ गहि डार मूर तरु ॥
केइत दंत तुछ चिन्न । गए दस दिसनि भाजि 'डर ॥
भुअ लोकत दिन अचिरिज भयौ । मान सवर वर मरदिया ॥
प्रथिराज षलन षद्दौ जु घर । सु यों दुब्बरौ वरदिया ॥
छं० ॥ ५८१ ॥

पुनः जैचन्द का कहना कि और सब पशु तो और और कारणों से दुबले होते हैं पर बैल को केवल जुतने का दुःख होता है। फिर तूं क्यों दुबला है।

इंस न्याय दुब्बरौ । मुत्ति लभ्भै न चुनंतह ॥
सिंघ न्याय दुब्बरौ । करौ चंपे न कंठ कह ॥

---

(१) ए. क. को. कर।

* "वरद" शब्द के दो अर्थ होते हैं एक वरदाई दूसरा बैल। अब भी बंसावदे में बैल को बरधा, वरध या बधिया इत्यादि कहते हैं।

मग्ग न्याय दुब्बरौ। नाद बंधियै सु बंधन ॥
छैल छक्क दुब्बरौ। चिया दुब्बरौ मीत मन ॥
आसाढ़ गाढ़ बंधन धुरा। एकहि गहि ह हरदिया ॥
जंगर जुरारि उज्जर घर न। क्यों दुब्बरो बरहिया ॥ छं० ॥ ५८२ ॥
पुरै न लग्गी आरि। भारि लद्यौ न पिट्ठ पर ॥
गज्जवार गंभार। गह्यौ गट्ठौ न नथ्थ कर ॥
भ्रम्यौ न कूप भावरी। कबंहुक सब सेन रुत्तौ ॥
पंच धार ललकारि। रथ्थ सथ्था नह जुत्तौ ॥
आसाढ़ मास बरषा समै। कंध न कहौं हरहिया ॥
कमधज्ज राव इम उच्चरै। सु क्यौं दुब्बरौ बरहिया ॥ छं० ॥५८३ ॥

पुनः कवि का उपरोक्त युक्ति पर प्रत्युत्तर देना।

फुनि जंपै कविचंद। सुनौ जैचंद राज बर ॥
पुरै आर किम सहै। भार किम सहै पिट्ठपर ॥
नथ्थ हथ्थ किम सहै। कूप भाँवरि किम मंडै ॥
है गै सुर बर सुधर। स्वामि रथ भारथ तंडै ॥
बरषा समान चहुआन कै। अरि उर बरह हरहिया ॥
प्रथिराज पलनि पद्यौ सु पर। सुइम दुब्बरौ बरहिया ॥ छं० ॥५८४
प्रथम नगर नागौर। बंधि साहाब चरिग तिन ॥
सोभंत्ति भर भीम। सीम सोधीत सकल बन ॥
मेवाती मुगल महीप। सब्ब पचजु पद्दा ॥
ठट्ठा कर ढिल्लिया। सरस संभर न लद्दा ॥
सामंत नाथ हथ्थां सु कहि। लरिकैं मान मरहिया ॥
प्रथिराज पलन पद्यौ सु पर। यौं दुब्बरौ बरहिया ॥ छं०॥५८५ ॥

कवि के वचन सुन कर जैचंद का अत्यंत कुपित होना।

सुनत पंग कवि बयन। नयन अ्रुत बदन रत्त वर ॥
भुवन बंक रद अधर। चंपि उर उससि सास झर ॥
कोप कलंमलि तेज। सुनत विक्रम अरि कम्मह ॥
सगुन विचार कमंध। दिप्पि दिस चंद मु पिम्मह ॥

आदर सुभट्ट राजिंद किय। अंग एँडाइ बिसतारि कर॥
नन मिलत मोहि संभरि धनिय। कहौ बत्त मुष विरद वर॥
छं० ॥ ५८६ ॥

कवि का कहना कि धन्य है महाराज आप को! आपने मुझे वरद पद दिया। वरद की महिमा संसार में जाहिर है।

जिहि वरह चढ़ि कै। गंग सिर धरिय गवरि इर॥
सहस मुष्य संपेषि। हार किन्नौ भुजंग गर॥
तिहि भुजंग फन जोर। झोलि रष्यौ वसुमत्तिय॥
वसुमत्ती उप्परै। मेरगिरि सिंधु सपत्तिय॥
ब्रहमंड मंड मंडिय सकल। धवल कंध करता पुरस॥
गरुअत्त विरद पहुपंग दिय। कृपा करिय भट्टह सरिस॥
छं० ॥ ५८७ ॥

जैचन्द का कहना कि मुझे पृथ्वीराज किस तरह मिले सो बतलाओ।

दूहा॥ आदर किय नृप ताम कौं। कह्यौ चंद कवि आउ॥
'मिले मोहि ढिल्लिय धनी। सु बत कहिग स मझाउ॥ छं० ॥५८८॥

राजा जैचन्द का कहना कि पृथ्वीराज और हम सगे हैं और तुम जानते हो कि सब राजा मेरी सेवा करते हैं।

उनि मातुल मुहि तात कहि। नित नित प्रेम वढंत॥
जिम जिम सेव स अहरिय। तिम तिम दान चढंत॥ छं० ॥ ५८९॥
सोमेसं पानिग्रहन। जब ढिल्ली पुर कीन॥
हम गुरजन सब बत्त करि। बहु धन मंग सु लीन॥ छं० ॥ ५९० ॥
कै कमान सज्जो सु इह। सुन्यौ न विजय नरिंद॥
सब सेवहि पहु हमहि नृप। सो तुम सुनि कविचंद॥छं०॥५९१॥

[१ : मो.-मिले न मुहि।

कविचन्द का कहना कि हां जानता हूं जब आप दक्षिण देश को दिग्विजय करने गए थे तब पृथ्वीराज ने आपके राज्य की रक्षा की थी।

पद्धरी ॥ अवसर पसाउ सुनि पंगराव । तुअ तात मात द्रिगविजय चाव ॥
तुम दिवस लग्गि दच्छिनह देस । तव लग्ग मेछ [1]इथ्थह प्रवेस ॥
छं० ॥ ५९२ ॥

सामंत नाथ तपि तोन बंधि । संहर्‌यौ साहि सब सेन संधि ॥
दामित्त रूप छत्तौ कुलाह । सामंत छूर दुहु विधि दुवाह ॥
छं० ॥ ५९३ ॥

अन पुच्छि करै ग्रिह राज काज । कुल छत्र पंड चहुआन लाज ॥
[2]सिंगिनि समथ्थ सर सबद बेध । जिन करहु राव उन मिलन षेध॥
छं० ॥ ५९४ ॥

हिँदवान जेन लग्गीय धाय । उहि छित्र कोंन द्रिग विजै राइ ॥
मानिकराव दुअ बंस सुद्ध । रघुवंसराव जिमनि किन दुद्ध ॥
छं० ॥ ५९५ ॥

मुक्कयौ तोहि दिप्पनि बरीति । राज सु जेम मंडौ प्रवीति ॥
.... । .... ॥ छं० ॥ ५९६ ॥

चंदचन्द का कहना कि यह कबकी बात है आह यह उलहना तो आज मुझे बहुत खटका।

कवित्त ॥ कहै पंग सुनि चंद । येह वितक किम वित्तौ ॥
किम गोरी सुरतान । भार भर थंभर जित्तौ ॥
कोंन ममै इह बत्त । घत्त षेली किम गोरी ॥
यादिन ही मुहि परम । परी बत्ता सब भोरी ॥
कहि कहि सु चंद मम ढील करि । राज पर्यंपत पुनह पुन ॥
[3]तब कही चंद वचनह विवर । एह कथ्थ संमूल सुनि ॥ छ० ॥५९७॥

(१) प्र. कृ. को.-हथ्थह । (२) मो.-संग्गानि । (३) प्र. कृ. को. तब कही चंद वरदाइ ने ।

कवि का उक्त घटना का सविस्तर वर्णन करना।

संवत तीस चिआर। विजय मंडौ सुपंग पह॥
जीति देस सब अवनि। ल्लीन करमथ्थ हिंदुसह॥
दिसि दच्छिन संपत्त। कोपि गोरी सहाव तव॥
रचिय बुद्धि बर अथ्थ। बोलि उमराव मीर सब॥
तत्तार षान घुरसान षां। षां रुस्तम [1]कालन गनिय॥
जेहान मीर मारूफ षां। बोलि मंत मंचह मनिय॥ छं०॥ ५९८॥

शहाबुद्दीन का कन्नौज पर चढ़ाई करने का मंत्र करना।

गुभ्भ महल साहाब। दीन सुरतान मपत्तौ॥
मंडि मंत एकंत। बोलि उमरावन तत्तौ॥
इह काफर बरजोर। जीति अवनीय अप्प किय॥
तेज अनंत मति अनँत। सेन सज्जै भर बंकिय॥
आए सु साज कंगुर करषि। करन सेव को देन कर॥
बर जोर हिंदु सा दीन पहु। घटै न रंचि सु बुद्ध [2]नर॥
छं०॥ ५९९॥

मंत्रियों का कहना कि दल पंगुरा बड़ा जबरदस्त है।

कहिय षान तत्तार। साहि साहाब दीन सुनि॥
विषम जोर बर हिंद। जीति प [3]ंग अप्प फुनि॥
मिलै सेन सुरतान। [3]मलिक अनेक द्रव्य भर॥
द्रव्य पानि पथ्थार। संकरि सब वस्थ अप्प पर॥
गहि कोट सज्जि गज्जन सुवर। आतस चरित [4]अनेक करि॥
आवंत पंग साधर सयन। [5]लरि मनमथ्थ पियान अरि॥
छं०॥ ६००॥

(१) ए. कृ. को.-तालन यह नाम महोबे के चंदेल राजा परिमाल के दरबारी एक मुसलमान सरदार का भी है।

(२) ए. कृ.को. बर। (३) ए. कृ. को. मिलक।

(४) ए. कृ. को.-अनंत। (५) ए. कृ. को.-जरि मनमथ पिय थान लरि।

शाह का कहना कि दिल छोटा न करो दीन की दुहाई बड़ी होती है।

कहै साहि साहाब । अहो तत्तारषान सुनि ॥
पुरासान रुस्तमां । जमन माहफ षान गुनि ॥
काल जमन जेहान । सुनौ बर बत्त चित्त तुम ॥
मंत सत्त सुद्धरौ । दीन नन हीन करौ क्रम ॥
सजि सेन चढ़ौ कनवज्ज धर । भंजि देस सम पुर सयल ॥
हरि रिद्धि बंधि नर नारि धर । आतस जालिय अप्प बल ॥
छं० ॥ ६०१ ॥

दूहा ॥ सज्जि सेन 'साहन'समुद । गज्जनवै सुरतान ॥
घोलि मीर गंभीर भर । भंजि देस धन धान ॥ छं० ॥ ६०२ ॥

शहाबुद्दीन का हिंदुस्तान पर चढ़ाई करना और कुंदनपुर के पास रयासिंह बघेले का उसे रोकना।

पद्धरी ॥ मिलि सेन साहि आलम असंघ । गंभीर मीर दिढ़ तीर नंषि ॥
मेमंति दंति घन बज्जि सार । आगाढ़ स्याम बद्दर सु ढारि ॥
छं० ॥ ६०३ ॥

बर तुरिय तेज अग्गल उभाव । उत्तंग अंग [1]जिम वेग वाव ॥
सजि लष्ष चढ़े गोरीस सेन । रज्जे सुबाज बज्जे सुगेन ॥ छं० ६०४ ॥
धज नेज झंड झल्लै अनंत । बहुरंग अंग लभ्भै न अंत ॥
षह पूरि धूरि धुंधुरिग भान । दिसि विदिसि पूरि मंनिय नमान ॥
छं० ॥ ६०५ ॥

गहरह सुमंत सुनियै न कान । संचार बत्त संचरहि थान ॥
संपत्त सेन कनवज्ज देस । भंजिए नयर पुर ग्रभनेस ॥ छं० ६०६ ॥
बंधियहि बांधि गोचीय बाल । धर जारि पारि किज्जै विहाल ॥
.... । .... ॥ छं० ॥ ६०७ ॥

(१) ए. कृ. को.-साहिन। (२) ए.-समुह। (३) ए. कृ. को.-ताजि।

कवित्त ॥ कुंदन पुर वघेल । राय रयसिंघ सिंघ रन ॥
आगम साहि सहाव । सेन सज्जिय [1]वीरह तिन ॥
सहस उभै साहन । समुंद दस सहस पयभ्भर ॥
बंधि नारि नग ढारि । रह्यौ निज सेन सज्जि वर ॥
आवंत सेन रुक्यौ सकल । भयौ जुद्ध हरि उग्ग मनि ॥
परसै न सुदल रोक्यौ सकल । भयौ जुद्ध अदभुत्त तिन ॥ छं० ६०८ ।

हिन्दू मुस्लमान दोनों सेनाओं का युद्ध वर्णन ।

भुजंगी ॥ चली अग्र चौकी सु साहाब सायं । अगें गज्ज चालीस मत्तं महायं ॥
अगें इथ्थनारी उभारी उतंगा । सयं सत्त सासह वादी सु चंगा ॥
छं० ॥ ६०९ ॥

सहस्संच पंचं गजं बाज पूरं । महाबीर बाजिच बज्जे करूरं ॥
मिली फौज हिंदू तुरक्कीस तेजं । कहै सूर रैसिंघ अप्पं अजेजं ॥
छं० ॥ ६१० ॥

सरं दून छुट्टै सुभारं उभारं । मरा पंजरं पंथज्यों पंड चारं ॥
हकै हक्क वज्जी भरं दून दूनं । चपे सिंघ त्रसिंघ हक्कं सुजनं ॥
छं० ॥ ६११ ॥

भगी साहि चौकी चंपे सिंघ रायं । परे मीर भीरं सयं तीन घायं ॥
महा आय गज्जे सु मैदान सिंघं । भगे मीर मारूफ करि जेम जंगं ॥
छं० ॥ ६१२ ॥

हके कट्टि तत्तार कत्तार तिप्पं । भली मुच्छ मोहैं भई रत्ति अंधं ॥
करै फौज अग्गै चल्यो गज्जि गोरी । चवै दीन दीनं लषै झल्लि घोरी ॥
छं० ॥ ६१३ ॥

मिलै आवधं मीर हिंदू करारे । धुरं भ्रुव्व तुट्टै उभै सार धारै ॥
झरं आवधं आवधं झाक बज्जै । बजै बीर बाजिच गोगेन गज्जै ॥
छं० ॥ ६१४ ॥

धरा कार [2]लोहं रसं रुद्र मत्तं । उभै हार मच्चै नहीं आय अंतं ॥

(१) ए.-बारह । (२) ए.-मोहं ।

मिली दिट्ठ तत्तार रैसिंघ दूनं। मिले घाय सायं घुलै पग्ग जनं॥
छं० ॥ ६१५ ॥

करै दिट्ठ तत्तार कम्मान मुट्ठी। कसे बान गोरी महा दट्ठ दिट्ठी॥
लगे जर सौंसंग फुट्टे परारं। हँसे झार संगी हयौ घान सारं॥
छं० ॥ ६१६ ॥

लगे बाहु ग्रीवा समं घाय सालं। पर्‍यो घान तत्तार बाजी बिहालं॥
हयो सिंघ कालह्न मौरं सनेजं। पर्‍यो राय रनसिंध रन अंत सेजं॥
छं० ॥ ६१७ ॥

भगी फौज हिंदू जुधं जीति मौरं। धर्‍यौ घान तत्तार झोरी सु तीरं॥
छं० ॥ ६१८ ॥

मुस्लमानी सेना का हिन्दू सेना को परास्त कर देश में लूट मार मचाते हुए आगे बढ़ना।

दूहा॥ परे हिंदु मय तीन धर। सत्त पंच पर मीर॥
गुर गुस्तानां नंचिया। बजि बाजिच गुहीर॥ छं० ॥ ६१९ ॥

मंझ ढाल तत्तार पां। धरि आयौ माहाव॥
साज सज्जि चल्यौ सु फुनि। जनु उलौ [1]दरियाव॥ छं० ॥ ६२० ॥

भंजि रयन पुर लूटि निधि। बजि बाजिच निहाय॥
अलहन सागर उत्तरिय। बंधि तत्तार सु घाय॥ छं० ॥ ६२१ ॥

नागौर नगर में स्थित पृथ्वीराज का यह समाचार पाकर उसका स्वयं सन्नद्ध होना।

दिसि दिसि धाह जु मंचरिय। भगिय प्रजा तजि देस॥
सुनिय बत्त नागौर पहु। चढ़ि प्रथिराज नरेस॥ छं० ॥ ६२२ ॥

(१) मो.-दधि आव।

पृथ्वीराज का सब सेना में समाचार देकर जंगी तैयारी होने की आज्ञा देना।

कवित्त ॥ सुनिय बत्त प्रथिराज। चल्यौ चहुआन महाभर ॥
बोलि कन्ह चहुआन। राय बरमिंघ मिंघ बर ॥
बोलि चंदपुंडीर। बोलि बघंभ्भ सु लष्यन ॥
लोहानौ आजानबाह। मिलयो सु ततच्छिन ॥
गुज्जरह राम जिन बंध सम। चालुक बीझ सु भीम भर ॥
हाहुल्लिराव हम्मीर हर। मिलिय सेन दस सहस सर ॥छं०६२३॥

दूहा ॥ अवर सेन सामंत मिलि। चल्यौ राज प्रथिराज ॥
गाजि गुहिर बाजिच बजि। सज्जि सयन [1]जुध साज ॥ छं०॥६२४॥

कुमक सेना का प्रबंध।

कवित्त ॥ बोलि चंद चंडौस। दीन आयस प्रथिराजहु ॥
तुम षट्टपुर जाहु। [2]जहां तिथि मंचिय काजह ॥
लै आवहु कैमास। राइ चामंड महाभर ॥
दैवर पष्पर सूर। सज्जि आतुर सु जुभ्भ हर ॥
कहियौ सु बत्त साहाब सब। भंजि देस कनवज्ज इन ॥
घिन पंग हिंदु मिरजाद मिटि। आवहु आतुर षेत रिन ॥
छं० ॥ ६२५ ॥

पृथ्वीराज का सारंडे के मुकाम पर डेरा डालना जहां से शाही सेना केवल २८ कोस की दूरी पर थी।

दूहा ॥ पठय चंद षट्टपुरह। चल्यौ राज चहुआन ॥
आतुर बहिय अवधि नृप। सारंडै सुसथान ॥ छं० ॥ ६२६ ॥
जाइ चंद षट्टपुरह। कहिय षबर कैमास ॥
चल्यौ सु अप्पन सुनत हीं। आनि संपतौ पास ॥ छं० ॥ ६२७ ॥

(१) ए.-सुध। (२) ए. कृ. को.-जहां थिति मांची कैमासह।

सारंडै चहुआन पह । संपत्तौ बरबीर ॥
सुनिय बत्त [1]सुरतान की । जोजन सित्तह [2]तीर ॥ छं० ॥ ६२८ ॥

पृथ्वीराज की सेना का ओज वर्णन ।

भुजंगी ॥ स्वयं चढ़ियं सेन प्रथिराज राजं । बजे बीर बाजिंच [3]आयास गाजं ॥
धुकं सीस सामंत सूरं सुधारे । भरं बंधियं राग रज्जे करारे ॥
छं० ॥ ६२९ ॥
तुरी मह उत्तंग षुंदै धरत्री । मनो छुट्टियं मेघ सेना सुरत्री ॥
पुरं जाइ संपत्त सो संकराई । सबें उत्तरे बाग मध्ये सु भाई ॥
छं० ॥ ६३० ॥

चंद पुंडीर का कहना कि रात को छापा मारा जाय ।

दूहा ॥ चवै चंड पुंडीर तब । अहो राज चहुआन ॥
निसा जुद्ध सज्जिय समय । भंजिय सेन परान ॥ छं० ॥ ६३१ ॥

पृथ्वीराज का सात घड़ी दिन रहते से धावा करके आधी रात के समय शाही पड़ाव पर छापा जा मारना ।

कवित्त ॥ मानि मंत चहुआन । मंत पुंडीर चंद कहि ॥
घटिय सत्त दिन सेष । राज सज्जिय सु सेन मह ॥
चल्यौ राज प्रथिराज । नह नीसान बीर सुर ॥
कीन दान तं हान । सूर सामंत सब्ब भर ॥
सन्नाह सब्ब सेना धरिय । निसा अद्ध पत्ते सु पुर ॥
हल्लाल हल्लि मय सत्ति दुति । चढ़ि चौकी गोरी गहर ॥ छं० ॥ ६३२ ॥
दूहा ॥ चौकी चढ़ि घुरसान षां । सहस सत्ति हय रज्जि ॥
उभय सत्त गज मद्द गहर । गुरु सनाह हय रज्जि ॥ छं० ॥ ६३३ ॥
घोटक ॥ चढ़ि सज्जि सबैं प्रथिराज भरं । पर चौकिय [4]चंपिय हल्लि हरं ॥
भर बज्जिय आवध रीठ सुरारि । मनों बन कूटहि कट्टि कवारि ॥
छं० ॥ ६३४ ॥

---

(१) ए. कृ. को.- चहुआन । (२) मो.-नीर ।
(३) ए. कृ.-अकास । (४) मो.-चंपय ।

पज्जून महुवा प्रस्ताव।

[निरपनवां समय।]

कविचन्द की स्त्री बोली कि प्यारे जब बालुकाराय सहित शहाबुद्दीन पज्जून राय से परास्त हो चुका तब उसने महुवा नगर पर कैसे आक्रमण किया और फिर पज्जूनराय ने उसे फिर भी किस प्रकार से हराया सो कहिए ? *।

यह सुनकर कविचन्द बोला। अच्छा प्रिये सुनो! शहाबुद्दीन पज्जूनराय से परास्त होकर सब रखत-बन्धन खोकर मनहार होता हुआ गजनी जा पहुंचा। परन्तु इस बात की उसे विशेष ग्लानि हुई कि मुझे और बालुकाराय दोनों को शत्रु के एक साधारण सामन्त ने हरा दिया। अस्तु उसने अपने मन्त्री तत्तार खां से कहा कि अब की बार महुवागढ़ पर आक्रमण किया जाय। शहाबुद्दीन की ऐसी आज्ञा पाकर तत्तारखां निमुरत्न खां के सहित एक लाख सवार, कई हजार पैदल और एक हजार हाथी लेकर महुवागढ़ पर चढ़ दौड़ा। उस समय महुवागढ़ का थानापति निहररराय था। उसने शाही लश्कर की अवाई का समाचार पाकर पृथ्वीराज को पत्र लिख भेजा। पृथ्वीराज ने वह पत्र दर्बार में सब सामन्तों के साम्हने पढ़ सुनाया और पूछा कि महुवागढ़ की रक्षा के लिये किसे भेजा जाय ? तब हाहुलीराय हम्मीर बोला कि एक लाख नेजे की अनी पज्जून-राय के सिवाय और कौन आड़ सकता है। इस पर पृथ्वीराज ने रावल समरसिंह जी की तरफ देखा। रावल जी ने कहा तो कुछ नहीं परन्तु सैन के इशारे से उक्त प्रस्ताव स्वीकृत कर लिया। भामराय तहाँ बोला कि चित्तौरपति रावल जी भली भांति जानते हैं कि पज्जूनराय एक अद्वितीय पराक्रमशाली सूरमा हैं। इसने जंगलू राव को जीता, तत्तार खां को कई बार धता बताया, बालुकाराय को हराया, गिरनार पर जाकर भोरा भीम का छोंगा छीना और अजैपाल के लिये आबू सिखर को खोद बढ़ाया। इन्होंने खोखंदपुर को खराब किया; देवगिरि पर जै प्राप्त की, जालौर को जीत कर महनसिंह भट्टी को दिया और अजमेर का राज्य तो इन्हीं महाशय के बाहुबल पर निर्भर है।

निदान पृथ्वीराज ने भी यह प्रस्ताव स्वीकार किया और तदनुसार पज्जूनराय को हांसीपुर के अतरगत बारह गढ़ों का पट्टा देकर उसे महुवा की रक्षा करने का बीड़ा दिया गया। उस समय पृथ्वीराज ने उसके सहकारी योद्धा कन्ह और किल्हन को भी बहुत कुछ धन रत्न मोती-माला और सिरोपाव देकर संतुष्ट किया और कहा कि शाह के अगवान तत्तार खां और नुमरत खां सिंधु पार कर चुके हैं अब इधर की लाज आप लोगों के हाथ है। यह सुन कर पज्जून राय ने कूच का सुदिन तक न पूछा और स्वामि-आज्ञा को ही सब शुभ-मूलक जान कर उसी समय बम बोलदी।

पज्जून राय ने अपने पुत्र मलयसिंह एवं और सब भाई बेटों से कहा कि भाइयो इस समय शाह अपने बड़े भारी दलबल सहित महुवा पर चढ़ आया है, अस्तु ऐसा करना चाहिए जिसमें अपने मुंह पर पानी रहे और कूरंभकुल की सुकीर्ति विस्तृत हो। पज्जून के ऐसे बचन सुनकर सब कूरंभ राजपूत बात की बात में अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित हो कर सन्नद्ध हो गए। दोपहर होते होते पज्जून राय ने चल दिया और महुवागढ़ पर पड़ी हुई शाही सेना को आड़े हाथों जालिया। कूरंभराय के इस सहसा आक्रमण से कुल मुसल्मानी लश्कर अकुला उठा और उसने किले का घेरा छोड़ दिया। पज्जूनराय ने इस प्रकार से महुवे का मोका मारकर अमर यश प्राप्त किया। इस युद्ध में पज्जून के पुत्र मलय

---

* पज्जून चालुक नाम मलयाय 'इकसाठीसवें समय की कथा से अतिरिक्त है यथा—

बालुकका हिन्दू कमध और सु गीती साहि।
सामंत अेकण्ड किव पात सोंती सब नाहि॥
(छं० १ समय ४१)

हुकम सुखी सब मन्मथि, बालुक कूरम कुल्ल।
कांट महुव्व। आह बल, कहाँ आनि किन कल्ल।
(छं० १ समय ४१)

सिंह ने विलक्षण पराक्रम किया और याकूबखां के हाथ से पज्जून के भाई बलिभद्र को दो गहरे घाव आए । जब पज्जूनराय महुवा के युद्ध को जीतकर दिल्ली आया और वहां मलयासिंह की वीरता का बखान किया गया तो पृथ्वीराज सहित सब लोग उस किशोर-वयस्क बांके वीर की बहादुरी पर जी जान से मोहित हो गए ।

पज्जून पातिसाह युद्ध प्रस्ताव।

(चौबनवां समय।)

महुवा का युद्ध जीत आने पर, पृथ्वीराज ने पज्जून राय को नागौर के नाके पर रक्खा और कन्ह, मलख, रामराय बड़गुजर, निडुर पुंडीर, किल्हनदेव तूंअर, बलिभद्र मलयसिंह और पल्ल-सिंह इन सामन्तों को उसकी सहायता के लिये दिया। इस प्रकार से नागौर के नाके का सब भार पज्जून राय के सिर सौंप कर पृथ्वीराज स्वयं कुछ सा-मन्तों समेत मालवे की तरफ चला गया।

शहाबुद्दीन पज्जून का एक बार तो स्वय बर-दाश्त कर चुका था; परन्तु महुवा से तत्तार खां का पीछे हटना उसके दिल पर और भी खटक गया। उसने भरी सभा में प्रतिज्ञा करके कहा कि अब तो जब पज्जून का खून पी लूंगा तब पाग बांधूंगा। सौभाग्यवश उसी समय धर्मायन द्वारा समाचार मिला कि पज्जूनराय को नागौर गढ़ का थानापति स्थापित करके पृथ्वी-राज सेना सहित मालवे के जंगलों में पड़े हैं एवं देवास के यादवों के यहां ब्याह के सुखभोग मना रहे हैं। यह सुनते ही शाह की बांछें फूलगईं। उस ने उसी समय तीन लाख सवार एक लाख बीस हजार पैदल और अगनित हाथी और ऊंटों का लश्कर सजे जाने की आज्ञा दी। गजनी की पैदल सेना में ऐसे ऐसे जबर्दस्त सहजोर जवान थे कि जिनके धनुष पर २० टके भर की प्रत्यंचा चढ़ती थी और जो तलवार के एक हाथ में मय सवार घोड़े को चीरकर चार कर देने वाले थे। ऐसी सेना को साथ लेकर शहाबुद्दीन नागौर नगर पर चढ़ आया और वहां से एक योजन के फासले पर पड़ाव डालकर उसने पज्जून राय के पास एक परवाना लिख भेजा कि मै आया हूं। अब या तो किला छोड़-कर बखैर खुदा चले जाओ या मैदान में आकर जंग लो। वह परवाना पाते ही पज्जूनराय ने हँस कर उत्तर दिया "मैं पज्जून जीवन की लालसा से लड़ाई से डरने वाला नहीं हूं। मैं रघुवंश राम नहीं हूं! मै वह पज्जून हूं कि चाहे धरती लौटपलट होजाय, सूर्य पश्चिम में उगने लगे, गंगा का प्रवाह स्थिर होजाय, शिव पार्वती को त्याग दें, पर मै अपनी बान से हटने-वाला नहीं हूं। शाह तुम चिन्ता न करो प्रसन्नता पूर्वक आओ! पृथ्वीराज ने हमको अपना जानकर राज्य की रक्षा का भार हमारे ऊपर दिया है अस्तु हम क्षत्रियत्व के सत्य व्रत को तिलांजुली नहीं दे सकते। आओ हम अटल होकर डटे हैं। या तो तुम्हारे कटक को काट कर पाट देंगे या हमी तिल तिल होकर कट मरेंगे, पर हटेंगे नहीं। आओ तुम खुशी से आक्र-मण करो यहां हम भी अचल होकर डटे हैं!!! दूतों ने ज्यों का त्यों सब समाचार शाह को जा सुनाया जिसे सुनतेही शहाबुद्दीन जल उठा। उसने तत्तार खां को बुलाकर कहा कि देखो यह वही पज्जून है कि जिसके सबब से मुझे दो दफे नीचा देखना पड़ा है। देखना अब की बार खाली न जाने पावे।

इधर कन्ह बलिभद्र मलयसिंह और पल्लसिंह ने परस्पर गोष्ठी करके विचार किया कि किले से निकल कर आक्रमण किया जाय। परन्तु पज्जून राय ने ऐसा करने की सम्मति न दी और कहा कि शाही सेना सबल है, ऐसा करने से सब कट मरेंगे और कोई काम भी न सरेगा; अस्तु किले के ही मोरचे पक्के करना उचित है। पज्जून राय ने कहा "भाइ सुनो, संसार के सब पदार्थ नाशमान हैं, राजपाट, बापी, कूप, तड़ाग, महल, मकान, गढ़, कोट आदि जो कुछ है सब नष्ट होजाते हैं परन्तु मनुष्य की कलंक कथनी कभी नहीं मिटती। गए गुजरे की नेकनामी बदनामी की कहानी मात्र ही संसार में शेष रहजाती है, इसलिये ऐसा करो जिसमें अपने लोगों की मर्यादा और यश की रक्षा रहे"। इस पर

(१) बीड़ की सीध में नरवन पर के खालों को बखर करते हैं। परन्तु वह असल शब्द "बखर" है। जब हेर बखर का और के इं नत्ती जानवर अर्थात् बैल खुत होना सुनते होना तो तो उसके बखर के बाल खड़े होजाते हैं "बुनेल कहर में" "बखरे फूल हैं" ऐसा भी बोलते हैं।

(१) बहुत संभव है कि किले से निकल कर लड़ना था

तो ये बातें हो ही रही थीं उधर शाही सेना ने किले को चारों ओर से घेरकर गोले बरसाना शुरू किया। जिस समय कूरम्भ कुल सूर्य्य तीनलाख नेजे की अनी रूपी राहु के बीच में गम गया उस समय सारे नागौर नगर में सन्नाटा छा गया। शाही सेना के आक्रमण के आतंक से सब सामन्त भी सशंक और चलचित्त हो उठे– "क्या करें हौ की सत्ती बुरी होती है"। भीलों ने जब गोपियों को लूट लिया तब अर्जुन की अकबक भूल गई थी– परन्तु पज्जून राय ने हिम्मत न हारी। उसने सब को डाढ़स देकर कहा। भाइ घबड़ाने का समय नहीं है राजा पृथ्वीराज का प्रताप बड़ा है। मरना जीना तो लगा ही रहता है इससे डरकर कर्तव्य पालन करने से चूकना उचित नहीं।

वह दिन तो जिस किसी तरह से व्यतीत हुआ। रात होतेही सामन्तों ने किले से निकल कर सुमुप्त शाही सेना पर छापा ना मारा। कुछ सैनिकों के साथ केवल बलिभद्र राय किले में रहा। इस छापा मारनेवाली मंडली का अगुआ पज्जूनराय का पुत्र मलयसिंह था। उसने एक मात्र शहाबुद्दीन के खेमे पर आक्रमण कर दिया। उस खेमे के इर्दगिर्द जो एक हजार मुसल्मान सिपाही पहरे पर मुस्तैद थे वे राजपूत सेना का मुकाबिला करने लगे। दोनों में परस्पर खूब हथियार चलने लगा। गुल गप्पाड़ा सुनकर इधर उधर सोते जागते जो जहां थे सब मुसल्मान सिपाही शाह की रक्षा के लिये जुटने लगे। उधर तत्तार खां ने मुअवसर जान कर बीस हजार गप्परों के साथ किले पर धावा धर किया। किवाड़ तो खुलेही थे, मुसल्मान सेना दरी मारे किले में पैठ पड़ी, परन्तु किले में पज्जून का भाई बलिभद्र-राय गाफिल नहीं था वह इस होनहार से मानो पहिले ही से सचेत था। उसने गप्परसेना के भीतर घुस आने पर फाटक बंद कर दिया और इस तरह की मार की कि बीस हजार में से बीस को भी जीताजागता न जाने दिया।

गप्पर सेना का यह हाल करके शेष राजपूत सेना भी किले से निकल कर मैदान में आगई। वीर बलिभद्र राय हुडुरुआ सा खेलता हुआ बड़े बड़े अमीर वीरों को मार मार कर पाटने लगा। यह देख कर पज्जून ने कहा वाह भाइ खूब किया। तेरे बिना कौन ऐसा करे। इतने में मलयसिंह ने बढ़कर शहाबुद्दीन के खेमे को अपने कब्जे में कर लिया और शाह को अपना बन्दी बना लिया। फिर क्या था! और सब सेना भी सिधर तिधर नौ दो ग्यारह होगई। इस लड़ाई में शाही सेना का जलाल खां नामक एक नामी सर्दार मारा गया। प्रातः-काल होनेही मुसल्मानी सेना में से चिड़िया भी पड़ाव पर न रही। पज्जूनराय ने सब माल मत्ता अपनाकर दिल्ली को रवाना किया और फिर आप भी शाह को लिए हुए जा पहुंचा। पृथ्वीराज ने लूट का सब माल तो पज्जून राय को दे दिया और एक हजार घोड़े और पन्द्रह हाथी दंड में लेकर शाह को छोड़ दिया। शहाबुद्दीन को बिदा करते वक्त पृथ्वीराज ने उससे केवल इतना कहा कि "तुम नरनाह शाह कहलाते हो ऐसा निर्लज्जता और ढीठता तुम्हें शोभा नहीं देती"।

शत्रु को पकड़ पकड़ कर फिर फिर छोड़ देना ये राजपूत जाति का ही कलेजा है। राजा पृथ्वीराज ने जो किया सो कविचन्द द्वारा बखान किए हुए उसके सुयश की चर्चा संसार में अचल रूप से चल रही है।

---

(१) कूरम्भ कुल हुडूहुड है युद्धनकाल में हुडुरुआ कहते हैं। लड़कों की बड़ी प्यारी चलाल खिलौना खूब उछला नचाते मन माना बकते नाचते कूदते, एक दूसरे से लड़ते और और भी मौज में आया ही करते हैं। इसी का नाम हुडूहुड या हुडुरुआ है।

सामंत पंग युद्ध नाम प्रस्ताव।

[पचपनवां समय।]

उस समय, पृथ्वीराज पृथ्वीतल पर के सब राजाओं को राहु स्वरूप होकर लगा था। जो राजा उसे सम्मानपूर्वक दंड देते एवं उसकी सेवा स्वीकार करते वे तो स्वच्छन्द रहते थे, परन्तु जो उससे ऐंडकी करते वे मारे पड़ते थे। सब से सबल शत्रु शहाबुद्दीन को बार बार बांधकर छोड़ देने वाला पृथ्वीराज देव संज्ञक गंधर्व के समान बलवान और प्रतापी था। ऐसेही उसके शूर शिरोमणि सामन्त सच्चे स्वामिसेवी थे। तात्पर्य्य यह है कि उस समय सबल से सबल शत्रुओं का दर्प चूर्ण करनेवाला पृथ्वीराज अपना सानी न रखता था।

कन्नौज में राजा जैचन्द राज्य करता था। उसके तेज एवं प्रताप का आतंक चारों दिशाओं में छाया हुआ था। केवल दिल्लीपति पृथ्वीराज और चित्तौरपति समरसिंह जी का युक्त-युग उससे अजेय था। शेष सब छत्तीस कुरी के राजपूत उसके सम्मुख सिर नवाते थे। जैचन्द एक तो स्वयं भीमकाय बलवान और बड़ा वीर था; तिसपर उसका दलबल तो साक्षात् समुद्र के समान अगम था। जिस ओर को पंग-दल की लहर उठती उस ओर के बलवान पुरुष तो उसे आराध्य इष्ट मान कर उसी में मिल जाते थे और कायर कंकर कहीं के मोर कहीं जाते थे। पंगराज का कोप क्या कराल काल का गाल था। राजा जैचन्द के ऐसे विषम दल बल की अवाई का समाचार पाकर पृथ्वीराज ने कुछ चुने हुए सामन्तों को दिल्ली में छोड़कर आप एक बलवान सेना सहित शिकार खेलने के बहाने मैदान पकड़ा। दिल्ली के राजरूपी समुद्र को शोषण करने के लिये जैचन्द अगस्त स्वरूप था। जहां कहीं उसकी सेना रूपी रश्मि का प्रकाश पड़ जाता वहां गांव के गांव जल * जाने से आकाश में मेघों के समान धुंआ छा जाता था। इस प्रकार चतुर्मासवत् चतुरंगिनी सेना के आतंक से उसके शत्रु की स्त्रियों की अश्रुधारा की झड़ी लगजाती थी। सैनिकों के अस्त्र शस्त्र बिजली से चमकते, रणवाद्य बादल से गरजते और कड़खैत एवं बन्दी जनों की बोली ठोली पावस के पक्षी सी प्रतीत होती थी। जब जैचन्द की सेना चलती तब दशों दिशाओं के दिग्पाल दहल जाते थे, बन उजड़ जाते, पहाड़ दब जाते, नदी नद सूख जाते और पृथ्वी उथल पथल होने से शेष का शीस नम्र होने लगता एवं कमठ सटपटाने लगता था। राहु रूपी पंग सेना जिसे ग्रसती उससे दाम एवं सम्मान का दान लिए बिना उसे कदापि न छोड़ती थी। बात तो यों है कि जैचन्द के समान दूसरा संसार में था ही नहीं जैसे कोई पूर्व संचित कर्म्मों को अतिक्रम करके जन्म-संस्कार से जै नहीं पा सकता, धरा को हाथ पर नहीं धर सकता न उसे जड़ से उखाड़ सकता है, सूर्य्य पर चादर चढ़ा कर उसे कोई छिपा नहीं सकता, नदी के प्रवाह को रोक नहीं सकता और न उत्तर दिशा को जा सकता है वैसेही उस समय जैचन्द से जंग लेने वाला भी कोई राजा राजपूत नहीं था। ऐसे प्रतापी राजा पंग का दल बल दिल्ली को दमन कर पृथ्वीराज को पकड़ने के लिये चला। पृथ्वी पर ऐसा कौन था जो जैचन्द के विद्रोही को बचा सके, परन्तु वाह रे पृथ्वीराज! जिस का जैचन्द एक बाल भी बांका न कर सका।

---

* अगस्ति उप पहु पंग समुद सोषन धर लिखिय।
नवर नवर मजरहि भूम डंमर नभ इंभिय॥

वैज्ञानिकों का सिद्धान्त है कि जो बरसात में जल बरसाता है वह आठ महीने बराबर इसी पृथ्वी पर की वायु में मिल कर उड़ता रहता है अथवा भाफ़ बनकर उड़ता है। "तुलसीदास जी ने भी कहा है" "उदित अगस्त पंथ जल सोखा।"

जैचन्द का दल प्रजा को उजाड़ता हुआ दिल्ली तक गया। परन्तु जब वहां उसने पृथ्वीराज को न पाया तो चुपचाप उलटा कन्नौज को लौट आया। तब राजा जैचन्द ने रावल समरसिंह जी को बलपूर्व्वक दबाने की इच्छा करके राज्य मन्त्री सुमन्त को बुलाया और उससे कहा कि अब ऐसा करो जिसमें बिगड़ी हुई बात बने अर्थात् फिर से यज्ञ की सामग्री जुटाओ। यह सुनकर सुमन्त बोला महाराज क्या किसी ने आकाश में स्थित तारागण की भी गणना की है? जप पूजन और मन्त्र आदि की सिद्धि के लिये सब से पहिली बात जितेन्द्रियता है। इसपर जैचन्द कुछ कुरूप होकर बोला "प्रधान का यह धर्म नहीं है कि स्वामी से मुंह जोड़े। सेवक को एक मात्र स्वामी की सुकीर्त्ति और कार्य्य सिद्धि के लिये ही तन मन से यत्न करना उचित है, इसलिये हे सुमन्त फिर से यज्ञ का प्रबन्ध करके ऐसा उपाय रचो जिसमें निर्विघ्न यज्ञ समाप्त हो और यह कलंक का टीका मिट में टले। कुकर्म करने पर कज्जल कालिमा तो लगाही चाहे परन्तु यह तो नाहक में काला मुँह हुआ। तब सुमंत बोला कि महाराज यदि यज्ञ करना ही है तो पहिले पृथ्वीराज को पकड़ लीजिए और समरसिंह से सन्धि कर लीजिए नहीं तो जब लों इन दोनों से काम नहीं होलेंगे तब लों यज्ञ का पूर्ण होना मुहाल ही समझिए। राजन्! जो दो कर सकते हैं सो अकेला कभी नहीं कर सकता। दो दिये आमने सामने रखने से दोनों के तले का अंधेरा दूर होजाता है, अतः आपके और समरसिंहजी के मिल जाने से फिर कोई ऐसा नहीं है जो सिर उठा सके

सुमन्त के इस प्रस्ताव पर जैचन्द राजी हो गया। उसने सौ घोड़े, एक हाथी, एक अनमोल मोती, दश माणिक और मोती की मालाएँ समरसिंह जी के लिये सौगात की तरह देकर सुमंत को उसी समय चित्तौर की तरफ रवाना किया। उसने समरसिंह जी को यह सदेसा भी कहा कि पृथ्वीराज को जीतकर हम तुम दोनों मिल कर यज्ञ करें तो अच्छा हो और इसके पुरस्कार में हम आप को पंजाब प्रान्त की आधी भूमि देना स्वीकार करते हैं। जैचंद का कथनोपकथन तो केवल हेतु मात्र था। मंत्री सुमन्त स्वयं बड़ा बुद्धिमान पुरुष था। वह समय की परख और बातचीत की बनावट में अच्छा निपुण था। उसे मनुष्य की पहिचान का ज्ञान भी अच्छा था। अच्छे अच्छे चतुर पुरुषों की मंडली में भंगी का कीट होकर पैठ जाना और अपना मतलब निकाल लेना सुमन्त ही का काम था। इस प्रकार से राजनीति के सब मार पेंचों में चतुर होकर भी वह छली कपटी और झूठा नहीं था।

कन्नौज राज्य के मंत्री सुमन्त के आने का समाचार पाकर समरसिंह जी ने उसे सादर दरबार में बुलाया और कुशल प्रश्न के पश्चात्, उससे उसके आने का कारण पूछा। तब सुमंत बोला कि महाराज कन्नौज-राज जैचन्द आपको यज्ञ में और विजित भूमि में भाग देकर आपसे संधि करना चाहते हैं। हे राजन्! ऐक्य में बड़ा बल है। जैसे तनिक तनिक से तिनकों का युक्त बल मदोन्मत्त हाथी को बिवस कर देता है, वैसे ही आप दोनों का प्रभाव अन्य सब राजाओं को आपका आश्रित बनाएगा। यह सुन कर समरसिंह जी बोले "रे सुमन्त तेरा किसने सुमन्त नाम रक्खा है! तू तो नितान्त कुमत मन वाला कुमंत नाम के योग्य है। जैचन्द ने आजलों हमें रहने न जाना! आज यज्ञ के लिये सन्धि करने की सूझी है! फिर भी चौहान से विग्रह करके!! त्रेता और द्वापर में जो यज्ञ देवताओं ने किए थे। उन्हें ही करने की आज जैचन्द को समाई है!!! तब सुमन्त ने प्रत्युत्तर दिया कि सतयुग में राजाबलि ने यज्ञ किया था, त्रेता में राजा रामचन्द्र ने और द्वापर में पांडुपुत्र युधिष्ठिर ने यज्ञ किया था, अब कलियुग में और तो कोई इस योग्य है नहीं इसी से विजयपाल के पुत्र राजा जैचन्द ने यज्ञ आरम्भ किया है। इस पर समरसिंह ने कहा "बलि ने स्वर्ग की इच्छा से यज्ञ किया था सो पाताल में गए। चन्द्रमा यज्ञ करके कलंकित हुआ। पांडुपुत्र यज्ञ के कारण बनवासी हुए और राजा नघु को नर्क

कूप में पड़ना पड़ा। अब कलियुग में जैचन्द यज्ञ करना चाहते हैं। कहो तो इनके पास यज्ञ की सामग्री भी है! अश्वमेध, गोमेध, अजमेध, राजसूय, अग्निहोत्र और विधिवत् पोड़स दान सहित वाजपेय-ये यज्ञ, ब्रह्मचर्याश्रम का यावत निर्वाह और सन्यास की धारणा कलिष्टबंध और बड़बंध ये नौ काम कलियुग में हो ही नहीं सकते। मुझ से यदि सच पूछो तो यही कहूंगा कि अपना बित्त देखकर काम करना चाहिए। अभीतक अकेले चहुआन के मारे यह हाल हुआ है आगे न जाने क्या हो। इस लिये ऐसा साहस करना वृथा है। तुम मंत्री हो. जैचन्द को ऐसा समझाओ जिसमें पीछे फटा फटा न होती फिरे। आगे तुम जानो तुम्हारा काम जाने! हम तो तुम्हारे यज्ञ में सम्मिलित न होंगे। और भी, सुनो! जब जैसी कुछ होनहार होती है तब आदमी की तैसी गत मत भी हो जाती है। ईश्वर गवेप्रहारी है। इस तुच्छ मनुष्य जीवन में देवताओं की समसरी करने की इच्छा करना अच्छा नहीं।यज्ञ में बालि ने तीनों लोक दान किए.रामचन्द्र को युद्ध में पराजित होना पड़ा और पाडवों के यज्ञ में यदुवीर कृष्ण और कुबेर सहायक थे, परन्तु तब भी पूरा न पड़ा। यह सुनकर सुमन्त बोला श्रीमान् मुनिए। बलि ने यज्ञ तो किया परन्तु क्षत्रीधर्म का विचार न किया। रामचन्द्र जी दिग्विजय के समय राजनैतिक चाल चूक गए और लघु ने क्रोध में आकर ब्रह्महत्या की, इसी से कुछ का कुछ हुआ। समझ रखिए कि इस समय तक पृथ्वीराज के सिवाय अन्य सब राजा जैचन्द की आन मानते है!

तब समर विद्या में निपुना मृगशिरोमणि समरसिंह जी बोले, सुमन्त हम योगबल से भूत भविष्य वर्तमान तीनों काल की जानते है। हमारी मति तुम्हारी तरह मोहग्रस्त नहीं है। होगया और हो रहा है सो तो सभी जानते है परन्तु हम यह भी कह सकते है कि आगे क्या होगा। हम कहते हैं कि यह यज्ञ पूरा नहीं होगा। मुनि देव पितृ ब्राह्मण बर्दाजन इन सबको सन्तुष्ट करना सहज नहीं है। तुम्हारे पेट इतनी पूंजी कहां से आई है जब पाडवों के यज्ञ पूर्ण होने पर बर्दाजन उसका बखान करने लगे तो वहीं से एक नकुल ने सहसा प्रगट होकर कहा कि आगे जब इसी भूमि पर भारी अकाल पड़ा था तब यहां के राजा ने व्रत पूर्व्वक ब्राह्मणों को भोज करवाया था। उस समय ब्राह्मणों के पैर धोने से जो जल बहा उसमें लोटने से मेरा आधा अंग सोने का हो गया था आधे के लिये तुम्हारे यज्ञ में आया था सो एक बाल भी पीला न हुआ! जाओ अपने राजा से ऐसाही कहदेना। यज्ञकर्म तपोबल से होता है। जैसे विश्वामित्र ने छ सौ यज्ञ किए थे। तुम किस गुमान में भूले हो "दौ किस खेत की मूली"?

सुमन्त अपने स्वामी प्रति ऐसे अपमानित वचन सह न सका, उसने कुपित होकर कहा "आह! क्या आप जैचन्द के बल प्रताप को नहीं जानते, जिसका दल चलने से धरनी धमकती है और धूलि उड़कर सूर्य्य को आच्छादित कर लेती है, जिसकी सेना के भय से पृथ्वीराज घरबार छोड़कर बनवासी बना बन बन भटकता फिरता है (इस देश की) चार खूट पृथ्वी पर जैचन्द का प्रताप रूपी ताप तप रहा है। यदि वह चाहे तो पृथ्वीराज सहित शहाबुद्दीन को भी क्षण मात्र में नाश करदे और देखिए ऐसाही होगा! आपभी सम्हले रहिए! अब बाधकों का विनाश करके ही यज्ञ किया जायगा।

एक समय महान तेजोरूप यज्ञ पुरुष नारद ऋषि के पास आया। नारद ने उससे पूछा कुशल तो है? दुर्बल क्यों हो? तब वह बोला क्या करू मेरा सम्पूर्ण अंग तो राजसी में गया, सम्मान पंडितों ने लिया, गौरव और विद्या विद्वानों ने ली, लक्ष्मी बणिकों ने ली, रात्रि का सुख स्त्री संभोगियों ने लिया, निन्दा और नीचता अभिमानियों ने ली, सब कर्म आराध्य इष्ट ने लिए और सब कुछ देवताओं ने लिया तब कहो कैसे सुखी रहू। यह सुन कर नारद ने उत्तर दिया कि तो जो कुछ तू कहेगा

सो किया जायगा जिसमें तेरा दुःख दूर हो *

मंत्री सुमन्त ने चित्तौर से आकर जैचन्द से सब हाल ज्यों का त्यों कह सुनाया और कहा कि इस बड़ी चोट पर चहुआन को चाहे बचाकर चित्तौर को ही चपाना उचित है। हे राजन्, विचारिए तो सही! वह क्षत्री कैसा जो पराई भूमि को न अपनावे संसार में ऐसा कौन सा गुणी है जो तेरे काल व्याल रूपी क्रोध की फुंकार से बचकर जीता रह सके। मन्त्री के ऐसे बचन सुनकर जैचन्द ने उसी समय सेना सजीजाने की आज्ञा दी। आज्ञा होतेही जैचन्द का समुद्र के समान अचल दल बल इस तरह से चढ़ चला जैसे प्रत्यंचा से छूट कर तीर एवं मोंचंग के तार पर से स्वर दिशाओं में गूजने लगते हैं। वह दल ज्यों ज्यों आगे चला जाता था त्यों त्यों उसके सहायक सरित सारिताओं की भांति आ आ कर आप उसमें मिलते जाते थे। जैचन्द की चमू के कूच के समय के धौसों की धुंकार सुनकर धीरज छूटता था। हाथियों के झेलों का घना ठनठन शब्द अनहद वाद्य की याद दिलाता था। अम्मारियों पर लाल लाल बैरखें शिव के क्रोध के कारण कैलाश शिखर पर अग्नि कण से छिटके नजर आती थीं। न्यारे न्यारे विविध रंगवारे बड़े बड़े ध्वजा पताकां धरातल पर उतरे हुए सूर्य्य चन्द्रमा एवं अष्ट ग्रहों के बसीठ से जान पड़ते थे। लाल लाल बैरखों पर सोने की कलसियां माणिक मणि कैसी मंजरी भान होती थीं और धूलि उड़ कर जो आकाश में छा रही थी उससे तो ऐसा मालूम होता था मानो आज अंधकार ने उजेले की निगल जाने का विचार किया हो हाथियों पर बैठे हुए बांके वीर विमान में विराजित देवता से ज्ञात होते थे। उस समय सूरवीर पुरुषों के मुख कमल-कली से प्रफुल्लित हो रहे थे और कपूत कायर कुकमोदिनी की तरह मुरझा रहे थे। निदान जैचन्द का ऐसा दल बल दो दलों में होकर एक चहुआन पर और दूसरा चित्तौर पर एक ही साथ चला।

सेना से आगे एक दूत ने दिल्ली को आकर जैचंद का अभिप्राय जाहिर किया। परन्तु उधर से सामन्तों ने उत्तर दिया कि यह वही भूमि है जिसके लिये महाभारत का युद्ध हुआ था और इसे अनंगपाल ने पृथ्वीराज को दिया है यदि मरा हुआ मुर्दा जी सकता है तो जैचंद भी इस भूमि को पा सकता है। गोयंद राय ने कहा रे दूत! यह वसुमती वीरभोग्या है यह उसीके पास निशंक रहती है जो सच्चा वीर है जिसे वीर बाने की लाज है और जिसकी भुजाओं में बल है वही इस भूमि का भोग कर सकता है। छलबल से तिलभर भूमि हाथ नहीं आती। कोई मर कर जीता नहीं, टूटा हुआ तारा फिर आकाश में नहीं जाता, मुँह से निकली हुई बात फिर नहीं पलटती, केवल पछतावा रह जाता है, तब भला वीरों की बरी हुई स्त्री और भोगी हुई भूमि कौन पा सकता है। जैचंद को यदि मातुल बनने की हवस है तो भाइचारे का व्यवहार करें, मरने मारने की बातें क्यों कर रहे हैं।

दूत ने जैचन्द के साम्हने ऐसी ही जा कही। तब सुमन्त बोला बस वे दुर्बुद्धि न मानेंगे। अब उन्हें बल करके ही मनाना उचित है। यह सुन कर दिल्ली की तरफ सेना भेजने की आज्ञा दी गई। चन्देरी के राजा शिशुपाल के पुत्र डाहलकार्ड के कुल में उत्पन्न

---

* छन्द ६३ का तात्पर्य स्पष्ट नहीं है इसी से मूल छन्द उद्धृत कर दिया जाता है

कवित्त—छंन षंड छुपरा अ मान षंडनानि विध षर १
सुष षंडन सुष विषुष अनेक षंडन षनिक षर ॥
सिसि षंडन सिष बान सुसिसि खंडन अभिमान।
त्रास षंडन उर देष अन्न षंडन सुर थान ॥
इतने षंड कीने इते तदपि दुःख अर अर तनह।
जाने न देष देषत नाति सुनाति सिष्य सिष्यन षनह ॥

छन्द ६४ से लेकर ६८ तक का भी तात्पर्य स्पष्ट नहीं है।

(१) जब योगी जन आधी रात के समय समाधि साधकर एकाग्र चित्त करके चिन्मय स्वरूप का ध्यान करने हैं तो उन्हें आकाश में एक ऐसा शब्द सुनाई देता है जैसे बहुत से नगारे और घंटे बज रहे हों। उसी शब्द का नाम नवशब्दनाद है

विजयसेन का पुत्र भैरोंसिंह सेनापति स्थापित किया गया। वाह। पंग का दल क्या चला मानो इन्द्र से लड़ने के लिये दैत्यों का दल चला। इस सेना के मार से भौंचक होकर फनीस का फूसना भूल गया। घोड़ों की टापों से जमीन खुदकर गड्ढे हो गए। इस प्रबल दल के बीच भैरोंसिंह द्रोणाचार्य्य सा मालूम होता था। उधर दिल्लीपति पृथ्वीराज तो पांडु पुत्र पार्थ की उपमा पाने योग्य था ही।

जिस जगह होकर यह फौज निकल जाती थी वहां की भूमि उथलपथल होकर जल की जगह थल और थल की जगह जल होजाता था। यह उसी जैचन्द की सेना थी जिसका हिन्दू मुसल्मान दोनों दीन पर समान प्रभाव था। उसके आतंक से पृथ्वी तूफान में पड़ी हुई तरनी की तरह डोलती थी। दिगपाल धनधेर की नाईं डगमगाते और शत्रु का प्रताप वायु से बिदारे हुए बद्दलों की तरह लुप्त होजाता था। जो वीर पुरुष जैचन्द से जीते जाकर अब तक चुप चाप थे इस अवसर पर पुनः आतंक में आकर नए से हो गए। नए ज्वानों के चेहरों पर एक नई तरह की अनोखी दीप्ति दिपने लगी। निदान आधी रात पर सारस की बोली सुनते ही सेना ने कूच किया और मंगल पहाड़ उजाड़ती हुई पड़ाव दर पड़ाव इस प्रकार से आगे बढ़ने लगी जैसे पूर्व्व संचित कर्म्मों का परस्पर का संयोग नितनव कर्म्मों का विकाश करता है। परन्तु सामन्त सेना में भी ऐसे ऐसे सिपाही और सरदार थे कि हाथों से हाथी के दांत उखाड़ लेना उनके लिये कुछ बात न थी। वे वज्रवत् शस्त्र प्रहार करके वज्र से वज्रहृदय को भी विदार सकते थे; निदान वे इस सूर्य्यवंशी जैचंद रूपी सूर्य्य की चढ़ाई से ऐसे प्रसन्न चित्त थे जैसे सूर्य्य की प्रतिभा पाकर कमल कलियां कुसुमित होने लगती हैं। इस पंग दल रूपी समुद्र की बाढ़ रोकने के लिये सामंत सेना अचलाचल पर्व्वत से कदापि कम न थी। क्यों कि अनेकों किले कोटों को ढहाती हुई पंग सेना दिल्ली तक तो पहुंची परन्तु उस से आगे कदापि न बढ़ सकी।

जैसे राज्य सेवा के कारण आपसी का सलूक और आंख का शील टूट जाता है, विद्या और ज्ञान से सारे कुटिल कर्मों का नाश हो जाता है; वैसे ही पंगदल के दबाव से पृथ्वीराज निज राजधानी से हट कर वन में विचरने लगा। दिल्ली के गढ़ और रय्यत की रक्षा का भार मंत्री कैमास के सिर था। सामन्त मंडली में शिरोमणि कैमास जैसा बुद्धिविशारद और चतुर था वैसा ही वह बलवान निर्भय और समय पर महान भयानक भी था। कन्ह चौहान, अत्ताताई, पहारराय तोंअर, पज्जूनराय, निहुरराय रहौर; बग्गरी राय बावरा, प्रसंगराय पीची, दाहमा चामंड, जज्जौनराय और रामराय ये दस सामन्त कैमास के सहायक थे। जैचंद की सेना जमुना उस पार आन पड़ी थी, निदान आधी रात होतेही रातोरात जमुना पार करके, बीहड़ बन के किनारे किनारे देवपुर को दहिने देती हुई पंग सेना दिल्ली का दुर्ग नियराने लगी। जमुना किनारे के बीहड़ भूभाग में घनघोर बाजों का रव सुनकर पृथ्वीराज तो एक ओर को चल दिया और यहां सामन्तों ने पंग सेना का मुंह मारने के लिये जंगी तय्यारियां कीं। धन्य रे सूर सामन्तो!! यह उस पंग सेना से जंग लेना था जिसकी हांक से उस समय जहान कांपता था।

इन्द्रप्रस्थ अर्थात् दिल्ली के किले को पंगदल रूपी राहु ने चारों ओर से ग्रस लिया। सेनापति की आज्ञा से किले पर बाण वर्षा की जाने लगी। किले से भी उसके उत्तर में नाना प्रकार के अस्त्र शस्त्र चलने लगे। एक दूसरे को प्रचार प्रचार एवं ललकार कर ये उनपर और वे इनपर जब

(१) धन्य बानी निशान लेनेवाला। बादु की झोंक में जैसे जैसे निशान डोलता है वैसेही इधर निशान लेनेवाले छाड़नी को घुमाना पड़ता है।

(१) स्मरण रहे कि यह युद्ध वर्णन प्राचीन प्रणाली के अनुसार नाटक प्रबन्ध में है। कथा प्रसंगों का भाग छोड़ दिखाव ले है यद्यपि पृथ्वीराज के किले से निकल जाने की बात लिखी जा चुकी है।

बाण बर्साते थे तो पावस की झड़ी का मजा आता था। आपस में हथियार खड़खड़ाते, वायु में सन सन बान सनसनाते, ठन ठन हाथियों के घंटा ठनठनाते और गड़ गड़ नगाड़े मड़गड़ाते इत्यादि इस मिश्रित कोलाहल के मारे कान नहीं दिया जाता था। पंग सेना के नेजों की अनी इतनी घनी थी कि भू पर सुई डारी नहीं जा सकती थी और यदि ऊपर से रकाबी फेंकें तो इस पार से उस पार तक निकल जाय। दोनों दलों के योद्धा अपने अपने मालिकों की दुहाई दे देकर करारे वार कर रहे थे। यदि सिर कट जाता तो कमंध खड़ा नाचने लगता और जो तीर से पंजर बारपार हो जाता तो पिंजरे से उड़े हुए हंस की तरह हंसना हुआ हंसा स्वर्ग में जावसत और इत्तर मिट्टी मिट्टी में जा मिलती थी। इस समय भी कन्ह की तलवार अजब करामात कर रही थी। उसकी तलवार से कट कर गिरे हुए शत्रु तरफराते हुए ऐसे नजर आते थे जैसे जलमानस हेलुवा खेल रहे हों। कबन्ध टूट जाने पर खून की सेंट जोर से उछलकर जमीन पर गिरती ऐसी नजर आती थी, जैसे बढ़नी हुई बेली निराश्रिन होकर लटक पड़ी हो। कुम्भस्थल फूटने पर रक्त की धारा के साथ छोटे छोटे मुक्ताकण अजबही छटा छाते थे। हाथी के दाँतों पर पड़ता हुआ तलवार का वार ऐसा मालूम होता था मानो हमनी मृणालों को तोड़रही हो। ऐसे वीर सामन्तों के वार सहना पंग सेना का ही काम था जिसमें पृथ्वीराज और समरसिंह दोनों को एकदम दबाने का दम था। प्रातःकाल से युद्ध होते होते मध्यान्ह होगया। उस समय जैचन्द रूपी सूर्य्य के किरण रूपी सिपाही क्रोध से आरक्त मुख हो उठे। उस समय ऐसा मालूम होता था मानों प्रलय करने के लिये साक्षात् योगमाया ने पंग सेना का स्वरूप धारण करलिया हो। ज्यों ज्यों परस्पर अस्त्र शस्त्रों के खटखटाने का स्वर होता था त्यों त्यों भूत बैताल और योगिनी ताथेई ताथेई के ताल पर नाच करती थीं। शेषनाग का शीस डुल उठा, पृथ्वी डगमगा उठी और निडर सामन्तों का भी भाव छूटने लगा।

दिन भर युद्ध होने के पश्चात् सायंकाल को पंग सेना ने जमुना किनारे के बीहड़ बन के निकास का पक्का नाका बांध कर, युद्ध बन्द किया। इधर कैमास ने पृथ्वीराज को एक पत्र लिख भेजा कि आप तो निकल कर चले गए यहां मामला बड़ा बेढब है। सब रास्ते नठे हुए हैं और लेने के देने पड़ रहे हैं। गढ़रक्षा की क्या कहें सब को अपने अपने जी के लाले पड़े हैं। अबलों जो कुछ बाजी बनी है सो केवल काका कन्ह और निडुरराय की करतूत के यत्न से समझिए। यहां तो कोई कोई यहां तक कह उठे है कि आप तो अपनी गद्दी छोड़कर जंगल में जा पड़े और हमको यहां फँसा दिया। हमारा क्या अटका पड़ा है जो भेड़ बकरे की मौत मरें। उधर तो सौझ होतेही उक्त पत्र भेजा गया इधर किले में कैमास, कन्ह, गोयदराय, रामरेन प्रमार और गुरुराम प्रोहित आदि ने मिलकर सलाह की कि यारों किला नहीं छोड़ना है चाहे बोटी बोटी कट जाय। जैचन्द भी क्या कहेगा कि किसी से काम पड़ा था। इस समय पूनो नहीं दूज के चन्द्रमा बन जाओ जिसे हिन्दू मुसलमान दोनों दीन सिर झुकाते है।

उक्त पत्र पाकर पृथ्वीराज के नेत्र आरक्त होगए, भुजा फड़कने लगी और मूछें सिंह की पूँछ के समान कानों को स्पर्श करती हुई थर्रा उठीं। उसने उसी समय अपनी सब सेना को सज कर दिल्ली की तरफ कूच कर दिया और जंगल ही जंगल आकर चढ़ीमवारी पंग सेना पर धावा कर दिया। पंग सेना को देख कर पृथ्वीराज

---

(१) किले की लड़ाई में तलवार की तारीफ क्यों है परन्तु इसका विचार न करके इन पंक्तियों में जो कुछ लिखा गया है। किले पर तलवार की लड़ाई तब हो सकती है जब या तो किला लाद लिया जाय या किले वाले मैदान में आकर हथियार खोंचे, परन्तु यहां दोनों में से एक का भी मौका नहीं था।

(२) समवर्ण सलाओं के साथ जल क्रीड़ा करना। साथ खेलना खेल का अड़ना के बीच। (एक वृन्देलखण्डी गीत)

के सिपाही उसपर ऐसे झपटे जैसे तीतर पर बाज, एवं मछली की बोटी पर चील्ह झपटती है। पंग सेना भी इस आपत्ति से अकुला कर अस्त्र शस्त्र सम्हाल कर युद्ध करने में तत्पर हुई। जैसे उच्च के सूर्य्य के प्रकाश में कुमोदिनी जर से जर जाती है वैसे ही यहां कायरों का तो पता न पड़ा केवल कुल कमल सपून शत्रु सेना रूपी विरहिनी का हृदय विदारने को उद्यत थे। एक तरफ से पृथ्वीराज मार कर ही रहा था. दूसरी तरफ किले से निकल कर सामन्त मंडली ने भी हथियार चलाए। बांकी मूछों वाले बांके बांके जवान जब बांके तेगों के बांके बांके हाथ करते थे तो मय टोप बख्तर कटने में बखिया बाकी न रहती थी। कुछ देर तो जैचन्द के सिपाहियों ने खूब पराक्रम किया, पर दो की दाब बुरी होती है अन्त में सब तीन तेरह होकर भाग उठे। इस प्रकार से पंग सेना परास्त हुई और दिल्ली के किले का बाल बांका न हुआ। इस जुद्ध में, पूरनराय प्रमार, नारेबराय के दोनों भाई, दो पुत्र बाघसिंह के, हरसिंह मोरी, हरिया राय बग्गरी ये योद्धा खेत रहे और भीम भट्टी नाराइन राव, जैतसिंह, जोगा जंघारा, कन्ह छोंकर, आदि बीरों के शरीर में घने घाव आए। जैचन्द के जो सिपाही मारे गए उनकी तो गिननीही नहीं पर ६४ रावत अत्यन्त घायल हुए और केहरि कंठेर और कन्ह भी कन्नौज को अधमरे वापिस गए।

धन्य है! सूर सामन्त समर में प्राण तजकर सहज ही जो गति पाते हैं वह बड़े बड़े योगियों को भी दुर्लभ है। हजारों वर्ष उलटे टँग कर हर हर करने पर जिस बूंद से भेंट नहीं होती उसे शूर बीर एक झपाटे में पालेते हैं। कवि कहता है कि भाइयों क्षत्री तन धर कर इस तन को तिनुका की तरह तजने से तनिक न हिचकना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से केवल आगा ही नहीं बनता बरन पीछे के भी सब कर्म-पाप नाश हो जाते हैं!!!



समर पंग युद्ध नाम प्रस्ताव।

[छप्पनवां समय।]

समस्त दिल्ली प्रदेश में हलचल मचाने के पश्चात् जैचन्द की चतुरंगिनी चमू ने चित्तौर की तरफ़ कूच किया। अनहद नाद की नाईं भेरी नफेरी, और धौंसा धमकाती हुई पंग सेना के कूच मुकाम के आतंक से दिशाओं में कुहरा सा छा गया मानो जैचन्द की सुकीर्ति ने इसी स्वरूप से संसार की सैर करने का अनुष्ठान किया हो। बड़े बड़े गरबीले लोगों का गर्व गिरानेवाली इस पंग सेना की चढ़ाई का समाचार चित्तौरपति रावल समरसिंहजी ने भी सुना।

शाबास! शूर शिरोमणि समरसिंहजी ने शत्रु के सम्मुख आने का समाचार पाकर प्रसन्न मन होते हुए हुक्म दिया कि जंगी तय्यारियां की जांय और इधर प्रजा के दस प्रतिनिधि राज्यकर्मचारी और सगे सम्बन्धियों को बुलाकर वे प्रस्तुत प्रबन्ध के लिये सलाह करने बैठे। रावल समरसिंहजी ने सब से कहा "आप लोग हम से वय बुद्धि सब बातों में बड़े हैं। इसलिये सोच विचार कर ऐसी सलाह दीजिए जो इस अवसर पर काम आवे", रावलजी के इस कथन पर जिसकी जैसी बुद्धि थी सो बोल उठे। कोई बोले लड़ाई लेनी चाहिए और कोई बोले महाराज यह जीतव्य है तो सब कुछ है। किसी ने कहा मुक्ति से सब परे हैं। किसी ने कहा इस संसार सागर में जिसकी लाज का जहाज न डूबा सोई मुखी है। किसी किसी ने फिर भी यही कहा "आप मरे जग डूबा" जौलों जीव हैं तौलों सब कुछ हैं, आंख मिची फिर कौन देखता है कि किसका भला किस का बुरा। अन्त में सबने यही कहा कि हम सब लोग विनती कर चुके आगे जो आपको रुचे सो हमारे भी माथे पर है। "इस जीवन से जन्ममुक्त होने की साधना ही सार है जिसमें दोनों हाथ लड्डू हैं। माना कि यदि (कर्त्तव्यपरायण पुरुष) जीवन मुक्त न भी हो तो वह नर्क में भी सुखी रह सकता है। यदि वह पुनः जन्म भी पावे तो धन्य है उस पुरुष को जिसके घर वह जन्मे। क्योंकि सद्गुरु की कृपा से फिर तो उसे यह संसार स्वप्नवत होता ही है। लोगों के देखने दिखाने को चाहे जैसा हो पर अन्तःकरण में बोध होजाने से अन्त में आपही त्याग उत्पन्न हो जाता है।" अतः रावल जी बोले। कि शत्रु को शस्त्र प्रहार से ही परास्त करना उचित है।

रावल समरसिंह जी बोले 'सुनो इस प्राण वायु के वायु मंडल में लीन हो जाने का ही नाम मुक्ति है। यह पंचतत्व मय तन पिंजर जिसमें यह पंछी—प्राण—रूपी—पक्षी जीव निवास करता है, पाँचों दरवाजे का है। ज्ञान द्वारा संशय का नाश होने से तो जीव जीवनमुक्त हो जाता है और इसके बिना अज्ञान के कारण चंचल मन को चरखे पर चढ़ा हुआ पांचों दरवाजों में चक्कर लगाया करता है, परन्तु अनहद शब्द रूपी किवाड़ों के कारण निकल नहीं सकता। इस लिये गुरू की बतलाई हुई शास्त्रोक्त योग युक्ति से चित्त को एकाग्र कर के अनहद शब्द के सुनने का अभ्यास करे और काम क्रोध लोभ मोह आदि विकारों से रहित होकर ब्रह्मरंध्र में स्थित उज्ज्वल वर्ण प्रकाशमान ब्रह्म का ध्यान धरे अर्थात् योगासन मारकर मन को एकाग्र कर अपनी दोनों भौंहों के बीच नजर थमा कर अंगुष्ट प्रमाण लिंग शरीर का ध्यान करे। पहिले पहिल गुरु की बतलाई हुई युक्ति से एक मोती बराबर बिन्दु पर ध्यान जमाया जाता है, किंचित् काल में यह मोती अंडाकार देख पड़ने लगता है फिर उसी से अखंड प्रकाश का दर्शन होने लगता है। इस प्रकार से उस अनन्त प्रकाश का दर्शन

(१) पंच प्राण—प्राण, अपान, समान, उदान व्यान।

(२) कान, नाक दृग, जिभ, मुख ये पांच छिद्र पांच दरवाजे कहे गए हैं।

होने पर संकल्प विकल्प एवं संशयों का नाश हो-जाता है और अन्त में मोक्ष पद प्राप्त होता है।

तब रावल जी का मंत्री विनीत भाव से बोला कि अन्नदाता इस कलिकाल की माया बड़ी प्रबल है। एक छिन भी मनुष्य का मन ठिकाने नहीं रहता। घरी में इधर तो घरी में उधर। कभी खुशी से फूल-कर कुप्पा होजाता है तो कभी शोक से सूखकर कांटा होजाता है। कभी ऐसा त्याग वैराग उपजता है कि संसार का कुछ भी नहीं सुहाता और कभी मोह की प्रबलता के कारण दुनिया भर की बला अपने सिर लेने की सूझती है।

रावल जी बोले सुनो! इस पंचतत्व रचित शरीर के बहत्तर कोठे[1] हैं, जिनमें अस्सी प्रकार की वायु वास करती है। हे मंत्रिवर! यह शरीर समुद्र के समान है जिसमें हमेशा बुद्धि रूपी तरंगें उठा करती हैं।इसमें नाना प्रकार के तर्कवितर्क रूपी मत्स निवास करते हैं और भांति भांति के भेदाभेद ही मानो भौंरें पड़ा करती हैं। शीलरूपी नीले जल में क्रोध का खारापन भी विद्यमान है और विद्याही इस में रत्न है। ऐसे शरीर के अन्दर जीव नाम से आत्म स्वरूप परमात्मा का वास है। उस चिदानंद परमात्मा की त्रिकाल बन्दना करने से मनुष्य शीघ्रही त्रिकालज्ञ हो सकता है। उसे इसका भी ज्ञान हो जाता है कि मेरी कब मृत्यु होगी और वह मृत्यु के समय समाधि स्थित होकर पीतपटधारे घनश्याम का स्मरण करते हुए मौत को बर सकता है। संध्या के समय गोधूली बेला में धवल एवं धूमूवर्ण का ध्यान धरना चाहिए और प्रातः काल के समय दिये की ज्योति के मध्य भाग की प्रभा पर ध्यान जमाना चाहिए। उससे प्रथम दूज फिर पंचमी और फिर अष्टमी के चन्द्रमा का सा आकार क्रमशः भासित होने लगता है। तब काल पाकर उसी में से ताटंक और वनमालधारी धवल स्वरूप के दर्शन होने लगते हैं। परन्तु इस सब का मूल रेचक कुंभक पूरक इन तीनों नाड़ियों की साधना से होता है। यही योग का जतन है। इस लिये इस समर रूपी समुद्र में तलवार की धार रूपी लहरें उठा कर सुकीर्ति रूपी कलानिधि को प्राप्त करना उचित है।

कनकराय रघुवंशी ने कहा "मुझे एक बात का बड़ा संदेह है कि कभी तो चित्त में अतुलित आनंद की उमंगें उठा करती हैं और कभी सहसा शोक उत्पन्न हो जाता है। कभी योग की इच्छा होती है। तो कभी शृंगार रस की वासना श्रेष्ट हो जाती है। कभी दीनता और दरिद्रता का भाव प्रधान हो जाता है। और कभी हितू से भी अनिच्छा और विग्रह उत्पादक विचार उत्पन्न होने लगते हैं। इसपर रावल समरसिंह जी बोले "वास्तव में इस वासना भेद में विलक्षण भेद भरा हुआ है—कंठगत-प्राण होने के समय जो वासना चित्त में बसी रहती है उसी के अनुसार गति मति होती है अर्थात् दूसरे जन्म में उसी के अनुसार भोग भोगना पड़ता है। सुनो जो कुछ मैं कहता हूं उस पर ध्यान दो और विश्वास करो! पूर्व्व, दक्षिण, उत्तर, पश्चिम आग्नेय, वायव्य, नैऋत, ईशान, ये आठ दिशाएं हैं। इस सुख दुःख रूपी शरीर सरोवर में एक अष्टदल कमल प्रफुल्लित है। उस कमल का पूर्व्व दिशा वाला दल लाल वर्ण का है, मन मकरंद के उस पर जा बसने से गौरव वृद्धि कल्याण और दान इत्यादि शुभ कर्म्मों की इच्छा उत्पन्न होती है। अग्नेय दिशा की पखुरी नीलवर्ण है, उस पर मन रमने से त्रिदोष की वृद्धि होकर मरण पर्य्यन्त परिणाम होता है। उत्तर दिशा का दल पीत वर्ण है उसमें भोग का त्याग होकर जोग में अनुराग कराने की शक्ति है। नैऋत दिशावाला दल धूमले रंग का है और उसकी वा-सना से शोक की उत्पत्ति जानो। पश्चिम दिशावाला दल पीला है और उसमें स्नेह की वासना का वास है। दक्षिण दिशावाला दल उज्ज्वल है और उससे

(१) ७२ कोठे के यहां ७२ कोष्ठों से नाभिचक्र है।

शान्ति रस की उत्पत्ति होती है। ईशान दिशावाला दल विलक्षण मिश्रित रंग का है उस पर मन जाते ही भ्रमण में पड़ जाता है और उच्चाट चित्त होने से कहीं भी दिल नहीं लगता। उसी कमल का प्रकोष्ट यानी मध्य भाग ब्रह्ममय है। यह चंचल चित्त कृत-कर्मों के वशीभूत होकर वायु वाधित दीप शिखा की तरह डुलता फिरता हुआ उसी कमल के प्रत्येक दलों पर दौड़ा करता है। अस्तु एक अंकुश इस मन को हाथ में करने से सब साधनाएं सहज हो जाती है। भाई इस मन को ही सब प्रपंचों का मूल समझो। यह मनही लिप्त होता है और यही घर घर अवतार धारण करता है। यही कर्म बंधन में फंसाता है और यही कर्मों से उबारता है। यही इधर उधर भ्रमता है और यही सुखी दुखी होता है। अन्तरात्मा का तो इतर प्रपंचों से रंच भी लगाव नहीं है; अतः सद्गुरु की कृपा से जो यह मन अज्ञान से रहित होकर ज्ञान में रंग जाय तो सब दुःख दूर हो जांय और मुक्ति मार्ग भी सहजही मिलजाय। इसलिये मन को रोककर युद्ध के लिये सन्नद्ध होजाओ। एकाग्र चित्त होकर युद्ध में मरने से मुक्ति मिलती है परन्तु वासना लिप्त होने से फिर भी कर्म बंधन में पड़ना पड़ता है।

ढुंढरह राय ने कहा महाराज आप तेजपुंज सूर्य्य वंश में उत्पन्न है। आप वीर है और अपने कुल की लीक के अनुसार आचार विचार और साहस भी आप में विद्यमान हैं। तदनुसार आप युद्ध के लिये सन्नद्ध होनाही सलाह समझते हैं, परन्तु राज्य की रक्षा करना भी तो राजा का परम धर्म है। सबल से वैर बिसाहने में घर और वर दोनों की हानि है। इस पर रावल जी ने उत्तर दिया कि भाइयो शीत रूपी भीलिनी को भगा कर गरबीले ग्रीष्म का वेष धारण करो और शत्रु दल के दाह करने में प्रवृत्त हो जाओ। यह कहकर रावल जी ने अपने अन्तरंग मित्र सुमंत प्रसार की ओर देखा। तब सुमंत बोला कि भाइयो डौल टौल कुछ नहीं नेम ही माननीय है। एक गरुड़ सहस्रों सर्पों के समूह का विनाश कर सकता है। एक अगस्त इतना बड़ा उदधि अचे गया। एक राहू उडुगन समूह को हांते हुए भी चन्द्रमा का ग्रास करता है और सिंह हाथी का शिकार करता है। इसी प्रकार रावल जी भी पंग ऐसे प्रबल शत्रु को परास्त करने में सहज समर्थ हैं। अवसर पाकर सिंह प्रसार बोला कि शत्रु प्रबल है इससे रात्रि को धावा करना उचित होगा, बात की बात रहेगी और सब प्रकार की हानि से भी बचेंगे। परन्तु यह प्रस्ताव समरसिंह जी ने स्वीकार न किया। उन्होंने कहा। उज्ज्वल अंशुमाली भगवान के उजेले में उज्ज्वल मन से उज्ज्वल इष्ट देवों की आराधना करते हुए उज्ज्वल अस्त्र शस्त्र सम्हालो और उज्ज्वल कर्तव्य-धर्म पालन करके उज्ज्वल दिशाओं में अपनी उज्ज्वल सुकीर्ति का उजेला प्रकाशित करो। उज्ज्वल हृदय से उजेले में युद्ध करने से ही वीरों का मुख उज्ज्वल होता है। और भी सुनो! यह मनुष्य शरीर सुकीर्ति विस्तरित करने के ही लिये दिया जाता है इस लिये सुकीर्ति के लिये तन तजना जरूरी है। जो होनहार है सो अमिट है। लोग कहते हैं, ये मेरा ये तेरा, पर अन्त समय पर कोई भी काम नहीं आता। इस लिये इन दुखद प्रपंचों का विचार छोड़ कर समर में तन तज कर संसार की सार वस्तु सुकीर्ति से मुख मोड़ना शुभ नहीं है। इस दुःख मय जीवन में सुख की आशा करना बड़ी भारी भूल है।

रावल समरसिंह जी के ऐसे बचन सुनकर सूर वीर सिपाही सलाह चढ़ा कर और अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित होकर पग सेना से जंग लेने के लिये सन्नद्ध हो बैठे। उनके कान्ति मय उज्ज्वल शरीर पर झलझल बख्तर ऐसे मालूम होते थे मानों राहु ने सूर्य्य को सर्वांश ग्रास करलिया हो। शृंगीनाद के भीषण स्वर से अथवा अन्यान्य जंगी बाजों के बजने दिशाओं में दुहचाल सा मचगया। और शूरवीरों के चेहरे सूर्य्य से दिप उठे। छत्तीसों प्रकार के राजपूती बानों से सुसज्जित होकर चित्तौरपति की चतुरंगिनी सेना जैचन्द का मोरचा मारने के लिये

चली। इस सेना को सामने आते देखकर जैचन्द ने अपनी तलवार सम्हारी और हाथी से उतर कर वह अपने मानिक नाम घोड़े पर सवार हुआ। वह भीमकाय घोड़ा क्या आग का पुतला था। जैचन्द को पीठ पर लिये चौकड़ी भरकर चलता हुआ द्रोनागिर को लिए हनुमान जी सा आता जान पड़ता था। उसकी पूंछ का और चन्दन कीसी चौर छहरा रहा था और उसके नाल दूज की सी जुन्हैया चमचमाते थे। वह पंखी की भांति फरफराता हुआ घोड़ा उर्वश्रवा का सा घोड़ा जान पड़ता था। उस की कलेंगी से तो मयूर का धोखा होता था।

उस दिन चैत्र सुदि * पूर्णिमा सोमवार था। समरसिंह और पंग सेना का प्रथम युद्ध ग्वारीनद के पास दुरगापुर के मैदान में हुआ। दोनों दलों का दिखादाव होते ही इधर से रावल समरसिंह जी और उधर से जैचन्द ने अपने अपने घोड़ा की बागें उठाई। रावल जी के साथ में उनके सरदार कन्ह, जैत, नारेन, मानसिंह, मल्हनदेव, अमरसिंह, प्रतापसिंह बलिभद्र आदि ने भी अपनी अपनी अनी कनी सेना सहित शत्रु सेना पर धावा किया। तीर तुवक की तो किसी ने बात ही न पूछी दोनों ओर के राजपूत योद्धा चपला सी चमचमाती हुई तलवारें निकाल कर वार करने लगे। रक्त वाधों के रव और हाथियों के घंटों की ठनठनाहट के मारे कान नहीं दिया जात[1] था। दोनों दलों का जुटाव पावस के युगल बदलों के जुटाव से कम न था। पल भर में लोहे के फलाफल छूटि वर्ष कर वर्षा की बहार दिखाने लगे। हाथी के कुंभस्थल में पैठती हुई तलवार बादल में बिजली: सी समाती जान पड़ती थी। और हाथियों के किलाए पर बैठे महावत सिंह से देख पड़ते थे। रावल जी के सिपाहियों ने पंग दल को खूब दबाया परन्तु एक जगह रावल जी बुरी तरह से गंम गए। उस समय पंग सेना चारों ओर से दब गई और रावल जी ने बाग उठाई। पंग दल के सिपाहियों ने बड़े बेग से मार मचाते हुए समर सिंह जी को पकड़ लेना चाहा, परन्तु उस समय समरसिंह ने विकट वाराह रूप होकर समस्त दल बल को बिदार दिया और हाथ उठा कर अपने सिपाहियों से कहा "बन्धो भाइयो ऐसा सुअवसर फिर न मिलेगा, जैसे ग्रीष्म की दुपहरी में जल पिलाने से ज्यादा और कोई पुण्य नहीं है वैसेही युद्ध में प्राण देने के अतिरिक्त मुक्ति सुधार का भी अन्य कोई सरल मार्ग न जानो। इतना सुनतेही वे सूर वीर सिपाही जिनके हाथ तो थक गए थे परन्तु मन न थके थे, बड़े बेग से बढ़े और शत्रु सेना को काट काट कर पाटने लगे। सायकाल होजाने के कारण उस दिन का युद्ध बन्द हुआ।

दूसरे दिन पुनः प्रातः काल से छिड़ी। पहिले दिन के युद्ध में पंगसेना बहुत पीछे हटगई थी। दूसरे दिन का युद्ध उसी जगह पर हुआ जहा से गुजरात का राजा भीमदेव हार कर भागा था। एक तरफ से पंग दल दूसरी तरफ से समरसिंह जी की सेना ने फिर से युद्ध के लिये कमरें कसी। अपने अपने स्वामियों की जै की अभिलाषा करने वाले वीर तमक तमक कर तलवारों के वार करने लगे। दो पहर होते होते दोनों ओर के दो हजार सिपाही और उन्नीस सर्दार खेत रहे। परन्तु अन्त में अवसर पाकर समरसिंह जी ने पंग सेना को चारों ओर से घेर लिया और नाके बाँध कर मार मचाई। उस समय एक के ऊपर एक पड़ी तरफरानी हुई लाशें ऐसी जान पड़ती थीं जैसे थोड़े पानी में मछली तरफ रही हो। कन्ह, जैत, जैसिंह, सामला सूर, रूप राम, नारायण, मोहनसिंह, आदि वीर खेत रहे पर जीत समरसिंह जी की हुई और पंग सेना भाग उठी। जैचन्द का भतीजा कान्ह भी

(१) सूर्य्य के रथ का सात मुखवाला घोड़ा जो समुद्र से उत्पन्न हुआ माना जाता है।

* "बार तीस पक्का दिवस पूरन पूरन मास।"

अधिक घायल हुआ था इसलिये उसे डोली में लिवा कर जैचन्द कन्नौज को उलटा गया और चित्तौर में जीत के नगारे बजने लगे।

धन्य भगवन! जिस संयोगिता के लिये यह सब खून खराबा हुआ वह समय पाकर पृथ्वीराज के हाथ लगी पर लगी।

कैमास वध समय।

(सत्तावनवां समय।)

दिल्लीपति पृथ्वीराज शस्त्र बल से शत्रु समूह को शमन कर स्वच्छन्दता पूर्वक राज्य श्री का सुख भोग कर रहा था। उसका पुत्र राजकुमार रेणसिंह भी अश्व पर सवार हो अहर्निशि अहेर के फेर में फिरा करता था। राजकुमार रेणसिंह और चामंडराय का परस्पर घनिष्ट स्नेह था। वे दोनों मामा भांजे एक दूसरे के बिना चण्ण भर भी नहीं रहते थे। खाते पीते सोते जागते दोनों एक दूसरे से घड़ी भर के लिये भी विलग नहीं होते थे। उन दोनों का ऐसा स्नेह चंदपुंडीर से न देखा गया। उसने एक दिन अवसर पाकर राजा पृथ्वीराज से कहा कि चामंड राय ने राजकुमार पर अपना विशेष प्रभाव जमा रक्खा है। मुझे तो कुछ दाल में काला मालूम होता है। क्या जाने क्या! यह कलिकाल का समय है और राज्य का प्रलोभन बुरा होता है!! चंदपुंडीर के ये वचन चहुआन के चित्त में चुभ गए। उसने उस समय तो कुछ न कहा पर उस के दिल में गांठ पड़ गई।

सवत् ११५१ आषाढ़ सुदी ६ वी की बात है। पूर्व दिशा में कुछ धूमले वर्ण का चन्द्रमा दिखाई दे रहा था। राजा पृथ्वीराज ने शतरंज खेलने की इच्छा की। शतरंज बिछाई गई। एक बाजी पर राजा स्वयं था और दूसरी पर राज्यमंत्री कैमास। राजा के दहिने पार्श्व में पज्जूनराय और चंद सेन, बाएं पार्श्व में जैतराव और सामन्त निवृदुर और कन्ह बैठे हुए थे। इनके सिवाय सलख लक्खन विक्रमराज आदि और भी दस पांच सामंत इधर उधर बैठे थे और कविचंद कवित्त पढ़ रहा था। बदली दबने का कुछ रुख देख कर राजा ने प्रातःकाल वन विहार के लिये जंगल को जाने की इच्छा की। आज्ञानुसार दूसरे दिन तड़के को सबेरे में सब लोग जुटे भी परन्तु बादल फट गए और चटाके की घाम निकल पड़ी इसलिये उस समय तक मुल्तवी हो गया। सबेरे से दोपहर पर्य्यन्त तो घाम रही, परन्तु दोपहर के बाद चारों ओर से काले काले बादल झुक आए। अस्तु राजा पृथ्वीराज, कैमास, कन्ह, पज्जून राय, चन्द्रसेन, चामंड राय, निवृदुराय, सलख, लक्खन बघेला, विक्रमराज आदि सामन्तों सहित हवा खेलने के लिये जंगल की तरफ निकल गया। संध्या होने को रिमझिम मेह भी बरसने लगा। इसलिये राजा ने समाज सहित घर की ओर प्रस्थान किया। राजा महलों को आए और सब सामन्त लोग अपनी अपनी हवेलियों को चले।

राजा पृथ्वीराज का खास हाथी शृंगारहार मदे लगा हुआ था। यद्यपि वह किले के भीतर बड़े बन्दोबस्त के साथ बंधा हुआ था परन्तु जिस समय आषाढ़ का बादर गरजा और टिपकारी बड़ी बड़ी बूंदें पड़ने लगीं तो हाथी साकल तोड़ कर चल दिया। भालेबरदारों और महावतों के हजार हजार उपाय करने पर भी हाथी थिर न रहा और शहर के बड़े बड़े मकान ढहाता हुआ मनमाना डोलने लगा। एक सकरी गल्ली में चामडराय और शृंगारहार का आमने सामने मुकाबला होगया। चामडराय को देखते ही हाथी ने चीड़ भरी। परन्तु चामंडराय क्या हाथी के सामने पीछे पैर दे! यदि दे भी तो हाथी की सीध से बचकर जाय कहां? उसने भी म्यान से तलवार निकाल ली और ज्योंही हाथी मेर में आया कि उसने एक ऐसा हाथ मारा जिससे मय दांतों के भसुंड से सुंड अलग हो गई और शृंगारहार एक चिंघार मारकर वहीं मर गया।

जब यह बात पृथ्वीराज ने सुनी कि चामडराय ने हाथी मार डाला तो वह मारे क्रोध के कांप उठा। उसी समय उसे चंदसेन पुंडीर की बात भी स्मरण आई। बस फिर क्या था उसने पंडित रामदेव को

(१) हाथी के सुंड उठाकर अपना काम करने को चीड़ भरना कहते हैं।

(२) यह वही हाथी था जिसे पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन से दण्ड में लिया था।

(३) शुकराज का असली नाम रामदेव है।

बुला कर कहा कि जाओ चामंडराय के पैरों में बेड़ी भरो, यदि इस समय तुमने मेरे सम्बन्ध के बड़प्पन का विचार करके जरा भी आनाकानी की तो तुम अपनी भी कुशल न जानो। इतने में हाहुलीराय हम्मीर और पज्जूनराय भी आगए। उन्होंने कहा कि ठीक तो है। आज हाथी मारा कल्ह और कुछ कर बैठें, क्या ठिकाना! स्वामी की इच्छा के विरुद्ध कार्य्य करना सर्वथा नीतिविहित है। हांसीपुर के मैदे से पूँछ दबा कर भागे थे, यहां हाथी पर सूरवीरी सूझी। परन्तु पृथ्वीराज ने कहा कि चामंड राय मारा न जाय ऐसा करने में बड़ा अपयश होगा। गुरुराम के साथ में लोहाना आजानबाहु को देकर कहा कि तुम दोनों जने जाओ और समझा बुझाकर चामंड के पैरों में बेड़ी भर आओ।

जब यह चर्चा चामंडराय के कान पड़ी तो वहां उसके दो हजार भाई बेटे (दाहिमवंशी राजपूत) बात की बात में अपने बचाने में सजकर दुरुस्त हो बैठे। परन्तु चामंडराय ने सब को समझा कर शान्त किया और कहा भाई मेवक का यह धर्म नहीं है कि स्वामी के सम्मुख हथियार पकड़े। जिसका अन्न खाया, जिसे देवता करके माना, भला उससे लड़ना कैसे बनता है। ऐसा करने में न तो लोक में यश है न परलोक में सुख है। गुरुराम ने चामंडराय के सम्मुख आकर राजा की आज्ञा कह सुनाई और बेड़ी सामने रख दी। स्वामिभक्त चामंडराय ने चुपके से अपने ही हाथों अपने पैरों में बेड़ी चढ़ा ली। जैसे मतवाला हाथी अंकुश की अनी को और भारी भारी सर्प गरुड़ की आन को मानते हैं वैसेही नीतिवान चामंडराय ने बिना आनाकानी किए स्वामी की आज्ञा को प्रमत्तता पूर्व्वक सिरोधार्य्य कर लिया। धन्य है! वह समय तो गया परन्तु चामंडराय के शील की चरचा अबलों चल रही है और चलेगी। होनी थी सो तो हो गई परन्तु यह बात खटकी सबको!

सच है! बड़े से बैर बिसाहना बुरा होता है *

जयचंद के डर से पृथ्वीराज दो दिन भी दिल्ली में नहीं रहता था। समस्त राज्यकार्य्य कैमास के हाथ में छोड़ कर आप जंगल में शिकार खेलता फिरता था। निदान चामंडराय को बेड़ी पहना कर पृथ्वीराज फिर भी दुरगा-बन को शिकार खेलने चला गया और कुछ सामन्तों सहित कैमास दिल्ली में रह कर सावधानी के साथ राज्यकार्य्य करने लगा।

भादों बदी १० गुरुवार की बात है। कोई एक घड़ी दिन चढ़ा होगा। आकाश में अंधाधुन्ध बदल छाए हुए थे। मोर शोर मचा रहे थे, मेढ़क टर्रा रहे थे और बगुले श्रेणीबद्ध होकर बदरों के नीचे नीचे उड़ रहे थे। दसों दिशाओं में अन्धेरा सा छा रहा था और बदरों की गर्जना से तो ऐसा भान हो रहा था मानों प्रकृति पर विजय पाकर पावस स्वयं अपने निसान बजा रहा हो। उसी समय कैमास कतिपय सामन्तों और सिपाहियों सहित घर से राजमहल को आया। इधर यौवन की मस्ती में भरी हुई कर्नाटकी दस पांच दासियों सहित मसनद बैठी प्रकृति का आनन्द ले रही थी। दैवयोग से कैमास की और उसकी नजरें चार हो गईं। नजरें चार होते ही दोनों के हृदय पर मार की मार सी पड़ उठी और दोनों एक दूसरे के हिये का हार होने के लिये बेहाल हो गए। स्त्रियाँ तो स्वाभाविक ही चंचलचित्त होती हैं तिस पर दासी और फिर भी राजा का महलों में न होना, इन सब कारणों से कर्नाटकी का चलचित्त होना एक प्रकार से उचित भी हो सकता है, परन्तु होनहार बस बुद्धिमान कैमास भी इस समय रसवश होगया। क्या कहें! इस संसार की रीति, भांति कुछ विलक्षण ही है, जैसे भौंरी का चित्त तो भ्रमर में बसता है परन्तु भ्रमर कुसुम रस की आशा में व्यस्त रहता है अथवा जैसे परब्रह्म प्रत्येक पुरुष में रमकर उसे शक्तिमान बनाए है परन्तु पुरुष अधर्म में रत रहता है। तैसे ही पृथ्वीराज तो सब तरह से कैमास के बलभरोसे था परन्तु कैमास कर्नाटकी के रस में फँस गया। कैमास या कर्नाटकी को क्या दोष दें, होनहार प्रबल होती है।

* अमल गाय भावंद पग सब। अह रच्यो कैमास मन रब।

समस्त दिन राज्य कार्य्य करके सायंकाल होते ही कैमास घर को गया। ज्यों ज्यों रात्रि भीगती जाती थी त्यों त्यों कैमास का हाल बेहाल होता जाता था। इधर कर्नाटकी का भी यही हाल था। जब से उसकी कैमास से नजर मिली तब से उसे पलभर भी कल नहीं पड़ती थी। प्रहर रात्रि जाते जाते कर्नाटकी अधीर हो उठी और उसने उसी समय एक दासी को कैमास के पास भेजा। कैमास तो आप पड़ा तड़फ रहा था, कर्नाटकी की दासी को देखकर दंग हो गया। उसने उसी समय दासी के कथनानुसार स्त्री-वेष धारण किया और दासी के साथ हो लिया "जो कैमास अपनी बुद्धिमत्ता के लिये जहान में जाहिर था, जो कैमास साक्षात दिल्ली राज्य की ढाल था, हा! उसका ऐसा लंपटपन! उसकी ऐसी नीच करतूत, धन्य है! दैव बलवान है" कैमास दासी के हाथ में हाथ दिए महल के अन्दर हो गया। यद्यपि चारों ओर से खूब घनघोर बदर चढ़ा हुआ था, हाथों हाथ नहीं सूझता था परन्तु चन्दन की महक और पैर के भारीपन की आहट से पटरानी इंछिनी के मन में सन्देह हो गया, इस लिये वह खिड़की से झाँक कर देखने लगी। तब तक बिजली भी चमचमा उठी तो इंछिनी देखती क्या है कि कोई स्त्री वस्त्रधारी पुरुष कर्नाटकी की अटारी की सीढ़ियाँ चढ़रहा है। यह देख कर रानी सन्न होगई। तब तक उसका सुगा बोला, देखा आज कौआ कस्तूरी खा रहा है। जानती है। कर्नाटकी के घर में कौन है!! नहीं जानती तो जान ले। वह कैमास है!!!

कैमास तो कर्नाटकी के पास पहुँचते ही मानो संसार को क्या अपने को भूल भी गया। इधर रानी इंछिनी ने एक सखी के हाथ पर कज्जल से संदेसा लिख कर उसे पृथ्वीराज के पास प्रेषित किया। दासी घोड़े पर सवार होकर दो घड़ी में राजा के पड़ाव पर जा पहुँची। उसने घोड़े को तो एक पेड़ से बाँध दिया और आप राजा के शिविर में गई तो देखती क्या है राजा पृथ्वीराज अपनी तीर कमान बगल में रक्खे पड़ा हुआ बेसुध सो रहा है और उसके सब्बा सामन्त लोग भी उसी तरह घोर निद्रा में निमग्न है। यह देखकर दासी ने मन में कहा, जिसने जैचन्द का यज्ञ भंग करके उससे वैर विसाहा, जो बादशाह को पकड़ कर बार बार छोड़ देता है, जिसके चारों ओर शत्रु चिल्ह से मड़रा रहे हैं वह पृथ्वीराज इसतरह पड़ा हुआ बेसुध सो रहा है! ईश्वर इसकी रक्षा करे। ऐसा विचारती हुई दासी आगे बढ़ी। यद्यपि उसके नूपुर की ध्वनि से राजा कुछ सचेत सा हो गया परन्तु उसे अपना भ्रम समझ कर उसने आँख न खोली, किन्तु जब दासी ने पास जाकर छाती पर हाथ रख दिया तब तो वह चटपटाकर उठ बैठा और दासी की गदेली पर का लिखा हुआ संदेसा पढ़ कर पूछ दबाए हुए सर्प की तरह गुस्से में भर गया। लिखा हुआ यह था "आप तो बातूल से बाधित तिनके की तरह इधर उधर मारे मारे फिरते है यहां की भी खबर है क्या हो रहा है?" कर्जा नाद से जगे और गुस्से से भरे पृथ्वीराज का मुखमण्डल मगल ग्रह की भाँति आरक्तवर्ण होगया था। दासी तो देखकर मारे डर के थरथर काँपने लगी, परन्तु जब राजा ने कहा कि डर मत कह बात क्या है? तब दासी बोली, क्या कहूं इस समय आपका मंत्री कैमास दासी कर्नाटकी के साथ रम रहा है।

दासी की बात सुनते ही पृथ्वीराज बिना किसी से कहे सुने तरकस कमान हाथ में लेकर अश्व पर सवार हो चट से रफूचक्कर हुआ और रानी इंछिनी के महल में आ पहुँचा।

पृथ्वीराज ने आते ही पूछा "क्या है?" रानी इच्छिनी बोली दासी कर्नाटकी के महल में कोई पुरुष है। मैं नहीं कह सकती कि वह कौन है, कोई देवता है या गन्धर्व है या यक्ष है? अब तक यह हाल दासी रानी इंछिनी और पृथ्वीराज के सिवाय और किसी को भी मालूम न था—रानी इंछिनी ने राज्य के साथ होकर कर्नाटकी और कैमास को दिखा दिया। देखते ही पृथ्वीराज पहिचान गया कि यह तो कैमास ही

(१) बाद बात दिन पर अनिल दिव किन आनि भनइ।

है। रानी इछिनी तो उँगली से बताकर दूर हो गई और राजा का हृदय क्रोध से काँपने लगा। उसने कुछ सावधान होकर सोचा "दासी तो नीच है उसे क्या कहूँ, पर कैमास का ऐसा कर्म? योंही सोचते विचारते राजा ने बाण सभाना, परन्तु अधिक होने के कारण निशाना लक्ष करना अतिक कठिन था, दैव योग से उसी समय चपला ने चमक कर मानों कैमास के बध में स्वयं सहायता दी। चपला के चमकते ही पृथ्वीराज ने बाण छोड़ा परन्तु क्रोध के अधिक आवेग के कारण मुठ ढुल जाने से निशाना चूक गया। पीछे खड़ी हुई इंछिनी ने दूसरा बाण लेकर राजा ने ज्यों छोड़ा त्यों ही कैमास डाल से चूके हुए बन्दर की तरह गिर पड़ा "हा! अर्जुन और राजा दशरथ तो इस लोक में है ही नहीं, स्वामी पृथ्वीराज तो आखेट में रम रहे हैं इस बाण का चलाने वाला तीसरा और कौन है।" यही सोचते सोचते कैमास इस असार संसार से सदा के लिये विदा हो गया।

कैमास के कलेजे में बाण लगते ही कवि की धार निकल पड़ी और चित्रमार्ग की सारी भूमि लाल हो गई। बदन बड़े जोर से तड़फड़ाना और कहीं गाज भी गिरी। ललाट पट्ट में लिखे हुए अक्षर अमिट है. एक दासी के कारण पृथ्वीराज के हाथ से कैमास का मारा जाना! जिस कैमास ने खड्ग बल कर असंख्य धन खोद निकाला जिस कैमास ने पड़ियारों को हराकर माण्डर पर कब्जा किया, जिस कैमास ने शाह शहाबुद्दीन को कई बार बाँधा, जिस राज्य मंत्री कैमास की नीति चातुरी के कारण चातुर्दिक चाम्हड़ में मड़राता हुआ प्रबल शत्रु दल दिल्ली राज्य को आज लों कोई हानि न पहुँचा सका और जो कैमास सदा पृथ्वीराज के चित्त में बसा रहता था आज उसी कैमास की यह दशा? राजा रामचन्द्र के सिवाय और कौन पुरुष जितेन्द्रिय हुआ है! नरनाह काका कन्ह, चामंडराय, हरसिंह, रामराय, मलख, कनकरायबड़-गूजर, इन सबके घर दो दो स्त्रियां थीं और सब प्रायः परस्त्रीगामी थे, कैमास यदि दासीरत हुआ तो क्या? जिस कैमास ने तोमरों से दिल्ली का राज्य लिया, जिस कैमास ने बालुकाराय को मार कर जैचंद का यज्ञ विध्वंस किया, जिस कैमास ने गुजरात के राजा भीमदेव को जीता और जिस कैमास ने छः बार शहाबुद्दीन को कैद किया, वही कैमास लोनहार के वंश होकर कर्नाटकी के कारण कालकवलित हुआ। हा! इश्वरेच्छा बलीयसी। कोई किसी बात का गर्व करे तो वृथा है। पृथ्वीराज ने कैमास की लाश को तो उसी समय जमीन में गाड़ दिया और कर्नाटकी को एक गोख में चुन दिया। इतना करके पृथ्वीराज दो घड़ी पाँच पल रात्रि रहे महलों में शिकारगाह को लौट गया, परन्तु प्रातःकाल मालूम हुआ कि नटखट कर्नाटकी गोख से निकल भागी।

इधर तो यह हाल हुआ उधर कविचन्द ने स्वप्न में देखा कि मानो उसमें कोई कान में कह रहा है कि सोता क्या है राजा ने कैमास को मार डाला। यह सुनते ही कविचन्द अकबका कर उठ बैठा और चकित चित्त होकर सोचने लगा "हे! मैंने क्या सुना, अपने बाल सखा और सच्चे सेवक कैमास को राजा क्यों मारेगा। हे! हो ही क्योंकर सकता है कैमास तो दिल्ली में है और राजा शिकारगाह में पड़ा है। हे! मुझे यह हृदय विदारक समाचार किसने सुनाया कृपा कर मेरे सामने प्रगट होकर कहो वास्तव में बात क्या है"। कविचन्द इस प्रकार में सोच समुद्र में गोते लगा रहा था कि देखता क्या है कि उज्ज्वल श्वेत वस्त्र धारण किए मोतियों की माला पहिने वीणा बजाती हुई हंस पर सवार विद्या वरदायिनी सरस्वती उसके सम्मुख आकर प्रगट हो गई। उस जगद्विमोहिनी मूर्ति के कोर कोर घुँघरार केश थे और स्वर्णपट्टिकावत ललाट पटल पर चन्दन की रेख बाल चन्द्रमा सी सुशोभित थी। उसके कपोलों की प्रभा उगते हुए पूर्ण के चन्द्रमा की भाँति थी और बुलाक का मोती तो ऐसा ही मालूम होता था मानो सुआ सीप चुन

रहा हो दोनों भौंहें राहु केमी किरचें और चिबुक बिन्दु घन श्याम कीमी आभा भामिन करता था मन्द स्मिति से दिखाती हुई दन्त पंक्ति देखकर ऐसा मालूम होता मानों पके अनार का दाना खिल रहा हो। कंबुवत कण्ठ में मोतियों की माला सुमेर गिरि की परिक्रमा करती हुई गंगा सी जान पड़ती थी। उन्नत वक्षस्थल, किसुं के पुष्प से अरुण नख, सूक्ष्म कटि, सुडौर जंघा, सचिक्कन पिंडुरी और कुसुम सी आरक्त एड़ी अजब ही छटा छाने थे। ऐसी सब भाँति से सेवकों का मनोरथ सफल करने वाली वाणी ने कविचन्द से कहा। आज मदन की मजेज में निर्लज्ज होकर कर्नाटकी ने कैमास को बुलाया। कैमास भी काम कटाक्ष में बिधकर कर्नाटकी की दासी के साथ महल में जा पहुँचा। जिस समय कैमास कर्नाटकी की चित्रसारी की सिढ़ियां चढ़ रहा था कि उस पर पटरानी इंछिनी की नजर पड़ गई। उसने अपनी दासी के हाथ राजा को पत्र लिख भेजा कि आप तो वहां पड़े हैं यहां कागा कस्तूरी चुगता है। दासी उसी दम घोड़े पर सवार होकर शिकारगाह में पहुँची—राजा पड़ा हुआ सो रहा था। दासी ने नीचे जाकर उसकी छाती पर हाथ रख दिया, जिससे राजा चौंक कर उठ बैठा और उसने उसके इस अकस्मात् आने का कारण पूछा! तब दासी ने सब हाल कह सुनाया, जिसे सुनते ही पृथ्वीराज किसी को बिना जनाए केवल धनुष बाण लेकर वहां से अकेला चलपड़ा और रानी इंछिनी के पास आया। रानी ने राजा को लिवा जाकर कैमास को दासी के साथ रमते हुए दिखा दिया, जिसे देखते ही पृथ्वीराज जल उठा, परन्तु फिर उस ने महल कर बाण सन्धाना और बिजली के उजेले में लक्ष करके बाण छोड़ा। परन्तु वह वार चूक गया इस लिये उसने फिर दूसरा बाण मार कर कैमास का काम तमाम किया। कैमास को मारकर उसने पृथ्वी में गाड़ दिया और दासी को एक गोख की ओट में चुन कर, दोनों को रानी इंछिनी के सुपुर्द कर दिया और आप फिर से डेरों पर चला गया। नटखट दासी कर्नाटकी तो किसी प्रकार से निकल भागी परन्तु राज मंत्री का शव अब भी धरातल में गड़ा पड़ा हुआ है।

इतना कह कर सरस्वती तो अन्तर्ध्यान हो गई और चिन्तित चित्त कविचन्द चकाचौंध होकर चट से उठ बैठा। तो देखता क्या है कि प्रातःकाल हो गया है जहां तहां देवालयों में शंखघंटानाद की झंकार से दिशाएं गूंज रही हैं आकाश में उज्ज्वलता का प्रसार हो रहा है, धर्म और मुक्त मानो कमलकली के स्वरूप में हँस रहे हैं। और पाप पुंज मानों कमोदनी बन कर म्लान मुख हो रहे हैं। भास्कर भगवान की किरणों का आभास होते ही उद्यमी जीव जहां तहां अपने व्यवसाय में तत्पर हुए हैं और मलिन मन हो जँभाई लेने लगे हैं। चकवा चकवी का मिलाप हुआ, चन्द मन्द दुति हुआ और और भी प्रकृति में अनेक प्रकार के हेर फेर हो गए।

राजा पृथ्वीराज ने लौटकर महल में सभा का साज सामान होने की आज्ञा दी। आज्ञानुसार बात की बात में सब सामान दुरुस्त हो गया। उचित उच्च स्थान पर राजा की राजगद्दी और उसके अगल बगल सामन्त सरदारों की बैठक के मुढ़ा गादी आदि सजे गए। सामन्त मण्डली के बीच में बैठा हुआ पृथ्वीराज अष्ट ग्रहों के बीच सूर्य्य सा देदीप्यमान हो रहा था। उस तेजस्वी महाराज पृथ्वीराज के शीश पर रत्न जटित स्वर्ण की डोंगी वाले चौंर और छत्र छहरा रहे थे और गद्दी के पीछे परिकर के लोग हाथ बांधे चुपचाप खड़े हुए थे। एक कैमास के सिवाय अन्य सब सामन्त उपस्थित थे और यह किसी को खबर भी न थी कि बिचारे कैमास की क्या गति हुई है। पृथ्वीराज ने सगर्व प्रश्न किया कि कहो तो (मेरे सिवाय) और भी किसी ने शाह को परास्त किया है! तब तक कविचन्द भी आन पहुँचा और राजा को आशीर्वाद दे कर यथास्थान अपने आसन पर आसीन हुआ। उसने राजा को आशीर्वाद देते हुए कहा" हे नृसिंह के समान तेजस्वी! हे अद्वितीय धनुर्धारी हरि के समान

तेजवान रयनकुमार के पिता, सूर सामन्तें के स्वामी सत, रज, तम, तीनो गुणों संयुक्त इस सभा मण्डप में विराजमान चाहुआन तेरी जय हो!" इसके पश्चात् वह उपस्थित सामन्तों की विरद पढ़ने लगा। उसने कहा "राजा के दक्षिण पार्श्व में विराजमान लक्खन और कन्ह आप रण आंगन में ध्रुव के समान अटल है। वामपार्श्व में विराजमान हरिसिंह और वीरसिंह प्रमार तो महाराज के साक्षात बाम बाहुही हैं। नरनाह काका कन्ह तो पृथ्वीराज के सर्वाङ्ग रक्षक सनाह के समान हैं। इनके सिवाय उसने किमराज परमाल, चंदेल बाहररराय, अचलेस भट्टी, निहररराय, लक्खनराय, चामंडराय, गोइन्दराय गहलौत, पद्मरराय, तोंअर, रामराय बड़गुज्जर, कूरम्भपति, पज्जूनराय, अनगोरपति नरसिंह आदि सब सामन्तों की कीर्ति पढ़कर कहा कि चहुआन वंश में राजा मोणिक राय के दस पुत्र थे। उनमें से जराजित नाम का राजकुमार सम्हर की गद्दी पर बैठा। शेष नौ राजधानी छोड़ कर अन्यान्य देशों को चले गए। उसी राजा जराजित की गद्दी पर राजा पृथ्वीराज है जिसकी पचीस टंकी कमान पर तीन जंजीर की प्रत्यंचा चढ़ती है और जिस के प्रकोप मात्र से सारा जहान थरथर कांपता है। ऐसे राजा पृथ्वीराज की कीर्ति का यदि पाच दिन पर्य्यन्त लगातार बखान किया जाय तो भी अन्त न आवे। इसपर राजा का रुख पाकर नकीब ने कवि को पुकार कर कहा। सदैव आनन्द स्वरूप दरिद्र दुःख दमन असहायों के सहायक उनतों के नत मस्तक करने वाले सुकीर्तिवान के सुत माहाराज समरीराव कविचंद को समक्ष होने की इच्छा करते हैं। यह आज्ञा सुनकर कविचंद राजा के पास गया और आज्ञा पाकर संमुख बैठ गया।

कन्ह ने कविचन्द से कहा कि मानिकराय के शेष नौ पुत्र किस कारण राज्य से निकाल दिए गए और जराजित राज्य का स्वामी क्यों हुआ सो कथा कहो। तब कविचन्द बोला कि चहुआन वंश में प्रसिद्ध राजा मानिकराय ने तक्षकपुर के सोलंकी राजा की बेटी से विवाह किया। दैव योग से उस सोलंकिनी रानी के गर्भ से बालक के स्थान में एक हाड़ का टुकड़ा प्रसव हुआ। इस अद्भुत घटना से चकित चित मानिकराव जी ने आज्ञा दी कि यह प्रसूत अस्थिखण्ड जंगल में फेंक दिया जाय, परन्तु सुत-वत्सला प्रसूता रानी ने राजा की यह आज्ञा अस्वीकार की तब राजा ने रानी को भी निकाल बाहर किया। महलों से निकाली जाकर रानी साम्हर झील के उपकण्ठ में कहीं रहने लगी। शनैः शनैः वह अस्थिखण्ड बढ़ने लगा रानी ने अपने कुछ प्रधान भेज कर किसी राठौर वंश के राजा की बेटी से उस अस्थिखण्ड का व्याह भी कर लिया। जब यह भेद खुला तो सब लोग जहां तहां आश्चर्य्य में पड़ गए।

उसी समय गजनी के बादशाह ने माणिक राव जी पर चढ़ाई की। वह म्लेच्छ दल का मालिक गजनीपति शाह नौलाख बलवान सेना के साथ प्रजा को उजाड़ता और गावों को जलाता हुआ करेचा तक आगया। इधर से पचास हजार सेना के साथ माणिक राव जी ने भी सबल शत्रु का वार बचाने के लिये किले से कूच किया। माणिकरावजी का पहिला पड़ाव चालुकपुर पर पड़ा। उस राज्य रानी ने स सैन्य राजा का आतिथ्य सत्कार कियानिदान दूसरे दिन ज्योंही चाहुआन सेना सजकर आगे कूच करने को हुई और रणवाद्य बजाए गए कि त्योंही वह अस्थिखण्ड फट पड़ा और उसमें से एक सोलह वर्षीय सुन्दर राजकुमार निकल पड़ा। वह राजकुमार प्रचण्ड भुज दण्डवान महाबलवान साक्षात् नृसिंहनी के समान जाज्वल्य-

---

(१) चाहुआनकुल के आदि पुरुष चतुर्बाहु से ले माणिक राव २३३ वीं पीढ़ी में हुआ (देखो राजवंशावली)। • 'जरा जिनकी नहीं पर" इससे यह मतलब नहीं है कि इनका नाम यह बतलाया गया है कि जराजित या अस्थिपाल अपने सब भाइयों से छोटा होने के कारण नहीं का हकदार नहीं था। कारण विशेष यह उसे पाट बैठाया गया था। सम्भव है कि समय पाकर उसने बड़े भाइयों से अपना राज्य लेलिया हो क्योंकि पृथ्वीराज रासो में लिखा है

जान तेजोमय देख पड़ता था। वह सर्वाङ्ग मनोहर कुंडल और छत्तीसो वीर बातों से सुसज्जित था। उस राजकुमार ने अपने पिता (मालिक रावजी) के सम्मुख जाकर उनके चरणों पर सिर रख दिया और फिर अश्व पर सवार होकर शत्रु सेना पर चढ़ाई करने चला। उस राजकुमार ने ऐसा पराक्रम किया कि नौ लाख शाही सेना क्षण भर में छिन्न भिन्न होकर भाग उठी और खेत मालिकराव जी के हाथ रहा। बादशाह पकड़ लिया गया और सत्तर हजार हाथी दण्ड में लेकर तब उसे घर जाने दिया गया।

मालिकराव जी ने उस राजकुमार को निज राजधानी संभर में लाकर बड़ा उत्सव मनाया, बड़े समारोह के साथ निजकुल देवी आशापूरीजी का पूजन किया और उक्त राजकुमार का नाम कर्ण किया। उसका नाम ऊर्धपाल और विरद होड़ा हुआ

मालिक राव जी सेंभरा देव के बड़े भक्त थे। एक दिन उसने प्रसन्न होकर रावजी को वर दिया कि आज तू घोड़े पर सवार होकर जितनी भूमि की परिक्रमा कर आवेगा वह सब चाँदी की हो जायगी। तदनुसार राजा ने घोड़े पर सवार होकर बारह कोस की परिक्रमा लगाई परन्तु होतव्य वश उसे पीछे की तरफ देख आया। जिससे वह सब भूमि चाँदी के स्थान में ऊसर या नमक की खान होगई * इस घटना का राजा के

(१) छन्द १६६ से लेकर छन्द २१० तक हाड़ा (चाहुआन) वंश की उत्पत्ति वर्णन की गई है। इस ग्रंथ के अनुसार तो यह स्वयं सिद्ध है परन्तु देवी राजव वंशावली के विरुद्ध पड़ती है जिसे किसी चारण ने वंश भास्कर के आधार पर रचा है। उसमें मालिकराव जी के एक कुमार होना लिखा है उनके से वेश कुमार सुकर्म जी का सम्भर राज्य का स्वामी और खेत जी से सिंध के पुंवारिए या पँवार वंश की भगौड़िए आदि शाखाओं की उत्पत्ति लिखी है उसी के अनुसार चाहुआन जी से १०० वी पीढ़ी में पृथ्वीराज का होना और इसके कई पीढ़ी पश्चात् हाड़ावंश की उत्पत्ति बतलाई गई है। बूँदी राज चरित्र वाली के रचयिता चौहान हरिवरण सिंह जी ने इसी बात को माना है।

* इसी खान का नमक साम्भरी नमक कहलाता है यह खाने में बड़ा स्वादिष्ट और पुष्टि कर होता है। साँभरी झुटि वा अन्य कई प्रकार के नमक होते हैं परन्तु वह सब से चित्त पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वह उसी दिन से बन मलीन रहने लगा। अन्त में इसी सोच में संसार से चल बसा। उसके पश्चात् अपने भाइयों को निकाल कर अजमेर पाट पर बैठा। अजमेर के पाट बैठने पर राज्य से निकाले गए अजमेर के भाई लोग कंदहारी लोगों की कुमक लेकर चढ़ आए। अस्तु इधर से अजमेर ने भी भूमि के लिये लड़ना मरना क्षत्री धर्म जानकर कमर कसी और घोर युद्ध करके उन्हें विवश कर दिया। परन्तु अन्त में अपने ही गोत्र की क्षय की आशंका जानकर उसने सबको जाने दिया।

* कविचन्द के यह कथा कह चुकने पर पृथ्वीराज बोला है कवि किस किस देश के नरेश कैसे कैसे शूरवीर हो गए हैं उनकी रीति नीति और आचार विचार का वर्णन करो! कौन कौन राजा कैसे कैसे मानी और अभिमानी हुए और उन में से किस ने किसका दर्प चूर्ण किया? कौन कौन राजा कैसे कैसे गुणग्राही और यशस्वी हो गए हैं और उनके इस समय क्या क्या चिन्ह वर्त्तमान हैं? हे कवि माई के लाल सच्चे शूर वीर ऐसे वीर पुरुष—श्रेष्ठ राजाओं का वर्णन करो। इस पर कवि ने प्रत्युत्तर दिया। इस वसुमती एवं रमा का रस आस्वादन करने की लालसा में लिख सहस्रों नरेश रसातल को गए और बहुतेरे यश की ही आशा में काल कवलित हुए। इस संसार चक्र में भ्रमते हुए सभी जब तब नाश को

उत्तम होना है पहिचान इसकी यह है कि इसी में गीलापन झलकता है। उपवास के दिन इस नमक का खाना निषिद्ध माना गया है इसका कारण यह है कि जो कुछ इस खान में डाल दिया जाता है वह सब नमक हो जाता है और आस पास के गांव वाले मरे हुए जानवर या अन्य कूड़ा करकट इसी अगह डाल देते थे वा डाल देते है।

* छन्द १०१ से छन्द २१६ तक पृथ्वीराज के दर्बार का वर्णन और हाड़ा वंश की उत्पत्ति की कथा क्षेपक मालूम होती क्योंकि छन्द १०१ और २१६ तक में अरा भी पाठ भेद नहीं है और छन्द १०१ के पहिले कवि दर्बार का संक्षेप वर्णन कर चुका है बाद इसके जो २१६ के बाद सादक आरम्भ होता है उसकी काव्य शैली यथाविधि छन्द १०१ से ठीक आती है।

प्राप्त होते है पर इस का आदि अन्त कोई नहीं जानता। मोह के फन्दे में बँधा हुआ चित्त नित नए धंधों के प्रबन्ध में बिंधा रहता है और अन्त में यह पंचतत्वरचित शरीर इसी मोहजनित ज्वाला से जल कर भस्मीभूत हो जाता है। हे राजन्! हम कवि है। हमारा कर्म ही यशस्वियों का यश गान करना है परन्तु सच पूछिए तो सच्चे सुखी वेही कहे जा सकते हैं जो शिव की कृपा से संग युक्ति जान कर जहान से किनारा कर गए है। तब पुनः पृथ्वीराज बोला यह तो हुआ, परन्तु यह बतलाओ कि कैमास कहाँ है। आज सन्ध्या होने को आई परन्तु उसका कहीं पता भी नहीं है। मुझे कैमास के बिना सब सूना सूझता है। कविचंद बोला कैमास किसी नाग लोक या मृत्युलोक में होगा, यहां कहां अब! उस वृंद में भेंट होने की नहीं। इस पर पृथ्वीराज कुछ चिढ़ कर बोला, नाग लोक या देव लोक की बातें छोड़ो या तो कैमास का पता बतलाओ वा आज से बरदाईपन छोड़ो। जो तुमको दुर्गा ने वर दिया है और तुम सच्चे बरदाई हो तो कैमास का ठीक ठीक पता बतलाओ नहीं तो बरदाई न कहाओ। यह सुन कर कवि बोला अन्नदाता! ये कैसे बचन!! जो शेषनाग पृथ्वी को त्याग दे, शिव विष को त्याग दे, और सूर्य्य ताप को त्याग दे तो मै भी देवी के वर को त्याग दू, आप वृथा साँप के सम्मुख उँगली न उठाइए। परन्तु राजा ने फिर कहा "तुम तीनो लोक की जानते हो इस समय तुम्हे तो बतलाना होगा कि कैमास कहाँ है। इस पर कवि बोला राजन्! मुझसे पूछकर अपनी टेंकी बात न उघारिए; ऊमर की बिनी सींचना बुद्धिमानी नहीं है। शेष के सिरपर धरी हुई धरा पर कैमास कहाँ भी क्यों न हो मै सहज में बता सकता हूं। परन्तु कहने न कहने दोनों में आपत्ति है कहिए तो कहने लगूँ। कवि को नम्र होता देख कर राजा ने हठ पूर्वक कहा, कहो कवि कैमास कहां है तब कविचंद बोला आपने कैमास को मारा क्यों पहिले यह बतलाइए। कविचन्द की बात सुन कर राजा पृथ्वीराज सन्न रहगया उस की आंखें नीची हो गई और उसके दिल में यह बात खटक गई कि किया हुआ कुकर्म छिपता नहीं। कविचन्द ने कहा देखिए जब कैमास पर आपने पहिला बाण चलाया और वह चूक कर काँख के नीचे से निकल गया तब आपने दूसरा बाण सन्धान कर कैमास का कलेजा बेध दिया और कहीं भाग न जाय इस भय से उसको सिसकते हुए रक्त प्लावित शव को गड्ढे में गाड़ दिया; कहिए इससे आपको क्या मिला? कवि का कथन सुन कर पृथ्वीराज तो मूर्च्छा से उत्तापित कमोदिनी एवं आग की झार से झुलसे हुए तमाल पत्र की तरह मुरझा कर मन ही मन गुस्सा मार कर रह गया और सब सामन्त मण्डली पर तो मानो वज्रपात हुआ। कन्ह तो करम पर हाथ मार कर चट वहां से उठ कर घर को चल दिया और सब लोग चुप चाप दाँतों उँगली दाबकर रह गए। सब अपने अपने मन में सोचने लगे आज आधी रात को राजा शिकारगाह में था यहाँ कब आया। किस कारण वश कैमास को मारा और यह सारा हाल कवि ने कैसे जान लिया। कोई कोई राजा के मुख की तरफ देखते थे कोई कविचन्द की चेष्टा अवलोकते थे, कोई कोई आपस में ही परस्पर आँख के इशारों से बातें करते हुए मन ही मन अपनी अपनी समझ लड़ा रहे थे, पृथ्वीराज अत्यन्त कुपित होकर बोला "कविचन्द मैंने कैमास को कर्नाटकी के कारण मारा है" यह सुनकर सब सामन्त लोग उठ कर अपने अपने घर को चले गए परन्तु राजा पृथ्वीराज उसी विकल अवस्था में बैठा रहा और कविचन्द भी अपने आसन से न हटा। सब के चले जाने पर उसने कहा राजन् अब लक्षण अच्छे नहीं देख पड़ते। आपके इस अपकीर्ति के मारे कान न दिया जायगा। मित्रद्रोह का कलङ्क सिर लेकर किस मुंह दिखलाओगे। यह कहकर कविचन्द भी चलता हुआ।

पृथ्वीराज गद्दी पर से उठ कर अपनी एकान्त अंगशाला में सुसज्जित एक पलंग पर जा लेटा।

(१) अंगशाला = एकान्त रहने का स्थान।

और उसने ड्योढ़ीवालों को आज्ञा दी कि बिना मेरी परवानगी के परिन्दा भी पर न मारने पावे। इधर सारे शहर में भी समाचार फैल गया और घर घर शोक समूह की बौछारें छूटने लगीं। समस्त राग-रंग मय आनन्द बन्द हो गए और सर्वत्र सन्नाटा छागया। इसी प्रकार तीन दिन व्यतीत हो गए,

चौथे दिन प्रातः काल ही कैमास की स्त्री कविचन्द के घर पहुंची। उसने कविचन्द से कहा कि हे वरदाई इतना कीजिए कि मुझे अपने पति की लाश दिला दीजिए, जिसमें मैं उसके साथ सती होकर संसार से पार हो जाऊं। यह सुन कर कवि बोला 'यह बात है तो कठिन, पर क्या कैमास के लिये यदि राजा मुझे मार भी डाले तो भी मुझे मंजूर है। यह कह कर कवि कैमास की स्त्री के साथ राजमहल को जाने के लिये तय्यार हुआ। जब कविचन्द की स्त्री ने यह हाल जाना तो वह तुरन्त दौड़ कर पति के पास आई और उसका अंचल * पकड़ कर बोली 'क्यों पराई मौत अपने सर लेते फिरते हो, जिसने अपने परम हितैषी बालसखा कैमास का शील नहीं रक्खा वह आपको क्या समझे? हे पति जिस जीवन की रक्षा के लिये समस्त धर्म कर्म किए जाते हैं, जिस जीवन के लिये यावत वित्त स्वाहा कर दिए जाते हैं; जिस जीवन के लिये ज़र, जमीन, घोड़े, हाथी सब दे डाले जाते हैं और जिस जीवन के लिये लोग प्रहों का जप दान और पूजन करके घड़ी घड़ी की कुशल मनाते हैं उसी को आप हथेली पर धरे फिरते हैं। भला विचारिए तो कौन किसका साथ देता है? कहावत है कि "आप मरे जग डूबा" हे प्यारे! यह स्वासामय प्राण-पक्षेरू आशा के वश में पड़ा हुआ अवधि के दिन पूरे करता है। पूर्व्व अर्जित वासना के अनुसार योग, जप, दान, पूजन, असन, व्यसन आहार, व्यवहार इत्यादि नाना प्रकार के कर्म किया करता है पर अवधि पूजने पर चचला सा चल बसता है। मरण के पश्चात् केवल यश और अपयश की कहानी मात्र शेष रह जाती है, इस लिये किसी की मौत पर दुखित होना वृथा है। यह जीव मर कर भी माता के गर्भ में पड़ता है और तब जन्म लेकर नितान्त अबोध और असहाय अवस्था में पड़ा पड़ा रोया और हँसा करता है। समय पाकर जवानी की मजेज में जमीन आसमान एक करने का हौसला करता है परन्तु जरा अवस्था आने पर जब सब अंग शिथिल और पुरुषार्थहीन हो जाते है तब चित्तभंग और तृष्णा के ताप से उत्तापित होकर फिर चल बसता है। हे कन्त पराए के लिये कुछ माँग कर क्यों अपने प्राणों पर आपत्ति लेते हो।

परन्तु कविचन्द उसकी ओर कुछ भी ध्यान न देकर देवी की आराधना करने लगा। उसके उत्तर में उसे हुंकार शब्द सुनाई पड़ा जिससे कवि ने अपने कार्य्य की सिद्धि निश्चय जान ली और शरणागत कैमास-पत्नी के सहित राज्य महल को चला। कविचंद बिना किसी रोकटोक के राजा के पास जा पहुचा तो देखता क्या है कि ग्लानि, क्रोध और लज्जा में निमग्न राजा पृथ्वीराज एक विलक्षण ही अवस्था में बैठा हुआ है। कवि को देखते ही उसके नेत्र नीचे होगए। कविचन्द ने नजर जुड़ते ही आशीर्वाद दिया। उसने कहा हे क्षत्री-कुल-कमल सावधान! परन्तु पृथ्वीराज ने कुछ उत्तर न दिया। तब कवि बोला हम कवियों का यह धर्म नहीं है कि मुँह देखी कहें इसी से कहता हूं कि आप के इस कार्य्य से आपकी विमल कीर्ति में बड़ा बट्टा लगा। भला जो हुआ सो तो मिटने का नहीं, अब कृपा करके कैमास की लाश उसकी स्त्री को दे दीजिए। इस पर राजा ने कहा "रे कवि कैमास का कर्म मेरे कलेजे पर खटकता है" तब कविचन्द ने प्रत्युत्तर दिया कि" हे राजन् राम ने स्त्री के ही कारण रावण को मारा पर क्या गाड़ दिया क्या सुग्रीव ने बालि को गाड़ा था! क्या गौत्तम ऋषि ने महान पापी इन्द्र और चन्द्रमा को गाड़ दिया था! फिर आपने एक दासी के पीछे जो कैमास की लाश को गाड़ कर

* अंचल-दामन।

क्या सुयश पाया। इस समय न तो वंशाग्नि कुरुपति दुर्योधन है,न शकाब्द वीर विक्रमादित्य है केवल उनके यश अपयश की वार्त्ताएं वर्त्तमान है। हे राजन् इस कलंक कालिमा के कारण लोग आपको क्या कहेंगे,सो भी तो विचारिए। एक दासी के लिये क्या स्वामि द्रोह के लिये भी कैमास ऐसे बुद्धिमान मंत्री के साथ ऐसा क्रूर व्यवहार करना उचित न था। उसीने असख्य द्रव्य से आपका खजाना भरा, उसीने भोलाराय भीमदेव के हाथ से नागौर की रक्षा बचाई, सो उसकी इन बातों पर विचार करके उसकी लाश निकाल दीजिए। आप के बाल सखा मंत्री कैमास की स्त्री केवल उसकी लाश के लिये हाथ जोड़ प्रार्थना कर रही है। यह सुनकर राजा ने कैमास की लाश निकलवाए जाने की आज्ञा दी और कविचन्द ने कैमास के पुत्र का हाथ राजा को पकड़ाया। राजा ने कैमासपुत्र नरसिंह के शीश पर हाथ रख कर कहा कि कविचन्द मैंने हांसीपुर का परगना और कैमास का सब धन मान इसे दिया।

उसी दिन शुभ मुहूर्त जानकर राजा ने दर्बार होने की आज्ञा दी। राजा की आज्ञानुसार जब तक इधर दर्बारी साज सजने लगा तबतक पहरे वाले ने कैमास की लाश भी लाकर राजा के सम्मुख प्रस्तुत की। गुरुराम के बास्ते भी बुलावा गया था सो वह भी हाजिर आगए। तब पृथ्वीराज बोला कि आप दोनों अच्छे अच्छे प्रवीणपण्डित और कवि है मुझे कुछ ऐसी युक्ति बतलाओ कि मैं जैचन्द का दर्बार देख सकूं और यह भी कहो किन किन बातों से हानि और अपमान होते है और किन बातों से मूल हानि या अपमान का बदला पूरा हो सकता है? इस पर कविचन्द और गुरुराम बोले कि आपके प्रश्नों के उत्तर में हम कलियुग की राजनीति वर्णन करते हैं सो ध्यान देकर सुनिए—राजा का सब राजकाज प्रधान एवं मंत्री के बल चलता है; इस लिये राज्यमंत्री को बल, बुद्धि,तेज, और पराक्रम में राजा के समान होना चाहिए। जैसे अहंकार के कारण यज्ञादि उत्तम कर्म नष्ट भ्रष्ट हो जाते हैं, और दुःशीला स्त्री के कारण गृहस्थी सत्यानाश हो जाती है, उसी तरह अन्याय के कारण राज्य निर्मूल हो जाता है। उद्यम हीन राजा प्रातः काल के चन्द्रमा के समान मन्ददुति हो जाती है। कपट से स्नेह का, और लोभ से घर भर का सर्वनाश होता है। युद्ध के समय मोह और व्यवहार में लज्जा करना महा मूर्खता है। अधर्म को त्याग कर धर्म का आचरण करना, साधु पुरुषों की सेवा करना और स्त्री को राजनीति में भाग न देना येही नीति के तीन मुख्य गुर हैं। मादक द्रव्य के सेवन और चंचल चित्त होकर पराई स्त्री पर निमन्त्रण बुलाने से तो देह प्रेह नेह, और समस्त पुण्य पुंज स्वाहा हो जाते हैं। अन्त दान लेने से जैसे ब्राह्मण का ब्राह्मणत्व नाश हो जाता है वैसे ही परस्त्री पर चित्त जाने से क्षत्री का क्षत्रियत्व नाश होजाता है। हे राजन् फिर आप कन्नौज को जाने की बात क्या पूछते है?। जम्बू नरेश हाहुलीराय*हम्मीरराव बोला आपके पूर्वज जरासीत और माणिक राव ऐसे प्रतापी पुरुष हो गए है जिन्होंने शाह से दण्ड लेकर छोड़ा आप भी उन्ही का अनुकरण कीजिए और फिर भी शाह से दण्ड लीजिए। भिन्न भिन्न देशों के दुर्गम दुर्गों को जीत कर शत्रुओं को नीचा दिखाइए और उनके पुत्र पौत्रों को अपने की भाँति पालिए। देशकाल के अनुसार नीति का आचरण करना और स्त्रियों के बाँके कटाक्षों के वशीभूत न होना चाहिए। देख परख कर ऐसा भृत्य रखना उचित है जिससे नित नव विभूति बढ़े और प्रजा का हित हो—सेवक को ऐसा चाहिए कि यदि वह स्वामी का चित्त जरा भी दुचिता देखे तो तुरन्त उसकी शान्ति का उपाय करे। ऐसा सेवक स्वामी के लिये सदा हितकर होता है जो अपना धर्म विचार कर

---

* मूल पाठ में नाम नहीं दिया है केवल "उच्चरयो राव जम्बू नरेश" पाठ है। परन्तु आगे कन्नौज समय में स्पष्ट किया गया है कि जम्बू का राजा हाहुली हम्मीर था और कांगड़ा होशियारपुर के जिले की सारी भूमि उसी के अधिकार में थी।

कार्य्य करे परन्तु मुँह जोड़ कर उत्तर न दे। राजा की इच्छा या अन्य राज्य कार्य्य सम्बन्धी प्रबन्ध किसी पर भी प्रगट न होने दे। सब प्रकार के राजसी परिकर की पूरी जाँच परताल रक्खे और अपने मन का मर्म मन ही में रक्खे। राज्य सम्बन्धी सब लोगों के दान मान और सम्मान का उचित विचार रख कर सब को सदा प्रसन्न रक्खे और स्वामी (राजा) के साथ सदा भृंगी का कीट बना रहे। सो हे राजन् ऐसे सेवकों के साथ सावधानता पूर्व्वक राज्य कीजिए; जान बूझ कर जलती आग में हाथ डालने का साहस न कीजिए एवं उत्तम रत्न को कर्त्तव्य कर्म को त्याग कर काँच के टुकड़े पर चित्त न चलाइए।

यह सुन सुना कर पृथ्वीराज बोला कि हे कवि मैं कैमास की लास तभी दूंगा जब कि तुम मुझे जैचन्द के दर्बार में ले चलने की प्रतिज्ञा करो। राजा के ऐसे वचन सुनकर कविचन्द बोला, भला यह क्योंकर हो सकता है? तब पृथ्वीराज बोला कि हम तुम्हारे साथ सेवक बनकर चलेंगे। यह सुनते ही कविचन्द बोला, तब तो ऐन बनेगी गगा के किनारे मरने से लोक परलोक दोनो सुधरेंगे। कविचन्द के ऐसे बचन सुन कर पृथ्वीराज बोला हे कवि मरना जीना तो हुआ ही करता है मुझे तो अपनी बात की बान पड़ी है। विचारो तो सही दुनिया में इलके होकर जिए भी तो किस काम के। कैमास की लाश उसकी स्त्री को सौंपो सो वह सती हो और इधर कनौज को चलने की तैय्यारी करो। मुझे जैचन्द का दर्प चूर्ण करते हुए मरना सोहता है परन्तु यह उपहास मय जीना स्वीकार नहीं। यह कहकर पृथ्वीराज ने कैमास की लाश उसकी स्त्री को दिलाई और उसके पुत्र के सिर पर हाथ फेर कर उसे अपने पास बैठाला-जोकि उस समय केवल पांच बर्ष का था।

दूसरे दिन दो घड़ी पांच पल दिन चढ़े नियम पूर्वक दर्बार लगा। सब सूर सामन्त मुसाहब मुत्सद्दी आदि दरबारी लोग हाजिर हुए। राजा ने कैमास की मृत्यु की कथा स्वय आद्योपान्त कह सुनाई और सब सामन्तों से क्षमा प्रार्थना की। पृथ्वीराज ने काका कन्ह से कहा कि अब मुझे आप तलवार बँधाइए। अस्तु कन्ह ने वैसाही किया। उसी समय सारे नगर में भी समाचार फैल गया। घर घर की हरतालें खुल गईं और पूर्व्वत् आनन्द प्रमोद होने लगा। सब लोग जहां तहां अपने अपने धन्धे में लग कर समय बिताने लगे परन्तु कैमास की सुधि किसी को क्षण भर न भूलती थी। पृथ्वीराज का तो यह हाल था कि उसे उठते बैठते सोते जागते चारों ओर कैमास ही कैमास नजर आता था।



दुर्गाकेदार समय।

[अट्ठावनवाँ प्रस्ताव।]

अपने पाँव पर आप कुल्हाड़ी मार कर पृथ्वीराज बहुत पछताया। न तो उसे गोख के झरोखे में चैन पड़ता था और न अन्तर महल के अन्दर। उसे सोते जागते अहर्निशि कैमास की ही प्रति मूर्ति आखों देख पड़ती थी। सामन्त मण्डली के साथ चौगान खेलते समय, राजसी रसरंग का आनन्द लेते समय, जल क्रीड़ा के समय अथवा अन्य प्रकार के राजसी आहार विहार के समय जब पृथ्वीराज को सामन्त शिरोमणि सच्चे सखा कैमास की सुधि आजाती तो उसके कलेजे पर लकीर हो जाती थी। तिस पर भी विशेष बात यह थी कि थी अपनीही करतूत कहै तो किससे कहै "अपनी जाँघ उघार कर आपही जल मरना था" इस लिये हाय साँस लेकर मनही मन मसूस कर रह जाता था।

परन्तु राजा की इस अवस्था से उसके सामन्त लोग कदापि अनभिज्ञ न थे। अतः एक दिन कन्ह ने जैनराव प्रमार, प्रसंगराय खीची, चन्द्रसेन पुंडीर, गोयन्द राव गहलौत, लोहाना आजानबाहु, रामराय बड़गुजर इन सब लोगों से कहा कि भाइ कुछ ऐसी तदबीर विचारनी चाहिए जिसमें राजा का मन बहले। निदान सब की यही सलाह पक्की हुई कि राजा को शिकार खिलाने के लिये ले चलना उचित होगा। तदनुसार कन्ह ने तो पृथ्वीराज को साधा और इधर शिकारी सामान दुरुस्त किए जाने लगे। नियमित तिथि को अपने सब बीर बाँकुरे सामन्तों और कतिपय सनाह सेना के साथ पृथ्वीराज शिकार खेलने चला। उसके साथ में कुछ हथनार, उटनार, और बानगीर अर्थात् अग्निबाण चलाने वाले भी थे। उसके साथ में नौ सौ बड़े तेज और शिक्षित घोड़े और ताजी घोंटा झब्बा बदाही, पहाड़ी और शेरदहा आदि अनेकानेक जाति के नौ सौ कुत्ते थे जिनमें से पाँच सौ कुत्ते तो ऐसे थे जिनके आगे से शेर भी नहीं जा सकता था और दौड़ में वे पवन से बाजी लगाने को तय्यार थे। उनके पैरों के तलुए, मुख और नाक के अग्रभाग इँगुर से लाल और बड़े मुलायम थे। वे सब बीस बीस या सोलह नख वाले थे और झब्बो कुत्ते गुच्छेदार पूँछ के लच्छे को उठाकर मचलते भालू से चलते हुए बड़े भले मालूम देते थे। उनके दाँत और नख बड़े ही तीक्ष्ण थे, बाजू, सीना और नितंब भारी थे, कपोल मुलायम, माथा चौड़ा और कमर पतली थी और उनकी आँखों से साक्षात् सिंह का सा तेज जाज्वल्यमान होता था। उनकी आँखों पर जरतारी पट्टे चढ़े थे और प्रत्येक कुत्ते को दो दो मजबूत जवान साधे हुए थे। इसी प्रकार सामन्तों के भी निज के दो दो चार चार कुत्ते थे। इसके सिवाय ढाई सौ चीते थे जो कि

---

(१) घुड़ सवारी का पोलो (Polo) का खेल चौगान का ही रूपान्तर है।

(२) सनाहसेना अंग रक्षक सिपाही (Body guard

---

(३) एक तीन हाथ लम्बे बाँस के टुकड़े में पेंदे की तरफ एक चमड़े का थैला तांत से कसा जाता है। इस थैले की लम्बाई एक फुट से लेकर डेढ़ फुट तक और गोलाकार मुह की चौड़ाई छः से तीन इञ्च तक होती है। इसमें करीब एक सेर बारूद बाँस बाँस कर भरी जाती है और ऊपर से काँचे, लोहे, सीसे और काँच के छोटे छोटे टुकड़े भर कर मुँह बन्द कर दिया जाता है और बाँस की नली के भीतर से एक बारूद का भीगा धागा आर पार लगा रहता है। बाँस के दूसरे सिरे पर एक झण्डी रहती है। बारूद के धागे में आग देने से थैली की बारूद अनार छोड़ने की तरह शब्द करके लौ छोड़ने लगती है। जब जोर पर आजाती है तो चलाने वाला बाँस को हाथ से छोड़ देता है उस समय यह हाथी को भी बेध डालता है और जहाँ तक उसका थैला पट नहीं पड़ता तहांतक सीधा जाता है फिर आपही आप बड़े जोर से चक्कर खाने लगता है। थैले के छर्रे मील भर पर्य्यन्त विथर कर सैकड़ों आदमियों को बेकाम कर देते हैं। आगे यह किले और मैदान दोनों की लड़ाई के काम में आता था। इसी को कुहक बाण भी कहते हैं।

बहेल पर चलते थे। घोड़ों की पीठ पर चलने वाले तीन सौ श्रीगांप, दो सौ फन्दैत हिरन और जुर्रा, बाज, कुही, खेदा, तरिया आदि अनेक प्रकार के शिकारी पशु पक्षियों को साथ में लिए हुए राजा पृथ्वीराज एक गहन और विषम बन में शिकार खेलने लगा।

शहाबुद्दीन के कलेजे पर पृथ्वीराज तो अहर्निशि काँटा सा खटकता था। उसके चित्त पर निरन्तर यही चिन्ता सवार थी कि कब अवसर पाऊँ और पृथ्वीराज को धर दबाऊँ। इसी चिन्ता में उसका असन बसन सब भूला हुआ था। एक दिन उसने अपने एक चतुर चर को आज्ञा दी कि तू दिल्ली जाकर समाचार ला कि इस समय पृथ्वीराज का क्या हाल है। उसी के हाथों एक पत्र धर्म्मायन को भी भेजा कि वह वहां का सब विधि वार हाल लिख भेजे। दूत ने दिल्ली जाकर वह पत्र धर्म्मायन को दे दिया और धर्म्मायन ने तत्क्षण ही वहां का सारा हाल लिख कर उत्तर का पत्र उसी दूत के हवाले किया। दूत ने जब ग़ज़नी पहुँच कर वह पत्र शाह के सम्मुख पेश किया और पेशकार ने उसे पढ़कर सुनाया तो सारे अमीर उमरावों के चेहरे खिल पड़े और शाह के भी सूखे हुए होठों पर लाली झलक आई।

एक दिन रात्रि के समय केदार कवि ने अपनी इष्ट देवी चण्डी का ध्यान धर कर सम्मुख दर्शन पाने की प्रार्थना की। आधी रात्रि के समय भगवती ने अन्तरिक्ष में प्रगट होकर पूछा तुझे क्या चाहिए? तब केदार बोला कि माता! मैं कविचन्द से विद्यावाद में विजय पाना चाहता हूं। इसपर भगवती ने उत्तर दिया कि कविचन्द और तुम दोनों मुझे एक से प्रिय हो; अंतर केवल इतना है कि वह तुम्हारा बड़ा भाई है और तू उससे छोटा है। इस लिये कविचन्द के सिवाय और तू जिसे चाहे परास्त कर सकता है। तब पुनः कवि ने विनीत भाव से कहा कि वास्तव में मेरी पृथ्वीराज के दर्शन करने की इच्छा है, यदि आप की आज्ञा हो तो बादशाह से सीख माँगूं। तब देवी ने कहा "एवमस्तु" शाह तुझे रुख़सत देगा; तुम प्रसन्नता पूर्वक पृथ्वीराज से मिलो वह तुम से सब भाँति प्रसन्न रहेगा और सौ घोड़े तीस हाथी और बहुत सा धन रत्न विदाई में देगा। इस समय पृथ्वीराज पानीपत के जंगल में शिकार खेल रहा है।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही केदार कवि सानन्द शैय्या से उठा और नित्यक्रिया से निश्चिन्त होकर दरबार को चला। शाह के सम्मुख पहुँच कर उसने सादर सलाम किया; और अपने आसन पर बैठ गया। शाह के दर्बार में बड़े बड़े डील डौल वाले रंग बिरंगे तेजस्वी मीर मुसाहब यथास्थान डटे बैठे थे। अवकाश पाकर केदार कवि ने कहा "यदि सीख मिले और आज्ञा हो तो मैं दिल्ली जाना चाहता हूं यह सुनते ही राज्यमंत्री नत्तार खां अत्यन्त कुपित होकर बोला 'रे भाट तू हमारा नमक खाकर एक ऐसी जगह माँगने को जाना चाहता है जहाँ हम बार बार बंधन में पड़े। एक जानी दुश्मन से मिलना और माँगना तो दूर रहा जहाँ ज़रा भी हक़नलफ़ी हो जाय उस तरफ आँख उठा कर भी देखना मुनासिब नहीं। मुमकिन है कि वह तुझे बहुत इनाम दे लेकिन इसमें उसकी तारीफ और हमारी तौहीन है। अगर अब भी इरादा मुस्तकिल हो तो जाओ। शहाबुद्दीन भी हँसकर बोला "शाबस कविचन्द को कि जिसने ख्वाब में भी इस तरफ़ आने का इरादा न किया बादशाह के बचन सुनते ही केदार कवि की तो साँप छछुन्दरी की सी गति हो गई चुपचाप शाह के मुख की ओर देखता रह गया। इसी तरह जब एक घड़ी भर बीत गया तब शहाबुद्दीन ने कहा मुझ से क्या पूछते हो जहाँ तुम्हारा जी चाहे जाओ।—

दोहा।

तिन तें तुस तें तूल सें, फेन फूल तें जानि।
हौंम जंपे गौरी बरुअ, मंगन है हरुआन॥

(१) सवारी के बोझ खुशी हुई हलकी बेल गाड़ी।
(२) मूल पुस्तक में दुर्गा कवार पाठ है।

शाह के ऐसे बचन सुन कर केदार कवि दर्बार से चल कर घर पहुँचा और उसने उसी समय दिल्ली को प्रस्थान करने की तय्यारी की। चलते समय केदार कवि के पिता ने कहा "बेटा यह बात स्मरण रखना कि जिसके पास जाता है वह दाता तो बड़ा है परन्तु अपने स्वामी का शत्रु भी है जैसा कि शाह स्वयं कह चुका है। निदान उच्च अभिलाषाओं से परिपूर्ण अत्यन्त मग्न मन होता हुआ केदार कवि प्रख्यात उदार सोमेससुत राजा पृथ्वीराज का दर्बार देखने को चला। पड़ाव दर पड़ाव चलता हुआ केदार कवि ढाई महीने में पानीपत आन पहुँचा।

यहाँ पृथ्वीराज एक अति उत्तंग पर्व्वतों से परिवेष्टित, सुन्दर तरुलताओं से आच्छादित झरनों के झिलमिले जल से परिपूर्ण एक घने जंगल में आखेट करता था। वहां उस दिन के शिकार में एक सौ अकेला * वराह, छै सौ साधारण सूअर, दो सौ मृग और और भी नाना प्रकार के अगनित पशु पक्षी मारे गए थे, अतः एक सुन्दर वृक्ष की छाया में बैठा हुआ पृथ्वीराज अपने सेवकों और सखाओं के अघन्य कौशल के प्रतिफल का निरीक्षण परीक्षण कर रहा था। दैवयोग से एक घनी झाड़ी में से अकस्मात् एक सिंह निकल पड़ा। उस समय ऐसा मालूम हुआ मानो आकाश या पृथ्वी को फाड़ कर नृसिंह स्वरूप का आविर्भाव हुआ हो। उसके बड़े बड़े गाल और नोंकदार दाँतों के बीच लपलपाती हुई लाल लाल जीभ चञ्चला सी चममाचती थी, उस के दोनों नेत्र बृहस्पति और शुक्र के से तारे दमदमा रहे थे वह विकराल सिंह एक बारगी गजकुमार पर झपटा; यह देख कर कुमार के पास में खड़े हुए खवास ने सिंह के शीस पर सिंगी का वार किया परन्तु वार खाली गया और सिंह ने उसे धर लिया लेकिन उसी क्षण में रेणु कुमार ने तलवार का एक ऐसा हाथ मारा कि सिंह बीच से काटकर दो हो गया। पृथ्वी पर पड़े हुए मृत सिंह के खंड ऐसे मालूम होते थे मानों कृष्ण भगवान ने कंस की मखशाला में दो मल्लों को पछाड़ा हो, अथवा रामचन्द्र ने रावण के शीस छाँट कर डाल दिए हों। इस भयानक घटना के संघटित होने पर नरनाह काका कन्ह, जामराय यादव और चन्द पुंडीर ने पृथ्वीराज से कहा कि हम लोग बहुत थोड़े जने हैं और यह पहाड़ी स्थान महा भयानक है इस लिये यहा से चल कर पानीपत के मैदान में डेरे डाले जावें और वहीं मैदानी शिकार खेला जावे। यह बात राजा ने भी स्वीकार करली और वहाँ से उसी समय कूच होकर पानीपत के मैदान में डेरे आन पड़े।

पानीपत के मैदान में पड़ाव पड़ जाने पर पृथ्वीराज ने गोठ की सामग्री रची जाने की आज्ञा दी, तदनुसार नाना प्रकार के पकवान और भोज्य भक्ष चर्व्वण आदि अनेक व्यंजन बनाए गए। राजा पृथ्वीराज अपने सखा सामन्तों सहित एक बट की छाया में बैठा हुआ था, जहाँ तहाँ थाले सजाए जा रहे थे कि तब तक उक्त कवि केदार भी वहीं आ उपस्थित हुआ उस दिन दिन के समय भी कवि के साथ में सात प्रज्ज्वलित दिये एक हाथ में नसैनी और एक हाथ में अंकुश थी। उसके शीश पर सोने का छत्र भी था जिस पर एक सर्प का चिन्ह खचित था। भांड भाट बहुरूपिए इन लोगों की रहन सहन और पोशाक का क्या ठिकाना ये लोग हवा के माफिक आडबर प्रिय हुआ करते है

परन्तु इसमे क्या एक सच्चे कवि की पहिचान तो यह है कि जिस समुद्र रूपी अगाध वाणी

---

* मूल पाठ "एकल" जो सूअर बचपन से ही अपने झुण्ड से अलग रहने लगता है उसे एकला या अकेल कहते हैं। ऐसे ही कोई कोई भारी सूअर जो पूछ से कान पर्य्यन्त बारह विलम्ब लम्बा होता है उसे वराह या बाराह कहते हैं।

(१) आजकल इसे माऊ भी कहते हैं यह हिरण के सींगों की दोनों कांगनी बाहरी और मूल इकट्ठा जोड़ कर बनाया जाता है। पकड़ की जगह एक छोटी सी पीतल की डाल भी लगा दी जाती है। ढाल और मार दोनों काम देता है।

में नित नव उक्तियों की तरंगे उठा करती हों उक्ति रूपी जल सदा तलातल ठिला रहता हो और तली में तर्क वितर्क रूपी नग रहते हों। ऐसे रत्नों की परख केवल वेही सच्चे जौहरी कर सकते हैं जो काव्य रूपी कला विकला शुभाशुभ अक्षर और चौरासी प्रकार के रूपकों का ज्ञान रखते हों। अर्थात् वे पुरुष जो काव्य रचना में स्वयं प्रवीण हों। गण अगण लघु दीर्घ उक्ति युक्ति सब भाँति के शुभाशुभ का विचार कर सरल और सरस वाणी का उच्चारण करने वाला पुरुष ही कवि की उपाधि पाने योग्य है।

केदार कवि ने पृथ्वीराज के संमुख आकर आशीर्वाद दिया। उसने कहा "हे इन्द्रप्रस्थ पति आजानबाहु चालुक्या रूपी तूल के लिए प्रज्ज्वलित ज्वाला, परिहारों को परास्त करने और जैचन्द के प्रबल प्रताप रूपी चन्द को मन्द दुति करने वाले, वेद कथित राजसी आचार विचारों में चतुर और समस्त धर्म्मों में धुरंधर। हे शत्रुओं के शाल और शाह को सदा बेहाल रखने वाले चाहुआन कुल शिरोमणि अद्वितीय तेजस्वी राजा पृथ्वीराज तेरी जै हो! राजा विक्रमादित्य के पश्चात् तू ही एक याकेवाला हुआ है, मैं तेरे दान, मान और सम्मान का बखान सुन कर तेरे दर्शनों को आया हूं। हे पृथ्वीतल के उग्रवीरों को राहु के समान ग्रास करने वाले वीराधि वीर शूर सामन्तों के शिरोमणि सुलतान शहाबुद्दीन को बार बार बाँध कर छोड़ देने वाले, हिन्दुआन की हद रखने वाले, छत्रपति महाराज पृथ्वीराज तेरी सदा जै हो॥

केदार कवि की ऐसी वाणी सुनकर सब लोग प्रशन्न हो गए। पृथ्वीराज का मक्खन सा मुलायम चित्त तो पिघल कर घी हो गया, राजा की आज्ञानुसार प्रतिहारी यानी नकीब ने कवि को उचित आसन दिया। भोजन प्रसाद होते रहे, दोनों कवि परस्पर सरस वाणी उच्चारण करते रहे और सब सभासद प्रसन्न चित्त से सुनते रहे। दूसरे दिन फिर से दर्बार जमा। केदार कवि भी आ उपस्थित हुआ उसने आते ही पृथ्वीराज से कहा कि मैं श्री दर्बार के कवि कविचन्द से विद्यावाद करना चाहता हूं। तब तक कविचन्द भी आ पहुँचा और राजा को आशीर्वाद देकर यथास्थान स्थानापन्न हुआ। पृथ्वीराज ने कहा इस समय तुम दोनों बरदाई कवि उपस्थित हो, मेरी इच्छा है कि तुम लोग अपने अपने इष्ट का स्मरण कर परस्पर विद्यावाद की और अपने अपने काव्य चातुर्य्य की चासनी चखाओ। निदान कविचन्द बोला हे राजन् जिसे लोग इन्दु चन्द या विधु कहते हैं वह मेरे जान तो मनसिज स्वरूपी बाज का नाल या नागफनी नायक के तीर की गांसी है। कभी कभी शृंगार समर की तलवार या दिशारूपी सुन्दरी के नख की उपमा भी जँचती है कभी मालूम होता है कि मनमथ के चक्र का टुकड़ा, नवोढ़ा वधू के अधर का बिम्ब, विरह रूपी सिंघ का नख अथवा कामिनी के बांके कटाक्ष का काँटा है। इस पर केदार कवि ने कहा पुराने पत्र झरते हैं नई कोंपें अकुराती हैं डहडही डाली लह लहाती है केकी कीर कोयल कलापते हैं जहाँ तहाँ भ्रमर भी अलापते है और त्रिविध बयार बहती है इस प्रकार से कभी कभी बिना बसन्त ऋतु के भी बसन्ती आनन्द आस्वादन करने में आता है। इसके उत्तर में कविचन्द ने एक छन्द पढ़ा जिसका आशय यों है "सत्य है जब ऐन वयःसन्धि अवस्था प्राप्त होती है तो मैसव रूपी सिकदार का अधिकार स्वयं घटने लगता है। उसकी शिथिर स्वरूपी शासन प्रणाली में एक दम लौट फेर हो जाता है और यौवन काल रूपी राज्य में सर्वत्र (अंग प्रत्यंग में) महाराज मकरकेतु की दुहाई फिर जाती है। कमल कली से कुचों पर भ्रमर सी श्याम आभा उभड आती है और दीप शिखा सी छवि पर रसिक जन पतिंगे से प्राण प्रवारने लगते हैं (दोनों कवियों की मूल कविता का जो मर्म है वह मूल छन्दो से मालूम हो सकता है) कुकवि लोगों की कविता टूटे हुए हार के मोतियों की भाँति है जिस का न ओर है न छोर परन्तु सुकवियों का

काव्य सुघड़ता से गूंथे हुए सुढार मोतियों के हार की भाँति है उसे जिस ओर से देखिए सुन्दर मालूम होता है।

इस प्रकार से किंचित काव्य चातुर्य्य की परीक्षा हो चुकने पर दोनों कवि अपनी अपनी तांत्रिक कलाएँ प्रगट करने को उद्यत हुए। केदार कवि ने कविचन्द से कहा सावधान हो कर मेरी कला देखिए। यों कह कर उसने एक सौ छिद्र वाला मिट्टी का घड़ा दरबार के बीच में रख दिया और ज्यों ही मंत्र पढ़ उसके मुँह पर वस्त्र डाला कि उस के प्रत्येक छिद्र में से भास्वरूपमान ज्वालाएँ प्रज्वलित होने लगीं और प्रत्येक ज्वाला में से अनेक प्रकार के छन्द प्रबन्धों की ध्वनि प्रगट होने लगी। घड़े के मुँह से तो छओ शास्त्रों और वेद की ऋचाओं का उच्चारण स्पष्ट होने लगा। परन्तु ज्योंही कविचन्द ने मंत्र पढ़ा कि उस घड़े में से एक हुंकार शब्द उत्पन्न हुआ और अग्नि शिखा के स्थान में जलधारा द्रवी भूत होने लगी। केदार कवि ने कहा 'हे चन्द मैं एक मास के बालक को मुँह बुला सकता हूं, इस पर कविचन्द ने उत्तर दिया कि मैं हाल के जन्मे बच्चे से छओं भाषाओं का उच्चारण करा सकता हूं। यह सुनते ही केदार कवि ने सम्मुख खड़े हुए राजा के घोड़े पर अक्षत पढ़ कर मारे जिस से उसने सिर झुका कर राजा को आशीर्वाद दिया परन्तु जब चन्द कवि ने उसी घोड़े के सिर पर एक पुष्प रख दिया तो उसने एक आशीर्वादात्मक गाथा पढ़ी जिसका अर्थ यह है—जो महाभारत में पारथ के सारथी हुए जिन्होंने गर्भ में परीक्षित की रक्षा की और जिन्होंने प्रल्हाद भक्त को भी बचाया वेही भगवान कृष्णचन्द्र, हे पृथ्वीराज, आप की रक्षा करें *। इस पर केदार कवि ने एक ऐसा मंत्र पढ़ा जिससे एक बड़ी भारी चट्टान अंगम की नाईं द्रुत वेग से चलने लगी। तब कविचन्द ने मंत्र द्वारा अपनी अंगूठी मारकर चट्टान की गति बन्द कर दी, कविचन्द ने अपनी अंगूठी वहां से वापिस भी लेनी चाही परन्तु यह नहीं हो सका केदार कवि ने कविचन्द को मंत्र बल को काट दिया। तब कविचन्द ने एक मंत्र पढ़ कर जो फूंक मारी कि सारी चट्टान पानी होकर बह गई और उसकी अंगूठी हाथ में वापिस आगई। कविचन्द की इस कला पर केदार कवि ने एक विलक्षण कला की। वह यह कि उसने एक लड़के का धड़ से सर जुदा कर दिया। सो मुण्ड तो नाना प्रकार के छन्द प्रबन्ध पढ़ने लगा और धड़ इधर उधर कल्लोल करता हुआ फिरने लगा। यह अद्वितीय अभिनय देख कर समस्त दर्शक मंडली भौचक सी रह गई और कविचन्द स्वयं सहम गया। उसी समय अंतरिक्ष में एक वाणी सुनाई दी कि हे कविचन्द तू मुझे विशेष प्रिय है तेरी जिव्हा से जो कुछ उच्चारण होता है उसे साक्षात् मेरी ही वाणी समझना चाहिए। मैं और कवियों के कंठ में तो कला विकलाओं से वास करती हूं पर तेरे में सम्पूर्ण कलाओं से रहती हूं, तू सदैव विजयी है। यह सुनते ही कविचन्द का चेहरा तो चमक उठा, परन्तु केदार कवि कुछ मन मलीन हुआ। तब समस्त दर्बारियों सहित पृथ्वीराज ने कहा "केदार कवि हम तुम्हारे काव्य चातुर्य्य और तांत्रिक प्रयोग दोनों से खूब प्रसन्न हुए आपकी समस्त विद्याएं सराहनीय हैं और आप एक सुकीर्तिवान कवि हो।

कविचन्द ने सरस्वती का ध्यान धर कर स्तुति की कि हे भगवती इस संसार की उत्पादिनी और लयकारिणी तू ही है। मुक्ति की आशा से यद्यपि अनान्य सब देवी देवताओं की सेवा पूजा की जाती है परन्तु सब देवों का सार स्वरूप एक तेरी ही ज्योति है। संसार सुख की सामग्री के द्रव्य पदार्थों की देने वाली अष्टसिद्ध नवनिद्धि तेरी ही कलाएं हैं. ससार के समस्त प्रपंच माया मोहादिक तू ही है और सबों की अंत सूचक सीमा भी तू ही है।

* गाथा। जिन सारथ साज पठ्यो. जिन गर्भी परीक्षित रक्षा उधरया। जिन प्रह्लाद पढ़ायो सो करो रक्षा राज पृथिराज॥

सूचना ।

—o—

निम्न लिखित पुस्तकें "सेक्रेटरी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी" को लिखने से मिल सकती हैं।

	मूल्य	डाकव्यय
मलिक मुहम्मद की अखरावट	।=)	॥)
कविवर बिहारीलाल–(बाबू राधाकृष्णदास रचित)	=)	॥)
हिन्दी भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास (बाबू राधाकृष्णदास रचित)	।)	॥)
समालोचना–(पण्डित गंगाप्रसाद अग्निहोत्री द्वारा अनुवादित) ...	=)	॥)
समालोचनादर्श–पद्य–(बाबू जगन्नाथ दास रचित) ...	=)	॥)
कर्तव्याकर्तव्यशास्त्र– (पण्डित नारायण पांडे रचित) ...	॥)	–)
विभूचिका चिकित्सा	।)	॥)
हरिश्चन्द्र–पद्य–(बाबू जगन्नाथ दास रचित)	=)	॥)
भगवद्गीता–(बाबू गदाधरसिंह द्वारा अनुवादित) ...	।–)	॥)
उथेलो–(बाबू गदाधरसिंह द्वारा अनुवादित)	=)	॥)
नागरीप्रचारिणी पत्रिका (सभा द्वारा सम्पादित) ११ भाग छप चुके हैं (आठवां भाग नहीं है) मूल्य–प्रति भाग	१)	–)
हिन्दी लेकचर–(बाबू हरिश्चन्द्र रचित)	–)	॥)
ध्रुवदास की भक्तनामावली, टिप्पणी सहित	॥=)	–)
सबलमिश्र की चन्द्रावती	।–)	॥)
सूदन कवि का सुजानचरित्र	२)	=)
लाल कवि का छत्रप्रकाश	१।)	–)
नन्ददास की रासपञ्चाध्यायी	।=)	॥)
प्राचीन-लेख-मणि-माला–१ भाग (बाबू श्यामसुन्दर दास लिखित) ...	१)	–)
अशोक का जीवनचरित्र (ठाकुर सूर्यकुमार वर्म्मा लिखित) ...	।)	॥)
नेपाल का इतिहास (पण्डित नारायण पांडे लिखित)	।–)	॥)
पृथ्वीराजरासो–पहिला भाग (समय १–११)	४)	।)
„ दूसरा-तीसरा भाग (समय १२–५४)	१०)	॥)
कुमारसम्भवसार (पण्डित महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा अनुवादित) ...	=)	॥)
शीधर का जंगनामा	।।।)	–)
धम्मपद (ठाकुर सूर्यकुमार वर्म्मा लिखित)	॥)	–)
सभा के पुस्तकालय की सूची	=)	॥)
प्रणोविज्ञान (पण्डित गङ्गापत जानकी राम दूबे लिखित)	॥)	–)
चन्द्रशेखर का हम्मीर हठ	॥)	॥)

महिलामृदुवाणी (मुंशी देवीप्रसाद लिखित) ...	...	१) -)
दादूदयाल की बानी ...	...	... १॥) =)
कवि नूरमुहम्मद की इन्द्रावती १ भाग ...	..	... १॥) =)
यूरोपीय दर्शन (पण्डित रामावतार पांडेय लिखित) ...		... ॥) -)
प्रबोधचन्द्रिका		... ॥) -)
विरहलीला—आनन्दघन कृत ...	...	... =))॥
दादूदयाल का सबद		... १) =)
ओधराज का हम्मीररासो	...	... २) ६)
सरल व्यायाम (बाबू कालिदास लिखित) ...		... =) -)
सुघड़ दर्जिन (बाबू ठाकुर प्रसाद लिखित) ...		... ॥) -)
पद्माकर कृत हिमतबहादुर विरदावली ...		... ॥=))॥
कवितविनोद		... १) =)
नवीन दृष्टि में प्रवीन भारत ...	...	... १) -)
गीतावली		... ।))॥
योगदर्शन		... २) -)
गुरु गीता		... ।))॥
रामचरितमानस		. ८) ॥)

नोट—ऊपर लिखी पुस्तकों में से अन्त की ७ पुस्तकों को छोड़कर शेष पुस्तकें आधे मूल्य पर काशी नागरीप्रचारिणी सभा के सभासदों को मिल सकती हैं। अन्तिम पुस्तक का मूल्य सभासदों के लिये ६॥) रु० है।

Nagari-Pracharini Granthmala Series No. 4-15

THE PRITHVÍRÁJ RÂSO

OF

CHAND BARDÂI,

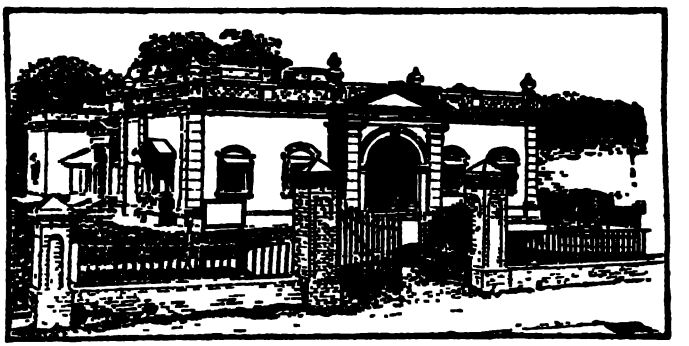
EDITED

BY

Mohanlal Vishnulal Pandia, & Syam Sundar Das, B. A.

With the assistance of Kunwar Kankaiya Ju.

CANTO LXI. *(Contd.)*



महाकविचंद बरदाइ

कृत

पृथ्वीराजरासो

जिसको

मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या और श्यामसुन्दरदास बी. ए. ने

कुँअर कन्हैया जू की सहायता से

सम्पादित किया।

पर्व्व ६१।

PRINTED BY THAKUR DAS, MANAGER, AT THE TARA PRINTING WORKS, AND PUBLISHED BY THE NAGARI-PRACHARINI SABHA, BENARES.

1908.

मूल्य १।)] Issued 26th December 1908. [*Price Re. 1/4/.*

सूचीपत्र ।

—:o:—

(६१) कनवज्ज समय (अपूर्ण)	....		पृष्ठ १६७२ से २८०० तक
रासोसार	....	....	„ २३१ „ २६२ „

—o—

सूचना ।

—:o:—

रासो का दूसरा समय पुनः छपकर तय्यार है । जिन महाशयों के पास वह न गया हो वे कृपा कर पत्र लिखकर मँगा लें ।

गौरीशंकर प्रसाद,
स्थानापन्न मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा,
काशी ।

दोनों सेनाओं का घमासान युद्ध होना और मुस्लमानी सेना का परास्त होना।

हहक्किय चंपिय सूर सुधीर । महा भर सामंत विश्रम बीर ॥
महा बर चंपिय चौकिय काल । ठिल्लै भर भग्गिय मिच्छ बिहाल ॥
छं० ॥ ६३५ ॥

कहंकह सद्द सु मच्चि करार । सुन्यौ सुरतान भजे दल भार ॥
बजे मुष मारि चँपे चहुआन । लरे मचि अप्पह मेछ अपान ॥
छं० ॥ ६३६ ॥

हवक्कहि धक्कहि मेलहि मंग । पटा भर भार विडारिय अंग ॥
वहै किरमाल सुचाल सुभेद । मनों सुभ सार करच्चत छेद ॥
छं० ॥ ६३७ ॥

परे सिर नंचत उट्ठक मंध । करे रिनयंड सु धार विमंद ॥
पलक्कत ओन नदी जिम पाल । परे गज बाल भरे रन ताल ॥
छं० ॥ ६३८ ॥

करच्चत केस सु एकहि एक । परे रन रिंघहि तुट्टि सुटेक ॥
तरफ्फत उट्ठन लग्गत कंठ । सुछुट्टिय घाव करै दिठ मुंठि ॥
छं० ॥ ६३९ ॥

लरक्कर लग्गहि कंठ करौति । मनों मतवार लरै रस मौति ॥
किनक्कहि बाजिय बीर सुभार । [1]फिरें गज भीर करंत चिकार ॥
छं० ॥ ६४० ॥

लष्यौ पतिसाह सु चंद पुंडीर । दयौ हिय मेल भगी भर भीर ॥
भग्यौ रन सेन सहाव सचस्सि । निकस्सिय सक्कि दिसा [2]अवदस्सि ॥
छं० ॥ ६४१ ।

रह्यौ पतिसाह इक्कल्लो बीर । भयो जिम मौन गयै सर तीर ॥
धरी गर सिंगनि चंद पुंडीर । भयो पतिसाह सु बंधिय बीर ॥
छं० ॥ ६४२ ॥

(१) प्र. कृ. को.-फेरें। (२) प्र. कृ. को. अवदस्सि।

चंद पुंडीर का शाह को पकड़ लेना।

दूहा ॥ भाग्यौ सेन साहाब गिरि। इक्कलौ गहि सार ॥
गह्यौ चंद पुंडीर परि। हय कंधहि दिय डारि ॥ छं० ॥ ६४३ ॥
भगे सेन साहाब रन। उग्गि सूर सुविहान ॥
अठ सहस धर मीर परि। पंच कोस रन थान ॥ छं० ॥ ६४४ ॥

पृथ्वीराज का खेत झरवाना और लौट कर दर पुर में मुकाम करना।

सोधि सु रन प्रथिराज पहु। 'दरपुर कौन मुकाम ॥
लुट्टि रिद्धि चिय गोस धन। जुरि जस लह्यौ ठाम ॥ छं० ॥ ६४५ ॥

पृथ्वीराज का शाह से आठ हजार घोड़े नजर लेना।

दंड कियौ सुरतान सिर। अट्ठ सहस हय सब्ब ॥
घत्ति सुपासन पट्ट घर। गज्जिय पिथ्थ सु गब्ब ॥ छं० ॥ ६४६ ॥

कविचंद का कहना कि पृथ्वीराज ने इस प्रकार शाह को परास्त कर आप का राज्य बचाया।

इम गज्जनवै गंजि पिथ। जस लिज्यौ षल मारि ॥
सरबर सक्क संभरि धनी। कोइ न मंडौ रारि ॥ छं० ॥ ६४७ ॥

जैचन्द का कहना कि पृथ्वीराज के पास कितना औसाफ है।

कितक सूर संभरि धनी। कितक देस 'दल बंधि ॥
कितक हथ्थ रन अग्गरौ। इसि रूप बूझयौ चंद ॥ छं० ॥ ६४८ ॥

कवि का उत्तर देना कि उनकी क्या बात पूछते हैं पृथ्वीराज के औसाफ कम परंतु कार्य्य बड़े हैं।

(१) दरपुर (या) हरपुर। (२) ए. सू. को.-चन्द।

कवित्त ॥ कितक सूर संभरि नरेस। अंदेस कहत करि ॥
कितक देस बल बंधि। [1]राव रावत्त छचधर ॥
कितक को म मेंगल मदंध। तोपार भार भर ॥
कितइक गहि करिवार। कलह विहारि बीर भर ॥
कित इक मौज विदरन बहत। अति पर आगम जानियै ॥
उग्गो न अरक तित्तह लगै। तिमिर तितें बल मानियै ॥
छं० ॥ ६४९ ॥

पृथ्वीराज का पराक्रम वर्णन।

दूहा ॥ सूर जिसो गयनह उवै। दल बल मारन आस ॥
जब लग अरि कर उठ्ठवै। तब लग देय पचास ॥ छं० ॥ ६५० ॥

कवित्त ॥ सूर तेज चहुआन। हनत गज कुंभ झार षग ॥
विय विहंड होइ षंड। परत धर रत्त धार जग ॥
टल बल धरै न आस। तेज आजानबाह बर ॥
सपत नाग सर पार। तार [2]कोवंड तजै कर ॥
मत्त दुरद रद मह वर। पारि झारि मथ्थै धरनि ॥
विमगा बिकार उप्पारि पटु। मालकार नंषे करनि ॥छं०॥६५१॥

जैचन्द का पृथ्वीराज की उनिहार पूछना।

दूहा ॥ विहसत कवि बुल्ल्यौ बयन। दुह लच्छन छिति है न ॥
मूअ सु मूरति लच्छिनह। को दिषवौं पहु नेंन ॥ छं० ॥ ६५२ ॥

मुकट बंध सब भूप हैं। सब लच्छिन संजुत्त ॥
कौन बरन उनहार किहि। कहि चहुआन सु उत्त ॥छं०॥६५३॥

कवि चन्द का पृथ्वीराज की आयु बल बुद्धि और शकल सूरत का वर्णन करके सच्चे पृथ्वीराज को उनिहारना।

कवित्त ॥ बत्तीसह लच्छिनह। बरस छत्तीस मास छह ॥
इस दुज्जन संग्रहत। राइ जिस चंद सूर ग्रह ॥

(१) ए. कृ. को. राह। (२) ए. कृ. को.-कोदंड।

एक छुटहि महिदान । एक छुट्टहिति दंड भर ॥
एक गहहि गिर कंद । एक अनुसरहि चरन परि ॥
चहुआन चतुर चावहिसहि । हिंदवान सब हथ्थ जिंहि ॥
इम जंपै चंद वरदिया । प्रथीराज उनहारि इहि ॥ छं०॥६५४॥

इसौ राज प्रथिराज । जिसौ गोकुल महि कन्ह ॥
इसौ राज प्रथिराज । जिसौ पथ्थर अहि वन्नह ॥
इसौ राज प्रथिराज । जिसौ अहँकारिय रावन ॥
इसौ राज प्रथिराज । राम रावन संतावन ॥
बरस तीस छह अग्गरौ । लच्छिन सब संजुत्त गनि ॥
इम जंपै चंद बरदिया । प्रथीराज उनहारि [1]इनि ॥ छं०॥६५५॥

जैचन्द का कुपित होकर कहना कि कवि वृथा बक बक करके क्यों अपनी मृत्यु बुलाता है।

दिष्पि नयन कमधज्ज । नरेस अंदेस दुट्ठ वर ॥
दंग दहन जीरन जरंत । परचंत अंत पर ॥
श्रुत्ति अरुन मुष अरुन । नेन आरत्त पत्त सम ॥
पानि मौंडि दवि अधर । दंत दब्बंत तेज तम ॥
कविचंद बहुत बुल्लहु बयन । छित्ति अछिति पचौ कवन ॥
चल दल समान रसना चपल । विफल बाद मंडौ मवन ॥छं०॥६५६॥

पृथ्वीराज और जैचंद का दूर से मिलना और दोनों का एक दूसरे को घूरना।

दूहा ॥ देषि थवाइत थिर नयन । करि कनवज्ज नरिंद ॥
नयन नयन अंकुरि परिय इक थट्ट दोइ मयंद ॥ छं० ॥ ६५७ ॥

कवित्त ॥ दिष्पि नयन रा पंग । दंग चहुआन महा भर ॥
अंकुरि नयन विसाल । झाल झारंत रंच उर ॥

(१) ए. छु. को.-इहि।

इक्क थार कंठीर। [1]पल न आकज्ज करत तमि ॥
बर बारुनी समग्ग। मत्त मातंग रोस [2]जमि ॥
कमधज्जराज फिरि चंद कहु। कहत बत्त संभरधनिय ॥
बर बर कवित्त कवि उच्चरिय। अब सुकित्ति कथ्थौ घनिय ॥
छं० ॥ ६५८ ॥

जैचन्द का चकित चित्त होकर चिन्ताग्रस्त होना और कविचंद से कहना कि पृथ्वीराज मुझ से मिलते क्यों नहीं।

अति गँभीर पहु पंग। मन सु दब्बै द्रिग [3]लज्जइ ॥
कवन काज लग्गरइ। पानि ग्राही भट कज्जइ ॥
कित्त काज करि बेंन। बानि बंदन बरदाइय ॥
श्रवन राग हम तुमै। दिष्ट गोचर तत लाइय ॥
संभरै जंम देषै सुभट। अंत निमत पुज्जै भिलत ॥
सोमेस पुत्त तुम हित्त करि। क्यौं मुझझहि नाहीं [4]मिलत ॥
छं० ॥ ६५९ ॥

कवि का कहना कि बात पर बात बढ़ती है।

दूहा ॥ मत मंतौ लहु मंत कहि। नीतें नीति बढंत ॥
जिम जिम सैसव सो दुरै। तिम तिम मदन चढ़ंत ॥ छं० ॥ ६६० ॥

कवि का कहना कि जब अनंगपाल पृथ्वीराज को दिल्ली दान करने लगे तब आपने क्यों दावा न किया।

कवित ॥ चहुआना कुल रीति। ब्रम्ह जानन सोमी वर ॥
बर सोमेसर सीस। तिलक कहुच अनंग करि ॥
अप्प जानि दोहित्त। राज दिल्ली दे हथ्था ॥
प्रजा [5]लोक परधान। राय सह तूंअर कथ्था ॥

---

(१) मो.-पलन। (२) ए. कृ. को.-जिमि। (३) ए. कृ. को.-कज्जइ, लज्जइ।
(४) ए. कृ. को.- मिलत। (५) ए. कृ. को.-लोइ।

तिन्नेंति बीर तिष्यह गयौ। रहमि फेरि विष पत्त दिय॥
जे मुरिय नृपति कविचंद [1]कहि। तव जोगिनि पुर छल न लिय॥
छं० ॥ ६६१ ॥

जैचन्द का कहना कि अनंगपाल जब शाह की सहायता ले कर आए थे तब शाही सेना को मैं नें ही रोका था।

अनंग पाल चक्कवै। साहि। गोरी पुक्कारै॥
इय गय दल चतुरंग। मीर मीरह सब्बारै॥
में बल रुकि साहिब्ब। सेन अग्गा पुरसानी॥
बर अगस्ति कमधज्ज। समुद सोपै तुरकानी॥
मी सरन रहन हिंदु तुरक। जग्गि जानि तिहि मंडयौ॥
विग्गारि जग चहुआन गय। हिंदु जानि मैं छंडयौ॥छं०॥६६२॥

कवि का कहना कि यदि आपने ऐसा किया तो राजनीति के विरुद्ध किया।

कोन खोइ जग्गंते। बसत अप्पनो गमावै॥
कोन जोर रस जोइ। दई जन कोन छलावै॥
को तात बैर दुज्जनै। दया मानव को मुक्कै॥
को विषहर बर डसै। दाव को घावह चुक्कै॥
पहुपंग जानि चहुआन अरि। बसि परि सकै न मुक्कियै॥
पुज्जै न सुबल का चढ़त नहिं। घात अप्प अप चुक्कियै॥
छं० ॥ ६६३ ॥

जैचन्द का पूछना कि इस समय सर्वाङ्ग राजनीति का आचरण करने वाला कौन राजा है।

दूहा॥ हँसि पुच्छी पहुपंगने। तुम जानौ बहु मित्त॥
को राजन तकि काल रत। को रत कोन विरत॥ छं०॥ ६६४॥

(१) मां-सुनि।

कवि का कहना कि ऐसा नीति निपुण राजा पृथ्वीराज है जिसने अपनी ही रीति नीति से अपना बल प्रताप ऐश्वर्य्य आदि सब बढ़ाया।

पद्धरी ॥ संभरिय पंग आयस प्रमान । बोलै सु छंद पाधरी मान ॥
संभरि सु बीर सुनि तत्त राज । नीतें सु बंध सब चलन साज ॥
छं० ॥ ६६५ ॥
नीतिय सु लहिय लहौ सु राज । धन धम्म किर्त्ति तिहिं तेज साज ॥
जीवन सु नीति नृप जमिन पौन । वह मरन बीर कुल धंमहीन ॥
छं० ॥ ६६६ ॥

पुनः कवि का कहना कि आपका कलियुग में यज्ञ करना नीति संगत कार्य्य नहीं है।

उच्चरै चंद बरदाइ तत्त । राज सू जग्ग को करै अत्त ॥
बलिराय प्रथम जुग जग्गि मंडि । बर बीर बंधि पाताल छंडि ॥
छं० ॥ ६६७ ॥
कट्टन कलंक ममि मंडि जग्ग । गज्जरे कुट्ट वर बीर अंग ॥
त्रयुराइ जग्ग मंडे प्रमान । काकुट्ट धरिग तन कोपि ध्यान ॥
छं० ॥ ६६८ ॥
इच्छियै इच्छ गुर मंडि बीर । नव सीय दोष जज्जर सरीर ॥
श्री राम जग्ग मंडौ विचारि । कुब्बेर बरषि सोद्रव्व धार ॥
छं० ॥ ६६९ ॥
मह दान कलहि घोडस्स होइ । राजसू जग्ग मंडै न कोइ ॥
सुन्नै सरूप पंगु लग्भ कीय । देवरह धम्म बड़ बंध चीय ॥
छं० ॥ ६७० ॥
राजसू जग्ग को करन भाय । नन होय पंच कलिजुग्ग राइ ॥
*सतजुग्ग जग्ग सुत कवल कीन । छाटक सुमेर दच्छिना दीन ॥
छं० ॥ ६७१ ॥

*यहां से मो. प्रति में पाठ नहीं है आवांतर कथा की कल्पना होने से कुछ भाग के क्षेपक होने का भी संदेह है।

संकलित नग्ग तिहि संग च्यार। लुटंत विप्र हरि हथ्थ हारि ॥
ता पच्छ जग्ग रचि मरुत रज्ज। दानह सु दीन बेपार दुज्ज ॥
छं० ॥ ६७२ ॥

नंषिय सु मग्ग लगि फेम भार। परि साठि सहस पंकति पहार ॥
गो दान दीन फुनि तिहि अलेह। तारक्क गंग रज बुंद मेह ॥
छं० ॥ ६७३ ॥

आरंभ जग्ग फुनि राज ऐल। तसु दान वेद कहि सकि न सैल ॥
नवषंड पूरि बेदी रवंन। डाभाग्र रहि न षाली अवंनि ॥
छं० ॥ ६७४ ॥

करि जग्ग सेत कीरत्ति भूप। दस सहस नदी चलाय नूप ॥
सक्कि सक्किय न झेल आहुत्ति बन्हि। तजि कुंड गइय ब्रह्मा सरन्हि॥
छं० ॥ ६७५ ॥

पथ्थहि चराइ षंडीव जन्न। मिट्टिय अजीर्न घन दिनौ तन्न ॥
बलिराइ जग्ग रचिय जिवार। उतपन्न भ्रंम वामनति वार ॥
छं० ॥ ६७६ ॥

थपि जग्ग जुधिष्ठिर राज पंड। पनवार अप्प श्री कृष्ण मंडि ॥
गुहरिय तत्त इह चंद भट्ट। जैचंद राइ सों विविध थट्ट ॥
छं० ॥ ६७७ ॥

राजा जैचन्द का कवि को उत्तर देना।

सुनि श्रवन जंपि पहुपंग ताम। पर छोड़ करन कहु कौन काम ॥
उनमान अप्प अप्पनि अवन्नि। रष्यहि जु नाम सोइ भूप धन्नि ॥
छं० ॥ ६७८ ॥

* साभ्रम्म होइ जोगिन पुरेस। आमंत निरषि संचौ नरेस ॥
नीतह सु अंग किट्टी सुरज्ज। भनतंत जोति विस्वरै सज्ज ॥
छं० ॥ ६७९ ॥

तजि नीत सोय अप दुष्ट जान। कट्टै जु अष्ठ दिन घरि प्रमान ॥
जुध सथ्थ साइं मुक्कियै अंग। रष्पियै भ्रंम साईं सुरंग ॥
छं० ॥ ६८० ॥

* यहां से मो.-प्रति का पाठ पुनः आरंभ होता है।

बिन राजनीति ग्रह जी अरज्ज । घट घटहि नीर छिन गलति सभ्भ ॥
बिन राजनीति दुति तजिय जोन्ह । सोन्नत्त प्रतिम मंडियै बैन ॥
छं० ॥ ६८१ ॥

इह सुनिय बैन पहुपंग वीर । मुष तत्त मुष्प कलहं सरीर ॥
न्हिप कलह साउ जेही जनाय । कालंत कहिय कल कित्ति गाय ॥
छं० ॥ ६८२ ॥

घाटंक निमुष घटि कला जाइ । जानौ सुकाल छल हीन ताय ॥
रत गुन अरत्त रत्ते न मोह । उप्पंम चंद जंपै सद्रोह ॥छं०॥६८३॥
रंग रंग गत्त मज्जीठ मज्ज । कस्सूंभ रंग रंग मोह पज्ज ॥
बर बिरत श्रोन लच्छिन प्रमत्त । नव नवी वाम इच्छा रमत्त ॥
छं० ॥ ६८४ ॥

'मातुक्क सक्कहूं हित बढंत । आतंम मोह माया चढ़ंत ॥
दिष्पी ज खग्ग चिन्ता सरंत । संसार कूप रस में परंत ॥
छं० ॥ ६८५ ॥

राजा जैचन्द का कहना कि कवि अब तुम मेरे मन की बात बतलाओ।

दूहा ॥ सत सुवत्त कविचंद मुष । तब पुच्छिय इह बत्त ॥
हौं पुच्छो चाहूं सुमति । सो जंपौ कवि तत्त ॥ छं० ॥ ६८६ ॥

कवि का कहना कि आप मुझे पान दिया चाहते हैं और वे पान रनिवास से अविवाहिता लौंडियां ला रही हैं।

जे चिय पुरिष रस परस बिन । उठिगराइ सु निमान ॥
धवलग्रह संपत्त कहि । भट्टहिं अप्पन पान ॥ छं० ॥ ६८७ ॥

राजा का पूछना कि तुमने यह कैसे जाना।

मद्दल अदिट्ठ चिय दिट्ठ सुअ । क्यों बन्नै बर कब्बि ॥
सरसें बुधि बन्नन कर्‍यौ । मुष दिष्पै नन रब्बि ॥ छं० ॥ ६८८ ॥

(१) प. कृ. को. सक्क हितहि बढंत ।

कवि का कहना कि अपनी विद्या से।

कछुक सयन नयनह करिय। कछु किय बयन बषान ॥
कछु इक लछिन विचार किय। अति गंभीर सु जानि ॥छं०॥६८८॥

कवि का उन पान लाने वाली लौंडियों का रूप रंग आदि वर्णन करना।

तिन कह अथ्थि सु हथ्थ किय। जे राजन ग्रह अच्छि ॥
ते सुंदरि सब एक सम। चली सुगंधनि कच्छि ॥ छं० ॥ ६६० ॥
षोड़स बरस समुच्च ग्रिह। ले सब दासि सु जानि ॥
मनों सभा सुरलोक की। चलि अच्छिरिय समान ॥ छं० ॥६६१॥

उक्त लौंडियों की शिख नख शोभा वर्णन।

अर्धनराज ॥ विहिंग भंग जो पुरं। चलंत सोभ नूपुरं ॥
अनेक भंति सादुरं। अषाढ़ सोर दादुरं ॥ छं० ॥ ६६२ ॥
सुधा समान सथ्थही। सुगंध हथ्थ हथ्थही ॥
चरन रत्त सोभई। उपम्म कब्बि लोभई ॥ छं० ॥ ३६३ ॥
बरन्न रत्त ओर जे। कसीस काममीर जे ॥
चरन्न एड़ि रत्त ए। उपम्म कब्बि पत्त ए ॥ छं० ॥ ६६४ ॥
सु वंक चंद अंकनं। सु राइ तेज संकनं ॥
सुमंक जीवनं टरै। सुनें सरूप में करै ॥ छं० ॥ ६६५ ॥
नषादि आदि उप्पनं। सु काम केलि द्रप्पनं ॥
चरन्न हंस सद्दही। उपम्म कब्बि बद्दही ॥ छं० ॥ ३६६ ॥
सुनंत होड़ छंडयौ। चरन्न सेव मंडयौ ॥
सु पिंडि बाल सोभई। सु रंग रंग लोभई ॥ छं० ॥ ६६७ ॥
सुरंग कुंकुमं भरी। पराद काम उत्तरी ॥
सुरंग जंघ ताल से। कि काम थंभ आलसे ॥ छं० ॥ ६६८ ॥
नितंब तंब स्याम के। मनो सयन्न काम के ॥
सवन्न भ्रंग गुंजही। सुगंध गंध पुंजही ॥ छं० ॥ ६६६ ॥

दिपंत डोर कंकनं। कटिं प्रमान रंकनं ॥
टिकै न दिट्ठ लंकयौ। विलोकि अष्पि अंकयौ ॥ छं० ॥ ७०० ॥
उतंग तुंग तामयौ। कि ध्रम्म लोभ कामयौ ॥
सु रोमराजि दिट्ठयौ। रुलंत बेनि पिट्ठयौ ॥ छं० ॥ ७०१ ॥
सु चंपि चंद गाढयौ। विपास काम चाढ़यौ ॥
जुअन्न हीय सोभई। सु सिद्ध मैंन लोभई ॥ छं० ॥ ७०२ ॥
ग्रहन्न रंग चालई। सु लज्जि लंक हालई ॥
उठंत कुच्च कंचुअं। कि तंबु काम रच्चयं ॥ छं० ॥ ७०३ ॥
बजे प्रमान सज्जनं। सुमेर अब्ब भंजनं ॥
जु पोत पुंज सोभयौ। सु चित्त काम लोभयौ ॥ छं० ॥ ७०४ ॥
सु जित्ति राह थानयौ। सु चंद बैठि मानयौ ॥
जराइ चौकि कंठयौ। उपम्म कब्बि तंठयौ ॥ छं० ॥ ७०५ ॥
ग्रहं जु इंद आइयं। चरन्न चंद साहियं ॥
बनित्त सब्ब जंपयौ। सुराह थान अप्पयौ ॥ छं० ॥ ७०६ ॥
चिबुक्क चारु सोभयौ। उपम्म कब्बि मोहयौ ॥
सु बाल भ्रंग पत्तयौ। सु कंज मुक्कि जत्तयौ[1] ॥ छं० ॥ ७०७ ॥
सुरत्त अब्ब रत्तयौ। लहै न ओप अंतयौ ॥
ओसाफ, कब्बि सोहयौ। प्रबाल रत्त मोहयौ ॥ छं० ॥ ७०८ ॥
सुधा समान मुष्पही। दसन्न दुत्ति रुष्पही ॥
सु सद्द बद्द पंचमं। कलिन्न कंठतं कमं ॥ छं० ॥ ७०९ ॥
सुनी सु कब्बि राजई। उपम्म कब्बि साजई ॥
ससंक सारगं हरी। प्रगट्ट काम मंजरी ॥ छं० ॥ ७१० ॥
धनुक्क भोंह अंकुरे। मनों नयन्न बंकुरे ॥
श्रवन्न मुत्ति ताल जे। अलक्क बंक आलुजे ॥ छं० ॥ ७११ ॥
सबद्द सोभ जो घुलै। रहंत लाज्ज कोकिलै ॥
अनेक दन्न जो कहै। तौ जम्म अंत ना लहै ॥ छं० ॥ ७१२ ॥

(१) ए.कृ. को.-जत्तयौ।

दासी का पानों को लेकर दरबार में आना और पृथ्वीराज को देख कर लज्जा से घूंघट घालना।

कवित्त ॥ आय निकट रायंग। अंग आरुन बेद बर ॥
अति सुगंध तंमोर। रंग जुत धरय जुथ्थ पर ॥
दिष्पि न्रिपति प्रथिराज। दासि आरोहि सीस पट ॥
मनहु काम रति निरषि। सकुचि गुर पंच मद्धि घटु ॥
कमधज्ज राज संकुल सभा। अकुल सुभर दरसंत दिस ॥
उस्ससे अंग उभ्भरि अरषि। परसपर सु अवलोकि [1]सिस ॥
छं० ॥ ७१३ ॥

कवि का इशारा कि यह दासी वही करनाटकी थी।

चौपाई ॥ चहुआनह दासी सिर कंधिय। पुर रट्ठौर रही दिसि नंधिय ॥
बिगरत केस पुरुष नहिं अंकिय। प्रथीराज देषत सिर ढंकिय ॥
छं० ॥ ७१४ ॥

दासी के शीश ढांकने से सभासदों का संदेह करना कि कवि के साथ में पृथ्वीराज अवश्य है।

अरिल्ल ॥ ढंकित केस लषी भय [2]भूपह। दिन दिन दिस्सि कहां राई मह॥
कविवर सथ्थ प्रथीन्दप आयौ। सो लच्छिन बर दासि बतायौ ॥
छं० ॥ ७१५ ॥

उच्च सरदारों और पंगराज में परस्पर सुगबुग होना ।

कवित्त ॥ अप्प अप्प भट अटकि। षटकि पट दासि मंडि सिर ॥
इक्क चवै क्रत बद्दन। एक घल नथ्थ जानि थिर ॥
इक्क कहै प्रथिराज। इक्क जंपय पवास बर ॥

(१) मो.-रिस। (२) ए. कृ. को.-भूमह।

दिष्पि दरस [1]रयसिंघ। कहत दीवान अज्ज भर ॥
कट्ठिया [2]विकट केहरि कहर। जहर भार अंगय मनह ॥
संग्रहौ आय रिपु दुष्ट ग्रह। समय सह रा पंग कह ॥छं०॥७१६॥

दूहा ॥ भै चकि भूप अनूप सह। पुरष जु कहि प्रथिराज ॥
सुमति भट्ट [3]सथ्थह अछै। जिहि करंत तिय लाज ॥ छं० ॥ ७१७ ॥

कविचन्द का दासी को इशारे से समझाना।

अरिल्ल ॥ करि बल कलह स मंची माथ्यौ। नहि चहुआन सरंन बिचाथ्यौ ॥
सैंन सुवर कहि कवि समुझाई। अब तूं कलह करन इहां आई ॥
छं० ॥ ७१८ ॥

दासी का पट पटक देना और पंगराज सहित सब सभा का चकित चित्त होना।

समझि दासि सिर बर तिन ढंक्यौ। कर पल्लव तिन द्रग बर अंक्यौ॥
कव रस सबै सभा कमधज्जी। भैचकि भूप [4]सिंगिनी सज्जी ॥
छं० ॥ ७१९ ॥

उक्त घटना के संघटन काल में समस्त रसों का आभास वर्णन।

कवित्त ॥ बर अद्भुत कमधज्ज। हास चहुआन उपन्नौ ॥
करुना दिसि संभरी। चंद बर रुद्र दिपन्नौ ॥
वीभछ वीर कुमार। बीर बर सुभट विराजै ॥
गोघ बाल झंपतह। द्रिगन सिंगार सु राजै ॥
संभयौ सन्त रस दिष्पि बर। लोहालंगरि बीर कौ ॥
मंगाइ पान पहुपंग बर। भय नव रस नव सीर कौ ॥
छं० ॥ ७२० ॥

दूहा ॥ सिर ढंकति सकुचिय तरुनि। सु विधि चिंति स्वामित्त ॥
बहुरि सु जिम तिम ही कियौ। [1]लवन विचारिय चित्त ॥छं०॥७२१॥

(१) मो.-रायसिंघ। (२) मो. निकट। (३) ए.कृ. को.-अथ्थह।
(४) ए. कृ को. सिंगनि गुन। (१) ए. कृ. को.-नवन।

एक कहै बैठै सुभट । इनह सथ्थ प्रथिराज ॥
ए नृप जीवन एक है । तिनहि करत चिय लाज ॥ छं० ॥ ७२२ ॥

जैचन्द का कवि को पान देकर विदा करना ।

अप्पि पान सनमान करि । नहि रथ्यौ कवि गोय ॥
जु कछु इच्छ करि मंगिहौ । प्रात समप्पों सोय ॥ छं० ॥ ७२३ ॥

राजा का कोतवाल रावण को आज्ञा देना कि नगर के पश्चिम प्रान्त में कवि का डेरा दिया जाय ।

हक्कारयौ रावन न्रपति । के के मुक्कि सुबास ॥
पच्छि दिस्सि जैचंद पुर । तिहि रथ्यौति अवास ॥ छं० ॥ ७२४ ॥

रावण का कवि को डेरों पर लिवाजाना ।

आयस रावन सथ्थ चलि । अयुत एक भट सथ्थ ॥
अग्ग राह सो संचरै । मेर उचावहि बथ्थ ॥ छं० ॥ ७२५ ॥

कवित्त ॥ पच्छिम दिसि पुर चंद । सु कवि सौ न्रपति सपत्तौ ॥
रावन सथ्थ समथ्थ । वचन सो कवि रस रत्तौ ॥
धवल मझ्झ सपन्न । कलस कंदनह वज्ज दुति ॥
जठित पंभ जगमगहि । कनक वामन विचिच भति ॥
प्रज्जंक कनक मनि मुत्ति भति । मानिक मथ्थ विविद्द भति ॥
आमनह पट्ट बहु मोल विधि । मनु मनि भूमि कि संभ क्रति ॥
छं० ॥ ७२६ ॥

दूहा ॥ डेरा सु कवि विरंम तुम । करि कवि लयौ चरित्त ॥
राजनीति रज गति चरित । चित गनि कहौ 'सुचित ॥
छं० ॥ ७२७ ॥

रावण का कवि के डेरों पर भोजन पान रसद आदि का इन्तजाम करके पंगराज के पास आना ।

(१) ए. छ को. चरित्त ।

डेरा कराइ रावन चल्यौ। षान पान तिन ठाहि॥
सुष्य सुषासन आरुहै। तहां पंग न्रप आहि॥ छं० ७२८॥

डेरों पर पहुंच कर पृथ्वीराज का राजसी ठाठ से आसीन होना और सामंतों का उसकी मुसाहबी में प्रस्तुत होना।

कवित्त॥ बोलि लियौ सब सथ्थ। तथ्थ प्रथिराज [2]सुअत्तं॥
सखिता जेम समुह। मुद्ध पति मिलन सपत्तं॥
चामर छत्र रयत्त। लियै सामंत सपत्ते॥
रति सुथ्यौ राजान। मद्धि ग्रह पति रवि रत्ते॥
आए सु सुहर सब चंदपुर। देषि अनूपम थंति तथ॥
सामंत नाथ बरदाइ बर। आय सपत्त सब्ब सथ॥ छं० ॥ ७२९॥

सब सामंतों का यथास्थान अपने अपने डेरों पर जमना।

दूहा॥ सथ्थ सपत्तौ तथ्थ सब। थ्रित सामंत रु सूर॥
इय इयसाला बंधि गै। सुभि राजन दर नूर॥ छं० ॥ ७३०॥

अरिल्ल॥ मंदिर बंटि दिए सब भूपन। आप रहै निज ग्रेह अनूपन॥
हीर हिरंनन की दुति पंडिय। तापर लाल परग्गहि मंडिय॥
छं० ॥ ७३१॥

पृथ्वीराज के डेरों पर निज के पहरुवे बैठना।

दिय डेरा सामंत समानह। फिरि आवास सुवास सवानह॥
दर रष्ये दरबार सुजानह। बिन आयस न्रिप रुक्कि परानह॥
छं० ॥ ७३२॥

पंगराज का सभा विसर्जन करके मंत्रियों को बुलाना और कवि के डेरे पर भिजवानी भेजवाना।

दूहा॥ सभा विसरजी पंग पहु। गय मधि साल विचिच॥
तहां सुषासन इंद्र सम। तिष्ट सुमंचिय मंच॥ छं० ॥ ७३३॥

(२) प्र. कृ. को.-सुअप्पं।

कवित्त ॥ तब राजन जैचंद । बोलि सोमिच प्रधानह ॥
अरु प्रोहित श्रीकंठ । मुकंद परिहार सुजानह ॥
दियौ राइ आएस । जाहु सो कवियन थानह ॥
विविध अन्न व्यंजनह । सरस रसरंग रसानह ॥
तंबोर कुसुम केसरि अगर । कहु कपूर सुगंध सह ॥
आदर अनंत उपचार वर । करि सु प्रसन्नह कविय कह ॥छं०॥७३४॥

सुमंत का कवि के डेरे पर जाना, कवि का सादर मिजवानी स्वीकार करके सबको बिदा करना।

तब आयस जैचंद । मंनि सो मिच प्रधानह ॥
अरु प्रोहित श्रीकंठ । मुकंद परिहार प्रमानह ॥
बचन बंदि जय जंपि । लिए उपचार सार सब ॥
गये कव्वि सुस्थान । रुके दर सथ्थ सब्ब जब ॥
दर रष्पि कह्यौ दरबार नृप । भय षवास संबोलि सहु ॥
धरि वस्त विबह अग्गै सु कवि । विविध विवरि बर लष्प लहु ॥
छं० ॥ ७३५ ॥

सुमंत का जैचंद के पास आकर कहना कि कवि का सेवक विलक्षण तेजधारी पुरुष है।

चोटक ॥ कवि आदर किन्न सु पंग दियं । किय विद्य सु विद्यह जीति जियं॥
फिरि मंगिय सीष सु पंग रजं । लषि नीति सु किप्ति अनंत सजं॥
छं० ॥ ७३६ ॥

रज मित्ति सु गत्ति अनंत भती । महनूर अदब्ब न जाइ मती ॥
कवि भत्त सरूप सु भूप वरं । तिन तेज अजेज असेस भरं ॥
छं० ॥ ७३७ ॥

चित चक्कित मंचि मुकंद गुरं । भए देषि बिमन्न ग्रहन्न नरं ॥
गय पंग दरं सुधि पंग लही । चिचमाल सुधूपह बोलि तही ॥
छं० ॥ ७३८ ॥

सब पुच्छिय कब्बि चरिच कला। कहि मंचिय [1]मोसहु बार न ला ॥
कहै मंचिय विप्र सु राज सुनै। कवि मंनिय गत्ति न चित्त गुनै
छं० ॥ ७३९ ॥

रज रीति अनूप अदब्ब लही। श्रित देषि अनूप न जाय कहीं ॥
श्रित रूपहि इंद्र समान लजं। बल तेज अजेज सु राज सजं ॥
छं० ॥ ७४० ॥

कवि सथ्थ जु श्रितह तेज नवं। भर पंग निरष्पिय नेन सबं ॥
... . । .... ॥ छं० ॥ ७४१ ॥

जैचंद के चित्त में चिन्ता का उत्पन्न होना।

दूहा ॥ सुनि चित्तह चिंत्यौ नृपति। कवि यह कह कथ चित्त ॥
गुन गंभीर सु गंठि हिय। गौ दिय मिष्य सु रुत्त ॥ छं० ॥ ७४२ ॥

रानी पंगानी के पास कविचन्द के आने का समाचार पहुंचना।

चौपाई ॥ सुनिय वत्त नृप पंग सु राजह। आयौ कवि चहुआन सु लाजह ॥
सुनि जुल्लाइय चित्त सु चिंतिय। बोलि सहचरि मंत सुमंतिय ॥
छं० ॥ ७४३ ॥

रानी पंगानी का कवि के पास भोजन भेजना।

गाथा ॥ इह कवि दिल्लियनाथो। मैं सुन्यौ बीर बरदाई ॥
तिहि नव रस भाष छ भनियं। पठ्ठाइयं अस्सनं [2]तथ्थं ॥ छं० । ७४४ ॥
तिहि सपि बोलि सुथानं। चिचनि चिच केसरी समुषं ॥
लीला विमल सु बुद्धी। सा बुद्धी लग्गि चरनायं ॥ छं० ॥ ७४५ ॥

दूहा ॥ पंगराइ वर बीर बर। सैंन अप्पि सहलीन ॥
दिसि जुल्लाइ अमीस कवि। हुकम कहन नृप दीन ॥ छं० ॥ ७४६ ॥

पद्धरी ॥ चौबार स्याम बर पंग ग्रेह। ग्रिह मद्धि रतन कै मद्धि केह ॥
षोड़स बरष्प अप्रपत्त बाल। [3]दिप्पियै पंग भामिनि विसाल ॥
छं० ॥ ७४७ ॥

---

(१) मो.-मो मति। (२) मो.-तये। (३) ए. कृ को.-दिप्पी सु।

दिषि हरन कत्ति करवत्त काम। मनों मीन मीन विश्राम ताम॥
पदमिनिय हंस चिचनिय बास। सोभै सुपंग ग्रिह मुरु विसास॥
छं० ॥ ७४८ ॥

पदमिनी कुटिल केसह सुदेस। अस्तनह चक्र वक्रह सुनेस॥
बरगंध पदम सुर हंस चास। जन जीभ रत्त म्रिग अंकि सास॥
छं० ॥ ७४९ ॥

कुलवंत सील अंम्रत वचन्न। पदमिनी [1]हरै पहुपंग मन्न॥
आसीस भट्ट वोल्यौ प्रकार। चित हरै चंद मुषचंद मार॥
छं० ॥ ७५० ॥

पंगानी रानी "जुन्हाई" की पूर्व्व कथा।

कवित्त*॥ सूर किरनि तें प्रगटि। रुचिर कन्यका तपत्या॥
तरवर तुंग कैलास। साध संग्रहि कर सत्या॥
झूलंती संपेषि। भयौ भुअपत्ति सु आसिक॥
एक पाइ तय मंडि। धारि द्रग अग्ग सु नासिक॥
वाचिष्ट रिष्पि सु प्रसन्न होइ। रवि प्रारथ्थि विवाह किय॥
जैचंद राय बरदाइ कहि। तिहि सम जुन्हाइ लहिय॥ छं० ॥ ७५१ ॥

अरिल्ल॥ पंग हुकम अरुदान जुन्हाई। भट्ट न्रपति चहुआन सुनाई॥
रहि सि चीय चित दै बहु बहू। [2]जनों किरन कल पचम चहू॥
छं० ॥ ७५२ ॥

दासियों की शोभा वर्णन।

मुरिल्ल॥ सब अंग सु रंगिय दासि घनं। घन हथ्थय पीत पटंबरनं॥
घनसार सुगंध जु हथ्थ धरै। तिन उप्परि भोरन झोर परै॥
छं० ॥ ७५३ ॥

रानी जुन्हाई के यहां से आई हुई सामग्री का वर्णन।

(१) ए. कृ. को.-रहै। *यह कवित्त मो.-प्रति में नहीं है और क्षेपक जान पड़ता है।
(२) ए. कृ.-जनों कि हथ्थ कल पत्रम चढ़ै।

कवित्त ॥ सहस एक हेमंग । सहस दोइ पीत पटंबर ॥
सहस अट्ठ नव नालि । केलि [1]कप्पूर सु ठुंमर ॥
त्रिग जु नाभि निक रासि । देस गवरी सा घंगी ॥
मुक्कि गंध काकीन । सेत बंधह भारंगी ॥
दारिम्म विजोरी दुष्य वर । विमल मह मोदक भरन ॥
अरु गंध पंग संभारि करि । जाति जुन्हाई संधि रन ॥ छं० ॥ ७५४ ॥

इनूफाल ॥ मिलि मंजरी गुन बेलि । मदनावली गुनकेलि ॥
मालती अविज सरूप । लीलया कमला अनूप ॥ छं० ॥ ७५५ ॥
मझ हिय सुलष्य सुबुद्धि । लषि नेंन लपन सु बुद्धि ॥
[2]क्कंमारि माला मुष्य । सम हंस गोरिय रुष्य ॥ छं० ॥ ७५६ ॥
वर बीर सषि सम लाज । पुच्छिय सु स्वामिनि काज ॥
कर जोरि आयस मंगि । बहु सषिय बोलिय संग ॥ छं० ॥ ७५७ ॥
जुन्हाइ जंपिय तब्ब । पति दिलिय आयौ कब्ब ॥
मिष्टाइ लै [3]तहां तथ्य । [4]सम जाहु सषिसम सथ्य ॥ छं० ॥ ७५८ ॥
मिष्टाइ विवह विचिच । मिष्टाइ रुप पविच ॥
मैं तीन बानय पूरि । आच्छादि अवर मनूर ॥ छं० ॥ ७५९ ॥
रस अगर पंच सुअट्ठ । करपूर पूरित जट्ठ ॥
केमरि सद्रोन सदून । मगमह थालन रून ॥ छं० ॥ ७६० ॥
तंमोलि चौसट्ठि पान । दै सहस हेम जुतान ॥
हिम हंस एक अनूप । जम जपै चातुर भूप ॥ छं० ॥ ७६१ ॥
मानिक्क जटित अभूल । मनि विचिच जानि अतूल ॥
मरकंति मनि विन रेह । वर दुट्ठ मुत्ति जलेह ॥ छं० ॥ ७६२ ॥
मनि जटित विवह विराज । बर बसन धारित भाज ॥
सुभ सुजल मुत्तिय माल । वासंसि सुभ धरि थाल ॥ छं० ॥ ७६३ ॥
वर विचिच अन्न अनंस । सुभ गत्ति स्वाद सुमंस ॥
मिष्टाइ जाति न संष । बहु रूप राजित अंष ॥ छं० ॥ ७६४ ॥

---

(१) ए.-ठुंमर । (२) ए. कृ. को. -क्कम्मारि ।
(३) ए. कृ. को.- थह । (४) ए. कृ को.-लै ।

अनि वस्त्र विवह विभंति । गनि जाति कौंन गिनंत ॥
.... । .... ॥ छं० ॥ ७६५ ॥

दूहा ॥ सु बन सिंगारिय सह सषिय । विवह वस्त्र लिय सब्ब ॥
सो निज स्वामिनि अंग मुनि । क्रमिय सु अथ्थह कब्ब ॥छं०॥७६६॥

कवि के डेरे पर मिठाई लेजाने वाली दासियों का सिखनख शृंगार वर्णन ।

लघुनराज ॥ रजंत बान सा सषी । द्रगंत बानता तिषी ॥
सिंगारि साज सब्बयौ । दिपै छरीब गब्बयौ ॥ छं० ॥ ७६७ ॥
सु गोपि वास रासयं । तमोर भष्पि आसयं ॥
बदन्न रूव रज्जयौ । सरद [1]बिंब लज्जयौ ॥ छ० ॥ ७६८ ॥
ढुरंत मुक्ति बेनियं । विराजि काम नेनियं ॥
सुभाल कोर वासनं । उही सुमुच्छ भासनं ॥ छं० ॥ ७६६ ॥
चाटंक सोभि अमरं । तड़ित्त दुत्ति संमरं ॥
[2]खंत कट्टि मेषरं । चकोर साव से सुरं ॥ छं० ॥ ७७० ॥
सुरंस हंस हंस यौ । समूह साव रंसयौ ॥
सुरं समथ्थ कामिनं । समोहि मुट्ठ वामिनं ॥ छं० ॥ ७७१ ॥
वरष्प अट्ठ अट्ठयं । मवंक कंपि तट्ठयं ॥
रुलंत हीय हारयं । ममुट्ठि काम कारयं ॥ छं० ॥ ७७२ ॥
विचिच हंस कामिनी । मयंद मत्त गामिनी ॥
मषौ सुवीय मष्पयं । क्रमंत अंग पष्पयं ॥ छं० ॥ ७७३ ॥
प्रवीन बीन बदनं । सुरन्न पट्ट अट्टनं ॥ ॥
विचिच काम जं कला । कटाषि चाल अप्पिला ॥ छं० ॥७७४ ॥
विसाल बैन चातुरी । मनो सु मोहिनी जुरी ॥
सु सामं दान भेदयौ । कुसल्ल दंड षेदयौ ॥ छं० ॥ ७७५ ॥
कला सु अट्ठ अट्ठयौ । सुभेव भाव गट्ठयौ ॥
सभाव चन्द सोभिलं । बदंत काम कोकिलं ॥ छं० ॥ ७७६ ॥

(१) मो. रूप । (२) मो. रचंति ।

चलौं सु सब्ब संजुरी। मनो सुइंद अच्छरी ॥
चढ़ी कि डोलियं वरं। मरोहि कै हयं वरं ॥ छं० ॥ ७७७ ॥
सपौ सु पंचयं सयं। गमंत सथ्थ सेनयं ॥
लियं सु सब्ब साजयं। सु अथ्थि रिद्धि राजयं ॥ छं० ॥ ७७८ ॥
सपन्न कव्वि थानयं। दरं सु रथ्थि मानयं ॥
.... । .... ॥ छं० ॥ ७७९ ॥

कवित्त ॥ पंकज सुत मोवंत। फेरि करवट्ट प्रजंकह ॥
अमुर उपजि अनपार। धरनि कज मंडिय कंकह ॥
संभ समय तव ब्रह्म। देह तजि रंभ उपाइय ॥
रूप अचंभम देषि। रहे दानव लललाइय ॥
नप मिष मानहु तिहि समं। रचे मंप्रतीक सहचरि सकल ॥
कविचंद थान कमधज पठय। कलन सु छल पिथ्थह अकल ॥
छं० ॥ ७८० ॥

उक्त दासी का कवि के डेरे पर आना।

अरिल्ल ॥ सतु दासी नृप थान सपत्ती। नृपर सद कवियान प्रपत्ती ॥
चंद चिंत उप्पय वर भारे। जुथ वजे मनमथ्थ नगारे ॥
छं० ॥ ७८१ ॥

दरवान का दासी को कवि के दरबार में लिवा जाना।

गाथा ॥ सपि दरबार सपन्नी। आदर दीन तथ्थ दरवानं ॥
दर गय अंदर राजं। नद्दवेदयं तथ्थ सब्बायं ॥ छं० ॥ ८७२ ॥

चौपाई ॥ बोलिय मभ्भ सु कव्वियं बालह। तब सिंघासन छंडि भुआलह ॥
आय सपौ सब मभ्भ सबुद्धिय। आदर विवह बानि कवि किद्धिय ॥
छं० ॥ ७८३ ॥

दासी का रानी जुन्हाई की तरफ से कवि को पालागी कहना और कवि का आशीर्वाद देना।

(१) को.-सोवत्त।

विवह विचिच धरी मुष अंबह । कही असीस जुन्हाइय कन्नह ॥
तुम चिकाल दरसी बुधि पाइय । बहु आदर दिन्नौ जु जुन्हाइय ॥
छं० ॥ ७८४ ॥

तुम चहुआन सु भट्ट समत्तिय । अगम सुमग गत लहौ सु गत्तिय ॥
मंगिय विदा सु कव्वि प्रसन्निय । देषि चरित रजगत्ति सु[1] मन्निय ॥
छं० ॥ ७८५ ॥

दासी का रावर में वापस जाकर रानी से कवि का आशीर्वाद कहना ।

गति मति अंतर भेद सु जन्निय । देषि चरित अचिज्ज सु मुन्निय ॥
फिरि आई जु जुन्हाइय थानह । पयलग्गी विधि कही विनानह ॥
छं० ॥ ७८६ ॥

गाथा ॥ कहि आसीस सु कव्वी । सुप्रसन्नों दिट्ठतो भासं ॥
[2]तो तन चिंता भंगो । कथ्थि आसीस केलि कव्वीसं ॥ छं० ॥ ७८७ ॥
रामा रज गति [3]लद्धी । आदर अदब नीति अनभूतं ॥
कवि यह अथ्थह राजं । संपिथ्थय कह कहं नाई ॥ छं० ॥ ७८८ ॥
मुनि मा बत्त जुन्हाई । दिय निज कम्म सब्ब सपिएनं ॥
निज हिय चिंता ठानी । संपन्नौ धवल मझ्झ नं ॥ छं० ॥ ७८९ ॥

यहां डेरों पर यथानियम पृथ्वीराज की सभा का सुशोभित होना और राजा का कवि से गंगाजी के विषय में प्रश्न करना ।

दूहा ॥ तहां सु सूर सामंत मिलि । मधि [4]नायक कवि चंद ॥
प्रथीराज सिंघासनह । [5]जनु परिपूरन इंद ॥ छं० ॥ ७९० ॥
अहो चंद इह दंद भनि । हंज दरसन किय गंग ॥
मन उछाह पुनि मुझ भयो । कछु बरनन करि रंग ॥
छं० ॥ ७९१ ॥

---

(१) ए. कृ. को. मंत्तिय, मत्तिय ।
(२) ए. कृ. को.-"तो तन चिंतिय भंगो कही असीस केलि कव्वीसं" ।
(३) मो.-लिद्धी ।
(४) ए. कृ. को.-नाकिए । (५) मो. मनों प्रथीपुर इंद ।

कविचन्द का गंगाजी को स्तुति पढ़ना।

कहै कव्वि नृप राज सुनि । मो मुष रसना एक ॥
इह सु गंग सुर मुनि जिते । [1]लहहि न पार अनेक । छं० ॥ ७९२ ॥
भुजंगी ॥ मुनी साधु जागी जती आय जेते । गुनी ग्यान ध्यानं प्रमानं न तेते ॥
धरा रोम ते व्योम तुम्मं तरंगे । बसी ईस सीसं जटा जूट गंगे ॥
छं० ॥ ७९३ ॥

चतूरान पानं ब्रह्मंडं कमंडं । चयीकाल संभ्या रियी दोष षंडं ॥
समाधिं धरै कूल साधून साधं । तुही एक तें चंद चक्कोर राधं ॥
छं० ॥ ७९४ ॥

तुमं सेव भागीरथं जानि कीनी । सबें मेलि जाचानि तू संग दीनी ॥
हुती स्वर्गवै लोक धारा अपारं । धसी प्रब्बतं पेलि नाना प्रकारं ॥
छं० ॥ ७९५ ॥

प्रवाहं अमानं प्रमानं न जानं । मनो एक मुष्यं मती मूढ़ ग्यानं ॥
कंपै पाप जो भीर पत्तं सु मत्तं । रहै दिष्य संसिष्य तद्वार भत्तं ॥
छं० ॥ ७९६ ॥

तुही सग्गुनं निग्गुनं सुद्धि कामं । तुही सब्ब जीवं सजीवं स सासं ॥
तुही राजसं तामसं सातुवंती । तुही आहितं हित्त चितं चरंती ॥
छं० ॥ ७९७ ॥

तुही ज्वाल माला कुलाला कुरष्टी । तुही वारिधारा अधारं अरिष्टी ॥
तुही वर्न भेदे विसंतांहि साधै । तुही नाद रूपी सजोगी अराधै ॥
छं० ॥ ७९८ ॥

तुंही ते हरी तूं हरी तेन औरै । जिसौ भेद जो कंचनं टूक कोरै ॥
लषै को गती ता मती देव गंगे । रटै कोटि तेतीस तो नाम अंगे ॥
छं० ॥ ७९९ ॥

जिसौ वारि गंगा तरंगे प्रकारे । तिसौ तोमने अप्प अप्पं अपारै ॥
करै पाप भारं फना व्याल कंपै । रसन्नाजि कै देवि तो नाम जंपै ॥
छं० ॥ ८०० ॥

(१) मो.-लहत।

न्विभारं करै पाप भारंत दूरं। रची पुन्य कै क्यारवै ध्रम्म सूरं॥
सते साध गहि लोक तें सीस रष्यौ। तबै बेद भय वेद सब छेद नंष्यौ॥
छं० ॥ ८०१ ॥

अमी आइ अंगाइ न्विमया न किन्नौ। हुंतौ दीप आदिष्ट गारिष्ट भिन्नौ॥
तुंही देषि करि तेज कप्पौ समुद्दं। छल्यौ सब्ब करि देवि छंद्यौ सु चंदं॥
छं० ॥ ८०२ ॥

धरे सहस मत रूप आनूप भारी। कला नेक नेकं अनेकं प्रकारी॥
रमी रंग रंगं तरंगं सरीरं। जिसौ भेद पय पान जान्यौ न नीरं॥
छं० ॥ ८०३ ॥

जिसौ सिंह अरु मगति भयभीत भारी। जिसौ मुत्तिहर भूर तें झाकझारी॥
जिमौ अप्प अप्पै अपारं अनंतं। तिमौ मोष नर भेद पावै तुरंतं॥
छं० ॥ ८०४ ॥

त्रिया रूप हुय भूप रावन सहान्यौ। भये देवकी अंम चानूर मान्यौ॥
इसौ कौन सहगांत्त सों कहै ग्यानी। इहै द्रोपदी होइ भारथ्थ ठानी॥
छं० ॥ ८०५ ॥

[1]ममौ सीस तें देवि देवी मुरारें। रमी सीस तें माहिषं पाइ ठारें॥
[2]इहै कालिका काल जिम दुष्ट मारै। इहै संभनिस्संभ धायौ प्रहारै॥
छं० ॥ ८०६ ॥

तुंही ग्रंथ गेनं सिवं संग धंगे। तुही मोचनी पाप कल अलष गंगे॥
दयालं दया जानि चवि चंद बानी। जयं जान्हवी जोति तू पापहानी॥
छं० ॥ ८०७ ॥

श्री गंगा जी का माहात्म्य वर्णन।

चन्द्रायण॥ मनसा एक जनम्म महा अघ नासही।
दरसन तीन प्रकारति पाप प्रनासही॥
न्हायै दुष्प समूह मिटै भव मात के।
अंव हरै लगि बूंद सहस्रति गात के॥ छं० ॥ ८०८ ॥

(१) मो-रमी। (२) ०. कु. को-हे।

गंगाजी के जलपान का माहात्म्य और कन्ह का कहना कि धन्य हैं वे लोग जो नित्य गंगाजल पान करते हैं।

गाथा ॥ सो फल निरपित नयनं । सो फल गुन गाइयं बैनं ॥
सोइ फल न्हात सरीरं । सोइ फल पिअत अंब अंजुलयं ॥
छं० ॥ ८०९ ॥

भुजंगी* ॥ अलं गंग न्हावै कितोकं कलत्तं । अलंकार चीरं सरीरं सहित्तं ॥
सरं केस पासं नितंबं बिलंबं । तिलं तेल फुल्लेल मीचें प्रलंबं ॥
छं० ॥ ८१० ॥

द्रगं कज्जलं म्रग्गयं कस्तूरी । करी कच्छपं भीजिय इथ्थ चूरी ॥
मुकत्ताफलं सीपयं कोट पट्टं । विलेपन्न कीनें सुगंधं सुघट्टं ॥
छं० ॥ ८११ ॥

मुषं नाग वल्ली विरध्यं बरंगं । महंदी नषं जावकं रंग पग्गं ॥
इतें जीव पायं तुरन्तं मुकत्तो । कवीचंद जंपी न झूठी उकत्तो ॥
छं० ॥ ८१२ ॥

धरे ध्यान चौद्दान किन्नौ मनानं । अचिज्जं कहा पावनं मोषथानं ॥
सुने कन्ह तामं कहै कन्ह काकौ । पियें अंब निसि दीह वड़भाग ताकौ ॥
छं० ॥ ८१३ ॥

दूहा ॥ इय गंगा राजं न युति । सुनौ रत्ति धरि ध्यान ॥
जनम मरन दोऊ सधै । जो उपजै इह थान ॥ छं० ॥ ८१४ ॥

सामंत मंडली में परस्पर ठट्ठा होना और बातों ही बात में पृथ्वीराज का चिढ़ जाना।

तब सामंतन चंद कहु । सब पुच्छिय न्रप बत्त ॥
जु कछु सत्य सँबोध भौ । निहुररायह तत्त ॥ छं० ॥ ८१५ ॥

* यह छन्द गो. प्रा. में नहीं है।

अरिल्ल ॥ तप्त करे न्विप निट्ठुर बुभिश्रय। राजा चंद प्रहास समुभ्भिय ॥
आदि दिवै कमधज्ज सु रायहि। दासि समेत कह्यौ सब भायहि ॥
छं० ॥ ८१६ ॥

आचिज एक भयौ चहुआनह। मान सबै मुक्किय नृप पानह ॥
भट्ट निवेस करै कर जोरहि। छच धर्‌यौ कहि कोन निहोरिहि ॥
छं० ॥ ८१७ ॥

फेरि कही कविचंद सु बत्तिय। पंग प्रताप गयौ तप छत्तिय ॥
पान सु पात तुम्हें गर थल्लिय। भट्ट कहै कर छुग्गर [1]झल्लिय ॥
छं० ॥ ८१८ ॥

संभरि राव तमंकि रिसानों। मैं भ्रम काज धर्‌यौ कर पान्यों ॥
काल्हि सु भेस करों भुअपत्तिय। कंप न तोहि धरद्धर छत्तिय ॥
छं० ॥ ८१९ ॥

कन्ह का कविचन्द से बिगड़ पड़ना।

भट्ट सों कन्ह निपट्ट रिसानौ। तूं सामंत न तोर घरानौ ॥
तूं कवि देत असीसन छुट्टहि। सूर सीस दे सस्त्रन [2]जुट्टहि ॥
छं० ॥ ८२० ॥

कविचन्द का राजा को समझाना और सब सामंतों का कन्ह को मनाकर भोजन प्रसाद करना।

कवित्त ॥ [3]कपह जग्ग मंडयौ। न्योति जम इंद्र बुलाइय ॥
दिग्गविजय तँह करत। फौज लै रावन आइय ॥
मरन अचिंत्यौ जानि। चिंत कायरपन आदर ॥
वायस करकोटिया। रूप धरि उग्गरि दादुर ॥
दिय श्राद्ध पिंड जम कग्ग कौं। रंग ककेटक सुरपती ॥
मंडिक मद्द गर्‌यौ वरुन। चंद कहत सुनि नरपती ॥
छं० ॥ ८२१ ॥

(१) ए. कृ. को.-घलिय। (२) मो. छुट्टहि। (३) कृ.-कगह, को.-कवह।

अरिल्ल ॥ तब परिहार वीर वीरन वर । भोजन सह सबै कीनौ नर ॥
राव गोयंद इंद बर उट्ठे । धरिय कन्ह निज बाह स रट्ठे ॥ छं० ॥ ८२२ ॥

सब का शयन करने जाना।

तो लगु भोजन भष्य संपज्जे । इसि करि मंन सुचेतन लज्जे ॥
हो सब साथ सनाथ सयानौ । सूर कहै कब होइ बिहानौ ॥
छं० ॥ ८२३ ॥

वार्ता ॥ जब लगि मिष्टान पान सरसे । तब लगि अंबर 'दिनयर दरसे ॥

पृथ्वीराज का निज शिविर में निःशंक होकर सोना।

दूहा ॥ भइत निसा दिन मुदित बिनु । उड़पति तेज विराज ॥
कथक साथ कथ्थहि कथा । सुष्य सयन प्रथिराज ॥ छं० ॥ ८२५ ॥
अदरस दिनयर देषि करि । तलप प्रजंक असंक ॥
मनहु राज जोगिनिपुरह । सोवै सेंन निसंक ॥ छं० ॥ ८२५ ॥
कोतर रत रत चित्त तह । मानों थान विहंग ॥
जुवती जन मन कुमुद बसि । मनु मनि सथ्थ भुअंग ॥ छं० ॥ ८२६ ॥

जैचंद का कवि को नाटक देखने के लिये बुलवाना।

ओसर पंग सुरत्त किय । चंद सुजानह भट्ट ॥
कहै जाय जुग्गिनि पुरह । नव रस भास सुषट्ट ॥ छं० ॥ ८२७ ॥
और प्रपंच विरंच कौ । निजरि पंग लगि कूर ॥
साच दिषावन राग रँग । चंद बुलाय हजूर ॥ छं० ॥ ८२८ ॥
जाम एक निसि बीति बर । बोलि भट्ट नरिंद ॥
ओसर पंग नरिंद कौ । देषह आय कविंद ॥ छं० ॥ ८२९ ॥
एकाकी बोल्यौ सु कवि । ओसर देषन राय ॥
राज नींद मुक्यौ करत । पौरि संपतौ जाइ ॥ छं० ॥ ८३० ॥

---

(१) ए. कृ. को.-दिनरय ।

जैचंद की सभा की रात्रि के समय की सजावट और शोभा वर्णन।

मुरिल्ल ॥ सुनि न्रप भट्ट महल तजि आइय। देषत पंग सु ओपम पाइय॥
नहि रावन्न सजै सु प्रमानं। क्रम लङ्की [1]गिर अंध गजानं॥
छं० ॥ ८३१ ॥

दूहा ॥ मृदु मृदंग धुनि संचरिय। अलि अलाप सुध व्यंद॥
ताल चिग्गम उपंग सुर। औसर पंग नरिंद॥ छं० ॥ ८३२ ॥

कवित्त ॥ दस हजार मन तेल। सित्त मन अगर फुलेलह॥
सत्त सहस सोब्रन्न। जरित दीवी मित जेलह॥
सहस पाल असुहेज। षेल पाना सु जनावर॥
सीह भग्ग सोहन्नं। कपिल हस्ती बह, नाहर॥
पंषी अनेक जलचर प्रबल। जल थल प्रवत इक हूए॥
जैचंद राइ तप तेज थी। कु निजरि कोई नह जुए॥ छं० ॥ ८३३॥

दूहा ॥ ज्वलन दीप दिय अगर रस। फिरि घनसार तमोर॥
जमनि कपट उच महल मुष। जनु सरद अभ्भ ससि कोर॥
छं० ॥ ८३४ ॥

राजा जैचन्द की सभा में उपस्थित नृत्तकी (वेश्याओं) का वर्णन।

तात धरम्मह मंत इह। रत्तह कांम सु चित्त॥
काम बिरुद्ध निविद्ध किय। न्रत्य निंतबिनि नित्त॥ छं० ॥ ८३५ ॥

भुजंगी ॥ सजी पातुरं नट्ट दीसै सु पंगं। चिहुं पास पामं अतंकी अभंगं॥
उड़ी धाम अग्गार ने धाम छाई। तिनं देषतें चंद ओपंम पाई
॥ छं० ॥ ८३६ ॥

सुरं नूपुरं मद्द बद्दं विहंगं। बरं तारि ता रूप पाचं सुरंगं॥
करै जमनिकं पट्ट दीसै सुरंगी। गतं चंदलं चंद उप्पम्म मंगी॥
छं० ॥ ८३७ ॥

(१) मो.-गिरभंगज।

हरं बार पुब्बं मनंमथ्थ सज्जं । बंध्यौ काम जारं मनौ सीम [1]मज्जं ॥
बजै नूपुरं सद्द पर सद्द धंमै । बजै दुंदभी समर सम राज क्रम्मै ॥
छं० ॥ ८३८ ॥

नगं हेम बर जटित तन घन विराजै । तिनं ओपमा चंद बरदाइ साजै ॥
लगै नौग्रहं उग्रहं काम लग्ग्यौ । मनों आतमा आतमा भाव जग्ग्यौ
छं० ॥ ८३९ ॥

तिनं भट्ट संकै कहै बाल मंचै । तिनं कारनं पातुरं साथ नंचै ॥
कटिं छुद्रघंटी रुलंती विराजै । तिनं उप्पमा सुवर कविचंद साजै ॥
छं० ॥ ८४० ॥

दिपै धनुष कामं षिजै सिंभ चामी । लगै पंच ग्रह चंचलंतं धरासी ॥
रुरै हार भारं सु मुत्ती अनूपं । दमं मुष्प कांती प्रतीब्यंब रूपं ॥
छं० ॥ ८४१ ॥

कथी चंद बंदी उपम्मा अनूपं । करै चंद आहन्न जल सेत कूपं ॥
रुरै बाल कंठं समं [2]मुट्ठि पुंजं । कहै चंद कब्बी उपम्मा [3]अनुज्जं ॥
छं० ॥ ८४२ ॥

तिनं भेष मोहै फिरै बंध नंगं । धरै चंद तत्तं हरं मथ्थ गंगं ॥
बरं भूषनं दूषटं बाल साजै । बरं अट्ठ दूनं सिंगारं विराजै ॥
छं० ॥ ८४३ ॥

वेश्याओं का सरस्वती की वंदना करके नाटक आरंभ करना।

नाटक ॥ दीपांगी चंद्रनेत्रा नलिन अलि मिली, नैन रंगी कुरंगी ॥
काकापी दीर्घनासा सुसर कलिरवा, नारिंगी सारदंगी ॥
इंद्रानी लोल डोला चपल मति धरा, एक बोली अमोली ॥
पूहपा बानी बिसाला सुभग गिरवरा, जैत रंभा सु बोली ॥
छं० ॥ ८४४ ॥

(१) मो.-वज्जं । (२) ए. कृ. को.-कुच्च । (३) ए. कृ. को.-लघुजं ।

नृत्यारंभ की मुद्रा वर्णन।

दूहा ॥ पुहपंजलि दिसि वाम कर । फिरि लग्गी गुरपाइ ॥
तहनि तार सुर धरिय चित । धरनि निरष्पय चाइ ॥
छं० ॥ ८४५ ॥

मुरिल्ल ॥ सजि नग पातुर चातुर चल्ली । कैवर चंद चंद बर बुल्ली ॥
देषि सुवर ओपम [1]वर भल्ली । मदन दीप मालासजि चल्ली ॥
छं० ॥ ८४६

मंगल आलाप।

दूहा ॥ मंग प्रथम जंपं जपै । जै गजमुष अग्रजाइ ॥
सेत दंत पाठक उदै । सोभै पंगुर राइ ॥ छं० ॥ ८४७ ॥

वेश्याओं का नृत्य करना; उनके राग, बाज, ताल, सुरग्राम, हाव भाव आदि का और उनके नाट्य कौशल का वर्णन।

नराज ॥ उग्र अलाप मद्धिता सुरं सु ग्रामपंचमं ।
षडंग तथ्य मूरछं मनंत मान मंचमं ॥
निसंग थारंत अलष्य जापते प्रसंसई ।
दरस्स भाव नूपुरं इतन्न तान नेतई ॥ छं० । ८४८ ॥
सुसंसपत्त तंच कंठ बोधि राग साभरं ।
इहा हुहू निरष्पि तार रंभ चित्त ताहरं ॥
ततंग थेइ तत्तथेइ तत्तथे सुमंडियं ।
थथुंगं थुंग थुंगथे विराम काम मंडयं ॥ छं० ॥ ८४९ ॥
सरग्गमप्प धुन्निधा धुनं धुनं निरष्पियं ।
भवंति जोति अंग मानु अंग अंग लष्पियं ॥

(१) प्र. कृ. को. मुर। (२) प्र. कृ. को.-बोल।

कलं कलं सु [1]सथ्थनं सुभेदनं मनंमनं।
रनक्कि झंकि नूपुरं बुलंत झंझनं झनं ॥ छं० ॥ ८५० ॥
थमंडि थारु घंटिका भमंति मेप रेपयौ।
[2]जुटंति घुंट वेस पास पीत स्याह रेदयौ ॥
लजंति गत्ति तारया कटिं प्रमान कंटरी।
कुसम्मसार आउधं कुसुम्म ओड नंटरी ॥ छं० ॥ ८५१ ॥
उरंप रंभ मेघ रेप सेपरं करं कसं।
तिरप्पि तिप्प सिप्पयौ सु देस दच्छिनं दिसं ॥
सुरंति संगि गातनी धरंति मासने धुने।
जमाइ जोग कट्टरी चिविट्ठ नंच संपने ॥ छं० ॥ ८५२ ॥
तिरप्पि लेत [3]पातुरं सु चातुरं दिपावहीं।
कै अठ्ठ ग्रंह बीय चंद भोर कै अमावहीं ॥
छतीस राग बंधि तार बाल ता बजावहीं ॥
.... छं० ॥ ८५३
सु क्रम्म तार धौ मृदंगचित्त बंध संचरं ॥
विरम्म काम धूव बंधि चंद्र ध्रूव उच्चरं ॥
समौप रथ्थ भेदयौ जु चित्त चित्त चोरई ॥
अनेक भंति चातुरी जुमन्न मेर डोरई ॥ छं० ॥ ८५४ ॥
सिंगार ते कलेवरं परस्सि उभ्भ रावके ॥
सिंगार सोभ पातुरं कि [4]चातुरं सिंगार के ॥
उलट्टि पट्टि नाचनौ फिरट्टि चक्कि चाहनौ ॥
निरत्ति नैंन राषि जानि बंभ पुत्ति बाहनौ ॥ छं० ॥ ८५५ ॥
बिसेष देस द्रुप्पदं बदन्न देंन राजयौ ॥
सु चक्क मेघ चक्क दृत्ति बाल ता विसाजयौ ॥
उरद्ध मुद्ध मंडली अरोह रोह चालिनं ॥
ग्रहंति मुत्ति दुत्तिमा मनों मराल मालिनं ॥ छं० ॥ ८५६ ॥

(१) ए. कृ. को.-मथ्थनं। (२) ए. कृ. को.-जटंति।
(३) ए. कृ. को. पातुरं। (४) ए. कृ. को.-पातुरं।

प्रवीन वान उद्धरी मुनींद्र मुद्र कुंडली ॥
प्रतष्पि भेष उद्धर्यौ सु भुम्मि लोइ षंडली ॥
तलं तलं सुताल ता मृदंग धुंकने घने ॥
अपा अपा भनंत मे जपंत जान ज्यौं जने ॥ छं० ॥ ८५७ ॥

अलाष लाष लाष नेनयं न बैंन भुंषने ॥
नरे नरिंदं मास मेस मेस काम सुष्पने ॥
.... । ....छं० ॥ ८५८ ॥

सप्तमी शनिवार के बीतक की इति।

दूहा ॥ जाम एक छिन [1]दान घट सत्तमि सत्तनिवार ॥
कहु कामिनि सुष रति समर। [2]न्विपनिय नीद निवार ॥छं०॥८५९॥

घटि चियाम घरियार बजि। ससि मिटि तेज अपार।
अकस अच्छ दिन सो तजौ। चिय रुठि निसि भरतार ॥छं०॥८६०॥

नृत्यकी (वेश्या) की प्रशंसा।

साटक ॥ सुष्पं सुष्प मृदंग तल्ल जघनं, रागं कला कोकनं ॥
कंठी कंठ सुभासने समजितं, कामं कला पोषनं ॥
उरभी रंभ कि ता गुनं हरहरो, सुरभीय पवनं पता ॥
एवं सुष्पह काम कुंभ गहिता, जय राज राचं गता ॥ छं०॥८६१॥

कांती भार पुरान यौर्विगलिता, साया न गरुहस्थलं।
तुच्छं तुच्छ तुरास लग्गि कमनं, कलि कुंभ निंदा दलं ॥
मधुरे माधुरयासि आलि अलिनं, अलि भार गुजारियं ॥
तरुनं [3]प्रात लुटीय पंगज जिया, राचं गता साम्प्रतं ॥
छं० ॥ ८६२ ॥

(१) प. कृ. को.-दक्षिन (२) प. कृ. छो.-न्नि य तिय निंदनिवार।
(३) प. कृ. को.-प्रान।

तिपहरा बजने पर नाच बंद होना, जयचंद का निज शयनागार को जाना और कवि का डेरे पर आना।

अरिल्ल ॥ भई ग्रम बेर अथवंत निसं। गछि चोर परहर कपट बसं ॥
झलि झालरि देवर सुष्प नदं। भट्ट विप्र उचारिय बेद बदं ॥
छं० ॥ ८६३ ॥

दूहा ॥ गयौ चंद थानइ न्रपति। मतौ पंग चितवार ॥
भट्ट सथ्थ चहुआन सत। बंधि दियौ करतार ॥ छं० ॥ ८६४ ॥
प्रातराव संप्रापतिग। जहं दर देव अनूप ॥
सयन करहि दरबार तहं। सत्त सहस अस भूप ॥ छं० ॥ ८६५ ॥
गत चिजाम राजन उठ्यौ। सीष दई कविचंद ॥
निसा जाम इक नींद किय। प्रात उठ्यौ जैचंद ॥ छं० ॥ ८६६ ॥
प्रापत चंद कंविद तहं। जहं ढिल्ली चहुआन ॥
जगि बरदाइ बर बुल्लै। बरबंधन सुरतान ॥ छं० ॥ ८६७ ॥

इधर पृथ्वीराज का सामंत मंडली सहित सभा में बैठना, प्रस्तुत सामंतों के नाम और गुप्तचर का सब चरित्र चरच कर जैचन्द से जा कहना।

भुजंगी ॥ सभा सोभियं राज चहुआन पासं। बिठे सूर सामंत रस बीर लासं।
सभा सोभियं सूर सूरं प्रमानं। तहां बैठियं सूर चौहान ध्यानं ॥
छं० ॥ ८६८ ॥
तहां बैठियं राइ गोयंद जूपं। जिनै मुग्गली बंध दिय हथ्थ भूपं ॥
भरं दाहिमौ सोभि नरसिंघ बीरं। जिनै पत्ति बंध्यौ घुरासान मीरं॥
छं० ॥ ८६९ ॥
सभा सोभियं सूर कूरंभरायं। जिनै आस हांसीपुरं जीति पायं॥
सभा मभ्भ सारंग चाम्मुक्क मंड्यौ। मनौं लाल मोतीन में मेर छंड्यौ॥
छं० ॥ ८७० ॥

सभा सोभियं सूर बघ्घेलरायं। जिनै सेइरो स्वामि किल्ली चढ़ायं॥
रजं राज पामार खग्गं सलग्गं। जिनै बंधि गोरी सबै सेन भग्गं॥
छं० ॥ ८७१ ॥

सभा सोभियं राइ आल्हन्न रायं। जिनै ठेलि ठट्टा समुद्दं बहायं॥
सभा बीरचंदं सुचंदं पुंडीरं। जिनें प्रांन रक्कं सरद्दं गँभीरं॥
छं० ॥ ८७२ ॥

सभा सोभियं बीर भोहां प्रकारं। जिनैं देवगिरि सीस भिल्लै दुधारं॥
सभा धावरं सोभि नारेन बीरं। जिनै भंजियं मीर सुरतान तीरं॥
छं० ॥ ८७३ ॥

सभा सोभियं जावलौ जग्ग कातं। जिनै षेदि सब्बं ससी पग्ग जंतं॥
सबै सूर सामंत सभ में बिराजैं। जिनै देषि ससि सरद की भांति लाजैं॥
छं० ॥ ८७४ ॥

चरं संभरी कथ्थ जंपै ननिंदं। इदं बैठियं भासि प्रथमीपुरंदं॥
दुरै कनक सीसं सु चौरं जु दीसं। मनों डग्गयौ भान प्राची प्रदीसं॥
छं० ॥ ८७५ ॥

'सुनी पंग बीरं अबी रंति मिंटी। करे जोर जग्गं रह्यौ भान घंटी॥
बरं बोलहीं दिग्ग विहु जग्ग एकं। जनों आरजं बार बर इंद मेकं
छं० ॥ ८७६ ॥

अरिल्ल ॥ गयौ दूत सब देषि चरित्तं। पंग अग्गि जंपी बर तत्तं॥
भट्ट जानि जिन भुल्लो चंदं। बैठौ जेम प्रथीपुर इंदं॥छं०॥८७७॥

दूत के बचन सुनकर जैचन्द का प्रसन्न होना और शिकारी तैयारी होने की आज्ञा देना।

कवित्त ॥ श्रवन सुनिग कामधज्ज। पंग फुल्ल्यौ बर भासं॥
ग्रात फुल्लि सतपत्र। संभ्रु कामोद प्रकासं॥
[२]बार रूप भौ बीर। भीम दुस्सासन बारं॥
द्रोन कज्ज हनुमान। कन्ह गोधन्न उपारं॥

(१) ए. कृ. को. सुनी पंग बीरं अबी रीति मिट्टी"। (२) मो.-वीर

उद्धरं चंद चंदहति सम । दंद पुत्र भंजन सु दह ॥
आषेट हुकम दै पुत्र दिसि । चंद समप्पन दान वह ॥ छं० ॥ ८७८ ॥

जैचन्द की शिकारी सजनई की शोभा वर्णन ।

आषेटक पहुपंग । बाजि नीसान प्रथम बर ॥
हिंदवान अरु असुर । गयद सज्जीय [1]धरबर ॥
दुतिय बज्जि नीसान । सबै भूत हैबर सबर ॥
मग्ग अठ्ठ षय वांम । राज कमधज्जह समभर ॥
बज्जै निसांन न्रपतिय चढ़ी । पंच सबद बाजिय बजि ॥
सामंत सूर बर भरि भरिय । करह न दंद नरिंद कजि ॥ छं० ॥ ८७९ ॥

दूहा ॥ आषेटक पहु पंग क्रत । चढ़िग लष्य बजि तूर ॥
आज बीर कमधज्ज सौ । इंद फुनिंद न सूर ॥ छं० ॥ ८८० ॥
क्रम्यौ राज जैचंद बर । जहां चंद प्रथिराज ॥
सुभि ग्रहगन मध्ये सवित । अद्भुत चरित विराज ॥ छं० ॥ ८८१ ॥

कवित्त ॥ नग सु तुल्य चलि नाग । मान सेना कितीस तर ॥
मनहुं काम कर सज्जि । रंग चवरंग [2]चंग चर ॥
अद्भुत चरित विराज । नग्ग जर बंग विराजत ॥
अंतरछ्यि हय [3]हछ्यि । मनहुं पातुर तिय साजत ॥
दरबार उतरि भयभीर भर । सकल सोक बर इंद कों ॥
जैचंद राज विजपाल [4]सुअ । विदा करन कविचंद कों ॥
छं० ॥ ८८२ ॥

इंद नाराच ॥ चल्यौ नरिंद पंग राइ बाजि बीर सद्दयं ।
अनेक राइ राज सज्जि हि [5]जान नद्दयं ॥
कनंक हथ्थ पच सुलक्करीन कंबियं ।
मनों समंद उद्धि सोर बीर बोझ क्रम्मियं ॥ छं० ॥ ८८३ ॥

---

(१) मो.-धर पर ।
(२) मो.-चंक, चक्क ।
(३) मो.-हाच्छि ।
(४) ए. कृ. को.-तन ।
(५) को.-जाम ।

सुपंग अंग बंधि बीर बार कंद्रपं कयं।
रजंत अग्ग एक सौ ज दंति पंति चोरयं ॥
तिमह रह हेम पट्ट घट्ट यट्ट फेरयं।
सुभंत छच राज सौस हेम दंड मेरयं ॥ छं० ॥ ८८४ ॥

धनुष्पधार मीर बंद दुष्ट [1]अप्प दिप्पयं।
रमंत तत्त बेध साम बान ते विसप्पयं ॥
सुदुंद सज्ज हथ्थ रथ्थ पट्ट पोत चल्लयं।
मनों करीय नाग अग्ग पट्ट कांम घुल्लयं ॥ छं० ॥ ८८५ ॥

दसं दिसान कंपवै निमान राज मंभरै।
सुन्यौ जू सूर लोक वाम पुंज तेज विफ्फुरै ॥
.... छं० ॥ ८८६ ॥

जैचंद का सुखासन (तामजाम) पर सवार होना।

दूहा ॥ मिमि बज्जहिं गंगा बरन। दान कवी पति सेव ॥
चढ़त सुषासन संमुहौ। जहं सामंत नृपेव ॥ छं० ॥ ८८७ ॥

पंगराज का मंत्री को बुलाकर शिकार की तैयारी बंद करके कवि की विदाई के विषय में सलाह करना।

कवित्त ॥ बोलि सु मंचिय पंग। मुक्कि आषेट राइ बल ॥
भट्ट कित्ति चल चित्त। भट्ट निस चलइ कित्ति चल ॥
भेद मंच दिय दान। दंद दालिद्द कवि भग्गिय ॥
सवें मनोरथ भग्गि। सुष्प आसुष्प विलग्गिय ॥
जाचै न दून हिंदून दुइ। कै कवि भग्गौ कंक बल ॥
संभारै बाल संभरि धनी। जम्म चंद भग्गौ जलल ॥ छं० ॥ ८८८ ॥

*चिंति चित्त कमधज्ज। दान बेताल सु विक्रम ॥
अद्ध लष्प मन कनक। अंक मेटन विधि अक्रम ॥

(१) प. अप्प।
* यह छन्द सो. प्रति में नहीं है।

मुत्तिय मन इकतीस । दुरद मदगंध प्रकासं ॥
वारंगन इकतीस । रूप लावन्य निवासं ॥
मंची सुमंच इह कुमति किय । बरजि राइ जैचंद कौं ॥
पन कितौ कहरि कृप्पन्न होइ । इतिक विदा सजि चंद कौं ॥
छं० ॥ ८८९ ॥

मंत्री सुमंत का अपनी अनुमति देना ।

इन फाल ॥ सो मंच मंचिय तब्ब । करि अरज फेरि सु कब्ब ॥
दहतीय सजि गजराज । सुनि गगन मंद अवाज ॥ छं० ॥ ८९० ॥
सम इंद्र आसन जूप । चलि नाग नाग सरूप ॥
घन चुअत मद परि अंत । गिरि राज झरनि झरंत ॥ छं०॥ ८९१ ॥
जटि कनक [1]काज सुरंग । सम बसति सोभ दुरंग ॥
सत उभय तुरिय सु तेज । दुअ अंम वंस विरेज ॥ छं० ॥ ८९२ ॥
फरकंत चातुर जेम । असमान सज्जत तेम ॥
नग जीन करित अमोल । उत साज सज्जित तोल ॥ छं० ॥८९३॥
लगि लाग लेत ललित्त । गति अंतरिच्छ कलित्त ॥
रस उभै बानो हेम । सतमत्र तुल्लिय तेम ॥ छं० ॥ ८९४ ॥
दै लाप पूरि प्रमान । गिरिराज उदर समान ॥
मनि रतन मोल अनंत । गनि होइ गनिकन अंत ॥
छं० ॥ ८९५ ॥
फिरि पुरष कोनी कोस । मकलाति फिरगरु तोस ॥
जरबाफ कसब जराव । उद्दोत करन प्रभाव ॥ छं० ॥ ८९६ ॥
बहु जात चामर रूप । सिर ढुरै जानि सुभूप ॥
जिन चरचि बहुत सुवास । कलि कसब सवित उहास ॥
छं० ॥ ८९७ ॥
जै चंद इंद विराज । है गै सुघन घन साज ॥
कविचंद कारन इंद । सम दैन चलि जैचंद ॥ छं० ॥ ८९८ ॥

(१) ए. कृ. कां.-साज ।

कविचन्द की विदाई के सामान का वर्णन।

कवित्त ॥ तीस सज्जि गजराज। गगन गर जार मंद करि ॥
दै सें चपल तुरंग। चरन लग्गै धरनि पर ॥
हाटक षोडस वानि। मनह सत केवल तोलिय ॥
रतन अमोलक मुत्ति। परषि ते गंठहि बंधिय ॥
मकखाति फिरेंग चामर चरचि। कसव सबें विधि जर जरिय ॥
जैचंद इंद वित विविध लै। विदा करन चलि चंद किय ॥
छं० ॥ ८९९ ॥

दूहा ॥ तीस करिय मुत्तिय सघन। दै सें तुरंग बनाय ॥
द्रव्य बदर बहु संग लिय। भट्ट समंधन जाय ॥ छं० ॥ ९०० ॥

पंगराज के चलने समय असकुन होना।

कवित्त ॥ भट्ट समंधन जात। राज नट बिंद प्रवंधी ॥
सौस बैंन नहि चित्त। मझझ हक्कत सालष्यौ ॥
सिभू [2]भेस अनंत। रुंड माला रचि गुंथी ॥
षंड षंड अंगार। मच जूरी तत रुंथी ॥
उष्यई कंभ पग मग्ग करि। गिद्धि पष फुनि फुनि करै ॥
जनय चोट धाराहरह। रस प्रसिद्ध बीरह भिरै ॥ छं० ॥ ९०१ ॥

दूहा ॥ कुरलंती चिल्हिय गयन। चंच विलग्गी सप्प ॥
वाम अंग मंजार भय। चक्रित चिंत नृप अप्प ॥ छं० ॥ ९०२ ॥

पंगराज का चिंता करके कहना कि जिस प्रकार से शत्रु हाथ आवे सो करो।

बोलि सवन्नी सुनि श्रवन। सुर अन भग अकथ्थ ॥
धन्नि भ्रंम भरि कित्ति जन। ज्यों अरि आवै हथ्थ ॥ छं० ॥ ९०३ ॥

(१) मो.-चित। (२) मो.-सिभ सेस।

मंत्रियों की सलाह से पंगराज का कवि के डेरे पर जाना।

भुजंगी ॥ ननं मांनियं जानियं देव भंती। गयं [1]चंद नृप ग्रेह देषै बिरंती
गतं सायरं साम गभीर दालं। सदं जा प्रवालं पवनं [2]प्रचालं ॥
छं० ॥ ९०४ ॥

बलं तेज केली ननं जाहि कालं। सुरज्जं समं पाइ संचार आलं॥
बरं लावनं इंदियं दिग्ग पालं। बलीनं बलीनं भरं विध्व बालं ॥
छ० ॥ ९०५ ॥

ब्रह्मंडं विजै थंभ करि हथ्थ बज्जं। पगं जानि पारथ्थ भारथ्थ सज्जं॥
दिदी असु दिट्ठी सबैं सथ्थ रारी। धरी सथ्थ नंदी संसारी सुभारी ॥
छं० ॥ ९०६ ॥

दिपी पंग जैचंद इंदं परथ्थी। तहांईय आसीस बरदाय भथ्थी॥
छ० ॥ ९०७ ॥

जैचन्द का शहर कोतवाल रावण को सेना सहित साथ में लेना।

कवित्त ॥ जीत मत्त पहुपंग। बोलि राठौर सुबीरं ॥
साम दान करि भेद। डंड बंध्यौ अरि मीरं ॥
छल बल कल संग्रहै। दई दुरजन दावानल ॥
भट्ट थान आहट्टि। पंग बुट्टै सारह जल ॥
चतुरंग लच्छि लीजै सघन। दै दुवाह घायन चढ़हि ॥
सब सथ्थ सथ्थ प्रथिराज बल। सुनौ सुभर सो बुद्धि इहि ॥
छ० ॥ ९०८ ॥

रावण के साथ में जाने वाले योद्धाओं का वर्णन।

(१) ए. कृ. को.-गयंदंच। (२) ए. कृ. को.-प्रवालं।

दूहा ॥ अगि मोकलि रावन न्हपति। इक्का-यौ कविराज ॥
भट्ट इट्ट मोकलि सु वर। कंक विसाहन काज ॥ छं० ॥ ९०९ ॥

कवित्त ॥ मेर उच्चवहि वथ्थ। देय तन वज्ज पात कर ॥
भषै च्यार अज इक्क। नेर सम क्रंति देह धर ॥
इठिय अग्ग रिन परहि। स्वामि स्वामित्तन चुक्कहि ॥
पर नायि पर मुष्य धर। धरा धीर सु रष्पहि ॥
कर चलहि अष्य पय अचल बर। रावन सथ्थ सु मंडि लिय ॥
दिष्पिय सु भंति इह कव्वि करि। मनुं सरद अभ्भ ससि कुंडलिय॥
छं० ॥ ९१० ॥

रावण का कवि को जैचन्द की अवाई की सूचना देकर नाका जा बांधना।

दूहा ॥ मवँ क्रूर ग्रह पंग बर। एकादस न्हप राह ॥
दुष्ट मंच दानह करिग। भट्ट सुमंदन राहु ॥ छं० ॥ ९११ ॥
गयौ रावन मैलान बर। कपट चित्त मुह मिट्ठ ॥
दान समप्पन भट्ट कों। चित बंधन बर दिट्ठ ॥ छं० ॥ ९१२ ॥

पंगराज के पहुंचने पर कवि का उसे सादर आसन देना और उसका सुयश पढ़ना।

कवित्त गयौ रावन मेरहान। चंद बरदिया [1]समप्पन
देषि सिंघासन सथ्थो। पाम पारस्स इंद्र जनु ॥
कवि आदर बहु कियौ। देषि कनवज्ज मुकट मनि ॥
इह ढिल्लिय सुर दत्त। बियौ नहि गनै तुभ्भ गिनि ॥
थिरु रहै थवा इत वज्ज कर। छंडि सिकारहि छिन कुरहि ॥
[2]जिहि असिय लष्प पलानि यहि। पान देहि दिढ हथ्थ गहि ॥
छं० ॥ ९१३ ॥

(१) मो.-समग्गन। (२) मो. निसि।

पान देहु दिढ़ हथ्थ । परिस पावास पंग बर ॥
जा आगै अस तेज । तेज कंपहि जु नाग नर ॥
देषि प्रथीपुर उदै । सूर सरनै गौ तंतक ॥
बर कंपै द्रिगपाल । चित्त चंचल गत्तौ थ्रक ॥
अघ हरन किरन किरनौ प्रचंड । देखि दून गति देषियै ॥
अप्पि बर पान पारस सुगत । दुतौ परस सो लिष्पियै
छं० ॥ ९१४ ॥

पान धार दै पान । भट्ट न्रिप जानि मंडि कर ॥
नर नरिंद जैचंद । जग्गि सम मंडि देव बर ॥
इंद्र मौज जच्चन [1]विसा । सह होय जचाइय ॥
। .... । .... ॥
[2]चय हथ्थ लंक उप्पर न्रपति । तरन हथ्थ कमधज्ज कहि ॥
आदि करि देव दानव सुरह । बलि जांच्यो बावन जुजहि ॥
छं० ॥ ९१५ ॥

खवास वेष धारी पृथ्वीराज का जैचन्द को बाएं हाथ से पान देना और पंगराज का उसे अंगीकार न करना।

दूहा ॥ पान देइ दिढ हथ्थ गहि । बर करि हथ्थ दिवंक ॥
मनु रोहिनि सो मिलिग ज्यों । बीय उदित्त मयंक ॥ छं० ॥ ९१६ ॥
लिय सु पान भुअ राज रुप । मुखप्रसन्न [3]मन रोस ॥
दिषत न्रपति चल्ल चिंत किय । पुत्र प्रसन्नौ दोस ॥ छं० ॥ ९१७ ॥
करै न कर प्रथिराज तर । धरै न कर जैचंद ॥
उभय नयन अंकुरि परिग । ज्यों जुग मत्त गयंद ॥ छं० ॥ ९१८ ॥
[4]सुनि तमोर पट्ठिय सुकर । मुष उत करि दिठ बंक ॥

(१) मो. पिमाल । (२) मो.-त्रय लोक हथ्थ लंक उद्धर न्रपति ।
(३) ए. कृ. को.-मुन मुत । (४) ए. कृ. को.-मुनि ।

जनु छैलनि कुलटा मिलै। बहुत दिवस [1]रस बंक ॥ छं० ॥ ९१९ ॥
राज पान जब अप्पही। यंग न मंडै हथ्थ ॥
रोस नृपति जब चिंति मन। कही चंद तब गथ्थ ॥ छं० ॥९२० ॥

कवि का श्लोक पढ़ कर जैचन्द को शान्त करना।

श्लोक ॥ तुलसीयं बिप्र हस्तेषु। विभूति श्रिय जोगिनां ॥
तांबूलं चंडि हस्तेषु। चयो दानेव आदरं ॥ छं० ॥ ९२१ ॥

जैचन्द का पान अंगीकार करना परंतु पृथ्वीराज का ठेल कर पान देना।

चौपाई ॥ भट्ट जानि करि मंद्यौ राय। उहि तंमोर दियौ नृप चाइ ॥
ठट्ठै पानि दियौ नित ठेलि। मनौं वज्रपति वज्रह मेलि ॥छं०॥९२२॥

पृथ्वीराज का जैचंद के हाथ में नख गड़ा देना।

दूहा ॥ पानि पान करिकें दियौ। कमधज्जह प्रथिराज ॥
चख्यौ रकत कर पल्लवनि। ग्रह्यौ कुलिंगन बाज ॥ छं० ॥ ९२३ ॥
कर चंपे नृप तास कर सारंग दिड्ढ सुचंग ॥
पानि प्रथीपति दब्बियौ। ओन चख्यौ नष संग ॥ छं० ॥ ९२४ ॥

इस घटना से जैचंद का चित्त चंचल हो उठना।

कवित्त ॥ पान धार दै पान। दिष्ट आरुहिय बंक बर ॥
एक थान दै सूर। तेज दिष्यौ कि सूर बर ॥
[2]बिहुन हथ्थ विभ्भरै। लाज संकर गर बंधिय ॥
अंप वह दिषि भट्ट। बीर भंजन सु बीर पिय ॥
निश्चल सु चित्त चहुआन कौ। चित निश्चल नन पंग बर ॥
लग्गौ सु पान नृप वज्ज सर। पान धरे बर बज्ज [3]सर ॥
छं० ॥ ९२५ ॥

दूहा ॥ प्रथमहि सभा परष्यौ। पानधार नहि भट्ट ॥
नृप कवियान सपत्तयौ। तब परषयौ निपट्ट ॥ छं० ॥ ९२६ ।

(१) मो.-रिम। (२) ए. कृ. को.-बहुन। (३) ए. कृ. को.-कर।

भुअ बंकी किय पंग नृप। अप्पि हथ्थ तंमोर ॥
मनहु बज्जपति वज्ज धर। सब अप्पौ तिहि जोर छं० ॥ ९२७ ॥

जैचन्द का महलों में आकर मंत्री से कहना कि कवि के साथ का खवास पृथ्वीराज हैं उसको जैसे बने पकड़ो।

कवित्त ॥ गहि कर पान सु राज। फिर्यौ निज पंग ग्रेह वर ॥
सोमंचिक परधान। बोल उच्चरिय क्रोध भर ॥
गहौ राज संभरि नरेस। सामंत अंत रिन ॥
मिटै बाल उर आस। आस जीवन सु मिटै तिन ॥
बोलिय सुमिच कमधज्ज वर। छग्गर भट्ट न पृथु गहन ॥
भूत भ्रात तात सामंत सुत। छलन काज पठ्ठिय पहन।
छं० ॥ ९२८ ॥

मंत्री का कहना कि पृथ्वीराज खवास कभी न बनेगा यह सब आपके चिढ़ाने को किया गया है।

दूहा ॥ छलन काज पठ्ठिय पहु न। मिलिन धम्म दरबार ॥
पान भट्ट पृथु किम ग्रहै। नृप बर सोचि विचार छं० ॥ ९२९ ॥
कवित्त ॥ नृप बर सोचि विचारि। संग सुभ्भै बरदाइय ॥
अवधि बसौठ रु भट्ट। बंस नृप लगै बुराइय ॥
इह कलि कित्ति नरिंद। रज्ज अपजस हुअ ढंकन ॥
दिष्टमान बिनसिहै। लग्गि अंमर कुल अंकन ॥
जुग्गिनि समथ्थ जौ इन हुए। तौ सब भ्रत गिनि मारियै ॥
रिधि मंच राइ राजन सुनौ। विप्र भट्ट नन टारियै ॥ छं०॥ ९३०॥

जैचन्द का कवि को बुला कर पूछना कि सच कहो तुम्हारे साथ पृथ्वीराज हैं या नहीं।

चौपाई ॥ टरिय राज उर क्रोध विचारिय। बरदाई मिथ्या न उचारिय ॥
फिरि जैचंद पिथ्थ यह आयौ। निज कर रावन भट्ट बुलायौ ॥
छ० ॥ ९३१ ॥

(१) मो.-राव भुभट्ट ।

कवित्त ॥ अप्पि पान करि मान। नाथ कनवज्ज अप्प कर ॥
दिल्लीवै चहुआन। तास बर भट्ट सिद्धि हर ॥
अमर नाग नर लोक। जास गुन जान ग्यान बर ॥
आदि बंध मुनिवर। प्रबंध षट भाष भाव भर ॥
नव रस पुरान नव दून जुत। चतुर देह चातुर सु तप ॥
रष्यौ न राज अप्रछन्न कवि। कहत तत्त कनवज्ज नृप ॥
छं० ॥ ९३२ ॥

चौपाई ॥ बोलो भट्ट सु मन्ति विचार। किन सिर आतपच आधार ॥
जौ प्रथु ह्वै तौ हनों ततच्छिन। नहिं तुझ है गै 'देउं अथ्थि घन॥
छं० ॥ ९३३ ॥

कवि चंद का स्वीकार करना कि पृथ्वीराज हैं और साथ वाले सब सामंतों का नाम ग्राम वर्णन करना।

दूहा ॥ पद्धरि छंद सु चंद कहि। सिंघासन प्रथिराज ॥
कन्ह सु दिष्पिन जन्ह गिरि। निद्धुर वाम विराज छं० ॥ ९३४ ॥

पद्धरी ॥ बैठो [1]सुभट्ट आरोहि पिट्ठ। तिन ढिगह सोभ इंद्रह बयट्ठ ॥
छचह उतग चामर बइंभ। छण्णह सरूप फुल्लौत संभ ॥छ०॥९३५॥
डोलीय पंच आरोहि तिथ्थ। तिन मझ्झ बयठ निद्धुर समथ्थ ॥
बल कन्ह देषि पट्टी अरोहि। कौरवह घत्ति कर्नह समोहि ॥
छं० ॥ ९३६ ॥

पुच्छै सु बत्त कनवज्ज राइ। देषेव रूप प्रज्जषित लाइ ॥
दामिन्त रूप सामंत देषि। खिन्नौ सु भ्रंम जम्मह स लेष ॥
छं० ॥ ९३७ ॥

कन्हा नरिंद चहुआन बंक। पट्टनह राव माच्यौ जु कंक ॥
गोयंद राव गहिलौत नेस। जिन दोय फेर गज्जन गहेस ॥छं०॥९३८॥
जैतह पमार अग्गू नरेस। छचह धरंत मथ्थै असेस ॥
पंडियौ राय बंधोति साथ। बलबंधि साह दस सहस लाथ ॥
छं० ॥ ९३९ ॥

(१) प. कृ. को.-दिया। (२) प. कृ. को.-जु।

हरसिंघ नाम बर सिंघ बीर। तिन हथ्थ जुट्टि घचवट्ट नीर॥
वालुका राव सथ्थौ सु पंग। संभलिय राय झाला प्रसंग॥
छं० ॥ ६४० ॥

विंभ राज देपि चहुआन रूप। जिन भरिय लष्प द्रव्यान कूप॥
परमाल देपि चंदेल राज। बंधिया राय द्रव्यान काज॥
छं० ॥ ६४१ ॥

बारड़ सु राव अधिपत्ति सेन। तिन चढ़त लग्गि वह उड्डि रेन॥
अचलेस नाम भट्टौ सु संध। मुरधरह राइ पडिहार बंध॥
छं० ॥ ६४२ ॥

परिहार पीप सामंत सुद्ध। पतिसाह बंधि लीयौ अरुद्ध॥
निढुरह राय अवनी अकंप। गजनेस राइ ज्वाला तलंप॥छं०॥६४३॥

तोंवर पहार अवनी सु जोर। बंधयौ राइ कन्ना ममोरि॥
कूरंभ राव पज्जून बीर। सद्धये जेन इक लष्प मीर॥छं०॥६४४॥

नरसिंघ एक नागौर पत्ति। रिनधीर राज लीयै जुगत्ति॥
परमार सलप जालौर राह। जिन बंधि लिद्ध गजनेस साहि॥
छं० ॥ ६४५ ॥

कंगुरौ देस दल लौन ढाहि। कीनी सु एक पिच वट्ट राह॥
परमार धीर रिनधीर सथ्थ। मेवात बंधि मुग्गल अकथ्थ॥
छं० ॥ ६४६ ॥

जदव सु जाम पीचौ प्रसंग। लौनें सु देस अवनी पुलिंग॥
हाहुलिराय कंगुर नरेस। लीए सु सत्त पतिसाह देस॥
छं० ॥ ६४७ ॥

जंघार भीम उड़गन सु सोह। रिन जुद्ध बीर संकर अरोह॥
सारन्न राइ मोरी भुआल। कट्ठिया राइ जिन किद्ध काल॥
छं० ॥ ६४८ ॥

तेजलह डोड परिहार रान। भिड़ एक तेक बंदै सु भान॥
गुजरात धनी सागौत गौर। आरनि सु माहि बंधंत मौर॥
छं० ॥ ६४९ ॥

परिहार एक तारन सुरष्प । कर सलय लोय सेना समष्प ॥
वारड़ सुधीर सहसौ करन्न । वरियाति वीस हुअ छिन्न भिन्न ॥
छं० ॥ ९५० ॥

चहुआन एक अततार रुप । कालिंज राइ बंध्यौ अनूप ॥
बल्लिराइ एक भारथ्थ भीम । कूरंभ राव चंपेव सीम ॥छं०॥९५१॥
भोंहां चँदेल जिन बंधराज । पानीय पंथ प्रथिराज काज ॥
गुज्जरह राम धूवत समान । मारयौ जेन आलील थान ॥
छं० ॥ ९५२ ॥

चंदेल माल थट्टा अरोह । साधियौ बीर जनचंद मोह ॥
रस सूर रोह मेरह समान । जिन हेम प्रवत लिय जोर पान ॥
छं० ॥ ९५३ ॥

मंडलीक राव वघ्घह अरोह । आवह्व एक चिस्सूल सोह ॥
पूरन्न माल थल हंड षेत । जिन सूर दीन सत अस्वमेत ॥छं॥९५४॥
धावरह धीर सामंत राज । जिन जीव एक प्रथिराज काज ॥
हाडौ हमीर सथ्थं कुलाह । बंधयौ जेन भिरि पातिसाहि ॥छं॥९५५॥
रावत्त राम सामंत सूर । जिन द्रिग्ग देषि नट्ठे करूर ॥
जावलौ जल्ह रिनतूर बज्जि । लिय बंधि जेन इकतीस रज्जि ॥
छं० ॥ ९५६ ॥

चालुक्क एक भारो जु सोह । लीयें जु फिरै इक सहस लोह ॥
बग्गरी बघ्घ षेता पँगार । रिनथंभ तेन करि मार मार ॥ ९५७ ॥
दाहिम सुभट्ट संग्राम धाम । मारयौ वरुन करुना सु काम ॥
मंडलीक [1]कंकवे सेन चंद । बंधयौ जेन भौमह नरिंद ॥छं०॥९५८॥
परमार सूर सामल नरेस । रिन मंझ अटल दल असहेस ॥
परमार कनक पछवान लीन । प्रथिराज ग्राम दस सहस दीन ॥
छं० ॥ ९५९ ॥

संजम हराय बर जुद्ध नेस । पोडस्स दान दिय वाल वेस ॥
चाटौ जु टांक बैठौ नरिंदं । देषंत जानि धुअ रूप इंद ॥ छं०॥ ९६०॥

(१) ए. क. को.-कंसवे ।

विरसन्न इसौ चाटंत सेन । रिन जुवत सेन उड्डंत रेन ॥
साषुलौ सहस मलनेत बंध । दस सहस ग्राम पट्टैति बंध ॥
छं० ॥ ९९१ ॥

विक्रमादित्य कमधज्ज राइ । जिन देस भोग लीयात नाय ॥
भुज राज सुभट दो सहस सेन । बंधिया राइ अवधूत तेन ॥
छं० ॥ ९९२ ॥

मोरीति सुभट सादूल नरिंद । कंठिया राव वासीति हिंद ॥
बघ्घेल हूर सोहंत सेन । लिन्नीय पग्ग बल दृष्पि नेन ॥
छं० ॥ ९९३ ॥

लंगरिय राव मथ्थह भुआल । अध देम दिट्ठ व्याघात काल ॥
पुंडीर चंद सोहंत सथ्थ । किरनाल नेच कीनी अकथ्थ ॥
छं० ॥ ९९४ ॥

परिहार सुअन तारन सु सोह । देषंत अछर करि मोह सोह ॥
केहरिय मल्हनासह विधूम । बधनौर वास सत जाइ झूम ॥
छं० ॥ ९९५ ॥

हरिदेव सहस सामंत रूप । जदव सु जाज अवनी अकूप ॥
उट्ठठी गंभीर सोहंत एह । रज रीति रूप रष्पीति रेह ॥
छं० ॥ ९९६ ॥

सामंत राइ पुहकर समथ्थ । जिन लीन दिल्लि जोधान कथ्थ ॥
दाहिमौ कन्ह समियान गट्ठ । बंधि लिय राय सोकतल बट्ठ ॥
छं० ॥ ९९७ ॥

चहुआन पंचाइन सहस सेन । चलंत सथ्थ उड्डंत रेन ॥
परिहार इसौ रिनधीर सोह । रिन चढ़ै जन्म जालिंम लोह ॥
छं० ॥ ९९८ ॥

सामंत सित्त पंगुर नरेस । तिन पिट्ठ हूर सत्तह कहेस ॥
तिन पिट्ठ हूर सुभटह हजार । रिन जुद्ध करंतह मार मार ॥
छं० ॥ ९९९ ॥

सामंत एक बुंदह सु जत्त । उट्ठंत बीर घरि एक सत्त ॥

जुध करहि सूर धड़ मचहि सार। मस्तकहि पिट्ठ करै मार मार॥
छं० ॥ ९७० ॥
पंगुरै देषि चित चक्रित नाथ। असमान सीस लगि दिस्स नाथ॥
डेरौ सुदीन चयकोस माहि। जे लिए रखत उत्तंग साह॥
छं० ॥ ९७१ ॥
अनेक कमल अनेक रूप। रह वास थान तल उंच सूप॥
कनवज्जराय तब उट्ठि चल्लि। रायान राय साषा न हल्लि॥छं०॥९७२॥
दस लष्ष रष्षि चौकी भुआल। इंद्र रूप दरस सेवंत काल॥
प्रथिराज प्रात कीनौ पयान। दस लाष वींटि परि परस [1]भान॥
छं० ॥ ९७३ ॥

जैचन्द का हुक्म देना कि पड़ाव घेर लिया जाय, पृथ्वीराज जाने न पावे।

कवित्त॥ कहि सब कनवज राइ। भज्जि प्रथिराज जाइ जिन॥
असिय लष्ष हय दलह। षबरि किज्जै सु पिन्नपिन॥
हसिय सव्व सामंत। रोस प्रथिराज उहासै॥
मिलिय सेन रघुबंस। चंद तब भट्ट प्रगासै॥
इह दैत्य रूप जुध मंगिहै। भाज नीक परतह बहै॥
कनवज्ज नाथ मन चिंत इह। जुध अनेक बल संग्रहै॥छं०॥९७४॥
पहचान्यौ जयचंद। इहत दिल्ल सुर लिष्यौ॥
नहिय चंड उनिहार। दुसह दारुन तन दिष्यौ॥
कर संद्यौ करिवार। कहै कनवज्ज मुकुटमनि॥
हय गय दल पष्परहु। भाजि प्रथिराज जाइ जिन॥
इत्तनौ सोच भुअपति उद्यौ। सुनि नरिंद किन्नौ न भौ॥
सामंत सूर हसि राज सों। कहै भलौ रजपूत भौ॥ छं० ॥ ९७५ ॥

इधर सामंतों सहित पृथ्वीराज का कमरें कस कर तैयार होना।

(१) प्र. कृ. को.-पसिमान।

धनि धनि धनि सामंत । सूर कहि राज इंद बर ॥
निरषि हरषि कर करषि । परषि कनवज्ज नाथ तर ॥
निरभै सोम सिंगार । करन कलहंत मंत मन ॥
नरनि नाह कन्हह कमंध । उच्चयौ बीर तन ॥
आभासि अवर आनन सुभट । थट्ट मंति चट्टे चलन ॥
करि साथ तुरंगम संथ्थ भर । कसि ठट्टे अप अप बलन ॥
छं० ॥ ९७९ ॥

दोनों ओर के वीरों की तैयारियां करना ।

रसावला ॥ उग्यौ पंग राजौ, रवी तेज साजौ। उठे बीर सूरं, छछोहं सभीरं ॥
छं० ॥ ९७७ ॥
भृंगीराज राजौ, सुराजी विराजौ। चिह्नं पास साजौ, अरीदीस गाजौ॥
छं० ॥ ९७८ ॥
दोऊ रोस जग्गी, प्रलै जानि अग्गी । .... ॥छं०॥९७९॥

पृथ्वीराज के सामंतों की तैयारियां और उनका उत्तेज ।

कवित्त॥ कंठ सूर दाहिम्म । अंग लग्गौ सुवास तन ॥
लष्प मद्धि दुह प्रगटि । अग्गि उट्ठी सूरं घन ॥
चंद धोय ज्यौं बट्ट । अग्गि लग्गी दरसानी ॥
हय [1]हय हय उच्चार । गहगगह सुनिये बानी ॥
खंगरीराव [2]लोहा लहारी । धावौगौ चहुआन दल ॥
बर भरौ बीर जित्तन अरिय । [3]मुगति पंथ घुल्लिय सु बिल ॥
छं० ॥ ९८० ॥

कवित्त ॥ पब्बैसर प्रथिराज । राज सोमेसर संभरि ॥
खंगी खंगरराइ । राय संजम सुअ जंबरि ॥
वारा हाथह भुल्लि । बग्घ उग्यौ लोहानह ॥
पारद्धी भुलि धार । मूल चंप्पी चहुआनह ॥
बर बीर बराहां उप्परैं । केहरि बद्धारी बदन ॥
इक चप्प कन्न कर पग्ग इक । सावक मुष लग्गा रहन ॥छं०॥९८१॥

(१) मो. गय। (२) ए. कृ. को.-लोहो। (३) ए. कृ को.-मुकति।

अद्धा आसन अद्ध। राज अद्धा तंमूलं ॥
अद्धा देस सुवेस। एक आदर संमूलं ॥
पंगानै दीवान। रहै न रष्यौ चलि सथ्थह ॥
काया तुंग सु कन्ह। देव साह्यौ भुज वथ्थह ॥
गुरवार रत्ति गोचर कियौ। प्रात प्रगट्टत छुट्टयौ ॥
दरबार राव पहुपंग दल। चौकी चौरंग जुट्टयौ ॥ छं० ॥ ९८२ ॥

पंग दल की तैय्यारी और लंगरीराय का पंगदल को परास्त करके राजमहल में पैठ पड़ना।

पद्धरी ॥ जुध जुटन लंग उट्ठयौ भीम। मानों कि पथ्थ गो ग्रहन मीम ॥
संभरिय राज सों करि जुहार। चय सहस सुभट मजि लोह सार ॥
छं० ॥ ९८३ ॥

मद गंध करी चालीस सोह। गज फूल कनक रूपह करीह ॥
मानेज सहसमल सथ्थ व्योम। धुंधरिग [1]भान इह दिग्ग धोम ॥
छं० ॥ ९८४ ॥

हम्मीर कनक राठौर बंस। चाल्यौ कि कृष्ण मारनह कंस ॥
हरि सिद्ध आइ कीनौं प्रनाम। दुअ सहस महुर दुज दिन्न दाम ॥
छं० ॥ ९८५ ॥

दरबार आइ दरवान रुक्कि। सत सहस पौरि दरवान मुक्कि ॥
लघ तीन महल चौकीन इल्लि। परधान सुमिच तब तेग झल्लि ॥
छं० ॥ ९८६ ॥

हहकारि सीस दर गयौ लंग। हल हलिय सुभट देपंत पंग ॥
उंचे अवास जाली सु भंति। दस पंच महल मंडी जु पंत ॥
छं० ॥ ९८७ ॥

तिन मद्धि पंग देषै सु भट्ट। अनेक अवर मिलि एक थट्ट ॥
घम घम निसान चय खष्य बज्जि। सिंधूर राग करनाल सज्जि ॥
छं० ॥ ९८८ ॥

गुजरत्त सह जंगी तबल्ल। मानो कि भूम्म करिहै जु मल्ल ॥

(१) मो.-वांम।

अनेक गिद्ध परि ठौर ठौर। जंबुक कुलाह त्रिय नह सोर॥
छं० ॥ ९८९ ॥
चौसट्ठि रुद्र तंत्रर [1]अनेय। रंजि रंभ रही टगटगी लेय॥
संजोगि मात पुच्छै सु ओइ। आचिज्ज एह यह कवन लोइ॥
छं० ॥ ९९० ॥
अद्धा सु अंग इह कहां दिट्ठ। तरवारि झपट पारंत रिट्ठ॥
मुह मुह चमक्कि दामिनि झपट्टि। जय लष्प घटा लोनी लपट्टि॥
छं० ॥ ९९१ ॥

लंगरीराय के आधे धड़ का पराक्रम वर्णन और उसका शान्त होना।

अनेक छिंछ आकास उट्ठि। जैचंद यट्ठ रहे निट्ठ निट्ठ॥
विहथंत तेग [2]वाहत अछेग। उड्डंत सीस धर परत वेग॥छं०॥९९२॥
निरपंत सीस घर मज्झि पंग। दुअ लष्प सेन करि मान भंग॥
हल हले सहर दुनियां अकंप। वाडलिय लग्गि [3]उड्डंत लंप॥
छं० ॥ ९९३ ॥
जयचंद घरनि सब निरषि व्योम। धुंधरिग धराधर उड्डि धोम॥
उड्डंत बीर झपटंत सेन। लरपरहि परहि उड्डंत तेन॥
छं० ॥ ९९४ ॥
निकस्यौ महोदधि जन्द बीर। मुहु लेय चिन्न उतर्‌यौ नीर॥
लेयंत सीस हर हार कौन। बरयौ सु मिच अपछरन लौन॥
छं० ॥ ९९५ ॥
किलकंत मट्ठि रुधि पीय पूर। सम्हौ जु जुद्ध जे किये सूर॥
अंतह अलुभिझ पग बीर बाहि। धर भारि धार भर पारि याहि॥
छं० ॥ ९९६ ॥
पहचर उड्डंत पल धापि लेय। आवंत रथ्थ अनेक केय॥
चालंत रुधिर सलिता प्रवेन। तिन मथ्थ चली अनेक सेन॥
छं० ॥ ९९७॥

(१) ए. कृ. को.-अनेक। (२) ए. कृ. को.-चाहत। (३) को.-उड्डंत।

पट्टनह हट्ट बिच चलिय तह। मारीय सु करि वहता सु मह ॥
चौसट्ठि पच बुदबुदा चल्लि। अंगुली झिंग सल सलत सल्ल ॥
छं० ॥ ९९८ ॥

भस्सुंड करी मग रहवि वुद्धि। कमलनि सुभंत सर मद्धि रुद्धि ॥
उप्परह मोंह सो भंवर तुंड। अपछर अनेक तट जानि झुंड ॥
छं० ॥ ९९९ ॥

घुप्परिय कछ सेवाल केस। संगरिय किद्द क्रीड़ा नरेस ॥
ऐसौ सु जुद्ध करिहै न कोउ। चय लष्प मान आवट्ट सोउ ॥
छं० ॥ १००० ॥

घर मद्धि रुधिर पलचर अमेय। घर छोड़ि सरन हर सिद्धि लेय ॥
तुट्टौ अकास धरनिय पलट्टि। गिद्धनी सलित उप्पर झपट्टि ॥
छं० ॥ १००१ ॥

संभले राज प्रथिराज सेन। करि है न जुद्ध करना सु केन ॥
संजम्मराय सुत सकल संभ। गम्मयौ दरिद्र रुद्र तनौ रंभ ॥
छं० ॥ १००२ ॥

किलकिका नाल छुट्टी अग्राज। लै चली लंग पर महल साज ॥
दस कोस परे गोला रनक्कि। परि महल कोट गज्जी धनक्कि ॥
छं० ॥ १००३ ॥

संजमह सुअन लै चली रंभ। सब लोक मद्धि हूअौ अचंभ ॥
.... । .... ॥ छं० ॥ १००४ ॥

जैचन्द के तीन हज़ार मुख्य योद्धा, मंत्री पुत्र भानेज और भाई आदि का मारा जाना।

कवित्त ॥ परे तुरिय सत सहस। परे मदगंध सहस्सह ॥
परे षेत षंगार। पर्‍यौ मंची सु धरंनह ॥
परे सुभट चय लष्प। परे लंगा चहुआनह ॥
परि सहसौ भानेज। परे चय सहस सबानह ॥
परि धनी सेन किय उद्ध गति। रुधिर कद्दम कनवज बही ॥
पर मद्धि परी गिद्धनि अछरि। सु कविचंद ऐसी कही॥छं०॥१००५॥

लंगरीराय का पराक्रम वर्णन।

एह जुद्ध लंगरिय। आय चौकी सम जुब्बौ॥
एक अंग लंगरिय। तौन लष्पह इक पुब्बौ॥
सार सार उल्लरंत। परी गिद्धा रव भष्पन॥
गज वाजिच निहाय। वज्जि उत्तराधि दष्पिन॥
दूम भिन्यौ लंग पंगह अनी। हाय हाय मुष फुट्टयौ॥
हल हलत सेन असि लष्प दल। चौकी चौरंग जुट्टयौ॥
छं० ॥ १००६ ॥

मंची राव सुमंत। हथ्थ विंटचौ सचलंतौ॥
दुज्जाई दिल्लीप कोप। ओप कुंजरनि बढ़ंतौ॥
हालो हल कनवज्ज। मंझ केहरि कूकंदा॥
संजमराव कुमोर। लोह लग्गा लूसंदा॥
चहुआन महोवै जुद्ध हुअ। ग्रेहा गिद्ध उड़ाइयां॥
रन भंग रावनै वर विरद। लंगै लोह उचाइयां॥
छं० ॥ १००७॥

एक कहै अप्पान। एक कहि बंधि दिवाना॥
बंधौ बंधन हार। मार लद्धौ सिर कन्हा॥
बाबारौ बर तुंग। घग्ग [1]साहै बिरुझाना॥
लंगी लंगरराव। अग्ग राजौ चहुआना॥
उरतान ढंकि कमधज्ज दल। संजम राव समुह हुअ॥
प्रारंभ जुद्ध जुद्धे सबल। चलि चलि बीर भुजंग [2]भुअ॥
छं० ॥ १००८॥

पृथ्वीराज का धैर्य्य।

जौ पच्छिम दिसि उयै। पुब्ब अंथवै दिनंकर॥
धर भर फनि फन सुरहि। गवरि परहरै जु संकर॥
ब्रह्म वेद नह चवै। अत्रित जुधिष्टिर जौ बुल्लय॥
जौ सायर जल छिलै। मेर [3]मरयादह डुल्लय॥

(१) ए. कृ. को.-साहै। (२) ए. कृ. को.-हुअ। (३) मो.-मरयादा।

इतनोय होय कविचंद कहि। दुह इत्तौ षिन में करहि ॥
तुम हीन दीन सब चक्कवै। प्रथीराज उर नहिं डरहि ॥
छं० ॥ १००९ ॥

लै संजोगि नृप षेत। जाइ ठट्ठौ एकत बर ॥
तब लगि पंग कनक्कज। वीर चहुँ संमुह धर ॥
रावन रन [1]उत्तर्‌यौ। सामि फौजह अधिकारिय ॥
मीर कटक मोकलहु। ताम रुक्यौ झुकि भारिय ॥
बनवीर रान सिंहा सुभर। मुक्कल्यौ बेगि चतुरंग दल ॥
सज्जे सुबंध चहुआन भर। .... ॥ छं० ॥ १०१० ॥

अपनी सब सेना के सहित रावण का पृथ्वीराज पर आक्रमण करना ॥

तब झुकि पंग नरिंद। दिष्टि कीनी झुकि अग्गी ॥
जिम सुकिया दुति बचन। दृत टारिय अँषि अग्गी ॥
ज्यों जागिंद सुप इंद। रंभ टारै तप भग्गै ॥
झुकिय कित्त [2]कुटवार। पंग रावै द्रव मग्गै ॥
भयभीत नृपति रावन्न तजि। तजै धनज जोगिंद तजि ॥
यों बय्यौ राज चहुआन घर। अप्प सेन नलवारि रजि ॥
छं० ॥ १०११ ॥

रावण की फौज का चौतरफा नाकेबंदी करना ॥

अप सेन सम नरिंद। लरन धायौ रावन बर ॥
काल जाल जम जाल। हथ्थ कीने जु अग्गि गिरि ॥
[3]मजि सनाह जमदाह। कूह मंची जु अत्ति बर ॥
सुनि सु कान रव पाल। वीर संभरि निसान घुरि ॥
फिरि पर्‌यौ सेन इन उप्परहि। सो ओपम कविचंद कहि ॥
फट्टी फवज्ज चावहिमह। गंग कून्न बक्कारियहि ॥ छं० ॥ १०१२ ॥

(१) प. कृ. को.-उचर्‌यौ। (२) प. कृ. को.-कोटवार।
(३) मो.-सपि।

रावण का पराक्रम और उसकी वीरता का वर्णन।

फिर्‌यौ हथ्थ जमजाल। ग्रहन अति चार पच्छ फिरि॥
नीर थंभ थह फिर्‌यौ। तुट्टि जल फिरै मीन हरि॥
पवन फेर पित फिरै। बीर ज्यों फिरै हकार्‌यौ॥
फिरै हथ्थ बर रीस। पेम ज्यों फिरै संभार्‌यौ॥
भज्जई हथ्थ हथ्थौअ बल। करिस नैंन रत्ते रुधिर॥
जानै कि दड्ड जम की विसल। चुबै जानि मंगलति झर॥
छं० ॥ १०१३॥

मोरि हथ्थ बिट्टारि। काल बिट्टारि भवन कौं॥
तिरस जानि रस मुट्ठि। चल्यौ मोरन्न[2] पवन कौं॥
काम अंध दिष्पै न कोइ। सोच सुद्धित मदपानिय॥
राज मद राजनिय। ग्यान सुद्दिन सुर पानिय॥
करि देषि मंत रावन बलिय। उप्पर हरि धावै लरन॥
ओपम्म चंद जंपै विसल। तत्त मंत कबहूं करन॥ छं० ॥ १०१४॥

ज्यों कलंक पर हरै। न्हान गंगा तिथ्थह बग॥
अधम धम्म परहरै। अजस पर हरै सुजस मग॥
माह चवय ससि तजै। देवधम तजै छुद्र नर॥
चंप भवर गुन तजै। भोग जिम तजै रिष्य गुर॥
दूम मुक्कि करिय रावन बलिय। राज सेन उप्पर पर्‌यौ॥
जमजाल काल हथ्थी सु बर। ता पच्छै क्रम क्रम पर्‌यौ॥
छं० ॥ १०१५॥

रावण के पीछे जैचन्द का सहायक सेना भेजना और स्वयं अपनी तैयारी करना।

लरत राज रावन्न। पंग पच्छै फवज्ज फटि॥
सूर किरन फट्टंत। बान छुट्टंत पथ्थ फटि॥

(१) ए. कृ. को.-वचै। (२) ए. कृ. को.-मोरन्न।

है गै मत्त मतंग। [1]दंद दंतिन धर छाइय॥
ज्यों बद्दल इल उपरि। छांह चल्लै सो धाइय॥
ता पछै पंग अप्पन चढ़न। सुनि रावन आहत जुध॥
जाने कि राज चहुआन को। इसौ दरसि भग्गौ जु बँध॥
छं० ॥ १०१६ ॥

चांद्रायन॥ इह ओपम कविचंद। पिष्पि [2]तन रन्नियं॥
सोज राज संमेत। जपेषय तन्नियं॥ छं० ॥ १०१७ ॥

अरिल्ल॥ हूर करी मधि डार कहंकह। कहै प्रथिराजन लेउ गहंगह॥
.... । .... ॥ छं० ॥ १०१८ ॥

पंगराज की ओर से मतवाले हाथियों का झुकाया जाना।

दूहा॥ छूटत दंतिन संकरनि। सो मत मंत उतंग॥
गात गिरव्वर नाग गति। [3]चालत सोभ सुअंग॥ छं० ॥ १०१९ ॥

मत्त हूर सोभत सजत। अभंग सेन भर राज॥
गहन राज प्रथिराज कों। सेन सुरंगह साज॥ छं० ॥ १०२० ॥

पंगराज और पंगनी सेना का क्रोध।

विअप्परी॥ देपियहि राज रस हूर भल्लै। हूर रजं बीर सारोस हल्लै॥
वेंन आकास सर लल्ल कल्लै। देपियहिं घंगुरें नेंन लल्लै॥
छं० ॥ १०२१ ॥

दोनों सेनाओं का परस्पर मिलना।

कवित्त॥ मिले हूर बज्जे अघात। [4]सस्त्र बज्जे अस्त्रन सों॥
ज्यौं ताल ताल बज्जए। जौंभ चिय मग उलाल सों॥
गजर बज्जि घरियार। लोह भय अंति अघानं॥
बजि न्निघात उतंग। सस्त्र घल्लै सुर पानं॥

---

(१) प्र. कृ. को.- दंत। (२) प्र. कृ. को.-रन, को.-तर।
(३) प्र. कृ. को.-चालति। (४) प्र. कृ. को. सस्त्र बज्जे नु सस्त्र सों।

चहुआन आन कमधज्ज करि। पाइ मंडि आघाट दुज॥
हक्कै पहक्क कायर परै। देव रूप आवत्त सुज॥ छं० ॥ १०२२ ॥
तेग बहत मंडली। रोप जनु करी तुंग बर॥
पूर जूह आवंत। रुधिर रन लोह लग्गि पर॥
स्वामिधंम सों लच्छि। मेर हथ लच्छि न ग्राहै॥
रगत पील मज्झि गिरत। तिनह में मोती बाहै॥
भेदै न कमल जल सुवर बर। कमल पच छिंटन्न लग॥
हवि गात तेग आतुर बहै। रुधिर छिंट छुट्टै न जुग॥छं०॥१०२३॥

पंगराज का सेना को प्रगट आदेश देना।

दूहा॥ तब हंकारो कीय नृप। चढ़ि मच्छर बर जीव॥
जनु प्रजरंती अग्गि महि। लै करि ढारिय घीव॥छं०॥१०२४॥
मंचिय जुद्ध अनुद्ध सुनि। अरियन ग्रहन न सार॥
रे चहुआन न जाइ घर। पंग पिटारै मार॥ छं० ॥ १०२५ ॥
इह कहंत पंगह चल्यौ। आइस लै सब सेन॥
लेहु लेहु इम उच्चरिय। जन जन मुष मुष बेंन॥ छं० ॥ १०२६ ॥

पृथ्वीराज का कविचंद से पूछना कि जैचन्द को पंगु क्यों कहते हैं।

*पुच्छि नरिंद सु चंद सौं। तुम वरदाय कविंद॥
सब पंगुर किहि विधि कहत। यह जयचंद सु इंद॥
छं० ॥ १०२७ ॥

कवि का कहना कि इस का पूरा उपनाम दलपंगुरा है क्यों कि उसका दलबल अचल है।

कवित्त॥ जैसे नर पंगुरो। विनु सु [1]झंगुरी न हल्लहि॥
आधारित झंगरो। हरू वह वत्त न चल्लहि॥
तैषे रा जयचंद। असंष दल पार न पायौ॥

*छन्द १०२७ और १०२८ सो. प्रति में नहीं है। (१) को-डंगुरी।

चालुक इक सर सरित। दलन हरबल्ल अघायौ ॥
दिसि उभय गंग जमुना सु नदि। अद्ध कोस दल तब बह्यौ ॥
कविचंद कहै जैचंद नृप। तातें दल पंगुर कह्यौ ॥ छं० ॥ १०२८ ॥

जैचन्द की सेना का मिलना और पृथ्वीराज का पड़ाव पर घेरा जाना।

चंद अस्रित झरि बीर। विषय झाला सु प्रजलि चलि ॥
नैन दंत आरुहिज। मत्त दंती सु दंत घुलि ॥
तम तामस उक्करै। बीर नीसान धुनंके ॥
बीर सद्द सुनि क्रन्न। मद्द गजराज झुनंके ॥
विंटये सूर सामंत नृप। रावन सब नृप मग्ग गसि ॥
असि लष्प न्रपति पहुपंग दल। सूर [1]चिंत नन मंत बसि ॥ छं० ॥ १०२९ ॥
दूहा ॥ असि रावन चिहु मग्ग रहि। सर प्राहार प्रमान ॥
ग्रहन राज चहुआन कौं। पंग वज्जि नीसान ॥ छं० ॥ १०३० ॥
साम सनाह कनंक वर। सलष सु लष्प प्रमान ॥
मग रष्पन रजपूत बट। अरि मुक्यौ न सु थान ॥ छं० ॥ १०३१ ॥
कवित्त ॥ रावन दल दलमलत। हलत भग्गेव सुभर अरि ॥
भग्गे दल बोहिथ्थ। बीर भाटी पहार फिरि ॥
घरी एक आवृत्त। झंझ बज्जी जुध जग्गी ॥
जनु कि महिष मेंमंत। अत्त विभ्रम बल लग्गी ॥
भर सिंघ पंच पचाइनह। तजन राज रज राज भिय ॥
पांवार धन्नि धावर धनी। मग्ग पग्ग मग भीर लिय ॥ छं० ॥ १०३२ ॥

जैचन्द का मुस्लमानी सेना को आज्ञा देना कि पृथ्वीराज को पकड़ो।

चौपाई ॥ वज्जे सुनवि पंग सुर रूपं। चक्रित चित्त भूपाल सु भूपं ॥
[2]पुक्कारे बर उन न्विप अंगं। अरि गौ भंजि यान सुर मंगं ॥
छं० ॥ १०३३ ॥

(१) मो.-चित्त। (२) ए. कृ. को.-पुक्कारी।

पद्धरी ॥ अग्गें सुपंग बज्जोर बीर। फुरमान अग्गि अरि गहन मीर ॥
बंधि सिलह कन्ह उभ्भौ करूर। मनु धाइ छुट्टि [1]भद्दव तिसूर ॥
छं० ॥ १०३४ ॥
सन्नाह सज्जि गोरी पहार। जानियै सूर सायर अपार ॥
हज्जार सित्त सजि सुभर मीर। मिलि पंग हेत बर वीर तीर ॥
छं० ॥ १०३५ ॥
जानियै बीर बीरन्न जूर। कंद्रप्प कित्ति जानीय सूर ॥
मनुं हक्क सज्जि सजि सिलह थान। बहक्करै बीर दस कंध मान ॥
छं० ॥ १०३६ ॥
हज्जार साठि सजि परे मीर। कलहंस मान कसि अंग बीर ॥
हय गय पलान पहुपंग घुल्लि। देयंत किरनि बर किरनि डुल्लि ॥
छं० ॥ १०३७ ॥
हलहल्लत होत गजराज छट्टि। आयसं आनि धन पंग लुट्टि ॥
सन्नाह सज्जि सोभैं सु भूप। द्रप्पन झलक्कि प्रतिब्यंब रूप ॥
छं० ॥ १०३८ ॥
सोभै अनेक आकार बीर। मानो मद्दि दुज्झ सोभै सरीर ॥
पप्परै भीर हय भीर जंपि। गति डुलै प्रबत प्रव्वत्त सु कंपि ॥
छं० ॥ १०३९ ॥
बर हुकम पंग न्विप इहय दीन। टिड्डीस अन्न सम गवन कीन ॥
बिहरे सेन कमधज्ज थान। ग्रहन भौ ग्रहन प्रथिराज भान ॥
छं० ॥ १०४० ॥
उग्गहन बत्त करतार हथ्थ। रुक्कवन धाइ चहुआन सथ्थ ॥
छं० ॥ १०४१ ॥

युद्ध-रँग राते सेना समूह में कवि का नव रस की सूचना देना।

कलाकल्ल ॥ नचि नौरस थान अदभ्भुत बीर। भयो रस रुद्र कवै कवि भीर॥

(१) गो.-भद्दव कि।

भैभंति भयानक कायर कंपि। करुना रस केलि कलामुष जंपि ॥
छं० ॥ १०४२ ॥
तहां रस संकर ह्वै अरि संच। उद्यौ अदबुद्द महारस नंचि ॥
लियौ रस निड्डर बीभछ अंग। दिष्यौ चहुआन सु सेनह पंग ॥
छं० ॥ १०४३ ॥
हस्यौ रस हास सलष्प पवार। बरं बरझालि सु बीर दुधार ॥
भयौ रस सत्त मुगत्ति य मग्ग। सुधारहि काम चलै जस अग्ग ॥
छं० ॥ १०४४ ॥
रचैइ सिंगार बरब्बर रंभ। झुल्यौ रस बीर पगं पग अंभ ॥
.... । .... छं० ॥ १०४५ ॥
दूहा ॥ कल किंचित किंचित करहि। सुरग सुधारहि मग्ग ॥
भंजौ लज्ज मुकत्ति बर। ग्रहि भग्गीह न दग्ग ॥ छं० ॥ १०४६ ॥

पृथ्वीराज का सामंतों से कहना कि तुम लोग जरा भीर सम्हालो तो तब तक मैं कन्नौज नगर की शोभा भी देख लूं।

सकल सूर सामंत मम। बर बुल्यौ प्रथिराज ॥
जौ रुक्यौ पिन षेत में। देषौं नगर विराज ॥ छं० ॥ १०४७ ॥

सामंतों का कहना कि हम तो यहां सब कुछ करें परंतु आपको अकेले कैसे छोड़ें।

कवित्त ॥ हम रुक्कैं अरि जूह। स्वामि कौ तजै इकल्लै ॥
कै रपि दुज्जन पढन। स्वामि मुक्कियै न ढिल्लै ॥
नारिंघनि करि देव। ताप तप जांहि देव बर ॥
सुनहि राज प्रथिराज। दिट्ठ बंधीय अप्प कर ॥
सो चलै संग छाया रुकिय। कै छांह स्वामि मुक्कौ भिरन ॥
चहुआन नयर दिष्पन करै। दुरन देव सोभै किरन ॥
छं० ॥ १०४८ ॥

कन्ह का रिस होकर कहना कि यदि तुम्हें ऐसाही कहना था तो हम को साथ ही क्यों लाए।

दूहा ॥ कहै सब्ब सामंत सौं । एकल्लौ बिन बग्ग ॥
दइ विधिना फिरि में लई । जाय परस्सो गंग ॥ छं० ॥ १०४९ ॥
बोल्यौ कन्ह अयान न्रप । रे मत मंड समथ्थ ॥
जो मुक्कै सत सथ्थियन । तौ कित लायौ सथ्थ ॥ छं० ॥ १०५० ॥
जौ मुक्कौं सत सथ्थियन । तौ संभरि कुल लज्ज ॥
दिप्पन करि कनवज्ज कों । फिर संमुह मरनज्ज ॥ छं० ॥ १०५१ ॥

परन्तु पृथ्वीराज का किसी की बात न मान कर चला जाना।

चल्यौ नयर दिप्पन करन । तजि सामंत सुलच्छि ॥
गौ दिप्पन दिप्पन करन । चित्त मनोरथ बंछि ॥ छं० ॥ १०५२ ॥
कुंभ चित्त चहुआन कौ । चौकट बुंद न अभ्भ ॥
जल भय पंगह ना भिदै । ज्यौं जल चौकट कुंभ ॥छं०॥१०५३॥

युद्ध के बाजों की आवाज सुनकर कन्नौज नगर की स्त्रियों का वीर कौतूहल देखने के लिये अटारियों पर आ बैठना।

गाथा ॥ दम सुंदरि गहि बालं । विसालं सुष्प अलनि मिलि अलियं ॥
सुनि बज्जे पहुपंग । चरितं सो भुल्लियं बाला ॥ छं० ॥ १०५४ ॥
चढ्ढि गवष्पन बाला । सु विसालं जोइ राजियं राजं ॥
थक्के विमान सूरं । सुभंतिय वाय कंसजियं ॥ छं० ॥ १०५५ ॥

दूहा ॥ देषन लच्छिन न्रपति बर । गो दच्छिन क्रत वेर ॥
अवन राज चहुआन बढि । पंग घरंघर वेर ॥ छं० ॥ १०५६ ॥

जैचन्द का स्वयं चढ़ाई करना।

जो पत्ती पत मरन कौ । बोलि सहेट प्रमत्त ॥

हम सीलत बंचे सु बट। न्रिप तिह मिलहि न मत्त ॥ छं० ॥ १०५७ ॥
इह कहंत पंगह चल्यौ। बजि निसान सरभेर ॥
सकल सूर सामंत सम। लेहि नरिंदह घेरि ॥ छं० ॥ १०५८ ॥

कवित्त ॥ पल्लान्यौ जयचंद। गिरद सुरपति आ कंप्पौ ॥
असिय लष्प तोषार। भार फनपति फन तंप्पौ ॥
सोरह सहस निसान। भयौ कुहराव भूअ भर ॥
घरी मद्धि तिहुलोक। नाग सुर देव नाम नर ॥
पाइक्क धनुद्धर को गिनै। असी सहस गेंवर गुरहि ॥
पंगुरौ कहै सामंत सम। लेहु राज जीवत घरहि ॥ छं० ॥ १०५९ ॥
हय गय दल धसमसहि। सेस सलसलहि सलक्कहि ॥
सहस नयन झलझलहि। रेंन पल पूरि पलक्कहि ॥
तरनि किरन मूंदयौ। मान द्रगपाल स छुट्टिहि ॥
वसंत पवन जिम पच। अरिय इम होइ सु थट्टहि ॥
पायान राय जैचंद कौ। विगरि पिथ्थ कुन अंगमै ॥
हय लार बहति भाजंत थल। पंक चहुट्टै चक्कवै ॥ छं० ॥ १०६० ॥

जैचन्द की चढ़ाई का ओज वर्णन।

विजय नरिंदह तनौ। रोस करि इम धरि चल्यौ ॥
इम हम पुर पंदत। एम पायालह डुल्यौ ॥
एम नाद उछर्यौ। एम सुर इंद गयंदहि ॥
एम कुलाहल भयौ। एम मुद्दित रवि इंदहि ॥
दल असिय लष्प पप्पर परहि। एम भुअन आकंप भय ॥
पंगुरौ चल्यौ कविचंद कहि। बिन प्रथिराजह को सहय ॥
छं० ॥ १०६१ ॥

एक एक अनुसरिग। अंग दह लच्छि कोटि नर ॥
धानुक धर को गिनै। लष्प पचासक हैंवर ॥
सहस हस्ति चवसट्टि। गरुअ गाजंत महाभर ॥
समुद सयन उलटंत। डरहिं पन्नग सुर आसुर ॥

(१) को. डुल्यौ।

जैचंद राइ चालंत दल। चक्क सूर पुज्जन चलिग ॥
गढ़ गिरिग्ग जलथल मिलिग। इत्त सब दिष्पिय जुरिग ॥
छं० ॥ १०६२ ॥

पंगराज की सेना के हाथियों का वर्णन।

मत्त गत्त सन भिरिग। हट्ट पट्टन सह तुट्टिग ॥
कच्छि कच्छि जुरि भीर। घंट घंटा हरि फुट्टिग ॥
बाल बाल आलुझिझ। करन सम करन लागि पग ॥
मेंगल मद्गल चलत। थार हस्ती सन चंपिग ॥
जैचंद राय चालंत दल। गिरिवर कंपहि चंद कहि ॥
देषंत राइ भंभरि रहहि। दंति पंति दस कोस लहि ॥
छं० ॥ १०६३ ॥

दूहा ॥ जल थल मिलि दुअ कंप हुअ। टुटि तरवर जल मूल ॥
देषि सपन सामंत बल। छलन कि वामन फूल ॥ छं० ॥ १०६४ ॥

दल पंगुरे के दल बद्दल की चढ़ाई का आतंक वर्णन।

बाघा ॥ दह दिसा थर विथरंत। दिगपाल दसन करंत ॥
उरबी न धारत सेस। ससि होत फेर दिनेस ॥ छं० ॥ १०६५ ॥
धरधुंध रज छदि व्योम। सद नास थिर गहि गोम ॥
कठ कमठ पीठ कमंठ। थल विथल फिरत न कंठ ॥ छं० ॥ १०६६ ॥
धुरि मेर मुरि मुरि जात। सर सूकि सबित उपात ॥
मम चढ़हु पंग नरिंद। हरहरत गगन गुरिंद ॥ छं० ॥ १०६७ ॥
हरि सीस रज बरषंत। द्रिग उरग मद्धि परंत ॥
हुंकार प्रगटित अग्गि। चिय नयन प्रजलि विलग्गि ॥छं०॥ १०६८ ॥
ससि तवैं अमिय पतंत। [1]अबि बुंद सिंह जगंत ॥
बबकारि [2]गज्जत सद्द। विहुरत धवल दुरद्द ॥ छं० ॥ १०६९ ॥
सिव फिरत तिन सँग जूर। नन चढ़हु पंगह सूर ॥
ब्रह्मंड नष अरु एक। इल मिलत होत समेक ॥ छं० ॥ १०७० ॥

(१) ए. कृ. को.-आप। (२) ए. कृ. को.-सज्जत।

गन सेंन विथुरित भूमि। घन मिटत नासा घूम ॥
जल प्रलय लोपत लीह। धर बिथरि होत अगीह ॥ छं० ॥ १०७१ ॥
भुअ परत अच्छरि व्योम। नीसान गज्जत गोम ॥
तुम चढ़त जैचंद राज। तिहुलोक ढरति अवाज ॥ छं० ॥ १०७२ ॥

कवित्त ॥ डर द्रुग्गम परहरहि। अढर ढरि परहि गरुअ गिरि ॥
चिन बन घन टूटंत। धरनि धसमसहि हयनि भर ॥
सर समुंद परभरहि। डिढह डिढ डाह करकहि ॥
कमठ पिट्ठ कलमलहि। पहुमि महि प्रलय पलट्टहि ॥
जयचंद पयानौ संभरत। फुनि ब्रहमंड विछुट्टि हय ॥
मम चलहि मचलि मम चलि मचलि। चलहित प्रलय पलट्टि हय ॥
छं० ॥ १०७३ ॥

दूहा ॥ साजत पंग नरिंद कहुं। विनय स छोनिय बाग ॥
मुगता ग्रह सुक कवित कह। [1]जलथल थग्ग अमाग ॥छं०॥१०७४॥

कवित्त ॥ दल राजन मिलि विभजि। अट्ठ दिग्गं [2]करवर कर ॥
कर धरंत द्रिग अट्ठ। [3]डट्ठ वाराह मुरहि हरि ॥
हरि वराह दिढ दट्ठ। करतु फनवै फन टारहि ॥
फनिवै फनह टरंत। कमठ षोपरि जल भारहि ॥
भारहि सुजल्ल पुप्परि उछरि। उच्छरि है पायाल जल ॥
जल होत होय जगतै प्रलौ। समु चढ़ि चढ़ि जैचंद दल ॥
छं० ॥ १०७५ ॥

समस्त सेना में पृथ्वीराज को पकड़ लेने के लिये हल्ला होना।

दूहा ॥ मढरि मढरि छोनी सु चिय। मत करि छिनक सबल्ल ॥
छचपति करि जीरन भषिग। तूं नित नितह नवल्ल ॥छं०॥१०७६॥
धम धमंकि धुकि निप्प महि। रमहि न गंग सु तट्ट ॥
गहहि चंपि चहुआन कौं। भव भरि मुहित सु वट्ट ॥छं०॥१०७७॥

(१) ए. कृ. को.-"जल थल मग्ग अमग्ग"।
(२) ए. कृ. को. करु। (३) गो. मट्ठ, को. झट्ट।

भौ टामंक दिसि विदिस कहु। बहु पष्पर बहु राव ॥
मनु अकाल टिड्डिय सघन। पब्बय छुट्टि पहाव ॥छं०॥ १०७८ ॥

कन्नौज सेना के अश्वारोहियों का तेज और ओज वर्णन।

भुजंगी ॥ प्रवाहंत ताजी न [1]लज्जीय हारे। मनों रब्बि रथ्थं सु आने प्रहारे॥
जिके स्वामि संग्राम झल्लै दुधारं। तिनं ओपमा क्यों बदी जै छिकारे॥
छं० ॥ १०७९ ॥

तिनं साहियं बग्ग गट्ठे न लारा। मनों आवधं हथ्थ वज्जंत तारा॥
हयं छट्टियं तेज ठट्ठे जिकारा। सयं सज्जियं सूर सव्वै [2]करारा ॥
छं० ॥ १०८० ॥

मरे पाषरे प्रान जे मार वारा। तिके कंध नामै नहीं लोह झारा॥
तहां घाट औघट्ट फंदै निनारा। तिनं कंठ झूमंत गज गाह भारा॥
छं० ॥ १०८१ ॥

दिसा राह लाहौर बज्जै तुरक्की। तिनं धावतें धूर दीसै षुरक्की ॥
दिसं पच्छिमं भूमि जानै न थक्की। तिनं साथ [3]सिंधी चलै नाव जक्की॥
छं० ॥ १०८२ ॥

पवंनं न पंषी न अंषी मनक्की। तिके सास कट्ठै न चंपै न नक्की ॥
तिनं राग चंपै न सुद्धी डरक्की। मनों ओपमा उंच आए धरक्की ॥
छं० ॥ १०८३ ॥

अरब्बी विदेसी लरै लोह लच्छी। गनै कोनं कंठील कंठील कच्छी॥
धरं षेत षुंदंत रुंदंत बाजी। [4]हरंवी हए एक तत्तार ताजी ॥
छं० ॥ १०८४ ॥

तिके पंडु ए पंगुरे राइ साजे। मनों दुअन दल तुच्छ देषंत लाजे॥
इसौ एह आपुब्ब कविचंद पिष्यौ। तिनं रब्बि दुजराज सम तेज दिष्यौ॥
छं० ॥ १०८५ ॥

डरं डंबरी रेन अप्पै न पारं। अधीनं [5]पधीनं सधीनं निहारं ॥

(१) ए. कृ. को.-लाजी अहारे।
(२) ए. कृ. को.-तुषारा। (३) ए. कृ. को.-सिंधे।
(४) ए. कृ.-हरंवी हए एक ताजी तत्तारी। (५) ए. कृ. को.-अधीन।

तहां कोन सामंत राजं न [1]ठहुै। मनों मेर उत्तंग हस्ती न चहुै॥
छं० ॥ १०८६ ॥

मुषं जोव जोवं भरं भूप भारे। [2]तिनं काम कनवज्ज सभझै पधारे॥
छं० ॥ १०८७ ॥

दूहा ॥ भर हय गय नीसान बहु। इह दिष्षिय सह थान॥
जौ चढ़िजै हर [3]दिष्षियै। चिहु दिसि समुद प्रमान॥
छं० ॥ १०८८ ॥

दृढ्नाराज। जहां तहां हयग्गयं निसान घान घुंमरे।
मनों कि मेघ भद्दवा दिसा दिसान धुंमरे॥
चमक्कती सनाह संग वीज तेज विप्फुरै।
मनो कि गंग न्हाय कै किरन्न भान निक्करै॥ छं० ॥ १०८९ ॥
सपष्परं प्रमान राज बाज राज सोभई।
मनो कि पंष प्रव्वतं सुफेरि इंद लोभई॥
गहग्गहं जु वाजि नाद तेज हथ्थ विथ्थुरे॥
सुने सबद्द तेज सूर कायरं स विद्धुरे॥ छं० ॥ १०९० ॥

इतने बड़े भारी दलबल का साम्हना करने के लिये पृथ्वीराज की ओर से लंगरी राय का आगे होना।

दूहा ॥ सुनिय सबर दल गंग हिन। लंगा लोह उचाय॥
पंग सेन सम्हौ [4]फिरिय। बोलि वज्ज विरुझाइ॥ छं० ॥ १०९१ ॥

लंगरी राय का साथ देने वाले अन्य सामंतों के नाम।

कवित्त ॥ लंगा लोह उचाइ। जूह झलिय संमुह भिरि॥
दुज्जन सलप पुंडीर। धरै बंधव उप्पर करि॥
तूंअर तमकि ततार। तेग लोनी गढ़ तत्ती॥
बर पुच मिच अचान। भान कूरंभ सुभत्ती॥
सांषुला सूर बंकट भिरं। मोरी केहरि सूर भर॥

(१) ए.-डट्ठै। (२) ए. कृ. को.-फिनं।
(३) मो. दिष्पिकै। (४) ए मो. परिय।

पहु पंग सेन सम्हौ भिरिग। सु बजि बीर बर विप्पहर ॥
छं० ॥ १०९२ ॥

दोनों सेनाओं का एक दूसरे को प्रचार कर परस्पर मार मचाना।

रसावला ॥ पंग सेनं भिरं। पग्ग घोलं झरं ॥ बीर हक्कं बियं। लोह लंगी लियं॥
छं० ॥ १०९३ ॥

पग्ग लग्गे झलं। भिन्न रत्तं पलं ॥ बीर हक्के अरी। घाय बज्जं धरी॥
छं० ॥ १०९४ ॥

तुंग बाहं बरं। नंपि वडुप्फरं ॥ बीर लग्गे भरं। कालते संघरं ॥
छं० ॥ १०९५ ॥

द्रोन नंचं धरी। मार हक्कं परी ॥ कूक वीरं करी। गिद्ध उड्डे डरी॥
छं० ॥ १०९६ ॥

टूक पावं बटं। पग्ग टेके ठटं ॥ घाइ घुम्मे घनं। मत्तवारे मनं ॥
छं० ॥ १०९७ ॥

कंधनं बंधरं। जंमुषं विडुरं ॥ रंभ तारी चसी। सूर पानं हसी॥
छं० ॥ १०९८ ॥

घाव वज्जे घटं। पाइ कै सुब्बटं ॥ अंत तुट्टै बरं। पाइ आलुझझरं॥
छं० ॥ १०९९ ॥

भट्ट ऐसें रजं। तंति बंधे गजं। मुगति मग्गे अरी। पग्ग घोली दरी॥
छं० ॥ ११०० ॥

कवित्त ॥ घरी एक आवरत। पंग संघार अरिय पर ॥
लुथ्थि लुथ्थ आहुट्टि। रुद्र रस भयत बीर बर ॥
हय गय नर भर भरिय। पर्‍यौ रन रुद्धि प्रतापं ॥
पग्ग मग्ग अरि हलिय। चलिय धारनि धर आपं ॥
दुअ जन्म भट्ट हकारि करि। कमल सेन जिन चिंत परि ॥
उच्चरे ब्रह्म ब्रहमंड सों। गोटन कोट गहन फिरि ॥छं०॥११०१॥

चौपाई ॥ धाए न्रिपत न लोह अघानं। छुट्टक सिद्ध किद्ध विरुझानं ॥
संझ किधों घरियारन घाई। चच्चर सौ चुतुरंग बजाई ॥
छं० ॥ ११०२ ॥

सायंकाल होना और सामंतों के स्वामिधर्म की प्रशंसा।

दूहा ॥ भंजन भीरन जो नृपति। करिभन भौंर चरंच ॥
सांई बिन जीवन कों। षोहनि करन छ पंच ॥ छं० ११०३ ॥
भान न भग्गौ भान चलि। भान भिरंतह भान ॥
अस्ति समंपिय भान कों। दै सिर संकर दान ॥ छं० ॥ ११०४ ॥

युद्ध भूमि की वसंत ऋतु से उपमा वर्णन।

कवित्त ॥ पंग बसंत सो सिग सु। गंध गज मद झरि दानं ॥
सो कायर पत पीप। पत्त झर झर कर पानं ॥
प्रसव चंद सिर आन। मान भिरि भिरि अग्गह हर ॥
लज्जा छोह सुरंग। रंग रंग्यौ सु सुरंग बर ॥
बोलंत घाव भवरिय भवर। कूक कूह कोकिल कलह ॥
फूलिग्ग सुभर अंजह सुरन। पवन चिविध सेना सुलह ॥
छं० ॥ ११०५ ॥

अट्ठ अट्ठ अरु अट्ठ। मक्क आगरे पंच बर ॥
पग्ग मग्ग [1]त पत्त। भरें भर धज्जि जित्त भर ॥
धर पलचर हर रंभ। नंद नरिंदह आधाई ॥
मुगति चिपंग मन मज्जि। अंब पौवन जिहि आई ॥
गारष्य कित्ति जित्तौ मपन। मात पित्त गुर बंध [2]रन ॥
दई साम सुधारन सकल कौं। इन समान कीरति मयन ॥
छं० ॥ ११०६ ॥

अरिल्ल ॥ ठट्ठ के सुसेन पहूपंग अग्गं। छिले लोह हूरं मनं जंग भग्गं ॥
सबै धाय बीरं रहै बीर पासं। न का कंध कहूँ ठढे पास वासं ॥
छं० ॥ ११०७ ॥

पंगराज का पुत्र के तरफ देखना।

दूहा ॥ पंग प्रपत्तौ पुत्र दिपि। झुकि किय [2]मुष दिसि वाम ॥
बीर मत्त रत्त नयन। उत्तर सु किय प्रनाम ॥ छं० ॥ ११०८ ॥

(१) मो.-रत। (२) प. कृ. कां.-सुख।

पंग पुत्र के वचन।

कवित्त ॥ जोरि हथ्थ फिरि तथ्थ। राज संमुह उच्चारिय॥
असुर ससुर नर नाग। जुद्ध दिथ्थौ न संभारिय॥
अप्प सथ्थ [1]मुनि सामि। अरिन सम्हौ ललकारिय॥
भय भारथ्थ सु जुद्ध। जीह आवै न प्रकारिय॥
धनि हथ्थ सूर सामंत के। धनि सु हथ्थ पहुपंग भर॥
घरि तीन मोहि सुभ्यौ न कछु। सार अगनि अग्गैं सु नर॥
छं० ॥ ११०९ ॥

तन जित्यौ दल अथ्थ। दल न भग्गौ चहुआनं॥
दादस हथ्थिन बीच। लुथ्थि पर लुथ्थि समानं॥
पच्छै दल सुनि स्वामि। लोह छीनं अनलोधं॥
राज कहन मुकलीय। सामि अवगुन सुनि कोपं॥
अरि अरिय हथ्थ दह छंडि रन। रन में ढुंढिय पंग बर॥
इज्जार उभै अप सेन परि। तुच्छ सु परि चहुआन भर॥छं०॥१११०॥

पंगराज का क्रोध करके मुसल्मानों को युद्ध करने की आज्ञा देना।

दूहा ॥ तुच्छ तुच्छ अरि पंग भर। चित्त सपच्छ हस हथ्थ॥
यों चल्ले चहुआन दल। लच्छि गमाई हथ्थ॥ छं० ॥ ११११ ॥
[2]भुक्कि पंग दिय हुकम सह। गहन मीर चहुआन॥
प्रात सु डंबर मभ्भतं। किरन सु छुट्टिय भान॥ छं० ॥ १११२ ॥

पंगसेना का क्रोध करके पसर करना, उधर पृथ्वीराज का मीन चरित्र में लवलीन होना।

पद्धरी ॥ बर हुकुम पंग दुअ दीन दीन। मंची सुमंचि सजि सिलह लीन॥
अप्पें तुरंग पहुपंग फेरि। भर सुभर लेत घन मभ्भ हेरि॥
छं० ॥ १११३ ॥

(१) ए. कृ. को.-सुनि। (२) ए. सुकवि, कृ. को.-सुकवि।

गजराज पंच आकास अग्ग ॥ सोभै सु पंग रत्ते नयग्ग ॥
चिहु मग्ग फट्टि फौजै सु लीन। चहुआन भूलि बर चरित मीन ॥
छं० ॥ १११४ ॥

दूहा ॥ पिथ्थ चरित्र जु भुल्लि बहु। नट नाटक बहु भूप ॥
दूहा दासि संयोग की। हरि चित रत्ती रूप ॥ छं० १११५ ॥
भर भुल्लिय सह चित भुलि। अरि रहि अनि तजि क्रोध ॥
बढि ढिल्ली पहुपंग कौ। छुट्टि सु मंची सोध ॥ १११६ ॥

घोर घमसान युद्ध होना।

रसावला ॥ सुधं मंच बानं। कलं भूर गानं। रसं वट्ट जानं। लहू वूट मानं ॥
छं० ॥ १११७ ॥
लषै चट्टि चन्नं। बरं रत्त रन्नं ॥ हथं उट्टि तिन्नं। तुलं बज्ज छिन्नं ॥
छं० ॥ १११८ ॥
सुरं सोभ घन्नं। दिवं आस मंनं ॥ हथं बीब तानं। वनं बष्पि धानं ॥
छं० ॥ १११९ ॥
रतं कंध तीनं। षची विभ्भरीनं ॥ [1]रठं रंक धन्नं। सुनी सुद्ध मन्नं ॥
छं० ॥ ११२० ॥
उभं झेलि फिन्नं। दतं कट्टि लिन्नं ॥ [2]जवं जानि तीनं। जुधं जीत बीनं ॥
छं० ॥ ११२१ ॥
लजं मेर जंनं। सदाहत्त पंनं ॥ धरं दुट्ठ रानं। ससी झल्लि फानं ॥
छं० ॥ ११२२ ॥
सुधं मंच सूरं। भुअं नंषि पूरं ॥ जहं जं पियारी। रुके पार मारी ॥
छं० ॥ ११२३ ॥

लंगरीराय के तलवार चलाने की प्रशंसा।

दूहा ॥ पारस फिरि पहुपंग दल। दई समानति रुक्कि ॥
जेधारो जोगी बली। बाबारो पग धुक्कि ॥ छं० ॥ ११२४ ॥
पग धुक्किय सुक्किय न पग। लंगा लोह उचाय ॥

(१) मो. टरं। (२) प. कृ. को.-वजं।

पंग समुह संमुह पर्‍यौ। इर बंडवा नल धाइ ॥ छं० ॥ ११२५ ॥

जैचंद के मंत्री के हाथ से लंगरी राय का मारा जाना।

भुजंगी ॥ [1]परे धाइ सोमंच मंत्रीक वारं। बहै पग्ग [2]सोरं गुरज्जं निनारं ॥
हथं नारि सोवान कीजक फुट्टै। करै हथ्थ छत्तीस आवज्ज छुट्टै ॥
छं० ॥ ११२६ ॥

बरं बीर बीरं तथा बिज्ज पारं। [3]पगं बाजि सो पग्ग झामं किसारं ॥
सहंनाइ में सिंधुऔ राग बज्यौ। लगी लोह [4]में जुद्ध आजुद्ध गज्यौ ॥
छं० ॥ ११२७ ॥

गयं मुष्प हाकी हहाकी करारी। [5]बरं बीर सोमचियं जुद्ध भारी ॥
बढ़ी बाजि सो मुक्कि प्राधान बीरं। लगी धायसो लंगरी बज्ज पीरं ॥
छं० ॥ ११२८ ॥

पलं पंचकं लोकलं कित्ति भुल्लौ। बरं भारथं लग्गि सो तुंग हल्लौ ॥
बरं लंगरी राइ प्राधान बीरं। भगी सार मा भग्गियं सूर नीरं ॥
छं० ॥ ११२९ ॥

तुटी रंच कीरच्च कीरच भयन्नं। तुटी पग्ग सोवं गिनं उड्डि गेनं ॥
इकं पंच तें पंचकं बिज्ज नच्चं। इके तिन्न के सीस सारं सु नच्चं ॥
छं० ॥ ११३० ॥

वरी लंगरी बीर प्राधान बारे। भयौ भार उत्तारनं बंग धारे ॥
छं० ॥ ११३१ ॥

दूहा ॥ पर्‍यौ बीर लंगरि सु बर। अंधारो घन घाइ ॥
सु बर बीर सामंत मिलि। मंचो सोम उपाइ ॥ छं० ॥ ११३२ ॥

कन्ह का गुरुराम को पृथ्वीराज की खोज में भेजना।

कवित्त ॥ राज गुरू दुज कन्ह। कन्ह मोकलि सु लेन नृप ॥
स्वामि मल्हि सह सथ्थ। मंच कारज्ज मंच अप ॥

---

(१) ए. कृ. को.-'परे धाइ सोमंच मत्रीक वारं"।
(२) ए. कृ. को.-गेरं। (३) ए. कृ. को.-पगं।
(४) ए. कृ.-से। (५) ए. कृ. को.-ककारी।

लै आवौ प्रथिराज। पंग है विदुर सेनं॥
पष्पवै न पथ आज। भयौ भर अंतर केनं॥
यों करिग देव दच्छिन सु दुज। दिषि सामंत षटंग बर॥
संजोम दासि इंदह नृपति। ठढुकि रह्यौ [1]तणि थान नर॥
छं० ॥ ११३३ ॥

पृथ्वीराज का कन्नौज नगर का निरीक्षण करते हुए गंगा तट पर आना।

दूहा॥ फिरि राजन कनवज्ज महँ। जानि संजोगिह बत्त॥
चढ़ि विमान जै जै करहि। देव सु रंगन कित्ति॥ छं० ॥ ११३४ ॥

कवित्त॥ नगर सकल गुन मय। निहार लज्जीय सुष नृपति॥
मंडप सिषर गबष्य। जालि दिट्ठी सु विचिच अति॥
द्वार उंच पागार। बिपुल अंगन आगारह॥
जह तहं निझ्झर झरँत। निरमल जल धारह॥
नर बाज दुरद बन गेह पसु। भरिय भीर पट्टन परम॥
सुर असुर चमँकत सबद सुनि। सु फिरि समुद मथ्थन भरम॥
छं० ॥ ११३५ ॥

दूहा॥ करिग देव दच्छिन नयर। गंग तरंगह कूल॥
जल छुटै तब इच्छ करि। मीन चरिचन भूल॥ ११३६ ॥

पृथ्वीराज का गंगा किनारे संयोगिता के महल के नीचे आना।

भुजंगी॥ रची चिच सारी त्रिषंडी अटारी। नकस लाज वद्दं सुवंनं सु ढारी॥
जरे तथ्थ जारी नही राजु वन्ने। रही फैलि रवि इंद मानों किरन्ने॥
छं० ॥ ११३७ ॥

हसै ष्याल षेलै तहां मृग्ग नैनी। भरें माग मुत्ती गुहै बैठि बैनी॥
सजै छच आचार आनंद भीनै। तिनं सीस भोरानि आवृत कीनें॥
छं० ॥ ११३८ ॥

(१) ए. कृ. को. तेहि।

सुभं रूप सोभा तिनं अंग वेसं। तनं चीर सारी पटं कूल नेसं॥
चमक्कंत चौकी कनी फूल झब्बी। गरै पीति पुंजं रिदै हार फब्बी॥
छं० ॥ ११३९ ॥

कटिं छुद्रघंटा वंकी जे बनीयं। पयं झंझनं सद्द श्रवने सुनीयं॥
इदं रूप हंसाय गंमाय तेनं। लजै कोकिला कान सुननें सुरेनं॥
छं० ॥ ११४० ॥

बनी निकट नारी सुगंधाय बासै। सबै चंद बद्नी तहां चंद भासै॥
तहां संभरी नाथ लागै तमासै। खरै मौन इय फौन, तिन देपि हासै॥
छं० ॥ ११४१ ॥

कुंडलिया ॥ मौन चरिच जु भुल्लि नृप। पंग न भुल्लिय युद्ध ॥
तीन लष्य अग्गें नृपति। जो भारथ्थ विरुद्ध ॥
जो भारथ्थ विरुद्ध। दई अंगमै सु सद्धल ॥
दई बन लाई कलिय। जुपिय रुक्कियै सवद्दल॥
वल अभंग अरिभंग। पंग सिर पान सु लिन्नौ ॥
कहर कन्ह साहस्स। सिंघ सो दिल्ल समिन्नौ ॥ छं० ॥ ११४२ ॥

दूहा ॥ इतें सेन चढ़ि पंग बर। है गै दिसा दिसान ॥
दछिन नैर नरिंद करि। गंग सु पत्तौ ध्यान ॥ छं० ॥ ११४३ ॥

पृथ्वीराज का गले की माला के मोतियों को मछलियां को चुनाना।

चन्द्रायना ॥ भूलौ नृप इह रंगहि जुद्ध विरुद्ध सह ।
नंपहि मौननि मुत्ति लहै जुअ लष्य दह ॥
छोड़ तुछ तुच्छं सु मुत्ति भरं तन कंठ लह ॥
पंक प्रवेस इसंत झरंत न कंठ मह ॥ छं० ॥ ११४४ ॥

संयोगिता और उसकी सखी का पृथ्वीराज को गोख में से देखना।

कवित्त ॥ सुनि वज्जन संजोग। सुनिय आवन्न नृपति बर ॥
भयौ चित्त चर चित्त। मित्त संभरि सु रंग नर ॥

बल बींटिय राज नह । लाज रष्पी मत किन्नौ ॥
गौष कुंअरि सिर रही । उट्ठि सुंदरि बर चिन्हौ ॥
दिसि पुव्व देखि चहुआन नृप । बर लोचन मन षग्ग मंग ॥
उपम्म बाल चिंतै सु चल । पुव्व दिसा दौ रवि सु डग ॥
छं० ॥ ११४५ ॥

पृथ्वीराज का संयोगिता को देखना ।

कुंजर उप्पर सिंघ । सिंह उप्पर दोय पब्बय ॥
पब्बय उप्पर भृंग । भृंग उप्पर ससि सुभ्भय ॥
ससि उप्पर इक कीर । कीर उप्पर मृग दिट्ठौ ॥
मृग उप्पर कोवंड । संध कंद्रप्प बयट्ठौ ॥
अहि मयूर महि उप्परह । हीर सरस हेम न जय्यौ ॥
सुर भुअन छंडि कविचंद कहि । तिहि धोपै राजन पय्यौ ॥
छं० ॥ ११४६ ॥

दूहा ॥ भूल्यौ नृप इन रंग महि । पंग चल्यो हय पुट्ठि ॥
सुनि सुंदर बर बज्जने । अई अपुब्ब कोइ [1]दिट्ठ ॥ छं० ॥ ११४७ ॥
देषत सुंदरि दल मिलनि । चमकि [2]चढ़ौ मन आस ॥
नर कि देव किधौं नाग हर । गंगह संत निवास ॥ छं० ॥ ११४८ ॥

अरिल्ल ॥ बजि बीर निसान दिसान बजौ । सु किधौं फिरि भद्दव मास गजौ ॥
सह नाइन फेरि अनेक [3]सजी । सुनि सोर संजोग सु गौष रजी ॥
छं० ॥ ११४९ ॥

चौपाई ॥ सुनि सुंदरि बर बज्जन चल्लौ । पिन अलपह तलयह मुष झल्लौ ॥
देषि रंजि संजोगि सु भल्लौ । फूलि वाह मुष कुमुदह कल्लौ ॥
छं० ॥ ११५० ॥

पृथ्वीराज और संयोगिता दोनों की देखा देखी होने पर दोनों का अचल चित्त हो जाना ॥

श्लोक ॥ दिष्टा सा चहुआनं । संमरं कामं संमायते ॥

(१) ए. कृ. को.- दुट्ठि । (२) ए. कृ. को.-बढ़ी । (३) ए. कृ. को.-वजी ।

कमधुज्ज वर वीरं। विगलति नीवीवनं वसति ॥ छं० ॥ ११५१ ॥
मुरिल्ल ॥ उर संजोइ साल घन मंडं। श्रवन श्रोतान जु लागि चिकंडं ॥
फरन फराक भये षग भग्गे। जनु चंमक लोहान सु लग्गे॥छं० ॥११५२॥

संयोगिता का चित्रसारी में जा कर पृथ्वीराज के चित्र को जांचना और मिलान करना।

मोतीदाम ॥ प्रति बिंब निरष्पि हरष्पिय बाल। लई सषि सष्प चढ़ी चिचसाल॥
साइक्क समान न प्रौढन मूढ़। समान सु केलि सिंगार सु पोढ़ ॥
छं० ॥ ११५३ ॥
स बुद्धि स बुद्ध अबुद्धि न बुद्ध। चलं चल नेंन सु मेंन निवद्ध ॥
षिनं षिन रूप सरूप प्रसन्न। पुजै किम कोकिल जाम रसन्न ॥
छं० ॥ ११५४ ॥
लगी बर जालि न गौषन नाय। लिषी दषि पुत्तलि चिच समाइ ॥
रही बर देषि टगं टग चाहि। मनों चिच पास न कैं दिन जाहि ॥
छं० ॥ ११५५ ॥
कहै इक नारि संयोगि दिषाई। धरै अंग अंग अनंग जु साई ॥
किधों दिसि प्राचिय भान प्रकार। किधों मन मथ्थ कै काम अकार॥
छं० ॥ ११५६ ॥
कि इंद फुनिंद नरिंद्र कोइ। किधों इत लीन संयोगिय सोइ ॥
छं० ॥ ११५७ ॥

संयोगिता की सहेलियों का परस्पर वार्त्तालाप।

दूहा ॥ इक कहै दनु देव इह। इक कहै इंद फुनिंद ॥
इक कहै अस कोटि नर। इक प्रथिराज नरिंद। छं ॥ ११५८ ॥
सुनि वर सुंदरि उभै तन। उभै रोम तन अंग ॥
स्वेद कंप सुर भंग भौ। नेंन पिषत प्रथुरंग ॥ छं० ॥ ११५९ ॥

संयोगिता के चिबुक बिंदु की शोभा।

चोटक ॥ हिय कंप विकंप विपथ्थ पथं। मनु मंत विराजत काम रथं ॥
कल कंपित कंप कपोल सुभं। अलकावलि पानि उचंत उभं ॥
छं० ॥ ११६० ॥

निज निंदति मंथुर पंथनियं। धव धक्क धकं धक्क अस्ति हियं॥
सुर भंग विभंग उमंग पियं। रद मंडल षंडल चंपि लियं॥
छं० ॥ ११६१ ॥

निज नूपुर झारि नितंब छियं। रिजु नेह दुनेह चिमंग चियं॥
चिबुकं चिकु उहिम विंदु धुअं। कटि मंडल हार बिहार सुअं॥
छं० ॥ ११६२ ॥

अध दिष्ट उनष्टि कतं तिलकं। बहनी बर भंगत पौ पलकं॥
सत भाव सतं [1]तिल की कथयं। निज सोजि बिलोकि तयं पथयं
छं० ॥ ११६३ ॥

हँसि हँसिह रम्य करी करयं। सषि साषि परष्पि हँसी हरयं॥
छं० ॥ ११६४ ॥

संयोगिता का पृथ्वीराज को पहिचान कर लज्जित होना।

गाथा॥ पिय नेहं विलवंती, अवली अलि [2]गुज नेन दिट्ठाया।
परसान सह हीनं, भिन्नं की माधुरी माध॥ छं० ॥ ११६५ ॥

चन्द्रायन॥ दुलह जानि अनराइ सु हाइ सुषं अली।
लज्जा गरुअ समुंद अबुडन यह कली॥
मरन सरन संजोगि विहत बरनं सचिय।
सहि चहुआन सु बुझिभय पेम सु मंझ चिय॥ छं० ॥ ११६६ ॥

संयोगिता का संकुचित होते हुए ईश्वर को धन्यवाद देना और पृथ्वीराज की परीक्षा के लिये एक दासी को थाल में मोती देकर भेजना।

अरिल्ल॥ सारति संकुल सांवर वीरं। सषि संकुचि भौ लोचन नीरं॥
[1]परसपर संपर भीरन भीरं। कामातुर निट्ठुर लगि तीरं॥
छं० ॥ ११६७ ॥

गुरु जन गुर निंदरियं सुंदरि। राज पुत्ति पुच्छियै न दुरि दुरि॥
असहि पुच्छि तौ दुत्ति पठावहि। कुन अच्छै पुच्छ बिकरि आवहि॥
छं० ॥ ११६८ ॥

(१) ए. कृ. को. तिक। (२) ए. कृ. को. गुंजनेव।

चोटक ॥ मन पंचिय सौजुग यौ जबिषं। सुमरौ मन लज्जिय मात पयं ॥
अध दिष्ट करौ चितयौ सु हितं। गुरुनौ गुर बंधिव गंठि चितं ॥
छं० ॥ ११६८ ॥

चन्द्रायण ॥ जनो गोचर कथ कालंनि कथं कथ अष्पियै ।
रस संकहि अंकुरि मान मनं मथ भष्पियै ॥
जात दुहै परमान बिधातन लष्पियै ।
को मिट्टै संजोग संजोगिन अष्पियै ॥ छं० ॥ ११७० ॥
तब पंगुर राय सु पुत्तिय मुत्तिय थाल भरि ।
जौ हिय इछ प्रथिराजह पुच्छहि तोहि फिरि ॥
जौ इन लच्छिन सब तब विचारि करि ।
है व्रत मोहि न्रप जीव तौ लेउं सजीव वरि ॥ छं० ॥ ११७१ ॥

कवित्त ॥ दिष्ट फंद संजोग। दासि षिल वारि इछ्य दिय ॥
म्रग बंधन चहुआन। पुन्न ओतान षेद किय ॥
पुन्न रूप गिद्धीव। मद मन मथ्थ संभारिय ॥
भय म्रग पंग नरिंद। चंद बंधन बन डारिय ॥
इक्कैति इक्क हाका सषिय। मूर गौष अपबंध सिष ॥
बेधंत आनि बानह [1]अभुल। भ्रगुक सीस कामंग इष ॥छं०॥११७२॥

दासी का चुप चाप पीछे जाकर खड़े हो जाना।

दूहा ॥ सुंदरि धरि अवननि सुन्यौ। गुन कहौ गुनं विद्ध ॥
ठग मग प्रत्ति [2]प्रतच्छि पिय। प्रसनह प्रत्ति प्रसिद्ध ॥छं०॥११७३॥

चन्द्रायन ॥ सुंदरि आइस धाइ विचारन बुल्लइय ।
ज्यौं जल गंग हिलोर प्रथीति प्रसंग तिय ॥
कमलति कोमल पानि केलि कुल अंजुलिय ।
मनहु अंध दुज दान सु अछत अंजुलिय ॥ छं० ॥ ११७४ ॥

पृथ्वीराज का पीछे देखे बिना थाल में से मोती ले ले कर मछलियों को चुनाना।

(१) ए.-अभुज। (२) ए. कृ. को.-परष्षि।

दूहा ॥ अंजुलि जल मंडत नृपति । जब वित्ते गलमुत्ति ॥
जलहल भै भ्रंमन कियौ । षमीति बाल निषत्ति ॥ छं० ॥ ११७५ ॥
गौष निरष्यहि सुभ्भ चिय । हियै हरष्यहि बाल ॥
उभै पानि एकत करिग । देषि गुरज्जन हाल ॥ छं० ॥ ११७६ ॥

थाल के मोती चुक जाने पर दासी का गले की पोत पृथ्वीराज के हाथ में देना। यह देखकर पृथ्वीराज का पीछे फिर कर दासी से पूछना कि तू कौन है और दासी का उत्तर देना कि मैं रनवास की दासी हूं।

इह नराज ॥ नराज माल छंद ए कहंत कब्बि चंद ए ।
अपंत अंजुलीय दान जान सोभ लग्ग ए ॥
मनों अनंग रत्त सेय रंभ इंद पुज्जए ।
सु पानि बार थक्कि थाल मुत्ति वित्तए ॥ छं० ॥ ११७७ ॥
पुनेपि हथ्थ कंठ तोरि षोति पुंज अप्पए ।
... . ॥
सुटेरि नेन फेरि रेन तानि पत्ति चाहियं ।
तरुणि दासि पास कंपि संकियं न वाहियं ॥ छं० ॥ ११७८ ॥
भयं चक्यौ भयान राज गात अम्म दिष्पयौ ।
कै स्वर्ग इंद गंग में तरंग नित्त पिष्पयौ ॥
अनेक संग रूप रंग जूप जानि सुंदरी ।
उलंग गंग मद्धि धुक्कि स्वर्ग पत्त अच्छरी ॥ छं० ॥ ११७९ ॥
हौं अच्छरी नरिंद नाहि दासि ग्रेह पंगुरे ।
जु ताम पुत्ति जम्म छंडि ढिल्लि नाथ अद्दरे ॥
सषन्न सूर चाहुआन मन्न एम जानये ।
करी न केहरी न दीप इंद एन थान ए ॥ छं० ॥ ११८० ॥
प्रतष्य हीर जुद्ध धीर जौ सुवीर संचही ।

बरंत प्रान मानि नीच लौ सु देन गंठही ॥
सुनंत सूर अस्व फेरि तेज ताम इंकयं ।
मनौं दरिद्र रिद्ध पाइ जाय कंठ लग्गयं ॥ छं० ॥ ११८१ ॥
कनक्क कोटि अंग धात रास बास मालची ।
रहंत भौंर झोर स्याम छंच तंच कामची ॥
सुधा सरोज मौजयं अलक्क अल्लि हल्लियं ।
मनौं मयन्न रत्ति रन्न काम पास घल्लियं ॥ छं० ॥ ११८२ ॥
करस्सि काम कंकनं जु पानि फंद माजए ।
जु भावरी सपी सु लाज भुंड सो बिराज ए ॥
अनेक संग डोर रंब रत्त मत्त सस्सियं ।
जु संगही मरोज सोभ होत कंत तस्सियं ॥ छं० ॥ ११८३ ॥
अचार चारु देव सब्ब दोउ पष्प जंपियं ॥
सु गंठि दिट्ठ एक चित्त लोक लोक चंपियं ॥
सु इंद्रनी जु इंद्र जानि गंध्रवी विवाहयं ।
मुसक्कि मंद हासयं समुष्प दिष्पि नाहयं ॥ छं० ॥ ११८४ ॥
सु अंगुली उचक्कि एक देवतानि सुंदरी ।
मिलंत होय कथ्थ मोहि स्वर्ग वास [1]मंदरी ॥
अनेक सुष्प मुष्प सास जुद्ध साध लग्गियं ।
सुकंत कंति अथ्थिता तमोरि मोरि अप्पियं ॥ छं० ॥ ११८५ ॥

दूहा ॥ इहि विध [2]धिरताईं कहत । विद्धिय विद्धि निषद्ध ॥
सुष्प सु विद्धय जान सें । सुष्पह विद्धि निषिद्धि ॥ छं० ॥ ११८६ ॥
दिषन सासु सहस वलिय । अरि चस सिंघनि डार ॥
कानिन गन अनभंग है । मत्ति तेन दह च्यार ॥ छं० ॥ ११८७ ॥
चक्रित चित्त चहुआन हुअ । दरसि दासि तन चंद ॥
तन कलंक कट्टन मिसह । जहां रन्न विष वद ॥ छं० ॥ ११८८ ॥

दासी का हाथ से ऊपर को इशारा करना और पृथ्वीराज का संयोगिता को देख कर बेदिल होजाना।

(१) ए. कृ. को.-संगरी। (२) ए. धिरसाई कृ. को.-धिरताई कहै।

मुरिल्ल ॥ दरसि दासि तन रूप वर ठट्ठी। भेद बांच पंडुर तन चट्ठी ॥
उष्ट कंप जल नैंन जंभाई। प्रात सेज ससि रोहिनी आई ॥
छं० ॥ ११८९ ॥
दासि दिष्ट चहुआन सु जोरी। रूप निहारि उभै दिसि मोरी ॥
इंद्र इंद्र रस भरि ढरि चीनौ। मनो मुष रोष वारुनी पीनो ॥
छं० ॥ ११९० ॥
करिवर दासि संजोगि दिषाई। दिष्पत त्रिप दुरि तन भय गाई ॥
भंकत तुछ तन सब्ब न सारन। सुकल ससि रवि इस्सै पारन ॥
छं० ॥ ११९१ ॥

दूहा॥ चंद चमक झंषिम गवष। चंद्र पत्ति दुति मार ॥
मनों बदन चहुआन कौ। बंधति बंदर वार ॥ छं० ॥ ११९२ ॥

संयोगिता का इच्छा करना कि इस समय गठ बंधन हो जाय तो अच्छा हो।

मुरिल्ल ॥ कुसल जोग[1] राजन चित इट्ठ किय। जनम पुन्न प्रथिराज पेट्ठ किय ॥
बर बिचार बर बाल बुलाइय। गंठ जोरि ग्रह बर चलाइय ॥
छं० ॥ ११९३ ॥

संयोगिता का संकुचित चित्त होना।

दूहा ॥ जौ जंपौ तौ जित्त हर। अनजंपै विहरंत ॥
अहि डट्ठै छच्छंदरी। हियै बिलग्गी बंत ॥ छं० ॥ ११९४ ॥

ऊपर से दस दासियों का आकर पृथ्वीराज को घेर लेना।

चन्द्रायन ॥ उतर देन संजोगिय धाइय दासि दस।
चावहिसि चहुआन सु बिट्ठिय कीय बस ॥
नही कोट दै ओट सु गट्ठिय काम कस।
मनु दह रुद्र न बिंठि करै मन मथ्थ बस ॥ छं० ॥ ११९५ ॥

दासियों का पृथ्वीराज पर अपनी इच्छा प्रगट करना।

(१) मो. रोज। (२) ए. कृ. को-चित्त।

दूहा ॥ मुक्कि सुवर चहुआन को। अली सु कहिय जु बत्त ॥
पुत्र अंक विधि बर लियौ। को मेटे विधि पत्त ॥ छं० ॥ ११९६ ॥
पानि ग्रहन संजोगि कौ। जोइ सु देवनि ग्रेह ॥
यों नथि भावित भाव गति। मनु पुच्च पंग सु एह ॥ छं० ॥ ११९७ ॥

संयोगिता की भावपूर्ण छवि देख कर पृथ्वीराज का भी बेबस होना ।

कवित्त ॥ देषि तथ्थ संजोगि। नेह जल काम करारे ॥
हाय भाय विभ्रम। कटाच्छ दुज बहु भंति निनारे ॥
रचित रंग झंकोर। [1]वयन अंदोल कसय सब ॥
हरन दुष्य द्रुम रुम मिवास। कुच चक्क वाक मोदि सब ॥
द्रिग भवर मकर बिंबर परत। [2]भरत मनोरथ सकल सुनि ॥
[3]बर बिहुर न्रपति म्रनाल नें। नन जानो किहि घटिय गुनि ॥
छं० ॥ ११९८ ॥

सखियों की परस्पर शंका कि व्याह कैसे होगा ।

दूहा ॥ मंगल कढि पानि ग्रहन। सुष्य संजोग सु बंक ॥
दिषि विवाह सुभ्यौ वदन। ज्यौं मंदरि ससि पंक ॥ छं० ॥ ११९९ ॥

अन्य सखी का उत्तर कि जिनका पूर्व्व संयोग जागृत है उनके लिये नवीन संबंध विधि की क्या आवश्यकता ।

कवित्त ॥ सुनि सषि सषि उच्चरिय। कोन बंध्यौ अकास मज ॥
अमर न देषे देव। बेद गंधब्ब रिषिय सुज ॥
रुषमनि अरु गोविंद। बेद गंधब सुष किन्नौ ॥
दमयंतौ नल व्रत्त। पन्न अग्गं तिन लिन्नौ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-वैन अंदोल कसय सब ।
(२) ए. कृ. को.- भरत मनों मुनि सकल अंग ।
(३) ए. कृ. को.-वर विदुर नृपति मृनालते तत जानो केहि दाहि लागि ।

यों वृत्त लीन संदरति पन। धावि अगें सो सुन्नही॥
संजोगि अंग जो विहि लिष्यौ। सो मिटे न सिर नन धुन्नही॥
छं० ॥ १२०० ॥

दूती का पृथ्वीराज और संयोगिता को मिलाना।

दूहा॥ कहि करि न्रप संजोगि फुनि। दिसि सुहथ्थ बहु लाइ॥
मिलि कमोद सत पच रवि। दूती दूहुन माइ॥ छं० ॥ १२०१ ॥

पृथ्वीराज का संयोगिता के साथ गंधर्व विवाह होना।

इनूफाल॥ संजोगि गहि न्रप हथ्थ। मनों सरज जोरित नथ्थ॥
संजोगि न्रप बर राज। उप्पंम कवि बर साज॥ छं० ॥ १२०२ ॥
पदमिनिय पन्न प्रमान। हर अंषिआन अधान॥
सषि बिंट दंपति सोभ। कविराज ओपम लोभ॥ छं० ॥ १२०३ ॥
दिषि चंद रोहिनि लास। गइ लास कुमुदनी पास॥
फिरि रंभ आरंभ कीय। न्रप वाम वाम सुलीय॥ छं० ॥ १२०४ ॥
तन बंध मन दै दान। न्रप छोरि गंठ [1]प्रवान॥
.... । .... ॥ छं० ॥ १२०५ ॥
दूहा॥ वरि चल्ल्यौ ढीली नृपति। सुत जयचंद कुमारि॥
गंठ छोर दच्छिन फिरिग। प्रान करिग मनुहार॥ छं० ॥ १२०६ ॥

पृथ्वीराज का संयोगिता से दिल्ली चलने को कहना।

कहि चल्ल्यौ चहुआन चित। उरझे चित्त सु [2]पथ्थ॥
[3]बद चल्ल प्रथिराज न्रप। हठ संजोगि सु तथ्थ॥ छं० ॥ १२०७ ॥
श्लोक॥ प्रयाने पंगपुत्री च। जैतिकं जोगिनीपुरं॥
विधि सर्व निषेधाय। तांबूलं ददतं न्रपं॥ छं० ॥ १२०८ ॥

संयोगिता का क्षण मात्र के लिये विकल होकर स्त्रीजीवन पर पश्चाताप करना।

गाथा॥ सुनि इंदो अनुराओ। दिट्ठी रिझाइ सब्ब सो अप्पं॥

---

(१) ए. कृ. को.-प्रमान। (२) मो.-तथ्थ। (३) ए कृ. को.-बदलि चले।

दै इथ्थं इवि छुट्टा। डाहं जे बज्जनो हियथौ ॥ छं० ॥ १२०९ ॥
इंजेह आइ नंषी। कंपी तनषाहं काम मंजोइ ॥
निरधा अधार विनसं। या [1]बाला जीवनं कुच ॥ छं० ॥ १२१० ॥
दूहा ॥ नर आसुर सु रंम मन। [2]सबल बंध अवलेह ॥
थान खाज चहुआन कौं। टुट्टिय संकर नेह ॥ छं० ॥ १२११ ॥

दंपतिसंयोग वर्णन ।

चौपाई ॥ रति संजोगि जगि उप्पम नेनं। रच्यौ विचारि कवि वर मेनं ॥
जोग ग्यान द्रिग पुच्छि उचारै। तौ दंपति रति ओपम मारै ॥
छं० ॥ १२१२ ॥
मेर जेम मो मन सा जानं। जो हृत लीय जिही चहुआनं ॥
सुष भरि बेंन नेंन अवलोकं। गंठि बंधि पुब्बह परलोकं ॥
छं० ॥ १२१३ ॥
कहूं कंति धर मुछि बल बुल्ली। षीन देहु दुति छुट्टी लल्ली ॥
कल अधकी अध छिप्पत मब्बं। थकि चतुरथ्थि सुकल मंसि जब्बं ॥
छं० ॥ १२१४ ॥
मुच्छि परंत प्रजंक प्रसंसी। [3]माइस अद्ध घरी घट चंसी ॥
षोडस आदि कलंकल कंपी। रष्पि सषी सषि सों सषि जंपी ॥
छं० ॥ १२१५ ॥

पृथ्वीराज का संयोगिता प्रति दक्षिण से अनुकूल होजाना।

दूहा ॥ [4]सुनि अंदोअन राव दिठ। रिझझाए सब मोइ ॥
फंदह मांहि विछुट्टही। देह जे बज्ज न होइ ॥ छं० ॥ १२१६ ॥
बर दच्छिन पुब्बह नृपनि। भौ अनकूल प्रमान ॥
कंक कन्ह अप्पन कवन। पब्ब सु धन परिमान ॥ छं० ॥ १२१७ ॥
मुरिल्ल ॥ मन रूषी तन पिंजर पीरे। दंपति दुष जंपति तन तीरे ॥
हरष्य दुष्य मुष सषी प्रगासी। परमहंस गुर बैन सन्यासी॥छं०॥१२१८॥

(१) ए. कृ. को.-बाले। (२) ए.-सपल।
(३) ए. कृ. को.-माहस अद्ध घरी घर मंसी।
(४) ए. कृ. कां.-सुनि इन्द्रोनव रावदित।

संयोगिता का दिल खोल कर अपने मन की बातें करना, प्रातः काल दोनों का बिलग होना।

कवित्त ॥ दच्छिन बर चहुआन। कीय अनुकूल पिम्म तन ॥
बिरह बाल द्रग उमगि। अंषि कलक क्रप नंधन ॥
नृप मन धन दभ्भिय सनेह। देह दुष काम वाम अगि ॥
ज्यों कुलाल घट अग्गि। पचषयौं उमझि उट्ठि लगि ॥
दंपत्ति नेह दुष दुहुन कहि। विछुरि साथ चक्कवाक जिम ॥
ज्यों सहै दुहन जिहि कुल बधू। कहत साथ पंजर सु तिम ॥
छं० ॥ १२१९ ॥

गुरुराम का गंगा तीर पर आ पहुंचना।

दूहा ॥ पहुंचायौ दस दासि नृप। गंग सपत्तौ ताम ॥
वह दिष्यौ गुरु राज ने। ज्यौं रति विछुरति काम ॥ छं० ॥ १२२० ॥
चौपाई ॥ दिसि गुर राज राज तन चाहं। मनो गजिय उर उज्जल गाहं ॥
दिष्पि सु छबि ढिल्ली चहुआनं। जानै कन्ह सु लछियं जानं ॥
छं० ॥ १२२१ ॥

पृथ्वीराज का गुरुराम को पास बुलाना।

दूहा ॥ बर दंपति दस दासि ढिग। दंद जुदो जनु ब्याह ॥
दुहु दिसि मंगल बज्जिहै। बिच मंगल बरधाह ॥ छं० ॥ १२२२ ॥
तब देषिय गुर राज नृप। चलि आइय तिहिं पास ॥
मन देषत सीतल भयौ। बढिय राज उर आस ॥ छं० ॥ १२२३ ॥

गुरुराम का आशीर्वाद देकर सब बीतक सुनाना।

दै असीस उच्चारि अज। संभरि संभरि वार ॥
सुभर सूर सामंत सों। पंग सु जुद्ध प्रहार ॥ छं० ॥ १२२४ ॥
कवित्त ॥ बीर हेम झुझ्झयौ। वाम जग्ग्यौ जु कंक अगि ॥
बर दंपति हथ लेव। बधि बंदी उपंम मनगि ॥
बरसै सब उतरंत। चढ़त सम राज पाज बंधि ॥

कै भगि मगि भजि पास। मंगि बाला जोवन संधि ॥
आचार चार दुहु पष्य बर। देव देव मिलि जंपइय ॥
भांवरिय लाज सषि ज्यों जुरिय। धीर बीर [1]मिलि बज्जइय ॥
छं० ॥ १२२५ ॥

पन्यौ राव लंगरी। पंग भंजै परधानं ॥
दुर्द दमन कूरंभ। परे दुरजन [2]सलधानं ॥
सिंघ मिले संमरह। सिंह न्रिब्रान सभानं ॥
बर प्रताप तूँवर तनार। सकति सुनि न्रिप कानं ॥
रघुबंस भीम जै सिंघ दिनि। भान भष्य गौ झुल्लयौ ॥
इन परत पंग ढिल्ली बहुअ। न्रिप ढिल्लीस न ढिल्लयौ ॥
छं० ॥ १२२६ ।

गुरुराम का कहना कि सामंतों के पास शीघ्र चलिए।

दूहा ॥ ढिल्ली वै संभरि न्रपति। बस्त कहंतह बेर ॥
फिरि सामंतन सूर मिलि। करहि न न्रपति अबेर ॥छं० ॥ १२२७
दुज दासी संयोग पै। कहन सोभ कलिरीय ॥
दे सुराज चहुआन चित। ओडन मुक्किय जीय ॥ छं० ॥१२२८॥
कवित्त ॥ दूह सर सुनि सजोगि। जोग पायौ न देव मुनि ॥
तिहि सर सुष्य न दुष्य। जीत भौटरै जम्म फुनि ॥
रंभा भर जुग्गिनी। गिद्ध बेताल सु कंधी ॥
हंस हंस उड़ि चलै। रुद्धि जल कमल नियंधी ॥
रस बीर विचं सेवाल कच। कित्ति भवर तिहि गंजइय ॥
[3]रत्तय म्रनाल कित्तिय अथय। सूर सुतन मन रंजइय ॥
छं० ॥ १२२९ ॥

दूहा ॥ सुनिय बयन संजोगि कहि। लिषि दिय पट्ट प्रमान ॥
दई करै सो न्रिम्मयौ। मिलन तेहु चहुआन ॥ छं० ॥ १२३० ॥

कन्ह का पत्र पढ़ कर पृथ्वीराज का चलना और संयोगिता का दुखी होना ।

(१) ए. कृ. को.-मिलि। (२) ए. कृ. को.सलयानं। (३) ए. को.-इत्तह।

चौपाई ॥ लै पटि बंधि कन्ह गिरि संगं । चल्यौ न्रपति [1]जुद्ध रस अंगं॥
जिम जिम बर चल्लै चहुआनं । तिम तिम बाल प्रमुक्कै प्रानं ॥
छं० ॥ १२३१ ॥

कवित्त ॥ चल्यौ राज प्रथिराज । पास गुर कन्ह मन ॥
चिंति स ह्वर सँजोग । चल्यौ चहुआन राह पन ॥
सौ क्रंम दस ता अग्ग । पंग दल रुद्धि जुद्ध बल ॥
इक्क कहै [2]प्रिथु पथ्थ । इक्क तप जुत्त जुधिष्ठल ॥
रक्खयौ रतन सा निद्धि पत । रतन सौंह चिह्न मग्गि गसि ॥
इंकारि ह्वर सन्हौ फिरिय । संभरि वै कढ्ढौति असि ॥छं॥१२३२॥

पृथ्वीराज का घोड़ा फटकार कर अपनी फौज में जा मिलना।

नंघिहै मान नरिंद । बज्जि घुरतार कंपि भुअ ।
बज्जघात न्निघघात । बज्ज संपत्त कंपि भ्रुअ ॥
अष्ट सु चल दह विचल । उड्डि बंबर धर धुम्मर ॥
बजी सद्द पर सद्द । महतजि रहिग मद्द करि ॥
भै चक्क सुभर न्रप बीर बर । लष्पि बीर चहुआन बर ॥
[3]बर नचे बीर सुनि कन इ"से । जियत बत्त प्रथिराज नर ॥
छं० ॥ १२३३ ॥

मुसल्मान सेना का पृथ्वीराज को घेरना पर कन्ह का आड़ करना।

रसावला ॥ राजरुक्के अरी, सिंघ रोहं परी । षंजरं षोलियं, बीर सा बोलियं ॥
छं० ॥ १२३४ ॥
षग्ग बंकी कढ़ी, तेज बीयं बढी । बान नष्यं भरं, मोह [4]मंमं झरं ॥
छं० ॥ १२३५ ॥
राज बिंद सारयं, पंच इज्जारयं । बंक धंकं डनी, बीर नंषे धुनी ॥
छं० ॥ १२३६ ॥

(१) ए. कृ. कां.-दुद्ध । (२) मो.-प्रथिराज ।
(३) ए कृ. को.-बरनवे । (४) ए. कृ. को"-मत्तं जंर ।

राषि सज्ज धनं, बोलि पत्त मनं। फौज फट्टी फिरी, कन्ह रक्के अरी॥
छं० ॥ १२३७ ॥

सामि कट्टे बलं, काज रुद्धं षलं। ...., ... ॥
छं० ॥ १२३८ ॥

सात मीरों का पृथ्वीराज पर आक्रमण करना और पृथ्वीराज का सब को मार गिराना।

कवित्त ॥ मत्त मीर जम सम सरीर। जद्द रक्यौ रूप अग्गा॥
राज कन्ह दुज गुरू। सार छल सूरह लग्गा॥
नग सम सत्त पुरष्य। पूर मंचह असि बर पढ़ि॥
होम जाप जुथ्यौ सु। बीर सरसं प्रहार चढ़ि॥
सम सेवग सेव सु स्वामि धृत। कित्ति देव संतोष बलि॥
षँड अग्ग भाग प्रथिराज कौ। देव ब्रम्ह उग्गारि बल॥
छं० ॥ १२३९ ॥

फिरि पच्छौ चहुआन। बान आरोह प्रथम करि॥
षां वहिरम बरजही। फुटि टट्टर टरिग्ग धर॥
बीय बान संधान। षान पौरोज सु भग्गा॥
पष्यर अस्व पलान। मीर सहितं धर लग्गा॥
चय बान कमान सु संधि करि। सुगति मग्ग गुन चंद कहि॥
जलाल मीर सम बल प्रचंड। वालि प्रान संमह सढहि॥
छं० ॥ १२४० ॥

बान चवथ्थै राज। तूटि कंमान षनक्की॥
उडि गामी छुटि तीर। [1]पंच बह सह भनक्की॥
इति उत्तरि चहुआन। षग्ग कढि बज्ज कि पायौ॥
दुति उप्पम कविचंद। तीय विक्रम असहायौ॥
नषि राज बाज उप्पर वसिस। सक्क मीर अवसान चुकि॥
षग मीर ताप तप्पौ नही। मुक्कि अस हिसि वाम धुकि॥
छं० ॥ १२४१ ॥

(१) मो.-पंष।

दूहा ॥ हय गय बर गंभीर चढ़ि । नर भर दिसन दिसान ॥
पंग राव कोपिय सुबर । गहन मेछ चहुआन ॥ छं० ॥ १२४२ ॥
रैन परै सिर उप्परै । हय गय [1]गतर उछार ॥
मनहु ठग्ग ठग मूरि लै । रहिग सबै मुंछार ॥ छं० ॥ १२४३ ॥

पृथ्वीराज को सकुशल देख कर सब सामंतों का प्रसन्न होना।

मनहु बंध अनभूति धर । है तिन जानत बट्ट ॥
बचन स्वामि भंग न करहि । सह देषहि नृप बट्ट ॥ छं० ॥ १२४४ ॥
अवलोकति तन स्वामि मन । भौ सामंतनि सुष्ष ॥
हंसहि सूर सामंत मुष । कायर मानहि दुष्ष ॥ छं० ॥ १२४५ ॥
धीरत धरि ढिल्लेस बर । बहु दंती उभ [2]रोभ ॥
नृपति नयन तन अंकुरे । मनहु मह गज सोभ ॥ छं० ॥ १२४६ ॥

सामंतों की प्रतिज्ञाएं।

कुंडलिया ॥ देषि सुभर नृप नेन । आनि भौ आनंद चंद ॥
अरि गंजे रुप त्रिष्ष । बीर हक्के ग्रह दंद ॥
बीर हक्के ग्रह दंद । मुकति लुट्टे कर रस्सी ॥
आज सामि रन दैहि । बरै अच्छरि कुल लस्सी ॥
काम तेज संभरी । देव कंदल जुध पिष्षे ॥
गुरू गल्ह उच्चरै । टुट्टि धारा रवि दिष्षै ॥ छं० ॥ १२४७ ॥

कन्ह का पृथ्वीराज के हाथ में कंकन देख कर कहना यह क्या है।

दूहा ॥ हरषवंत नृप भत्त हुअ । मन मझ्झह जुध चाव ॥
मिलत हथ्थ कंकन लष्यौ । काह्यौ कन्ह दुह काव ॥ छं० ॥ १२४८ ॥
गगन रेन रवि मुंदि लिय । धर भर छंडि फनिंद ॥
दुह अपुब्ब धीरत्त तुहि । कंकन हथ्थ नरिंद ॥ छं० ॥ १२४९ ॥

(१) ए. कृ. को.-गज। (२) बी.-रोस।

इथ्थह कंकन सिर तिलक। अचिल्लत लगे लिलार ॥
कंठ माल तुअ कंठ नहि। कहि न्रप कवन विचार ॥छं०॥१२५०॥

पृथ्वीराज का लज्जित होकर कहना कि मैं अपना पण पूरा कर चुका।

चौपाई ॥ सुनि सुनि बचन भुमि सिर नायौ। क्रपन दान ज्यौं बंजि दुरायौ॥
पंच पंच अब लीन क चिंतर। छंडित बहि दियौ तब उत्तर ॥
छं० ॥ १२५१ ॥
बरिय बाल सुत पंगह राय। वह व्रत भंग मोहि इत जाइ ॥
तिहि मुंधहि अब जुद्ध सुहाई। अथ्थि अवासह देउं बताई ॥
छं० ॥ १२५२ ॥

कन्ह का कहना कि संयोगिता को कहां छोड़ा।

तिहि तजि चित्त कियौ तुम पासं। छंडिय कन्ह रुदंत अवासं ॥
सौ सुभट्ट महि एक भट होइ। तौ नृप धनहि न मुक्कै कोइ ॥
छं० ॥१२५३ ॥
जौ अरि थाट कोरि दल साज। तौ दिल्लिय तपत दै हि प्रथिराज॥
इतनौ नृपति पुच्छियै तोहि। परनि मुक्कि सुंदरि इह होइ ॥
छं० ॥१२५४ ॥

पृथ्वीराज का उत्तर देना कि युद्ध में स्त्री का क्या काम।

श्लोक ॥ जज्ञकालेषु धर्मेषु। कामकालेषु शोभिता ॥
सर्वच वल्लभा बाला। संग्रामे जन गेहिनी ॥ छं० ॥१२५५ ॥

कन्ह का कहना कि धिक्कार है हमारे तलवार बांधने को यदि संयोगिता सकुशल दिल्ली न पहुंचे।

चौपाई ॥ हम सौ रजपूत रु सुंदरि एक। मुक्कि जांहि ग्रह बंधहि टेक ॥
जौ अरियन थट कोरि दल साजहि। तौ दिल्लिय तपत दै हि प्रथिराजहि॥
छं० ॥१२५६ ॥

कवित्त ॥ महि मंडन महिलान। जोग मंडन सुष मंडन ॥
दुष बंटन जम चसन। नेह पूषनि मन षंडन ॥
काम वंत सोभाय। पूर चित समर विमत्तन ॥
मय मुष दिष्पत मोह। लौन भौ अनुरत रत्तन ॥
संसार सुबरनी सरम रूष। करहि मरन अनमुष्प रुष ॥
अरि धरनि मुक्कि धारन न्रपत। चलहि कित्त जुग एक मुष ॥
छं० ॥१२५७ ॥

पुनः कन्ह के वचन कि उसे यहां छोड़ चलना उचित नहीं है।

दूहा ॥ जग्गि काल धूम काल कौ। सब्ब काल सोभित्त ॥
पूरन सब सारथ्थ सग। मोकिल ना मोहित्त ॥ छं० ॥ १२५८ ॥
भर बंकै अच्छरि बरन। रस बंके दिसि बाल ॥
दुहु बंके पारथ करन। चढ़ि सूरत्तन साल ॥ छं० ॥ १२५९ ॥

पृथ्वीराज के चले आने पर संयोगिता का अचेत होजाना।

चलि चलि सूरति सथ्थ हुअ। [1]रन निसंक मन भोंन ॥
सह अचार मुष मंगलह। मनहुं करहि फिरि गोंन ॥
छं० ॥ १२६० ॥
पति अंतर विछुरन विपति। न्रपति सनेह संजोग ॥
सुनत भयौ सुष कोंन विधि। दैव जिवावन जोग ॥ छं० ॥ १२६१ ॥
सुरिख ॥ पानि परस अरु दिट्ठ विलग्गिय। मा सुंदरि कामागिन जग्गिय ॥
[2]पिन तलपह अलपह मन कीनों। ज्यों बर वारि गये तन मीनौ ॥
छं० ॥ १२६२ ॥
अंगन अंग सु चंदन लावहि। अरु राजन लाजन समुझावहि ॥
दै अंचल चंचल द्रिग मूंदहि। विरहायन दाहन रवि उद्दहि ॥
छं० ॥ १२६३ ॥
फिरि फिरि बाल गवष्पनि अष्पिय। तासिष देंन बेंन बर सष्पिय॥
विन उत्तर सु मोंन मन रष्पिय। मन बच क्रम प्रीतम रस कष्पिय॥
छं० ॥ १२६४ ॥

---

(१) ए. कृ.-को.-नर (२) मो.-पिन तप्पन तलपह।

सखियों की उसे सचेत करने की चेष्टा करना।

कवित्त ॥ बाली विजन फिरन। चंद चारी क्रितम रस ॥
के घन सार सुधारि। चंद चंदन सो भति लम ॥
बहु उपाय बल करत। बाल चेतै न चिच मय ॥
है उचार उचार। सरवी बुझयति हयति हय ॥
श्रवनें सु नाइ जंपै सु अलि। नाम मंच प्रथिराज बर ॥
आवस निवत्त अगाद भय। तं निबलह द्रिग छिनक कर ॥
छं० ॥ १२६५ ॥

संयोगिता का मरने को तैयार होना, सखियों का उसे समझा कर संतोष देना।

दूहा ॥ तन तज्जै संजोगि पिय। गहि रय्यी फिरि बाल ॥
जानि नछचिन परि गिरी। चंद सरहति काल ॥ छं० ॥ १२६६ ॥
अरिल्ल ॥ बहुत जतन संजोगि समाए। साम कमल दिनयर दरसाए ॥
उझकि झंकि दिष्यो प्रन पत्तिय। पति दिष्यत मन महि अलि 'रत्तिय॥
छं० ॥ १२६७ ॥
व्याह नाथ संजोगि सु लच्छन। जिहि तुम कर साह्यौ बर दच्छिन॥
सा तुअ तात भए दल तत्तो। सरन तोहि सुदरि संपत्तो ॥
छं० ॥ १२६८ ॥

संयोगिता का वचन।

दूहा ॥ ता मुष मुंदिन मोद किय। अलियन जंपहु आलि ॥
दाधेऊ पर लवन रस। मतक न दिज्जै गारि ॥ छं० ॥ १२६९ ॥
अंध न द्रप्पन दिष्पिहै। गुंग न जंपहि गल्ह ॥
अश्रुत नर गान न लहै। अवल न [2]करै सबल्ल ॥ छं० ॥ १२७० ॥
मैं निषेद किन्नौ जु कथ। दुज अरु दुजिय प्रमान ॥
टरै न गंध्रव गंध्रविय। विधि कौनौव प्रमान ॥ छं० ॥ १२७१ ॥

(१) ए. कृ. को.-रज्जिय। (२) ए. कृ. को.-जरै।

श्लोक ॥ गुरुजनं मनो नास्ति । तात आज्ञा 'विवर्जितं ॥
तस्य कार्य विनश्यंति । यावत् चंद्रदिवाकरौ ॥ छं० ॥ १२७२ ॥

दूहा ॥ इह कहि सिर धुनि सषिनि सों । दिषि संजोगिय राज ॥
जिहि प्रिय जन अंगुलि करै । तिहि प्रिय जन किहि काज ॥
छं० ॥ १२७३ ॥

इह चिंतित वत्ती सु सुनि । क्रोध ज्वाल सरि अंब ॥
रही जु लिषिये चित्र मैं । ज्यों सरद प्रतिब्यंब ॥ छं० ॥ १२७४ ॥

संयोगिता का झरोखे में झांकना और पृथ्वीराज का दर्शन होना।

कुंडलिया ॥ धुनत गवष्यन सिर लष्यौ । अंबुज मुष ससि अंब ॥
अनिल तेज झलहल कँपै । सरद इंद्र प्रतिब्यंब ॥
सरद इंद्र प्रतिब्यंब । चिंति चतुरानन आनन ॥
निरषि राज प्रथिराज । साज सुंदरि अपकानन ॥
इय सत भट्ट सु भूप । मग्ग भोहैं न गनंतन ॥
मानि विसव्वा वीस । सीस धुनि धुनि न धुनंतह ॥छं०॥१२७५॥

पृथ्वीराज का संयोगिता को मूर्छा से जगाकर कहना कि मेरे साथ चलो।

चौपाई ॥ झंकत नृप दष्यौ बर बुल्है । गंग निकट प्रतिब्यंब सो हुल्है ॥
चिहुलै पर्‌यौ चंद तरपीनौ । कै मृग तिन देषि मन मीनौ ॥
छं० ॥ १२७६ ॥

मुच्छि बाल संजोगि उठाई । देवर तर दिसि दिसि पट्ठाई ॥
कै आतान सूर सुनि झूठे । कै कातर अबहीं नृप दीठे ॥
छं० ॥ १२७७ ॥

दूहा ॥ ए सामंत जु सत्त कहि । पंग पुति घटि मंत ॥
एक लष्य भर लष्यियै । जै कहुँ गज दंत ॥ छं० ॥ १२७८ ॥

(१) मो. नर्जितं ।

गाथा ॥ मद्दनं सरा खति विविहा। जिव्हा रटयोति प्रान 'प्रानेसं ॥
नयन प्रवाहति विवहा। अह वांमा कंत कथ्थायं ॥छं०॥१२७९॥
आर्या ॥ कहु लीभा सो चंद लासौ। मन मथ्थं पहु पांजलि ॥
बरन मान निसा दिवसे। धुनयं सीस जो मम ॥ छं० ॥ १२८० ॥

संयोगिता का कहना कि मैं कैसे चलूं यदि लड़ाई में मैं लूट गई तो कहीं की न रही।

दूहा ॥ किम हय 'पुट्ठहि आरुहौं। घटि दल संगह राज ॥
भीर परत 'जो तजि 'चल्यौ। तब मो आवै लाज ॥छं०॥१२८१॥

पृथ्वीराज का कहना कि मेरे सामंत समस्त पंग दल का संहार कर सकते हैं।

तब हँसि जंप्यौ न्रप बयन। गहर न करिये अब्ब ॥
सब्ब पंग दल संहरों। सुंदरि लाज न तुब्ब ॥ छं० ॥ १२८२ ॥

संयोगिता का कहना कि जैसा आप जाने पर मैं तो आपको नहीं छोड़ सकती।

कवित्त ॥ सुंदर जंपै बैंन। ढीठ दिल्लिय नरेस सुनि ॥
कहहि सूर सामंत। पवन इलहि पहार फुनि ॥
अजहौं अलियों चवै। गंठि दैहै 'सु जंम कहु ॥
जो मद्दै सुरलोक। लहहि अच्छरि नन संकहु ॥
इह चित्त कंत इच्छहि बहुल। बहु समूह भुज बल कहहि ॥
संदेह सास संभरि धनी। पलन प्रान पच्छै लहहि ॥
छं० ॥ १२८३ ॥

---

(१) मो.-प्रानेव।
(२) ए. कृ. को.-पुट्ठौ। (३) ए. कृ. को.-मुहि। (४) मो.-चलों।
(५) ए.-दास।

गाथा ॥ अवलोकित न्रप नयनं । वचनं जिवहा सु कातरा सामी ॥
निंदा सह स्तुत माने । घोरं संसार पातकी ॥ छं० ॥ १२८४ ॥

संयोगिता का जैचन्द का बल प्रताप वर्णन करना ।

कवित्त ॥ सिंगारिय सुंदरिय । हास उपजत वर सहइ ॥
करुना वुलि इहि बीत । रुद्र कामिनि कथ बहइ ॥
बीर कहत गंभ्रव्व । भयो भामिनी भयानक ॥
बीभच्छिय संग्राम । मनहि आचिज्ज सयानक ॥
छिन संत मंत इय कंत तुअ । पिय विलास दिन करि करिय ॥
इम कहै चंद बरदाय बर । कलहकंत तुअ तौ डरिय ॥छं०॥१२८५॥
जे पहुरी विमान । तेह पहुरी बिमानह ॥
जे सारंग करार । तेह सारंग करारह ॥
जिहि कित्तिय गय कोस । तेह कित्ती गय कोसह ॥
जिहि गय सघन सरोस । तेह गय सघन सरोसह ॥
विछोर पयोहर गै मलन । मलन विछोर पयोहरह ॥
जयचंद पयानौ परठयौ । भा भुअ हुअरु वसंत रह ॥छं०॥१२८६॥
करत पंग पायान । षेह उड्डत रवि लुक्कै ॥
महरैजल पुट्ठै सु । पंक सरिता सर सुक्कै ॥
पानी ठाहर षेह । एह उड्डतौ विराजै ॥
बर पयान छावंत । भान [1]सिर पट्ट कविज्जै ॥
दिगपाल कंपि इहि दसो दिस । सेसपयानौ नहि सहै ॥
बर न्रपति सीस ईसं सु सुनि । भौ पंगुर तातें कहै ॥छं०॥१२८७॥

संयोगिता प्रति गोइन्दराय का बचन ।

हे कमधज्ज कुमारि । कहै गोयंद राज बर ॥
जे भर पंग नरिंद । सबें भंजों अभंग [2]धर ॥
सम सामंत सहित्त । जंग जैचंदह मंडौं ॥
जब कोपै चहुआन । पग्ग मैमत्त विहंडौं ॥

(१) चारों प्रतियों में "कूट" पाठ अधिक है। (२) ए. क. को.-पल ।

जद्पि बहुत्त गोमाय गन। तद्पि सग्गपति नह डरै॥
ममसंकि चित्त चिंता न करि। पहुचाऊं दिल्ली घरै॥छं०॥१२८८॥
चढ़त पंग बर बीर। नाग बर बीर दढिय अहि॥
जिहि कर करिवर धरिय। धरिय ते भार विदुप महि॥
चित्त करिग कुंडली। अप्प पोषंन बाय बर॥
कर कड्डिह कलिवान। नाहि धारंत दुक्क कर॥
जिनि पहुमि मनी मनि सहस फन। सो फनि फुनि फुनि फनि धरिय॥
जानें कि हथ्थ तत्त कि चिय। सुबर भाजि कर कर करिय॥
छं० ॥ १२८९ ॥

हाहुलिराय हम्मीर का बचन।

दूहा॥ हाहुलि राव हमीर कहि। सुनि पंगानी बत्त॥
एक भिरै असि लष्प सों। सो भर किमि भाजंत॥छं०॥१२९०॥

संयोगिता का बचन।

कवित्त॥ कोरि एक चंचल। चलंत हबर बर पष्पर॥
ता उप्पर दस सहस। वालि जिसे असि होइ जलधर॥
सोलह सहस निसान। सहस सत्तरि गैवर घन॥
तीस लष्प गंवर प्रचंड। पग्ग फारक्क न्हभै तन॥
चालंत सेन विजपाल सुअ। पहुमि भार फनयति मुरिय॥
कह होइ हूर सामंत हों। पंग सु दल बल उप्परिय॥छं०॥१२९१॥

चंदपुंडीर का कहना कि सब कथा जाने दो यज्ञ विध्वंस करने वाले हमी लोग हैं या कोई और।

चवै चंद पुंडीर इम। कह बल कथ्थह पुब्ब॥
पंग पंग पग नरिंद कौ। जग्य विधवंस्यौ सब्ब॥ छं० ॥ १२९२ ॥

यह सुनते ही संयोगिता का हठ छोड़ना।

सुनत बाल छंड्यौ सु हठ। बर [1]चढ्यौ द्रिग बंक॥

(१) ए. कृ. को.-उटूठरी।

किधौं बाल मन मोहिनी। कै बिय उदित मयंक ॥ छं० ॥ १२९३॥

कन्ह वचन कि स्वामी की निंदा सुनना पाप है, हे पंग पुत्री सुन।

कवित्त ॥ सुनिय बचन बर कन्ह। सौस धुनि धुनि फुनि जंपिय ॥
भ्रग्ग जियन म्रत सच्च। पिंड बेचिय उर थप्पिय ॥
मन्न वचन तन रत्त। भ्रम्म छुट्टै सुष भग्गा ॥
गरुअ पान जो जियन। जूह जौयन तुछ लग्गा ॥
सो भ्रम्म छचि रप्पन [1]सु तन। जो मांमि निंद कानन सुनैं ॥
कातर वचन संजोग सुनि। जौ परन आन रथ्थै [2]ननैं ॥छं०॥१२९४॥

कन्ह का बचन कि मैं अपने भुजबल से ही तुझे दिल्ली तक सकुशल भेज सकता हूं।

हे प्रथिराज वामंग। संग जौ कन्ह नन्ह दल ॥
हो चहुआन समथ्थ। हरू [3]रिपु राय भुजन बल ॥
मोहि विरद नर नाह। दंद को करै [4]भुअन बर ॥
मो कंपहि सुरलोक। पंति पन गरू भूमि नर ॥
मम कंपि चंपि सुंदरि सु पहु। चढ़िग कोटि कायर रपत ॥
इन भुजन ठेलि कनवज्ज कौं। तों अप्पों ढिल्ली तपत ॥छं०॥१२९५॥
तेग छोरि जद्दवन। सोंह सिर धरि करि कथ्थिय ॥
इहै मत्त सामंत। भूमि शृंगार भरथ्थिय ॥
अतुलित बल अतुलित प्रमान। अतुलित बलदेवह ॥
अतुलित छिति छचि न गियान। स्वामित्त सु सेवह ॥
देषहि न राज बंसहि विलगि। कलह केलि कलहंत पिय ॥
अबलत्त छंडि मन सबल करि। बिघर राग सिंधूव किय॥छं०॥१२९६॥
सुनि उच्चरि गोयंद। गरुअ गहिलौत राज बर ॥

(१) मो.-सुथन। (२) ए. कृ. को.-तनै। (३) ए. कृ. को.-हरो।
(४) मो.-भुजन।

बीर पंग लगि धीर। लग्गि को छरन छिन्न कर ॥
जुद्ध जूह पहु पंग। करिग गौ पैज सूर सर ॥
सबर सेन भर अग्ग। धाय दुअ लग्गि सेन धर ॥
जहप्पि सु रहि रष्यै अलष। अरकु तद्दपि रहि हन सरै ॥
जहपि अगनि सम्हौ वलै। जीरन अग उंछी'परै ॥छं०। १२६७

चंदपुंडीर का कहना जिस पृथ्वीराज के साथ में निढुररराय सा सामंत है उसके साथ तुझे चिंता कैसी।

कहै चंद पुंडीर। सूर नहि सूर घरघ्घर ॥
चास लगै नन सस्त्र। भजै आभंग मंच वर ॥
पंग पान बुद्दंत। तन्न भज्जै न ज्वाल पर ॥
प्रथी जेम वल अवृन। संग चतुरंगी निढुर ॥
निमषेक निकप वर ब्रह्म कौ। दौरि जुगी बहुतें जुपल ॥
असि प्रान मान सामंत कौ। न्विप सुंदरि नन चिंति वल ॥
छं० ॥ १२६८ ॥

राम राय बड़गुज्जर का बचन।

प्रति सुंदरि न्वप काज। कनक बोल्यौ बड़ गुज्जर ॥
हरि चक्रह सहज वत्। जास नन रहै बुद्धिबल ॥
कोट क्रम्म मंजवत। अंति भज्जै हरि नामं ॥
नीर परस संजवत। मैल नन रहै विरामं ॥
नन रहै गुनौ अग्गै अवधि। सिध अग्गै सिद्धि न रहै ॥
संजोग जोग भंजंन क्रम। राह सूर चंपिय ग्रहै ॥ छं० ॥ १२६६ ॥

आल्हन कुमार का बचन।

तब बोलै अल्हन कुमार। सब्ब ब्रहमंड बीर बर।
जिहि मिलंत भर सुभर। होहि तन मत्त बीर सर ॥
मिलै सरित सब गंग। होइ गंगा सब अंगा॥

(१) मो.-आंछी।

भग्गै सब परपंच । मिलै ब्रह्म ब्रह्मह मग्गा ॥
ऐसे सुबीर सामंत सौ । ढील बोल बोलै बदन ॥
जानै न बत्त बर बंध कौ । पहुंचावै दिल्ली सुधन ॥छं०॥१३००॥

सलष पँवार का बचन ।

बोलि सलष पांवार । पार लभ्यौ न सस्त्रबल ॥
ब्रह्म पार पायौ न । रूप अवरेष रूप कल ॥
मेघ सोय आग्राज । पार वायन में धारिय ॥
सो कहि अमति चरिच । व्रत पाषंड अधिकारिय ॥
सौ जुभ्भ पार धारह धनौ । जुद्ध पार लभ्यौ न दोउ ॥
तिहि सत संजोगि सुहै प्रलै । प्रलै राज दिल्लीव मोउ ॥छं०॥१३०१॥

देवराज बग्गरी और रामरघुवंस के बचन।

देवराज बग्गरी । बीर बाल्यौ विह से बर ॥
* .... ॥छं०॥१३०२॥
कहै राम रघुवंस । सुनहि संजोगि बाल बर ॥
पंग प्रलै संमूह । जगत बुभ्भन नृप कग्गर ॥
बरष मात सामंत । सोम पत्तिन पररुष्यं ॥
बर दंपती 'निसंक । सब्ब भग्गा न विसुष्यं ॥
नल कमल मांहि कंद्रप रहै । पति रष्यै चहुआन इम ॥
दिषि बत्त सति संयोग इह । तब सु प्रलै सासहित क्रम ॥
छं० ॥ १३०३ ॥

पुनः आल्हन कुमार का बचन ।

फुनि जंप्यौ अल्हन कुमार । सुनि सुंदरी हूर बल ॥
बर अगनित अंजुली । पंग सो मै समुंद दल ॥
सार मेघ बुट्ठतैं । बीर टट्टी बिच्छोरै ॥
बर दंपति संयोगि । बंधि दल गौत न जोरै ॥

---

* छं: १३०२ की चारों प्रतियों में केवल एक ही पंक्ति है शेष पंक्तियां हैं ही नहीं ।
(१) ए. कृ. को.-न सकं ।

उप्पारि सस्व गो व्रज्जनह । न्रिप रपि वज्जी जेम कल ॥
कमधज्ज इंद बुट्ठै प्र पुनि । सुमन संच जानैं अकल ॥छं०॥१३०४

पल्हन देव कच्छावत का वचन।

पल्हनदे कूरंभ । लाज बड पन बड बीरं ॥
न्रिप लग्गै नन अंच । पंच जो पंच सरीरं ॥
सोम नंद संभरी । सूर सो भ्रम्म न हाई ॥
सौ मे एकज हाइ । तेज मुक्कै ग्रह जोई ॥
इक अग पंच जौ सत्त है । सत्त मेर सत जौन तजि ॥
नन डरहि चलहि प्रथिराज संग । रषत काटि कायरह सजि ॥
छं० ॥ १३०५ ॥

संयोगिता का वचन कि यह सब है पर देव गति कौन जानता है।

तब कहंत संजोगि । इक्क बन मझ्झ सरोवर ॥
तहं पंकज्ज प्रफुल्लि । सरस मकरंद समोभर ॥
आय इक्क मधु करह । तथ्थ विश्रामि[1] गुंजा रत ॥
रैंनि प्रपत्तिय ताम । रह्यौ मधि [2]भंवर विचारत ॥
ह्वै है बित्तित जामनि सबै । तबै गमन इह बुद्ध किय ॥
बिन प्रात हात बिधि इह करिय । से कलिका गजराज लिय ॥
छं० ॥ १३०६ ॥

दाहिमा नरसिंह के वचन कि सुन्दरी वृथा हमलोगों का क्रोध क्यों बढ़ाती है। कहते हैं कि सकुशल दिल्ली पहुचावेंगे।

तब दाहिम नर सिंघ । सिंघ बुल्यौ बंचाइन ॥
सुनिय बचन सुंदरी । अवाल उट्ठी लगि पाइन ॥
इन दष्पित संजोगि । जाग जिन मग्ग प्रहारै ॥
इन पच्छै बलदेव । जम्म गति दिष्पि निहारै ॥

(१) ए. कृ. को.-गुंजारं। (२) ए. कृ. को.-करै।

उद्धरों बीर दंपति दुहुनि । सरस मद्दहम मथ्थिलै ॥
चलि सथ्थ राज प्रथिराज कै । मुकति भुगति हम इथ्थलै ॥
छं० ॥ १३०७ ॥

पुनः सलष का वचन ।

सु बर बीर पामार । सलष बुल्यौ प्रति धारं ॥
अग्गि जलनि कमधज । जोग जीवन जुग तारं ॥
ए अमंत सामंत । भज्जि जानै न अभंग अपु ॥
वज्ज सार झल्लै प्रहार । निश्चलित सार वपु ॥
जं करै गहर संजोगि सुनि । मुगति गहर बित्तिय घरिय ॥
'जग्गाय पंग दिष्पै दलं । रषित कुंअर केअरि फिरिय ॥
छं० ॥ १३०८ ॥

सारंगदेव का वचन ।

सारंग सारंग बीर । बीर चालुक्क उचारिय ॥
षग्ग मग्ग बो हिथ्थ । मरन जिहि तत्त बिचारिय ॥
बीच राज प्रथिराज । सूर चावहिसि चल्लै ॥
ज्यों सिर मग धुअ झाल । भूअ सामंत न डुल्लै ॥
संजागि करिन कायरह तौ । पहुंचावै ढिल्ली घरह ॥
प्रथिराज ग्रहै जो पंग बर । तौ पंग सूर एकत धरह ॥छं०॥१३०९॥

रामराय रघुवंसी का वचन ।

तब रायां रघुवंस । जनक उच्चै उच्चारिय ॥
हम निकलंक छचौय । जुद्ध बर जुद्ध विचारिय ॥
जे मेरें कुल भए । हुए ते पंड तन झुझझर ॥
मत्ति सस्त्र हसुमंत । बीर जंपिहि बड़ गुज्जर ॥
संजोगि बचन कातर कहिग । सहिग प्रान मझझह रहिग ॥
हम अग्ग पंग कच्छून बर । जम कंपत पग्गह गहिग ॥छं०॥१३१०॥

(१) ए. कृ. को.-जग्गवे ।

भोंहाराव चंदेल का बचन ।

भोंहा राव नरिंद । बीर उच्चरि बीरत्तं ॥
पै लच्छिन बतीस । पंग पुची घटि मत्तं ॥
तिहि इक लछिन हीन । वही लछिन नन सष्यै ॥
एक एक सुरइंद्र । आइ दुज्जन दल भष्यै ॥
सत कोस पंच घटि धांन नृप । इमह सत्त छह अग सुभर ॥
इक इक कोस इक इक भर । पहुंचावै संयोगि बर॥छं० ॥१३११॥

चंदपुंडीर का बचन ।

तब कहि चंद पुंडीर । मतौ सुनि सच्च सूर बल ॥
लष्य एक लष्यियै । एक भंजैति लष्य दल ॥
बल अगनित अति जुद्ध । पंग जोरन तिन सेनं ॥
दावा नल सामंत । सस्त्र मारुत बल देनं ॥
ढंढोरि ढाल गजदंत कढि । कवल पौर कन्हइति वर ॥
नष्यै सु बाजि गम भीम दुति । पंग सेन प्रथिराज भर ॥
छं० ॥ १३१२ ॥

निढ्ढुरराय का बचन कि जो करना हो जल्दी करो बातों में समय न बिताओ ।

तब निढ्ढुर उच्चरिय । सब्ब सामंत राज प्रति ॥
पंग सेंन [1]निरदरहु । अब्ब बोल्यौ सुदेवश्चित ॥
मन मथौ गोंविद चंद । होइ न कहि कालं ॥
मन पुच्छिहु कहौ जीह । काल घत्ते जिहि जालं ॥
जौ करै ढील ढिल्ली धनी । तौ जुग्गिनिपुर जल हथ्थ दै ॥
सत षंड जीह जंपत करौ । पै चलि राज इह खल्ल दै ॥छं०॥१३१३॥
मानि मत्तौ सब सेन । गरुअ गोयंद कन्ह कहि ॥
सुजै अप्प जौ चलै । चलै इम हथ्थ रंभ ग्रहि ॥
जो अप्पन आभंज । सबल बंधौ अब बंधौ ॥

(१) ए. कृ. को.-निरदरे ।

ढील न करि सुंदरी। लीह अलधं कल संधी ॥
ढंढारि ढाल पहुपंग दल। तन अरत्त जिम तोरियै ॥
पहुंचाय सांमि ढिल्ली धरा। जम्म जजर तन जोरियै ॥छं०॥१३१४॥

संयोगिता के मन में बिश्वास हो जाना।

दूहा ॥ बाले बल सामंत कलि। देखि सूर सम 'चित ॥
इन जु हीन बल 'जंपियै। 'भ्रिकत बुद्धि इन वृत्त ॥ छं०॥१३१५॥

संयोगिता का मन में आगा पीछा बिचारना।

चंद्रायना ॥ बचन सुनिय कनि बाल बिचारत सोचि मन।
माया गुरजन चित्त विगोवत बेर तिन ॥
* .... ॥ छं० ॥ १३१६ ॥
अरिल्ल ॥ सुवर चंद औपम लिय कथ्थं। ज्यों कुछ वधु वर इंद्रौ अपहथ्थं॥
† .... ॥छं० ॥१३१७॥

संयोगिता का पश्चाताप करके राजा से कहना कि हा मेरे लिये क्या जघन्य घटना हो रही है।

कवित्त ॥ बाल कहिग संजोगि। पुव बंधी सु गंठि वर ॥
रिष सराप अरु देव। काज भौ भरन मरन भर ॥
स्वरग मग्ग रुक्कयौ। मरन संभरि चहुआनं ॥
केवल कित्ति सु कंत। रंभ वर बरनन पानं ॥
बंधई गंठि संभरि धनी। अब इत्तिव अंतर रहिय ॥
सामंत सूर संभरि सु कव। नृपति सु दंपति इम कहिय ॥
छं० ॥ १३१८ ॥

राजा का कहना कि इस का विचार न करो यह तो संसार में हुआ ही करता है।

चंद्रायना ॥ राज सेन दे नैन समझिझय चंद कवि ।

(१) ए. कृ. को.-चंपिये। (२) मो.-भ्रिग बुद्धि दय वृत्त।
* यह छंद चारों प्रतियों में आधा है। † चारों प्रतियों में ऐसा ही है।

सुनि संजोग इह जोग बुझिझ मन दुष्य इवि ॥
आंसू भरि छह [1]सात [2]अगनि मेज पवर पंग ।
रहै गल्ह जुगजाद्द सब्ब संमूह नर ॥ छं० ॥ १३१९ ॥

संयोगिता का कहना कि होनी तो हई सो हई परंतु चहुआन को चित्त से नहीं भुला सकती।

कवित्त ॥ सुंदरि सोचि सु चित । प्रथम व्रत लियौ राज वर ॥
बरजि मंत पित बंध । बरजि गुर जन छोनी धर ॥
तात जग्य बिग्गरि । भ्रम्म लोपे सु खीह कुल ॥
सहस मुष्य अपहास । हीन भय दीन पलति पल ॥
कर तारह जे लिपिय कर । स्वांमि द्रोह बर बिछुरन ॥
मै लीन भाव मावी विगति । नन मुक्कों चहुआन मन ॥ छं० ॥ १३२० ॥

पृथ्वीराज का संयोगिता का हाथ पकड़ कर घोड़े पर सवार कराना।

दूहा ॥ परनि राव ढिल्लौ मुषहि । ग्रहि लीनी कर वांम ॥
सम संजोगि न्रप सोभियत । मनहु बने रति कांम ॥ छं० ॥ १३२१ ॥

चंद्रायना ॥ सुंदरि सोचि समुझिझत गह गह कंठ भरि ।
तबहि पानि प्रथिराज सुपंचिय बाह करि ॥
दिय हय पुट्ठहि भोर सु सब्ब सु लच्छनिय ।
करत तुरंग सुरंग सु [3]पुच्छनि वच्छनिय ॥ छं० ॥ १३२२ ॥

अश्वारोही दंपति की छवि का वर्णन।

कवित्त ॥ हय संजोगि आरुहिय । पुट्ठि लग्गौ सु वांम नृप ॥
पति राका पूरन प्रमांन । अरक बैठे सुद्धर विप ॥
काम रित्त रहि चढी । काम रति दंपति राजं ॥
कै विद्रुम हिम संग । वियन ओपम [4]छपि माजं ॥

(१) ए. कृ. को.-बार। (२) मो.-अगनि मंजे जु पंगवर।
(३) ए. कृ. को.-पुछनिय। (४) ए. कृ. को.-छिति।

सामंत सूर पारस नृपति। मधि सु राज राजंत बर ॥
ग्रह सत्त भान ससि बिंटिकै। दिपत तेज प्रथमी सु पुर ॥छं०॥१३२३॥

संयोगिता सहित पृथ्वीराज का व्यूह बद्ध होकर चलना।

पंग पुत्ति आरुहिय। सूर चावहिसि रष्पे ॥
दिसि ईसान सु कन्ह। पंग षंधार विलष्पे ॥
केहरि बर कंठेरि। पंग पहुरै सो मुक्यौ ॥
पुत्र सेन निहुर नरिंद। धाराहर रुक्यौ ॥
अगि नेव बीर पहु पंग कौ। धार कोट ओटह, सुभर ॥
पांवार धार धारह धनी। सुजस लष्प लष्पन सुबर ॥छं०॥१३२४ ॥
दिसि दच्छिन लषन कुआर। सार पाहार पंग छल ॥
भौंहा राव नंरिद। सांमि रष्पे रुकि कंदल ॥
नयन रत्त दल 'सिघ। 'रिघ रष्पन कमधज्जी ॥
बर लच्छन बघघंल। मार मारह भुअ छज्जी ॥
दिसि मरुत बीर बर 'सिघ दै। लष्प सेन आरुहिय रन ॥
बर बंध बहुन साई सु पथ। जम बिसाल कंपन डरन ॥छं०॥१३२५॥
दिसि उत्तर गयर गुरेस। रनह रुद्द रावत बर ॥
उभै स्वामि पल और। छंडि मदमुष्प भेप बर ॥
दिसि पच्छिम बलिभद्र। 'जांम जदव अवरोही ॥
दई दुवाह दो बीर। रंभ रंभन मन मोही ॥
सुरपत्ति ममासै नग डुलै। दुद्धं दिसा जै उच्चरिय ॥
सामंत सूर रष्पे नृपति। पंग राय पारस फिरिय ॥छं०॥१३२६॥
कोट पंग आरुहिय। नीम कित्तिय यह मंडिय ॥
थंभ सूर सामंत। अटल जुग ससि सिप छंडिय ॥
बर चिनेत अरु प्रेत। ताल तुंमर नारद पढ़ि ॥
देव रूप प्रथिराज। लच्छि संजोगि वाम गढ़ि ॥
कामना मुकति अप्पै तही। जो बीर रूप संचै धयौ ॥
सेवै जु सूर औ सूर मिलि। पार बरी तारन भयौ॥छं०॥१३२७ ॥

(१) मो.-भान।

पंग दल में घिरे हुए पृथ्वीराज की कमल-संपुट भौंरे की सी गति होना।

आर्या ॥ एकथ्थोय संजोई। एकथ्थो होइ समर नियोसौ ॥
अनि लेय यथा पदमं। अंदोलए राज रिदएवं ॥ छं० ॥ १३२८ ॥

दूहा ॥ मन अंदोलित चंद मुष। दिषि सामंत सहथ्थ ॥
अंदोलित प्रथिराज हुअ। सिर कट्टिय सुष दुथ्थ ॥ छं० ॥ १३२९ ॥

पृथ्वीराज के हृदय में यौवन और कुल लज्जा का झगड़ा होना।

वय सु लग्गि एकत करइ। कक्कर लग्गिय लाज ॥
वय जुग्गिनि पुर चलि कहै। लाज कहै भिरि राज ॥छं०॥ १३३० ॥

चौपाई ॥ वै सुष सब्ब सँजोगि बतावै। राज मरन दिमि पंथ चलावै ॥
दोई चित्त चढी बर राजं। वै विलास मरनं कहि 'लाजं ॥
छं० ॥ १३३१ ॥

वय भाव।

दूहा ॥ मिष्टानं बर पान भय। नव भामिनि रस कोक ॥
अमर राइ 'इच्छति सबै। लाज सुथ्थ पर लोक ॥ छं० ॥ १३३२ ॥

लज्जा भाव।

चौपाई॥मो तजि मति चौहान सुजाई। ज्यों जलबिंदु सब किति समाई ॥
तौ तिय पन वय तज्जि दिषाई। तिन जिय जाहु ये लज्जन जाई॥
छं० ॥ १३३३ ॥

वय विलासिता भाव।

दूहा ॥ सुनत वचन लज्जिय वयह। उत्तर दीय न लज्ज ॥
वै विलास उत्तर दियौ। अज्ज, लज्ज हम कज्ज ॥ छं० ॥ १३३४ ॥

पृथ्वीराज के हृदय में लज्जा का स्थान पाना।

वै सुष कौपि प्रमान से। मुक्किय जुगति जुगत्ति ॥

(१) ए. कृ. को.- काजं। (२) ए. कृ. को.-इच्छैति के।

र 'हलका दंतीव के । धाए उज्जल कांति ॥ छं० ॥ १३३५ ॥
बैतन कुरषि निरण्यथी । लाज सु आदर दीन ॥
कलि नारद नौरह कवि । प्रगट करद्द इम कीन ॥ छं० ॥ १३३६ ॥

कवि का कहना कि पंग दल अति विषम है ।

कहत भट्ट दल विषम है । तुहि दल तुच्छ नंरिद ॥
परनि पुत्ति जैचंद की । करहि आइ ग्रह नंद ॥ छं० ॥ १३३७ ॥

पृथ्वीराज का वचन कि कुछ परवाह नहीं मैं सब को विदा करूंगा।

भृकित राज उत्तर दियौ । सो सब सत्त सुभट्ट ॥
हूं चहुआन जु संभरी । भुज ठिल्लो गज बट्ट ॥ छं० ॥ १३३८ ॥

कविचंद का पंग दल में जाकर कहना कि यह पृथ्वीराज नव दुलहिन के सहित हैं।

चल्यौ भट्ट संमुह तहां । जहं दल पंग अरेस ॥
जो इंछै नृप तुझझ मन । टट्टौ षेत नरेस ॥ छं० ॥ १३३९ ॥
परनि राइ ढिल्लिय सु सुष । रष किन्नौ मन आस ॥
कही चंद नृप पंग दल । जुद्ध जुरै जम दास ॥ छं० ॥ १३४० ॥
चढिग क्रूर सामंत सह । न्विय भ्रमह कुल लाज ॥
सुहर ममुह दिष्पहि नयन । चिय जु बरिग प्रथिराज ॥ छं० ॥ १३४१ ॥
गयौ चंद नृप बयन सुनि । जहं दल पंग नंरिद ॥
अरि आतुर अरिग्रहन कौ । मनों राहु अरु चंद ॥ छं० ॥ १३४२ ॥

अंतरिक्ष शब्द (नेपत्थ में) प्रश्न।

श्लोक ॥ कस्य भूपस्य सेनायां । कस्य वाजिच वाजनं ॥
कस्य राज रिपु अरितं । कस्य संग्राह पष्परं ॥ छं० १३४३ ॥

उत्तर ।

दूहा ॥ छलि आयौ चहुआन नृप । भट्ट सथ्थ प्रथिराज ॥
तिहि पर गय हय पष्परहि । तिहि पर बज्जत बाज ॥ छं० ॥ १३४४ ॥
गाथा ॥ सा याहि दिल्लि नाथो । सा यंतु जग्ग विध्वंसनो ॥
परनेवा पंगपुत्री । जुद्ध मांगंत भूषनं ॥ छ० ॥ १३४५ ॥

(१) ए. क. को.-ए हेला देतार के ।

चहुआन पर पंग सेना का चारों ओर से आक्रमण करना।

दूहा ॥ सुनि श्रवननि चहुआन को। भयो निसानन घाव ॥
जनु भद्दव रवि अस्त मनि। चंपिय बद्दल बांव ॥ छं० ॥ १३४६ ॥

प्रकोपित पंगदल का विषम आतंक और सामंतों की सजनई।

भुजंगी ॥ भरं साजतें धोम धुम्मै सुनंतं। तहां कंपियं केलि तिय पुर कँपंतं ॥
तहां डमरु कर डहकियं गवरि कंतं। तिनं जानियं जोज जोगादि अंतं ॥
छं० ॥ १३४७ ॥

तवं कमक मिरु सेस सिर भार सहियं। तहां किम सु उच्चाम रवि रथ्थ सहियं ॥
तहां कमठ सुत कमल नहिं अंबु लहियं। तवै संकि ब्रहमान ब्रहमंड गहियं ॥
छं० ॥ १३४८ ॥

[1]उनं राम रावन्न कवि किन्न कहता। उनं मकति सुर महिष बल धन्न लहिता
मनों कंस ससिपाल जुर जमन प्रभुता। तिनं चम्मियं एम भय लच्छि सुरता ॥
छं० ॥ १३४९ ॥

भरं चढ़ियं खूर आजान वाहं। तिनं तुट्टि बन सिंघ दीसंत लाहं ॥
तिनं गंग जल मौन धर इच्छिय आजैं। भरं पंगुरे राव राठौर भोजैं ॥
छं० ॥ १३५० ॥

तवै उप्परें फौज प्रथिराज राजं। मनों बांदरा लेन ते लंक गाजं ॥
तवं अग्गियं देव देवं उनिंदं। तिनं चंपियं पाय भारं फुनिंदं ॥
छं० ॥ १३५१ ॥

तवै चापियं भार पायाल दुंदं। घ उड्डियं रेन आया समुंदं ॥
गिनै कौन अगनित्त रावत्त रत्ता। तिनं छच छिति भार दीसै नपत्ता ॥
छं० ॥ १३५२ ॥

जु आरंभ चक्की रहै कौन मंता। सु बाराह रूपी न कंधै धरंता ॥
जु सेनं सनाहं नवं रूप रंगा। [2]तिनं झिल्ल वैतेग तेचैच गंगा ॥
छं० ॥ १३५३ ॥

तिनं टोप टंकार दीसै उतंगा। मनों बद्दलं थंति बंधी विहंगा ॥

(१) ए. कृ. को.-उचं। (२) ए. कृ. को.-तिनं झिल्ल चैचे मते वैच गंगा।

जिरह जंगीन बनि अंग लाई। मनो कछु कंती सुगोरष बनाई॥
छं० ॥ १३५४ ॥

तिनं हथ्थरै हथ्थ लग्गै सुहाई। तिनं घाइ गंजै न थक्कै थकाई॥
तिनं राग अरजीव बनि बान अच्छै। भरं दिष्पियै आनु जोगिंद कच्छै॥
छं० ॥ १३५५ ॥

मनं सक्र छत्तीस करि खोह साजै। इसे खूर सामंत सौ राज राजै॥
छं० ॥ १३५६ ॥

लज्जा भाव कि लज्जा के रहने से संसार में कीर्ति अमर होगी।

कुंडलिया ॥ बाद बत्तवै कहि न्विप। बहु उपाइ तो साज॥
में वपु लज्जै सौंपि कर। कै चल्लै प्रथिराज॥
कै चल्लै प्रथिराज। खित्ति भग्गौं भगि जित्तौ॥
मरन एक जम हथ्थ। दुरै भज्जिन जम वित्तौ॥
ते अप्पन तिय राज। लाज दुअ राग सदेवति।
गति के प्रान तिन काज। राज इच्छहि सु वह व्रत॥छं०॥१३५७॥

मुरिल्ल ॥ जब लाज सबै वे कर रस वहे। तब लगि पंग वीर रस सहे॥
दिसि दिसि दल धाए कविचंद। ज्यौं गाज्यौ वर ससि पाख 'गुविंद॥
छं० ॥ १३५८ ॥

पृथ्वीराज के मन का लज्जा का अनुयायी होना।

दूहा ॥ दुहू[2] एनौ तन चढ़ियै। लज्ज प्रसंसत राइ॥
सत्त सुसत्त प्रनंव चढ़ि। चढ़िय सु उत्तर राई॥ छं० ॥ १३५९ ॥

पृथ्वीराज का वचन।

तूं लज्जी तन चढ़यौ। लज्ज प्रान संग [3]गथ्थ॥
अब किम्मी वत्तीय लगि। [4]अब सन चूक न तथ्थ॥छं०॥१३६०॥

(१) ए. कृ. को.-गुव्वंदं। (२) ए. कृ. को.-एतौ। (३) मो. सथ्थ।
(४) ए. कृ. को. अवसन सक न नथ्थं।

पंग सेना के रण वाद्यों का भीषण रव।

मुरिख्ख ॥ बाजि न्वपद्व विचित्र सु बाजिग। मेघ कला दल बद्दल साजिग॥
बंबरि चौर दिसान दिसानं। दस दिसि 'रत्ते घोर निसानं ॥
छं० ॥ १३६१ ॥

भुजंगी ॥ निसानं दिसानंति बाजे सुचंगा। दिसा दच्छिनं देस लीनी उपंगा॥
तबल्लं तिदूरं भुजंगी सदंगा। मनों नृत्य नारद्द कद्दै प्रसंगा ॥
छं० ॥ १३६२ ॥

बजै बंस विसतार बद्दु रंग रंगा। तिनं मोहियं सथ्थ लग्गे कुरंगा॥
बरं बीर गुंडीर संसे ससंगा। तिनं नच्चई ईस ते सीस गंगा ॥
छं० ॥ १३६३ ॥

सुनै अच्छरी अच्छ मंजै सु अंगा। सिरं सिंधु सद्दनाद्द श्रवने उतंगा॥
रसे सूर सामंत सुनि जंग रंगा। .... ॥ छं० ॥ १३६४ ॥
नफेरो नवं रंग सारंग भेरी। मनों न्वत्यनी इंद्र आरंभ केरी ॥
सुने सिंगि सावद्द नंगी न नेरी। मनों झिंझ आवद्द इथ्थै करेरी ॥
छं० ॥ १३६५ ॥

करी उच्छरी घाव घन घंट टेरी। चितं चिंति तन हीन बाढी कुबेरी॥
अन्यं ओपमा षंड नैने निभग्गी। मनो राम रावन्न इथ्थं विलग्गी॥
छं० ॥ १३६६ ॥

पंगराज की ओर से एक हजार संख धुनियों का शब्द करना।

दूहा ॥ सुनि बज्जन रज्जन चढ़िग। सहस संघ धुनि चाद्द ॥
मनों लंक विग्रह करन। चल्यौ रघुप्पति राद्द ॥ छं० ॥ १३६७ ॥
राम दलह बंदर बिषम। रष्षस रावन वृंद ॥
असी लष्ष सौं सो जुरिग। धनि प्रथिराज नरिंद ॥छं०॥१३६८॥

सेना के अग्रभाग में हाथियों की वीड़ बढ़ना।

दल संमुह दंतिय सघन। गनत न बनि अगनित्त ॥

---

(१) ए. कृ को.-जोरत।

मनों' पवय विधि चरन किय। सह दिष्पिय मय मत्त ॥छं०॥१३६८॥

मतवारे हाथियों की ओजमय शोभा वर्णन।

मद मंता दँत उज्जला। मय कपोल मकरंद ॥
दुहुं दिसि भवर गुंजार करि। 'छुटि अंदून गयंद ॥ छं० ॥ १३७० ॥
भुजंगी ॥ देषियहि मंत मैमत्त मंता। छप छइरंग चौरं ढुरंता ॥
छके जेह अंदून छुट्टै जुरंता। वाय वहु वेग झटकंत दंता ॥
छं० ॥ १३७१ ॥
जिते सिंघली सिंघ सुंडी प्रहारे। तिते सोर संमूह धावै इकारे ॥
उज्जए वान आवै 'वकारे। अंकुसं कोस तेनं चिकारे ॥
छं० ॥ १३७२ ॥
मीठ मंगोल चिहु कोद बंके। दूसे भूप वाजून वाजून इंके ॥
दंति मनु मुत्ति जरये सुलग्गी। मनों वीज झमकंत जलमेघ पग्गी ॥
छं० ॥ १३७३ ॥
घटें घेन घोरं न सोरं समानं। इलं हाल ए मंत लागे विमानं॥
विरद वरदाइ आगे वृदंगा। स्वर्ग संगीत 'करि रंभ संगा ॥
छं० ॥ १३७४ ॥
तेह तर जोर पट्टेव झिल्लैं। चंपियं पान ते मेर ढिल्लैं ॥
रेसमी रेसना रौति भल्ली। सिरी सीस 'सिंदूर सोभा सु मिल्ली ॥
छं० ॥ १३७५ ॥
रेष वैरष्य पति पात वल्ली। मनहु वन राइ द्रुम डाल हल्ली ॥
सीस 'सिंदूर गज जंप झंपे। देषि सुरलोक सहदेव कंपे ॥
छं० १३७६ ॥
दुत्तनिय आस धरि मध्य रहियं। कहहिं प्रथिराज गहियं सु गहियं॥
.... । .... छं० ॥ १३७७ ॥
दूहा ॥ गहि गहि कहि सेना सकल। हय गय वन उठि गव्व ॥
जनु पावस पुव्वह अनिल। इहि गति वहल सव्व ॥छं०॥१३७८ ॥

---

(१) मो.-पवन। (२) ए. कृ. को.-छुट्टिय अंदन।
(३) ए. कृ. को.-हकारे। (४) ए. कृ. को. डरि।

सुसज्जित सेना संग्रह की रात्रि से उपमा वर्णन ॥

लघुनराज ॥ इयं गयं नरं भरं। [1]उनम्मियं जलद्धरं ॥
दिसा दिसानं वज्जये। समुद्द सद्द लज्जए ॥ छं० ॥ १३७९ ॥
रजोद मोद उप्पली। सव्योम पंक संकुली ॥
तटाक वाल रौंगनीं। सु चक्कयो वियौगिनी ॥ छं० ॥ १३८० ॥
पयाल पाल पल्लए। द्रगंत मंत इल्लए ॥
प्रहृति छवि छज्जए। सरोज मौज लज्जए ॥ छं० ॥ १३८१ ॥
अनंदिते निसाचरे। कु कंपि तुंड साचरे ॥
भगंत [2]गंग कूल ए। समुद्र ह्वन फूल ए ॥ छं० ॥ १३८२ ॥
अषंड रेन मंडयौ। डरप्पि इंद्र छंडयौ ॥
कमट्ठ पिट्ठ निह्नुरं। प्रसाल भाल विथ्थुरं ॥ छं० ॥ १३८३ ॥
छिपान इंस मग्ग ए। समाधि आधि जग्ग ए ॥
अपूर पूर बद्दए। जटाल काल खुद्द ए ॥ छं० ॥ १३८४ ॥
नंरिद पंग पायसं। सु छवि मंगि आयसं ॥
गइन्द जोगिनी तुरे। सु अप्प अप्प विप्फुरे ॥ छं० ॥ १३८५ ॥

पंग सेना का अनी वद्ध होना और जैचन्द का मीर जमाम को पृथ्वीराज को पकड़ने की आज्ञा देना ।

दूहा ॥ अप्प अप्प दल विप्फुरे। दिल्ली गहन नंरिद ॥
* मीर जमांम हमांम कौ। दिय आयस जैचंद ॥ छं० ॥ १३८६ ॥
दिसि दिसि अग्गै सज्जि बर। चतुरंगिनि पँग राइ ॥
चक्की चक्क वियोगइन। अनँद कमोद कँदाइ ॥ छं० ॥ १३८७ ॥

जंगी हाथियों की तैयारी वर्णन ।

भुजंगी॥चढी पंग फौजं चवं कोद लोकं। दिठी जानि कालं चली जोध ढोकं ॥
बंधे बैरषं रत्त[3]इल्लै प्रकारं। मनों [4]नौकरी नौत सोभै सहारं ॥
छं० ॥ १३८८ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-उनव्वियं। (२) ए. कृ. को.-नंग। * यह दोहा मो. प्रति में नहीं है।
(३) मो.-सोभै। (४) ए. कृ.को.-निक्करी।

बजे तब्बलं सह बंदी निनारे। मनों भूत्त वीरंद इथ्थं सँवारे॥
सिरी पथ्थरं लोह गज्जं बनाई। नगं रत्त मझ्झै झमकंत झांई॥
छं० ॥ १३८९ ॥

सुती बैठियं लाल माला प्रकारं। मनों बेलही 'पारसं कम्ह भारं॥
गजं सज्जयं हेम ओपं विराजे। तिनं अग्र सोहै सितं चौर साजे॥
छं० ॥ १३९० ॥

तिनं की उपम्मा कवी का विचारं। मनों हेम कूटं वहै गंग धारं॥
सिरी उज्जलं लोह है सीस राजं। तहां चौरं ठट्टं सु सीसं विराजं॥
छं० ॥ १३९१ ॥

तहां चंद कव्वी उपम्मा विचारी। मनों राह कूटं टटं भान मारी॥
सजी पंग सेनं रसं 'लोह बीरं। तिनं मोकले गहन प्रथिराज मीरं॥
छं० ॥ १३९२ ॥

रावण कोतवाल का सब सेना में पंगराज का हुक्म सुनाकर कहना कि पृथ्वीराज संयोगिता को हर लाया है।

दूहा ॥ सजत सेन पहुपंग घन। आय स पत्ते तीर॥
बर रावन कुटवार तब। पुक्कारे बर बीर॥ छं० ॥ १३९३ ॥

पद्धरी ॥ धर पथ्थराइ बरनी सुबीर। विश्राम राइ मन मथ सरीर॥
रइबान सिंघ नृप भेद दीन। चहुआन हरन संजोगि कीन॥
छं० ॥ १३९४ ॥

दरबार जैत मिलाइ आइ। संजोगि हरन नृप सथ्थ जाइ॥
घरि एक एक घरियार बज्जि। पुक्कार खग्गि मारूफ सज्जि॥
छं० ॥ १३९५ ॥

जैचन्द का रावण और सुमंत से सलाह पूछना।

दूहा ॥ परी भीर बर द्रिग्ग बर। द्रिष्ट संजोइय कंत॥
तब तराख रावन कहै। पंग राइ सोमंत॥ छं० ॥ १३९६ ॥

(१) ए. कृ.-को.-पीर सं। (२) ए. कृ. को.-रोस।

सुमंत का कहना कि बनसिंह और केहर कंठीर को आज्ञा दी जाय।

कवित्त ॥ मोहि मत पुछै नरिंद। तौ चहुआन गहन गुन ॥
दल बल अरि अरि दल्लि। ठट्ट ठेलै दुज्जन दुव ॥
प्रथम राव बन सिंघ। राव बन बीर अग्गि करि ॥
[1]हेत सुमन जग्गौत। उनै पहुपंग पूरि परि ॥
केहरि कंठीर पठौ सु न्रप। इन समान छिची न छिति ॥
अड्डौ सु धरो बिभ्भार घन। रावन रिन सिष ईय पति ॥
छं० ॥ १३९७ ॥

जैचन्द का कहना कि पृथ्वीराज मय सामंतों के जीता पकड़ा जावे।

तब नरिंद रा पंग। सु मुष बोल्यौ रावन प्रति ॥
आज गिद्ध ननि जोग। हनै घन स्याम भूप प्रति ॥
अति अयान अनबुझ्झ। जग्गि आगम्म प्रगट्टिय ॥
अप्प अप्प जस हीन। दीन दुनिया दल छुट्टिय ॥
अवरन्न सेन लष्या चढौ। कढौ तेग बंधे दिवन ॥
बहु लाभ होइ जो षेम बिन। जु कछु काम कीजै सु चन ॥
छं० ॥ १३९८ ॥

बघ्घेलो बर सिंघ। राव केहरि कंठेरिय ॥
कालिंजर कोलिया। राय बंधिय बरजोरिय ॥
[2]रन रावन तलियार। बघ्घ कहौ मुष जंपौ ॥
रवि जैपाल नरिंद। काम कारन हूं अप्पौ ॥
बर गहन चंपि चहुआन कौ। [3]सत्त घत्त सामंत सह ॥
सम समथ सथ्थ भारथ्थ भिरहि। सहस दिये कमधज्ज दह ॥
छं० ॥ १३९९ ॥

(१) ए. क. को. हेत सुमत जग्गौज। (२) ए. क. को.-नर।
(३) मो.-मन्त।

रावण का कहना कि यह असंभव है। इस समय मोह करने से आपकी बात नहीं रह सकती।

तब रावन उच्चरै। न्रिपति इह मति सु झुट्ठौ॥
दोन होइ रापंग। सरित डंडी गुर मिट्ठौ॥
इह जोगिनि पुर इंद। गंजि गोरी गज बंधन॥
इन सु सथ्थ सामंत। खूर अति रन मद मद्दन॥
इह गहन दहन इच्छै नृपति। भर समूह मोहन करै॥
नव अश्व बाज नव नव न्रपति। नव सु जोरि अग्गह धरै॥
छं० ॥ १४०० ॥

रावण के कथनानुसार जैचन्द का मीर जमाम को भी पसर करने का हुक्म देना।

दूहा॥ सहस मान सह छत्रपति। सह सम जुद्ध म जुद्ध॥
गहन मीर बंदन कहै। तिहि लग्गै लहु बद्ध॥ छं० ॥ १४०१ ॥
मीर बंद बाहन बखिय। सक सामंत नंरिद॥
मंच घात सक खूरिमा। विष मुत्तरै फुंनिद॥ छं० ॥ १४०२ ॥
अप्प अप्प दल विप्फुल्यौ। दिल्ली गहन नंरिद॥
मीर जमाम हमाम कों। दिय आयस जैचंद॥ छं० ॥ १४०३ ॥
तुम बिन अग्य न न्रिवहै। तुम बिन राज न धाम॥
सुक्क कट्ठ कट्ठन समुह। जरि जरि अंब बुझान॥ छं० ॥ १४०४ ॥

रावण का कहना कि आप स्वयं चढ़ाई कीजिए तब ठीक हो।

फिरि रावन न्रप सौं कह्यौ। तात पठ्यौ तुहि काम॥
जब लगि अप्प न नांचियै। काम न होइ सु ताम॥ छं० ॥१४०५॥

पंगराज का कहना कि चोरों को पकड़ने मैं क्यों जाऊं।

कवित्त॥ तब झुकि पंग नरिंद। ढीठ कुटवार इट्ठ पर॥
बाट घाट तस करन। पास बसि करन प्रज्ज धर॥
रस अद्भुत संग्राम। मद्धि रथ्यत धरि छंडी॥

न कछु मझ्झ माजनो। बाद राजन सों मंडी ॥
अति ग्रब्ब अरब बज्जै सिरह। नरनि नीर उत्तरि रह्यौ ॥
जानहि न जुद्ध अविरुद्ध गति। किम सु बचन राजन कह्यौ ॥
छं० ॥ १४०६ ॥

दूहा ॥ अरे ढीठ रावन्न सुनि। जितहि न डट्ठो अप्प ॥
जो अलभ्भ लोकनि कह्यौ। जिहि मरि मारिय अप्प ॥
छं० ॥ १४०७ ॥

पुनः रावण का प्रत्युत्तर की आपने अपने हठ से सब काम किए।

कवित्त ॥ फिरि रावन उच्चर्यौ। जग्ग मंडि हकुमत्ति किय ॥
जैन जग्ग आरंभ। प्रथम चहुआन बंध लिय ॥
बहुत मत्त चुक्कए। अबहि तुम मंत सुमंत्ते ॥
संदेसै व्यौहार। कहौ किन होते भंत्ते ॥
बंचह बचंच मंचिय मरन। चाहुआन गहियन गहिय ॥
संबरे जाय कन्या (1)रवन। जुगति जग्ग पसरिय रहिय ॥ छं०॥१४०८

कुतवाल का बचन कि जिसका पालन करना हो उसे प्राण समान माने परंतु संग्राम में सबको कष्ट जाने।

श्लोक ॥ अप्प प्रानं समानस्य। खालना पालनादपि ॥
प्रापते तु युद्धकालस्य। मुष्ककाइं हुताशनं ॥ १४०९ ॥

दूहा ॥ कै प्रारंभन प्रिय भरन। मरन सु अग्गर राइ ॥
जग्ग विगारन जूह चढ़ि। लियें सु कन्या जाइ ॥ छं०॥१४१०॥
मुष ब्रजाद बुल्यौ बयन। नयर कंध कुटवार ॥
सु विधि मौर संग्राम भर। तुम रष्यहु हटवार ॥ छं०॥१४११॥
हट्ट नाम कुटवार सुनि। परि सामंतन जंग ॥
सबन निरष्यत पंग दल। पर पति दीप पतंग ॥ छं०॥१४१२॥

(१) प्र कु को. बरन

मुसल्मानी सेना नायक का सेना सहित हरावल में होकर आगे बढ़ना।

भुजंगी ॥ तबें पठ्ठियं पंग रायं सु दीसं। भषै दोइ द्रुम्मीन हीनें न दीसं॥
कियं नीच कंधं तुहं रोम सीसं। परी उप्परैं फौज प्रथिराज ईसं॥
छं०॥१४१३॥

रसावला ॥ [1]कोल पल्लं खषी। मंस खवं भषी॥
रोम राइं नषी। बेयजे बिद्धषी॥ छं० ॥ १४१४ ॥
बीर बाहू पषी। सुम्मरे नां खषी॥
विद्धि सा बद्धषी। टंक अद्धरषी॥ छं० ॥ १४१५ ॥
पंचि विभ्भारषी। खोड नारंजषी॥
कोल चाहै [2]चषी। बाज बाहै खषी॥ छं० ॥ १४१६ ॥
दुम्म साहै मुषी। बोल तें ना खषी॥
पारसी पारषी। बान वाइं पषी॥ छं० ॥ १४१७ ॥
प्रान तिन्नं तषी। पंग पारट्ठषी॥
स्वांमिता चित्तषी। ढिल्लि ढाइंभषी॥ छं० ॥ १४१८ ॥
बीच रत्तं मुषी। सद्दि इज्जारषी॥
पवंगे पारषी। .... छं० ॥१४१९॥

पंगदल को आते देख कर पृथ्वीराज का फिर कर खड़ा होना।

भुजंगी। इयं सेन पय सेन अग्गै सुडारै। त्रिपत्ती नछत्री न लभ्भै नपारै॥
तिनं सूर सामंत मध्यं इजारे। मनों 'विटियं कोट मंझे मुनारे॥
छं० ॥ १४२० ॥
तबै मोरियं राज प्रथिराज वग्गं। बरं उट्ठियं रोस आयास लग्गं॥
मनों पथ्थ पारथ्थ हरि होम जग्गं। मनों षोलियं पग्ग षंडून लग्गं॥
छं० ॥ १४२१ ॥
बरं उट्ठियं सूर सामंत तज्जै। तबें षोलियं पग्ग साहथ्थ रज्जै॥
सुरं बाजनै पंग रा वीर वज्जै। मनों आगमं मेघ आषाढ़ गज्जै॥
छं० ॥ १४२२ ॥

(१) ए. कृ. को. "कोल पल अभर्प्पा." (२) ए.-पषी।

पृथ्वीराज की ओर से बाघ राज बघेले का तलवार खींच कर साम्हने होना।

कवित्त ॥ बघ्घराव बघ्घेल। हेल मुग्गल निहल्ल किय ॥
मेघ सिंघ विज्जुलिय। आंनि झंमुर झलक्किय ॥
वे गयंद बारुन बहंत। बारत्तन वारिय ॥
मीर पुट्ठि आरुट्ठि। सेन गहि गहि अप्फारिय ॥
आवृत्त बत्त सामंत रन। जमर मेछ संमुह मिलिय ॥
अष्टमी चष्य इक्कइ सु ग्रह। प्रथम रोस दुअ दल मिलिय॥छं०१४२३॥

सौ सामंत और असंख्य पंग दल में संग्राम शुरू होना।

दूहा ॥ जोध जोध आयरु मिले। एक इक्क सौं लष्य ॥
नारद तंबर सिव सकति। सौ सामंतां पष्य ॥ छं० ॥ १४२४ ॥

पुनः रावण का वचन कि पृथ्वीराज को पकड़ने में सब सेना का नाश होगा।

कवित्त ॥ फिरि रावन उच्चरिय। सुनौ कमधज्ज [1]इला वर ॥
अरि बंधन इंछियै। सु तन बंछियै मरन भर ॥
प्रथम मूल दिज्जियै। व्याज आवै धुर जन्नी ॥
इन कज्जैं इल भार। देव [2]करयौ छिति लिन्नी ॥
छिति ग्रीषम बुठ पावसह। बैंन पट्ट जु पंगह सुनिय ॥
[3]कायर सु भीर भंजै न भर। भर भंजै संभरि धनिय॥छं०॥१४२५॥

केहर कंठेर का कहना कि रावण का कथन यथार्थ है।

केहरि वर कंठेर। पंग सम्हौ उच्चारिय ॥
मत्त सु मत उच्चरिय। वीर रावन अधिकारिय ॥
जंच जोर जो वजै। सार तंची मिलि जंची ॥
जंचि जोर जो [4]चलै। सार बंधी अनु तंची ॥

---

(१) मो.-इलावर। (२) मो.-करयौ
(३) ए. कृ. को.-कायरन भीर भंजै सुभर। (४) मो. वजै।

भंजौ जु बीर चहुआन दल। दइ दुबाह सन्हौ भिरै॥
भारथ्थ बीर मंडन सहै। अरी जीत कायर मुरै॥ छं० ॥ १४२६॥

पंग का उत्तर देना कि सेवक का धर्म स्वामी की आज्ञापालन करना है।

सुनि केहरि बर बैन। कौन उचरै जुद्ध यथ॥
धर संग्रह गो ग्रहन। सामि संकट जु बीर तथ॥
साम दान अरु भेद। सोइ चुक्कै बर साई॥
नरक निवास प्रमान। सुधित किन्नौ निधि पाई॥
जंकरै मंत्त उत्तरि परै। सामि अग्गि मंगै सुभर॥
यौं इंसन केलि घर घर करै। इकत पच्छ बहु सुभर॥
छं० ॥ १४२७॥

पंग को प्रणाम करके केहर कंठेर और रावण का बढ़ना।

दूहा॥ केहरि कन्ह सु गत्तमी। करि जुहार न्रप भार॥
इस्ति काल जम जाल लै। चलि अग्गै कुटवार॥ छं० ॥ १४२८॥

उनके पीछे जैचन्द का चलना।

कवित्त॥ केहरि बर कंठीर। कन्ह कमधज्ज सु रावन॥
इस्ति काल जम जाल। [1]अग्गि नग चासति धावन॥
ता पच्छै कमधज्ज। सेन चतुरंगी चल्लिय॥
हमम हयग्गय सुभर। भूमि चावहिसि हल्लिय॥
कंद्रप्प केत पहुपंग सँग। बजि निसान अप्पन चढ़िय॥
घन अंगम्यौ सेन चहुआन बर। पवन सेन टिड्डी बढ़िय॥
छं० ॥ १४२९॥

जैचन्द के सहायक राजा रावतों के नाम।

भुजंगी॥ तिकें चढ़ियं पंग अज्ञान बाहं। बचं उचरें सेनं चौहान माहं॥
सुतं चढ़ियं [2]सेर कंद्रप्प केतं। मनों बंधियं काम बे बीर नेतं॥
छं० ॥ १४३०॥

---

(१) ए. कृ. को.-अगिन, अगिनिग। (२) ए. कृ. को. बीर।

चढै प्रब्बतं बीर बीरं प्रमानं। कहै पंग अप्पै बँधे चाहुआनं॥
चढे चंचलं चंपि चंदेर राई। जिनै पुब्ब बैरं रनंथंभ पाई॥
छं० ॥ १४३१ ॥

चढ़े किल्हनं कन्ह क्रन्नाट राजी। उठी बंक मुंछं समी बीय लाजी॥
चल्यौ दच्छ भानं सुभानं प्रमानं। चढे कन्ह चंदेल भौधू समानं॥
छं० ॥ १४३२ ॥

चल्यौ बग्गरी बीर तत्ती 'तुरीसं। लरैं सामि कामं असम्मानं सीमं॥
चल्यौ इंद्र राजं असग्पति बीरं। महा तेज जाजुल्ल बीरं सरीरं॥
छं० ॥ १४३३ ॥

चल्यौ मालवी बीर वर सिंह तद्दं। भजै तेज जाजुल्ल देष्यौ 'फुनिंदं॥
चल्यो पंच पंचाइनं बीर मोरी। चढै बाह रंजैत पावंग जोरी॥
चल्यौ दाहिमौ देव देवत्त गत्ती। चढ़े मीर वीरं षुरासान तत्ती॥
छं० ॥ १४३४ ॥

असी लष्ष सेना चिह्नं मग्ग धाई। मनौं भूमि बाराह कंधै उठाई॥
कमठ्ठंति पिट्ठंति ठौसी समालं। कंपी सेन मुक्कै कुबे हथ्थ 'झालं॥
छं० ॥ १४३५ ॥

पंग की चढ़ाई का आतंक वर्णन।

कवित्त ॥ 'वजत धरद्धर सीस। धार धरनीय सेस कहि।
कुंडलेस कुंडलिय। कहय पन्न गति अरुल रहि॥
'अहि अहि कहि अहि नाम। संकभौ सीस सेस वर॥
गहिन परै तिहि नाग। चित्त विभ्रम चिचक पर॥
कंपेस नाम कंपत भयौ। बहुत नाम तहिन लहिय॥
जिन जिन उपाय रच्चिय दुला। 'पंग पयानह तिहि कहिय॥
छं० ॥ १४३६ ॥

दूहा ॥ फन फन पर मुक्कत जु दुख। तत्त बसत दज्झि हथ्थ॥

---

(१) ए. कृ. को.-तिगिसं। (२) ए. कृ. को.-दुनिहं।
(३) ए. कृ. को.-जालं। (४) ए. कृ. को.-जवत।
(५) ए. कृ. को.-अहि अहि अहि कहि नाम। (६) ए. कृ. को.-पंग पयानन होत वहि।

अट्ठ कंपि दो अट्ठ डरि। रवि सुभ्भ नह पथ्थ ॥छं०॥१४३७॥

क्षत्री धर्म की प्रभुता।

कवित्त ॥ मिलि गरूर सामंत। विपथ अरु सुपथ उचारं ॥
विपथ जु बंध्यौ मोह। सुपथ पति रषि पति वारं ॥
रहै विपथ रजपूत। मभ्भि अनि रपि चित भारथ ॥
इह सु पथ्थ रजतीय। सामि प्रेमह होइ सारथ ॥
सह कित्ति कलं काल कथ्थयौ। काल सु पंग कलंतरै ॥
कस धम्म धम्म छचौ तनौ। मवन मत्त [1]चुक्कहि नरै ॥छं०॥१४३८॥

दूहा ॥ निसि भै भै काइर भजिग। [2]तमस भज्ज गनि सूर ॥
भय भयान रन उदित बर। अद्ध निसा अध पूर ॥ छं० ॥ १४३९ ॥

प्रफुल्ल मन वीरों के मुखारबिंद की शोभा वर्णन।

भुजंगी ॥ परी अद्ध निस्सा जमं छिद्र कारी। ठठुक्के सुरं देखि बरसे न पारी॥
फिरी पंति चावहिसं पंग सूरं। महा तेज जाजुल्य दिट्ठी करूरं ॥
छं० ॥ १४४० ॥
सपत्तेज सूरं तहां युद्ध तूरं। दिषे सूर प्रतिबिंब तो मुभ्भ नूरं ॥
महा तेज सूरं समुद्दं जु प्रीतं। बड़े कव्वि रावन्न उप्पम दीतं ॥
छं० ॥ १४४१ ॥
करे सिद्धि जेमन सकारंन नाई। थपे सिद्धि मानं वियं सिद्धि पाई॥
[3]सतं पचयं मुद्दि फुल्लै कमोदं। मनौ बालवै संधि दो संधि जदं॥
छं० ॥ १४४२ ॥
तरें को तरं उद्धि पंखं प्रमानं। वसे भौर झोरं मतं पच थानं ॥
[4]मिलं दंपती भौर जोगं सरंगी। लखं बेस सोसी जु मुकरंद पंगी ॥
छं० ॥ १४४३ ॥
चले लोइ जानं मनं मथ्थ बीरं। सजै कुट्टि लै रथ्थ भुअनं सरीरं॥
डगे उद्धि गेंनं इकं दुत्ति मानं। रगं रत्त सुभ्भै अभै आसमानं ॥
छं० ॥ १४४४ ॥

---

(५) ए. कृ. को.-चक्कहि। (१) ए. कृ. को—तम सभनग्गनि सूर।
(२) ए. कृ. को. संत पत्र जो (३) मो.-मिले दंपती भौरँ ज्यौं गंस रंती।

पृथ्वीराज को पकड़ने के लिये पांच लाख सेना के साथ रूमीखां और बहराम खां दो यवन योद्धाओं का बीड़ा उठाना ॥

दूहा ॥ षां मारुफ नव रत्ति षां । रुषमीं षां बहराम ॥
पान मंडि लीनौ सुकर । सामि सपत्ते काम ॥ छं० ॥ १४४५ ॥
पंच लष्य तिन सथ्थ किय । अनी बंधि नृप राज ॥
गुन गोरी नन जानई । सामि धम्म सौं काज ॥ छं० ॥ १४४६ ॥

मोतीदाम ॥ बजे बर चंग निसाननि नद्द । सिरं सहनाय नफेरिन सद्द ॥
बजंत निसान सुरंभ रिझंत । सुने सद ईस [1]पलक्क घुलंत ॥
छं० ॥ १४४७ ॥
बजै घट घुघघर घोरनि भार । कै इंद्र अरंभ करै बिबिचार ॥
बजै रंग जोज जलज जल घंट । हरै भ्रब संभरि नारद कंठ ॥
छं० ॥ १४४८ ॥
बजै सद बंस महिष्यत सिंघ । मनों कम नंकन आरँभ रंग ॥
तवल्ल टँकार निसानन हल्ल । किधौं गज मेघ अषाढ़ सु कल्ल ॥
छं० ॥ १४४९ ॥

आगे रावण तिस पीछे जैचन्द का अग्रसर होना और इस आतंक से सब को भाषित होना कि चौहान अवश्य पकड़ा जायगा ॥

दूहा ॥ रावन न्रप बद्दत सुबर । षिजि बंधब बर बीर ॥
आदि बैर चहुआन सौं । चढ़ि फवज्ज भर भीर ॥ छं० ॥ १४५० ॥
फटिय फौज पहुपंग बर । मत मंची न्रिप चिंति ॥
अप्प चढ़न बद्दन अरी । नीर फौज छबि कित्ति ॥ छं० ॥ १४५१ ॥

कवित्त ॥ करि रावन नृप अग्ग । पंग चढ़े बर नागर ॥
[2]धरनि धाय सननंति । रंग दुस्सह जुग सागर ॥

(१) मो.-सु पल्ल सजंत । (२) मो.-धरति ।

मुगति दान अप्पनह । जंम जीवन उथ्थप्पन ॥
फल कित्ती भोगवन । क्रंम भंजन अघ कप्पन ॥
आजुल्य देव दैवान भर । दिषि नरिंद तोमर तरसि ॥
डगमगे भग्गि द्रगपाल बर । बीर भुगति तुंमर परसि ॥
छं० ॥ १४५२ ॥

दूहा ॥ तरसि तुंग बहलति दल । घल भल बिजय निसान ॥
बाल हत्थ दुभ उच्चरै । गहै पंग चहुआन ॥ छं० ॥ १४५३ ॥

हरावल के हाथियों की प्रभूति ।

बर सोहै बहलति दल । बर उतंग गज रत्त ॥
काज न सज्जल रष्यई । कौन गंग उर गत्त ॥ १४५४ ॥
इलि गज दंतिन सघन घन । गति को कहै गनित्त ॥
मनों द्रब्बत बिधि चरन कै । फौज अगैं मैंमत्त ॥ छं० ॥ १४५५ ॥

पंग दल को बढ़ता देख कर संयोगिता सहित पृथ्वीराज का सन्नद्ध होना और चारों ओर पकड़ो पकड़ो का शोर मचना ।

पद्धरी ॥ पूरन्न राव चालुक्क बंभ । हम्मीर राव पामार थंभ ॥
गोयंद राव बघ्घेल सूर । अंगमी सेन घन ज्यों खँगूर ॥
छं० ॥ १४५६ ॥

पहुपंग गोपि प्रदिकास राज । दिष्यै कमंध दल बरिय साज ॥
बाजिच ताम बज्जे गुहीर । इय गय सु ताम रुज्जेति बीर ॥
छं० ॥ १४५७ ॥

न्निप नाइ सीस मिलि राज सब्ब । दिष्येव पंग गुर तेज ग्रब्ब ॥
दल सजे साजि सब देषि पंग । उच्चयौ गरुअ चहुआन जंग ॥
छं० ॥ १४५८ ॥

सिर धारि बोलि 'जमराज सामि । बंधें अवनि गुरु तेज ताम ॥
सजि सेन गरट चलि मंद गत्ति । निज स्वामि काम 'गुभ्भ गुरत्ति ॥
छं० ॥ १४५९ ॥

(१) मो.-सज । (२) मो. गुंजे ।

आवंत सेन प्रथिराज जानि। उट्ठे व सूर सामंत तानि॥
सामंत सूर सजि चढ़े जाम। हय मंगि चढ़न चहुआन ताम॥
छं० ॥ १४९० ॥

संजोगि पुट्ठि [1]आरोहि बंधि। थट्टौ सु राज सन्नाह संधि॥
छं० ॥ १४९१ ॥

दूहा ॥ गहि गहि गहि मुष बेंन कहि। भग्गि न पावै जान॥
श्रवन सवद न संचरिय। मनौं गुंग करि सान॥ छं० ॥ १४९२ ॥

लोहाना आजान बाहु का मुकाबला करना और वीरता के साथ मारा जाना।

कवित्त ॥ दल समंद पहुपंग। गज्जि लग्गौ चावहिमि॥
लोहानो बर बीर। पारि मंडी असिय असि॥
लोह लहरि हिल्लई। फिरिव बज्जे दल षग्गह॥
हं हं हं आरुहिय। गजति गज्जन नर लग्गह॥
पारथ्थ बीर बर बार हर। बहु क्रूर कट्टी विहर॥
रघुबीर तरंग तुरंग जल। कमल जानि नंचैति सिर॥छं०॥१४९३॥
मित्त रथ्थ रजि व्योम। मद्धि अट्ठई असुर गुर॥
रसह रौद्र विथ्थुच्यौ। षिति षिजि लग्गे अमर पुर॥
संकर भरि लगि लोह। धूरि धुंधरि तिनि सा छबि॥
हाजुर मीर हमाम। मीर गिरदान सामि नमि॥
चवदिट्ठ उट्ठि राजन सबद। पारसि गहन गहन्न किय॥
दै छंडि मंडि असिबर दुकर। जंपत आतुर जीह लिय॥
छं० ॥ १४९४ ॥

लोहाना के मरने पर गोयंदराय गहलौत का अग्रसर होना और कई एक मीर वीरों को मार कर उसका भी काम आना।

भुजंगी ॥ तबै हक्कि गहिलौत गोयंद राजं। हयं छंडि हथ्थि जेम करि चक्क साजं॥

(१) ए. आरोधि।

लगे [1]सुद्ध धारं सु बाहं सु झारं। मनों क्रुद्धसं तार तुट्टै करारं॥
छं० ॥ १४६५ ॥

बहै षग्ग झट्टं स क्रन्नति सट्टं। बिसीसं बिघट्टं मनों नाचिनट्टं॥
तुटै षग्ग उड्डंत ब्योमं बिहारं। मनों संभ्रु संक्रंति हव्वाइ झारं॥
छं० ॥ १४६६ ॥

हहक्कार हक्कार हक्कै सुमीरं। चवं राहि बीरं बजे जुद्ध धीरं॥
समुष्यं हमामं सु मीरं मिलंदे। मनों राह ग्राहं कुटं बेस इंदे॥
छं० ॥ १४६७ ॥

हए तोमरं हीय फेरे फरक्के। मनो नट्ट बेसं सु भूमं तरक्के॥
तबै चंपि गिरियं सु गोयंद राजं। हये संगिनी छुट्टि सीसं सु गाजं॥
छं० ॥ १४६८ ॥

फटे तोमरं पुट्ठि उट्ठंति रंगे। धमक्के धरा नाग नागं सिरंगे।
चवै दीन दीनं गिरंदी गुमानं। कियं आय पाहार नाविक्क बानं॥
छं० ॥ १४६९ ॥

चंपै चंप बर बेग गोयंद राजं। मृगी जेम मृगराज धपि पंषि बाजं॥
हए ताम नेजानि खूरंति धायं। कियं कंत प्राहार गोयंद रायं॥
छं० ॥ १४७० ॥

हए षग्ग सीसं परे रंभ थंभं। मनों कोपिनं षत्ति घेटंति ईभं॥
बियं लग्गि बथ्थं बलं बाहु बाहं। जमं दट्ठ चंपे डरं मेछ गाहं॥
छं० ॥ १४७१ ॥

उठे हक्कि करि झारि कोपेज डालं। हए च्यार मीरं दुबाहंड ढालं॥
उरं लग्गि जंबूर आरास थानं। पर्यो राव गोयंद दिल्ली भुजानं॥
छं० ॥ १४७२ ॥

गोयंदराय की वीरता और उसके मरने पर पज्जूनराय का हथियार करना॥

दूहा ॥ पहर एक असिवर सुभर। आरिसि बुट्ठौ मार॥
गिनै कौन गोयंद सिर। जे षग तुट्टिय धार॥ छं० १४७३ ॥

(१) प. कृ. कां.-जुद्ध।

कवित्त ॥ तब गरज्यौ गहिलौत । पत्ति पाहार धार चढ़ि ॥
बड़वा नल असि तेज । पंग पारस संमुह चढ़ि ॥
अरि अबुझ्झ सिष्पवै । मख्ख बज्जी तन भिल्लै ॥
अंकै मरन समूह । सस्त्र बर [1]सस्त्रन छिल्लै ॥
आहत्त घाय तन झंझरिय । मन अच्छरि तिन तन बरिय ॥
गोयंदराय आहुट्ठ पति । सुगति मग्ग पुल्लिय दरिय ॥
छं० ॥ १४७४ ॥
परत धरनि गहिलौत । सेन नच्चिय असुरायन ॥
चितिय जांम अह सुक्क । रस्स मत्तौ रुद्रायन ॥
गयत प्रान गोयंद । मौर इति मित्ति सुपिल्लिय ॥
पिझ्झे राज पज्जून । सुधर कम्मार सु ढिल्लिय ॥
इहकारि सीस साजे गयन । किहथ कंध असि झारि कर ॥
धर पय्यौ दंत गृत मित्त परि । उय्यौ हक्कि हरि जेम अरि ॥
छं० ॥ १४७५ ॥

पज्जूनराय पर पांच सौ मीरों का पैदल होकर धावा करना और इधर से पांच सौ सामंतों का उसकी मदद करना ॥

इत मित्तह उपारह । [2]मीर सो पंच छंडि इय ॥
है है है जंपै जुवान । उथ्थान थान भय ॥
तिन रोहिग पज्जून । राय केहरि करि जुथ्थह ॥
देषि सिंघ पामार । पीप परिहार सु पथ्थह ॥
चंदेल भूप भोंहा सुभर । दाहिमौ नरसिंघ बर ॥
कछवा राइ चालुक्क पहु । मिलिय पंच उप्पर समर ॥
छं० ॥ १४७६ ॥

नरसिंहराय का वीरता के साथ मारा जाना।

मोतीदाम॥मिलि हक्किय हक्क सु भीर गंभीर । गुमान दुमान सु चंपिय पीर॥
महाभर सूरसामंत सु धीर । सु त्रिम्मल नेम रजे रज नीर ॥
छं० ॥ १४७७ ॥

(१) ए. कृ. को.-सत्रुन (२) ए. कृ. को. सीर ।

धक्कि सु धक्कि अनो अनि अंग। लगे जम दट्ट सु सेलह संग॥
छुरिकट्ट घाइ सु तुट्टहि सीस। खिलंत कमंध उठै भर रीस॥
छं० ॥ १४७८ ॥
चल्लै घर पूर रुहीर प्रवाह। सबै मिलि घुंटि सकेति सु राह॥
न्विपति करूर [1]निझारत पन्न। मनों नटिनी मुष जक अगन्नि॥
छं० १४७९॥
मिले इत मित्त पजून सु धाइ। हयौ हिय नेज कुरंमह राइ॥
चले सम नेज हयौ असि झार। पर्‌यौ इत मित्त मनों तरतार॥
छं० १४८०॥
पर्‌यौ धर राइ पजून समुच्छि। हयौ असि सेर न सीसं उच्छि॥
चंप्यौ नरंसिघ मनों करि सिंघ। महातन मंडिग सेन कुलिग॥
छं० १४८१॥
लग्यौ दल सिंघ करष्पि सु तीर। चंपे चव सिंघ सु भग्गिय मीर॥
पर्‌यौ नरसिंघ नरव्वर खूर। तुटे सिर आवध जाम करूर॥
छं० १४८२॥

नरसिंह राय की वीरता और उसका मोक्ष पद पाना।

कवित्त। दाहिम्मै नर सिंघ। रिंघ रष्पी रावत पन॥
सिर तुट्टै कर कट्टि। चट्टि धायौ धर हर घन॥
मार मार उचरंत। राव बज्जे धारा हर॥
देव स्तुति करि चार। रंभ झग्गरी कहिरु बर॥
संकरह सीस लीन्यो जु कर। दई दरिद्री ज्यौं गहिय॥
कविचंद निरषि सुभ्भै सिरह। जुगति उगति कवियन कहिय॥
छं० ॥ १४८३॥

मुसलमान सेना का जोर पकड़ना और पज्जूनराय का तीसरे प्रहर पर्य्यंत लड़ना।

पंग हुकम परमान। अग्र चौकी घुरमानिय॥
प्रथम जुद्ध किय [2]मीर। हारि किनही नह मानिय॥

(१) ए. कृ. को.-डारत। (२) ए. कृ. को.-मार।

परे मीर पथ्थार। धार असिवर सिर झारं ॥
सामंतनि लंगरिय। घाइ उट्ठी ग्रह सारं ॥
सम सथ्थ बाघ बघ्घेल न्रिप। जंग जोट कोटह अकल ॥
टारै न मुष्प सांईय छल। लोह लहरि बाजंत झल ॥
छं० ॥ १४८४ ॥

मुसल्मान सेना के क्षित विक्षित होने पर उधर से बाघराज बघेले का वसर करना और इधर से चंदपुंडीर का मौका रोकना।

परत राइ पज्जून। वित्तचय जाम सु बासुर ॥
विषम रुद्र बिथ्थर्यौ। भार लग्गै भर सुभ्भर ॥
बघ्घराव बघ्घेल। मार कामोद सेन सम ॥
मिलि चंपिय चहुआन। सूर सुभ्भै न अगम गम ॥
षह धूरि उड्डि धुंधरि धरनि। किलक हक्क बज्जिय विषम ॥
पुंडीर राइ राजह तनौ। समर बार सज्यौ असम ॥ छं० ॥ १४८५॥
बीर मंच उच्चार। धार धाराहर बज्जिय ॥
तिमर तेग निब्बरिय। गुडिल गयनं लफि गज्जिय ॥
उड़पति कमल अलाइ। तेज मंजिय तारा अरि ॥
[1]अनौ भोर अर अकल। सयर लोग उप्पर परि ॥
धर धार धार धुक्किय धरनि। करिय अरिय किननंत धर ॥
पुंडीर राइ चंदह सुचित। [2]अरिन नट्ठ नच्चै सु नर ॥छं० ॥१४८६॥

मीर कमोद और पुंडीर का युद्ध और पुंडीर का माराजाना।

बीर मीर कामोद। आय जब पुंडिर उप्पर ॥
बिहथ नेज उभ्भारि। बाहि निभ्झाहि चंद उर ॥
सेल सेल संमुहिय। हडु भंजिय हिय चंपिय ॥
सुधर ढार निभ्झार। बाहि असुराइन कंपिय ॥
पुंडीर राइ आसर सयन। मृत जिम नंचिय समर ॥
दलभंति पंग पुंडीर परि। जय जय सुर सद्दे अमर ॥छं०॥१४८७॥

(१) ए. कृ. को.-अनी मोरं अरि कमल। (२) ए. कृ. को.-अरिय।

चंद पुंडीर की वीरता।

दूहा ॥ परत राइ पुंडीर धर। तरनि सरन गय सिंधु ॥
गनै जु को पुंडीर सिर। जे धर तुट्टि अनिंधु ॥ छं० ॥ १४८८ ॥

चंदपुंडीर के मरने पर कूरंभराय का धावा करना और बाघ राज और कूरंभराय दोनों का मारा जाना।

कवित्त ॥ परत राइ पुंडीर। गहिव कूरम षग धायौ ॥
बाघ राइ बघ्घेस। उद्दित [1]असिवर करि साज्यौ ॥
न्निभै न्निम्मै न्निम्मरिग। तेग झारिय टट्टर पर ॥
मनहु बेद दुजहीन। पिट्टि झल्लरि अग्गै हर ॥
गल बांह लग्गि गट्ठौ पिसुन। मौत भेट महा विच्छ,रिय ॥
उर चंपि दोइ कट्टारि कर। सुगति मग्ग लभ्भौ घरिय॥छं०॥१४८९॥

कूरंभ के मरने पर उसके भाई पल्हनराय का मोरचे पर आना।

कूरंभइ उप्परह। [2]बंधु पाल्हनइ आयौ ॥
सिंघ छुट्टि संकलकि। देषि कुंजर घट धायौ ॥
कुंतन तरनि सु मंजि। दट्ठ जम दट्ठ विकस्से ॥
भाला षग्गन छुट्टि। पंग सेना परिनस्से ॥
गजबाज जुद्ध घन नर परिग। पहु कारन दिय प्रान जुध्ध ॥
सुरनरह नाग अस्तुति करै। बलि बलि बीर भुअंग भुध्ध ॥
छं० ॥ १४९० ॥

पाल्हन की वीरता और दोपहर के समय उसका खेत रहना।

मध्य टरत विप्पहर। सार बज्यौ प्रहार झर ॥
मेघ पंग उच्चयौ। मार मंडीय अपार सर ॥
भय कूरंभ टट्टीव। छार भीजै तहां दिज्जै ॥
बर ओडन प्रथिराज। बीर बीरां रस लिज्जै ॥
तन तमकि तमकि असि बर कढ्यौ। असि प्रहार धारह चढ्यौ ॥
पज्जून बंध अरु पुच बर। करन जेम इत्थह बढ्यौ ॥ छं०॥१४९१॥

---

(१) ए. कृ. को-असिमर। (२) मो.-पाल्हनराय।

यावत् अगाध गुणों की सार-स्वरूप मेरी जिव्हा पर बसनेवाली भवानी मैं तुझे बार बार प्रणाम करता हूं; क्योंकि तेरी भक्ति के बिना कोई काव्यशक्ति कदापि पाड़ी नहीं सकता। अस्तु मैं एक मात्र तेरे ही चरण-कमलों का आश्रय करके आशा करता हूं कि इस समय विद्यावाद में विजयी होऊं। इस पर सरस्वती ने अंतरिक्ष में उत्तर दिया कि हे पुत्र! तू किसी बात की चिन्ता न कर। तेरे सर पर सदैव मेरा हाथ रहता है। जहां तू है वहां मैं हूं, जहां तू नहीं वहां मैं नहीं अथवा जहां मैं हूं तहां तू है और जहां पर मैं नहीं वहां तू भी नहीं · तू अभय हो, मैं तेरी सहायता करूंगी अब जो कुछ तू कहेगा वही होगा। जो जो गुण तू चाहेगा वे मैं तुझे दूंगी। तूं मेरा प्रतिनिधि एवं यंत्र स्वरूप होकर कार्य्य कर।

केदार कवि बोला हे! कविचन्द अब तक तुमने पाखण्ड से काम लिया है। इस प्रकार के दृष्टबंध प्रयोगों से इष्टसाधना का परिचय नहीं पाया जाता। अच्छा अब जो मैं कहता हूं उसका उत्तर दो। यदि एक पाषाण की पूतरी आपही आप भगवती के सम्मुख खड़ी होकर स्तुति करे तो समझूं कि आप पक्के बटाई हैं। इस पर कविचन्द ने कहा। हां जिसको आप पाखंड कहते हैं वह आप भी कर दिखाइए। मैं एक अंगूठी फेंक देता हूं उसे आप मँगा दीजिए। इसको सुन कर केदार कवि ने एक वयः सन्धि नायिका पर और एक बाल चन्द्रमा पर दो कवित्त और पढ़े और कहा देखिए पावस की बहार दिखलाता हूं। केदार कवि के इतना कहते ही जोर से पवन चल उठी और बादल गड़ गड़ाने लगा, देखते ही देखते अन्धाधुंध कारी कारी घटाएँ उठ आईं, बिजली चमकने लगी और रिम-झिम मेह भी बरसने लगा। उसी समय सहसा एक उद्यान प्रगट हो गया जो कि नाना प्रकार के तरु-लता पल्लव और पुष्पों से परिपूर्ण था और जहां तहां मोर शोर करते और झिल्ली झनकारती थीं। यह देख कर सब चकितचित्त हो रहे परन्तु कवि-चन्द ने तो चुटकी चलाई कि पावस की ऋतु की समस्त सामग्री जहां की तहां समाप्त हो गई और वसन्त का समां बँध गया। बादल छिन्न भिन्न होकर प्रकृति निर्मल हो गई। जहाँ तहाँ आम के बौर और पतझाड़ पलासों पर लाल लाल पुष्पों के लहलहे मौर देख पड़ने लगे। खिल्ली के स्थान में थान थान पर भौरों की गुंजार होने लगी और मोरों के घोर शोर कोयल के बोलों में बदल गए। इसी प्रकार केदार कवि ने जो जो कलाएँ कीं उन सब को कविचन्द ने काट दिया। अन्त में केदार कवि ने कविचन्द से कहा कि यदि तू इस सामने पड़ी हुई शिला को गला दे तो मैं तुझे सच्चा बटाई जानूं। यह सुनतेही कविचन्द ने दुर्गा का ध्यान धर कर जो एक मंत्र पढ़ा तो वह शिला पिघल कर पानी सी हो गई और गले हुए हीरे की तरह दमदमाने लगी। तब कवि ने उसमें अपनी अंगूठी गाड़ कर केदार कवि से कहा कि अब तू इसमें से मेरी अंगूठी निकाल दे तो मैं तुझे सच्चा इष्ट वाला कवि जानूं और तुझसे हार मानूं। केदार कवि ने नाना प्रकार के जंत्र मंत्र पढ़ कर अपना सा उपाय किया परन्तु वह उस अंगूठी को न निकाल सका। तब तो वह कविचंद के गोड़ों लग गया और कहने लगा कि आप जीते मैं हारा। इस प्रकार पराजित होने पर भी केदार कवि ने एक कला और कर दिखाई। उसने एक सौ छिद्र वाले घड़े को मंत्र बल से जमुना की ओर प्रेषित किया और उसमें जल भर मँगाया। यह देख कर सब दर्बारी बड़े प्रसन्न हुए और पृथ्वीराज ने कहा कि तुम दोनों कवि बराबर हो तुम कोई भी एक दूसरे से कम नहीं हो। यों कहकर पृथ्वीराज ने केदार कवि का बड़ा सत्कार किया और उसे पांच दिन पर्य्यन्त अपना महमान रक्खा। पांच दिन पर्य्यन्त केदार कवि का विधिवत उचित आदर सत्कार किया गया और चलते समय तीस हाथी सौ कोतल घोड़े, सौ परतल के घोड़े बहुत सा धन रत्न और एक करोड़ नकद मुद्रा बिदाई में दिए गए। बिदा होते समय केदार कवि ने पृथ्वीराज को आशीर्वाद दिया।

(१) सजा हुआ बिना सवार का घोड़ा।

श्लोक

यावच्चन्द्रो दिवानाथ यावत् गंगातरंगयो।
तावत् पुत्र प्रपौत्रस्य दुर्ग ग्रामं विलोकयेत् ॥

पृथ्वीराज ने कहा हे कवि यदि कुछ अपराध हुआ हो तो क्षमा करना। तत्पश्चात् कविचन्द ने भी केदार कवि की बड़ी प्रशंसा की और सब तरह से उसे प्रबोधा। आशीर्वाद स्वीकार कर के पृथ्वीराज ने दस गांव का पट्टा भी केदार कवि को दिया जिसे पाकर उसने एक कवित्त पढ़ा जिसका आशय यों है—"हे पृथ्वीराज तू सब प्रकार की जानकारी और दान देने में एक ही है। तेरे कृपा कोर के देखने से ही दो सौ का दान प्राप्त होता है। यदि तू केवल वचन से बोल दे तो पांच सौ की प्राप्ति होती है। जानपहचान होने पर हजार और परस्पर वार्तालाप होने पर लाख की प्राप्ति होती है। यदि सौभाग्य वश किसी गुणी को अपना गुण दिखाने का अवसर प्राप्त हो तो उसके पुत्र प्रपौत्र तक का दरिद्र दूर हो जाता है। सो हे सोमेस सुत पृथ्वीराज मैं हृदय से आशीर्वाद देकर अपने छोटे पुत्र को भी आपकी सेवा में समर्पण करता हूं उसे अपनाइए।

इस प्रकार दान मान सम्मान सब भाँति से संतुष्ट हो मन ही मन प्रसन्न होता हुआ केदार कवि गजनी को रवाना हुआ। उसके साथ में गजनी से आए हुए गुप्त दूत भी लौट चले जो कि सदा उसके साथ में जोंक की तरह रह कर पृथ्वीराज का भेद लेते रहते थे। इन गुप्तचरों ने यथासम्भव शीघ्र ही गजनी पहुंच कर शहाबुद्दीन से सब समाचार जा कहा और धर्म्मायन का लिखा हुआ कूट-पत्र भी पेश किया। तत्तास्खां ने जब वह पत्र पढ़ा तो समस्त मीर मुसाहब मारे खुशी के फूल कर कुप्पा हो गए। शहाबुद्दीन ने आज्ञा दी कि इसी समय जंगी तय्यारी की जाय और सहायक सेनाओं को जुटाने के लिये जहां तहां परवाने भेजे जांय। शाह की आज्ञा होतेही बात की बात में सब सामान दुरुस्त हो गए। नियत तिथि को सब सेना सहित शहाबुद्दीन गजनी से कूच कर दस कोस पर आन पड़ा। यहां पर उसने एक अन्तरंग सभा की जिसमें सब मीर मुसाहब उपस्थित थे। शहाबुद्दीन ने सब को सुना कर कहा। अय मेरे अमीरो! इस वक्त मुझे अपने जासूसों के जरिये से जो खबर मिली है उससे तो फतह की पूरी उम्मेद है मगर फिर भी आप लोगों को निहायत मुस्तैद रहना मुनासिब है क्योंकि राजपूत बच्चों से लड़ना लोहे का चना चबाना है। यह सुनकर खुरासान खां और तत्तारखां बोले "हुजूर हर्गिज फिक्र न करें ये रोजे रमज़ान के दिन है और नमाज का वक्त है, हमारे दिलों में पूरी उम्मेद है कि हम लोग फतहयाब होंगे और दुश्मन जेर होकर लाचार होगा"। इसके सिवाय और और सर्दारों ने भी अपने अपने हथियार छूकर और बाहें उठाकर कहा कि हम लोग कुरान शरीफ की रू से कहते है कि अब की बार हम जरूर ही पिथौरा को कैद करके छोड़ेंगे और साथही ये शर्तें भी करते है कि अगर ऐसा न करें और शिकस्त खा कर मैदान जंग से भाग आवें तो आपको इख्तियार है कि आप हम लोगों को जिन्दा दफन करा दें। इस तरह कौल करार हो चुकने पर आगे को तय्यारी हुई और बराबर कूच दर कूच चलता हुआ शाही लश्कर सौनपुर के पड़ाव पर आगया। सौनपुर के घाट नदी पार कर के नगर के दक्षिण पार्श्व में खेमें जमे। एक दिन रह चुकने पर दूसरे दिन फिर से अंतरंग सभा की तय्यारी हुई। सब मीर मुसाहब यथास्थान आ बैठे। शहाबुद्दीन अपने आसन पर आसीन हुआ ही था कि केदार कवि के आ पहुँचने की इत्तला हुई। शहाबुद्दीन ने तुरन्त ही केदार कवि को अपने पास बुलाया और कुशल प्रश्न पूछकर उसे उचित आसन पर बैठने की आज्ञा दी। अभी शहाबुद्दीन केदार कवि से ही बात कर रहा था कि तब तक चार छद्म-वेषाधारी योगी अर्थात् गुप्तचरों के आने का समाचार मिला। शाह ने उन्हें भी सम्मुख आने की आज्ञा दी और केदार कवि से बातें करना छोड़ कर उनकी सुनने लगा। उन अंग विभूति जटा

मृगछाला सिंगी सेली मालाधारी दूतों ने शाह के संमुख आकर अदब से सलाम किया और प्रसन्न मन होते हुए वे बड़े चाव से बोले। हुजूर का इक़बाल बड़ा है। जो दुश्मन आप के मन में खटक रहा था उसने अपनी बर्बादी का सामान आप तय्यार कर रक्खा है। उसने अपने वजीर कैमास को खुद मार डाला है इसी से उसके सब बहादुर सरदार उससे बेदिल हो रहे हैं। उसने अपने नामी सिपहसालार चामंडराय को बेड़ियों में डाल रक्खा है और वजीर की मौत की वजह से आप खुद ऐसा गमगीन रहता है कि उसे दिन को आराम और रात को नींद आना हराम हो रहा है। इस वक्त वह कुल तीस हजार सिपाहियों के साथ इधर उधर शिकार खेलता हुआ पानीपत के मैदान में आ पड़ा है। वहाँ पर पड़े हुए उसे दस दिन हो चुके हैं और करीब दस दिन अभी और भी वहीं रहेगा। यह समाचार सुनते ही शहाबुद्दीन की कली खिल गई। वह अपने सिपहसालार सर्दारों को सवेरे ही वहाँ तय्यार करने की आज्ञा देकर आप शयनागार को चला गया।

यह हाल चाल देख कर केदार कवि का पिता दुर्गा कवि बोला "रे केदार जिस दानी राजा पृथ्वीराज से इतना दान सम्मान पाकर आया है उसी पर यह सेना सजी जा रही है। होनहार तो सब विधाता के हाथ में है पर देख इस समय अपने कुल को कलंक लगता है। एक तो पहिले माधव भाट ने ऐसी करतूत की कि जिससे राजाओं का चित्त भाटों की ओर से फिर जाना सम्भव है फिर अब यह घटना अनायास आ उपस्थित हुई है। इस लिये इस समय राजा पृथ्वीराज को सचेत कर देना उचित है। पिता के ऐसे बचन सुन कर केदार कवि ने अपने छोटे भाई दास कवि से कहा कि तू इसी समय पानीपत जाकर पृथ्वीराज को सूचित कर दे कि आप पर शाही सेना चढ़ी आती है। सोनपुर के पास पुल बाँध कर शाही सेना सिन्धु पार हो चुकी है और सब मुसल्मान सर्दारों ने कौल कर कर के प्रतिज्ञाएँ की हैं कि चाहे जो हो अब की बार पृथ्वीराज को बिना पकड़े न छोड़ेंगे। बड़े भाई की आज्ञा मान कर दास कवि वहाँ से उसी समय बिदा हुआ और तेजी से चलता हुआ वहां का छूटा पानीपत में जा पहुँचा।

एक प्रहर रात्रि जाते जाते, दास कवि पानीपत के मैदान में पृथ्वीराज के शिविर के सम्मुख जा उपस्थित हुआ। इत्तला पाते ही पृथ्वीराज ने उसे अपने पास बुलाया और पूछा क्या है? तब वह बोला अन्नदाता ग़ज़नीपत शहाबुद्दीन आप पर चढ़ा चला आता है, सो मैं अपने भाई का भेजा हुआ आपको यही सूचना देने आया हूं। शाह के आ पहुंचने में देर नहीं है, संझा सवेरे उसे आया ही समझिए। यह सुनतेही पृथ्वीराज ने लाल लाल आखे करके एक नजर से अपने सामन्तों की ओर देखा। वहां क्या! वे रणोन्मत्त सूर सामन्त सदा युद्ध के लिये उत्सुक रहते थे। उक्त समाचार पाते ही सामन्तों के सीने फूल उठे, मोढ़े फड़क उठे मूछें थर्रा उठीं और उनके ऐन जोशीले चेहरों पर अग्नि ज्वाला का सा तेज जाज्वल्यमान हो उठा पृथ्वीराज ने सामन्तों से पूछा कि इस समय पैदल युद्ध किया जायगा या घोड़ों पर से? इसके उत्तर में कन्ह चौहान बोला कि यह स्थान घुड़चढ़ी लड़ाई के योग्य नहीं है। सामने तो घने जंगल से परिपूर्ण बड़ी बीहड़ भूमि पड़ती है; पीछे और बाईं तरफ गम्भीर जलाशय है इस लिये आधी सेना तो घोड़ों पर रह कर दाहनी ओर उचित समय पर सहायता करने के लिये सन्नद्ध रहे और आधी सेना पाय पैदल होकर आगत यवन दल बल को दलन करने के लिये प्रस्तुत रहे।

रात्रि व्यतीत होने पर प्रातःकाल ही पृथ्वीराज की सेना में जगी नगाड़े बजने लगे और सूर सामन्त एवं सपूत राजपूत बीर सजने लगे। बीस हजार योद्धाओं ने अपने घोड़े छोड़ कर कमल व्यूह की रचना की और शेष सैनिक घोड़ों पर सवार होकर सहायता के लिये सन्नद्ध रहे। नरनाह कन्ह चौहान,

गोविंदराय गहलौत, जैनसिंह, बलिभद्र, रामराय बड़-गुजर दोनों भाई और बाप बेटे दोनों हाड़ा हम्मीर उक्त कमल व्यूह की पाँखुरी हुए। बग्गरी राय, पज्जूनराय, नाहरसिंह और पीप पड़िहार उसके पराग हुए। राज्यमंत्री जैनराव प्रमार उक्त पुष्प की नलिका एवं मृणाल हुआ और पृथ्वीराज सबके बीच में सना। इसके सिवाय जामराय यादव भोंहा चन्देल और विंझराज आदि सामन्त घुड़चढ़ी सेना के सहित दक्षिण अवकाश पर सन्नद्ध रहे।

जहां से शहाबुद्दीन सिन्धु पार हुआ था वहां से और पानीपत से पचास कोस का अन्तर बैठता है। परन्तु मुस्लमानी सेना वहां से रात दिन कूच करती हुई इस वेग से आई कि सचमुच सबको आश्चर्य्य सा होगया। इधर राजपूत सेना में जहां तहां प्रबन्ध होही रहा था कि शाही सेना की अवाई की धूलि उड़ती हुई देख पड़ने लगी। शाही सेना में मुस्तफा खां और दलेल खां दो नामी सरदार पीठ सेना और प्रकोट सेना के स्वामी थे, शाह स्वयं सब सेना का सेनापति था। बेला टलजाने के कारण राजपूत सेना से एक योजन के अन्तर पर शाही लश्कर के भी डेरे पड़ गए। रात्रि को तत्तार खां ने शहाबुद्दीन से कहा कि हिन्दू लोग मैदान जंग का मौका देख कर पैदल लड़ाई करने के लिये तैय्यार हैं। इस लिये इस वक्त हम लोगों को भी पैदल लड़ाई करनी मुनासिब है, लिहाजा पचास हजार पैदल सिपाहियों को साथ लेकर मैं तो दुश्मन से जंग लेता हूं और बाकी पचास हजार घुड़चढ़ी फौज के साथ आप मदत के वास्ते मुस्तैद रहिए। शहाबुद्दीन ने तत्तार खां का यह प्रस्ताव प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार कर लिया और उसी के अनुसार मुस्लमान सेना को हुक्म भी सुना दिया गया।

दूसरे दिन आकाश में उजेले की आभा पड़ने ही दोनों दलों में जोर जोर से घनघोर ध्वनि हुई सुरीले रणवाद्यों का स्वर सुन कर सूरवीरों के तो सीने दूने होने लगे परन्तु कायर पुरुषों के कलेजे कांपने लगे। दोनों सेनाओं के अग्रभाग में हथनार कुहकबान और जंबूर आदि अग्न्यास्त्रों की भरती थी इस लिये दिखादाव होते ही दोनों ओर से अग्नि वर्षा होने लगी जिससे उस सघन बन मय पहाड़ी स्थान में इस प्रकार धुआं भरगया कि दोनों दल के लोग कुछ देर के लिये अन्धे हो गए। परन्तु धुआं धक्कड़ की सफाई होतेही दोनों ओर के वीर बांकुरे योद्धा एक दूसरे पर अनयोरे बान बरसाते हुए ऐसे टूटे जैसे कामातुर करी किसी करिनी पर टूटता है। इधर के राजपूत वीर राम राम रटने और उधर के मीर पीर अली अली पुकारते।एक दूसरे पर पिलने हुए दोनों दल परस्पर ऐसे हिलमिल गए जैसे खिचड़ी में घी। यदि एक दूसरे के कंधे पर तलवार का वार करता तो तीसरा उसके खोपड़े को खांड से फार देता था, कोई किसी के आंख में खंजर खोसता तो कोई किसी के सीने में सेल धसा देता था, किसी का धड़ से सर अलग जा छटकता तो किसी की आँते निकल कर उसी के पैरों में लिपट जाती थीं, किसी का सर नहीं तो किसी के हाथ पैर नहीं इसी प्रकार से सहस्रों सूरवीर मरते कटते हुए पटते जाते थे परन्तु अपनी अपनी बाजी पर से हटते नहीं थे, उनका ऐसा विकट रणकौशल देखकर आकाश मार्ग में स्थित देवाङ्गनाएँ पुष्पों की वर्षा करतीं और रण क्षेत्र में रक्त पीती हुई योगिनी वीर योद्धाओं के गुणगान करती हुई,फूली अंग नहीं समाती थीं। इसी बीच में दो यवन सर्दार राजपूत सेना को काटते पाटते पृथ्वीराज के पास तक आ पहुंचे और पासही था कि वे राजा पर बेकसर वार करें,परन्तु वीर बांकुरे पृथ्वीराज ने उन्हें इसका अवसर न देकर ऐसी सेल फटकारी जो उन दोनों वीर बन्दों के कलेजे पार गई और वे दोनों घोड़ों पर से गिर कर आममान देखने लगे। अपने स्वामी का यह शौर्य्यकौशल देख कर राजपूत सिपाही प्रसन्न हो गए और और भी जी खोल कर हाथ करने लगे। मौका बेढब देख कर उधर से पीठ सेना भी खेत में आगई जिससे मुसल्मानी बाजी मजबूत हो गई इस समय इस जोर शोर से लोहा मरने लगा कि

सूर वीर लोग अपना पराया भूल गए।

लोहे की मार की झपेट बुरी होती है। उसे देख कर साधारण सुकुमार लोगों को तो जूड़ी का बुखार चढ़ आता है; परन्तु सच्चे सूरवीर उसी के उजेले में आत्म ज्योति का दर्शन करते हैं या आकाश में स्थित अप्सराओं का हाथ जा पकड़ते हैं। उधर से मुसल्मानी दल का बल बढ़ा देख कर इधर से आजान बाह लोहाना और लंगरीराव खेत में उतर पड़े और आगे बढ़ कर उन्होंने शाही सेना को आड़े हाथों ले लिया। इन दोनों वीरों के रण कौशल से समस्त शाही सेना मनहार होने लगी और राजपूतों का जी बढ़ उठा। खाँडे, तलवार तबल, बान, पट्टे; दाब बिछुआ. बांक, बगुरदा, छुरी, कटार, पेशकब्ज आदि हथियारों के ऐसे करारे वार हुए कि घड़ी भर के लिये देखना लोग भी क्षुभित हो गए। दम की दम में सैकड़ों बिना सवार के घोड़े इधर उधर अनाथ से दाँत काढ़ते हुए दौड़ते फिरने लगे। भर्षुंड मे मुंड विहीन हाथी प्रचंड स्वर से चिक्कार मारते हुए इधर उधर लुढ़कते फिरने लगे और उनके शरीर से बहता हुआ रक्त पहाड़ी झरने सा झरने लगा। इसी तरह युद्ध होते होते मुसल्मानी सेना के पैर पीछे पड़ने लगे यह देख कर शहाबुद्दीन ने अपने सिपाहियों को कसम देकर पुकारा और आप स्वंय जान हथेली पर रख कर राजपूत सेना में पैठने को अग्रसर हुआ। इस पर मनहार मुसल्मान सिपाहियों का फिर से दिल हरा भरा हो उठा। वे लोग अल्ला अल्ला का हल्ला करके दीन की दुहाई देते हुए बड़े बेग से तेग चलाते हुए झपटे परन्तु अटल राजपूत वहे एक पैर भी पीछे न हटे। ज्यों ज्यों उधर से मुसल्मान बढ़ने आते थे त्यों त्यों राजपूत उन के सिर कुलाल के से चक्र उतारते जाते थे। वाह उन युद्ध करते हुए बांकुरे वीरों के शरीरों में घने घने घावों से बहता हुआ रक्त कुसुम सा फूला जान पड़ता था। जब किसी के सिर पर किसी सहजोर की जोर भर गुरज बैठ जाती तो उस का सर दहेंड़ी सा फूट जाता था। ढाल तलवार आदि सब हथियारों से हीन होने के कारण कोई कोई आपस में छुरी कटारी के ही मार पेंच के वार कर कर अपना रणकौशल दिखाते थे परन्तु जिनके पास यह भी नहीं वे बिचारे परस्पर मल्ल युद्ध करके ही अपने मन का हौसला पूरा करते थे।

दोनों दल के रण बाँकुरे वीरों की मारा मार के कारण समस्त रणभूमि लोथों से पट गई। तत्तार खां खुरमान खां रुस्तम खां आदि यवन वीरों ने अपना सा पराक्रम किया परन्तु राजपूत योद्धाओं से पार न पा सके। एक लाख मुसल्मान सेना बीस हजार राजपूतों का बेग न सह सकी और दो पहर बीतने ही सब मुसल्मान सिपाही तीन तेरह होकर भाग उठे। यह आपत्ति देख कर शहाबुद्दीन स्वयं भागने को विवश हुआ और घोड़े पर से उतर कर हाथी पर सवार हुआ ही था कि उसपर पहाड़ राय तूअर की आँख पड़ गई। अस्तु वह रामराय यादव, भोंहा चंदेल, लोहाना आजान बाह, पज्जून राय और विंझ राय इन पांच सामन्तों सहित शाह को घेरने के लिये चढ़ दौड़ा। मालिक पर आफत आते देख कर उधर से बीस मुसल्मान सर्दार शाह की रक्षा के लिये उतरे और इन छः सामन्तों से जुट पड़े। बड़ी देरतक दाव पेंच होते रहे परन्तु अन्त में वे बीसो सर्दार काम आए और भोंहा राय चन्देल ने हाथी के मथार पर भाला जा मारा। जब तक हाथी उसपर झरपट करे कि लोहाना आजानबाह ने एक ऐसा तलवार का हाथ दिया कि हाथी का सुंड रुंड से अलगही हो गया। तब तक पहाड़ राय तूंअर ने घोड़े को एड़ देकर हौद के बराबर जा लगाया और शहाबुद्दीन का हाथ पकड़ कर उसे अनाथ की तरह खींच लिया। बादशाह का यह हाल होते देख कर और भी मुसल्मान सिपाही जो जहां थे सो सब तीन तेरह हो कर भाग गए। शाही रख्त सब राजपूतों के हाथ लगा। इस युद्ध में सात हजार मुसल्मान सिपाही और पांच सौ घोड़े शहाबुद्दीन की तरफ के काम आए और तीन सौ राजपूत खेत रहे।

इस प्रकार से मुसल्मान सेना को परास्त करके और शाह शहाबुद्दीन को बंदी कर राजा पृथ्वीराज आनन्द के नगाड़े बजाता हुआ सानन्द दिल्ली को लौट आया। वहां पर उसने एक मास पर्य्यन्त शाह को बड़े आदर भाव से महेमान की तरह रक्खा और फिर आठ सौ घोड़े और बहुत कुछ धन रत्न दंड में लेकर उसे सादर गजनी को विदा किया। बादशाह से दंड में पाए हुए द्रव्य का आधा भाग पहाड़ राय तूंअर को दिया गया और आधा अन्यान्य सब सामन्तों को।

दिल्ली वर्णन।

उनसठवां समय।

इस देश के अन्तिम हिन्दू सम्राट महाराज पृथ्वीराज के समय में दिल्ली नगर की छवि छटा कुछ विलक्षण ही थी। राजा पृथ्वीराज के दरबार का एक निज मुसाहब एवं उसका बाल सखा छओ भाषाओं में परम पारांगत विद्वान अद्वितीय कवि चन्द बरदाई कहता है कि उस समय दिल्ली नगर साक्षात इन्द्र की पुरी के समान शोभायमान था। राजद्वार पर निरन्तर नाना प्रकार के मन हरण स्वर मय सुन्दर बाजे बजा करते थे और साक्षात् काम देव की कलाओं के से अवतार आठ सौ मतवाले हाथी सदा ड्योढ़ी पर घूमा करते थे नगर के बाहरी प्रान्त में जमुना के किनारे पर स्थित निगमबोध स्थान की बहार तो कथनशक्ति से बाहर थी। वहां पर बारहो महीने बसन्त ऋतु का वास रहता था। वहां पर जहां तहां भिन्न भिन्न प्रकार की क्यारियों में भांति भांति के तरु लता और गुल्म लहलहाते थे। सीतल मन्द सुगन्ध त्रिविध बयार बहती थी, केसर कुंकुम जाती मालती गुलाब चंपा चमेली कुद कदंब आदि के मधु की सौंधी सुगन्धि से समस्त वायु मंडल सुवासित रहता और अनार दाख बदाम श्रीखंड पिंडखजूर आम अनन्नास जिमूरी बिजौरे शहतूत अखरोट लीची नारियल आदि नाना प्रकार के फल मय वृक्ष भी संपत्ति के भार से नम्र होकर सदा मतवालों की तरह झोका लिया करते थे।

वसन्त ऋतु के दिनों में प्रातःकाल के समय महाराज पृथ्वीराज का दरबार खास प्रायः इसी स्थान पर हुआ करता था, जिसमें नाना प्रकार के मधुर स्वर वाले बाजे बजते थे और गायक गण समयोचित स्वर से उत्तमोत्तम राग रागनियों की अलापचारी करते थे। अबीर और गुलाल के झोंकों से सर्वत्र लाली छा जाती थी। बीचोबीच महाराज पृथ्वीराज का राज्य सिंहासन लगता और आस पास उसके सखा सामन्त लोग बैठते थे। राजा के सिर पर आच्छादित रत्न जटित छत्र और अगल बगल दुरते हुए मोरछर ऐसे भले मालूम देते थे जैसे साक्षात् मधुमास ही राजा पर छाया किए हो। पृथ्वीराज के बांम पार्श्व में गोइन्दराय, निडुर और सलख प्रमार बैठते और दाहने में सोमेश्वर का सगा भाई कन्ह चौहान बैठता था जिस की आखों पर सदा पट्टी चढ़ी रहती थी। गादी के पीछे साक्षात ब्रह्मा के समान विद्वान गुरुराम प्रोहित का आसन रहता और सम्मुख कविचन्द बैठता था। इसके सिवाय चन्दपुण्डीर, चामडराय, लक्खन बघेला आदि सामन्त लोग यथास्थान अपने अपने आसन पर अदब से आसीन रहते थे।

जिस स्थान पर किल्ली ढिल्ली होने के कारण इस नगर का नाम ढिल्ली या दिल्ली पड़ा उसी स्थान पर राजा पृथ्वीराज का राजमहल था। दिल्ली नगर इन्द्र की पुरी था तो राजा पृथ्वीराज के सत खने महल इन्द्र के ही महल थे; जहां पर निरन्तर अनेक प्रकार के आमोद प्रमोद से एक अनुपम चहल पहल रहा करती थी। राजा पृथ्वीराज के पराक्रम से विजित राजा लोग सदा महलों की पौरि पर हाजिर रहा करते थे। महलों के पार्श्व ही में नरनाह काका कन्ह का निवास स्थान था। जिस प्रतापी पृथ्वीराज के कारण अस्सी लाख सवारों का स्वामी कनौजराज जैचन्द हलहल कापता था और गजनीपति शहाबुद्दीन को जिसके सामन्त लोग बार बार बांध लाते थे उसकी विभूति और राजश्री का कहा तक बखान करें। पृथ्वीराज के दरबार के फर्श पर अच्छे अच्छे मुलायम गिलम गलीचे और गाव तकियों की भर मार रहती थी। चांदनी चँदेवा सब जरदोजी के थे और दीवागे में कश्मी सजावट की जगह सच्चे माणिक मोती हीरा पन्ना पुखराज और

(१) जमुना के किनारे निगम बोध करके देवी का एक मंदिर था उसी के सम्बन्ध से मुखशिखर स्थान का वर्णन है। उस समय वह एक प्रख्यात तीर्थ स्थान था।

नीलम आदि अनेक रत्न जड़े हुए थे।

मध्यान्ह काल में भोजन का समय होने पर अटाले का मालिक बनवीर परिहार सभा में आकर सादर हाथ जोड़ कर निवेदन करता। षष्ठीछमा रसोई तय्यार है। तब दरबार बरखास्त होता और अपने सब सामन्तों सहित राजा पृथ्वीराज भोजन करने बैठता, जहां नाना प्रकार के सौंधे और स्वादिष्ट भोजन परोसे जाते थे। अन्नादि षटरस व्यंजनों के सिवाय नाना प्रकार के पकवान और तरह तरह का मांस(गोश्त) भी नित्त थाल में लगाया जाता था। भोज्य पदार्थों में पड़े हुए केसर अगर कपूर आदि की सुगंधि से सारा महल महक उठता था। सब सखा सहेलरों के साथ भोजन करके किंचित विश्राम करने पश्चात् राजा पृथ्वीराज पुन.सभा भवन (दरबारे आम) में आ विराजता था। जरदोजी, जरीबाफ्ता कीमखाब वग़ैरह से मढ़े हुए और अन्यान्य राजसी आडंबरों से सुसज्जित सभा भवन के बीच में बैठा हुआ राजा पृथ्वीराज देवताओं के समूह में इन्द्र एवं ग्रहों के बीच में सूर्य्य सा सुशोभित होता था और आस्वं पार्श्व में डटे हुए सामन्त उस भानुवत् हिन्दू सम्राट की रश्मि से दीप्यमान होते थे। सभा मंडल के मध्य में गर्दा के संमुख बैठे हुए दसोंधी और गधर्व लोग मधुर स्वर से बाजे बजाने और भ्रू निक्षेप कर कर भाव बताती हुई नृत्यकी गण कलकंठ से गान करतीं और नाना प्रकार के नृत्य करती हुई चपला सी चमकती थीं। जिस समय वे रतिरानी की सी कलाएं एवं कोक की सी कारिकाएं नृत्यकी अनेकों कलाएं करके नाचतीं और कलकंठ से गान करतीं उस समय ऐसा प्रतीत होता कि इन्हे देखकर तो वल्कलधारी वैरागियों का भी चित्त क्षोभित हो जाना सम्भव है।

राजा पृथ्वीराज इस प्रकार से दिन भर तो अपनी मित्र मंडली के साथ बिताता और रात्रि को अन्तरमहल में जाकर पटरानियों के सहवास में जीवन की मौज उड़ाता था। राजा पृथ्वीराज की नव रानियां थीं।

न.	रानी का नाम	पिता का नाम	नैहर	विशेष
१	रानी इंछिनी	सलख प्रमार	आबू	जेष्ट पटरानी
२	....	परिहार राजा	मंडोवर	
३	चन्द्रावती	पुंडीर कुल	.	चन्दपुंडीर की बहिन
४	....	दाहररांय	"	चामंडराय की बहन रेनकुमार की जननी।
५	शशिवृता		देवागिरि	२६ वां समय देखो
६	इन्द्रावती			३३ वां समय देखो
७	भानमती	....	....	....
८	पज्जूनराय	....	....	....
९	हंसावती	....	....	३९ वां समय देखो

सूर्य्य रश्मियों को आच्छादित करने वाले सतखने महलों के बीच में विचरता हुआ राजकुमार रेनासी नाना प्रकार की बाल क्रीड़ाएं करता था। कुछ बड़ा होने पर अपने समवयस्क सखा सामन्तपुत्रों के साथ यमुना के किनारे भी खेलने जाया करता था। अच्छे अच्छे रंग बिरंग रेशमी वस्त्र और रत्न जटित आभूषण पहिने हुए रेनकुमार बड़ाही प्यारा और भला मालूम देता था। एक दिन जमुना किनारे खेलता खेलता राजकुमार रेनासी एक गुफा में घुस गया तो अन्दर आकर देखता क्या है कि साक्षात् शान्ति रस का अवतार स्वरूप एक तेजस्वी तपस्वी ध्यानमग्न बैठा हुआ है। उसके शरीर पर बमीठे लग गए थे और कर्ण कुहरों में कपोत एवं सुग्गों ने घर बना लिए थे। लड़कों के तालो पीट पीट कर कोलाहल करने से ध्यानावस्थित मुनि की समाधि भंग होगई। तब कार्त्तिचन्द के पुत्र ने जटा-जूट धारी अग्नि के समान जाज्वल्यमान तेजधारी मुनि के सम्मुख साष्टांग प्रणाम करके पहिले राजकुमार का और फिर अपने सब साथियों का परिचय दिया। इस पर मुनि महाशय ने सबको आशीर्वाद

देकर कहा हां मैं समझा तुम ढुंढा के कुल में हो जो कि अजयन में स्थापित अजमेर नगर का राज्य करता था। उसी ढुंढा के अंश से उत्पन्न पृथ्वीराज इस समय दिल्ली नगर का शासक है। यह दिल्ली की भूमि बड़ी विलक्षण है। यह किसी मुनि करके शापित है इसलिये इस पर कोई एक छत्र राज्य नहीं कर सकता। पहिले तो इस भूमि के लिये पांडवों ने कौरवों को मार कर अपना राज्य जमाया; पर वह भी न रहे तो तोमर राजा हुए और वे भी किल्ली ढिल्ली करके चल बसे तब अब चहुआन हैं। परन्तु इनके पश्चात् अब शीघ्रही मेवाती लोगों का राज्य होगा।

राजकुमार रेगासी गुफा से चल कर अपने सब बाल सखाओं सहित राज महल को रवाना हुआ। सब सामन्त बच्चे घोड़ो पर और उनके बीच में हाथी पर सवार राजकुमार रेगासी ऐसा सुशोभित होता था मानों देवताओं की मंडली में ऐरावत पर सवार किए हुए इन्द्र चला जा रहा हो। राजकुमार रेगासी के साथ में जो अन्यान्य सामन्तों के कुमार थे उनकी नामावली नीचे लिखी जाती है।

सामन्त कुमारों की नामावली।

क्रम	कुमारों का नाम	पिता का नाम	विशेष
१	ईसरदास	कन्ह चौहान	खड़पुर का जागीरदार
२	चन्द्रसेन	निहुर राय राठौर	
३	करनसिंह	जैतराव प्रमार	
४	सामन्तसिंह	गोयन्दराय गहलोत	
५	प्रतापसिंह	दाहिमा केसरी (राज्यमन्त्री)	
६	धीर सिंह(धीरपुडीर)	चन्दपुडीर	
७	तेजपुज	पीपा परिहार	
८	पंडित हरिदेव	गुरुराम प्रोहित	
९	नाहर सिंह	हाहुलीराय हम्मीर	
१०	पहाड़ सिंह		
११	....	चामंडराय	
१२	जैसिंह	महनसिंह परिहार	
१३	राजसिंह	सिंघ प्रमार	
१४	रनधीर सिंह	रामराय बड़गुजर	
१५	जल्हन कुमार	चन्दबर्दाई	
१६	पातल सिंह	हरीसिंह	
१७	देवराज	विक्रराज सोलंकी	
१८	अचलेस कुमार	देवराज बग्गरी	
१९	पहार राय	पज्जूनराय	
२०	हरदार	नरसिंह हाड़ा	
२१	अमर सिंह	प्रसंग राय खीची	
२२	तेज डोड	सुमेर सिंह	
२३	मिवदास	जंघारा भीम	
२४	कविदास कुमार	केसर कंठेर	
२५	आरेन कुमार	अत्तानाई	
२६		परिमाल चन्देल	

बसन्त पंचमी का उत्सव आया हुआ जानकर महाराज पृथ्वीराज ने आज्ञा दी कि बसन्त के दरबार का सामान सजा जाय। आज्ञा पाते ही सेवकों ने उस ओर परिश्रम करना आरम्भ किया। बसन्त पंचमी के दरबार के लिये नियत स्थान सजा जाने लगा। इधर प्रधान को आज्ञा दी गई और बसन्त के उत्सव पर आवश्यक समस्त सामग्री जुटाई जाने लगी। बात की बात में मनों अबीर गुलाल लाकर हाजिर किया गया। केसर कस्तूरी अगर चन्दन कपूर आदि सोंधी सुगंधिएं हरे हरे तरु लता पल्लव और बदनवारों आदि और नाना प्रकार के पुष्पों से यथाविधि सभा मंडप सजाया गया। मूती रेशमी जरतारी और तरह तरह के बसन्ती वस्त्रों की भी यथा स्थान उचित सजावट की गई। ऐसे सुसज्जित सभामंडप के बीच में श्री गोपाल लाल जी का सिंहासन स्थापित किया गया। बसन्त पूजा का समय होते ही ढोल, डफ, नगाड़े, शंख, वीणा, सहनाई, मोरचंग, झालर, घंटा, विनिघट, आदि नाना प्रकार के आनन्द वाद्य बजने लगे। पूजन हो चुकने पर कुछ देर रोशन चौकी की बजौटी होती रही, इसके बाद उत्तमोत्तम गायक गण और नाट्य विद्या में निपुण नट लोग

बुलाए गए। कन्ह, निड्डुर, गोयंद राय, पज्जूनराय, अत्तताई, और सब सामन्तों सहित पृथ्वीराज भी श्री गोपाललाल के सिंहासन के पास आ बैठे। गायकों ने गाना आरंभ किया नर्तकों ने नाचना आरम्भ किया और नट लोगों ने श्री भगवान कृष्णचन्द्र जी की नाना प्रकार की लाला विहार के नाटक खेल कर दर्शक मंडली को मुग्ध कर दिया। आधी रात के उपरान्त दरबार बर्खास्त करके राजा पृथ्वीराज ने सब लोगों को इनाम देकर बिदा किया और वह आप भी अन्तर महल में विश्राम करने चला गया।

इसी प्रकार नाना भांति के रासरंग और आमोद में समय विताता हुआ राजा पृथ्वीराज दिल्ली राज्य की राज्यश्री का सम्पूर्ण रूप से सुख भोग कर रहा था।

जंगम कथा।

(साठवाँ समय।)

एक समय की बात है कि राजा पृथ्वीराज समस्त सूर सामन्तों सहित सभा में बैठा हुआ राजसी रसरंग का आनन्द आस्वादन कर रहा था। संगति विद्या और नृत्य कला में अत्यन्त निपुण, हाव भाव कटाक्ष और अन्यान्य स्त्रियोचित कला चातुर्य्यों में चित्र रेखा को भी चुटकियों चलाने वाली, एक अनुपम स्वरूपवती वेश्या ताल के तारतम्य से बँधी हुई लै में, ऊंची नीची चल फिर और आड़ी सीधी लौट फेर करती हुई, समयोचित स्वर से अच्छे अच्छे राग रागनियों में मनोहर गीत गाती और बात बात पर भाव बताती हुई राजा पृथ्वीराज के सहित समस्त उपस्थित सभासदों का चित्त चुरा रही थी।

उसी समय कनौज से आया हुआ एक जंगम आ पहुंचा। उसके आतेही पृथ्वीराज ने सौ स्वर्ण मुद्रा और एक घोड़ा इनाम में देकर वेश्या को तो विदा किया और दरबार बर्खास्त करके आप उस जंगम से वार्तालाप करने लगा। पृथ्वीराज ने उक्त जंगम से पूछा। कहो क्या समाचार लाए? तब वह बोला महाराज सुनिए। कनौजराज जैचन्द के यज्ञ में निमन्त्रित हजारों राजा उपस्थित थे। अतः उसी समय सुअवसर देखकर जैचंद ने संयोगिता का स्वयंवर भी रच दिया। आपकी स्वर्ण प्रतिमा छड़ी लिए हुए द्वारपाल के स्थान पर स्थापित तो थी ही बस उसी यज्ञ मंडप में निमंत्रित राजा लोग आ आ कर बैठने लगे। मुहूर्त आने पर संयोगिता भी चौंसर हाथ में लिए हुई सभा में लाई गई। कनौज का राजकवि आगे होकर एक एक राजा के नाम ग्राम और उनकी करनी करतूत बखान करने लगा। इसी तरह होते होते जब उस कवि ने आपकी प्रतिमा के पास आकर आपका नाम लिया और यश बखान किया तो संयोगिता उसी के गले में चौसर पहिना दी। यह समाचार पाकर जैचन्द ने कहा! नहीं, बेटी चूक गई फिर से फेरी की जाय। निदान ऐसा ही किया गया पर फिर भी संयोगिता ने अन्य किसी राजा की ओर आंख उठा कर देखा भी नहीं और स्वर्ण प्रतिमा पर जैमाल मेली, परन्तु फिर भी पंग ने न माना और तीसरी फेरी फेरी जाने की आज्ञा दी, इस बार कवि लोगों ने भी अपनी सी चतुराई करने में फेर न लगाया उन्होंने अन्यान्य सब राजाओं के बढ़ बढ़ कर बखान किए और आपका केवल नाम कह दिया पर फिर भी संयोगिता ने उसी स्वर्ण प्रतिमा को वरा।

यह हाल देख कर राजा जैचन्द मोह क्रोध ग्लानि और ईर्षा से अत्यन्त व्यथित होकर बेहोश सा हो गया। वह उसी समय सभा से उठकर अन्तर महल में चला गया और होनहार को प्रबल जान छाती पर घूमा मार कर चुप रह गया। उसे ऐसा बेहाल देख कर उसके मंत्री ने कहा "हे राजन् होनी अमिट होनी है उस पर किसी का चारा नहीं चलता। होनहार के ही कारण दक्ष प्रजापति का यज्ञ भंग हुआ। होनी के कारण राजा पांचाल का यज्ञ बिगड़ा और इसी होनहार के कारण राजा नघु को नर्क में पड़ना पड़ा। कहने है कहन बावरा और सुनता सावधान, सो हे राजन् यद्यपि चतुर लोग विद्याओं के बल से भूत भविष्यत वर्तमान तीनों काल की बात विचार करके कार्य्य करते हैं परन्तु सचमुच भविष्यत होनहार क्या है सो कोई नहीं जानता, इस लिये, बीती ताहि बिसार कर आगे की सुधि ले इस पर जैचन्द ने कुछ संचेत होकर संयोगिता को गंगा के किनारे के महलों में रहने की आज्ञा दी। जब से संयोगिता को गंगा के किनारे के महलों में रहने की आज्ञा दी गई तब से वह बराबर वहां रहती है और नाना प्रकार के जप पूजन व्रत और देवार्चन करके आपका ध्यान

(१) जमाल।

करती और अहर्निशि आपही का स्मरण किया करती है। राजा पृथ्वीराज बड़ी सावधानी से ये सब बातें सुन रहा था। तब तक एक सूफी फकीर भी आ पहुंचा और कुछ ऊपर से नमक मिर्च मिला कर उसने भी यही कथा कह सुनाई।

उक्त जंगम और सूफी फकीर ने कन्नौज की कथा कही मानो पृथ्वीराज के जले हुए कलेजे पर नमक मल दिया। पृथ्वीराज एक क्षण भर के लिये छटपटा गया परन्तु कुछ सोच विचार करके शान्त हो गया और अपने चचेरे भाई ईसरदास और भूपतसाह को बुला कर इधर उधर की बातें करने लगा। तबतक मध्यान्ह काल का समय होने को हुआ। इस लिये पृथ्वीराज ने निर्मल गंगाजल से स्नान करके मध्यान्ह काल की संध्या की और वह भोजन करने के लिये अटाले में चला गया, परन्तु लगी के मारे योंही लिए दिए भोजन करके अपनी एकान्त रङ्गशाला में जा लेटा। लगी बुरी होती है। वह लगी काहे की जिसमें आंख लगे। फिर भी ऊपर से बसन्त की बहार जो कि विरहाग्नि की ज्वाला को जर्जरीभूत करने के लिये आहुति से कम नहीं है। बन बाग उपबन सर्वत्र फूले हुए नाना प्रकार के पुष्पों की पराग मिश्रित त्रिविध बयार और जहां तहां वृक्षों पर उच्चस्वर से कोकिलों की पुकार पृथ्वीराज को अत्यन्त असह्य होने लगी।

उस दिन संवत ११५१ फाल्गुण कृष्ण नवमी थी। दो पहर से संध्या हो गई कुछ अन्धेरा भी हो गया परन्तु न तो पृथ्वीराज को निद्रा आई न उसने अपनी ध्यानमुद्रा खोली। इसी प्रकार आगा पीछा सोचते सोचते जब प्रहर रात्रि होने को हुई तब उसने कविचन्द को बुलाया। थोड़ी देर में कविचन्द भी आ पहुंचा। पृथ्वीराज ने सादर आसन देकर उससे कहा "हे कवि तुम जानते हो कि जैचन्द ने मेरी कितनी अप्रतिष्ठा की है। मुझे ऐसा तिरस्कृत जीवन तो भार मालूम होता है। तिस पर भी तुर्रा यह है कि संयोगिता ने मुझे वरने का प्रण लिया है। सो भी तुम जानते हो। इस लिये अब जैसे कुछ बन पड़े सो कन्नौज के चलने का विचार करो। यह सुन कर कविचन्द बोला "महाराज शास्त्र की आज्ञा है कि किसी को कहीं जाते समय रोक टोक न करनी चाहिए परन्तु आपने पूछा है इसीसे कहता हूं। आप जैचन्द के बल को जानते हैं अभी हाल की बात है उसकी किंचित् सेना ने आपके सारे राज्य में हलचल मचा रक्खी थी। हजारों गांव खड़े जला दिए गए और सारा देश लूट पाट कर उजाड़ दिया था। मैं नहीं समझता कि जान बूझ कर किसी महज़ोर के सामने जा जुड़ना कौन भी बुद्धिमानी है। भला विचारिए तो सही! कौन ताल ठोंक कर जमराज की जिह्वा पर जाता है? कौन मतवाले हाथी से हाथ मिलाता है? कौन समुद्र को पैर कर पार करना चाहता है? अथवा कौन सुमेरु शिखर को भी हथेली पर रखने की हिम्मत कर सकता है! यही सब सोच समझ कर कन्नौज जाने की इच्छा कीजिए। होना तो वही है जो होनहार होती है परन्तु अपना आगा पीछा विचार कर काम करना बुद्धिमान का कर्तव्य है। इसी प्रकार और भी कविचन्द ने बहुत कुछ कहा सुना परन्तु पृथ्वीराज ने सब अनसुना कर दिया और कहा कविचन्द कन्नौज को कब चलोगे? कविचन्द ने अपने बसभर सब तरह से समझाया परन्तु पृथ्वीराज ने एक आंख न मानी दोनों को बैठे बैठे जब रात्रि का तीसरा प्रहर हो गया तब कविचन्द को विवश होकर हां करनी पड़ी। हां कहा कर तब राजा ने कवि को छुट्टी दी और तभी आप सोया।

किंचिन्मात्र रात्रि शेष रहते गुणीजनगायक लोग राजद्वारे पर हाजिर हुए और अपने नित्त नियमानुसार वीणा बजा कर कलकंठ से गान

(१) मूल पुस्तक में महीनों का नाम नहीं लिखा है परन्तु आगे विवाहादि के विचारने से मालूम होता है कि फाल्गुण मास था।

करने लगे। आकाश में तारागणों के फीके पड़ने ही वे लोग चुप हो गए और उनके स्थान में बन्दी और कवि लोग विरद पढ़ने लगे। बांदियों ने कहा पृथ्वीतल पर अद्वितीय तेजस्वी राजा पृथ्वीराज को धन्य है। जब वह अपनी सभा में विराजमान होता है तो इन्द्र एवं कुबेर सा सुशोभित होता है। इस पृथ्वीतल पर जो जो प्रतापी पुरुष हो गए हैं उनमें से अब एक भी नहीं है। न हयहय वंशी सहस्रबाहु है न कालिया का नथैया कन्हैया है, न राजा बलि है न लंकापति रावण है। बस इस समय यदि कोई प्रतापी पुरुष है तो अनलकुल में उत्पन्न सोमेश्वर का सुत महाराज पृथ्वीराज हैं। तब तक भास्कर भगवान का प्रकाश हो आया। राजा पृथ्वीराज शय्या से उठा और नित्य क्रिया में निश्चिन्त होकर शिकार खेलने को जाने के लिये तैय्यार हुआ। जामराय यादव, बलिभद्र राय, विक्रमराज, महनसिंह, पीपा पड़िहार, लंगरी राय का भाई, रामराय बड़ गुज्जर, लोहाना आभानबाह, अचलेस भट्टी और हाहुलीराय हम्मीर ऐसे दस पांच सामन्त भी राजा के साथ हो लिए। सब लोग चलते चलते दिल्ली से पांच कोस के अन्तर पर एक सघन बन में जा पहुंचे। वहीं पर एक बनरखे ने खबर दी की एक खोह में एक बड़ा भारी बाराह पड़ा हुआ सो रहा है। यह सुनते ही पृथ्वीराज मौका बांध कर जा खड़ा हुआ। उसने आप तो तुरक छाती चढ़ाई और बनरखे को हुक्म दिया कि सुअरों को हांके। बनरखे की आहट पाकर वह सुप्त सूअर बिजली सा तड़प कर भाग चला। उस दीर्घकाय भयानक बाराह की खीसें जादू की दो जुन्हैया सी देख पड़ती थीं। सूअर का हांक कर के पास से निकालना और राजा का फैर करना साथही हुए। गोली सूअर के ठीक टीके पर लगी जिससे वह एक उछाल मार कर तत्काल ही समाप्त हो गया। सब लोग राजा के निशाने की वाह वाह करने लगे और उस दिन का शिकार वहीं पर समाप्त हुआ।

इस प्रकार शिकार खेल कर राजा पृथ्वीराज महलों को चला गया। दूसरे दिन प्रातःकाल शिवजी का पूजन करने गया। धन्य है उस सर्वव्यापी आशुतोष सदाशिव को जिसे नर नाग असुर सुर गन्धर्व इत्यादि सब पूजते हैं। उस देवताओं के देवता महादेव के शीश पर सुशोभित जटा जूट और उज्वल गंगधारा के दर्शन मात्र से पुरातन पाप पींतगे भस्म हो जाते हैं। उसके ललाट पट में चन्द्रमा और उसी के पास जाज्वल्यमान तीसरा नेत्र सुशोभित है। पंचमुखी शिवजी के शीश पर लसत पंच स्वर्ण मुकुट ऐसे सुशोभित होते हैं जैसे गंगा के उपकंठ में सुमेर शिखर स्थित हो। ऐसे भोलानाथ के गले में कालिया सर्प लिपटे और हृदय पर रुंडमाला रुलती है व्याघ्रचर्म का कोपीन और गज चर्म का आसन जिनका। यावत तीनो लोकों के त्रिविध ताप नाश करने वाली त्रिशूल जिनके बाएं हाथ में है और डिम डिम शब्द करने वाली डमरू दहिने हाथ में। संसार की शक्ति स्वरूप अर्धांङ्गिनी पार्वती जिनके बाम पार्श्व में विराजमान रहती है और स्यामकार्तिक और गणेश समुख। एक मात्र एक बूंडा बैल है वाहन जिनका ऐसे उस कैलाशवासी शिव के स्मरण मात्र में समस्त सांसारिक पाप पलायमान हो जाते हैं। ऐसे शिवजी के शिवालय के दर्शन करतेही पृथ्वीराज का चित्त प्रसन्न हो गया। उसने दूरही से माथा नवाया और विनीत भाव से मनही मन प्रार्थना की कि हे शिव मेरी रक्षा कर।

इस प्रकार मन ही मन वंदना करते हुए पृथ्वीराज ने पुनः गंगाजल से स्नान किया और दिव्य वस्त्र धारण कर शिवार्चन के लिये सन्नद्ध हुआ उस समय वह ऐसा भला मालुम होता था मानो हरिद्वार में तप करनेवाला कोई दिव्य तपसी हो। षडंग का पाठ करते हुए ब्राह्मण मंडली के साथ पृथ्वीराज शिवालय में पहुँचा और शिवजी को मस्तक नवा कर पूजन करने बैठा, मनही मन नमस्कार करके शिवजी का ध्यान करते हुए उसने दो हजार घड़े गंगाजल चार हजार घड़े जमुनाजल

एक हजार घड़े दूध एक हजार घड़े दही, पांच सौ घड़े शहत और पाच सौ घड़े काश्मीर, इस तरह नौ हजार घड़े से शिव जी के प्रथम स्नान करवाए। फिर केसर कस्तूरी कुंकुम आदि सुगंधिमिश्रित सौ घट गुलाबजल से स्नान कराए, तत्पश्चात् चन्दन चावल और बेलपत्र चढ़ा कर मन्दार मालती पंचजाती इत्यादि अनेक प्रकार के पुष्प माला चढ़ाए। पान सुपारी, धूप, दीप, नैवेद्य आदि सब तरह से विधिवत शिवार्चन करके उसने विनीति भाव से अस्तुति की, प्रदोष की कथा सुनी और नाना प्रकार के दान देकर ब्राह्मणों को सन्तुष्ट किया। पूजन हो चुकने पर कविचन्द ने कहा कि अब महलों को चलिए और तदनुसार पृथ्वीराज शिवस्थान से घर को आए।

———:o:———

कनवज कथा।

[इकसठवां समय।]

षट ऋतु वर्णन।

उस मायावी सुग्गे की कही हुई संयोगिता के रूप गुण की गाथा पृथ्वीराज के अंतर में बस गई। तिसपर भी जैचन्द का वैरभाव तो उसे और भी बे चैन किए हुए था। उसने एक दिन कविचन्द से कहा क्या तुम आगामी ग्रीष्म में मुझे कनौज दिखलाओ गे? देखो वहां चलने से एक तो दूसरा दरबार देखने को मिलेगा, दूसरे अपना अद्वितीय बल पौरुष प्रगट करने का अवसर हाथ आवेगा, जिस से लोग अपनी सुकीर्ति बखानेंगे और उसे सुन कर अपने को सुख होगा। तीसरे यह बात है कि जो अपने को हीड़ना * हो उसकी बात रखना भी क्षत्रियों का परम धर्म है। यार! है क्या जिंदगानी में पानी भरी खाल है। इस लिये दिल की भरी निकाल डालना ही अच्छा है। यह सुन कर कविचन्द ने कहा "परन्तु यह नभी हो सकता है जबकि आप शूरवीरी नाक में रख कर छद्म वेष धारण करें। कविचन्द की यह बात राजा को गुड़ भरा हंसिया होगई "न लीले बनें न उगले" पृथ्वीराज चुप रह गया।

वसंत।

इस प्रकार कविचन्द का रुख लेकर पृथ्वीराज रानी इछिनी के महलों में गया और उससे बोला प्रिये! मैं कनौज को जाना चाहता हू। तुम्हारी क्या इच्छा है? यह सुनते ही रानी इछिनी का गला भर आया और हिचकी बँध गई; परन्तु उसने कुछ सँभल कर गद्गद कंठ से उत्तर दिया। उसने कहा हे प्राणनाथ काले काले तमालों में लाले लाले पत्ते निकल रहे हैं, डहडही कोपों के बीच से रसभरी लहलही कलियां मुकुलित हो रही हैं और सीतल मंद सुगंधित त्रिविध बयार सहज ही दिल को बेहाल कर रही है। कामाग्नि की उद्दीपक कलकंठी कोयलें कूकू कलाप करती हुई मानो कह रही है कि हे संयोगी जनो बसन्त की रातों में मजे से सेज पर मौज मारो। देखिए तो ये आम बौर रहे है, कदम्ब फूल रहे हैं और उन पर लदे हुए वृंद के वृंद मकरन्द लोभी मलिन्द मदान्धों की तरह आनन्द से मन्द मन्द झूल रहे हैं। रात्रि सम है, वायु निर्दोषहै, और वृक्षों में लगे हुए लाल लाल पत्ते दूर से देख पड़ते हैं। इस लिये हे नाथ नेक मेरी ओर निहारिए और विचारिए कि बहते पानी की तरह जवानी के दिन जो गए सो गए। प्यारे! मार्तण्ड का ताप अधिक हो जाने पर जब जंगलों में धुँवाधार आँधीवा चलने लगता है तब भौंरा अपनी सदा संघातिनी कलियों को छोड़ कर कमल कली पर कल्लोल करने जाता है। रस का लोभ उसे कमल कली में धसने को कहता है पर फँसने के भय से झिझकता हुआ अपनी भौंरी के सहित ऊपर ही ऊपर मंडराया करता है। बलहीन भौंरे तो योंही भटक कर चले जाते है भोगी अपनी भौंरी का साथ नहीं छोड़ते परन्तु अमल रसिया कली में धस जाते है और फस जाते है। बस फिर उसकी स्नेह रूपा भौंरी उसी कमलकली पर भ्रमती हुई जलप तलप कर रात्रि बिताती है। प्रातःकाल जब कली खिलती है और भँवरा निकलता है तो भौंरी उसके साथ होकर आनन्द के गीत गाती हुई फूली अंग नहीं समाती है।

इस बसन्त ऋतु में जब कीट पतंगों की यह दशा होती है तब मनुष्य की क्या कहना है। यह बनवासी तपास्वियों को ताड़ना देने वाला, विरही जनों के हृदय को विदग्ध करने वाला, मनसिज का सच्चा

* हीडिबउ तिहि काज दुरु सुज्जह भाणिउजे = विछोह के कारण उत्पन्न हुई व्याधि को 'हीडना' कहते है। जैसे अमुक बालक अपनी माता को हीडता है अथवा अमुक मनुष्यों को रात दिन अपनी बेबसी को 'हीडना रहती है।

(२. पहाड़ो, पहाड़ो या जंगलो मे जो आग लगती है उस दवारि कहते है।

सखा वसन्त एक मात्र संयोगिता को सुख देता है। अस्तु हे कंत इस वसन्त में अनत कहां जाते हो मेरे साथ एकान्त में सुरतान्त का सुख लुटिए। यों कहते कहते रानी इंछिनी के चानक से सलोने नेत्रों में नीर भर आया, जिसे देख कर पृथ्वीराज का भी दिल अधीर होगया और वह वसन्त ऋतु भर इंछिनी के साथ रहा।

ग्रीष्म।

वसन्तऋतु रानी इछिनी के साथ बिताकर ग्रीष्म का आरम्भ होते ही सदैव कामातुर राजा पृथ्वीराज रानी पुंडीरनी * के पास गया और उस से भी वही बात कही कि सयोगिता का प्रण पालन और जैचन्द का दर्बार देखने के लिये मै कन्नौज को जाना चाहता हूं। यह सुन कर रानी पुंडीरनी बोली इस गरबीली ग्रीष्म की गर्मी में भी कोई घर से बाहर होता है? चारों ओर धुवांधार धूलि उड़ रही है ऐसे में कैसे रास्ता सूझ पड़ेगा? आज कल दिन तो इतने बड़े होते है कि काटे नहीं कटते और रात जाने नहीं जानी जाती। प्रखर वैश्वानर द्वारा समस्त जल कर्पित हो जाने के कारण रस नीरस हो रहा है। चकवा चकवी प्रसन्न चित्त हैं। तनिक सा दिन चढ़ते ही आग की सी झार लू चलने लगती है जिसके स्पर्श से मनुष्य के शरीर का उत्तापित होना तो बातही क्या है बड़े बड़े ताल तलैयों का कीच निकल आता है और उनमें पड़ी हुई मछलियां तलफ तलफ कर तन तोड़ती है। पतझाड़ हुए भए बड़े बड़े वृक्ष दिगम्बर से खड़े देख पड़ते है। ऐसे विपत्ति सूचक समय में कहा फिरिएगा। आह! दिन में दिवाकर के दर्शन क्या होते है साक्षात् अग्नि देव का प्रकोप देख पड़ता है। आकाश में अच्छादित सघन धूलि के कारण दिशाओं का भी ज्ञान नहीं रहता। आतप के अत्यन्त ताप से बन तो इस तरह तपता है कि सर्वाङ्ग, चन्दन चुपरने से भी चैन नहीं पड़ता। वसन्त की शीतल मंद सुगन्धित पवन का अब पता भी नहीं है। उसके स्थान में जहा तहां बगरूड़े और अँधौवा चलते हैं। कामाग्नि जनित विरह व्यथा के कारण हाथी बेहाल होकर बन बन डोल रहे हैं। और फौजों के यूथ के यूथ जो जहां थे सो तहीं रह गए है। पथिक बधूटिया पिया का मुखचन्द देखने की चाह में देहरी द्वारा ताकती रहती हैं। भला देखिए तो जब लोग बाहर से आ आ कर घर में रहते है तभी आप अपनी प्रिया को विरह के मुह में डाल कर बाहर जाना चाहते है! एक तो इस गरमी में आप स्वन सूखना है ऊपर से वियोग की झार! विचारिए तो मेरी क्या दशा होगी! उधर ताल तलैया नदी नालों में जल नहीं, सर पर कड़ाचूर धूप पड़ना ऐसे समय आधी रात में मजल करना आप को भी अत्यन्त कष्टसाध्य होगा; बस मेरी यही विनती है कि इस समय घर न छोड़िए देखिए तो कैसी गरमी पड़ रही है और तो क्या शरीर के पहने हुए गहने भी हाथ में नहीं छुए जाते। रह रह कर चित्त ऊब उठता है और शरीर में पसीने के पनारे चल रहे हैं ऐसे में पंग का दरबार देखकर क्या कीजिए गा।

रानी पुंडीरनी के ऐसे बचन सुन कर पृथ्वीराज क्षण भर के लिये अपने को भी भूल गया। रानी भी पावस के आरम्भ की सी बेलि पृथ्वीराज के गले में लिपट गई। बात की बात में सावन का सामान सज गया *। रानी सोलहों शृंगार और

---

* चामंडराय की बहिन राजकुमार रेणसी की जननी।

(१) छीन जलधर "वैसनर" वैसनर शब्द प्राकृत है इसी का संस्कृत पाठ वैस्वानर है। चलती भाषा में वैसुअर या सुन्नर भी कहते है वैस्वानर शब्द का मूल अर्थ बोधक आग्नि। वैस्वानर सूर्य्य का एक नाम भी है।

* यहा अन्योक्ति अन्योन्य या विरोधाभास आदि अलंकार न समझिए। एक वास्तविक बात का कथन किया गया है। पहिले समय में राजमहलों में खासखास कमरे बनाए जाते और ऐसे जरूरी सामानों से सजाए जाते थे कि उनमें जाते ही वर्त्तमान ऋतु का विरोधाभास भासित होने लगे। पावस वाला कमरा प्राय जमीन के अन्दर तहखाने में होता है। उसमें भांति भांति के बेलों विताल फुलवारी आदि सजाए जाते है फुहार से पानी बरसाया जाता है और उसकी छत पर बड़े बड़े पत्थर के ढोके लुढ़का कर बादल गरजाया जाता है।

बारहो आभूषणों से सजकर सखियों सहित मलार गाने लगी। सुगंधित कुमकुमी रंग के मंद मंद बुंद भी बरसने लगे। रानी के कानों के जड़ाऊ ताटंक बिजली का काम देने लगे और कटि की मेखला और पैर की पाजेब का शब्द पावस के पक्षिओं का सा रव भासने लगा। तात्पर्य यह कि चतुर्दिक लहलहे बेलिवितान और घनसार अगर केसर पान आदि की रचना से रानी पुंडीरनी की चित्रसारी साक्षात् पावस की पिटारी बन गई। इस प्रकार पृथ्वीराज ग्रीष्म भर रानी पुंडीरनी के साथ रहा।

पावस।

ग्रीष्म का अवसान और पावस का प्रारंभ होते ही पृथ्वीराज रानी इन्द्रावती के पास बिदा मांगने गया। पिया प्यारे का मुखारविंद देख कर इन्द्रावती का दिल दंग हो गया परन्तु चलाचली का समाचार सुनते ही तो वह सन्न रह गई। उस सुन्दरी के मलीने नैनों के कोयों में अश्रुकण झलक पड़े। अश्रुकण क्या झलके मानों उसके आंतरिक क्रोध का ऊफान ऊपर आगया। वह पृथ्वीराज से बोली। प्यारे! देखिए तो सही ये आठों दिशाओं से कारे कारे घुआधार बदल झुंप आते हैं। दादुर दम नहीं लेते, मोर शोर करते हैं और पपीहा पीउ पीउ पुकार रहे हैं, वसुन्धरा की शृंगार स्वरूप स्वच्छ सलिलमय सरिताएं समुद्र में मिल कर कलोलें करती हैं, रात और दिन दोनों इस समय बराबर हैं। भला ऐसे पावस में भी कोई पथिक घर से बाहर होता है? कीच और कूड़े के कारण रास्ता सूझ नहीं पड़ता। दशों दिशाएँ धूंधली हो रही हैं। रात दिन बदल छाए रहते हैं और नाना भांति की नवीन तरुलताओं एवं नवेली बेलियों से भूमि भरी हुई है। प्रस्फुटित पुष्पयुत बेलियां बड़े बड़े वृक्षों से लपटी हुई और वसुधरा आकाश को आलिंगन करती हुई मानो मानिनियों को शिक्षा देती है कि भर भादों में प्यारे के गले मिलने कर गहरा रंग छाना। घन की घनघोर घरघराहट के कारण पलभर सुचित्त होकर नींद नहीं आती। तलातल भरे हुए ताल तलैयों को देख कर सहजही हृदय बेहाल होता है और रात दिन पानी की झड़ी लगी रहती है, ऐसे में कोकिल भी कू कू करती हुई मानो पांच बाण के बाण छोड़ती है। आह! आकाश में अम्बर के आडम्बर और यह लगातार मूसलधार वर्षा देख कर दिगम्बर भी देहरी के बाहर कदम नहीं देते। जिस समय जोर से बादल तड़कता है और उसके बीच में मृग सावक के नेत्रों की तरह चपला चम-चमा जाती है, पपीहा पीउ पीउ की पुकार करते हैं, बेलिया आलिंगन का स्मरण कराती हैं उस समय विरहनी के हृदय पर कैसी बीतती है सो वही जानती है। इस समय कुसुममरधारी मकरकेतु ने मानों दसो दिग्गजों को दबा कर प्रकृति पर अपनी पताका रोप दी है और विषय रस राने इन्द्र ने भी उसकी सहायता के लिये अंतरिक्ष में धनुष[1] चढ़ा रक्खा है।

नाना प्रकार के नवीन पेड़ पौधों को फूल पत्तियों और जड़ी बूटियों से परिपूर्ण और हरी भरी भूमि को देखकर दिल दंग हो जाता है। वृक्षों की शाख प्रतिशाख से लिपटी हुई बेलियां हवा के झोंकों में मन्द मन्द झूलती हैं और उन पर बैठी हुई कलकंठी कोयलें रात दिन कूकें दिया करती हैं, जहां तहां ताल तलैया तन कर भरे हुए हैं और उनमें सुन्दर कु-मोदिनी खिल रही है। नदिया आरपार चढ़ी घोर शोर करती हुई बहती है और किनारे पर मेढ़क टर्राते हुए मानो बहरों की नकल करते हैं। कभी रिमझिम मेह बरसता है और मेघ को बिजली लपकती है। कभी मेह की कड़ी झड़ी लग जाती है, जोर से बदल कड़कड़ाता तड़तड़ाता और गड़गड़ाता है। जहां तहां पहाड़ों में झरने झरते हैं और तृण पात पूरित भूमि पर नाना प्रकार के उद्भिज क्रीड़ा करते हैं। झिल्ली झंकारती हैं और जुगनू जगमगाते हैं, सुन्दर सरोवरों के किनारे हंस सावक प्रसन्न मन

(१) इन्द्र धनुष।

होकर कल्लोलें करते हैं और मौज से पर झाड झाड़ कर बोला करते हैं, ऐसे पावस की बहार में प्रवासी बन, बन बन भटकना अच्छा नहीं। सुख से संयोग का रस लीजिए, श्रावण भादव गुजर जाने दीजिए, फिर आपकी मौज आवे सो कीजिए। देखिए जो बिजली अँधेरी रात में दमक कर और के लिये उजेला करती है वही बिजली बिरहनी की आंखों पर मलाई का काम करती है। वे मेह बुन्द जो मन्द मन्द बर्ष कर त्रिलोक का ताप हरते है सो बिरहनी के हृदय पर अगारों का काम करते है, इस तरह से इन दिनों बिरही बियोगी का पल पल कल्प सा व्यतीत होता है परन्तु संयोगिना तो मानो सा-क्षात् रस के सरोवर में गोते लगाती है। बस मेरी बिनती यही है कि मुझे अकेले छोड़ कर पावस में प्रवास न कीजिए नहीं तो मै समझू गी कि प्रीति प्रतीत सब तुच्छ है।

शरद।

पावस भर इन्द्रावती के साथ रह कर शरद ऋतु का आरम्भ होते ही पृथ्वीराज ने पुनः प्रस्थान करने की इच्छा की। इस बार हंसावती से मिलने गए और उससे कहा, हे प्रिये मैं कन्नौज को जाने की इच्छा करता हूं। राजा के ऐसे बचन सुन कर वह बोली, हे प्राण नाथ! मैं आपकी इच्छा में विघ्न नहीं करती परन्तु केवल इतनी अर्ज करती हूं कि शरद ऋतु की चटक चाँदनी चार दिन की है गई सो फिर आने की नहीं। इस समय या तो वे सुखी हैं जो अविवाहिता हैं और पिता के घर रह कर बालक्रीड़ा में समय बिताती है, या वे जो अपने प्रीतम चन्द्रमुख को चूम चूम संयोग रस रूपी सुधा का स्वाद लेती है। राजा महाराजा एवं छत्रधारी लोग अपने अपने छत्र सज कर दसों दिशाओं में दौरा करने के लिये राजधानियों से चल पड़े हैं। सोंधी सुगंध वाले स्वेत स्वेत पुष्प खिल रहे हैं और उज्ज्वल चन्द्रमा सब रात जगमगाती है। बस और क्या कहू मेरी इतनी बिनती मानिए कि मुझे इस शरद के दुःख दरद से बचाइए।

प्यारे! इस शरद की चटक चांदनी रात्रि में उन्हीं की मौज है जिनके मन से लज्जा निकल गई और जिन्हें दांपत्य सुख का नित नव चाव रहता है। देखिए तो पृथ्वी आकाश दोनों पर कैसे फूल फूल रहे हैं। मान सरोवर में हंसों के कलरव के कारण कान नहीं दिया जाता। हां ये निर्मल जल में खिले हुए कमलपुष्प शीत काल के लगते ही जल कर जल ही में विलीन हो जायगे। इससे भी बढ़ कर दशा उन वियोगिनी स्त्रियों की है जिनके पिया परदेश में हैं. अहा कैसा उज्ज्वल आकाश है दर्पण की तरह दमदमा रहा है। चन्द भी सुधा की धारें वर्षा रहा है। समुद्र सर सरिता आदि सब का जल ऐन उज्ज्वल है उन में जहां तहां कमल और कुमोदिनी पुष्प प्रफुल्लित हो रहे हैं और बागों में फूले फूले लता पत्रों पर आच्छा-दित भ्रमर अजब ही छटा छाते है। इन दृश्यों से मानो महमा कामज्वाला प्रज्ज्वलित होकर नस नस में बस जाती है और अपने स्नेह भाजन को गले लगाए बिना वह तन की तपन कदापि नहीं बुझती। यह सुठि सुन्दर सोहावनी शरद ऋतु सत् रज तम तीनों गुणों की समान उद्दीपक है। घर घर अच्छे दिए जगमगा रहे हैं और जेजेकार शब्द हो रहे हैं। स्त्रियों के परस्पर झुंड के झुंड मिलकर नाना प्रकार के व्रत और पूजन विधान करते हैं और सन्ध्या सबेरे कलकंठ से सुन्दर गीत भी गान करते हैं। चकवी चाकिन चित्त है, चकोर चन्दा में चित्त लगाए रात्रि भर उसी की ओर आँखें लगाए रहता है। ब्राह्मण बृन्द के बृन्द चन्दन पुष्प धूपादि सहित षोड़श मामग्री से जहां तहां देवार्चन करते है और घर घर दिव्य कार्य्य आरम्भ हो जाते हैं। कारी कन्याएं * नौरता नहाती हैं और प्रज्ज्वलित

(१) सलाई फेर कर अन्धा किया जाता है।

*नारता—क्वार के शुक्ल पक्ष में नवरात्रि का आरम्भ होते ही क्वारी कन्याएं नौरात्रि भर बराबर प्रातः काल स्नान करके

दीपयुक्त झंझरी सिर पर रखकर गाती हुई गैल गैल परिक्रमा लगाती हैं। देवी के मंदिरों में पंडित और ओझा लोग दुर्गा पाठ करते हैं और क्षत्री लोग महिष और अज आदि का बलि प्रदान करते हैं। इस समय चन्द्रमा अपनी सम्पूर्ण कलाओं से अट्ठारहों प्रकार की वनस्पति एवं जड़ी बूटियों को अमृत से पोषण कर रहा है इस लिये इन शरद काल की कामोद्दीपक निर्मल रात्रियों में स्त्री के साथ सो करही समय बिताना शुभ है।

इस तरह से अविवाहिता स्त्रियाँ तो नौरता उजे लेने की ध्वनि में नित नव आमोद कर कर शरद के दिन बिताती हैं; परन्तु वे बड़भागिनी जो पिया का मुखचन्द देख चुकी हैं स्वयं शरद की प्रतिमा स्वरूप होकर समय बिताती हैं। सुहागिनों के पिया का मुखचन्द चन्द तो है ही उनके युग यौवन कमल एवं कुमोदनी से, दोनों मनरंजन अंनमय नेत्र खंजन से है और चन्द्रमा से श्रवित स्वाति बुन्द के कारण जो मोती उत्पन्न होता है सो उनके सीप से उज्ज्वल स्वेत आवरण में उनके अमोदमय मन मोती नित नए रंग दिखाते है। अस्तु यदि आप मेरी बात को कुछ भी समझें अथवा आपको यदि चतुर चित्त की कुछ भी रीझ बूझ है तो कृपा करके इस शरद में मेरे दिल को दरद देकर देहरी बाहर होने की इच्छा न कीजिए।

हेमन्त।

शरदऋतु का अवसान होतेही पृथ्वीराज ने पुनः कन्नौज को कूच करने की इच्छा की और इस बेर रानी कूरम्भी के महल में जाकर उसकी आज्ञा चाही। चला चली की चरचा सुन कर रानी कूरंभी बोली "आर्य्य पुत्र! इस हेमन्त में दिनदिन दिनछीन हो रहे हैं।दिवाकर का दर्प मन्द पड़ रहा है और अमद्य शीत के साथ साथ रातें बढ रही हैं। इन दिनों तो अर्द्धाङ्गिनी को आलिङ्गन कर गुदगुदी शैय्या पर सोने में जो मौज है सो किसी में नहीं है। यदि ऐसा न हुआ तो सहज सुकुमार स्वभाव की स्त्री वियोग की आँच में ऐसे जरती है जैसे शीत से सर-सिज समूह एवं कुमोदिनी जल कर जलमय हो जाती हैं। मेरी विनती मानिए इस समय मुझे निरावलम्ब छोड़ कर कहीं न जाइए। विलक्षण समय है ज्यों ज्यों रात्रि बढ़ती जाती है त्यों त्यों स्त्रियों के कुच जघा और नितम्ब भी पीन होते जाते है और शीत की सहजोरी से ज्यों ज्यों सूर्य्य की गरमी एवं दिन दबते जाते है त्यों त्यों कमर पतली होती जाती है। गहन बन में स्थित पहाड़ों की गुप्त कंदराओं में समाधि साधे हुए साधु जन जो मौज लेते हैं वही इन दिनों स्त्री प्रसंग में मिलती है। इस संसार सागर में मनुष्य के लिये केवल दो बातें सार है। या तो वे किसी पर्व्वत की कन्दरा में धूनी रमाकर ध्यानावस्थित हो योग का आनन्द लेना या किसी कोमलाङ्गी की कलेजे से लगा कर सुख शैय्या पर आनन्द लेना। या तो वन में रहे या बनिता के साथ !! या तो सर्वाङ्ग भस्म रमावे या बहुमूल्य वस्त्र धारण करे। इस प्रकार से या तो स्नेह एवं इश्क द्वारा दो दिल एक करके अनुराग में रँग जावे या संसार भर का सुखकर सामग्रियों को तिलाजली देकर वैराग में पग जावे। तभी यह दुस्तर संसार सागर पार हो सकता है

नौरता (नौरते के कुछ बचे हुए गीत हैं)गानी और मिट्टी का नौरता और घरघोला बना कर उन में पूजा करती है। अष्टमी के दिन उनका पूजन खतम होता है। उस दिन रात्रि को वे एक बहुत छिदवाँ मिट्टी की डिलिया में दिया रख कर गाती हुई मुहल्ले में फिरती है। मतलब उनके दिये में कुछ तेल डाल देने से और उनके दिया का तेल प्रायः आप से लेने होता है तेल कई एक चर्म रोगों का नाश करता है। इस नौरते का चलन शब्द भी है। इलाहाबाद से लेकर देहली तक तथा राज-पूताना में और बुंदेलखण्ड में अब तक नौरते का पूजन होता है। बुंदेलखंड में ना अब भी इसे नारता कहते है परन्तु अन्यत्र क्या कहते है सो ज्ञात नहीं।

(१) कई साल स्नान पूजन करलेने के उपरान्त उनका हवन और ब्रह्मभोज कराकर समाप्त करने को उजैना कहते हैं।

नहीं "दोनों दीन से गए पांडे न हलुआ मिला न माड़ा"।

हे प्राणनाथ! यह स्त्री शरीर उत्तम तपोभूमि से किसी तरह कम नहीं है। यह रोमावली वन पुष्प के समान है, दोनों कुच करि कुंभ एवं पर्व्वत शिखर से विराजमान है जिनके बीचों बीच उज्ज्वल और परम पवित्र सरस शृंगार रस का श्रोता बहता रहता है। एक ओर विरह विथा की धूनी भी धधकती रहती है। बस पुरातन पुण्याई का उपभोग करते हुए यहीं पर तपस्या कीजिए यदि ऐसा न किया तो क्या आश्चर्य्य है कि धधकती हुई धूनी हेमन्त की हवा में सारी तपोभूमि को भस्म कर दे। इतने पर पृथ्वीराज का कुछ ढीला रुख देखकर रानी कूरंभी उसके गले से लपट गई और मुस्कराती हुई कहने लगी। हे नाथ! कहती हूं, न जाइए मैं बार बार बिनती करती हूं। ऐसी मौज छोड़ कर बाहर जाते हैं न जाइए मौज का आनन्द लीजिए। रात बढ़गई, दिन घट गया, शीत की अधिकता के कारण शरीर थर थर कांपता है और दंती बजती है। मोर के पहर कामदेव कलेजे पर चोट करता है उस समय अकेला रहना बड़ा दुःखदाई होता है। रात दिन हाय हाय करते हुए हृदय विदीर्ण होता है।

हेमन्त की अवाई होने ही चकवा चकवियों का चित्त दुखी हो गया। विरही जनों के जी में ज्वाला सी जलने लगी। संयोगियों ने जुही मालती आदि के पुष्पों का शृंगार उतार दिया और कस्तूरी और अगर आदि का सेवन आरम्भ कर दिया। धन्य है संयोगियों के यहां अब भी पावस का आभास रहता है। शीत के भीत और प्रीति की उमंग के कारण तिया पिया से मिलना चाहती है परन्तु स्वाभाविक लज्जा के कारण झझकती और आंख चपा कर भांजती है और पति लपट झपट कर उसे हिये से चिपटाने की चेष्टा करता है। उस समय स्त्री के कानों के कुंडल चपला से चमकते हैं। उस लिपट झपट में जो हिए के पुष्पहार टूट कर बिखर जाते हैं तो बगपाँति से जान पड़ते हैं। कटि किंकणी और नूपुर आदि गहनों का झंकार स्वर झींगुर सा जान पड़ता है। उस समय भोग विलास की कसरत के कारण जो सीने से पसीने के बूंद टपकते हैं सो साक्षात् स्वांतिबुन्द से जानिए। इस प्रकार मदन की मजेज से निकली हुई रस की नदी में नहाता हुआ हेमन्त रूपी हाथी तभी प्रसन्न होता है जब कि कन्त और कामिनी एकान्त में एक दूसरे के साथ रहें! इस लिये मैं इस समय आपको कदापि न जाने दूंगी, चाहे हजार हो जाय।

शिशिर।

हेमन्त का अन्त होनेही पृथ्वीराज ने पुनःचलाचली का विचार किया परन्तु अब की बार उसे रानी हम्मीरनी ने रोक रक्खा। उसने पृथ्वीराज को देखतेही कहा हृदयेश्वर यह रोम राजि नहीं जवानी की जलमय नदी की धारा है और ये युग योवन पर्व्वत शिखर हैं। अनेक भांति के शृंगार और आभूषण मानो इस योवन बन के लता पत्र हैं। यदि हे शूर शिरोमणि मृगराज आप चले जायंगे तो इस तनबन में विहार करता हुआ काम करि बड़ाही उत्पात करेगा। शिशिर की रानी में यह सारी फुलवारी उजार डालेगा।

देखिए शीत कमने लगा और प्रकृति का प्रभाव सम होने लगा। इसी से अमीर गरीब सब के घर विशेष आमोद प्रमोद देख पड़ता है। फागुन का महीना लगतेही सब के यार दोस्त मित्र व्यवहारी और रिश्तेदार आदि एक दूसरे के घर जा जा कर परस्पर मिलने जुलने हैं। स्त्री, पुरुष सब मदन की मजेज में मस्त हैं। एक दूसरे के संमुख मनमानी बातें कहने में तनिक भी नहीं सकुचते। इस समय यदि आप चले जायंगे तो मेरे कैसे दिन कटेंगे सो तो सोचिए। शिशिर ऋतु का आरम्भ होतेही वायु वेग से बहने लगी जिससे वृक्षों के पुराने पत्ते झड़ कर

गिरने लगे, चन्दन अगर और अगमद मिश्रित तमोर का सेवन शुरू हो गया। नमकीन, अम्ल, तीखा कटु मधुर और मीठा इन षट्रस व्यंजनों में विशेष स्वाद आगया है। इस समय काम क्रीड़ा से मुख मोड़ना उचित नहीं। उस नव वयस्का गौराङ्गी सुन्दरी रानी हम्मीरनी की ऐसी बातें सुन कर और उसकी भोली सूरत देखकर पृथ्वीराज को मुस्कुराहट सी आई और उसे गले लगा कर शिशिर भर वह उसी के साथ रहा।

तब तक पुनः बसन्त ऋतु आगई। कुंज कुंज प्रति अलि पुंज गुंजार करते हुए डोलने लगे। कलकंठी कोयलें उच्च स्वर से कू कू शब्द कलापने लगीं। बनबाग उपबनों में जहां तहां अन्यान्य जीवधारी भी आनन्द की बधाई बजाते हुए अनेक प्रकार मुहावने कोलाहल करने लगे सौरभ सनी सौंधी सुगंधमय वायु बहनी हुई तन के ताप हरने और मन को प्रसन्न करने लगी और जंगलों में पलास और बागों में कदम्ब फूलने लगे, नाना प्रकार के लता पत्र और बेलिवितान सब आनन्दमय हो गए और संसार भर में ऐसी नवीनता छाई कि जड़ चैतन्य सब फिर से नए नए होगए।

इस प्रकार एक एक ऋतु में एक एक रानी के आग्रह से पृथ्वीराज एक वर्ष भर कन्नौज को कूच न कर सके। होते करते जब दूसरा बसन्त आगया तब उसने एक दिन कविचन्द से कहा "हे कवि क्या तुम कह सकते हो कि ऐसी भी कोई ऋतु है जिसमें स्त्री को पति की परवाह न होती हो? यह सुनकर कविचन्द बोला पृथ्वीनाथ, यदि कमल जल को त्याग दे, शेषनाग पृथ्वी को त्याग दे और मधुप सुगंधि को त्याग दे तो सभव है कि कभी स्त्री भी पति की परवाह एव चाह छोड़ दे। पर हां क्यों नहीं ऐसा होना भी है अर्थात् जब स्त्री ऋतुमती होती है तब अवश्य वह पति के पास नहीं रहना चाहती। *

भीतर भीतर सब तय्यारियां हो चुकी थीं। फौज, हाथी, घोड़े सब दुरुस्त थे, परन्तु अब तक पृथ्वीराज और कविचन्द के सिवाय और किसी को भी कानो कान खबर न थी कि कहां जाना है क्या होना है। कविचन्द से बात पक्की हो जाने पर सब सामन्त सलाह के लिये और गुरुराम प्रोहित प्रस्थान का सुदिन शोधने के लिये बुलाए गए। गुरुराम के बहुत कुछ विचार करने पर भी कोई अच्छी साइत न मिली केवल चैत बदी त्रिनिया रविवार की एक साइत निकली जिस में पृथ्वीराज को १२ वें सूर्य्य ग्यारहवें चन्द्रमा पांचवें केतु और दिल्ली के आठवें स्थान पर संमुख मंगल पड़ता था। गुरुराम ने सब ग्रह योग का फल कह सुनाया और कुछ दिन और गम खाने को कहा परन्तु पृथ्वीराज ने एक न मानी और भविष्य को निश्चय मान कर उसने उसी समय कूच की तैय्यारी होने की आज्ञा दी।

कैमास की मृत्यु के पश्चात् राज्य मंत्री के पद पर सलख प्रमार (भैनराव) था क्यों कि सौ सामन्तों में कैमास के बाद दूसरा नम्बर उसी का था। वह वादे का पूरा, बचन का सच्चा, और खूब आगा पीछा सोच कर बात बोलने वाल था। यह लँगोट का सच्चा और निर्लोभी भी था। युद्ध के समय काल के सामने से भी पीछे पैर न देने वाला सुहृद, स्वामि सेवा, बल पौरुष पराक्रम में दृढ़, अच्छा डील डौल दार, बड़े बड़े दुर्गम दुर्गों को बिन प्रयास ढहा देने वाला सलख ही इस पद के योग्य था। नीति में कहा भी है कि राजा ऐसा मन्त्री करे जो सनातन से कुलीन, सब विद्याओं में दक्ष और चर कार्य्य में भी अत्यन्त चतुर हो। मोह लोभ और विषयवासना से रहित हो, धर्माधर्म को जानता हो और न्याय करने में निपुण हो! वह रोगी भी न हो, किसी विषय में आसक्त हो कर उसमें फँसने वाला न हो, राजसी मार पेच के

* दोहा॥ षट रितु बारह मास गत फिर आवा रू बसन्त।
छां रितु चन्द बनाव बुधि, तिया न भावै कन्त॥

रोस भरे उस कामिनी, होय मालन सिर अग।
वह रितु तिया न भावई, सुन चुहान चतुरंग॥

दाव घातों को अच्छी तरह समझना हो और सबसे बड़ी भारी शर्त यह है कि अधर्म का धन न लेता हो यानी रिश्वत खोर न हो।

गुरुराम ने कहा अच्छा जो इच्छा सो कीजिए परन्तु जरा राज्य मंत्री से भी तो पूछ लीजिए। तब तक सब सामन्तों सहित जैन प्रमार भी आ पहुंचा। पृथ्वीराज ने उसे ओर छोर से सब हाल कह सुनाया और कहा कि मैं भेष बदल कर कविचन्द के साथ कनौज को जाना चाहता हूं। राजा के ऐसे बचन सुन कर सलख प्रमार बोला "महाराज कहीं बदली से सूर्य्य और वस्त्र के आवरण से अग्नि कब छिपने है। अथवा कोई दरिद्री यदि रुपयों की ढेरी कर परख करने बैठ जाय तो उसकी भी अमल अवस्था कहीं छिप सकती है। कवि पंडित गुणी विद्वान घोड़े का सवार राजपूत और राजा ये लोग लाखों में नहीं छिप सकने चाहे किसी भी अवस्था में क्यों न हों उन की स्वाभाविक दीप्ति उन्हें आप बतला देती है। यदि यों भी बात मान ली जाय तो छरीदा चलना उचित नही है। पूरी तय्यारी के साथ चलना चाहिए। कवि लोगों के साथ में सजी हुई सेना और राजसी रखन बखत होने नहीं। ऐसे समय पर आडंबर ही काम देता है। यदि आप न मानें तो हमारी भी कुछ हानि नहीं। हार जीत की रामजाने हम जैचन्द का यह भूल में मिला देंगे। पर जो कहीं जैचन्द ने जान लिया तो हम तो सब वहीं कट मरेंगे परन्तु आपको वह मारे या छोड़े सो आप जानें। इस लिये मेरी सलाह तो यही है कि साज सामान के साथ चलना चाहिए।" तब गोयंदराय गहलौत बोला-आप का ऐसा कहना उचित है परन्तु यहा शहाबुद्दीन भी तो हमेशा घात में रहता है इस लिये दिल्ली को सूना छोड़ जाना भी बड़ी भारी भूल है। निदान अन्त में यह तै हुआ कि समस्त सेना के सहित रामराय रघुवंशी दिल्ली की रक्षा पर रहें और मिल तन एक मन अन्य सौ सामान्तों सहित पृथ्वीराज कनौज को कूच करें।

इस प्रकार सलाह हो चुकने पर सभा विसर्जित हुई। सब सूर सामन्त अपने अपने घर गए। और पृथ्वीराज भी शयनागार में जाकर सुख में हुआ। सारी रात गहरी नींद सोता रहा। भोर के पहर देखता क्या है कि सहसा सहस्रों बिजली सा तेज देदीप्यमान हो गया और एक राक्षस उसके साम्हने आकर उसे कुवाच्य कहने लगा। उसके पहिले बचन पर राजा ने धनुष बाण हाथ में उठा लिया। दूसरे पर बाण सन्धाना। तीसरे पर गोसा ताना और चौथे बोल पर बाण छोड़ दिया जिससे वह राक्षस मर कर गिर गया, इतने में चार की घड़ी बजी और राजा की आंख खुल गई, देखना क्या है कि कहीं कुछ भी नहीं। तबतक नित्त नियमायुसार कविचन्द भी आ पहुचा और पृथ्वीराज ने उससे अपने सपने का हाल कहा उसने उत्तर दिया कि सब शुभ है आप शीघ्र ही अपने शत्रु को परास्त कर सब तरह से सफल मनोरथ होंगे और चारों ओर आपकी सुकीर्ति फैलेगी परन्तु कुछ और भी है जोकि मैं स्पष्ट कह नहीं सकता। इसपर पृथ्वीराज ने कुछ भी ध्यान न दिया और हुक्म किया कि साथ में चलने वाले सब लोगों को कूच की तय्यारी का हुक्म सुनाया जाय।

निदान संवत् ११९१ * चैतबदी ३ रविवार के दिन ग्यारह सौ सवार साथ में लेकर पृथ्वीराज ने कनौज को कूच किया। उसके साथ के वे ग्यारह सौ सवार एक लाख सिपाहियों का मुंह मोड़ने के लिये बहुत थे। वे अच्छे अच्छे डील डौलदार जोरावर राजपूत सिपाही ऐसे हट्टे कट्टे और मजबूत

(१) अधम द्रव्य मत लेवे।

* मूल पाठ "ग्यारहसे एकानव चैत तीज रविवार" है इसमें पक्ष स्पष्ट नहीं होता परन्तु इसके अनुमान से कृष्ण पक्ष लिखा है क्योंकि सम्भव है कि सब लोग की बिनिवा को पृथ्वीराज कनौज प्रस्थान न करना और आगे वर्णन से कृष्ण पक्ष ही सिद्ध होता है।

जवान थे कि उनके वक्ष से सीने पर वज्रही चाहे विथर जाय पर बात क्या कि उनके सीने में सांभ हो जाय। युद्ध के समय पर वे रुद्रवेष योद्धा तृण रूपी शत्रु समूह को भस्म करने के लिये साक्षात् अग्नि शिखा से थे। महाभारत के समय से लेकर आज लों न तो कोई ऐसा वीर हुआ न होने की आशा है। संभरीनाथ पृथ्वीराज भी उस समय एकही था। प्रथम तो उसकी वीरता की बातें ही देश भर में कानो कान हो रही थीं तिस पर उसके गजनीपति शहाबुद्दीन को बाँध बाँध कर छोड़ देने और कैमास के मारडालने ने तो उसके आतंक को और भी चढ़ा बढ़ा दिया था, ऐसा अद्वितीय तेजस्वी दिल्लीपति राजा पृथ्वीराज चहुवान ग्यारह सौ सवार सौ सामन्त छ निज सूरमा और कविचन्द को साथ में लेकर राज्य महल से चल पड़ा और नगर से बाहर यमुना के किनारे जा ठहरा।

चलते समय जब पृथ्वीराज ने हर हर शब्द उच्चारण करते हुए पाइरे पर पैर दिया तो उसके साथी सामन्त लोग भी शिव सरस्वती काली गणेश भैरव हनुमान इन्द्र नृसिंह सहस्रबाहु बटुक कृष्ण और भगवान रामचन्द्र आदि अपने अपने इष्ट देवों का स्मरण करते हुए उसके पीछे हो लिए। सिपाही सवारों का तो हाल आप सुनही चुके पर ये सामन्त वैसे सौ सौ सिपाहियों के बराबर एक एक थे। सहस्रों शत्रुओं को मार कर पार देना और मतवारे हाथियों के थामे मूलों से उखार लेना उन्हीं सामन्तों का काम था। उनके संमुख मनुष्य क्या एक बार जीभ निकाले हुए यमराज भी क्यों न आजाय पर वे पीठ दिखाने वाले नहीं थे। उन राजपूत योद्धाओं के जैसे अस्त्र शस्त्र उज्ज्वल थे वैसे ही उनके हृदय भी कपट कालिमा से रहित सूर्य्य की किरण जैसे उज्ज्वल थे। उन सूर और सामन्तों का पता एक छन्द में कविचन्द इस प्रकार लिखता है –

नम्बर	नाम	विरद	विशेष
१	कन्ह	नरनाह	पृथ्वीराज का चाचा सोमेश्वर का सगा भाई।
२	गोइन्दराय	गहलौत	
३	सेनचन्द		मंडलीक का पुत्र जो कि शहाबुद्दीन की पहली लड़ाई में मारा गया था।
४	लंगरी राव		संयमाराय का पुत्र जो कि महोबे की लड़ाई में बड़ी वीरता से काम आया था
५	देवराज	बग्गरी राय	
६	जाजराय		बग्गरी राय का पुत्र।
७	रणधीर प्रमार		जैतप्रमार का कोई भाई बेटा।
८	जैत प्रमार	सलखराय	आबू का राजा रानी इच्छिनी का भाई इस समय मंत्री था।
९	जामराय	जामजहो नांदोराय	
१०	प्रसगराय खीची		
११	पज्जूनराय		कछवाहा जिस वंश में वर्तमान जैपुर राज्य है।
१२	बलिभद्र राय		पज्जूनराय के पुत्र।
१३	पाल्हन राय		

नं०	नाम	विरद	विशेष
१४	निडुडुर राय	कमधज्जराय	कन्नौज के राजा जैचन्द का भतीजा।
१५	रामराय	बड़ गुज्जर	
१६	अत्ताताई		यह महादेव जी के वरदान से स्त्री से पुरुष हुआ था यह कथा आगे इसी समय में है।
१७	गम्भीर सिंह		हाहुली हम्मीर का भाई।
१८	नरसिंह		दाहिमा वंशी कैमास के भाई बेटों में से त्रिशूल चलाने में बड़ा निपुण था।
१९	जंघारभीम	जोगी जंघारा	उदंड ब्रह्मचारी और शिव भक्त।
२०	उद्दिगपग्गार		
२१	चन्द्रसेन	चंदपुंडीर	पृथ्वीराज का साला रानी पुंडीरनी का भाई
२२	वीर सिंह	नृसिंहवीर	चहुवान।
२३	हरसिंह		
२४	सारंग राय	चालुकराय	एक सोलंकी सरदार।
२५	विभराज		सारंग राय का भाई।
२६	नागर राय	गौर राय	गोर या गौड़ क्षत्री।
२७	दाहर राय		
२८	रामरन		प्रमार
२९	रूपराय या रुवराय		दाहिमा
३०	भोंहा राय	धीर भोंहा	चन्देल
३१	कनकराय		राम राय के घराने का कोई सरदार।
३२	कनकराय		दूसरा।
३३	मालचन्देल		
३४	भानराय	भान भट्टी	
३५	सामलासुर	कमधुज्जराज	
३६	बूसिंह राय		मोहिल्ल राय का भाई।
३७	देवराज	देवरा राय	पृथ्वीराज का भाई।
३८	मंडली राव	महामंडली	
३९	धनूराव		पुंडीर वंश का कोई वीर।
४०	पहार राय	तुअर राय	इसने शाह को पकड़ा यह डील डौल में सब सामतों से सबल था-देखो पहाड़राय समय।
४१	जुल्ह राय	जावली जल्ह	सौलंकी सरदार।
४२	खेता खगार	बग्गरी बाघ	महोबा फतह होने पर यही बुन्देलखंड का सूबेदार नियत

नम्बर	नाम	विरद	विशेष
			हुआ था इसी से वहां खंगारों के राज्य की जड़ जमी जिसे बुंदेलों ने उखाड़ा। खेना के वंश के अब भी हजारों आदमी बुंदेलखंड में हैं पर वे बुन्देलें राजों के साम्हने छड़ी लेकर चलंत हैं अर्थात् नकीब हैं।
४३	वीरम राय		दूसरा परिहार।
४४	रूपराय		
४५	सारंग राय	सारंग गाणी	यह दूसरा सारंगराय है।
४६	भोजराज	वीरगादों	यादव वंशी।
४७	साखुला सिंह	साँखुलामूर	
४८	सांमले सिंह	सामलासूर	
४९	विक्रम राय		कामधुज्ज।
५०	सादल्ल राय	सादल्लमोरी	मोरी क्षत्री या मौर्य्या वंशी
५१	ठंठरी राय		टांका चाहुवान (चहुवानों की चौबीस शाखाओं में से एक टांका है)
५२	सारन राय	सारन मोरी	
५३	जयसिंह	सिंघ चन्देल	
५४	बाकू राय	बाकू कंठीर	केहर कंठीर का भाई बेटा कोई।
५५	भीम राय	भीमगादा	
५६	पीपा राय	पीपपड़िहार	इसने एकबार शाह को पकड़ा था।
५७	देवराज		दूसरा।
५८	अचलेम राय	अचलेस	खीची।
५९	कचरा राय		पट्टनपुर के भोला भीम का पुत्र।
६०	नाहर राय		परिहार।
६१	मदन सिंह		
६२	भीम सिंह		भोरी
६३	लक्खन राय		आरजराय सौलकी का पुत्र।
६४	पूरब राय		बघेला।
६५	तेलज राय	डोडियाराय	पूरनराय प्रमार का पुत्र जिसका नाम इक्कीसवें समय में आया है।
६६	अचलेस भट्टी		
६७	चन्द्रसेन		परिहार।
६८	संग्राम सिंह		
६९	विजेराय बघेला।		(दूसरा) बडगुज्जर।
७०	गोहिल्ल		कठिया राय का पुत्र।

नम्बर	नाम	बिरद	विशेष
७१	लक्खन राय	चाच राय	
७२	रंघरी राय		(दूसरा) प्रमार।
७३	जैसिंह कमधुज्ज	पुंडरि ग्रंथी।	
७४	पुंजपहार		
७५	मारथ राय		
७६	नागर राय		मल्हनास कोहरी का पुत्र यह पहाड़ी किले की लड़ाई में बड़ा होशियार था।
७७	टाक चाटा		
७८	रावन राय		
७९	हरी देव		
८०	नाज राय		
८१	अहटूटी राय		दूसरा (यादव वंशी)
८२	हाहुली राय	हम्मीर	गम्भीर हम्मीर का पुत्र। स्मरण रहे कि जंबू में सूर्यवंशी राजा राज्य करते हैं संभव है कि हम्मीर भी सूर्य वंशी हों वे हाडा चौहान नहीं हो सकते क्योंकि उनकी बेटी को भी पृथ्वीराज का व्याहना भी लिखा है। जम्बू और काँगड़े परगने (कश्मीर) का राजा था।
८३	पुहकर राय		
८४	कन्हराज		दूसरा
८५	जंगली राव		दाहिमावंशी।
८६	पंचाइन राय		चाहुवान।
८७	रणवीर राय	रण राय	पहार राय का पुत्र।
८८	छगन		नरनाह कन्ह का एक सेवक।
८९	देवती राय		

इस सूचीके अनुसार १७ सामन्तों का फर्क पडता है क्यों कि कुल संख्या १०१ होनी चाहिए वहां केवल ८९ होते हैं।

पृथ्वीराज ने यमुना के किनारे पर एक मुकाम करके गुरुराम प्रोहित और प्रधान कर्मचारी मधुसाह को बुला कर आज्ञा दी कि सेना सहित वे दोनों दिल्लीगढ की रक्षा करें। निदान गुरुराम तो दिल्ली में रहा और उसका भाई वीठल देव राजा के साथ चला। सब सूर सामन्त तो राज्य के साथ में थे ही तब तक सबके दस दस पांच पांच भाई बेटे भी सज बज कर पड़ाव पर आ गए। वहीं-पर कविचन्द सबका अगुवा बना और राजा सहित सब सामन्त और सिपाहियों ने बेष बदल कर उसका अनुयायी होना स्वीकार किया। उसी समय अटाले के मालिक रनवीर परिहार को आज्ञा दी गई कि वह पेशखेमा लेकर आगे आगे चले और दूसरे पड़ाव के लिये अमुक स्थान पर भोजन पान का उचित प्रबन्ध कर रक्खे। राजा ने हयशाला के अफसर यानी रिसालदार जगमाल को हुकुम दिया कि वह सब सामन्तों की सवारी के लिये अच्छे अच्छे घोड़े हाजिर करे। निदान जगमाल ने भी मौका समझ कर सब सामन्तों को बिल्हान खेत के घोड़े दिए। इस प्रकार राज्य-रक्षा का उचित प्रबन्ध करके दूसरे दिन एक प्रहर रात्रि रहते तय्यारी का डंका बजा और कविचन्द और सब सूर सामन्तों सहित पृथ्वीराज नांव पर से यमुना पार हुआ।

पृथ्वीराज के नांव पर सवार होते ही एक तो बडा भारी अशकुन यह हुआ कि संमुख छिद्रमय काला कलश देख पड़ा और जब वह जमुना पार होकर नांव पर से उतरने लगा तो उसे दूसरा एक अद्भुत और भयानक चरित्र और भी नजर आया। वह यह था कि एक अर्द्धांगी प्रतिमा सहसा संमुख आ खड़ी हुई। उसके मुख में तो मुस्कराहट थी, परन्तु क्रोध के कारण उसके नेत्र अंगारे से लाल हो रहे थे, और उसके हृदय पर कमल कनेर और सिरस के फूलों की माला लटक रही थी। उसके बाएँ अंग के सब आभरण सोने के थे परन्तु दाहिने अंग के सब आभरण लोहे के थे। उसके आधे सिर के बालों का जूड़ा बँधा हुआ था पर आधे बाल खुले हुए थे। जूड़े वाले भाग पर मोतियों की माला रूर रही थी और खुले केशों पर लोह की सांकर लटक रही थी। उसकी दाहिनी आंख में कज्जल लगा हुआ था पर बाईं में कुछ भी नहीं और उसके नथनों से सर्प की सी फुकार निकल रही थी। उसके बांए अंग का आवरण तो पीत पट था परन्तु दहिने अंग का वस्त्र कौवे से भी काला था। उसके बाएँ पैर में जेहर और पायजेब पहिना हुआ था और उस पैर से वह मत्त गयद की चाल चलती थी परन्तु दहिने पैर में लोह की सांकल थी और उसका वह पैर कदापि थिर नहीं रहता था। इस प्रकार कभी हँसती कभी रोती, तांडव नृत्य करती उस भयानक भेष अर्द्धांगी प्रतिमा को देख कर अत्यन्त आश्चर्य्यान्वित होकर पृथ्वीराज ने कविचन्द से पूछा कि कहो तो इसका क्या तात्पर्य्य है। तब कविचन्द बोला कि सम्भरीनाथ यह आपको देवी के दर्शन हुए हैं और इस अर्द्धांग स्वरूप से यह अभिप्राय है कि आप शीघ्रही शत्रु का दर्प चूर्ण करके अपनी प्रिया संयोगिता के पति होइएगा।

पृथ्वीराज ने कहा कविचन्द तुम चौदहो विद्याओं में दक्ष देवी से वरदान पाए हुए वरदाई कवि हो। इस समय तुम मुझे यात्रा के सब शुभ अशुभ तो कह सुनाओ। इस पर कविचन्द बोला महाराज सुनिए दाहिने हो अथवा बाएँ परन्तु समतल पर बैठी हुई देवी सदैव शुभ है। उसके दर्शन से यात्री सहज ही सफल मनोरथ होता है। यदि वह दाहिने बाजू के किसी वृक्ष पर बैठ कर दो या तीन आवाजें दें तो मानो वह पथिक की यात्रा में स्वयं बाधा देकर उसे जाने से रोकती है। यदि वह मंडल बाध कर उडती हो और रास्ता काट कर बाएँ से दहिने जाय तो शुभ है और

(१) "दर्वी" एक चिड़िया का नाम है। आज कल इस चिड़िया का शामा वा स्यामा कहते हैं। यह सर पैर से बिलकुल काली होती है उसका पूंछ लम्बी और चोंच बारीक होती है। शिकारी और डाकू लोग अब भी इस चिड़िया की बोली से बड़े मतलब निकालते हैं।

उसी समय एक से तीन तक जितने शब्द करे उतनी ही अधिक कार्य्यसिद्धि समझनी चाहिए। परन्तु यदि कहीं दहिने से बाएँ जाय तो महान अशकुन जानिए। उस अवस्था में उसका बांई ओर बोलना घात सूचक है। यदि कहीं तीन बोली लगातार बोले तो समझनी चाहिए कि यात्री की अवश्य मृत्यु होगी। परन्तु यदि ऊंचे स्थान पर बैठी हो तो उतनी ही अधिक कार्य्य-सिद्धि समझनी चाहिए। उसका बाई ओर होना अरिष्ट या द्वेष सूचक है पर दहिनी ओर सिद्धि सूचक है। यदि वह थूहड़ सेंहुसं पाकनी आदि कांटेदार वृक्ष या कोयले के ढेर अथवा किसी सूखे हुए वृक्ष के ठूंठे पर बैठ कर शब्द करे या उससे उतर कर बोले तो समझना चाहिए कि कोई खेद की बात तो नहीं पर कार्य्य सिद्धि की भी कोई आशा न रखनी चाहिए। यदि हो भी तो ऐसी वैसी।

यदि तीतर, खर, नाहर, जम्बुक, सारस, चील्ह, चातिग, उलूक, बन्दर, मोर, सुआ, बाएं मिलें तो शुभ है, परन्तु यदि दहाड़ता हुआ सिंह दहिने हो तो अत्यन्त शुभ सूचक समझना चाहिए। परन्तु कार्य्य में भय की संभावना अवश्य होती है। यदि तीन पांच या सात मृगी मृग के साथ चरती हुई दहिनी ओर मिलें तो परम शुभ है परन्तु यदि सूर्य्यास्त के समय काला मृग अकेला मिले तो उसे साक्षात् यम का स्वरूप समझना चाहिए। यदि काम सफल भी होगया हो तो भी सब चौपट हो जाय और यात्री की जान पर आबने। इसी प्रकार बाई ओर गर्जना करते हुए सिंह का भी फल जानना चाहिए। यदि कहीं चात्रक, बगुला, बाज, भारद्वाज, चौर, छत्र, बकनी, हुई चीगा, दूर्वा, दही, गंगाजल, धनुष, कलार, वेश्या, हाथी, सारस, चूहा, कुम्भ, गोधह, सर्प, अंगारे वा भस्म, गुड, लवण, मठा, प्रवरज्ज, अंधा, खुले केश, बाला या गर्भ पर चढा हुआ पुरुष आदि दहिनी ओर मिलें तो उन्हें पांच प्रणामें कर ले बस फिर सब सिद्ध है। बनविलाव, घूघू, पटत परेवा, पड़ुक, या पिंडुकी ये चिड़ियां दहिने मिलें तो अशुभ हैं और यदि दोनों हाथ में घड़े लिए गधे पर चढ़ा हुआ कुम्हार बिलकुल नंगे सिर या सिर पर बोझ लिए हुए मिले तो समझना चाहिए कि अवश्य कुछ न कुछ फिसाद खड़ा होगा। यदि चलते समय श्याम वर्ण बिना तिलक का ब्राह्मण, बिभूत हीन योगी सामने आजाय तो तुरन्तही यात्रा बन्द करदे। सिर पर दहिनी तरफ कोई पक्षी बोले और बाएँ स्यार बोले अथवा सामने शव की रथी आती मिले तो सर्व सिद्धि समझनी चाहिए। भरे हुए कलस, उज्ज्वल वस्त्र वाला, दिया, अग्नि, मछली, यात्रा के समय नजर पड़ जांय तो इस से भला और शुभ क्या होगा। और भी सजी हुई राजा की फौज, दहाड़ता हुआ सिंह, खुरी करता हुआ मृग दाहिने देख पड़े तो भी अत्यन्त शुभ समझिए। सिर पर शब्द करते हुए बद्दलों को फाड़कर सूर्य्य निकल रहा हो तो उस समय अवश्यही यात्रा या अन्य कोई कार्य्य आरंभ करे उसके सिद्ध होने में कदापि संदेह नहीं इत्यादि।

कविचन्द योंही कह रहा था तबतक राजा ने हँसकर पूछा क्यों और यदि मद सहित सामने आता हुआ कलार मिले तब? कविचन्द बोला कि तब क्या रक्तपात हो, सैकड़ों मारे पड़ें और सैकड़ों विजय का डंका बजाते हुए घर बैठ कर आनंद उड़ावें। इसी बीच में राजा को सहसा चैमास का स्मरण आगया जिससे उसका चित्त विह्वल सा हो गया। वह एक हाथ मारकर चुप रह गया। उसके मुँह से केवल इतने शब्द निकले "हा" इस जीवन में क्या है? मरनाही सार है। क्षण एक में उसने कुछ सम्हल कर कहा मेरे सामन्तों इस में तो कोई सन्देह नहीं कि तुम सच्चे परोपकारी हो मेरे काम पर प्राण न्योछावर करने को उद्यत हो निस पर भी गगा के किनारे धारा क्षेत्र में प्राण देना परम कल्याण कारी है। राजा का ऐसा कुछ दुश्चिंता चित्त देख कर कविचंद ने उसे बातों में लगा लिया। चैत्र मास के कुसुमित बन की शोभा का आनन्द लेते हुए सब लोग रास्ता तै करने लगे। पृथ्वीराज थोड़ी-

ही दूर चला होगा कि सामने मौर बांधे हुए दुल्हा मिला इसके साथ में उसकी नव दुलहिन भी थी। सूर्य्योदय होतेही यह शकुन देख कर सब का दिल दंग हो गया। यहां पृथ्वीराज घोड़े पर से उतर पड़ा और एक दो घड़ी के लिये सब लोग एक जगह बैठ गए। साथ के जोगड़े लोग सिन्दूरिया राग की अलापचारी करने लगे। इसके बाद ज्योंही राजा ने चलने की इच्छा करके रकाब पर पैर दिया कि बाईं तरफ श्यामा ने शब्द किया और वृक्ष पर से उतर कर पृथ्वी पर आन बैठी। यह देखकर सबके मन में एक प्रकार का संशय सा हो गया। तब तक सामने एक काला मृग भी देख पड़ा, जिसे राजा ने बाण से मार गिराया। इस पर राजा दो घड़ी के लिये और ठहर गया। परन्तु ज्योंही फिर से चलने को तय्यार हुआ कि सामने एक योगिनी के दर्शन हुए। उस योगिनी के एक हाथ में त्रिशूल और एक में खप्पर था। पृथ्वीराज ने उसे देखतेही कुछ स्वर्ण उसके खप्पर में डाला और उसे विनीत भाव से प्रणाम करके आगे को यात्रा की। तदनुसार उसके सामन्तों ने भी घोड़ों की बाग उठाई। निदान प्रहर दिन चढ़ते चढ़ते पृथ्वीराज ने दिल्ली से ३२ कोस पर फूसाम नामक स्थान पर दूसरा मुकाम जा किया।

कहने को दूसरा पड़ाव था परन्तु दिल्ली से बाहर होने पर यह पहिला ही पड़ाव था। ज्यों ही पृथ्वीराज पड़ाव के पास पहुंचा कि सिर पर पांच घड़ा रक्खे हुए एक स्त्री मिली। पृथ्वीराज को देख कर वह स्त्री अनेकार करती हुई दाहिने से बांए को चली गई। दस कदम आगे चलने पर बाईं ओर गर्जता हुआ सिंह मिला। मांस का लोथड़ा लिए हुए चील्ह और बांईं ओर बोलता हुआ सारस का जोड़ा भी नजर पड़ा। रास्ते के पासही एक छोटा सा गांव था। उसी गांव में एक नट नजरबन्द तमाशा कर रहा था। वह नट सब के देखते देखते बांस पर चढ़ गया वहां से उसके अंग प्रत्यंग कट कट कर गिरने लगे थोड़ी देर में उसका धड़ भी पृथ्वी पर गिर कर थर थर कांपने लगा। यह चरित्र देख कर सब सामन्तों के मन में शंका और भय ने स्थान पा लिया।

खास खास लोगों के सिवाय और सिपाहियों को यह अबतक मालूम न था कि कहां जा रहे हैं। एक कहता किसी तीर्थ को जा रहे हैं। दूसरा कहता भाई कहां है वह तीर्थ, वहां किस देवता के दर्शन होंगे? तब तक नरनाह कन्ह ने जैत राव से कहा "तुम राजा को रोको" जैतराव बोला "मैं क्या करूं, मैं पहिलेही अपना सा सिर पीट चुका हूं।" पज्जूनराव बोला "भाई साहब यह सब भटवा की करतूत है कन्नौज पहुंच कर देखना यही दृश्य सच्चा होकर आगे आवेगा। तब कन्ह ने कहा "मुनो कूरंभ राव! सोच विचार करने से क्या होना है जो कुछ होनहार होगी सो तो अवश्य ही होगा। सब ने हजार समझाया पर युधिष्ठिर ने एक न माना और दुर्योधन के साथ जुआ खेला पर खेला। लक्ष्मण के रोकते हुए भी रामचन्द्र स्वर्ण मृग के पीछे दौड़ गए; मंत्रियों के मना करने पर भी रावण ने सीता को रामचन्द्र जी को वापिस न दिया। यदुवंशियों ने जान बूझकर दुर्वासा ऋषि का शाप लिया इसी प्रकार इस पृथ्वीराज ने कैमास ऐसे मन्त्री को मार कर और चामंडराय के पैरों में बेड़ी भरकर सब सामन्तों का जी खट्टा कर दिया। इससे स्पष्ट होता है कि कोई विशेष होनहार की घड़ी आ पहुंची है और वही होनहार राजा के चित्त में बस कर उससे यह सब अनर्थ करवा रही है। इन सगुन असगुनों को राजा क्या स्वयं नहीं जानता। जानता है। पर होनहार के वश होकर उसके विरुद्ध कुछ कर नहीं सकता। चलते समय ही इसे सबने अपना सा कहा सुना पर किसी की न मानी और चल पड़ा। हम लोगों को क्या। इस नश्वर शरीर को सदा नहीं रहना है यदि इस तरह से काम आवेंगे तो उधर हमारी आत्मा परमात्मा में मिलेगी इधर कवि लोग सुयश बखान करेंगे। बस फिर क्या आप मरे जग डूबा। राजा की राजा जाने

पर इतना हम फिर भी कहेंगे कि इसकी होनहार कुछ बुरी है।"

पड़ाव पर बनबीर पड़िहार ने रसोई की सामग्री तथा अन्य सब आवश्यक सरंजाम प्रस्तुत कर रक्खा था। सब साथियों सहित पड़ाव पर पहुंच कर राजा ने स्नान ध्यान किया और भोजन प्रसाद करके वह फिर से चल पड़ा। यहां से सेना की चाल नियम बद्ध की गई और सब सूर सामन्तों को अपनी अपनी हुकूमत और काम का हिस्सा बांट दिया गया। प्रत्येक सामंत के ताबे में सौ सौ सवार किए गए, दस सामन्तों प्रति एक एक वीर और दो दो वीर पर एक एक जितेन्द्रिय शूर नियत किए गए। पृथ्वीराज स्वयं सब सेना का अगुआ हुआ। आगे आगे पृथ्वीराज वाराह सा और उसके पीछे सब सैनिक * दार से चले जाते थे। प्रचण्ड चण्डी, उन्मत्त स्वरूप दंडधारी भैरव और उसके साथी कविचन्द के सिद्ध किए हुए ५२ वीर चौसठों योगिनी और और भी अनेकों भूत प्रेत बेतालादि नाना प्रकार के भयावन और वीभत्स शब्द करते हुए गाते बजाते नाचते और ताल ठोकते हुए पृथ्वीराज की सेना में चले जाते थे। उसके सिपाही और सामन्त लोग भी तो एक प्रकार के निर्भय भूत ही थे। उन्हें सांसारिक माया मोह से मानो कुछ प्रयोजन ही न था। एक दम मरना मारनाही उनका व्यवसाय था अस्तु सूर्य्य के समान तेजस्वी राजा पृथ्वीराज के पीछे वे लोग किरणों की तरह चले जाते थे। शत्रु रूपी अंधकार को विदार देने के लिये पृथ्वीराज साक्षात् सूर्य्य के समान था, तब उसके सामन्त सिपाही सूर्य्य किरण हुआ ही चाहें। निदान रात्रि भर में उन्होंने बीस कोस की मंजिल तै की और सूर्य्योदय के समय वे अपने मंडे से अढ़र कर कन्नौज राज्य की सरहद में जा पहुंचे।

रात्रि का शेषांश वहीं पर बिताया गया। प्रातः ज्यों ही अरुणोदय हुआ कमलों की कली खुली, देवालयों में शंख घालेरे बजीं कि इधर फिर से सामन्तों के घोड़े सजे गए। पूर्व्व दिशा में भास्कर भगवान के दर्शन होतेही पृथ्वी और आकाश पर सर्वत्र एक विलक्षण आनंदमय आभा छा जाती है। जलाशयों में पुरैन के पत्ते जल से विलग होने लगते हैं, कमल कली से निकल कर भ्रमर अपनी भौंरियों से मिलते है, लंपट पुरुष मन मलिन होते हुए शैय्या से उठते है और तमचर समूह व्यवसाय से रहित हो कर निद्रा में प्रवृत्त होते हैं। हालकी में छिटके हुए कमल पुष्पों के पराग मय क्लान्त चित्त पुरुषों को भी आनंद देने वाली मन्द मन्द वायु बहती है और संयोग सुख में मग्न मन चक्रवाक् कल्लोलें करते हुए कल कल शब्द करते है। इसी समय सामन्तों सहित राजा पृथ्वीराज ने घोड़े की बाग उठाई। उस राजपूत सेना के अश्वों की खुर खेद से उड़ती हुई धूलि आकाश में आच्छादित होकर बदली सी उनै आई और प्रातःकाल की त्रिविध पवन वेग मय होकर सरसराटे भरने लगी।

पृथ्वीराज पड़ाव पर से अभी दस कदम भी न गया होगा कि सम्मुख एक देव के दर्शन हुए। वह देव सर्वाङ्ग विभूति रमाए और जटा लटकाए हुए था। उसके साथ में इधर उधर चलते हुए बहुत से कुत्ते भी थे। उसके दोनों नेत्र आग के से अंगारे दबदबा रहे थे और हृदय पर गुंजा की माला लटक रही थी। उसका हृदय लाल काला नीला और पीले रंग का था। उसके बांहु कुछ सिन्दुरिये और शर्बती थे। उसकी कंबुवत ग्रीवा ऐन पीली थी उसके कान स्वेत थे, भौंहे भूरी थीं और उसके ललाट पट से केसरिया रंग की आभा झलकती थी। इसी प्रकार उसके पैर भी चार रंग के थे और उसके नखों से श्याम घन की सी नीलमा दमदमा रही थी

* अपनी सुअरों के ऐसे झुंड को जिसमें नर मादा बच्चे वगैरह सब हों 'दार" कहते है। प्रत्येक दार का मुखिया एक बड़ा जंगी सुअर होता है जिसे वाराह कहते हैं,जिस तरफ को वाराह जाता है उसी के पीछे पीछे दार के सब सुअर चले जाते है। मजा यह है कि अगर वाराह कूए में गिर पड़ा तो दार के सब सुअर उसी कूएं में गिरते जायंगे जब तक कि कुआं भर कर पट न जाय।

इस देव का यह चित्र विचित्र स्वरूप देख कर सब सामन्त और पृथ्वीराज तो चुप रह गए। परन्तु कविचन्द ने आगे बढ़ कर उसके सम्मुख शीश नवाया और उसने कवि को आशीर्वाद दिया। मुस्करा कर आशीर्वाद देते समय सबने देखा कि उसकी जिव्हा भी दो रंग की थी। कविचन्द ने उस देव से बड़े नम्र भाव से पूछा हे समस्त भूत प्रेत और वैतालों के स्वामी आप कहां को यात्रा हुई है। इस पर उसने उत्तर दिया कि सतयुग में मेरे पिता ने कुपित होकर त्रिपुरा सुर से युद्ध किया था, त्रेता में राजा राम ने लंका पर आक्रमण किया था, द्वापर में परशुराम और सहस्रबाहु से युद्ध हुआ था। अब कलियुग में चहुआन और कनभुज्ज कुल का संग्राम होनेवाला है। रानी जुन्हाई के गर्भ से जन्मी हुई जैचन्द की कन्या संयोगिता साक्षात् कलहप्रिया नाम से प्रख्यात होगी। उसके हेतु उसके पति और पिता दोनों का वंश नाश होगा। इस समय उसी का पाणि ग्रहण होनेवाला है सो मै वही देखने जा रहा हूं। वहां से सच्चे शूर वीर राजपूत योद्धाओं के सिर लाकर शिव जी को दूंगा और मैं वहां के अभिनय का प्रत्यक्ष आनन्द लूंगा। देव के ऐसे वचन सुन कर कविचन्द और पृथ्वीराज दोनों एक दूसरे की तरफ देख कर मुस्कराए।

पृथ्वीराज ने कहा आज भोर के पहर की बात है। मैं खूब गहरी नींद में था कि पूर्व्व दिशा में मुझे एक प्रकाश देख पड़ा। क्षणेक में वह प्रकाश पश्चिम दिशा में आकर सहसा लोप होगया। बस मेरी नींद खुल गई परन्तु सर्वथा नहीं कुछ उनींदी अवस्था में था तो देखता क्या हूं कि एक कुसम सरीखे लाल केशोंवाली कामिनी मेरे सम्मुख आ उपस्थित हुई। सुघरता से सँवारी पटियों पर पड़ी हुई दुलरी मोतियों की दावनी ऐसी मालूम होती थी मानो चन्द्रमा सर्प का ग्रास किए हो और उसके ललाट पट पर केशर का तिलक और रोली की आड़ सुशोभित थी। उसके कानों के कुंडल सूर्य्य की सी किरणें झलझला रहे थे और उसकी बंक भौंहें साक्षात् मीननेतु की सी कमानें थी। उसके बड़े बड़े चंचल नेत्र ऐसे देदीप्यमान थे जैसे श्वेत कमल की कली में मकरन्द कल्लोलें कर रहा हो। उसकी सुग्गे की सी नासिका में करता हुआ बुलाक का मोती शुक्र एवं सोम का सा रस भासित होता था। उसके काम के केलि-आलय से कपोलों पर लटकती हुई लट सर्पिणी सी और मृदुमुसक्यान से उसके उज्ज्वल अनार के दाने से दांत साक्षात् दामिनी से दमकते थे उसकी चिबुक पर का तिल गदूले के फूल पर अलिशावक सा बैठा हुआ जान पड़ता था। उसकी कंबुवत् ग्रीवा चंपकली सी अंगुलियां गुलाब से नख अद्भुत छबि छटा छाते थे। उसके कमल कली से नवीन उरोंजो वाले वक्षस्थल पर झिलता हुआ मोतियों का हार हरद्वार में गंगा जी की सी बहार देता था। उसकी शेर की सी पतली कमर स्वर्ण खम्भ से बंधा सुडार पिंडुली और नारंगी सी एडी इत्यादि उसके अंग प्रत्यंग की शोभा सहजही देखने वाले का दिल लुभा लेने वाली थी। मैंने देखतेही उससे पूछा? तुम कौन हो? किसकी लड़की हो? और किसकी स्त्री हो। इस पर उसने उत्तर दिया कि मै कन्नौज के राजा जैचन्द की जाई हूं और तुम्हारे पास आई हूं। मैं पूर्व्व जन्म की मंजुघोषा अप्सरा हूं, सुमंत ऋषि के शाप बस मुझे मनुष्य शरीर धारण करना पड़ा है। मेरा नाम कलहप्रिया है क्योंकि मैं पिता पति दोनों का वंश नाश करके तब स्वर्ग को जाऊंगी। इसमें जरा भी असत्य न समझिए। मैंने आपसे यह अनीव गुप्त भेद कह दिया है। इसपर कविचन्द ने उत्तर दिया सत्य तो है जो कुछ उसने कहा वह सब विश्वसनीय है।

कलह केलि के लिये सदैव सन्नद्ध अपने भार से शेष नाग को शंकित करने वाली कन्नौज को जाती हुई चहुआन सेना में एक से एक बानेत राजपूत थे। वे सब लोग अपने अपने इष्ट देवताओं का स्मरण करते हुए अपने शीश योगिनियो के हाथ मे देने के लिये और अपने रुधिर से उनके खप्पर भरने

के लिये तन मन से तैय्यार थे। उपरोक्त देव के मुख से भविष्य की होनहार जानकर उनका जराभी मन मैला न हुआ। वरन वे इससे और भी प्रसन्न थे कि एक तो स्वामी सेवा में गंगा के किनारे मरना दूसरे संसार में अमर यश स्थापित होना एक पथ दो काज बस फिर हमें चाहिए क्या। एक राजपूत बच्चे के लिये इससे अधिक आनन्द प्रद और क्या बात होगी। पृथ्वीराज की सेना के साथ चलते हुए भूत वैतालों के राजा उस देव ने कविचन्द को आशीर्वाद दे कर एक बाण भी दिया और कहा कि इसे पृथ्वीराज को दे दो। वह इस बाण के बल से शत्रु समूह का नाश करके सकुशल संयोगिता से व्याह कर सकेगा। यह वही बाण है जिससे भगवती ने महिषासुर को मारा, राम ने रावण को संहारा, पारथ ने भारथ का युद्ध जीता और शिवजी ने त्रिपुरासुर का नाश किया।

इतना कहकर देवता अन्तर्ध्यान हो गया। और उस बन प्रान्त को कंपायमान करती हुई चतुरंग सेना आगे बढ़ी। तब तक देखते क्या हैं कि दुष्टों को दंड देकर आरतों के त्राणकर्त्ता त्रिनेत्र त्रिपुरारी श्रीशिव जी सर्वांग विभूति रमाए बड़े बड़े जटा लटकाए डूंडा बैल पर चढ़े हुए चले आरहे हैं। उस भव के भव विभव पराभव कारी विभूति प्रिय विश्वंभर भोलानाथ के शीश पर गंगा थी, गले में गरल था और उनका अंग आवरण एक गज चर्म था। शिवजी को देखतेही सबके सब घोड़ों पर से उतर पड़े और पृथ्वीराज दौड कर उनके पैरों पर साष्टांग पड गया। इस पर शिवजी ने उसके पीठ पर हाथ रक्खा और कहा कि पृथ्वीराज तू अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त करेगा। यह कहकर और विभूति दे कर शिवजी अन्तर्ध्यान हो गए। शिवजी के विदा होने पर चार पैंड भी न चले होंगे कि एक अत्यन्त तेजस्वी ब्राह्मण नरनाह कन्ह के सम्मुख आकर खड़ा होगया। उसे देखते ही कन्ह की आंखों के पट्ट आपही आप खुल पड़े। कन्ह उस उज्ज्वल मूर्ति ब्राह्मण के चरणों पर गिर पड़ा। उसने कन्ह के सिर पर हाथ फेर कर कहा युद्ध विद्या में अद्वितीय दक्ष, सदा यशस्वी मेरे अंश से उत्पन्न कन्ह अब मेरा तेरा साक्षात् सूर्यमंडल में होगा। इतना कह कर वह ब्राह्मण भी अन्तर्ध्यान हो गया। इसके बाद पृथ्वीराज कोई एक योजन मात्र गया होगा कि एक घन एवं पर्व्वत के समान भीष्म काय विद्युत के समान तेजमान नाना रंग की बैरखें और झंडियों से विभूषित एक बड़ी भारी देवमूर्ति देख पड़ी। उसके साथ में भिन्न भिन्न वाद्यों की ध्वनि से मुखताल बजाते हुए अगनित भूत वैताल साथ थे। यह देख कर पृथ्वीराज ने राजमन्त्री जैनराव की तरफ देखा। तब कविचन्द बोला "यह हनुमान जी हैं" यह कह कर कविचन्द आगे हो कर बोला "हे कपिवर आपके स्वरूप और बल का कौन पार पा सकता है। हम मन्द बुद्धि मनुष्य आपकी महिमा को क्या जाने। कृपा कर साधारण स्वरूप धारण कीजिए।" हनुमानजी के अन्तर्ध्यान होतेही स्वर्ण के सहस्र भुजावाले भूमवर्ण सहस्रबाहु की प्रतिमूर्ति के दर्शन हुए। उसके नेत्रों से अग्नि की सी चिनगारियाँ छूट रही थीं उसकी हजार हथेरी साक्षात् शेर केसे पंजे थे। कंध पर धनुष और शीश पर ध्वजा फहरा रही थी-उसके साथ में एक ओर डाकिनी और एक ओर शेर शोर कर रहे थे। निदान उसने भीमकाय लंगोट बन्द लगरीराय के पास जाकर उसके शीश पर हाथ दिया और आशीर्वाद देकर वह भी अन्तर्ध्यान हो गया। वहा से एक योजन आगे जाने पर उज्ज्वल वर्ण मान सूंड और हजार दांत वाले भद्र जाति के एरावत नामक दंती पर सवार सूर्य्य के समान तेजधारी इन्द्र ने आकर गोइन्दराय के सिर को स्पर्श किया और कहा कि अब मैं तुमसे स्वर्ग में मिलूंगा। कुछ दूर और आगे जाने पर एक बावली के किनारे एक बट वृक्ष मिला। इस बट वृक्ष में एक खोंग थी जिसमें से सूर्य्य के समान एक अद्वितीय तेज

(१) तुम हम मंडल गढ़ि मिलन वहां पर दिखलाया गया है कि कन्ह का सूर्य्य का इष्ट था। इसी तरह आगे और भी सब सामन्तों के इष्ट देवों की सूचना दी गई है।

सूचना ।

—o—

निम्न लिखित पुस्तकें "सेक्रेटरी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी" को लिखने से मिल सकती हैं ।

	मूल्य	डाकव्यय
मलिक मुहम्मद की मकरावट	।=)	) ॥
कविवर बिहारीलाल–(बाबू राधाकृष्णदास रचित)-	=)	) ॥
हिन्दी भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास (बाबू राधाकृष्णदास रचित)	।)	) ॥
समालोचना-(पण्डित गंगाप्रसाद अग्निहोत्री द्वारा अनुवादित) ...	=)	) ॥
समालोचनादर्श -पद्य–(बाबू जगन्नाथ दास रचित) ...	≡)	) ॥
कर्तव्याकर्तव्यशास्त्र– (पण्डित नारायण पांडे रचित) ...	॥)	–)
विसूचिका चिकित्सा	।)	) ॥
हरिश्चन्द्र–पद्य–(बाबू जगन्नाथ दास रचित)	=)	) ॥
भगवद्गीता–(बाबू गदाधरसिंह द्वारा अनुवादित) ...	।–)	) ॥
उथेलो–(बाबू गदाधरसिंह द्वारा अनुवादित)	≡)	) ॥
नागरीप्रचारिणी पत्रिका (सभा द्वारा सम्पादित) १२ भाग छप चुके हैं (आठवां भाग नहीं है) मूल्य–प्रति भाग	१)	–)
हिन्दी लेकचर–(बाबू हरिश्चन्द्र रचित)	–)	) ॥
ध्रुवदास की भक्तनामावली, टिप्पणी सहित	॥≡)	–)
सदलमिश्र की चन्द्रावती	।–)	) ॥
सूदन कवि का सुजानचरित्र	२)	=)
लाल कवि का छत्रप्रकाश	२।)	–)
नन्ददास की रासपञ्चाध्यायी	।=)	) ॥
प्राचीन-लेख-मणि-माला–१ भाग (बाबू श्यामसुन्दर दास लिखित) ...	१)	–)
अशोक का जीवनचरित्र (ठाकुर सूर्यकुमार वर्म्मा लिखित) ...	।)	) ॥
नेपाल का इतिहास (पण्डित नारायण पांडे लिखित)	।–)	) ॥
पृथ्वीराजरासो–पहिला भाग (समय १–११)	४)	।)
„ दूसरा-तीसरा भाग (समय १२–५४)	१०)	॥)
कुमारसम्भवसार (पण्डित महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा अनुवादित) ...	≡)	) ॥
श्रीधर का जंगनामा	।॥)	–)
धम्मपद (ठाकुर सूर्यकुमार वर्म्मा लिखित)	॥)	–)
सभा के पुस्तकालय की सूची	=)	) ॥
मनोविज्ञान (पण्डित गणपत जानकी राम दूबे लिखित)	॥)	–)
चन्द्रशेखर का हम्मीर हठ	॥)	) ॥

महिलामृदुवाणी (मुंशी देवीप्रसाद लिखित)	१)	-)
दादूदयाल की बानी	१॥)	=)
कवि नूरमुहम्मद की इन्द्रावती १ भाग	१॥)	=)
यूरोपीय दर्शन (पण्डित रामावतार पांडेय लिखित)	॥)	-)
प्रबोधचन्द्रिका	॥)	-)
विरहलीला-आनन्दघन कृत	=)	)॥
दादूदयाल का सबद	१)	=)
जोधराज का हम्मीररासो	२)	=)
सरल व्यायाम (बाबू कालिदास लिखित)	=)	-)
सुघड़ दर्जिन (बाबू ठाकुर प्रसाद लिखित)	॥)	-)
पद्माकर कृत हिम्मतबहादुर विरदावली	॥=)	)॥
वनिताविनोद	१)	=)
नवीन दृष्टि में प्रवीन भारत	१)	-)
गीतावली	।)	)॥
योगदर्शन	२)	-)
गुरु गीता	।)	)॥
रामचरितमानस	८)	॥)

नोट—ऊपर लिखी पुस्तकों में से अन्त की ७ पुस्तकों को छोड़कर शेष पुस्तकें आधे मूल्य पर काशी नागरीप्रचारिणी सभा के सभासदों को मिल सकती हैं। अन्तिम पुस्तक का मूल्य सभासदों के लिये ६॥) रु० है।

Nagari-Pracharini Granthmala Series No. 4-16

THE PRITHVÍRÁJ RÂSO

OF

CHAND BARDÂI,

EDITED

BY

Mohanlal Vishnulal Pandia, & Syam Sundar Das, B. A.

With the assistance of Kunwar Kanhaiya Ju.

CANTO LXI. *(Contd.)*



महाकवि चंद बरदाई

कृत

पृथ्वीराजरासो

जिसको

मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या और श्यामसुन्दरदास बी. ए. ने

कुँअर कन्हैया जू की सहायता से

सम्पादित किया।

पर्व ६१। (असमाप्त)

PRINTED BY THAKUR DAS, MANAGER, AT THE TARA PRINTING WORKS, AND PUBLISHED BY THE NAGARI-PRACHARINI SABHA, BENARES.

1909.

मूल्य १।)] Issued 15th May 1909. [*Price Re. 1/4/.*

सूचीपत्र ।

(६१) कनवज्ज समय (अपूर्ण) .... पृष्ठ १८०१ से १९२८ तक
रासोसार .... २६३ ,, २९४ ,,

पाल्हन और कूरंभ की उदंड वीरता और दोनों का मोक्ष पद पाना।

परे मथ्थ विप्पहर । पल्ह पज्जून बंध वर ॥
रज रज तन किय हटकि । कटक कमधज्ज कोटि भर ॥
ईस सीस संहर्यो । हथ्थ सों हथ्थ न मुक्कयौ ॥
हूर मुओ सुख हथ्थौ । बीर बीरा रस तक्कयौ ॥
मार त अरिन कूरंभ झुकि । ते रवि मंडल भेदियै ॥
डोल्यौ न रथ्थ संमुष चल्यो। कित्ति कला नह देखियै ॥
छं०॥ १४९२ ॥

गंग डोलि ससि डोलि । डोलि ब्रह्मंड सक्र डुल ॥
अष्ट थान दिगपाल । चाल चंचाल विचल थल ॥
फिरि रुक्यौ प्रथिराज । सबर पारस पहु पंगिय ॥
च्यारि च्यारि तरवारि । बीर कूरंभति सज्जिय ॥
नंघिय पहुप्प इक चंदने । एक कित्ति जंपत बयन ॥
बे हथ्थ दरिद्री द्रव्य ज्यौं । रहे हूर निरषत नयन ॥छं० ॥ १४९३ ॥

पज्जूनराय का निपट निराश होकर युद्ध करना।

दूहा ॥ भीर परी पहुपंग दल । भये चतिय पहुराम ॥
तब पज्जून संमुह करन । मरन कृत्य किय काम ॥छं० ॥ १४९४ ॥

भुजंगी ॥ भिरें बीर पज्जून यों पंग जानं। बहै पग्ग अघ्घाइ अघ्घाइ बानं॥
करौ छिन्न भिन्नं सनाहंति जीनं। हयं अंस बंसं द्रुमं बीर कीनं॥
छं० ॥ १४९५ ॥

महा हूर बीरं बुलै क्रूर बानी। चल्यौ धार पज्जून संसार जानी॥
करी अग्ग पच्छं सु दूनं दिषंबे। भयौ स्वामि सन्नाह बैरी छुडंबे॥
छं० ॥ १४९६ ॥

पहू पंग राहं लग्यौ भान राजं। भुजा दान दीनौ षगं मग्ग साजं॥
बुलै मुष्प कूरंभ सो वन्न राई। मिलै हथ्थ बथ्थं रुपे सेस पाई ॥
छं० ॥ १४९७ ॥

कवी जीह जंपै सु पज्जून इथ्थं। दुकं झारि उभ्भारि इथ्थं समथ्थं॥
अढ़े अथ्थ पज्जून ओपंम पाई। कु कुव्वी कला जे नहिं दू सभाई॥
छं० ॥ १४९८ ॥

गये तथ्थ नाही तुरी तत्त मत्ते। रह्यौ कुद्दरं मध्य ज्यौं जुद्ध रत्ते॥
दिष्यौ सामलं सिंह पुत्तं चरित्तं। बढ़े बांन ज्यौं पथ्थदानं सु [1]रथ्थं॥
छं० ॥ १४९९ ॥

दिषै यों पजूनं मिल्यौ सिंह रुष्यं। भिरंतं बसंतं भयौ ज्यों विरुष्यं॥
भई पंच आए प्रथीराज कामं। भए एक घट्टं भिरे तीन जामं॥
छं० ॥ १५०० ॥

पज्जूनराय के पुत्र मलैसी के वीरता और ज्ञान मय वचन।

दूहा ॥ है हम मंगल अब जियौ। मरन सुमंगल काज ॥
मरे पुत्र कों विप्र सुनि। भंजों तामस राज ॥ छं० ॥ १५०१ ॥
हम रत्ते कूरंभ रन। मरन सुमंगल होइ ॥
पंच पंचीस संवच्छरन। जाहु सु जीवन जोइ ॥ छं० १५०२ ॥

कवित ॥ आवरदा मत बरष। अद्ध तामें निसि छिन्निय ॥
अद्ध तास बै दुद्ध। बाल मझ्झै होइ हन्निय ॥
सुतह सोक संकट प्रताप। प्रिय चिय नित संग्रह ॥
वट्टि छोह रस कोह। दुद्ध दारुन दुय दुग्रह ॥
यों सनों सकल हिंदू तुरक। कोंन पुत्र को तात बर ॥
करतार इथ्थ तरवार दिय। इह सु [2]तत्त रजपूत कर ॥छं०॥१५०३॥

मलैसिंह का वीरता और पराक्रम से युद्ध करके मारा जाना।

भुजंगी ॥ तबै देषियं तात पुत्तं चरित्तं। मनों पिष्पियं बाह आयास मित्तं॥
घल्यो इथ्थ बथ्थं दुहथ्थं तनष्यौ। भिर्यौ इथ्थ बथ्थं रमं बीर धष्यौ॥
छं० ॥ १५०४ ॥

दिष्यौ एक एकं अनेकं प्रकारं। मनों ब्रह्म माया सु मायं अपारं॥
कष्यौ कंध होनं कमद्धं कलापं। लगी जुग्गिनी जाग माया अलापं॥
छं० ॥ १५०५ ॥

(१) ए. कृ. को.-सुमथ्थं। (२) मो.-तन

तुरै अंत पायं उरझ्झं मरोरं। मनों नाल कट्टै खिनालं 'गँभीरं।
तुथ्थौ बाज राजं विराजै दुकूलं। मधू माध वै जानि केहू सु फूलं॥
छं० ॥ १५०६ ॥

उरं बान मुष्यं अघानं प्रमानं। मनों घत पायै जु धावै क्रिसानं॥
कह्यो सह सामंत जै जै मलैसी। दुवं बंस तारै सुअंमाल तैसी॥
छं० ॥ १५०७ ॥

लगे घाव सट्ठिं परे धीर धंतं। उपान्यौ सु विप्रं भयौ सो अचेतं॥
पन्यो थौं पजूनं सुपुत्तं उचान्यो। भया इत्तने भान अस्तमित चान्यौ॥
छं० ॥ १५०८ ॥

उधर से रावण का कोप करके अटल रूप से युद्ध करते हुए आगे बढ़ना।

कवित्त ॥ तब रावन नं टरै। सिर न चंपिय चतुरंगी॥
हस्ति काल जमजाल। उठे गज झंपि मुपंगी॥

[1]पंग सेना की ओर से मतवारे हाथियों का झुकाया जाना।

पीलवान रायन्न। दई अंकुस गज मथ्थं॥
सुभर मौस गज झरौ। करौ आरूढ़ सुहंतथ्थं॥
[2]उम्मड़े मौर आयो अगह। कूह कहर पच्छै फिरिग॥
मै मत्त कोइ अप्पै अपन। अप्प सेन उप्पर परिग॥छं०॥१५०९॥

सामंतों का हाथियों को विचला देना जिससे पंग सेना की ही हानि होना।

अप्प सेन उप्परै। परे गजराज काज अरि॥
सेन पंग बिथ्थरी। मौर उच्छारि झारि धर॥
सर समूह परि पौल। बान मिट्ठी मंथानी॥
करी सम्ह कर वट्टि। मुष्य दीनं चहुआनी॥

(१) ५. कृ. को.-सरीरं। (२) ५. कृ. को.-उम्मडे पीर अगो अगह।

संमुह्यौ षग्ग सामंत सब । उररि सेन उप्पर परिय ॥
धनि धनि नरिंद सामंत सह । असी लष्ष सम सों भरिय ॥
छं० ॥ १५११० ॥

सामंतों के कुपित हो कर युद्ध करने से पंग सेना का छिन्न भिन्न होना इतने में सूर्य्यास्त भी हो जाना।

भुजंगी ॥ मिले लोह हथ्थं सुबथ्थं हँकारे। उड़ै गेंन लग्गैं मकं सार झारे ॥
कटै कंध कामंध संधं निनारे । परें जंग रंगं मनों मत्तवारे ॥
छं० ॥ १५११ ॥
झरं संभरी राव सो सारझारे । जुरे मल्ल हल्लै नहीं ज्यौं अषारे॥
जबै हार मन्ने नहीं को पचारे । तबें कौपियं कन्ह मैं मत्त वारे ॥
छं० ॥ १५१२ ॥
जबै अप्पियं मार हथ्थं दुधारे । फटै कुंभ झूमंत नीसान भारे ॥
गहे सुंड दंतीन दंती उभारे । मनों कंदला कंदु [1]भीलं उपारे ॥
छं० ॥ १५१३ ॥
परे पंगुरें पंडुरे मीर सीसं । मनों जोगजोगीय लागंत रीसं ॥
बहै बान कम्मान दीसै न भानं । भ्रमै गिद्धनी गिद्ध पावै न जानं॥
छं० ॥ १५१४ ॥
लगे रोह रत्ते अरत्ते करारं । मनों गज्जियं मेघ फट्टै पहारं ॥
दई कन्ह चहुआन अरि पील सीसं। करी चंद कब्बी उपम्मा जगीसं॥
छं० ॥ १५१५ ॥
तितं मंग मंधी महा पील मत्तं । मनों पंचियं द्रोन बरबाय पुत्तं॥
किधों पंचियं राम हथिना पुरेसं।किधों पंचियं मथन गिरिमुर सुरेसं।
छं० ॥ १५१६ ॥
किधों पंचियं कन्ह गिरि गोपिकाजं । धरी सीस ऐमी सुभट्टं विराजं।
[2]रूरै पंत रत्तं सु रत्तं करारं । सुरै कंठ कंठी न लागै उभारं॥
छं० ॥ १५१७ ॥
मुरं श्रोन रंगं पलं पारि पंकं । वजे बंस नेसं सुबेसं करंकं ॥

(१) प०-नीलं। (२) प० क्र. को.-रुपै

द्रुमं ढाल ढालं सु लालं सुबेसं। गए हंस नंसी मिले हंस बेसं॥
छं० १५१८॥

परे पानि जंघं धरंगं निनारे। मनों मच्छ कच्छा तिरंतं उभारे॥
सिरं सा सरोजं कचं सासि वाली। गहै अंत गिद्धी सु सोहै सनाली॥
छं० ॥ १५१९॥

तटं रंभ थम्भं भरत्तंब चीरं। कितं स्याम सेतं कितं नील पीरं॥
बरै अंग अंगं सुरंगं सु भट्टं। जिते स्वामि काजै समप्पै जु घट्टं॥
छं० ॥ १५२०॥

तिते काल जम जाल हथ्थी समानं। हुअै इत्तनै जुद्ध अस्तमित भानं॥
छं० ॥ १५२१॥

कन्ह के अतुलित पराक्रम की प्रशंसा।

कवित्त ॥ तब सु कन्ह चहुआन। गहिय करवान रोम भरि॥
असिय लष्प चिन गनिय। हनत हय गय पय निंदरि॥
करत कुंभस्थल घाव। चाव धवगुन धरि धीरह॥
तुवक तीर तरवार। लगत मंक्यौ न सरीरह॥
कहि चंद पराक्रम कन्ह कौ। दिय ढहाय गेंवर समर॥
उछरंत छिंछ स्रोनित सिरह। मनहु लाल फरहरि चमर॥
छं० ॥ १५२२॥

सारंगराय सोलंकी का रावण से मुकाबला करना और मारा जाना।

सोलंकी मारंग। बीर रावन आरुढ्ढिय॥
दुअ सु हथ्थ उत्तंग। तेग लंबी सा लुढ्ढिय॥
दो मरद्दह आरुढ्ढ। रुद्ध भानं भिल्लोरिय॥
टोप फुट्टि सिर फुट्टि। छिंछ फुट्टिय कविलोरिय॥
निल वट्टि फुट्टि पलवन्न वन। कै ज्वाल माल पावक पसरि॥
तन भंग घाय अरि संग करि। पत्ति पहुर चालुक्क परि॥
छं० ॥ १५२३॥

(१) ए. कृ. को. रथं।

सौलंकी सारंग की वीरता।

ब्रह्म चालुक ब्रह्म चार। ब्रह्म विद्या वर रष्पिय॥
केस डाभ अरि करिय। रुधिर पन पच विसष्पिय॥
षग्ग गहिग [1]अंजुलिय। नाग गहि नासिक तामं॥
धरनि अषर दुहुं अवन। जाप जापं मुष रामं॥
सिर फेरि षग्ग सम्हौ धर्‍यौ। दुअन तार मन उल्हसिय॥
अष्टमी जुद्ध सुक्रह अथमि। सुर पुर जा सारँग बसिय॥
छं० ॥ १५२४ ॥

सायंकाल पर्य्यंत पृथ्वीराज के केवल सात सामंत और पंगदल के अगनित बीरों का काम आना।

भुजंगी॥ परे मत्त सामंत सा मत्त कोटं। पलं चंपियं बीर भै मोम ओटं॥
लगी अंग अंगं कहुं पंग [2]मथ्थं। किधौं वज्र छुट्टै कि वज्रीय हथ्थं॥
छं० ॥ १५२५ ॥

वहै गग्ग मग्गं प्रचारे सु बीरं। झलै षग्ग नीरंजिनें मुष्प नीरं॥
लरै सत्त बीरं दिष्पै सब्ब थट्टं। हरी एक माया करै घट्ट घट्टं॥
छं० ॥ १५२६ ॥

षगं मग्ग सेना जुपंगं हलाई। मनों बोहथी मारुतं कै रुलाई॥
दुती देषतें ओपमा कव्वि पाई। मनों बीर चक्कं कुलालं चलाई॥
छं० ॥ १५२७ ॥

भषै काइ पंषी किअग्गी कि दाही। तुटैधार मग्गं लियै अंग लाही॥
बरै काहि दूरं शिवं माल काकी। ढुढै ब्रह्म लोकं मलाकं सुताकी॥
छं०॥ १५२८ ॥

ननं देव ओपम्म मी धन्नि जाकी। लगी नाहि माया तजे तंत ताकी॥
वजे लौहि आनं फिरी ग्रेह मग्गी। तिनं तेज छुट्टं सुरं ग्रेह भग्गी॥
छं०॥ १५२९॥

(१) मो. अंगुरिय। (२) मो.-मथ्थं।

दूहा ॥ भान विहान जु देषि कै । पिषि सामंत सु सूर ॥
पिनुकन धीरं तनु धरहि । तीरथ इक्क्थौ कूर ॥
छं० १५३० ॥

गाथा ॥ निसि गत बंछिय भानं । चक्की चक्काइ सूर साचित्तं ॥
विधु संजोग वियागी । कुमुद कली कातरां नांचं ॥
छं० १५३१ ॥

प्रथम दिन के युद्ध में पंगदल के मृत मुख्य सरदारों के नाम ।

कवित्त ॥ प्रथम मार सामन्त । सहिय मीरन इत मित्तिय ॥
बाघ राव बघेल । हेल इन उप्पर वित्तिय ॥
उभय उमगि गजराज । काज किन्नौ प्रथिराजह ॥
इकति सुंड आषारि । एक [1]मिंडिग पग पाजह ॥
पुंतार डरह कट्टारि कर । परिग षित्त तेषिन न जिय ॥
इह जुद्ध मच्चि चहुआन सों । प्रथम केलि कमधज्ज किय ॥
छं० ॥ १५३२ ॥

मृत सात सामन्तों के नाम ।

दाहिम्मौ नरसिंघ । पर्यौ नागौर जास धर ॥
पर्यौ गंजि गहिलोत । नाम गोयंद राज बर ॥
पर्यौ चंद पुंडीर । चंद पिष्यौ मारंतौ ॥
मोलंकी सारंग । पर्यौ असिवर झारंतौ ॥
कूरंभ राव पाल्हन दे । वंधव तीन सु कट्टिया ॥
कनवज्ज रारि पहिलै दिवस । सौमेसत्त निघट्टिया॥छं०॥१५३३॥

पंगदल के मारे गए हाथी घोड़े और सैनिकों की संख्या ।

दूहा ॥ उभै सहस्स हय गय परिग । निसि निग्रह गत भान ॥
सत्त सहस्स असं मीर हनि । थल बिंध्यौ चहुआन ॥छं० ॥ १५३४ ॥

(१) ए.-कृ. को.-टुटै । (२) भो-मांडग ।

जैचन्द के चित्त की चिन्ता।

कवित्त ॥ चित्त [1]चिंता कमधज्ज। देषि लग्गी चहुआनं ॥
प्रथम जुद्ध दरबार। सूर मद्दे असमानं ॥
घटिय मत्त दिन उद्ध। जुद्ध लग्गे सु महाभर ॥
अस्त काल [2]सम मीर। परे धर सूर अप्प धर ॥
सामंत सत्त प्रथिराज परि। करे क्रम्म अतुलित्त सह ॥
प्रथिराज तरनि सामँत किरनि। थपी तेज आरेन यह ॥
छं० ॥ १५३५ ॥

जैतराव का चामण्डराव के बन्दी होने पर पश्चात्ताप करना।

पज्जूनह उप्परह। राज प्रथिराज सँपतौ ॥
गरुअ राय गोयंद। घाव अघाइ सँसतौ ॥
चाइ चित्त चहुआन। कन्ह किन्नौं कर उभ्भौ ॥
रा रंडी ठिल्लगैय। आज लग्गौ मन दुभ्भौ ॥
धाराधि नाथ धारंग धर। जैत जीत कौनौ रुदन ॥
चामंड डंस मुक्यौ सुग्रह। रष्पन छिति छत्ती हृदन ॥छं०॥१५३६॥

अष्टमी के युद्ध की उपसंहार कथा।

दूहा ॥ जिहि ग्रह निग्रह पथ्थिवर। बँधि मनाइ सयन्नि ॥
मन बँधिय अच्छरि बरन। बंधि अँग सँजोगिन्नि ॥
छं० ॥ १५३७ ॥

पद्धरी ॥ बंधे सनाह न्वप सेन कौन। सोगौ उपम्म मनु रंभ दीन ॥
आवृत्त पंग बज्जे निसान। भै चितन लग्गि बर चाहुआन ॥
छं० ॥ १५३८ ॥

तिन सुनी जानि पंगुर नरेस। जनु मत्त जुद्ध जुग्गिनिपुरेस ॥
जनु पंग विषम धुक्किय सयन्न। जुध सभें बीर विध पियन अन्न ॥
छं० ॥ १५३९ ॥

(१) ए. कृ. को.-मंम। (२) ए. कृ. को.-नथ्थ।

आवृत्त भूमि रनहक्कि वीर। कंपंत वष्प, कायर अधीर ॥
इक्कंत [1]त्रप्प सो पंच वीर। सुनि अवन हास नारद गँभीर ॥
छं० ॥ १५४० ॥
उर ग्रहन बाल दंपति मनाह। दिवि उदित पत्ति रत्तीस दाई ॥
षट्पंग वीर संवर सु ताम। मनु बँधिय सेन रति पत्तिकाम ॥
छं० ॥ १५४१ ॥
सोभै मनाह उज्जल अवभ्भ। चमकंति भान द्रप्पनति मभ्भ ॥
निस गयति अद्ध ससि उदित वीर। बज्जे सु बज्जि मद्यत सुमीर ॥
छं० ॥ १५४२ ॥

पृथ्वीराज की वाराह और पंगराज की पारधी से उपमा वर्णन।

कवित्त ॥ अद्ध रयनि चंदनिय। अद्ध अग्गै अँधियारिय ॥
भोग भरनि अष्टमिय। सुक्र वारह सुदि रारिय ॥
च्यारि जाम जंगलिय। राव निमि निंदन घुंध्यौ ॥
थल विंध्यौ कमधज्ज। रच्यौ कंदल आहव्यौ ॥
इम कोस कोस कनवज्ज तैं। कोस कोस अंतर अनिय ॥
वाराह राह जिम पारधी। इम रुक्यौ संभरि धनिय ॥ छं०॥१५४३ ॥
राह राह वाराह। झार सामंत डढारे ॥
ढिल्ली ढार जुझार। पंच सूरति रघवारे ॥
रन सिंघार झुझझार। उट्ठ बट्ठा उच्छारे ॥
पारथ [2]बर पथ्थियै। सत्त स्वामित्त सु धारे ॥
पारस विलास रा पंग दल। धन जिम धर बंबरि दवन ॥
संग्राम धाम धुंधरि परिय। निसि न्निघात तारह छवन ॥
छं० ॥ १५४४ ॥

अंधेरी रात में मांसाहारी पशुओं का कोलाहल करना।

चंद्रायना ॥ तारक मंत प्रगट्टिय। थट्टिय पंषियन ॥
अंषिन अद्ध उरद्धन। अद्धन निंद मन ॥

(१) ए. कृ.को. तथ्थ। [२] ए. कृ. को. वीर।

ढिल्लिय ढाल कुलाल। कुलाहल किन्नरन।
ढिल्लिय नाथ सु हाथ। ममथ्थिन अथ्थियन ॥ छं० ॥ १५४५ ॥
दूहा ॥ अद्ध अवन्निय चंद किय। तारस मारू भिन्न ॥
पलचर रुधिचर अंस चर। करिय रवन्निय रिन्न ॥ छं० ॥ १५४६ ॥

सामंतों का कमल व्यूह रचकर पृथ्वीराज को बीच में करना।

कवित्त ॥ चावहिमि रपि सूर। मद्धि रथ्थौ प्रथिराजं ॥
ज्यौं सरद काल रस सोच। मद्धि ससि [1]जुत्त विराजं ॥
ज्यौं जल मद्धित जोत। तपति वड़वानल सोहं ॥
ज्यौं [2]कल मद्धे जमन। रूप मधि रत्तौ मोहं ॥
इम मद्धि राज रथ्थौ सुभर। नरन सकल निंदौ सु बर ॥
सब मुष्प पंग रुक्कौ सु बर। सो उप्पम जंप्यौ सु गिर॥छं०॥१५४७॥

पृथ्वीराज का प्रिया के साथ सुख से शेष रात्रि बिताना।

चंद्रायना ॥ मिच महोदधि मझ्झ। दिमंत ग्रमंत तम।
पथिक बधू पथ द्रष्टि। अहट्टिय चग जिम ॥
जुवजन जुवतिन गंजि। सुमंति अनंग लिय ॥
जिम मारम रस लुद्ध। सुमुद्ध मद्ध तिय ॥ छं० १५४८ ॥
चांद्रायन ॥ पहं [3]चारु रुचि इंद इंदीवर उद्दयौ।
नव [4]बिहार नवनह नवज्जल रुद्दयौ ॥
भूषन सुभ्भ ममीपनि मंडित मंड तन।
मिलि अद्दु मंगल कौन मनोरथ सब्ब मन ॥ छं० ॥ १५४९ ॥
श्लोक ॥ जितं नलिनीं तितं नीरं। जितं नलिनी [5] जलं तितं ॥
जतो गृह ततो गृहिणी। जच गृहिणी ततो गृहं ॥ छं० ॥ १५५० ॥

सब सामन्तों का सलाह करना कि जिस तरह हो इस दंपति को सकुशल दिल्ली पहुंचाना चाहिए।

दूहा ॥ मिलि मिलि बर सामंत सह। न्वप रथ्थन विचार ॥

---

(१) मो.-जुद्ध। (२) ए. ह. को.-कमल। (३) मो. यह।
(४) मो.-विग्रहा। (५) ए. कृ. को-नीरं।

चलै राज निज तरुनि सम। इहै सुमत्तह सार ॥ छं० ॥ १५५१ ॥

जैतराय निढुर और भोंहा चंदेल का विचारना कि नाहक की मौत हुई।

कवित्त ॥ रा निढुर राजैत। राव भोंहा भर चिंतिय ॥
सो अरिष्ट उप्पज्यौ। मरन अपकित्ति सुनंतिय ॥
छच्छंदरि ग्रहि अप्प। ग्रहन उग्रह को सुझ्झह ॥
मरि छुट्टौ कैमास। मंत जग्गिय ता मझ्झह ॥
निप कियौ सुभयौ इन भट्ट मथ। तट्ट भेप राजन कियौ ॥
परपंच पंच बंधहु सुपरि। जौगिनि पुर जाइ सुजियौ ॥
छं० ॥ १५५२ ॥

आकाश में चाँदना होतेही सामंतों का जागृत होना और राजा को बचाने के लिये व्यूह बद्ध होने की तैयारी करना।

राजनिद्रि कै काज। सूर जग्गे जम पहरैं ॥
पलह चोर लगि आय। ध्रम्म लज्जा रषि गहिरै ॥
छुध पिपास निद्रान। जानि हवि दीन पछित्तिय ॥
पँच इंद्री मुष बंधि। भए जागिंद सु गत्तिय ॥
जहं लगि निद्रि यप रचन रहै। तहं लगि मच, पर बीर उत ॥
सब मिलिरु सूर पुच्छहि सुमति। अप्प रहै कहुँ न्वपति ॥
छं० ॥ १५५३ ॥

पति बर बर चहुआन। काम चहुन पंगी [1]भय ॥
झेमादक उनमाद। मुक्कि मोहन मापन लय ॥
हय गय नर मर नारि। गोर चिहुकोद चलाइय ॥
लाज कोट चहुआन। दुहुन दंती दुहुलाइय ॥
मन रुक्कि मार दल रुक्किदल। उग्गि चंद कविचंद कहि ॥
सामंत सूर उच्चारि तब। कहौ मंत फुनि प्रत्त लहि ॥ छं० ॥१५५४॥

(१) ५. कृ. को.-बस ।

मिले चंद सामंत। मंति सा धृम्म विचारिय ॥
इह सुवेह मंगलिय। होइ मंगल अधिकारिय ॥
मुगति भुगति अप्पियै। जुगति लभ्भै न जुगंतह ॥
जस मंगल तन होइ। काम मंगल सुभ जै ग्रह।
कढ्ढियै स्वामि तन बढ्ढियै। चढ्ढियै धार धारह धनी ॥
मंगलन होय इह अन्न की। पति रष्यै पति अप्पनी ॥ छं०॥१५५५॥

गुरुराम का कन्ह से कहना कि रात्रि तो बीती अब रक्षा का उपाय करो।

दूहा ॥ मानि मंत सामंत सह। चलिग बोलि दुजराज ॥
स्वामि धृम्म पत्तिय सु पति। चलि पुच्छन प्रथिराज ॥छं० ॥ १५५६॥
क्रन्न लग्गि कहि कन्ह सौं। तकित राय अनुबत्त ॥
निसा अप्प ग्रह कियन कछु। प्रात परै इह [1]छत्त ॥छं०॥१५५७॥

कन्ह का कहना कि औघट से निकल चलना उचित है।

कवित्त ॥ कहै कन्ह तम सुद्ध। मूढ़ राजन जिनि[2]संगह ॥
उड्ड मरन तैं डरह। काइ भग्गहु अनभंगह ॥
कहिय राव पज्जून। सोच बित्तक इह वित्तिय ॥
असुर बुद्धि असुरिय। भट्ट मंडन किय कित्तिय ॥
गारुडिय ग्रह्यो अंमृत मितिय। विषम विष्प नख उत्तरै ॥
[3]अवघट्ट घाट नंयै नृपति। दैव घाट संमुह करै ॥ छं०॥१५५८ ॥
जिहि देवल भर कोट। सूर सामंत थंभ धर ॥
कित्ति कलस आरुहिय। नीम जीरन जुग्गह कर ॥
सार पट्ट पट्टयौ। चित्र मंड्यौ सु उकति अप ॥
धर्यौ पुहुप पहुपंग। करौ पूजा सु बीर जप ॥
मा भ्रम्म बचन लग्गौ चरन। देव तेव प्रथिराज हुअ ॥
वामंग अंग संजोगि करि। लच्छि रूप मंड्यौ सु धुअ ॥
छं० ॥ १५५९ ॥

(१) मो.-वत्त। (२) मो.-संग्रह। (३) ए. आवट्टनाव।

राजा पृथ्वीराज का सोकर उठना।

दूहा ॥ सुनी मत्त कन्नह नृपति। जगी मंजोगि निवारि ॥
वीर रास उच्चो न्रपति। मनु रजि रुद्र मार ॥ छं० ॥ १५९० ॥

पृथ्वीराज से सामंतों का कहना कि आप आगे बढ़िए हम एक एक करके पंग सेना को छेड़ेंगे।

कवित्त ॥ मिलिरु सब्ब सामंत। बोल्ल मांगहिति नरेसर ॥
आप मग्ग लग्गियै। मग्ग रष्यै इक्क इक्क भर ॥
इक्क इक्क जूझंत। दंति दंतन ढंढोरहि ॥
जिके पंग रा भौछ। मारि मारिन मुष मोरहि ॥
हम बाल रहै कल अंतरै। देहि स्वामि पारथ्थियै ॥
अरि असी लष्प की अंग मैं। बिना राइ मारथ्थियै ॥छं०॥१५९१॥

सामंतों का कहना कि सत्तहीन क्षत्री क्षत्री ही नहीं है।

कहै सूर सामंत। सत्त छंडै पति छिज्जै ॥
पत्ति छिज्जत छिज्जैत। नाम छिज्जत जस छिज्जै ॥
जस छिज्जत छिज्जै सुगति। सुगति छिज्जत क्रम बद्दै ॥
क्रम बद्दत बद्दै अकिति। अकिति बद्दहि नृक दिज्जै ॥
दिज्जियै नृक कद्दन कुमति। करनी पति तै जान भर ॥
छिची निछित्ति सत गरुअ निधि। सत छंडै छची निगर ॥
छं० ॥ १५९२ ॥

सामन्तों का कहना कि यहां से निकल कर किसी तरह दिल्ली जा पहुंचो।

ममद सेन पहुपंग। धार आवध नभ लग्गिय ॥
चढि वा हिथ्थत सामि। पैज लगि अंकिन मग्गिय ॥
स्वामि सुष्य भुग्गियै। श्रित भुग्गै जु सुगति रस ॥
जगि जीवन प्रथिराज। गिल्यौ मष्पीज जंप जम ॥
मिष्टान पान भामिनि भवन। चूक कह्यौ जू उप्पनौ ॥

चहुआन नाय जोगिनिपुरह। धर रष्यै बर अप्पनौ ॥
छं० ॥ १५९३ ॥

राजा का कहना कि मरने का भय दिखाकर मुझे क्यों डराते हो और मुझ पर बोझ देते हो।

मति घट्टौ सामंत। मरन भय मोहि दिषावह, ॥
जम चिट्ठौ बिन कहन। होइ सो मोहि बतावह ॥
तुम गंज्यौ भर भीम। तास ग्रब्बह मैमंतौ ॥
मैं गोरी साहाब। साहि सरबर साहंतौ।
मैरैंज सुरन हिंदू तुरक। तिहि सरनागत तुम करहु ॥
बुझियै न सूर सामंत हौ। इतौ बोझ अप्पन धरहु ॥ छं०॥१५९४॥

पृथ्वीराज का स्वयं अपना बल प्रताप कहना।

राव सरन रावत्त। जदहि धर पायै आवै ॥
राव सरन रावत्त। जदहि कछु पटौ लिषावै ॥
राव सरन रावत्त। काल दुक्काल उबारहि ॥
राव सरन रावत्त। जदहि कोइ 'अनिबर मारहि ॥
रावत्त सरन नित राव कै। कहा कथन काहावता ॥
संग्राम बेर मुष्ष्ै सुभर। राव सरन तदि रावता॥छं०॥१५९५॥
मैं जित्तौ गढ द्रग्ग। मोहि सब भूपति कंपहि ॥
मोहि कित्ति नव षंड। पहमि बंदौ जन जंपहि ॥
मैं भंजै भिरि भूप। भिरवि भुजदंड उपारे ॥
होंब कहा मुष कहौं। कौंन पग पत विथारे ॥
मैं जित्ति माहि सुरतान दल। मुहि अमान जानै जगत ॥
चहुआन राव इम उच्चरै। इं देष्यौ कब कौ भगत ॥छं०। १५९६॥

सामंतों का कहना कि राजा और सेवक का परस्पर का व्यवहार है। वे सदा एक दूसरे की रक्षा करने को बाध्य हैं।

बन रापै ज्यौं सिंघ। बिंझ बन रापहि सिंघहि ॥

(१) मा. आमिवर।

धर रप्पै यौं भुअंग। धरनि रप्पैति भुअंगह ॥
कुल रप्पै कुल वधू। वधू रप्पैति अप्प कुल ॥
जल रप्पै ज्यौं हेम। हेम रप्पैति सब्ब जल ॥
अवतार जबहि लगि जीवनौ। जियन जम्म सब आवतह ॥
रावत्त तेहरा रप्पनौ। राजन रप्पहि रावतह ॥ छं०॥ १५९७ ॥

सामंतों का कहना कि तुम्हीने अपने हाथों अपने बहुत से शत्रु बनाए हैं।

तें रप्यौं रा भान। पान रप्यौ हूसेनं ॥
तें रप्यौ पाहार। सुरन किन्नर सो मेनं ॥
तें रप्यौ तिरहूंति। कहि तोंअर तत्तारी ॥
तें रप्यौ पंडयौ। डंडि नाहर परिहारी ॥
रप्पनह ढोल ढिल्ली सुरह। गौर भान भट्टी मरन ॥
चहुआन सुनौ सोमेस सुअ। अरिन अब्ब दिज्जे मरन ॥छं॥१५९८॥

सामंतों के स्वामिधर्म की प्रभुता ॥

अति अग्गें हठ परहि। चोट चिहु रत्तन घल्लहि ॥
परे लेहि परि गाहि। दाह दुअननि उर सल्लहि ॥
पहु डोलंत पल्लै परंत। पाय अच्चल चलहि कर ॥
अंत असन मिर सहहि। भाव भल पनति लहहि भर ॥
बरदाय चंद चिंतनु करै। धनि छत्री जिन भ्रंम मति ॥
मुक्कहि न स्वामि संकट परें। ते कहियै रावत्त पति ॥ छं०॥१५९९॥

पुनः सामंतों का कहना कि "पांच पंच मिल कीजे काज हारे जीते नाहीं लाज" इस समय हमारी कीर्ति इसीमें है कि आप सकुशल दिल्ली पहुंच जावें।

पंचति रप्पहि पाम। पंच धरणी धन रप्पहि ॥
पंच पृच्छि अनुसरहि। पंच तत्त जिय लप्पहि ॥

पंच भीत वंचियै। पंच आदर अमनाइत ॥
पंच पंच धर तोन। करुनि मंडियै वासन जति ॥
चहुआन राइ सामस सुअ। इमग तेग बहु सुकिति ॥
अनुसरिय लाज राजन रवन। सुनौ राज राजंन पति ॥
छं० ॥ १५७०

दूहा ॥ राज विमुष्यौ लोक सुनि। धुनि सामंत अनंत ॥
बंक दीह बंछै न को। सुर नर नाग [1]गनंत ॥ छं० ॥ १५७१ ॥

कवित्त ॥ तें रष्यौ [2]हिंदवान। गंजि गोरी गाहंतौ ॥
तें रष्यौ जालौर। चंपि चालुक्क चाहंतौ ॥
तें रष्यौ पंगुरौ। भीम भट्टी दै मथ्थै ॥
तें रष्यौ रनथंभ। [3]राय जहौं मै हथ्थौ ॥
इहि मरन कित्ति रा पंग कौ। जियन कित्ति रा जंगली ॥
पहु परनि जाई ढिल्ली लगै। तौ होइ घरघर मंगली॥छं०॥१५७२॥
सुनौ सूर सामंत। सूर मंगल सुपत्ति तन ॥
लाज वधू सो पत्ति। राज सोपत्ति सूर धन ॥
कवि बानी सोपत्ति। जोग सोपत्ति ध्यान तम ॥
मिचापति सोपत्ति। पत्ति बंधै सो आतम ॥
हम पत्ति पत्ति न्रप जो चलै। तो पति हम [4]पुज्जै रली ॥
मा भ्रम जु पेंज सामंत भर। रुक्क पंगह मजालौ॥छं०॥१५७३॥

पुनः सामंतों का कथन कि मर्दों का मंगल इसी में है कि पति रख कर मरें।

सूर मरन मंगली। स्याल मंगल घर आयें।
वाय [5]मेघ मंगली। धरनि मंगल जल पायें ॥
क्रियन लाभ मंगली। दान मंगल कछु दिन्नै ॥
मत मंगल माहमी। मँगन मंगल कछु लिन्नै ।
मंगली बार है मरन की। जो पति मथह तन पंडियै ॥
चढि षेत राइ पहु पंग सों। मरन मनंमुष मंडियै॥छं०॥१५७४॥

(१) ए. कृ. को गार्यंत। (२) ए. कृ. को. मुई।
(३) ए. कृ. को.-पुरजै रली। (४) मो. मंगल।

मरन दियै प्रथिराज। हसें छचिय कर [1]पट्टिहि ॥
मीच लगी निय पाइ। कहैं आयौ घर [2]बैठहि ॥
पंच पंच सौ कोस। कहै दिल्ली अस कथ्थैं ॥
एक एक घरिमा। पिष्पि बाहंते बथ्थैं ॥
घर घरनि [3]परनि रा पंग की। पहुंचै इहै बड़प्पनौ ॥
जब लग्गि गंगधर चंद रवि। तब लगि चल्लै कवित्तनौ ॥
छं० ॥ १५७५ ॥

कहै राज प्रथिराज। मरन छिचिय मत निद्धौ ॥
जम ममूह गुर मद्द। महिम करि मानन रिद्धौ ॥
कथ ममूह उच्चरै। चित्त कीजै कवि रूपं ॥
कलम मरन मन चढ़त। पार पल में सौ जूपं ॥
छचौन मरन मारन सूरब। नथ्थि सु मिट्टन काल बर ॥
जीरन्न जग्ग संदेस बल। ढिल्ली हंदे ढोल गिर ॥ छं० ॥ १५७६ ॥

राजा का कहना कि मैं तो यहां से न जाऊंगा रुक करके लड़ूंगा।

सुनौ सूर सामंत। जियन अहि डट्ठ काल पुर ॥
अधम अकित्तौ मुष्य। सा मनौ ग्रह दंड दुर ॥
मोह मंद बर जगत। भए विधि चित्त चिताही ॥
अचित होइ जिहि जीत। पुत्र जित देषि पिषाही ॥
नन मोह छोह दुष सुष्य [4]तन। तौ जर जीवन हथ्थ भुत ॥
पहु पंग जंग मुक्कै नहीं। जौ जग जीवहि एक मत॥छं०॥१५७७॥

सामंतों का उत्तर देना कि ऐसा हठ न कीजिए।

दूहा ॥ राजन मरन न इच्छयै। ए अत बंछै नित्त ॥
सिर सट्टै धन संग्रहै। सो रष्यै छच पत्ति ॥ छं० ॥ १५७८ ॥
कवित्त ॥ तन बंटन दुष अपन। कित्ति बिय भाग न होई ॥
पुत्र त्रिया सेवक सु। बंध कर भुग्गवै जोई ॥

(१) ए. क्र. को.- विट्ठहि, पैठहि। (२) मो. वट्ठहि। (३) ए.-सरनि
(४) ए. क्र. को. तत।

सुबर छुर सामंत। जीति भंजौ दल पंगं ॥
तुम समान छत्री न। भिरौ भारथ्थ अभंगं ॥
इन सुभर सूर पच्छै मरन। किती रस मुक्कै न रूप ॥
रजपूत मरन संसार बर। अब बात बौलै न अप ॥छं०॥१५७९ ॥

पृथ्वीराज का कहना कि चाहे जो हो परंतु मैं यहां से भाग कर अपकीर्ति भाजन न बनूंगा।

बैर ब्याह मँगलीय। देह मंगल अधिकारिय ॥
मो किती गर भग्गि। पच्छ भग्गौ जम भारिय ॥
बीर मात गावही। अष्पि प्रिय अछित उछारिय ॥
मुत्ति जुथानक भग्गि। करौ कानिन उद्दारिय ॥
कुट्टी प्रजंक जस मुगति किय। काम मुक्कि किति सु मुकी ॥
जौ भंग छोडू निसि चीय करि। रहित मौन बर भ्रंम की ॥
छं०॥ १५८० ॥

जा किती कारनह। अस्त मंग्यौ भीषम नर ॥
जा किती कारनह। अस्ति दत्तौच देव बर ॥
जा किती कारनह। देव दुर्जोधन मानी ॥
जा किती कारनह। राम बनबास प्रमानी ॥
कारन्न किति [1]दीलीप न्रप। सिंघ मंग गोदान दिय ॥
मम मुक्कि किति इथ्थह रतन। सत्त बरष जीवै न जिय॥छं०॥१५८१॥

सामंतों का कहना कि हठ छोड़ कर दिल्ली जाइए हम पंग सेना को रोकेंगे।

मरन दियै प्रथिराज। किति भज्जै जु अप्प कर ॥
पंग कित्त सिंचवय। अषै बल्ली सु बट्ट बर ॥
जागि नेस जग्गियै। छंडि मंगल करि मंगल ॥
एक एक सामंत। पंग रुद्धंत जादू दल ॥
मानुच्छ देह [2]दुल्लह न्रपति। फुनि देह राजन्न मिलि ॥

(१) ऐ. कृ. को.-इछै। (२) मो.-दिल्लिय नपति। ३) मो.-दुल्लभ।

रजपूत द्रोह भज्जत लगै। इम रंधै निसि पंग [1]बल ॥छं०॥१५८२॥

पृथ्वीराज का कहना कि यहां से निकल कर जाना कैसा और शरीर त्याग करने में भय किस बात का।

अरे अमंत सामंत। मोहि भज्जंत लाज जल ॥
काम अग्गि प्रज्जरै। लोभ आधीन बाइ बल ॥
निस दिन चढ़े प्रमान। दुहूं कन्ना परि सुभ्भी ॥
इह लग्गी कल पंक। कढ़ जिहि जिहि वर बुभ्भी ॥
को राव रंक सेवक कवन। कवन न्रपति को चिक्करै ॥
ढिल्लीव दिमा ढिल्लिव न्रपति। पंग फौज धर उप्परै ॥छं०॥१५८३॥
दूहा ॥ सो सति सत न्रप उच्चरै। परें लभ्भ इह ग्रेह ॥
जिहि बर सुब्बर सोउ न्रप। फल भुग्गवै सु तेह ॥छं०॥ १५८४ ॥
चौपाई ॥ सुनौ देह गत जीव प्रमानं। जौरन ज्यौं बंसन फल मानं ॥
जीर न बल्ल देह ज्यौं छंडै। त्यौं यह छंडि पर त्तिन मंडै ॥
छं०॥ १५८५ ॥

सामंतों का मन में पश्चाताप करना।

कवित्त ॥ कहै सूर सामंत। राज इह बत्त न आइय ॥
जौ भ्रम सतु करि रिदै। बचन मद्धि मन जाइय ॥
काट हरन द्रुग रंजन। चूक कबहुं न नाइय ॥
जौ साम भ्रंम भ्रत्तहीं। साम दोही नन पाइय ॥
अवरन्न हृदै धरि रंजै ज्यौं। कवि बीर बंदै बचन ॥
ज्यौं अनल डसन मानुन करै। यौं प्रथिराज रन तत्त मन ॥
छं० ॥ १५८६ ॥

राजा का कहना कि सामंतों सोच न करो कीर्ति के लिये प्राण जाना सदा उत्तम है।

सोच न करु सामंत। सोच भग्गै बल छचिय ॥
सामि द्रोह सो बंध। आहि बंधी तन रत्तिय ॥

(१) ए. कृ. को.-कल।

सोच कियै बल भग्ग। भग्गि बल कित्ति न पाइय॥
सुगति गये नर सब्ब। निद्धि ज्यौं रंक गमाइय॥
ज्यों उतर सूर पहरैं अरुनि। न्विघति रंज नह द्रिग्ग हर॥
सामंत सूर बोलंत बर। सुबर बीर बित्ते पहर॥ छं०॥ १५८७॥

पृथ्वीराज का किसी का कहना न मान कर मरने पर उतारू होना।

गाथा॥ मिटयो न जाइ कहिनौ। कहनो कविचंद सूर सामंतं॥
प्राची कम्म विधानं। ना मानं भावई गत्तं॥ छं०॥ १५८८॥
दूहा॥ चित्ति त्यौर सामंत सह। बहुरि सु रुक्के थान॥
इहै चित्त चहुआन कौ। कंचन नैन प्रमान॥ छं०॥ १५८९॥
मरन मंत प्रथिराज भौ। मरन सुमत सामंत॥
इंद्रामन मत्तौ[1] लहिय। डोलिय बाल कहंत॥ छं०॥ १५९०॥

सामंतों का पुनः कहना कि यदि दिल्ली चले जांय तो अच्छा है।

कवित्त॥सामि हथ्थ भर नथ्थ। नथ्थ भर साम हथ्थ बर॥
और मंच हिन मंच। [2]मंच उर अम पिव मर नर॥
प्रथम सनेह वियोग। विछुरि तौय पौय विच्छबर॥
जीव सधन पुच विपछ। इष्ट [3]संकट अबुद्धि गिर॥
सामंत सूर इम उच्चरै। बिरंग देप बंधत नर॥
प्रथिराज ग्रेह जौ जाइ बर। जम्म सुप्प बंधौत धर॥
छं०॥ १५९१॥

पृथ्वीराज का कहना कि मैं तो जैचन्द के सामने कभी भी न भागूंगा।

चल्लै नौमेर निधान। धूअ डुल्लै चल्लै अपु॥
मत्त ममुद जल पुट्टै। मत्त मरि जाहि काल वपु॥

(१) मो॰ गत्ता (२) ए. कृ. को-मंत्र उर सम पाविस नर।
(३) ए. कृ. को.-संकट्ट।

चंद चंदायन घटै। बढै सूर औगुन अगा॥
पच्छा पंग नरिंद। राज अग्गै नन भग्गा॥
जं करौ सूर उप्पाइ वर। राज रहे रज रप्पियै॥
कहै न बैन प्रथिराज अग। बार बार नन अप्पियै॥
छं० ॥ १५९२ ॥

कविचन्द का भी राजा को समझाना पर राजा का न मानना।

नह मन्निय मति राज। मन्न सामंत महित्तं॥
बरजि ताम कविचंद। मन्न मन राजन बत्तं॥
बहुरि दिन्न सामंत। गिरद रष्यो फिरि राजन॥
फिरे भत्य अप थान। बिट [1]लिन्न ते जाजन॥
बुल्यौ ताम जादव जुरनि। अहो कन्ह सुनि नाह नर॥
न्रिप व्याह राह चिंतौ सुचित। घर सु तरुनि तरुनिय सु घर॥
छं० ॥ १५९३ ॥

जामराय जद्दव का कन्ह से कहना कि यह व्याह क्या ही अच्छा है।

दूहा॥ अवर व्याह अनि मंगली। एह व्याह [2]जुधराह॥
तिन [3]रति व्याह हरष्पियै। रयन मयन प्रथमाह॥ छं० ॥ १५९४॥
*भुजंगी॥ परी पंग पारस्स घन घोर कोटं। भए सूर सामंत सो सामि ओटं॥
दिसा अट्ठ बौरं मुषं पंग साहे। गहे सामि धम्मं अधम्मं न गाहे॥
छं० ॥ १५९५ ॥

व्यूह बद्ध सामंत मंडली और पृथ्वीराज की शोभा वर्णन।

कवित॥ दिसि बांई [4]उर भत्त। सूर हय अरुहि पंति फिरि॥
सत्त पंच हय तेज। पच्छ उभै पारस्स करि॥

(१) ए. कृ. को.-लिल्ले। (२) ए.-जुद्धरह। (३) ए. कृ. को.-रतिवाह।
* इस छन्द को ए. कृ. को. तीनों प्रतियों में चौपाई और मो. प्रति में अरिल्ल करके लिखा है।
(४) ए. कृ. को.-मुर।

बर उज्जल सन्नाह। तेज चिहुं पास विराजै ॥
कै पसरी रवि किरनि। मेर विच लषि प्रथिराजै ॥
नग मुष्प गढ़ी दुक्कल बिधी। वीर बीच दंपति सयन ॥
सन्नाह सहित सुभ्भै सु न्रिप। रति तीरथ परसै मयन ॥
छं० ॥ १५९९ ॥

उक्त समय संयोगिता और पृथ्वीराज के दिलों में प्रेम की उत्कंठा बढ़नी ।

गाथा ॥ अम भौ बर संग्रामं। अभि लिष्यियं चिंतयो बालं ॥
ग्रब्बं भौ चहुआनं। नंदरीयं सेन पंगायं ॥ छं० ॥ १५९७ ॥

मुरिल्ल ॥ कुंचित न्रिप कल किंचित पायौ। नेह दिष्ट दंपति न सहायौ॥
छुटित लाज छिन छिन चढ़ि मारे। ज्यौं जोबन चढ़ि सैसव बारे॥
छं० ॥ १५९८ ॥

कन्ह का कुपित होकर जामराय से कहना कि तुम समझाओ जरा मानें तो मानें ।

कवित्त ॥ तब कहै कन्ह नर नाह। सुनहि जामान जादवर ॥
विरध राह दृढ़ाह। तुमहि बुझ्झौ सुभाव भर ॥
तुम समान नहि बीर। नेह मम सगुन सुधा रस ॥
तुमहि कहौ तिन राज। प्रेम कारज्ज काम कस ॥
हम काज आज सिर उप्परें। पग धार [1]टालों सु पल ॥
पुज्जओं राज दिल्ली सु धर। दुभर सु भर भंजों सु दल ॥
छं० ॥ १५९९ ॥

मे जान्यौ पहिलों न। एह राजन क्रत काजन ॥
मरन पच्छ कैमास। मंत जानै नह ताजन ॥
भट्टकज्ज नृप करिय। [2]सकल लोकह मो जानिय ॥
एह कथा पहिलों न। संन मन भई मयानिय ॥
[3]मत्यौ सु एह कारन प्रथम। पुर कमद्ध प्रथिराज किय ॥

(१) ए. कृ. को.-गलो। (२) ए. कृ. को.-सब्ब।
(३) ए. कृ. को.-मंत्यो।

षंडौ सु अब्ब अरि हर उक्कसि। लोक सु जित्तौ काज जिय॥
छं० ॥ १६०० ॥

जामराय जद्दव का राजा से कहना कि विवाह की यह प्रथम रात्रि है सो सुख सेज पर सोओ।

सुनिय बत्त राजंन। कन्ह मन रीस अप्प चित ॥
पय लग्यौ नर नाह। धन्नि जंपौ सु धन्नि हित ॥
बलिय बास न अन अन्य। फिरत रोपिय सब संगिय ॥
बंध वारि विथ्थारि। उड्ड चिंतान विलग्गिय॥
जंपयौ राज जद्दौ नमिय। प्रथिम रज इह व्याह रह ॥
खनिय सु ग्रंह प्रथमाह यह। करहु सयन न्विप सुष्प सह ॥
छं० ॥ १६०१ ॥

दरबार बरखास्त होकर पृथ्वीराज का संयोगिता के साथ शयन करना।

दूहा ॥ मंजोगिय नयननि निरषि। सफल जनम न्वप मानि ॥
काम कसाये लोयननि। हन्यौ मदन सर तानि ॥
छं० ॥ १६०२ ॥

सुधि भूली संग्राम की। भूलि अप्पनिय देह ॥
जोन भयो बसि पंग दल। सो भयो वाम सनेह ॥
छं० ॥ १६०३ ॥

नयन चरन करमुष उरज। विकसत कमल अकार ॥
कनक वेलि जनु कामिनी। लचकनि बारन भार ॥छं०॥१६०४॥
रवनि रवन मन राज भय। भयौ नैन मन पंग॥
सूरन सों संग्राम तजि। मँड्यौ प्रथम रस जंग ॥ छं० ॥ १६०५ ॥
तब सु राज रवनिय निरषि। हसि आलिंगन विट्ठ ॥
रचिय काम सयनह सुबर। दिय अग्या भर उट्ठ ॥ छं० ॥ १६०६ ॥

प्रातः काल पृथ्वीराज का शयन से उठना सामंतों का उस

के स्नान के लिये गंगाजल लाना स्नान करके पृथ्वीराज का सन्नद्ध होना।

पद्धरी ॥ अग्गिय दीन जदवह जाम। रष्यह जु सब्ब निष्टाम ठाम ॥
मंगयौ ताम प्रथिराज वारि। अंदोलि मुष्ष पय पान धारि ॥
छं० ॥ १६०७

आवह बद्ध सुष सयन कीन। सब दिसा अष्य बर बंटि लीन ॥
सब फिरत थाह सामंत दीन। पारस फिरंत सामंत कीन ॥
छं० ॥ १६०८ ॥

दस हथ्थ मग्ग सीमह सु चंद। बैठो सुचिंत चिंता समंद ॥
निद्धरह राव जामान सथ्थ। बलिभद्र सिंघ पामार तथ्थ ॥
छं० ॥ १६०९ ॥

सामलौ सूर दिसि पुष्ष पंच। रष्यनह राइ राजेस मंच ॥
नर नाह कन्ह पामार जैत। उद्दिग्ग उदोत राष्यै सु भैत ॥
छं०॥१६१०॥

हाहुलियराव हंमीर तथ्थ। जंघालराव भीमान पथ्थ ॥
धन पत्ति दिसि रापै सु धीर। अपअप्प परिग्गह जुत्त बीर ॥
छं० ॥१६११॥

बंधव बरन्न तोमर पहार। बघ्घेल सु लष्यन लष्य मार ॥
दै बंध हडु सम अष्य सूर। महनसी पीप परिहार पूर॥
छं० ॥ १६१२ ॥

पच्छिम दिसाह मजि धीर मार। भंजनह मंत गय जूहभार॥
पवार मलप आजानबाह। चहुआन अत्त ताई उधाह ॥
छं० ॥ १६१३ ॥

चालुक्क बिंभ भोंहा अभंग। बग्गरी देव पीचौ प्रमंग ॥
बारउह सिंह अनभंग भार। दच्छिन दिसाह मजि जूह मार ॥
छं० ॥ १६१४ ॥

---

(१) गो.-पूजन।

[1]साइस्स एक सत एक सथ्थ। सब धत्त दूंच नीचह उरथ्थ ॥
छं० ॥ १६१५ ॥

अप अप्प धत्य सामंत सद्द। पट्टए काज जल पंग तद्द ॥
कमधज्ज धत्य मध्ये वराह। आनयौ अप्प मेटेव ताह॥छं०॥१६१६॥
मुष पाय पानि अंदोलि वारि। अद्धयौ अप्प आतम अधारि ॥
करि सुतन संति सामंत राज। चिंते सु इष्ट भर स्वामि काज ॥
छं० ॥ १६१७ ॥

आवह बंधि सजि बाजि सब्ब। आसन्न ताम अप्पह अयब्ब ॥
उच्छंग धत्य कौ दै असीस। अस्तंमि षेट के पिन परीस ॥
छं० ॥ १६१८ ॥

पारस्स बैठि पंगुरह सेन। गज्जें निसान हय गय गुरेन ॥
चिंता सु चुंभि अति पंग राज। पारस्स फिरे चहुआन काज ॥
छं० ॥ १६१६ ॥

प्रातः काल होते ही पुनः पंग दल में खरभर होना।

दूहा ॥ चित्त अत्ति चिंता तपित। सज्जि राज कमधज्ज ॥
जिके सुभट वर अप्पने। फिरै तब छित रज्ज ॥ छं० ॥ १६२० ॥
सेन संजोग प्रथिराज हुअ। बाजहि लाग निसान ॥
काइर बिधु मन बंछही। सूरही बंछहि भान ॥ १६२१ ॥

प्रभात की शोभा वर्णन।

रासा ॥ इसी राति प्रकासी। मर कुमुदिनी बिकासी ॥
मंडली सामंत भासी। किवन कल्लोल लासी ॥ छं० ॥ १६२२ ॥
पारमं रज्जि चंदं। लारस्स तेज [2]मंदं ॥
कातरा क्रति बंधे। सूर सूरत्तन संधे ॥ छं० ॥ १६२३ ॥
वियोगिनी रैंनि खुट्टी। संजोगिनी लाज छुट्टी ॥
* * * । * * छं०॥१६२४॥

(१) ए. कृ. को.-माहस। (२) ए. कृ. को.-संदं।

चोटक ॥ छुटि छंद गिसा सुरसा प्रगटी । मिलि ढालनि माल रही सु घटी॥
निसमान निसान दिसान हुअं । धुअ धूरिन मूरिन पूरि पुअं ॥
छं० ॥ १६२५ ॥
नव निझरयं बनयं बनयं । गज बाजत साज तयं घनयं ॥
निज कच्छरि अच्छरियं सदयं । करि रंजन मंज नयं जनयं ॥
छं० ॥ १६२६ ॥
करि सारद नारदयं नदयं । सिर सज्जन मज्जनयं सदयं ॥
निज निर्भय यं चहुआन मनं। किर निर्भर रज्जित खूर जनं ॥
छं० ॥ १६२७ ॥
गाथा ॥ सितभ किरनि समूरौ । [1]पूरयं रेनं पंग आयेसं ॥
जुग्गनि पति भर खूरौ । पारस मिलि पंग राएसं ॥ छं० ॥ १६२८॥
मुरिल्ल ॥ पारमयं पसरी रस कुंडलि । जानकि देव कि सेव अषंडलि ॥
हालि हलाल रही चव कोदिय । दीह मयौ निस की दिसि मुंदिय॥
छं० ॥ १६२९ ॥

प्रातः काल से जैचन्द का सुसज्जित हो करसेना में पुकारना कि चौहान जाने न पावे।

* कुंडलिया ॥ देषि चिरा उद्योत घन । चंद सु ओपम कथ्थ ॥
दीपक विद्या जनु रचिय । द्रोन कि पथ भारथ्थ ॥
द्रोन कि पथ भारथ्थ । काम आये जै जरथं ॥
उभय घरी दिछतें । रुधि हरि चक्र विरथं ॥
दो प्रदीप गज तुरँग रथ । एक धनुप पाइल करग ॥
पावै न जानि पप्पीलिका । निसा दीह सम करि भिरग ॥
छं० ॥ १६३० ॥
कवित्त ॥ महस पंच सम खूर । पास वर तिय निरमल कुल ॥
निज सरीर हथ देह । सज्जि सिर अग्गि राज बल ॥
तिन समथ्थ रा पंग । फिरत सब सेन अप्प प्रति ॥

(१) मो.-चूरयं मेन पंग आएसं ।

* वास्तव में यह डोढ़ा छन्द है परंतु इसकी बीच की दो पंक्तियां खो गई हैं। यह छन्द मो. प्रति में नहीं है।

जिके सेन प्रथिसेव । कहै प्रथिराज रोह तनि ॥
जिन जाय निकसि चहुआन ग्रह । ग्रहौ तास सब सेन इय ॥
'हम फेरत राज निज भ्रत्त प्रति । प्रथु सनमानित सब्ब रय ॥
छं० ॥ १६३१ ॥

जैचन्द का पूर्व दिशा से आक्रमण करना ।

करति अरति पहु पंग । फिरे सब सेन अप्प प्रति ॥
जग्गि तेज हुक्काल । झाल दुति भई दीह भति ॥
प्रथम पुब्ब दिसि राज । जय हुं तह फिरि पारस ॥
तहं फिरि आइय राज । जाम जामनिय रहिय तस ॥
प्राचीय मुष्प सजि राज गज । दिष्पि सोय कमधज्ज नमि ॥
रूप चढ़े तेव टामंक करि । ग्रहन राज चहुआन तमि ॥
छं० ॥ १६३२ ॥

सुख नींद सोते हुए पृथ्वीराज को जगाने के लिये कविचन्द का विरदावली पढ़ना ।

पद्धरी ॥ सोवै निसंक संभरि नरिंद । पष्परत पंग संक्यौ सुरिंद ॥
प्रथिराज काम रत सम संजोगि । अवतार लियौ धर करन भोग ॥
छं० ॥ १६३३ ॥

जग्गवै कोन जालिम्म जोइ । प्रेमनिय प्रेम रस रह्यौ भोइ ॥
चव बाह मत्त 'हीसेंकि कान । चंपि चुंग दिसनि रहि घुरि निसान ॥
छं० ॥ १६३४ ॥

'सिधूअ मारु मलक्यौ सु गान । सुनि खुर नह कादर कंपान ॥
पंचास कोस रुद्धौ धरन्नि । मेलान मध्य चहुआन किन्न ॥
छं० ॥ १६३५ ॥

कवि किय किवार बुल्ल्यौ विरह । सिंघ जिंम जग्ग सुनि श्रवन सह ॥
छं० ॥ १६३६ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-हम फेर राजनित भूत पति । (२) ए. कृ. को.-हीसहि ।

पृथ्वीराज का सुख से जागना।

दूहा ॥ बिरदावलि बोलत जग्यौ। श्रीय संजोइय कंत ॥
कंदल रस रत्ते नयन। क्रोध सहित विहसंत ॥ छं० ॥ १६३७ ॥
गाथा ॥ इम सज्जत सामंत। घटय रयनि तुच्छ संघरियं ॥
जग्गत नृप चहुआनं। पयानं भान [1]प्रच्छानं ॥ छं० ॥ १६३८ ॥
दूहा ॥ सयन संधि मंडिय नृपति। दुअ थट्टौ अरि षेति ॥
मानि घात सामंत मन। तब उभ्भै करि नेत ॥ छं० ॥ १६३९ ॥

पृथ्वीराज का सैन से उठ कर संयोगिता सहित घोड़े पर सवार होना और धनुष सम्हालना।

चोटक ॥ न्विप मंगिय राज तुषार चढ़े। कविचंद जयज्जय राज पढ़े ॥
परिपंग कटक्कत घेर घनं। दस पंचति कोस निसान सुनं ॥
छं० ॥ १६४० ॥
गज राज विराजित मध्य घनं। जनु बद्दल अभ्भ सु रंग बनं ॥
[2]परि पष्पर सार तुरंग घनी। जनु इल्लत हेल समुद्द अनी ॥
छं० ॥ १६४१ ॥
बर बैरष बंबरि [3]छच तनी। बिच माहिय स्याहिय सिंघ रनी ॥
[4]हरि पष्प इमा उअ पीत बनी। जनु लज्जत रैनि सरद तनी ॥
छं० ॥ १६४२ ॥
भन नंकहि भेरि अनेक सयं। सहनाइय सिंधुअ राग लयं ॥
निसि सब्ब न्विपत्ति अनीन फिरै। जनु भांवरि भान सु भेर करै॥
छं० ॥ १६४३ ॥
दल सब्ब मँभारि अरित्त करी। जिन जाइ निकस्सि नरिंद अरी ॥
गत जांम चिजाम सु पीत परी। जय मद्द अयामह देव करी ॥
छं० ॥ १६४४ ॥
कर चंपि नरिंद मँजोगि ग्रही। उपमा चर चारु सुभट्ट कही ॥
मनों भोर दुझारसि अग्गि तपी। कलिका गजराज कमोद झपी ॥
छं० ॥ १६४५ ॥

(१) ए. को.-प्रस्थानं। (२) मो.-परि पष्पर तार सुरंग घनी।
(३) मो. पचनी। (४) ए. कृ. को.-हरि पष्प उमापति पीत पती।

पय चंपि रके बनि बाल चढ़ी। रबि बेलि किधों गरु काम बढ़ी॥
तर तोन चमंकत पच्छ दिठी। जु मनों तन भांन 'मयूष उठी॥
छं० ॥ १६४६ ॥

मुष दंपति चंद बिराज बरं। उदै अस्त ससी रबि रथ्थ धरं॥
भर न्रप्प सजे सु तरंग चढ़े। मनु भान पयानति लोह कढ़े॥
छं० ॥ १६४७ ॥

चहुआन कमानति कोपिलियं। मिलि भोहनि षंचि कसी सदियं॥
सर छुट्टत पंषति सद्द [2]सयं। मद गंध गयंदन मुक्कि गयं॥
छं० ॥ १६४८ ॥

सर एक सु विद्धत सत्त करी। दल दिष्पत नेंन ठठुक्क परी॥
नरवारि हजारक च्यार परी। प्रथिराज लरंत न संक करी॥
छं० ॥ १६४९ ॥

पंग सेना का व्यूह वर्णन।

कवित्त॥ उभै सहस गजराज। सह मुष्पह पँति फेरिय॥
नारि गोर जंबूर। बान छुटि कहु कि सु भेरिय॥
पंग अग्ग कँद्रप कुआर। [3]मीर गंभीर अभंगम॥
ता अग्गे बन सिंघ। टांक बलिभद्रति जंगम॥
केहरि कंठेरि अग्गें नृपति। सिंह बिभग्गा सिंह रन॥
उग्गयौ न भान पयान बिन। [4]मथन मेर मच्छौ महन॥
छं० ॥ १६५० ॥

वीर ओज वर्णन।

रसावला॥ पग्ग वीरं घुलं, अंत दंतं रुलं। दंत दंती घुलं, लोहरतं मिलं॥
छं० ॥ १६५१ ॥

बीर बीरं ठिलं, सार सारं झिलं। चच्च [5]रंसी घिलं, बीर अंगं ढिलं॥
छं० ॥ १६५२ ॥

(१) ए. कृ. को. मझंग। (२) ए. कृ. को.-भयं। (३) ए. कृ. को.-मीर।
(४) मो.-सथन। (५) ए. कृ. को.-चच्चरं चीथिलं।

काइरं जे पुलं, वैन वहे वुलं। सिद्ध 'चित्तं दुलं, ब्रह्म बंधं पुलं॥
छं० ॥ १६५३ ॥

सुगति मग्गं चलं, ईस सीसं रुलं। ढुंढि बंधं गलं, षग्ग मग्गं दलं
छं० ॥ १६५४ ॥

ढाल गज्जं मलं, देवलं जं ढुलं। घाइ घुम्मै घलं, अंग सोभै लखं ॥
छं० ॥ १६५५ ॥

सीस हक्कै कलं, काइ रंजं ढुलं। पिंड रत्तं पनं, षग्ग वित्तं तनं ॥
छं० ॥ १६५६ ॥

ह्वर उट्ठै पनं, द्रोन नच्चौ धनं। आयुधं झंझनं, नारदं रिभझनं
छं० ॥ १६५७ ॥

सूर्य्योदय के पहिले से ही दोनों सेनाओं में मार मचना।

कवित्त ॥ विनह भान पायान। इदं कमधज्ज जुद्ध दुअ ॥
सज्यौ न बोल संषुलै। विरद पागार वज्ज भुअ ॥
सुकल 'योलि कल्हार। झ,कित कज्यौ झाराहर ॥
विनहि अरुन उद्योत। अरुन उग्यौ धाराहर ॥
षद्दु विन पुकार षद्दु उप्परिग। सु ग्रह पहक फट्टी फहन ॥
उहिग सुतन अरि वर किरन। मिलिव चक्क चक्की गहन ॥
छं० ॥ १६५८ ॥

असिवर झर उघ्घरिय। चक्क चक्की अनंद मन ॥
कुमुद मुदिग कमधज्ज। सेन संपुटिग सघन रिन ॥
पंच अन्य संपन्न। सकल कुरु धरनि धरीयं ॥
पसु कि मझ्झ सुप पंच। तिमिर किरनिनि निवरीयं ॥
उडगन अचंभ कौतूहलह। अरु जु स्वामि किन्नौ गहरु ॥
उहिग पगार सुत पंचनन। समर सार बुज्यौ पहरु ॥
छं० ॥ १६५९ ॥

---

(१) मो.-वित्तें। (२) प्र. कृ. को.-कोक।

युद्ध वर्णन।

दृढ़नाराज ॥ हयग्गयं नरभरं [1]रथं रथंति जुद्दयौ।
मनों नरिंद देव देव झल्लरी सु वद्दयौ ॥
किनंकही तुरंग तुंग जूह गज्ज चिक्करं।
जु लोह छक्कि नष्पि भोमि षेत मुक्कि निक्करं ॥ छं० ॥ १६६० ॥

बजंत घाय सद्दकं ननद्द नद्द मुद्दरं।
गरब्बि देषि अग्गि ज्यौं बिदोष मन्न जो दुरं ॥
उठंत दिष्ट सूर को करूर अंषि राजई।
मनों कि सौकि बीय दिष्ट बंकुरौति साजई ॥ छं० ॥ १६६१ ॥

उभै सयन्न क्रम्म यंक को न भूमि छंडयं।
जु मक्खि झ कंक भज्जि कोन सार अंग षंडयं ॥
बरंत रंभ रंभभंति सार के दुझारयं।
जुधं जुधं बजंत सूर धार धीर पारयं ॥ छं० ॥ १६६२ ॥

तुटंत श्रोन सीस ट्रोन नंचि रीस इक्कयौ।
[2]रचंत भोम बिद्र कार बीर बीर झक्कयौ ॥
परंत के उठंत फेरि मच्छ ज्यौं तरप्फई।
रनं बिधान धीर बीर बीर बीर जंपई ॥ छं० ॥ १६६३ ॥

अरुणोदय होते होते भोनिग राय का काम आना।

कवित्त ॥ पहर एक असि एक। एक एकह निद्धर धर ॥
धर धर धरनि निहारि। नाग धक्कयौ सु नाग सिर ॥
इल इलि मिलि रट्ठौर। रौठ बज्जी बज्जारह ॥
कर क्रकस रस केलि। धार तुट्टिय लगि धारह ॥
दुहूं दल पगार पागार गिरि। [3]भिरि भुअंग भूनिग तनौ ॥
पहु फटिग घटिग सर्वरि समर। अमर भोह जग्यौ घनौ ॥
छं० ॥ १६६४ ॥

---

(१) मो.-रथं रथं सु। (२) ५- ब. को.-चंरत भाम छिद्रकार। (३) मो.-भर।

अरुणोदय पर साषुला सूर का मोरचा रोकना।

अरुन वरुन उट्ठयौ। अरग उद्दिग उद्दिग जुज ॥
सह सुप्परि सा घुलौ। घोलि षंडौ उग्गिग दुज ॥
इय गय नर आहरि सु। राह बंबरि बर तोखौ।
सार सार [1]संभार। बीर बंबरि झंझोखौ ॥
पहुपंग समुद जरह [2]अध। छूर सार सारह इनिय ॥
दसु देव भाग जै जै करहिं। वरन रुद्र रुद्रह भनिय ॥
छं० ॥ १६६५ ॥

घरी एक दिन उदै। पंग आरुहिय सेन भिरि ॥
इय गय नर भर भिरत। लुथ्थि आहुट्टि लुथ्थि पर ॥
किन्नर बर [3]चैनेन। बीर पस पंष किलक्किय ॥
पंचम सुर जुग्गिनिय। बंधि नारह सु वक्किय ॥
इं इंत इंत सुर असुर कहि। जै जै जै प्रथिराज हुअ ॥
असि लष्प पंग साइर उलटि। धनि नरिंद मंडेति भुअ ॥
छं० ॥ १६६६

एक घड़ी दिन चढ़े पर्य्यंत सामंतों का अटल हो कर पंग सेना से लड़ना।

परिग बीर बन सिंघ। रंग कमधज्ज सुरष्पिय ॥
बर सुरंभ घरि फेरि। तज्यौ बर प्रान सु लष्पिय ॥
ज्यौं मझ्झ बर [4]अष्पि। जैन बंकुरि तिय लष्पिय ॥
बीनि रंभ दुइ इथ्थ। मरन जीव ते लष्पिय ॥
लष्पन प्रमान मझ्झहिति रुष। रंभ अरंभन फिरि वरी ॥
तिहि परत सिंघ रषि रिंघ अप। पंग पंच इथ्थिय परी ॥
छं० ॥ १६६७ ॥

दूहा ॥ घरिय उदय उभय दिवस। इक्कि इलक गज पंग ॥
सुभर सूर सामंत सुनि। टरिय न बीर अभंग ॥ छं० ॥ १६६८ ॥

(१) मो.-संसार (२) ए.-अस। (३) ए. कृ.को.-त्रैनेत्र। (४) कृ. को. अष्प।

सामन्तों का पराक्रम और फुर्तीलापन।

कवित्त ॥ जहं जहं संभरि वार। सूर सामंत बहिग बर ॥
तहं ति तेज अग्गरौ। फिरयौ करि वार करतु कर ॥
जहं तहं भय भागंत। सार सनमुष सिर सहयौ ॥
जहां जहां चहुआन। चिहुरि चंचल चित रहयौ ॥
तहँ तहं सु सार [1]सारंग लिय। विरचि बीर चंदह तनौ ॥
पहु पुच्छ तुरी रिंझवि[2]रनह। तहं तहं करै निवच्छनौ ॥

छं० ॥ १६६८ ॥

पङ्गराज की अनी का व्यूह वर्णन और चंदेलों का चौहानों पर धावा करना और अत्तताई का मोरचा मारना ॥

षोड़स गज पहु पंग। मीर सत सहस राज अगि ॥
अट्ठ अट्ठ गज राज। दिसा दच्छिन रु वाम मग ॥
यां पहार मोहिल्ल। महिद बंध रान ततारिय ॥
समर सूर चंदेल। बंध मिलि बाग उपारिय ॥
बर बंध वरुन अल्हन उभै। अत्तताइ अवरत्त बर ॥
दिसि मुक्कि वाम दच्छिन परिग। हाइ हाइ आरत्त झर ॥

छं० ॥ १६७० ॥

रसावला ॥ हलके हलक्कं, गिरं जानि बक्कं। छुटी मद्द पट्टं, वपं मेर घट्टं॥

छं० ॥ १६७१ ॥

चढ़ी जम्म भल्ली, गिरं झान हल्ली। सर क्रित्त मद्दं, घटं जानि भद्दं॥

छं० ॥ १६७२ ॥

दियै दंत भारी, सनंना सयारी। [2]कबी बक्क अष्पं, झमै मेघ पष्पं॥

छं० ॥ १६७३ ॥

धयै तेज जस्सं, जपं कंक कस्सं। [3]सरं नाव कस्सं, पनु रंत अस्सं॥

छं० ॥ १६७४ ॥

कुकं कोपि हल्ली, उपम्माति भल्ली। नदी नंद पायौ, रुपी पान धायौ॥

छं० ॥ १६७५ ॥

(१) ए.- सा मंगलिय। (२) मो०-कची चक्क अष्पं। (३) ए० कृ. को.-रसं।

पतू रत्त अस्सं, जपं कंक कस्सं। मुषं मोर जानं, उपमा न आनं॥
छं० ॥ १६७६ ॥

इतने में पृथ्वीराज का दस कोस बढ़ जाना परंतु हाथियों के कोट में घिर जाना ॥

कवित्त ॥ चढ़ि पवंग प्रथिराज। कोस दस गयो ततच्छिन ॥
परत कोट चिहुकोद। घेरि करि लियौ गयंदनि ॥
इम जंपै जैचंद। भग्गि प्रथिराज जादू जिन ॥
सोइ रावत रजपूत। सूर तिहि गनौं अथंगनि ॥
[1]कंमान कठिन कविचंद कहि। दुहु भुव बल कर तानियौ ॥
लग्गौ सु बान जयचंद इय। तब दल फिरि दुहुं मानयौ ॥
छं० ॥ १६७७ ॥

पृथ्वीराज का कोप करके कमान चलाना।

इसौ देषि प्रथिराज। सहस ज्वाला जक जग्गिय ॥
मनों गिरवर गरजंत। फुट्टि दावानल अग्गिय ॥
अप्प अप्प विप्फुरयौ। करिय ज्वाला क्रम लग्गिय ॥
मनु पावक मांझ वीज। आनि अंतर गन जग्गिय ॥
हिरनाल फाल कट्टिन सकै। दावा नल भट्टह तयौ ॥
कनवज्ज नाथ असिलष्प दल। जम जन अग्गि झपट्टयौ ॥
छं० ॥ १६७८ ॥

एक प्रहर दिन चढ़ते चढ़ते सहस्त्रों योद्धाओं का मारा जाना।

सत विंध्यौ चहुआन। पंग लग्गौ अभंग रन ॥
सु बर सूर सामंत। जोति झलहलिय उंच घन ॥
जांम एक दिन चढ्यौ। रथ्थ पंच्यौ किरनालं ॥
ब्रह्म चौंति फुनि परिय। देषि भारथ्थ विसालं ॥
पूतंनि ताम देवन्न कर। धरे ग्रन्थ दस साम बर ॥
जागवै जतन पन निम्मइय। तिन मरत न लग्गत पल सुभर ॥
छं० ॥ १६७९ ॥

(१) ए. कृ. को. लेकर कमांन कविचंद कहि।

गाथा ॥ दृष्टं सनाह सरिसं । निमुष निमुष बंधनं तनहं ॥
तिष्टं जोग प्रमानं । तं भंजयौ सूर निमिषाई ॥ छं० ॥ १९८० ॥
दूहौ ॥ रन रुंध्यौ संभर धनी । पंग प्रमानत घेरि ॥
निमुष सु रष्यौं बर नृपति । ज्यौं पति भान सुमेर ॥ छं०॥१९८१ ॥

जैचन्द का कुपित होकर सेना को आदेश करना ।

कवित्त ॥ लल्लै नैन सु पंग । बान रत्ती रस बीरं ॥
इथ्थ रोस विथ्थुरै । मोंह मुकत्ति सरीरं ॥
गह गहगह उच्चार । भार भारथ्थ सपंतं ॥
बंधन बर चहुआन । भीम दुस्सासन रतं ॥
सावंग अंग चित पंग कौ । प्रत्त[1] सोज प्रथिराज रस ॥
सामंत होम भारथ्थ कस । बीर मंच जदि होइ बस ॥ छं० १९८२ ॥

घनघोर युद्ध वर्णन ।

रसावला ॥ परे पंच वीरं, सुदेलष्य भीरं । परे बंद मन्नी, समंदं हरन्नी ॥
छं० ॥ १९८३ ॥
मथे बीर भीरं, जुजंतं सरीरं । उडै छिंछ खग्गं, लगे अंग अग्गं ॥
छं० ॥ १९८४ ॥
नगं रत्त जैसं, जरे हेम तैसं । लगे लोह तत्ती, सहं बीर पत्ती ॥
छं० १९८५ ॥
सुन्यौ बीर नहं, बहै बग्ग हहं । वही अंघ जारी, विजू यों संभारी॥
छं० ॥ १९८६ ॥
[2]धुमी लग्गि वीरं, बरं मंत पीरं । [3]गढ़ ढाहि नीरं, दंती कहि वीरं ॥
छं० ॥ १९८७ ॥
कन्हं कंस तीरं, कँधं नंघि भीरं । घयं वार पारं, रुधी धार धारं ॥
छं० ॥ १९८८ ॥
जयं कंन रायं, पलं छुट्टि वायं । सिरं तुट्टि पारं, रुधी छुट्टि धारं ॥
छं० ॥ १९८९ ॥

(१) मो०-धूत्त । (२) ए. कृ. को.- धुछी (३) ए. कृ. को.- गजं ।

नभं होम लग्गी घृतं होम अग्गी। घटं घट्ट धारं, दिवी घट्ट भारं ॥
छं० ॥ १६६० ॥

झले षग्ग जग्गी, तिनेलोक लग्गी। जिवं मुक्कि भट्टं, चली बंधि थट्टं ॥
छं० ॥ १६६१ ॥

धरं धार चट्टं, षगं मग्ग बट्टं। सस्त्र वीर झारं, जुधं लोन भारं ॥
छं० ॥ १६६२ ॥

मरं मार [1]मारं, पँगं बीर बारं। * * छं० ॥ १६६३ ॥

पृथ्वीराज के सात सामंतों का मारा जाना और पंग सेना का मनहार होना परंतु जैचन्द के आज्ञा देने से पुनः सबका जी खोलकर लड़ना।

कवित्त ॥ परिग पंग भर सुभर। राज रजपूत सत्त परि ॥
लोथि लोथि पर चढ़ी। बीर बट्टीति कोट करि ॥
परिग सूर जै सिंह। गौर गुज्जर पहार परि ॥
परिय नन्द अरु कन्ह। अमर परि नाभ अमर करि ॥
बग्गरी परिग रनधीर रन। रनरुँधिग रिन मल परिग ॥
इन परत झूर [2]सत्तौ तिरन। पंग सेन ढहु कि करिग ॥ छं० ॥१६६४॥

भुजंगी ॥ ठठुक्के सुमेनं मनं मीर मिल्लै। डरं [3]विहुरी सेन सब्बें निकल्लै ॥
बरं बैर राठौर चहुआन [4]झल्लै। तबै लष्पियं पंगु रा नेन लल्लै ॥
छं० ॥ १६६५ ॥

तिनं उप्पजी रोस उर अग्ग अग्गी। उतं निक्करे त्रिपनि कै नैन मग्गी ॥
तिनं लुंवियं नैंन दीसै दिसानं। तबं चंपियं राज नें चाहुआनं ॥
छं० ॥ १६६६ ॥

तिनं उप्पजी संघ धुनि सिंगिधारं। तिनं वज्झियं नह नीमान भारं ॥
लयं लग्गियं कन्ह राजं सँजाई। तिनं अप्पियं कंत कोवंड जोई ॥
छं० ॥ १६६७ ॥

तिनें सुमरियं चित गंधव्व सद्दं। उतं जोइयं मुष्प सामंत हद्दं ॥

(१) सो.-झारं, कृ.- कारं। (२) प.- मत्तौ। (३) को.- विहुरी। (४) प. कृ. को.- हल्लै।

बचन्न सु सद्दं कवी चंद बोल्यौ । तबै भंजियं कन्ह सों सौ अबोलौ ॥
छं० १६६८ ॥
तबें लग्गियं भान रायंति रायं । [1]उनं देषियं आज कौतूह चायं ॥
तबै कोपियं बीर विजपाल पुत्तं । तिनं आवधां झारि जमजालि दुत्तं ॥
छं० ॥ १६६६ ॥
सवं संहरी सेन सीन्नह दीहं । इसौ नौमि तिथि थान प्रथिराज सीहं ॥
तिनं राजसं तामसं बे प्रगट्टं । भरं मुक्कियं सब्ब सातुक्क बट्टं ॥
छं० ॥ १७०० ॥
सरं सार संपत्ति पेत्तति रच्छं । मनो आवधं इंद्र रुद्रानि कच्छं ॥
बरं निट्ठुरी ढाल गय पत्ति मत्तं । तबै उट्ठियं सूर सामंत रत्तं ॥
छं० ॥ १७०१ ॥
उतं भूमि भर धरनि ढहि ढरि सुपथ्थं । तिनं अथ्थि बिय हथ्थ
प्रथिराज सथ्थं ॥
बढे बीर सामंत सा बीर रूपं । जिसै सैल संदूर संदेस जूपं ॥
छं० ॥ १७०२ ॥
उड्डै विग्रवानै सुमानै उदंता । जिसें अरक फल फूटि होतें अनंता ।
ततें कंपियं काइरं लोह दुत्तं । मनों अनिल आरंभ प्रारंभ पत्तं ॥
छं० ॥ १७०३ ॥
इसौ जुद्ध आवद्ध मध्यान हूअं । रहे हारि हथ्थं जु जूवारि जूअं ॥
छं० ॥ १७०४ ॥

दूसरे दिन नवमी के युद्ध के ग्रह नक्षत्रादि का वर्णन।

कवित्त ॥ तिथि नौमी सनिवार । मेष संक्राति सिंघ ससि ॥
गंज नाम बर जोग । चिच जोगिनी बाम बसि ॥
दिन नछित्र रोहिनी । जांम मंगल बुध तीजौ ॥
के इंद्री गुर देव । भान ससि राह सुभीजौ ॥
बर द्रष्टि येह ग्रह दान रन । नवमि जुद्ध [2]अवरुद्ध बजि ॥
पहुपंग बीय सुंमुह ढरी । चावहिसि रष्पै सु सजि ॥ छं० ॥१७०५॥

(१) ए. कृ. को. तिनं । (२) ए. कृ. को.- अवरात्ति ।

जैचन्द की आज्ञा से पंग सेना का कोप करना और चौहान की तरफ से पांच सामंतों का मोरचा लेना। इन्हीं पांचों के मरते मरते तीसरा पहर हो जाना।

तद्दिन रोस रट्ठौर। चंपि चहुआन गहन कहि॥
सौ उप्पर सै सहस। [1]बीह अगनित्त लष्प दहि॥
छुटि डुंगर थल भरिग। फुदि जल थलति प्रवाहिग॥
सह अच्छरि अच्छहि। विमान सुर लाक बनाइग॥
कहि चंद दंद दुंदु, दल भयौ। घन जिम सिर सारद्द झरिग॥
हरि सैस ईस ब्रह्मानि तनि। तिहुं समाधि तद्दिन टरिग॥छं०१७०६॥

पंग बीर गंभीर। हुकम अप्पौ जु गहन बर॥
बर हैबर बर रम्थ। ट्रुग्ग देवत्त जुद्ध भर॥
चित चचु भुज भर दंद। गोर सूरंत नयत हर॥
चावहिसि चहुआन। रुक्कि कट्ठौ असिवर भर॥
दल मुररि मुररि मोहिल मयन। नयन रत्त बोलिग सुभर॥
जुग्गिनि पुरेस निंदरि चलिय। अबल होत उप्पर सुधर॥
छं०॥ १७०७॥

गाथा॥ विपहुर [2]पहुरति परियं। हय गय भार सार [3]नथ्थनं॥
रह रंग रोस भरियं। उट्ठियं बीर बिबेनं॥ छं०॥ १७०८॥

कवित्त॥ सुनिग माल चंदेल। भान भट्टी भुआल बर॥
धनू वीर धवलेस। उट्ठि न्विब्बान हक्कि बर॥
तमकि सूर सामलौ। मार झल्लिय पहार भर॥
पंच पंच तिय पंच। पंच पंचंत पंच बर॥
दैवान जुद्ध पंचै भिरिग। भिरि भारथ्थ अपुब्ब बर॥
बजि घरौ पहर तौमर उठी। [4]ज्यौं अगनि धुंम मंजुत्त धर॥
छं०॥ १७०९॥

(१) मो.-बीरह। (२) ए. कृ. को-महुरति।
(३) मो.-मथ्थनं। (४) मो. ज्यौं अगनि धुंमर जुत्त धर।

वीर योद्धाओं का युद्ध के समय के पराक्रम और उनकी वीरता का वर्णन।

बाघा ॥ परि पंच जुद्ध सु बीर। बजि सस्त्र बज्जि सरीर ॥
भर अग्गि अंजन भीर। झुंझझ्झी पग्गनि नीर ॥ छं० ॥१७१०॥
तुटि सस्त्र बस्त्र सरीर। मनु [1]तरनि मोभि करीर ॥
नरपत्ति चाहत बीर। तिन किलकि जोगिनि तीर ॥ छं० ॥ १७११॥
तजि सबन यों अन बीर। पग मिलिग झलिग सरीर ॥
दल मथत दलन अधीर। जनु समुद थाहत कीर ॥ छं०॥१७१२॥
बर बरै अच्छरि बीर। जिन मुष्प झलकत नीर ॥
तुटि अंत दंतन तीर। सिम्भाल मन कढि नीर ॥ छं०॥१७१३ ॥
बजि पग्ग नह निनह। [2]गज गजत मोरस मह ॥
गज रत्त रत्त जु ढाल। पग लगत भज्जत हाल ॥ छं० ॥ १७१४ ॥
सद व्रत्त जनु गहि दीन। तिन ईस सीस जुलीन ॥
घट उट्ठि धरियत अद्ध। चंदेल माल विरुद्ध ॥ छं० ॥ १७१५ ॥
सिर हथ्थ साहि प्रमान। कर नंपि दिसि चहुआन ॥
बर [3]पंग है गै बीत। भारथ्थ दस गुन गीत ॥ छं० ॥ १७१६ ॥

उक्त पांचों वीरों की वीरता और उनके नाम।

कवित्त ॥ परे पंच बर पंच। सुभर भारथ्थह पुत्ते ॥
उंच हथ्थ करतूति। उंच बड़पन बड़ जुत्ते ॥
तिल तिल तन तुट्टयौ। [4]पंग अगनित पल भंजिय ॥
पंच पंच मिलि पंच। रंभ साहस मन रंजिय ॥
दिन लोक देव आनंद कर। बर बर कहि कहि झग्गरैं ॥
इन परत पंग जा गति बुझी। पिझत फिरी पारस परैं ॥
छं० ॥ १७१७ ॥

पत्यौ माल चंदेल। जेन धवली धर गुज्जर ॥
पत्यौ मान भट्टी। भुआल थट्टा धर अग्गर ॥

(१) ए. कृ. को.-सरनि। (२) ए. कृ. को.-गज गजत सोरह मद्द।
(३) ए. कृ. को.-पंच। (४) ए.-अंग।

पर्‍यौ सूर सामलौ। जेन बानै मुष मच्छह॥
इँसै तेन पांवार। जेन विरदावल अच्छह॥
त्रिब्बान बीर धावर धनू। [1]इनुय नरिंद अनेक बल॥
इन परत पंच भय विप्पहर। अगनित भंजि असंष दल॥
छं०॥ १७१८॥

पृथ्वीराज को पकड़ लेने के लिये जैचन्द की प्रतिज्ञा।

चक्यौ सूर मध्यान्ह। पंग परतंग गहनकिय॥
[2]सुरनि षेह षह मिलिय। श्रवन इह सुनिय सुलीय लिय॥
तब नरिंद जंगलिय। कोह कहौ सु वंकि असि॥
धर धूमिलि धुम्मरिय। मनहु दल मझ्झि दुतिय ससि॥
अरि अरुन रत्त कौतिक कलस। भयौ न भय सुभिरंत भर॥
सामंत निघट पंचह परिग। नृपति सपिट्टिय पंच मर॥
छं०॥ १७१९॥

साटक॥ इक्कं तोन सकट्ठियं कर धरं, पंचास [3]वट्टासने।
उत्तारे सहसं सु बीय उडनं. लष्यं चलष्यं बियं॥
सब्बं पारि इमंच क्रित्त जनकं, पत्तं च धारायनं॥
एवं बाहु सु बाह बान धरियं, द्रोनाहि पथ्थं जथा॥छं०॥१७२०॥

जैचन्द का अपनी सेना की आठ अनी करके चौहान को घेरना और सेना के साथ राजकुमार का पसर करना। उक्त सेना का व्यूहबद्ध होना। मुख्य योद्धाओं क नाम और उनके स्थान।

कवित्त॥ अष्ट फौज पहु पग। परिम चहु आनह फेरिय॥
मीर धीर धरवान। पान असमानह केरिय॥
क्रोध परिग गजराज। सत्त मुर मद मोष बर॥
तिन मझ्झै मल्हन मह्मेस। बंमौति सहस भर॥
ता अग्ग केत कुंअर कंद्रप। दस सहस्र भर सु भर सजि॥

(१) ए. कृ. को.-हनिय। (२) ए. कृ. को.-मुरनि।
(३) मो.-पंचास वर्द्धानने। (४) "मर" पाठ अधिक है।

ता अगै न्वपति [1]बज्जीत सबि। पंच सत्त गज मुष्प गजि ॥
छं० ॥ १७२१ ॥

ता अग्गै तिरहुति नरिंद। बीर केहरि कंठेरिय ॥
बिच जहाँ रा भान। देव दच्छिन नृप मेरिय ॥
ता अग्गै जंगोल। देव दहिया तत्तारिय ॥
मोरी रा महनंग। बीर भीषम षंधारिय ॥
ता अग्ग सींह बल अंग बल। सजि समूह ब्रह्मह मयन ॥
प्रथिराज सेन दिष्पत गिन्नं। सुकविचंद बंटहि नयन॥ छं०॥१७२२॥

वीर रस माते योद्धाओं का ओज वर्णन ।

रसावला ॥ पंग रा सेनयौ। रत्त जानै नयौ ॥
आइ संजुट्टियं। [2]दिट्ठियं तुट्टियं ॥ छं० ॥ १७२३ ॥
बीर जं विप्फुरं। जोर जम्मं जुरं ॥
सस्त्र वाहं बरं। बज्जतं सिप्परं ॥ छं० ॥ १७२४ ॥
सस्त्र छुट्टं नियं। बथ्थ जुथ्थं खियं ॥
जुद्ध अद्धं मयं। बज्जि जुद्धं मयं ॥ छं० ॥ १७२५ ॥
रूर सूरं अरी। जानि मत्ते करी ॥
पाइ बज्जे घटं। बीर बोले भटं ॥ छं० ॥ १७२६ ॥
कूक मच्ची घरं। सार सारं झरं ॥
अंत रथ्यं बरं। देव रथ्यं घरं ॥ छं० ॥ १७२७ ॥
बोल जे जं बरं। फूल नंषे सिरं ॥
देव जुद्धं ननं। सूर बंटै धनं ॥ छं० ॥ १७२८ ॥
अंत गिद्धी कुड़ी। अंतरिछं उड़ी ॥
मन्न मुष्पं घरं। रथ्थ हक्के डरं ॥ छं० ॥ १७२९ ॥
क्रंम सत्तं बरं। द्रोन नंचै धरं ॥
थोर थोरं थनी। [3]अष्प ढुंढै धनी ॥ छं० ॥ १७३० ॥
चंद जोइं करी। गी पथं उच्चरी ॥
गज्ज ढालं ढरी। दंत दंती परी ॥ छं० ॥ १७३१ ॥

(१) मो.-बज्जनि। (२) ए. कृ. को.-भावतं दिठियं। (३) ए. कृ. को.-अथ्थ।

सोमि मुक्के करी। अस्स पंषी परी॥
* * * । * * छं० ॥ १७३२ ॥

लड़ते लड़ते दोपहर हो जाने पर संभरी नाथ का कुपित हो हाथ में कमान लेना।

कवित्त ॥ दिनयर सुअ दिन जुद्ध। जूह चंपिय सामंतन॥
भर उप्पर भर भर। परिहि उप्पर धावंतन॥
दल दंतिन बिच्छुरहि। हय जु हय हय किन नंकहि॥
[1]अछरि बर हर हार। धार धारन झन नंकहि॥
जय जया सद्द जुग्गिनि करहि। कलि कनवज दिल्लिय बयर॥
सामंत पंच षित्तह षपिग। भिरत पंच भये [2]विप्पहर॥
छं० ॥ १७३३ ॥

रन रत्तौ चित रत्त। [3]वस्त्र रत्तंत षग्ग रत॥
हय गय रत्तै रत्त। मोह सौं रत्त बीर रत॥
धर रत्तै [4]पत रत्त। रुक रत्ते विरुझानं॥
रत्त बीर पलचर सु रत। [5]पिंड रत्तौ हिय सानें॥
विप्फुरे घाइ अघ्घाय फुट। पंग ठट्ठ चंपे सु भर॥
दैवत्त जुद्ध चहुआन वर। षिजि कमान लीनौ सु कर॥छं०१७३४॥

घनघोर युद्ध का वाकचित्र दर्शन।

मोतीदाम॥ रजे रविरथ्थ रहस्सिय व्योम। धमक्किय बज्जिय गज्जिय गोम॥
जग्यौ रस तांम स पंगह पूर। गहग्गह राग [6]वज्यौ सम सूर॥
छं० ॥ १७३५ ॥

नवम्मिय कृत्यकसूर सु अस्त्र। घटी दह अट्ठ सु [7]गव्वह दिव्व॥
नयौ मिर आनि सु डुंगह देव। गही पहु जंगल सूर समेव॥
छं० ॥ १७३६ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-कच्छर। (२) ए. कृ. को.-दुप्पहर।
(३) गो.-वस्त्र रत्ते मु। (४) ए. कृ.-पर।
(५) ए. कृ. को पिंड रत हिये न साने।
(६) ए. कृ. को.-मच्यौ। (७) ए. कृ. को.-गत्तह।

भुवलह राज सु जंगह अग्ग। कढ़ी करनट्टिय सिंघ सु वग्ग॥
तुरंगम पंति पयद्दल सक्क। जु सज्जिय अग्गह सद्द सरक्क॥
छं० ॥ १७३७ ॥

धमक्किय धोम निसानन नद्द। झनक्किय कातर सिंधु असद्द॥
यहं मँडि सिंधुअ खूंषुर रेन। गहग्गह वद्द कम्यौ सब सेन॥
छं० ॥ १७३८ ॥

उलट्टिग सिंधु सपंतिन अप्प। उरब्बिय सा जनु अंत कलप्प॥
मुरक्किय बग्ग सु जंगल राज। प्रगट्टित कोप [1]धुअं वर गाज॥
छं० ॥ १७३९ ॥

चह चह चंब तरं रन तूर। सु रब्बर मंप मजे घन सूर॥
मिलं पहु जंगल सेन सु पंग। मनों मिलि सागर संग सु गंग॥
छं० ॥ १७४० ॥

जगे रस तामस नग्गिय पग्ग। मनों रस हारि जु आरिय लग्ग॥
झरझझार वज्जिय धारनि धार। मनों ससि कक्कस्सि तुट्टिय तार॥
छं० ॥ १७४१ ॥

लगे मुष नाग मकत्ति न झेरि। मनों गजराज बजावत भेरि॥
हयद्दल पैदल दंतिय एक। लगे कर आवध सावध केक॥
छं० ॥ १७४२ ॥

झरझझर सेन झनक्किय झार। धरद्धर खुष्यि [2]ढरें धर भार॥
[3]कढी चहुआन कमान सु बंक। मनों यह सेन सु बीय मयंक॥
छं० ॥ १७४३ ॥

पृथ्वीराज की कमान चलाने की हस्तलाघवता।

दूहा॥ कढि कमान असमान घन। मद्धि चमंकिय बीज॥
मनों काल को जीभ ज्यौं। झुकि कढ़ी करि पौजि॥
छं० ॥ १७४४ ॥

तमकि तेज कोवंड लिय। जंगल वै जुध वान॥
अमी लष्प दल तुच्छ गनि। न्याइ बँध्यौ सुरतान॥ छं० ॥१७४५॥

(१) ए. कृ. को.-धुअंमर। (२) ए. कृ. को.-धंग। (३) ए. कृ. को.-चढी।

पृथ्वीराज का जैचन्द पर बाण चलाने की प्रतिज्ञा करना और संयोगिता का रोकना।

कवित्त ॥ कहै राज प्रथिराज। सुनहि संयोगि सु [1]लष्यिन ॥
आज हनों जैचंद। दंद ज्यौं मिटै ततष्यिन ॥
पिता मरन सुनि डरिय। करिय अरदास जोरि कर ॥
मोहि पंग बग सीस। कंत किज्जै सु प्रेम धर ॥
मन्नेव बचन संयोगि तब। चल्यौ राज अग्गे विमन ॥
कलहंत नारि जानिय सु चित। मिटै न गंभ्रव कौ वचन ॥
छं० ॥ १७४६ ॥

पृथ्वीराज के घोड़े की तेजी।

दूहा॥ अमी लष्य दल उप्परै। नंपि वाजि प्रथिराज ॥
धरनि फट्टिकै गगन तुटि। भरकि सु कायर भाजि ॥ छं० ॥१७४७॥

चहुआन की तलवार चलाने की हस्तलाघवता।

चोटक ॥ [2]चहुआन कमानति कोपि करं। पघनं पघनं प्रिथिराज बरं ॥
जिहि लष्य असौ दल तुच्छ करौ। दल गाहि नरिंद जु मंझ फिरौ॥
छं० ॥ १७४८ ॥

बहि बान कमान धुंकार बजी। कि मनों बर पुब्बय मेघ गजी ॥
सर फुट्टि सनाहन भेदि परौ। नर इष्थ तरंगनि जुद्ध [3]तरौ॥
छं० ॥ १७४९ ॥

चहुआनति मुष्यहि बीर चढ़ी। सर नंपि तहां किरवान कढ़ी ॥
लगि राज उरं किरवान कटी। कि मनों हरि पै तड़िता वि छुटी॥
छं० ॥ १७५० ॥

चहुआन वही किरवान बरं। सु परे अरिषंड विषंड धरं ॥
अरि ढाहि परे गजराज मुषं। सु बहै [4]तिन बान कमान रुषं ॥
छं० ॥ १७५१ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-लच्छन। (२) यह पंक्ति मो.प्रति में नहीं है।
(३) मो.-करी। (४) मो.-नित।

कटि सुंडि सु नेनन दंत कटी। सु मनों तड़िता घन मद्धि छुटी ॥
सु परे धर बीरति पंग भरं। प्रथिराज जयज्जय चंपि बरं ॥
छं० ॥ १७५२ ॥

सुकरी अरि [2]अप्प विडारत गज्ज। मनों बन जारिन जानि धनज्ज॥
ढहै गज ढाल सु झंडहि झारं। मनों फल भारह तुट्टिय डारं ॥
छं० ॥ १७५३ ॥

ढह्यौ घन घाव सु डुंगह देव। भुवन्नह राव पर्‍यौ घह घेव ॥
भरक्किय सेन सु भग्गिय पंति। परे दह तीन सहस्सह दंति ॥
छं० ॥ १७५४ ॥

परे धर बीर सु पंग भरं। प्रिथीराज जयज्जय चंपि बरं ॥
छं० ॥ १७५५ ॥

सात घड़ी दिन शेष रहने पर पंगदल का छिन्न भिन्न होना देख कर रयसलकुमार का धावा करना।

कवित्त ॥ घरिय रस्स रवि सेष। भयौ कलहंत ताम भर ॥
वज्ज घात सामंत। अग्गि लग्गी सु षग्ग झर ॥
हलहलंत दल पंग। दंग चहुआन जान [3]भय ॥
तब आयौ रयसल्ल। बिरद भैरं सु भूत रय ॥
हाकंत हक्क बर उच्चरिग। अतुल पान आजान हुअ ॥
कमधज्ज लग्गि कमधज्ज छल। बीर धीर विजपाल सुअ ॥
छं० ॥ १७५६ ॥

पृथ्वीराज के एक एक सामंत का पङ्ग सेना के एक एक सहस्त्र वीरों से मुकाबला करना।

दूहा ॥ सहस बीर भर अप्प बर इक इक रष्पै रिंघ ॥
संभरि जुध सामंत सम। मनों लग्गि सम सिंघ ॥ छं०॥१७५७॥

घमासान युद्ध वर्णन।

(२) ए. क.-को.-अप्प। (३) ए.-क.-को. भुव।

पद्धरी ॥ लग्गे सु सिंघ सम सिंघ धाइ । चहुआन सूर कमधज्ज राइ ॥
हाकंत मत्त झारंत तेक । इम संत रत्त इलि चलन एक ॥
छं० ॥ १७५८ ॥
गय नभ्भ सूर रुधि रत्त भीन । पसरै मरीच नह मभ्भि तीन ॥
संचार क्रन्न सही न व्योम । धुंधरिग धाम दह दिग्ग धोम ॥
छं० ॥ १७५९ ॥
पावै न मध्य गिद्धी पसार । भिद्दै न अन्य पह अद्ध चार ॥
[1]देषंत सूर [2]कौतिग्ग सोम । नारद्द आनि अध निरषि व्योम ॥
छं० ॥ १७६० ॥
पह चरह सुद्ध सुझ्झै न कंक । घन घुरह षेह पूरित पलंक ॥
अच्छरिय रथ्थ रुद्धंत सीस । पावै न बरन इच्छंत ईस ॥
छं० ॥ १७६१ ॥
पत्तौ सु काल रयसल्ल रूप । गह गह चवंत चहुआन भूप ॥
भौ तिमिर धुंध सुझ्झै न भान । प्रगटै न अप्प द्रिग अप्प पान ॥
छं० ॥ १७६२ ॥
दिप्पहि न सूर सामंत राज । संग्रहौ सद्द दल सकल साज ॥
सद्यौ सु कन्ह सामंत दह । हो जैत राव जामानि जह ॥
छं० ॥ १७६३ ॥
निद्धुरह सिंघ सुनि अत्त ताइ । सुझ्झै न ईस सौधौ सु राइ ॥
वंच्यौ सु सूर चौरंगि नंद । लष्यौ सु राज अरि लष्य वृंद ॥
छं० ॥ १७६४ ॥
वंच्यौ सु कन्ह धुअ गेन धार । गय पंग ढारि बंधौ सु पारि ॥
क्रम्यौ सु अवन सुनि अत्तताइ । भोंहा सु धीर धरि तीन धाइ ॥
छं० १७६५ ॥
हलकंत सथ्थ सामंत तार । मानहु क्रमंत हरि दंत भार ॥
विहथंत कोपि वाहंत कोन । भिद्दंत सिंधु उद्धंत श्रोन ॥
छं० ॥ १७६६ ॥
प्रगटंत झाक पावक [3]पोम । किलकंत घूंटि संठौ सु व्योम ॥

(१) ए. कृ. को. देषन्न । (२) मो.-कौतिक्क । (३) ए. मो. धोम ।

धमकंत नाग धर असि उसंध। चइकंत कंध कूरंम बंध ॥
छं० १७६७ ॥

घर तुट्टि धरनि पल पलनि पंक। तन खन अवन ब्रहमान संक ॥
गय ढार सार मुषमत्त भार। प्रगटंत मद्धि दुअ दल पगार ॥
छं० ॥ १७६८ ॥

रुझंत पारि पंगुरह सेन। निरषंत स्वामि सामंत नेन ॥
* * * * * * छं० ॥ १७६९ ॥

नवमी के युद्ध का अंत होना।

दूहा ॥ संझ सपत्तिय न्रप तिरन। बिय पारस पर कोट ॥
रहै सूर सामंत जकि। देषि न्रपति तन चोट ॥ छं० ॥ १७७० ॥
दोइ बर अग्गनि पष्परह। दुअ न्रप इक मंजोइ ॥
इह अवस्थ अंधन लषी। हम जीवन न्रप तोइ ॥ छं० ॥ १७७१ ॥

सामंतों का कहना कि अब भी जो बचे हैं उन्हें लेकर दिल्ली चले जाओ।

इह कहि न्रप लग्गे चरन। सांई दिष्पत अंषि ॥
[1]जाहु सुजीवत जानि घर। पंच सु बीसह नंषि ॥ १७७२ ॥
जीत हारि न्रप होत है। अरु हांसी दुज्जन लोग ॥
जुरि धर अद्ध निरद्ध किय। अब जंगल वै भोग ॥ छं० ॥ १७७३ ॥

नवमी के युद्ध में तेरह सामंतों का मारा जाना।

सविता सुन दिन जुद्ध बर। भौ रस रुद्र [2]समंत ॥
हंत संझ नवमिय दिवस। परे तेर सामंत ॥ छं० ॥ १७७४ ॥

मृत सामंतों के नाम।

कवित्त ॥ परे रेन रावत्त। राम रिन जंग अंग रस ॥
उठत इक्क धावंत। पंच वाहंत बीर दस ॥
बलि बारड मोहिल। मयंद मारुअ मुष मध्ये ॥
आरेनौ अरि लंघि। पंग पारस दल षद्धे ॥

(१) ए. कृ. को.-जाह सु जीवत। (२) ए.-समात।

नारेन बीर बंधव बरन। दिव देवान [1]गौ देवरौ ॥
कलहंत बीज सामंत मुअ। रह्यौ स्वामि सिर सेहरौ ॥छं०१७७५॥

संध्या को युद्ध बंद होना।

दूहा ॥ संझ सपत्तिय रत्ति भर। फुनि सज्जै दल पंग ॥
चलिग पंति [2]पहु पंग मिलि। जुद्ध भरनि किय जंग ॥
छं० ॥ १७७६ ॥

पंग सेना के मृत रावतों के नाम।

कवित्त ॥ कमधज्जह रयसज्ज। बिरद भैरू सु भूत गहि ॥
कर नाटिय किय सोर। राग सारंग थट्ट थहि ॥
सु पहु गुंड सु ग्रीव। राव बघ्घेल सिंघ बर ॥
मोरी [3]का सु मुकंद। पुट्ठि भौमेह पंति धर ॥
नृप कन्ह राव मरहट्ठ वै। हरिय सिंघ [4]हथनेव पर ॥
नरपाल राव नेपाल पति। राइ सज्ज क्रमि लै समर ॥
छं० ॥ १७७७ ॥

नवमी के युद्ध की उपसंहार कथा।

विज्जुमाला ॥ नवमिय [5]सूरन सूर। बज्जिग बिषम तुर ॥
गहन [6]गट्ठन पंग। बज्जिग सज्जिग जंग ॥ छं० ॥ १७७८ ॥
तरनि सरनि सिंधु। धरनिति मिर धुंध ॥
संचार गौ मय बानि। झलकि सज्जित जानि ॥ छं० ॥ १७७९ ॥
सघन जुग्गन जूप। प्रगटित पहुमि रूप ॥
सज्जित सु चहुआन। करषि कर कम्मान ॥ छं० ॥ १७८० ॥
रजति रामठि मंक। मनहु लेयन लंक ॥
घुट्टि छग्गुन कंन। बहिया तुरंग [7]तंन ॥ छं० ॥ १७८१ ॥
पष्पर सब्बर मार। प्रगटि उरनि पार ॥
सनमुष पंग सेल। सहित सूरन ठेल ॥ छं० ॥ १७८२ ॥

---

(१) ए. कृ. को. गयौ। (२) ए. कृ. को-पहुपंति।
(३) मो.-पाम। (४) मो. हथनेर। (५) मो.-सूअन।
(६) [5]. कृ. को.-गन। (७) ए. कृ. को.-छंन।

बहिग विष्पम सार। प्रगटि उरबि पार॥
धार धार लगि झार। धरनि धर सुट्ठार॥ छं० ॥ १७८३ ॥
रयसल्ल खप्पिय राज। क्रमि गहनं भु माज॥
खपि सम रज धाय। आइ लगि अतताइ॥ छं० ॥ १७८४ ॥
[1]इय होय सिंगी झार। नष्यौ जु पूर पगार॥
उहिग क्रमि सु खूअ। मंडि गज सिंघ [2]रूअ॥ छं० ॥ १७८५ ॥
रयसल्ल परे पिष्पि। क्रमे गह राज रिष्पि॥
मिली कन्ह अप्पा ताइ। रिपि रन रुक्कि राय॥ कं० ॥ १७८६ ॥
परे दह सत्त घाइ। सघन घइ अप्प आइ॥
परे अत्र भूय पिपि। भोग सेन सब खपि॥ छं० ॥ १७८७ ॥

पंग सेना का पराजित होकर भागना तब शंखधुनी योगियों का पसर करना।

दूहा॥ भगे सेन विजपाल नृप। खपि भै तामस राइ॥
सहस एक भर संब धर। कहि इय छंडि रिसाइ॥ छं० ॥ १७८८॥
बाते संघ बिरह धर। बैरागी जुध धीर॥
सूर संघ न्रिप नामि सिर। भर पह मज्जन भीर॥ छं०॥१७८९॥

शंखधुनी योद्धाओं का स्वरूप वर्णन।

कवित्त॥ पवंग मोर पष्परह। मोर ग्रीवत गज गाहिय॥
मोर टोप टट्टरी। मोर मंडित संनाहिय॥
मोर माल उर संघ। संक छंडिय भय भग्गिय॥
धार तिथ्थ आदरिय। पंग सेवहि वैरागिय॥
तिहि डरनि डारि घल्लै। तिनहिं नित राज अग्गे रहै॥
इल इलत सेन सामंत भय। मुक्कि मुक्कि अप्पन कहै॥छं०॥१७९०

पृथ्वीराज का कवि से पूछना कि ये योगी लोग जैचन्द की सेवा क्यों करते हैं।

दूहा॥ रिपि सरूप संघह धुनिय। अति बल पिष्थ कहंद॥
बैरागी माया रहित। किमि सेवै जयचंद॥ छं० ॥ १७९१ ॥

(१) मो.-इय हाय संगे झार। (२) ए. कृ. को.-सूअ।

कविचन्द का शंखधुनियों की पूर्व्व कथा कहना।

कहत चंद प्रथिराज। ए सब रिषि अवतार॥
मुनि नारद [1]परबोध भौ। कथ्थ सुनहु विस्तार॥ छं० ॥१७९२॥

तैलंग देश का प्रमार राजा था उसके रावत लोग उस से बड़ी प्रीति रखते थे।

कवित्त॥ सहस एक सुधवंस। सहस एकह धर सोहै॥
सेवा करत तिलंग। लष्य दस सस्त्र अरोहै॥
एक सहस वाजिच। समुद तट सेवा सज्जै॥
वपु सु वज्र चित वज्र। एक निरलेप अरज्जै॥
सब एक जीव तन भिंन भिन। बंस छत्तीस अषाढ़ सिध॥
पामार तिलंग हरि सरन हुअ। कुल छतीस धर दान दिध॥
छं० ॥१७९३॥

उक्त प्रमार राजा का छत्तीस कुली छत्रियों को भूमि भाग देकर बन में तपस्या करने चला जाना।

नृप केहरि कंतेर। राइ सिंधुआ पाहारं॥
रा पछार परताप। पत्त डंडौर सु धारं॥
राम पमार तिलंग। जेन दिग्विय वसुधा दन॥
उज्जैनिय चक्कवै। करै सेवा तिलंग जन॥
सह सेक सुभट सब एक सम[2]। जब तिलंग परलोक गय॥
छचौन दान दिन्नौ तबहि। सहस सु भट बनवास लय॥
छं० ॥ १७९४॥

दिय दिल्ली तोंवरन। दई चावंड सु पट्टन॥
दय मंभरि चहुआन। दई कनवज कमधज्जन॥
परिहारन मुर देम। सिंधु बारड़ा सु चालं॥
दै सोरठ जदवन। दई दच्छिन जावालं॥

(१) मो. परमोद। (२) ए. कृ. को.-मन।

चरना कच्छ दीनी करग । भट्टां पुरब भावही ॥
बन गए न्रपति बंटै धरा । गिरिजापति माला गही ॥छं०॥१७९५ ॥

राजा के साथी रावतों का भी योग धारण कर लेना ।

दूहा ॥ एक सहस रिष रूप करि । अजपा जपै सु नाम ॥
बन षंडह विश्राम किय । तप तप्पत तिन ठाम ॥छं०॥१७९६॥

ऋषियों का होम जप करते हुए तपस्या करना ।

पद्धरी ॥ रिषि मंगि जाइ सुर धेन ताम । दीनी सु इंद्र बर होम काम ॥
रिषि तास दूध [1] बर करै होम । संच पत होइ तिन सुरभ धोम॥
छं० ॥ १७९७ ॥
अध्याय अधिन जाजंन जप्प । रिषि करै सब्ब उन क्रष्ट तप्प ॥
तहं करत दैत्य बहु बिघन [2]नित्त । भष्यी सु गाव वच्छी सहित्त ॥
छं० ॥ १७९८ ॥

एक राक्षस का ऋषि की गाय भक्षण कर लेना और ऋषियों का संतापित होकर अग्नि में प्रवेश करने के लिये उद्यत होना ।

विअष्यरी ॥ रिषि तहां बसै उभै सत वर्ष । राक्षस तहां धेन बछ भष्यं ॥
कोपवंत रिषि हूए सु भारी । सब मिलि अगनि प्रवेस विचारी ॥
छं० ॥ १७९९ ॥
इह उतपात चिंति नारद रिषि । आयौ तिन आश्रम समह मिषि॥
अरघ पाद सब्बह मिलि किन्नौ । मुनि सुप पाइहु औआधिन्नौ ॥
छं० ॥ १८०० ॥

नारद मुनि का आना और सब योगियों का उनकी पूजा करना ।

दूहा ॥ रिषि आवत नारद मुनि । लग्गे सब्बह पाइ ॥
फनपत्ती से दिष्पि करि । चरन पषालै आइ ॥ छं० ॥ १८०१ ॥

(१) प. दूध । (२) मो. वित्त ।

नारद मुनि का योगियों को प्रवोध करना।

दूहा ॥ मुनि प्रवोध मुनिजन कियौ। प्रति राक्षस कृत साप ॥
सो तुमकों लग्यौ सबै। तब रिष लग्गे ताप ॥ छं० ॥ १८०२ ॥

नारद का कहना कि तुम जैचन्द की सेवा करो वहां तुम युद्ध में प्राण त्याग कर साक्षात मोक्ष पावोगे।

विअष्पी ॥ नारद रिषि उच्चरै सु वत्तं। सुनौ सबै इह इक करि चित्तं ॥
फिरि रिषि राज सु आयस दिद्धं। करौ तपस्या साधक (1)सिद्धं ॥
छं० ॥ १८०३ ॥

वरष बीस तुम तप्प सु तप्पे। एक चित्त करि अजया जप्पे ॥
तुम हौ क्षची जाति सबैं मुनि। तिहि आचरौ धार तौरथ फ,नि॥
छं० ॥ १८०४ ॥

और तप्प बहु काल अभ्यास। इंद्री डुल्लै सबैं भ्रम नास ॥
धार तिष्थ आदरै जु षची। सुष में पावै मुगति तुरन्ती ॥
छं० ॥ १८०५ ॥

धार तिष्थ पहिलै छची धृम्म। भू पर सबै और जानौ भ्रम ॥
कहौ कौन हम सों जुध आवै। देषत दूरिहु तें जरि जावै ॥
छं० ॥ १८०६ ॥

जग मध्ये जयचंद कमंद नृप। अवनी उप्पर ताम महा तप ॥
मानों इंद्र सरूप विचारं। आयौ प्रथी उतारन भारं॥छं०॥१८०७॥
ता रिपु एक रहै चहुआनं। अवर सबैं नृप सेवा मानं ॥
संभरि वै दिल्ली पति रज्जं। सौ सामंत सेव तिन मज्जं ॥
छं० ॥ १८०८ ॥

सो ढुंढा अवतारी भारी। ते तुम संमुह मंडै रारी ॥
जाउ तुम सेव जयचंद प्रति। एक लष्य गढ़ तिन घर सोइति ॥
छं० ॥ १८०९ ॥

(१) ए. कृ. का.-चित्तं।

लष्य असी तोषार पलानै । जग मध्ये तीनूं पुर जानै ॥
रषि सुनि बैन सबै सुष पायौ । अच्छौ गुर उपदेस बतायौ ॥
छं० ॥ १८१० ॥

कवि का कहना कि ये लोग उसी समय से जैचन्द की सेना में रहते हैं ।

दूहा ॥ रिषि आयस मंन्यौ सु रिप । संष चक्र धरि साज ॥
दिन प्रति सेवै गंग तट । सुनि विजपाल सु राज ॥ छं० ॥ १८११ ॥
मोर चंद्र मथ्थै धरिय । जटा जूट जट बंधि ॥
संष बजावत सब्ब भर । सेवें जादू कमंध ॥ १८१२ ॥

नारद ऋषि का जैचन्द के पास आना और जैचन्द का पूछना कि आपका आना कैसे हुआ ।

बिअष्यरी ॥ धुज्जै भूमिरु अंबर गज्जै । तीन लष्य वाजिच धुनिज्जै ॥
तुट्टि अकास तीन पुर भग्गै । जोग मायथौ जोगिनि जग्गै ॥
छं० ॥ १८१३ ॥

है धुर रज ढंकियैं सु अंबर । चढ़ै कमंध करि मेघाडंबर ॥
लष्य पचास पड़ै इय पष्यर । हुअ मैदान मेर से भष्यर ॥
छं० ॥ १८१४ ॥

अगै जल पच्छै मिलि पंकं । मर वर नदी खादि सों ढंकं ॥
पानी थान षेह उड्डै बहु । अंत कलष्य दूसी सुनियै कहु ॥
छं० ॥ १८१५ ॥

दस दिगपाल परै भंगानं । मानव सेस देव संकानं ॥
इन आडंबर चढ़ि कमधज्जं । आतपच ढंक्यौ उडि रज्जं ॥
छं० ॥ १८१६ ॥

यौं जयचंद तपै तट गंगा । नाम सुनंत होइ अरि पंगा ॥
नारद मुनि आये तिन ठामं । पंग उट्ठि तब कीन प्रनामं ॥
छं० ॥ १८१७ ॥

कुसल पुच्छि बहु सुष रिष किन्नं । चरन सु रज मस्तक न्रप दिन्नं ॥
किन कारन आए पुच्छै न्रप । भाग अज्ज मो नगर आय अप ॥
छं० १८१८ ॥
रिष्य कहै संभलि न्रप राजं । सावधान मन करे समाजं ॥
* * * । * * * छं० ॥१८१९॥

नारद ऋषि का शंखधुनी योगियों की कथा कह कर राजा को समझाना कि आप उनको सादर स्थान दीजिए।

दूहा ॥ नाद सु नारद जंपि इह । सुनि जैचंद विचार ॥
सहस एक षिचौ सु तन । सेवक तिलंग पंवार ॥छं०॥१८२० ॥
जीव एक देहौ उभय । अवतारौ रजपूत ॥
जब पवाँर परलोक गय । गह्यौ भेष अवधूत ॥ छं० ॥ १८२१ ॥
सागर तट तप सद्धयौ । बरष उभै सित एह ॥
होम धेन राक्षस हतौ । तिन डर डरौ सु देह ॥ छं०॥१८२२॥
सब मिलि मरन विचारयौ । अगनि प्रवेस कुमार ॥
उभय भाग रिषि राज सुनि । छं आयौ तिन बार ॥ छं० ॥१८२३॥
दहन बरज्जयौ बोध दै । धारा [1]तिथ्थ सु सक्ति ॥
बेद पुरान प्रमान जुग । दस अट्ठह [2]संम्रत्ति ॥ छं० ॥१८२४ ॥
श्लोक ॥ जीविते लभ्यते लक्ष्मी । मृते चापि सुरांगणा ॥
क्षणं विध्वंसिनी काया । का चिंता मरणे रणे ॥ छं० ॥१८२५ ॥
कवित्त ॥ मुनि प्रबोध मन मानि । रिष्यि आये तुम पासं ॥
धारा तीरथ आदि । तहां साधन किय आसं ॥
मोर पंष जट मुगट । सिंगि संग्राम सु धारै ॥
मोह देह भ्रम रहित । मरन दिन अंत विचारै ॥
कलहंत वार मिलकंत न्रप । संष नाद पूरंत सर ॥
जैचंद सेव आये सबै । [3]एक जीव उभया सु हर ॥छं०१८२६॥

---

(१) ए. कृ. को.-तीरथ । (२) मो. सुमृत्त ।
(३) मो.-" एक जीव उभया सुहर" ।

नीसानी ॥ बपत बद्दे कनवज्ज राय रिपि तेग गहाई।
संषधुनी महसेक न्रप हुये जु महाई ॥
जब चल्लै संष सद्द दै गिरि मेर ढहाई।
लष्य असी मधि देषियै नारद बरदाई ॥
ए अवतारी सुनी सबै पूरब पुनि पाई।
जब कोपे करि वार लै पुर तीन ढहाई ॥
ए पराक्रमी सूरिमा हर उमया जाई ॥ छं० ॥ १८२७ ॥

कवि का कहना कि तब से जैचन्द इन्हें अपने भाई के समान मान से रखता है।

दूहा ॥ राज पंग पय लग्गि करि। सब रष्ये निज पास ॥
लष्य एक देही लहै। पुज्जै द्वादस मास ॥ छं० ॥ १८२८ ॥
अति बर न्रप आदर करै। जेठा बंधव जोग ॥
तिनहि राज रष्यह रहै। ते छुटि अज जुध भोग[1] ॥
छं० ॥ १८२९ ॥

जैचन्द की आज्ञा पाकर शंखधुनियों का प्रसन्न होकर आक्रमण करना।

कवित्त ॥ न्रिप केहरि कंठेर। राय परताप पट्ठ चह ॥
सिंधुअ राय पहार। राम धम्मार यट्ठ यह ॥
कट्ठिय आस सुकाज। पत्त गुडीर नरत्ता ॥
पन्न परब्बत पाहार। रहै सांघुला सुमत्ता ॥
अन्नंक सेव पति संष धर। सहस एक बिन मोह मत ॥
अग्या सुपंग किल क्रंत क्रमि। अप्प अप्प मुष उप्परत ॥
छं० ॥ १८३० ॥

शंखधुनियों का पराक्रम।

हय हय हय आयास। केलि सज्जी सुव्योम सिर ॥
किल किलंत का मक्कि। डक्क बज्जी सुहंस हर ॥

(१) मा.-जोग।

ओर राह पति संघ। हक्कि असि ताईय तत्ते।
मनहुं पात न्विघ्घात। पत्ति सामंत सुसत्ते॥
हम संत सेन अम्भय उभय। चाहुआन कमधज्ज कस॥
उच्चरिग आन अप अप्प मुष। हक्कि धार रत्ते सुरस॥
॥ छं० ॥ १८३१ ॥

युद्ध की शोभा और वीरों की वीरता वर्णन।

विज्जुमाल॥ पैदलह मंत रत्त। जु गुर सुलह जुत्त॥
बंचित सुचंद छंद। विज्जुमालवि वंद॥ छं० ॥ १८३२ ॥
विमल सकल व्योम। रजति सिरनि सोंम॥
[1]प्रगटि ताम सपंग। हलि मिलि झिलि गंग॥ छं० १८३३ ॥
मुरत सेन सुलष्पि। निरषि परषि पिष्पि॥
विहसि ट्रिग्ग करूर। बाजित बिंब तूर॥ छं० ॥ १८३४ ॥
मुंछति निरति भोंह। भोंह दु कुंतल सोंह॥
दल सु समुद दृप। अचवन अगस्ति रूप॥ छं० ॥ १८३५ ॥
हाकंत संघ सुधार। वहत बियम सार॥
धार धार लगि धार। भररंत तुट्टौ भार॥ छं० ॥ १८३६ ॥
किननंत सिर निसार। अचल मनु आधार॥
हबकि हबकि संग। अनी अनी लगि अंग॥ छं० ॥ १८३७ ॥
बिहल कराल कूप। किंघित काल सरूप॥
बानैत संघ समंत। अरिग सूकर अंत॥ छं० ॥ १८३८ ॥
सु वचि सामंत राज। अप अप इष्ट साज॥
सुमिरंत बीर मंत। आइग सब सुनंत॥ छं० ॥ १८३९ ॥
एकित सु तोन धारि। कट्टिग मिरनि सार॥
धरनि सु धर धार। हक हाक बजि झार॥ छ० ॥ १८४० ॥
नंचित चौर पंग। थइ थेई थंग॥
घन नंक मघन घंट। किलकंत [2]गोम कंट॥ छं० ॥ १८४१ ॥
गिधिय अंत गहेस। अंत सु लगिय तेम॥

(१) ए. कृ. को प्रगटित नाम मंग। (२) मो.-मोंम।

मनों बल बाला रंग। उचरँत चारु चंग ॥ छं० ॥ १८४२ ॥
सु रचि जट्ठर सार। अद्धध उद्ध विहार ॥
फर फर टरे फेफ। परति [1]पंषी रेफ ॥ छं० ॥ १८४३ ॥
हकित सिर बिकंध। नचित धर कमंध ॥
नचित रुचि जटाल। संचि सिरनि माल ॥ छं० ॥ १८४४ ॥
मकति अघाइ घोर। बजि राग घंट रोर ॥
रमित रस सभंद। आनंद चिल्हय व्रंद ॥
चुंगल ग्रहंत पल। चुंच बल लै कमल ॥ छं० ॥ १८४५ ॥

शंखधुनी योगियों के साम्हने भौंहा का घोड़ा बढ़ाना ।

दूहा ॥ बजत संष दह सत्त। सघन नीसान धुनक्किय ॥
पावस रिति आगमन। सिषर सिषि जानि निरत्तिय ॥
तिन अमित्त पौरष्ष। सहस सामंत बिअष्पिय ॥
निट्ठुर जैत नरिंद। स्वामि अग्गौ धपि दिप्पिय ॥
हहकारि सौम भौंहा सु भर। गहि अकाम नंष्यौ म हय ॥
उड़ मंडल उत्त निरष्ययौ। मनो बाज पंषी सु भय ॥छं०१८४६॥

मांसभक्षी पक्षियों का बीरों के सीस ले ले कर उड़ना ।

दूहा ॥ रुंड मुंड पल षंड [2]भुअ। मचि योगिनि बेताल ॥
चिल्हनि भष जंबुक गहकि। हर गुंथौ गल माल ॥ छं०१८४७ ॥
लै चिल्ही भ्रम्मिय सु भर। है हर गिद्धी रुप ॥
बीर सौम चुंगल चंपे। गय [3]अधन्न अनूप ॥ छं० ॥ १८४८ ॥

एक चील्ह का बहुत सा मांस ले जाकर चील्हनी को देना।

कवित्त ॥ लै चिल्हन सिर बीर। बीर भारष्ष देषि भर ॥
का तर पर तिह थान। विषम प्रब्बत सु रंग बर ॥
उंच वृच्छ बट अति सु रंग। पंष [4]घूंमल अध विच्चं ॥

(१) ए. कृ. का.-पंषी। (२) ए. कृ. को.-हुअ।
(३) ए. कृ. को.-अहधन्न। (४) ए. कृ. को.-घूंसन।

तिहिं सु तट्ट चौसट्ठि। देवि आरंभन रच्चं ॥
जिम जिम सु मीस मष्पन कियौ। तिम तिम सुभझै तीन भुअ ॥
पल भष्पत छुट्ट भष्पित सकल। आनंदी पंषी सुनिय॥छं०॥१८४९॥

चील्हनी का पति से पूछना यह कहां से लाए।

दूहा ॥ आनंदी पंषी सकल। चिल्हानी पुछि कंत ॥
कहि कहि गल्ह सु रंग बर। सुष दुष जीवन जंत ॥छं०॥१८५०॥
चिल्हानी बुलि पत्ति सौं। [1]जमंती बरजंत ॥
बड़ गुरजन बत्ती सुनी। सो दिट्ठी दिषि कंत ॥ छंद ॥ १८५१ ॥

चील्ह का कहना कि जैसा अपने पुरुषों से प्राचीन कथा सुनता था सो आज आखों देखी।

कवित्त ॥ पुव्व सुन्यौ बर कंत। जुद्ध बलि राइ इंद्र बर ॥
तिपुर युद्ध संकरि विरुद्ध। भारथ्थ पंड भर ॥
चंद जुद्ध तारक्क। कन्ह रुमिपाल लंक रघु ॥
जरासिंध जदुवनि। दक्ष नंदी जु जगी अघु ॥
हरि जुद्ध बीर [2]बौत्यौ असुर। पुव्व सेन जंप्यौ मुनिय ॥
दिट्ठौ सु कंत भारथ्थ मैं। पुव्व पच्छ अब नह सुनिय ॥१८५२॥

चील्हनी का पूछना किस किस में और किस कारणवश यह युद्ध हुआ।

स्लोक ॥ कस्यार्थे कंत भावीति। बरणं कस्य सुंदरी ॥
कस्य वैर विरुद्धं सौ। कस्य कस्य पराक्रमं ॥ छं० १८५३ ॥

चील्ह का सब हाल कहना।

जग्य वैर विरुध्धंसौ। बरनं कृत्य रंभयौ ॥
प्रथीभारो पंगराजा। जोधा जोधंत भूषनं ॥ छं० ॥ १८५४ ॥

चील्ह का चील्हनी से युद्ध का वर्णन करना और उसे अपने साथ युद्ध स्थान पर चलने को कहना।

(१) प्र. कृ. को-उग्गती। (२) मो.-चित्यौ।

चौपाई ॥ [1]लुथ्थी लुथ्थि पुलथ्थि प्रमानं। भर बजि गज्जि बीर लुटि थानं॥
हेरे संमर रंभ हकारी। कहा कंत मो पन उच्चारी ॥छं०१८५५॥

दूहा ॥ सुनि विवाद चिल्हो सु बर। धुनि सुनि वर भारथ्थ ॥
उमा कंति चौमट्ठि दिय। रहि मसु पुच्छिय कथ्थ ॥छं०॥१८५६॥

पद्धरी ॥ [2]उच्चरी चिल्ह भारथ्थ कथ्थ। चौमट्ठि सुनो सुनि कंत तथ्थ ॥
नर फिरै जुद्ध देवनि मसान। उत मंग गुरें हकि मीस पान ॥
छं० ॥ १८५७ ॥

सुनि दिब्ब दिव्व जुद्धह सयंन। घग घगति जुद्ध बन निसबंन ॥
रथ रथनि रथ्थ गज गजन जुट्ठ। बाजीन बाजि नर नर अहुट्ठि॥
छं० ॥ १८५८ ॥

बर सुन्यौ देवि भारथ अपुब्ब। उद्दित्त बीर देषत सब्ब ॥
इह रित्त सब्ब बाजित्त सार। तन सिद्धि दिंत जोगिनि सु तार ॥
छं० ॥ १८५९ ॥

डमरु डक्क बज्जै [3]अजूप। तुंमर पिसाच पल चर अनूप ॥
गावंत गीत जुग्गिनिय [4]थान। आहुत्त जुद्ध चल्लै न भान ॥
छं० ॥ १८६० ॥

नारद नद्द वैताल [5]डक्क। वर बैर रंभ फिरि बरै चुक्क ॥
नच्चै कमंध हक्कंत सीस। पीसंत दंत बंभनौ रीस ॥ छं०॥१८६१॥
आचिज्ज जुद्ध जा दिषत तथ्थ। उड़ि चलौ कंत चौमट्ठि मथ्थ ॥
* * * * । * छं० ॥ १८६२ ॥

कवित्त ॥ सुनत कंत आनंद। बीर आनंद चवमठी ॥
लै चिन्हनि चलि मथ्थ। जुद्ध पिष्यन दिवि उठी ॥
उठे सूर बल ग्रंह। बान अरजुन जिम विद्धत ॥
एक झार उभझार। एक संमुष [6]पग संधत ॥
तेगां अचंभ सुभझै [7]सपत। आरुध्यौ प्रथिराज दिषि ॥

(१) मं.-लोथी लोथि। (२) को. उत्तरी।
(३) मे.-अनूप। (४) ए. कृ. को.-गान।
(५) ए.कृ.को रुक्क। (६) मं.-मुष। (७) ए. कृ. को सयनु।

मोहिनि सँजोग पहुपंग सुर। भेंन रत्न चहुआन लिषि ॥
छं० ॥ १८६३ ॥

शंखधुनी योगियों के आक्रमण करने पर महा कुहराम मचना।

दस हजार बर मीर। पंग आयस फिरि अष्पिय ॥
छुटिय बान कम्मान। मेछ चावहिसि धष्पिय ॥
सबर सूर सामंत। बीर बीरं विरुझानं ॥
गज्ज जिमी बर पत्त। पत्त झंकुरिआ षानं ॥
आवह बीर प्रथिराज बर। असम सिंह आहत्त बल ॥
लगि पंच बान उप्पर सु धपि। अगनित दल भंजै सु षल ॥
छं० ॥ १८६४ ॥

बड़ी बुरी तरह से घिर जाने पर सामंतों का चिंता करना और पृथ्वीराज का सामंतों की तरफ देखना।

दूहा ॥ दुतिय बेर सामंत फिरि। देषि आन धर धार ॥
मन चिंता अति चिंतवन। ढिल्लौ ढिल्लौ पार ॥ छं०॥१८६५ ॥

कवित्त ॥ बान आन प्रथ बीर। बाल देषौ अग्गी हुअ ॥
असन बीर बिच राज। बान उड़गन जु मद्धि धुअ ॥
इसी लोह बिप्फुरै। जानि लग्गै बिय अग्गा ॥
फिरि नंष्यै है राज। सूर साही नृप बग्गा ॥
मारे सु मीर मोहिल परिग। षग्ग मग्ग वोहिथ्थ रिन ॥
बर कन्ह मलय भोंहा नृपति। फेरि त्रिपति दिष्यौ सु तन ॥
छं० ॥ १८६६ ॥

पृथ्वीराज के सामंतों का भी जी खोल कर हथियार चलाना।

सूर पत्त दित संभ। सूर चिंती रस मग्गा ॥
बन कट्टी जल जलनि। राज अग्गा नन अग्गा ॥
अल्हन कुंअर नरिंद। कनक बड़ गुज्जर बीरं ॥
नृप अश्वंबन चली। राज अप्पौ लिय तीरं ॥

संजोगि पीय दंपति दुहनि। मुष ष्यालन आलस भिरिगि॥
रवि मुदित चंद उग्गनि परह। फेरि पंग पारम फिरिग॥
छं० ॥ १८६७ ॥

पृथ्वीराज का कुपित हो कर तलवार चलाना और बान बर्साना।

झ,कित पंग प्रथिराज। गहिय कर वार चंपि कर॥
रास मुट्ठि निस्तरिय। दंत बाही सु कुंभ पर॥
धार मुक्ति आदरिय। पंति लग्गिय सुभ चीरहि॥
मनहु रोम गहि पग्ग। ढाहि धारा धर नीरहि॥
मनु दुतिय चंद बद्दल बिचै। पंति लग्गि उड़गन रहिय॥
धर धुकत मंत इम दिष्पियै। मनहु इंद्र बज्जह बहिय॥छं०॥१८६८॥
दूहा॥ पंग डंम चहुआन बर। मंच सँजोगि सु झार॥
संझ पार सम्हौ अरै। अरि पंचन रिपुचार॥ छं० ॥ १८६९ ॥
कवित्त॥ परी निम्मि मसि उदित। हूर सामंत पंति फिरि॥
उतरि न्रपति प्रथिराज। लघ अनिस्संक अभंग करि॥
उभै तुषार [1]तुषार। बान छुट्टै कमन्ह बर॥
उभै बीर सम्हौ नरिंद। सोभै सु रंग भर॥
लग्गौ सु नेंन भ्रिकुटी बिविच। टोप फट्टि कंठ[2] सु भगि॥
प्रथिराज सु बल संभरि धनी। जै जै जै आये सु लगि॥
छं० ॥ १८७० ॥
दूहा॥उभै दिवस बित्ते सकल। गत घाटिका निसि अग्ग॥
जा पुच्छै दिवि सकल तू। सुनि भारथ्थ [3]समग्ग॥ छं० ॥ १८७१ ॥

इसी समय कविचन्द का लड़ने के लिये पृथ्वीराज से आज्ञा मांगना।

तीर तुबक सिर पर बहत। गहत नरिंद गुमान॥
बरदाई तहां लरन कों। हुकम मांगि चहुआन॥

(१) प्र. कृ. को. निहार। (२) मो.-सुभग्ग। (३) प्र. कृ. को.-लग्गि।

पृथ्वीराज का कवि को लड़ाई करने से रोकना।

हम झूझत रजपूत रिन। जंपत संभरि राव॥
अमर कित्ति सामंत करन। बरदाई घर जाव॥ छं० ॥ १८७२ ॥

कविचन्द का राजा की बात न मान कर घोड़ा बढ़ाना।

कित्ति करन गुन उद्धरन। जल्हन पच्छ सु लज्ज॥
माहि न्रिपति आयस करौ। ईस सीस द्यौ अज्ज॥ छं० ॥ १८७३॥
बिन आयस प्रथिराज कै। धाय नंघयौ बाज॥
कौ रष्यै सुत मल्ह कौ। सूर नूर मुष लाज॥ छं० ॥ १८७४ ॥

कविचन्द के घोड़े की फुर्ती और उसकी शोभा वर्णन।

लघुनराज॥ कविंद बाज नष्पयं। नरिंद चष्प दिष्पयं॥
मनों नछिच पातयं। हू अंकि मद्धि राजयं॥ छं० ॥ १८७५ ॥
पवंन बेग पाइसं। तुरंग कब्बि रायसं॥
न्रपत्ति अष्प पारषं। बियौ न कोइ आरियं॥ छं० ॥ १८७६॥
नचंत वै किमारयं। हरै गुमान मोरयं॥
धरा ऐराक ठौरयं। लियौ सु वष्प तोरयं॥ छं० ॥ १८७७ ॥
दियौ चुहान मौर कौ। समुह की हिलोर कौ॥
जरावयं पलानयं। अमोल पिट्ठ ठानयं॥ छं० ॥ १८७८ ॥
मनो कि रथ्थ भानयं। कविंद जाचि आनयं॥
सु भंत अग्रकान के। मनों भलक्क बान के॥ छं० ॥ १८७९ ॥
हरन्न सच्च प्रान के। करे विरंच पानि के॥
हुती उपंम जोरयं। चिया सुनेन कोरयं॥ छं० ॥ १८८० ॥
कि भोर चित्त चेत की। गरभ्भ फाफ केतकौ॥
प्रफुल्ल चंद मौजयं। कि पंषुरी सरोजयं॥ छं० ॥ १८८१ ॥
पवन्न हीन पिष्पयं। कि दीप जोति मिष्पयं॥
तमं दरिद्र भंजनं। पतंग सूम दझ्झनं॥ छं० ॥ १८८२ ॥

सुभंत केस वालयं। सरिस्स ज्यौं सेवालयं ॥
सबद्ध कंध वक्क कौ। सगाल पुट्ठि चक्क कौ ॥ छं० ॥ १८८३ ॥
गिरद्द देत घुम्मरं। पलं हलंत झुम्मरं ॥
घुरं चमक्क उज्जलं। मनों घनंम विज्जुलं ॥ छं० ॥ १८८४ ॥
बरन्न गात भोर मौ। हलंत पूंछ चोर मौ ॥
करतं फौज हौमयं। दिष्यौ कनौज ईसयं ॥ छं० ॥ १८८५ ॥
घुरं रजं तुरंगयं। उड़ंत जोर जंगयं ॥
किरन्न सूर मंदयं। छुट्टंत तीर हृदयं ॥ छं० ॥ १८८६ ॥
बजै निसान नद्दयं। गरज्ज ज्यौं सुमुद्दयं ॥
बद्दंत गज्ज मद्दयं। करंत सद्द रद्दयं ॥ छं० ॥ १८८७ ॥

कविचंद का युद्ध करके मुसल्मानी आनो को विदार देना और सकुशल लौट कर राजा के पास आजाना।

उठै रनं रवद्दयं। सुनंत भट्ट सद्दयं ॥
कमद्ध पंग उद्धयं। सुमेर जेम दिट्ठयं ॥ छं० ॥ १८८८ ॥
करै हुकम्म पट्ठयं। गँभीर भीर अट्ठयं ॥
हुसेन यों कमालयं। घलौल यां जलालयं ॥ छं० ॥ १८८९ ॥
पिराज यां हुजाबयं। फरोद यां निबाजयं ॥
अजव्व माज बाजयं। धरंत जुद्ध लाजयं ॥ छं० ॥ १८९० ॥
कुलं जरं गरिट्ठयं। भुजा तिनं बलिट्ठयं ॥
द्रिगं सु [1]घात रत्तयं। मनों गयंद मत्तयं ॥ छं० ॥ १८९१ ॥
लरंत मीर भट्टयं। छुटै हथ्यार थट्टयं ॥
करंत घाव घट्टयं। नचंत जेम नट्टयं ॥ छं० ॥ १८९२ ॥
अरी घटा दबट्टयं। कि विज्जुलं लपट्टयं ॥
परंत चट्ट पट्टयं। पिशाच श्रोन चट्टयं ॥ छं० । १८९३ ॥
सनट्ट हथ्थ भट्टयं। उभै सु मीर कट्टयं ॥
हयंगयं सु अंगयं। कलंत श्रान पंकयं ॥ छं० ॥ १८९४ ॥

(१) प. क्र. को. गात रथ्थयं।

कृपान हथ्थ चंदयं । सु रग्गदेव बंदयं ॥
झरंत मीर अंगयं । निकट्ठ तट्ट गंगयं ॥ छं० ॥ १८६५ ॥

घटं सु धाव घुम्मयं । परे सु मीर झुंम्मयं ॥
लगे तुरंग अंगयं । सँपूर लोह जंगयं ॥ छं० ॥ १८६६ ॥

घटं सु घाव घुम्मयं । परे सु मीर झुम्मयं ॥
लगे तुरंग अंगयं । सँपूर लोह जंगयं ॥ छं० ॥ १८६७ ॥

फिर्यौ सु चंद तव्वयं । करन्न राज कव्वयं ॥
लगे न घाव गातयं । सहाय दुग्ग मातयं ॥ छं० ॥ १८६८ ॥

कवि का पराक्रम और राजा का उसकी प्रसंशा करना ।

दूहा ॥ कुंजर पंजर छिद्र करि । फिरि बरदाई चंद ॥
तिन अंदर जिद्वनि भ्रमत । ज्यौं कंदरा मुनिंद ॥ छं० ॥ १८६९ ॥

कवित्त ॥ खरत चंद बरदाइ । करत अच्छरि विरदावलि ॥
झरत कुमम गयनंग । धरत गर ईस मुंडावलि ॥
करत घाव[1] कबि राव । पिसुन परि बथ्थ पछारत ॥
भरत पत्र कालिका । भूत बेताल उकारत ॥
जहं तहं ढरंत गज बाज नर । लोह लपटि पावक लहर ॥
सुप वाह वाह प्रथिराज कहि । कटक भट्ट किन्नौ कहर ॥
छं० ॥ १९०० ॥

कवि का पैदल हो जाना और अपना घोड़ा कन्ह को देना ।

भयौ पाज कविराज । तंग रुक्यौ दल मायर ॥
कर कृपान चमकंत । कंपि थर हर कर काइर ॥
माज बाज रुधि भीज । किन्यौ छर हर गति नाहर ॥
भूमि तुरंग परंत । मुष्प जंपिय गिरिजा हर ॥
कविचंद पयादौ होइ करि । नृप बिरदावलि आपु पढ़ि ॥

(१) मो.-कविराज ।

विलहान कन्ह चहुआन कौ। बगसि भट्ट सिर नाइ चल्लि॥छं०॥१६०१॥

नवमी को एक घड़ी रात्रि गए जैचन्द के भाई का मारा जाना।

दूहा॥ नौमी निसि इक घटि चढ़ी। बंधि परत पिछि पंग॥
धाइ परे चहुआन पर। ज्यौं अगि अज्जर दंग॥ छं०॥१६०२॥

जैचन्द का अत्यन्त कुपित होकर सेना को ललकारना। पंग सेना के योद्धाओं का धावा करना। उनकी वीर शोभा वर्णन।

भुजंगी॥ धाए पंग राजं महा रोस गत्तं। सुनी सावधानं रसं बीर बत्तं॥
चले तीर तत्ते कहें मेघ बुट्टे। जले पंप पंषी तिते भज्जि छुट्टे॥
छं०॥ १६०३॥

कछू [1]पंप हीनं [2]तनं जान पायं। जिते वान मानं मरीरं बँधायं॥
महा तेज सूरं बरच्छी भ्रमायं। तहां बहु कथ्थी उपम्माति पायं॥
छं०॥ १६०४॥

फल्लं उज्जलं सोभिते स्याह डंडं। मनों राह चंदं ह्वडुंत मंडं॥
बजे लोह लोहं बरं सूर रुट्टै। मनों इंद्र के हथ्थ तें बज्ज छुट्टै॥
छं०॥ १६०५॥

गदा लग्गि सीसं फुटे टूक टोपं। फुटी जानि भानं मयूषं अनोपं॥
[3]भिर तंमु दीसै न दीसै गुरंतं। तुटी सीस दीसं बलं जा अनंतं॥
छं०॥ १६०६॥

पियं राग [4]सिंधू अवन्नं न [5]बट्टं। ह्वै सूर बीरज्ज अंघं उलट्टं॥
तिनं कन्ह सूरं बलं जा [6]अमन्नं। तनं कि क्रमं रूप धावै दिवन्नं॥
छं०॥ १६०७॥

बहै तेग बेगं गजं सीस धारं। दुहं अंग लंकं रुधी धार पारं॥
कवीचंद मत्तो उपम्मा जु पट्टी। उपै बद्दलं जानि भारथ्थ कट्टी॥
छं०॥ १६०८॥

(१) मो.-पंग। (२) को.-तिनं, मो.-ननं (३) ए. कृ. को.-भिरंजानि।
(४) मो.-सोनं। (५) ए. कृ. को.-वट्टटं। (६) मो.-अनन्तं।

सुभै स्याम [1]फुंदा सनाहं मि जक्की। चलै रुद्ध धारं दुहूं अंग बक्की॥
उभै पंति बंधू ससी भोंर बीचं। उरं चंद मानो चलै चंद सीचं॥
छं० ॥ १६०६ ॥

करी बज्ज बीरं न हल्लै हलाई। बधू बाल जैसैं बधू झौं चलाई॥
हसं हंस हंसं हसं पंच पंचे। उड़ै पंच पंचे भगी देह संचे॥
छं० ॥ १६१० ॥

सुनै सूर दिब्बी सु सोभै सु देहू। फलै जानि सोभै मधू माधुकेहू॥
भये छिन्न छिन्नं सनाहं निनारी। मनों ग्रेह रज्जं मंडी जानि जारी॥
छं० ॥ १६११ ॥

दिषै देवि आई मुषं एक मोरं। कहै कोनं तो [2]सौज भारथ्थ जोरं॥
परे सीस न्यारे विरुझ्झाइ उट्ठे। विना सीस दीसै जमं तंज छुट्टै॥
छं० ॥ १६१२ ॥

करै सीस हक्कै धपै दो निनारे। मनों केत ते राह दूनों हकारे॥
कहो बत्त चिल्ही कहं ए सु जोयं। बनी नाहि जोहं सुकै कोटि कोयं॥
छं० ॥ १६१३ ॥

सामंतों का बल और पराक्रम वर्णन।

साटक ॥ छची जे पहपंग जुग्गिनि पुरं लीथंत धारा धरं ॥
दुत्ती बज्जन बीर धीर सुभटं आलुथ्थि अल्लुथ्थनं ॥
अंती अंत हरंति भंजति धरं धारं रुधिं पारयौ ॥
चिल्ही जंभर बीर भारथ बरं जो गीव जत्ती गतं ॥ छं० ॥१६१४॥

चिल्हनी का युद्ध देख कर प्रसन्न होना।

दूहा ॥ इह सुनि कर भारथ्थ गति। उट्ठि चिल्ही चवमट्ठि ॥
सा भारथ्थ न दिट्ठयौ। पंपिन अंपिन दिट्ठ ॥ छं० ॥ १६१५ ॥

कवित्त ॥ उठें एक धावंत। सहम रुद्धा अगिनित बल्ल ॥
क्रोध किये दस होइ। सहम दसमथ्थ जूह पल ॥
वाहंतै मुरपंच। लष्प मम्हौ उच्चारं ॥
रुधिर पारमह हौंसु। पलह अगनित उभ्भारं ॥

(१) ए.-फंदा। (२) ए. कृ. को.-तो सेंज।

उच्चरै चिल्ह अस्तुति करी । साधि भरै सामंत दल ॥
भारथ्थ देवि मन उल्हसी । चिल्ह पंषि दिथ्थौ सकल ॥छं०॥१९१६॥

केहरि कंठीर का पृथ्वीराज के गले में कमान डाल देना ।

केहरि रा कंठेरि । स्वामि सिगिनि गर घत्तिय ॥
वरुन पास निय नंद । लोक पालह पति पत्तिय ॥
हसि हलक्कि हक्कारि । पंग पुत्तिय जानन पन ॥
तात अग्ग संवरिय । राज राजन आनी धन ॥
चहुआन रथ्थ मथ्थह चढ़िय । नंषि बथ्थ कमधज्ज वर ॥
अब देषि बाल लालन सु पर । सुतन हाल विचै सु बर ॥
छं० ॥ १९१७ ॥

संयोगिता का प्रत्यंचा काट देना और पृथ्वीराज का केहरि कंठीर पर तलवार चलाना।

दूहा ॥ गुन कट्टिय रमनिय सु वर । डसनह पंग कुआरि ॥
असि वर झर प्रथिराज हनि । सूर हथ्थ नर वारि ॥छं०॥१९१८॥

तलवार के युद्ध का वाक् दृश्य वर्णन ।

चाटक ॥ निर वारि सु कट्टिय कंठ तनं । धर ढारि धरद्धर भार घनं ॥
झर लग्गिय झार उझार भरं । कटि मंडल पंड विहंड धरं ॥
छं० ॥ १९१९ ॥
लगि हक्कि सु धार सु बीर सुअं । कठिया किकरिम्मर धार धुअं ॥
असि रुंड सु मुंडन झुंझ पयट्ठ । मनों सुक कूटि कवारिय कट्ठ ॥
छं० ॥ १९२० ॥
जु क्रमे वर केहरि चंगल चंपि । ग्रहे कर पाव[1] उडंत उझंपि ॥
धर सम जंगल पुच्छ सराह । सनंघत मंडल उंडल माह ॥
छं० ॥ १९२१ ॥
फिरक्कन आय धरप्पर धुक्क । किलक्कति चप्प विलग्गिय लुक्क ॥
विभच्छह रस्स मु रच्चिय मेन । हयग्गय लुथ्थि तहौ पर अन ॥
छं० १९२२ ॥

(१) ए-उडंपि ।

धर प्परि संघ धरं सय मत्त। मुरक्किय सेन सु पंगु रयत्त॥
मनो भगि धूर अधूर नरिंद। मुदंत मरीच अथंगय चंद॥
छं० ॥ १९२३ ॥

नवमी की रात्रि के युद्ध का अवसान। सात सौ शंखधुनियों का मारा जाना।

दूहा। तिथ नौमी सिर चंद निसि। बारह सुत्त रविंद॥
सुत चौरंगी संघ धर। कहर कलह कविचंद॥ छं० ॥ १९२४ ॥
संघ धुनिय परि मत्त सय। मुर रानौ कमधज्ज॥
अति सु अरिष्ट विचारयौ। जाय कि संभर रज्ज॥ छं० ॥ १९२५ ॥

नवमी की रात्रि के युद्ध की उपसंहार कथा और मृत योद्धाओं के नाम।

कवित्त॥ निसि नौमी सिर चंद। हक्क बज्जी चावंडिसि॥
भिरि अभंग सामंत। वारि वरषंत मंच असि॥
अयुत जुद्ध आवद्ध। दुट्ठ आरंभ मत्ति बर॥
एक जीव दस घटित। दसति ठेलै सु सहस भर॥
दिट्ठै न देव दानव भिरत। जूह रत्त रत्तिय सु पत्त॥
सामंत सूर मारह परिग। मोरे पंग अभंग दल॥ छं० ॥ १९२६॥

भुजंगी॥ भए राय दुअ कंक दुक्कै समानं। परे सूर सालह तिनं नाम आनं॥
पर्यो मंडलो राव सालह नहंमो। जिनै पारिया पंग रा सेन गंमो॥
छं० ॥ १९२७ ॥

पर्यो जावलो जालह सामंत भारे। जिनै पारिया पंग पंधार सारे॥
पर्यो बग्गरो बाघ वाहे दुहथ्थै। भिरै पग्ग भग्गो मिल्लो हथ्थ बथ्थै॥
छं० ॥ १९२८ ॥

पर्यो बीर जादौं बली राव बानं। जिने नंषिया गेंन गय दंत पानं॥
पर्यो साह तौ सर सारंग गाजो। दुहुं सथ्थ भथ्था भलो हथ्थ माजो॥
छं० ॥१९२९॥

पऱ्यो पट्टरी राव परिहार राना। घुले सेल माजै पुलै पंग बाना॥
'जवै उप्पटी पंग आवड नीरं। तबै सांधुला सिंह भुज'भानि भीरं॥
छं० ॥ १८३० ॥

पऱ्यो सिंधुआ सिंधु सादूल मोरी। लगे लोह अंगं लगी जानि होरी॥
भिरैं भोज भग्गै नहीं सार भग्गै। पऱ्यो मरह मानों नहो जूह लग्गै॥
छं० ॥ १८३१ ॥

पऱ्यो राव भोंहा उभै चंद साषी। इकै कुसुम नंपै इकै किति भाषी॥
जिसी भारथं षोहनी अट्ठ होमी। तिसी चैत सुदि रारि निसी एक नामी॥
छं० ॥ १८३२ ॥

कवित्त ॥ तब नायो 'रयपाल। जहां ढिल्ली संभरि वै॥
मुहि सांई लगि मरन। चंद रु सूर साषि दुऐ॥
सार सिंगि सिर परत। फुट्टि सिर चिहुं दिसि तुट्टौ॥
धर धायो असमान। अंत पय 'पय भर षुट्टौ॥
इटक्यो सु कटक किन्नो चटक। सब दल भयौ भयावनौ॥
जग जेठ झुझि झुझ धरनो पऱ्यो। अच्छरि 'करिहि वधावनौ॥
छं० ॥ १८३३ ॥

दूहा ॥ पहु पचार रट्ठौर रिन। जिहि 'सिंगिनि गुर कोन॥
भुज 'भुअंग सामंत कय। गही संप धर लौन॥ छं० ॥ १८३४ ॥
तुरंग विछिं डिग पंडि तसु। करिग सु सस्त्र विसस्त्र॥
रुधिर धार धर उद्धरिय। भरिग उमा पति पच॥ छं० ॥ १८३५ ॥
राज पयंप्यो भिरन भर। आज कहौं हिय छोह॥
भोंहा भोंह पराक्रमह। कुल चंद्रेल न हाहि॥ छं० ॥ १८३६ ॥

कवित्त ॥ जिने सेष धर संप। पूर पूरत भुअ कंपिय॥
जिनै संप धर संप। भूमि डारत भर चंपिय॥
जिनै संप धर संप। राज गर सिंगिनि घत्तिय॥
सो संषद्दर असि समेत। आयास सपत्तिय॥

(१) ए. कृ. को.-चंजे। (२) मो. जानि। (३) ए. कृ. को.-रजपाल।
(४) ए. कृ. को.-पथ, पथ्थ। (५) ए. कृ. को.-करिरहि।
(६) मो.-सिंगिन गर। (७) ए. कृ. को. भुनंग।

धनि बीर बीर बीरम्म सुअ । सु कज वारि अवधारितैं ॥
सामंत सूर सूरन इनहि । सुकल कित्ति विसतार तैं ॥छं० ॥ १९३७॥

दिट्ठी द्रुग्ग नरिंद । कामि राजा जुर जग्गिय ॥
राय इनों लंगूर । गोठि करनं कर भग्गिय ॥
पंग राय परतष्पि । जंग रष्पन रन साई ॥
निसि नवमी ससि अस्त । गस्त [1]गौअर गहि पाई ॥
इक्कंत दंत चंप्यौ नृपति । सामंतन असि बर बहिय ॥
धग पय्यौ सत्त आथंत कौ । कहिग सब्ब गहियन गहिय ॥
छं० ॥ १९३८ ॥

दूहा ॥ सिंधु जस्ति कमधज्ज दल । [2]विवरि अनी अन लष्प ॥
दिय आयस कर उंचकरि । [3]कनक राइ परतष्प ॥ छं० ॥ १९३९ ॥

एक लष्प सेना सुभर । बाजि बज्ज रसबीर ॥
अनिय बंधि आषाढ़ नभ । वरषि बूंद घन तीर ॥ छं० १९४० ॥

युद्ध वर्णन ।

चोटक ॥ सजि सेन मनों मिलि मत्त जलं । मिलि उप्पर पुट्ठि कमद्ध दलं ॥
घन नंकिय घंट सु बीर घुरं । भर निर्मल स्वामि सु नेह धुरं ॥
छं० ॥ १९४१ ॥

मिलि सेन उभै भर आतुरयं । हुअ नारि सु कातर कातरयं ॥
लगि लोह उभै भर संकरयं । असि पावक झाक बढी झरयं ॥
छं० ॥ १९४२ ॥

हय भार ढरै धर धार मुयं । किननं कहि धुक्कहि दुट्ठ दुयं ॥
करि तुट्टहि सुंड सु सीस ढुरै । पय तुट्ट पुलै चक चीह करै ॥
छं० ॥ १९४३ ॥

भर सामँत जुद्ध अयास लगै । जय स्वामि सु अप्पह अप्प मगै ॥
निज इष्ट सु सूरनि संभरियं । सुनि आइ सबै सोइ सुंधरियं ॥
छं० ॥ १९४४ ॥

(१) मो.-गौवर । (२) प्र. कृ. को.-विचार । (३) प्र. कृ. को.-कैचन राउ ।

भय बीर भयानक रुद्र रसं । धर नच्चि धरप्पर मीस कसं ॥
जु कियं कर अस्सि जुधं अधयं । दिठि दिट्ठि सुनीन सु सा जुधयं ॥
छं० ॥ १९४५ ॥

[1]भय धुंधर हक्क किलक्क बजं । गज तुट्टिय ढाल सु नेज धजं ॥
भय सामंत जुद्धह सद्धरयं । जुरि जुद्धहि रुद्धमि सुद्धरयं ॥
छं० ॥ १९४६ ॥

भ्रम छत्त [2]अछत्त सु राज भयं । जय आस उभै भर बीर गयं ॥
छं० ॥ १९४७ ॥

सामंतों की प्रशंसा।

कवित्त ॥ धनिव सूर सामंत । जीव लगि जतन न कीनौ ॥
धनिव सूर सामंत । सबद जंपत पुर तीनौ ॥
धनिव सूर सामंत । घाय दुज्जन संघारे ॥
धनिव सूर सामंत । देष पिचौ रिन पारे ॥
इतनौ सु कियौ प्रथिराज छल । कहत चंद उत्तिम हियौ ॥
संदेह देवि पय लग्गि कारि । तबहि गंग मज्जन कियौ ॥ छं० ॥ १९४८ ॥

अत्तताई का युद्ध वर्णन ।

दूहा ॥ *चौरंगी नन्दन सुभर । अत्तातइ उतंग ॥
समरि ईस आनंद नृप । धरि चिहूल जुरि जंग ॥ छं० ॥ १९४९ ॥

अत्तातई की सजावट और युद्ध के लिये उसका ओज एवं उत्साह वर्णन ।

पद्धरी ॥ जुरि जंग सूर चौरंगि नंद । धकि दंत मंत उप्पर मयंद ॥
जा गिनिय पच लै [3]सजिय संग । उल्हास ईस आनंद अंग ॥
छं० ॥ १९५० ॥

---

(१) ए. कृ. को.-भर । (२) ए. कृ. को.-असत्त ।
* दिल्ली के राजा अनंगपाल तूंअर के प्रधान चौरंगी चहुआन जिनका बेटा अतातई था ।
(३) ए. कृ. को. चलिय ।

उत्तंग तोलि चिस्सूल बीर । गज्यौ गगन गल काल कंठीर ॥
धर सर यदु मधि मत्त दंति । उभ्भारि कमल षग ढिग मु पंति॥
छं० ॥ १६५१ ॥

जलडोहि सु जल बीरत्त रत्त । भंजी सु पारि अरि अनिय मत्त॥
जय जय सु किति जंपै अघाइ । नच्चै सु ईस भर रुंड पाइ ॥
छं० ॥ १६५२ ॥

प्राहार खत्त औरत्त एक । है गै तुटंत नर ताम तेक ॥
घन रुहिर झाक रंगिय सकत्ति । तन रत्त रुद्र रत्त ज्यौं अरत्ति॥
छं० ॥ १६५३ ॥

उठ्ठी दुरंग मुषि लग्यौ धाहि । चिसूल झारि धर धरनि ढाहि॥
जसवंत कमध कोपै करार । आयौ सु साज सह यदु सार ॥
छं० ॥ १६५४ ॥

प्राहार कियौ चहुआन जाम । [1]संग्रह्यौ हक्क कंठह सु ताम॥
असि घाइ सीस उप्पर उभार । प्राहार अवरि अवनी सु ढारि ॥
छं० ॥ १६५५ ॥

रुहिरै सु पूर पावस प्रवाह । जल रत्त गंग मिलि भयौ [2]नाह ॥
भग्गे सु सेन न्रिप पंग जाम । आइयौ हनू लंगूर ताम ॥
छं० ॥ १६५६ ॥

अत्तातार्इ पर मुसल्मान सेना का आक्रमण करना ।

दूहा ॥ तत्तारिय तमि पंग भर। करि उप्पर ट्रिग बीर ॥
अत्तातार्इ उप्परै । आइ परक्कै मीर ॥ छं० ॥ १६५७ ॥

अत्तातार्इ का यवन सेना को विदार देना ।

कवित्त ॥ अततार्इ बर बीर । सेन रुंध्यौ तत्तारी ॥
छोह सामि तजि मोह । कोह कट्टौं कट्टारी ॥
गल्ह अप्पि आभंग । वज्जि नंध्यौ बर बाही ॥
जाम ममंत विप्फरे । पंग सेना सब गाही ॥

(१) ए. क्र. को.-संग्रह्यौ कंठ हामिहक्क नाम। (२) ए. क्र. को.-ताह।

तोषार [1]तुंग पष्यर सहित। परिग भोर गंभीर भर ॥
पद्द पंग फेरि पारस परिय। घटिय तीय घट्टी पहर ॥
छं० ॥ १९५८ ॥

अत्ताताई का अतुलित पराक्रम वर्णन।

अतताई बर बीर। स्वामि सद्दी न पार बल ॥
तीय पहर बाजिग्ग। बज्ज बिच परे जुद्ध पल ॥
धर समुंद परमान। बद्द मेलो देषो जुध्ध ॥
धुध्ध प्रमान पै मंडि। धूध्ध को नीत अष्प भुध्ध ॥
धर परत धरनि उट्ठे भिरन। इंद्र सीस तिहि ईस बर ॥
जंपरे बीर धरनी सु बर। बरन रंभ बंटेति भर ॥ छं० ॥ १९५९॥

बरन रंभ बंट्यो। भरन पिष्यै पौरिष बर ॥
बरन सु बर किय चित्त। सूर रंछिय रन चित्त भर ॥
रंभ कहत्तिय आदि। दूर उर बसि उर मंडं ॥
जमगत्तो जिन आंनि। बंद छंडे जिन छंडं ॥
संभरी बोल तम बर बरी। भ्रित्त छंछ इच्छी सु बर ॥
नन बरे बरहि रहि सु बर। बच्यो न को रवि चक्कतर ॥
छं० ॥ १९६० ॥

कोपि चाइ चहुआन। तट्ठि तर खूर उपारिय ॥
सिंगी नाद अनंद। दुष्ट करि दुष्ट सं भारिय ॥
सुधिर मत्त सामंत। रुधिर पष्यर लघ मंगह ॥
रहसि राइ लंगूर। ग्रीव चंप्यो आभंगह ॥
लै मह बह जोगिनि करिय। अत्ताताइ उतंग सिर ॥
भरि हरिय पंग पंगुर सयन। गंग सु रंगिय रंग ढरि॥छं०॥१९६१॥

अत्ताताई के युद्ध करते करते चहुआन का गंगा पार करना।

दूहा ॥ ढरत सु धर चहुआन को। मद्धि गंग वै माहि ॥
जय जय सुर जंपिय सु भर। धनि धनि अत्ताताइ ॥ छं०॥१९६२॥

(१) मो.-तुंगः।

गंधर्वों का इन्द्र से कहना कि कन्नौज का युद्ध देखने चलिए और इन्द्र का ऐरावत पर सवार होकर युद्ध देखने आना।

पद्धरी ॥ गंधव्व सुग्ग पत्ते सु जाम। आनंद उअर उप्पनौ ताम ॥
आदर सु इंद्र दीनौ विश्राम। मेलयौ जुद्ध भल कौन काम ॥
छं० ॥ १६६३ ॥
गंधव्व कहै सुनि सुर्ग देव। मामंत जुद्ध पिष्पन म टेव ॥
जम करौ रथ्थ ऐराय इंद्र। देषनह जुद्ध कमधज्ज दंद ॥
छं० ॥ १६६४ ॥
सजि चले देव अनेक मथ्थ। मामंत रंग अनेक रथ्थ ॥
अपछर अनेक चालंत सुर्ग। अनेक सुभट लेपंत मग्ग ॥
छं० ॥ १६६५ ॥
गंगह दुकूल दाहंत सेन। रेलयौ कटक सरिता प्रवेन ॥
अनेक करी वहता सु दीस। बेहाल मुष्य पारंत चीस ॥
छं० ॥ १६६६ ॥
चंपे लंगूर अतताइ जब्ब। बंधेव तोन संकर गुरब्ब ॥
मा वह बेध लाघव्व मार। मारंत सेन मंगह प्रहार ॥छं०॥ १६६७ ॥
मामंत सज्जि चव और जार। अनेक सेन बिच करत मोर ॥
रोपयौ बीच मित मद्दम घंभ। गज गाह बंधि देषत अचंभ ॥
छ० ॥ १६६८ ॥
पद्धाम कोम रिन षेत हुअ। कीनौ सु जुद्ध मामंत धुअ ॥
* * * * ॥ * * छं० ॥ १६६९ ॥

पृथ्वीराज का कविचन्द से अन्ताताई की कथा पूछना।

दूहा ॥ अन्ताताइ अभंग भर। सब पह प्राक्रम पेषि ॥
लगौ टगटगौ दुअ दलनि। न्रिप कवि पुच्छि विसेष ॥छं०॥१६७० ॥
अतुलित बल अतुलित तनह। अतुलित जुद्ध सु विंद ॥
अतुलित रन संग्राम किय। कहि उतपति कविचंद ॥छं०॥१६७१ ॥

(१) ए. कृ. को.-मर्ग। (२) ए. कृ. को.-तव्व।

कविचन्द का अत्ताताई की उत्पत्ति कहना कि तुअरों के मंत्री चौरंगी चहुआन को पुत्री जन्मी और प्रसिद्ध हुआ कि पुत्र जन्मा है।

कवित्त ॥ चौरंगी चहुआन । राज मंडल आमापुर ॥
तुंअर धर परधान । सु वर जानै इक्कासुर ॥
[1]धर असंष धन धरिय । एक नारिय सुचि धाइय ॥
तिहिं उर पुत्री जाइ । पुत्र करि कही बधाइय ॥
करि संमकार दुज दान दिय । अत्ताताइय कुल कुंअर ॥
त्रिप अनँगपाल दीवान महि । पुत्र नाम अनुमरइ मर ॥

छं० ॥ १९७८ ॥

पुत्री का यौवन काल आने पर माता का उसे हरिद्वार में शिवजी के स्थान पर लेजाकर शिवार्चन करना।

अति तन रूप सरूप । भूप आदर कर उट्ठहि ॥
चौरंगी चहुआन । नाम कीरति कर पट्ठहि ॥
द्वादस बरष सु पुज्ज । मात गोचर करि रष्यौ ॥
राज काज चहुआन । पुत्र कहि कहि करि भष्यौ ॥
हरद्वार जाइ बुल्यौ सु हर । सेव जननि संहर करिय ॥
नर कहै रवन [2]रवनिय पुरुष । रूप देषि सुर उद्धरिय ॥

छं० ॥ १९७३ ॥

दूहा ॥ जब चिय अंग प्रगट्ट हुअ । तब किय अंग दुराइ ॥
अद्ध रयन लै अनुमरिय । सिव सेवन मत भाइ ॥ छं० ॥ १९७४ ॥

शिवस्तुति।

विराज ॥ स्वयं संभु सारी । समं जे सुरारी ॥
उरं विष्य धारी । गरलं विचारी ॥ छं० ॥ १९७५ ॥
ससी सीस सारी । जटा जूट धारी ॥
सिरं गंग भारी । कटिं ब्रह्मचारी ॥ छं० ॥ १९७६ ॥

(१) पृ. कृ. को.-धन । (२) पृ. कृ. को.-नवनिय ।

मया मोह कारी। अपंजा विडारी॥
गिरिजास पारी। उछंगं सु नारी॥ छं० ॥ १८७७॥
धरी वज्र तारी। चयं नाउंकारी॥
प्रलै जहि झारी। करे नेन कारी॥ छं० ॥ १८७८॥
अनंगं प्रहारी। मतं ब्रह्मचारी॥
धरै सिंग मारी। विभूतं अधारी॥ छं० ॥ १८७९॥
जुगं तत्त जारी। छिनं जे निवारी॥
सुअं सार धारी। [1]भुगत्तं उधारी॥ छं० ॥ १८८०॥
इसौ सिंभु राया। न दिष्यौ न माया॥
तिनं किन्ति पाया। जगत्तं न चाया॥ छं० ॥ १८८१॥
चढ़े दृष्य सीसं। विभूती वरीसं॥
मनों क्रन्न रब्बी। अपं जोध मब्बी॥ छं० ॥ १८८२॥
दूहा॥ मात पिता बंधव सकल। तजि तजि मोह प्रमान॥
दस कन्या बर मंग लै। गायन गौ सुरथान॥ छं० ॥ १८८३॥

कन्या का निराहार वृत कर के शिवजी का पूजन करना।

ईस जग्य दिन उर धरति। तजि संका सुर [2]बार॥
सो बाली लंघन किये। पानी पत्र अधार॥ छं० ॥ १८८४॥
पंच धने पुज्जंत सिव। गहि गिरिजा तम पानि॥
चिय कि पुरुष हवि संचु कहि। विधि कलि बंध प्रमान॥
छं० ॥ १८८५॥

शिवजी का प्रसन्न होना।

एक दिवस सिव रीझ कै। पूछन छंहन लीन॥
सुनि सुनि बाल विसाल तौ। जो मंगै मोह दीन॥ छं० ॥ १८८६॥

कन्या का वरदान मांगना।

मुष पित जुग्गिनिपुर धनिय। अनंगपाल परधान॥
पुत्र पुत्र [3]कहि अनुसरिय। जानि वितडुर मानि॥ छं० ॥ १८८७॥

(१) ए. कृ. को.-भुगत। (२) ए. कृ. को.-बाल। (३) ए. कृ. को.-कर।

कवित्त ॥ [1]विदित सकल सुनि चपल । सतीक्ष्ण लंपट विन कपटे ॥
भगत उधव अरविंद । सीस चंदह दिपि झपटे ॥
गीत राग रस सार । सुभर भासत तन सोभित ॥
काम दहन जम दहन । तीन लोकह मोय लोकित ॥
सुर अनँग निहि सामँत गवन । अरि भंजन मज्जन रवन ॥
मा तात दोष वर भंजनह । तुअ विन नह भंजै कवन ॥
छं० ॥ १९८८ ॥

शिवजी का बरदान देना।

दूहा ॥ जयति जुवति संतोष घन । संचहि यामी आव ॥
सुवर बाल नन आइयै । सो विह लष्यौ सु पाव ॥ छं० ॥ १९८९ ॥
पुच लियिनि पुन्नै कहौ । देउ सु ताहि प्रमान ॥
जु कछु इंछ वंछै मनह । सो अप्पौ तुहि ध्यान ॥ छं० ॥ १९९० ॥

शिवजी का बरदान कि आज से तेरा नाम अत्तातई होगा और तू ऐसा वीर और पराक्रमी होगा कि कोई भी तुझ से समर में न जीत सकेगा।

पद्धरी ॥ बोलंति सिंभ बालह प्रमान । आघात कियौ देवलनि आनि ॥
आना नरिंद बंताल इक्कि । डर करै नाथ बाला प मुक्कि ॥
छं० ॥ १९९१ ॥
षट मास गये बिन अन्न पान । दिष्यौ सु चिंत निह कपट मान ॥
चल चलह चित्त तिन खोइ खोइ । पावै न देव तप भूउ कोइ ।
छं० ॥ १९९२ ॥
निश्चलह चित्त जिन खोइ वीर । पावै जु सुर्ग सुष महि कीर ॥
अगि अग्गि निमा तज्जिय विजाम । मपनंत ईस दिष्यौ [2]प्रमान ॥
छं० ॥ १९९३ ॥
अतताइ नाम तो धरौ वीर । पावैव राज राजन सरीर ॥
ना लषै पुत्त तुअ तात ग्रेह । तजि नारि रूप धरि ब्रम्ह देह ॥
छं० ॥ १९९४ ॥

(१) ए. कृ. को.-दिवस तरल । (२) ए. कृ. को. पनाम ।

जं छोई सब्ब भारथ्थ काल। भंजै न तूअ तिन अंग साल॥
किरनेव किरन फुट्टत प्रकास। भंजै सु षलह लुकि अग्ग धार॥
छं०॥ १९९५॥

भारथ्थ रमन जब छोड़ काल। मरअंत काल बाल इति बाल॥
तुअ अंग अंग [1]पुज्जै न जुद्ध। मानुष्ष कोन करिहै विरुद्ध॥
छं॥ १९९६

जिन मथ्थ छोड़ अतताइ भान। कट्टिहै तिमिर दुज्जन निधान॥
भलकंत कनक दिप्पौत बाल। जग्गयौ बीर तिन मथ्थ काल॥
छं०॥ १९९७॥

लच्छि कच्छि बंधी सु थाल। पावहि सु बीर बीरह बिसाल॥
इह कहिह बीर गय अप्प थान। विभ्भूत चक्क डोरु प्रमान॥
छं०॥ १९९८॥

मालाति अरत्त दीसै उतंग। सिव रूप धरिग मन दुति अनंग॥
सिर नेत दीन मुष्यम थान। इह काल करिग आयौ सु पान॥
छं०॥ १९९९॥

माटक॥ जुत्तं जा सिव थान अनगति वरं, कापाल भूतं बरं॥
डोरु डक्कय नद्द नारद बलं, बेताल बेतालयं॥
तूं जोता रन बाहनेव कमलं, जै जै अतातायं॥
ज्ञातं मंचय छित्ति तारन तुही, पुज्जै न कोई बलं॥ २०००॥

कवि का कहना कि अत्ताताई अजेय योद्धा है।

दूहा॥ नागति नर सुर असुर मय। असुर चित्त परमान॥
ता जित्तै अतताइ जुध। मां नह दिप्पिय आन॥ छं०॥ २००१॥

अत्ताताई के वीरत्व का आतंक।

कवित्त॥ अत्ताताइ उतंग। जुद्ध पुज्जै न भीम बल॥
धुति धावत करै देव। चक्क वक्कंत काल कल॥
गह गह गह उच्चार। मथ्थ कंपै मघवा भर॥

(१) प्र. कृ. को.-पुच्छै।

अरु कंपै हगपाल्ल । काल्ल कंपै सु नाग नर ॥
उच्छाह तात संमुह करिय । आय मपत्तह पुत्त पह ॥
लभ्भै सु कोटि कोटिह सु नन । सो लभ्यौ मत्ती मु दहि ॥
छं० ॥ २००२ ॥

दूहा ॥ तूं तारन काल जपज्यौ । अत्तातार उतंग ॥
जिन हुकंम काल काल करिय । करै सु रनह अभंग ॥
छं० ॥ २००३ ॥

रन अभंग को करै तुहि । तूं बढ़ देवह थान ॥
चाव हिमि सो भिंटई । करत पान गुन मान ॥ छं० ॥ २००४ ॥

उस कन्या के दिल्ली लौट आने पर एक महीने में उसे पुरुषत्व प्राप्त हुआ ।

इक मास पट दिवस वर । रहि नृप दिल्ली थान ॥
सु वर वीर गुन उप्पजिय । सुनि संभरि चहुआन ॥ छं० ॥ २००५ ॥
भाई सोई पय सु लहि । बंछि जनम संघ नाव ॥
दुमतर जुग ने तौर ज्यौं । छुटै न बंधव पाव ॥ छं० ॥ २००६ ॥
नर चिंता पाच तबभै । जौ पहपन सुष्याइ ॥
तौं बंधन छुट्टै परौ । जौ सुद्धो जग्गाइ ॥ छं० ॥ २००७

इस प्रकार से कवि का अत्तातार्इ के नाम का अर्थ और उसके स्वरूप का वर्णन बतलाना ।

कवित्त ॥ सिव सिवाह सिर इथ्थ । भयौ कर पर समथ्थ दै ॥
सु विधि राज आदरिय । सक्ति खामिस्त अथ्थलै ॥
वपु विभूति आभरै । सिंगि संग्राह धरै उर ॥
चिजट कथं कंठरिय । तिष्पि तिरसूल धरै कर ॥
कलकंत बार किलकंत कमि । जुग्गिनि सह मथ्थै फिरै ॥
चौरंगि नंद चहुआन चित । अत्तताइ नामह सरै ॥ छं० ॥ २००८॥

(१) प्र. कृ. को. छत्ती ।

आयौ तब ढिल्ली पुरह। ले चहुआन सु भार॥
काट सबैं सामंत भय। अत्तताइ [1]इम नार॥ छं०॥ २००९॥
नमसकार सामंत करि। जब जब दिष्पहि ताहि॥
तब तब राज बिराज मैं। रहैं भूप मुष चाहि॥ छं०॥ २०१०॥
ढिल्ली सह सामंत सह। अमर सु कत ढिग थान॥
[2]समर सिंघ रावल सुभर। ग्रह लै गौ चहुआन॥ छं०॥२०११॥
इह बत्तौ कविचंद कहि। सुनिय राज प्रथिराज॥
जुद्ध पराक्रम पेषि कैं। मंन्यौ सब कत काज॥ छं०॥ २०१२॥

अत्ताताई के मरने पर कमधुज्ज सेना का जोर पकड़ना और केहरि मल्ल कमधुज्ज का धावा करना।

कवित्त॥ अततताइय धर पर्‌यौ। बाग उप्परी पंग भर॥
गहन हुकम किय राज। बीर पंगुरा सुभर भर॥
सस्त्र बीर प्रथिराज। दिसा केहरि करि मिल्लं॥
हुकम बीर कमधज्ज। सस्त्र [3]ओडन सब झिल्लं॥
कम्मान मीस धनि न्रपति गुन। कढ़ी रेष नरपत्ति बर॥
सामंत सूर तीरह निकसि। करिग राज उप्पर सु भर॥
छं०॥ २०१३॥

पंग की कुपित सेना का अनेक वर्णन।

भुजंगी॥कहै चंद कव्वी कह्यौ ज्यों फुनिंदं। वरं चार चारं भुजंगी मुछंदं॥
समो सोम सूरं करूरं जु धायं। गिरि पंग सेनं छिनं मेछ लायं॥
छं०॥ २०१४॥
करी बीर दूनं दुहत्तं दुहाइ। दुहूं अग्गि सिंगी दुहूं नैन नाई॥
दाज बीर रूपं बिरूझाय धाई। मनों घोटरं टक्करं एक छाई॥
छं०॥ २०१५॥
अनी सों अनी अंग अंगी घरक्की। मनों भौन भानं दुहूं बीच बक्की॥
मिली मंडली फौज पहूपंग घेरी। कियं क्रोध दिट्ठी चहूआन हेरी॥
छं०॥ २०१६॥

(१) ए. इम। (२) मो. अमर सिंह। (३) मो. ओड़त।

सबै सस्त्र मंतं अवतं ज सूरं। झरै दिष्ट वैरी लगै जे करूरं॥
दिसा धुंधरी पंच विभान छायो। किधों फेरि बरिषा जु आषाढ़ आयो॥

छं० ॥ २०१७ ॥

गजै मार धारं निमानं प्रमानं। फिरै पंति दंती घनं सेम मानं॥
बजै सद्द सिंगूर [1]उद्दंद कूरं। पढै भट्ट बीरं समं जानि सूरं॥

छं० ॥ २०१८ ॥

धजा सेत नीलं सु मतं फिरंती। मनों सुक्क मालं बगं पच्छ जंती॥
उडै मार धारं [2]किरचान तथ्थं। उड़ै भिंगनं जानियै विज्ज सथ्थं॥

छं० ॥ २०१९ ॥

उडै मार मारं अमी बंक झारं। मनों अभ्भि [3]मरन बाल बज्जयो मवारं॥
भयं अंग रत्तं ढुरै रुधि इल्लो। मनों इथ्थ पायं नदी जानि चल्लो॥

छं० ॥ २०२० ॥

कहै रंभ लेयं नहीं इडव आवै। तिनं मार धारं सु मंगल्ल गावै॥
रही अच्छरी हारि मनो[4]थ्थ पुट्ठै। मनो बिरहिनी इथ्थ तें पीउ छुट्टै॥

छं०॥ २०२१ ॥

ढलं ढाल ढालं सु रत्ती फिरंती। गुरं गज्ज छंडै चढ़ै पंप पंती॥
परे पंच सूरं जु भारथ्थ भारै। जिनं पंग मेनं सबं पग्ग झारै॥

छं० ॥ २०२२ ॥

दूहा ॥ पंग राव चहुआन बर। सब बित्ते कविचंद ॥
देवासुर भारथ्थ नन। नन बित्त सुर इंद्र ॥ छं० ॥ २०२३ ॥

कवित्त ॥ परत पंच भारथ्थ। चंपि चहुआन अरुझि झथ्थ ॥
डरपि सब्ब सामंत। मुक्ति खत्तन मन सुझिझथ्थ ॥
धर धारव चंपिय सु। पंग पारस गहि नंपिय ॥
जियन जुद्ध तुछ कीय। कित्ति कीनी जुग मथ्थिय ॥
कलहंत केलि लग्गी विषम। [5]तन सुरत्त बर उम्मरिय ॥
मनों पुहप इथ्थ बंधन पलह। अमर अम्म पूजा करिय ॥

छं० ॥ २०२४ ॥

(१) ए. कृ. को. उद्धंत। (२) मो. मूरं। (३) मो.-किरवान।
(४) ए. कृ. को.-सन। (५) मो.-नन।

युद्ध स्थल की पावस से उपमा वर्णन।

बर माधव पहुपंग। मार उन्नयौ मस्व झर॥
बज्जी बर प्रथिराज। सोर मंडै अहु गिरि॥
सस्त्र तेज उट्ठाय। [1]सांम खगियन सु बुंद असि॥
घरी एक धर धरे। मार बुट्ठंन खूर धसि॥
अवरत्त बीय बज्जे बिषम। भगि अष्यौ नर खूर बिव॥
प्रथिराज दान घन दीय सस्त्र। ग्रहन राह अरि भजन रवि॥
छं० ॥ २०२५ ॥

दूहा॥ छिनक उसरि बहखति दल। छच पंग सिर भास॥
हेम दंड चलि उदै सथ। ग्रह चंपे रवि रास॥ छं० ॥ २०२६ ॥

पंगराज के हाथी की सजावट और शोभा।

कवित्त॥ रत्ति ढाल ढलंकति। रत्त अम्मरिय पीत धज॥
सेत मंत गज झंप। रत्त मंडत्त महम गज॥
मनों राहु रवि ओम। भोम चढ़ि षिझि दल बयंबं॥
सज्जि सेन कमधज्ज। अग्य दीनी अरि छिंबं॥
तिम चढ़त घटत किरनाल कर। भै अभंत चतुरंगिनिय॥
तन कट्टि करषि कायर धरषि। सुमरि सोम वामर गनिय॥
छं० ॥ २०२७ ॥

पंगराज की आज्ञा पाकर सैनिकों का उत्साह से बढ़ना। उनकी शोभा वर्णन।

दूहा॥ इन भज्जै संजोगि ग्रह। जीय मंपतौ राज॥
अजुत जुद्ध रिन जित्तही। पंग सु भर [2]किहि काज॥छं०॥२०२८॥

रसावला॥ पंग कोपे घनं। लोह बज्जे भनं॥
ओड मंडे ननं। बीर बज्जै [3]रनं॥ छं० ॥ २०२९ ॥
चक्कर चंगनं। चंपि पुत्ते मनं॥
बान रोमं भनं। अंत [4]तुट्टै घनं॥ छं० ॥ २०३० ॥

(१) ए. कृ. को.-स्याम। (२) ए. कृ. को.-कहि।
(३) ए. कृ. को.-मनं। (४) ए. कृ. को.-लट्टै

खग्ग वीरं अनं। वीर नंचै छिनं॥
दंत दंती तनं। सीस चट्टी फनं॥ छं०॥ २०३१॥
माहि मेलं मनं। जोत रिप्पे कनं॥
सोर लग्गे तिनं। अग्ग जे संमनं॥ छं०॥ २०३२॥
सिंघ देषे तिनं। अग्ग मेरं मनं॥
कोटि तप्पं तनं। पग्ग पावं छिनं॥ छं०॥ २०३३॥
सीस इक्के फनं। द्रोम नंचे घनं॥
सूर दिप्पे छिनं। आनि कीयं मनं॥ छं०॥ २०३४॥
खग्ग पंकं पुतं। ढोरि यग्गं [1]अुतं॥
लोटि घंनं मनं। किल्लि बंधं तनं॥ छं०॥ २०३५॥

पृथ्वीराज की तरफ से हाड़ा हम्मीर का अग्रसर होना।

कवित्त॥ हाड़ा राव हमीर। राय गंभीर बिबंधौ॥
खग्यौ ना तांघार। खग्ग जर जौन सइंदौ॥
राज अग्ग फेरि यहि। आहि अंगल पति जानहि॥
चहुआन चामर नरिंद। आगिनि पुर थानहि॥
असि दुग्ग दुग्ग दल सौं जुरिग। सामंतति मत्तह चढ़िग॥
आखोह सेन खागन विषम। [2]बखोदान बामन बढ़िग॥
छं०॥ २०३६॥

पंग सेना में से काशिराज का मोरचे पर आना।

दूहा॥ कासिराज सज्जौ सु दल। फूनि अग्या दिय पंग॥
गाजे भीर अभीर रनि। बाजे बिषम सु जंग॥ छं०॥ २०३७॥

काशिराज के दल का बल।

कवित्त॥ कासिराज दल बिषम। महि जानु तार बिछुट्टिय॥
मिरिनि हार जुध धार। अग्ग अग्गह खिय बंटिय॥
निघनि घात तन बात। घात हय घात अघानिय॥
अनों जिहाज सायरिय। तिरन तुंगत तिहि बानिय॥

(१) ए. कृ. को. मुतं। (२) "मनों" पाठ अधिक है।

बल बंधि बलपति बत्त तिन। छिन छिनदा कमधज्ज दल॥
भूचाल भूमि जथल पथल। इम सु छचि पहुपंग दल॥
छं० ॥ २०३८ ॥

काशिराज और हाड़ा हम्मीर का परस्पर युद्ध वर्णन।

भुजंगी ॥ हले पंग छचं, न छिचं निधानं। उवं हड्ड हम्मीर गंभीर बानं॥
[1]हलं हाल भग्गी सु जग्गी जुआनं। रुधी धार उद्धार भूमी भयानं॥
छं० ॥ २०३९ ॥
मम मेल मंदेह अंदेह गानं। हयं तानि छंडै न छंडै परानं॥
बकै राइ पंगे बढ़े पीलवानं। नभं गोम गज्जेव जंजीर थानं॥
छं० ॥ २०४० ॥
निमा एक मेकं ममेकं हियानं। दिमा धूरि धुंधी उड़ीगै[2] गिधानं॥
भिरै बीर सामंत तत्तं उतानं। महा भार भुत्तं सु मांई सु तानं॥
छं० ॥ २०४१ ॥

दोनों का द्वंद युद्ध और दोनों का मारा जाना।

कवित्त ॥ हाड़ाराय हलकि उत। कामिराजह कर वर कमि॥
जागिनि पुर सामंत। बहत कनवज्ज बीर रस॥
बियौ बीर आहुरिय। धरिय दंतह्वर आवध॥
नामि बीर निज्झरिय। करिय केहरि कुम रावध॥
उड़ि हंस मंस नंमह मुहर। कुहरति मा बाज्जय सुहर॥
जग्गयौ नाग तब नाग पुर। हाम दुरग धामंक धर॥छं०॥२०४२॥
दूहा ॥ हाड़ा राय सु हथ्थ धरि। गंभीरा रस बीर॥
कामिराज दल मम जुरिग। कुल उच्चारिय नीर॥छं० ॥ २०४३ ॥
नृप अलमिग अलमिग सुभर अलमिय पंग नरिंद॥
विलमित काल करंक किय। मह मति तीम गनिंद॥ छं० ॥२०४४॥

नवमी का चन्द्र अस्त होने पर आधी रात को दोनों सेनाओं का थक जाना।

कवित्त ॥ निमि नवमी ममि अस्त। घटिय सुर बीय म उप्परि॥

(१) ग्र. छ. को. हथ्थ थाल। (२) मो.-निधानं।

थकिय इथ्थ सामंत । थकिय पंगुर दल जुथ्थरि ॥
रुधिर सरित सरहरिय । गिद्ध [1]गोमाय अघाइय ॥
हुंम सीस गत दरिद । वीर वेताल नचाइय ॥
आसुर सु उहटि वट भट रहिग । पंग फेरि सज्जिय सुभर ॥
करि सीस रीस पुज्जिय सुवर । कहिय गहन आयास चर ॥
छं० ॥ २०४५ ॥

पृथ्वीराज का पंग सेना के बीच में घिर जाना ।

वर विपहर निसि पंग । क्रोध विष वीर साम सब ॥
जीभ लोह दिढ साव । जरिय साहस्स तत्त तव ॥
चित वामंग गारुरी । अमी अंचल्ल चित मंतं ॥
दिष्ट अछित उच्चारि । इंकि कट्टिग विष [2]गत्तं ॥
[3]अप्पह जु पल्ल सार सु गरुर । [4]रुद्रमि वेंन मज्जै मिसह ॥
जे चिच रेय चिची सु वर । मिष संजोग आमा मिगह ॥छं०॥२०४६॥

आर्या ॥ पन्नगा ग्रसित सामुद्रं । त्यों पंग सेन ग्रसतां [5]राय ।
थित सुथित आइट्ठं । नवमी निसो अह उपायं ॥ छं० ॥ २०४७ ॥

मुरिल्ल ॥ पिथ्थि जुद्ध [6]कंदल्ल दिव धाया । लग्गे सह दसों दिसि आया ॥
तक्किग रहि गनि साजत वीरं । भग्गिय जुद्ध ग्रह पति धीरं ॥
छं० ॥ २०४८ ॥

रात्रि को सामंतों का सलाह करना कि प्रातः काल राजा को किसी तरह निकाल ले चलना चाहिए ।

कवित्त ॥ रैनि मत्त चिंतयौ । प्रात कहौं प्रथिराजं ॥
प्रा रच्यौ चहुआन । जाय जुग्गिनिपुर माजं ॥
जब लगि अरि तन वढै । कढै न्रप कूह प्रमानं ॥
च्यार वीस पग पुट्ठि । अज्यौं सामंत [7]जघानं ॥

(१) ए. कृ. को.-गोमय । (२) ए. कृ. को.-गत्र ।
(३) को.-अप्प पल्लु सार सु गरुर । ए.-अप्पह जु पज्जु लज्ज सार स गरुर
(४) ए. कृ. को.-सद्रसि । (५) गो.-रयं । (६) ए.-कंदुल । (७) गो.-सघानं ।

जो चढ़ै सामि पह,पंग कर। तौ सब कित्ति समप्पनौ॥
जब लग्गि न्रपति इम इच्छ है। तब लगि बल सामंत नौ॥
छं० ॥ २०४९ ॥

पृथ्वीराज का कहना कि तुम लोग अपने बल का गर्व करते हो। मैं मानूंगा नहीं चाहे जो हो।

सुनिय बयन प्रथिराज। रास बचनानि उच्चारिय॥
तता होइ तिन बेर। मंत बह बह बक्कारिय॥
तुम सु ग्रब्ब सामंत। मंत जानौ न अमंतं॥
मैं भग्गा ग्रिह पंग। लियं ढिल्ली धर जंतं॥
सै सामि होइ सिरदार भल। तौ कादुर बल राह जित॥
जौ इच्छ जीय होइ अप्पनौ। सुरब सेन अरियन्न कित॥छं०॥ २०५०॥

सामंतों का कहना कि अब भी न मानोगे तो अवश्य हारोगे।

दूहा॥ सुनि सामंत उचारि न्रिप। बिय दिन जुद्ध उमाह॥
अब जीतै प्रभु हारिहै। जौ नहि चल्लै राह॥ छं० ॥ २०५१ ॥

पृथ्वीराज का कहना कि जो भाग्य में लिखा होगा सो होगा।

तब अंगलवै [1]बोलि इह। रे भावी समरथ्थ॥
जौ पैसै लष पंजरै। अंत चढ़ै जम इच्छ॥ छं० ॥ २०५२ ॥

दिशाओं में उजेला होना और पंग सेना का पुनः आक्रमण करना।

चौपाई॥ सामंत मूर उच्चरि चहुआनं। अचल्ल चित्त अति धीर सु ध्यानं॥
धनि नरिंद सोमेसुर जायौ। मंडी अमर पंग बर धायौ॥
छं० ॥ २०५३ ॥

रहि घटि सर निसि बढि तत मानं। घिनदा चरम रही घन पानं॥

(१) ए. कृ. को.-वालि।

बजि दल दुंदुभि पंग निमानं । रत चित सूर देस रति मानं ॥
छं० ॥ २०५४ ॥

जैचन्द के हाथी की शोभा वर्णन ।

कवित्त ॥ दिसि पुब्बह पहुपंग । बीर ठट्टौ रचि सेनं ॥
सेत केत गज झंप । सेत दुरि चौर समेनं ॥
सेत धजा आमही । सेत सिंदूक सु हल्लौ ॥
सेत अस्व पष्पर प्रमान । नाग मुषी रहि घुल्लौ ॥
उज्जल मनाह जम बरन बर । सेत धजा कमधज्ज सब ॥
ओपमा चंद सस्वन किरन । कै विगसी सु कलेसु रवि ॥
छं० ॥ २०५५ ॥

सामंतों का घोड़ों पर सवार हो कर हथियार पकड़ना ।

चौपाई ॥ मतौ मंडि सामंत सूर भर । जिहि उपाय संकल्प जतन नर ॥
न्रिप अन जग्गत सबै तुरंग चढ़ि । भान पयान न होत लोह कढ़ि ॥
छं० ॥ २०५६ ॥

चहुआन के सरदारों के नाम और उनकी सज धज का वर्णन

कवित्त ॥ चावहिसि पहुपंग । बंधि बन बीर सु ठट्टै ॥
रत्त धजा मारूफ । बंधि वामं दिसि गट्टै ॥
पीत धजा दल स्याम । सोह रट्टौ बर कन्हं ॥
सेत धजा पहुबंध । बीर उम्भौ पहु नन्हं ॥
चौबिस्सि फौज चावहिसा । बीर बीर बर बिट्टरै ॥
चिंतयौ भान पयान बर । लोह पयानत बिस्तरै ॥ छं० ॥२०५७॥

प्रातःकाल पृथ्वीराज का जागना ।

दूहा ॥ सुष्य सयन प्रथिराज भौ । तम घटि तम चर बार ॥
घरी एक निसि मुदित हुअ । बजत घरी घरियार ॥ छं०॥२०५८॥

पंगराज का प्रतिज्ञा करना ।

कवित्त ॥ घरिन बजत घरियार । पंग परतंग सु बाहिय ॥

कै तन छंडि तर धरौं । जीति दुरजन दल साहिय ॥
उभै उभै दिसि फौज । साजि चतुरंग चलाइय ॥
चावहिसि चहुआन । चाव चतुरंग हलाइय ॥
पायान भान बरज्जित अरि । लोह पयानन मोह भलि ॥
दिसि रत्त उत्त धररत्त ग्है । सिध समाधि जरद्ध घुलि॥छं०॥२०५८॥

प्रातः काल की चढ़ाई के समय पंग सेना की शोभा ।

भुजंगी॥ लगी बज्ज तालो बजे लोह घुम्मी। धरौ एक सिद्धिं समाधिं स भुम्मी ॥
किधों इन्द्र वेता सुरं जुद्ध बीयं। किधों तारका जुद्ध सुर मस्सि कीयं॥
छं० ॥ २०६०॥

कहै देव देवाइयं जुद्ध देषी । इसौ बीर अत्तीत भारथ्थ पेषी ॥
भयं कम्पि चंदं सबैं बीर सथ्थी। नचै रंग भैरूं ततथ्थं ततथ्थी ॥
छं० ॥ २०६१ ॥

किलं कार कारं रुधं पत्त धारं। पियै जोगिनी जोग माया डकारं॥
झरै लोह लोहं सबै दिस्सि झारी। नचै सट्ठि चव जोगिनी देत तारी॥
छं० ॥ २०६२ ॥

घटं घंट घट्टं सु पिंडं बिचारी। फिरै आदि माया सु आदं कुमारी॥
बहै बान पग्गं छुपिक्का विरंधं । परे बार पारं दुहं अंग छिद्रं ॥
छं० ॥ २०६३॥

भये छिन्न छिन्नं मनाहंति छिन्नं । रुधी जट्ठ रंकै तिनं माहि भिन्नं॥
कहै चंद कव्वी [1]उपम्माति रुप्पं । मना उग्गतं भान जान्नौ मउप्पं॥
छं० ॥ २०६४ ॥

भये अंग अंगं सु रंगे निनारं । भरं उत्तरे सुगति संसार पारं॥
भगै जुद्ध कवरुद्ध कथ्थे कथायं । लही सूर सूरं सबं सुगति पायं॥
छं० ॥ २०६५ ॥

परे पंग लथ्थं उलथ्थं सु सथ्थं । तुटै मस्च सूरं जुटै हथ्थ बथ्थं॥
छं० ॥ २०६६॥

---

(१) सं. उपमास ।

पृथ्वीराज का व्यूहवद्ध होना और गौरंग देव अजमेरपति का मोरचा रोकना।

कवित्त ॥ उग्गि भान पायान। देव दरबार संघ बजि ॥
सु बर सूर सामंत। [1]गज्जि निक्करे सेन सजि ॥
[2]धर हरि बलि पांवार। अग्ग कीनं प्रथिराजं ॥
ता पच्छै न्रिप कन्ह। सीस मुक्की बढ़ि लाजं ॥
ता पच्छ बीर निट्ठुर निडर। ता पच्छै दंपति अयन ॥
गौरंग गरुअ अजमेरपति। रष्पि न्रपति पच्छै सयन ॥छं०॥२०६७॥

पृथ्वीराज की ओर से जैतराव का बाग सम्हालना।

पच्छ भान पायान। लोह पायान अग्गि कढ़ि ॥
धर हरि धर पांवार। कोट धारह सलष्प चढ़ि ॥
बज्जि घाइ आइत्त। सार झरि सारह झुट्टौ ॥
नभ सु साम सामंत। जानि बीरं जगि अट्टौ॥
घन देत घत्त अवरत्त असि। उभै सेन बर बर जुटी ॥
घरी अट्ठ अध [3]बजि बिषम। भारथ्थह पारथ घटी ॥ छं०॥२०६८॥

पृथ्वीराज का घिर जाना और वीर पुरुषों का पराक्रम।

फिरि रुक्यौ प्रथिराज। परी पारस कमधज्जिय ॥
मुरि सु पंच पल भान। चढ़ी आयस सुर रज्जिय ॥
ठठुकि सेन पहु पंग। चंपि चहुआनन संके ॥
बर बिरंग बिडार। लखी बंभन झुकि झुक्कै ॥
का कुटिल दिट्ठ कनवज्ज पति। सस्त्र मंच करि झारयौ ॥
जगि पवित्र जोग मंडन बर। धार तिथ्थ [4]तन पारयौ ॥
छं० ॥ २०६९ ॥

युद्ध के समय श्रोणित प्रवाह की शोभा।

भुजंगी ॥ चल्यौ भान घट्टी उभैता प्रमानं। कढै लोह राठौर अरु चाहुआनं॥

(१) ए. कृ. को.गांत्त। (२) मो. धर हरिचल।
(३) मो.बरती। (४) मो. नभ, ए. कृ.-नन।

सुओ दीन एकं बिबे पंति बीयें। करे एक मेंकं तिनं लोह लीयें ॥
छं० ॥ २०७० ॥
उठै रुद्धि छिंछं झरै सार सारं। किधों मेघ बुट्टें प्रबालीन धारं ॥
ढरै रंग जावक्क हेमं पनीरं। गहै अंत गिद्धी उडंती प्रकारं ॥
मनों नभ्भ इंद्रं धनुक्कं पसारी। * * * छं० ॥ २०७१ ॥
हटक्की बरच्छी ठनंकंत घट्टं। पिजे गज्ज षेंचे चल्यौ साथ तट्टं ॥
छं० ॥ २०७२ ॥
कहै चंद कब्बी उपम्माति कल्लं। षचै इंद्र बद्धू कपी काम फल्लं॥
निकस्सौ सनेनं झरै रुद्धि धारं। ढरै रंग जावक्क हेमं पनारं ॥
छं० ॥ २०७३ ॥
करै सीस हक्के धरं कंठ रक्खी। मना नट्ट काया पलट्टौति बक्खी ॥
दुहूं दिस्सि रुंधे परें धाइ घट्टं। मनो रत्त डोरी चक्खौ नट्ट पट्टं॥
छं० ॥ २०७४ ॥
नहीं सुष्य दुष्यं न माया न काया। तहां सेवकं सामि रंकं न राया॥
घटक्की घटक्कीज भूछिद्र कारी। फिरी फेरि चहुआन पारस्स पारी ॥
छं० ॥ २०७५ ॥

घुड़सवारों के घोड़ों की तेजी और जवानों की हस्तलाघवता ।

कवित्त ॥ ठठ्ठ कि दिप्पि न्रप सेन। छच धारह जु छच तजि ॥
तत्तो छाइ तिहि बेर। तत्त माया सु मुदित तजि ॥
तत्त गत्त मो हथ्थ। तेग तत्तो उभ्भारी ॥
धात पंभ न्विघात। जानि झल्लरि झल्लारी ॥
असवार सनाहत पष्परे। कटि पट्टन तुट्टै निबर ॥
जाने कि सिषा तर गिर सिरह। बिहर बार करवत्त झर ॥
छं० ॥ २०७६ ॥
माझी बर मरदान। मान मरदा मिलि तोरन ॥
चाहुआन कमधज्ज। दिष्टि अरुहि रन जोरन ॥
दुनै बीर रस धीर। धाइ लग्गे आभुष्यं ॥
खाइ वज्जि अवरत्त। जानि छट्टै मद मुष्यं ॥

त्रिघाइ घाइ बज्जे घनं । घन निमान महह दुरिय ॥
रुधि भग्ग घाइ आभंग अगि । घटि बिबंग जोगां जुरिय
छं० ॥ २०७७ ॥

खोह धार बज्जंत । बज्जि पुरतार भार परि ॥
सेस सीस इल धसी । फेरि मुक्की कुंडलि करि ॥
करि कुंडलि अध सत्त । परे पिट्ठं परिवारं ॥
'गौ भगि फुनि फुनि फुन्नि । फुन्नि किय चंद निनारं ॥
अहि सीस 'वीस सत कलमले । रास रत्त मेदन दलं ॥
चिचकन चित्त विधम्म भुअ । तिहित वेर अहि कलकलं ॥
छं० ॥ २०७८ ॥

जैचन्द के भाई वीरम राय का वर्णन ।

बंधो रा जैचंद । रा विजपाल सपुत्तह ॥
से रंभी उर जनम । नाम बीरम रावतह ॥
महम तीस सिंधूत । ढाल नेजा सिंदूरिय ॥
सिंदुरीव सन्नाह । सेव वारुन संपूरिय ॥
दिन महिप एक भुंजै भषनि । विजय द्रग्ग अगै न्रपह ॥
जीते जुवान हिंदू तुरक । वाम अंग टोडर पगह ॥ छं०॥२०७९ ॥

वीरमराय का चहुआन सेना के सम्मुख आकर सामंतों को प्रचारना ।

सुक्रवार अष्टमिय । निंद जाने न जुग्ग परि ॥
नौमि सनी टरि गइय । सामि संग्राम इंद्र जुरि ॥
इय दिष्पत पावास । पाइ गहि सत्त पलारिय ॥
रे समग्र मूढंग । जंग जुरि हौन जगारिय ॥
आयौ निसंक सामंत जहँ । कर कमंत आलस असन ॥
तित्तने खूर साहि सु समर । जनु अगस्ति दरिया ग्रसन ॥
छं० ॥ २०८० ॥

(१) मो.-गौभग्ग फनं फन फुन्न । (२) मो. खान ।

दूहा ॥ बसु कट्ठिय कंधह धरिग। जब बसीठ परिहार ॥
उभय पान साहिग सनर। गय न्रप पंग सु सार ॥छं०॥२०८१ ॥
रा जैचंद नरिंद दल। दरसि श्रत्त बल काज ॥
में भुज पंजर भिरि गहिग। इन में को प्रथिराज ॥छं०॥२०८२॥
माया मागति देव जगि। हवि जिम हठिय प्रगट्ठि ॥
तिन कट्टारिय कर धरिग। तिन घन सेन निघट्ठि ॥ छं०॥२०८३ ॥
भ्रमरावली ॥ घन सैन निघट्ठिय पंग दलं। रावत्त बंध्यौ तिहि बीर बलं॥
रुधि पान स वित्त कियो समरं। घन देषि विमान फिरें अमरं ॥
छं० ॥ २०८४ ॥
तिन पौरिस राज भये सबरं। दिसि च्यारि फवज्जति पंग करं ॥
दसमी पह फट्टति एह जुरं। इन जुद्ध समावर जोग 'हरं ॥
कविचंद अनुक्रम बात धरं। छं० ॥ २०८५॥
* * * * । * छं०॥ २०८६ ॥

दसमी रविवार के प्रभात समय की सविस्तार कथा का आरंभ।

कवित्त ॥ कट्ठिय बर विस्तर्यौ। धाइ लग्गौ धर राजन ॥
जहाँ भीम जुवान। तीर तुंगह मै भाजन ॥
रा रन बीर पवित्र। सु पति रष्पिय परिहारह ॥
राज काज चहुआन। स्वामि संकेत अहारह ॥
जुध भिरत तिनहि हय गय विहत। गह गह कहैति संभरिय ॥
निसि गइय एक सामंत परि। भयत पीत निस अंमरिय ॥
छं० ॥ २०८७ ॥

नवमी के रात्रि के युद्ध में दोनों दलों का थक जाना।

दूहा ॥ निसि नौमिय वित्तिय बिषम। उदित दिवस आदीत ॥
उठहि न कर पल्लव नयन। अम बड़ बित्त कवित्त ॥छं०॥२०८८॥
गहन आस गई पंग न्रप। जियन आस चहुआन ॥
सूर षंड मंडन [2]रवन। उयौ सु रत्तौ भान ॥ छं० ॥ २०८९ ॥

(१) ए. कृ. कों.-जुरं। (२) ए. कृ. का.-बन।

कनवज्जै भज्जै सयन। जे भर ढिल्लिय सार॥
जे घर अंजुलि झल्लरित। उद्दित आदित वार॥ छं० ॥ २०९० ॥

कनवज्जह झलकिय किरन। बर तजि न्रपति उरन्न॥
जिहि गुन प्रगटित पिंड किय। तिहि उत्तरिग सुरन्न॥छं०॥२०९१॥

राजत स्रित धर केलि सह। लाभ सु कित्तिय पूर॥
जिहि गुन प्रगटित पिंड किय। तिहि [1]उत्तरि सुर मूर॥छं॥२०९२॥

संयोगिता का पृथ्वीराज की ओर और पृथ्वीराज का संयोगिता की ओर देख कर सकुचित चित्त होना।

देषि संजोगिय पिय सु बल। अम जल बूंद बदन्न॥
रति पति अहित पवित्र मुष। जालि प्रजालि मरन्न॥छं०॥२०९३॥

चंद्रायन॥ घुरि निसान उगि भान कला कर मुद्दयौ।
अम सामंत नरिंद छिनक धर धुक्कयौ॥
सविष पंग दल दिट्ठ सरोस निहारयौ।
अंचल अँमृत सँयोगि रेन मिस झारयौ॥ छं०॥२०९४॥

भ्रमरावली॥ फिरि देषिय राज रवन्न मुषं। अतिवंत दुषी दुष मानि सुषं।
भुव बंकम रंकम राज मनं। इष तंनि निहंति समोह घनं॥
छं० ॥ २०९५ ॥

गुन कट्टनि कट्टति तात कुलं। किय स्रय महावर बीर वरं॥
अभिराम विराम निमष्य करं। उलरंपि न पिट्ठन दिट्ठ हरं॥
छं० ॥ २०९६ ॥

इहि श्रीय सु पीय सु कीय कुलं। मुष जंपिन कंपिन काम कुलं॥
* * * * । * छं० ॥ २०९७ ॥

चारों ओर घोर शोर होने पर भी पृथ्वीराज का आलस त्याग कर न उठना।

दूहा॥ सुधर विलंबन घरिय [2]पर। रहि रहिय घटि तीन॥

(१) ए. कृ. को.-उत्तंग। (१) ए. कृ. को. धर।

उठहि न अलसित कर सु बर। कछु मन मोह प्रवीन ॥
छं० ॥ २०६८ ॥
उत रुष चंपिय रट्ठ वर। इत मुष संभरि वार ॥
चलत राइ फिरि फिरि परिय। उद्दित आदित वार ॥छं०॥२०६६॥

सब सामंतों का राजा की रक्षा के लिये सलाह करके कन्ह से कहना।

करि विचार सामंत सह। न्रिप तिहि रष्यत काज ॥
कहै अचल सुन सूर रहौ। करहु चलन कौ साज ॥ छं० ॥२१००॥
तब सामंत अचलेस सौ। बार बीय हम कथ्थ ॥
अब तुम कन्ह कविंद मिलि। कहौ चलै नृप सथ्थ ॥छं०॥२१०१ ॥
कहै अचल उरगंत रवि। बीच सुभर अप्पान ॥
चलै राज जीवंत ग्रिह। कहिय अचल सम कान्ह ॥ छं ॥ २१०२॥

कन्ह का कवि को समझाना कि अब भी दिल्ली चलने में कुशल है।

कवित्त ॥ कहै कन्ह चहुआन। अहो बरदाइ चंद बर ॥
जुरत जुद्ध दिन बीय। भये अनभुत्त उभै भर ॥
एक जन पंचास। परे सामंत सूर धर ॥
पंग राव घन सेन। तुट्टि सक मौर धीर थर ॥
थक्क सु हाथ सुभर नयन। उट्ठे न करह विश्रम बिरम ॥
पहु चल्लिग मग्ग रप्पै सुभर। कियौ राज अद्भुत्त क्रम ॥
छं० ॥ २१०३ ॥
समौ जानि कविचंद। कहै प्रथिराज राज मुनि ॥
आदि क्रम्म तें करें। ताम को सकै गुनिक गुनि ॥
सेस जीह संग्रहै। पार गुन तोहि न पावै ॥
तें जु करिय पहुपंग। मिलिय आरनि थर सावै ॥
नन कियौ न को करिहै न को। जै जै जै लच्छी तरुनि ॥
ग्रिह जाइ अप्प आनंद करि। बढ़ै कित्ति सब लोग पुनि ॥
छं० ॥ २१०४ ॥

कविचन्द का पृथ्वीराज के घोड़े की बाग पकड़ कर दिल्ली की राह लेना।

दूहा ॥ इह कहि सु कवि समीप गय। गहिय बग्ग हैराज ॥
चल्यौ पंचि ढिल्ली सु रह। सुभर सु मन्यौ काज ॥छं०। २१०५ ॥
प्रलय जलह जल हर चलिय। बलि बंधन बलि बार ॥
रथ चक्कां हरि करि करिय। परि प्रब्बत पथ्थार ॥ छं० ॥२१०६ ॥
उदय तरुनि नट्ठिग तिमिर। सजि सामंत समूह ॥
न्रिप अग्गै बहै सु इम। चलहु स्वामि करि कूह ॥ छं०॥२१०७॥

पृथ्वीराज प्रति कविचन्द का वचन।

कवित्त *॥ बंस प्रलंब अरोपि। हंन घन अंदर कट्टिय ॥
वग्ग पुरातन बंधि। धरनि ट्रिढ लग्गि न पुंटिय ॥
करि साहस चढि नट्ठ। ट्रुनी देषत कोतूहल ॥
घंटा रव गल करत। महिप उभौ जम संतल ॥
उत्तरन कुसल करतार कर। त्रिया लाभ तौ अलग रहि ॥
ढिल्लीव नाथ ढीलन करौ। लगौ मग्ग कविचंद कहि ॥
छं० ॥ २१०८ ॥

राजा पृथ्वीराज का चलने पर सम्मत होना।

दूहा ॥ चलन मानि चहुआन नृप। बज्जे पंग निसान ॥
निभि जु इंद दुहुं दल भयौ। विह्व सहित बिन भान ॥छं०२१०९॥
हय गय करि अग्गें नृपति। धिभि चंपे प्रथिराज ॥
मो अग्गैं आजुहि रहै। टरिग दीह बिय साज ॥छ०॥२११० ॥

सामंतों का व्यूह बांधना धाराधिपति का रास्ता करना और तिरछे रूख पर चौहान का आगे बढ़ना।

कवित्त ॥ बर हादस भारथ्थ। राज परि भौर वाम दिसि ॥
सह दच्छिन न्रप सथ्थ। बीर बर बही बीर असि ॥

* यह छन्द मो.-प्रति में नहीं है।

बर जोगिनि पुर उदै। सीस धर हर बर [1]जुट्टे ॥
मनों जैत षंभ तत्त। मेघ धारा जल बुट्टे ॥
तिरछौ तरि उप्परि नृपति। दट्ट दुधाह धारह धनी ॥
जाने कि अग्गि जज्जुर बनह। बंस जाल फट्टै घनी ॥ छं०॥२१११॥

शौचादि से निश्चित हो कर दो घड़ी दिन चढ़े जैचन्द का पसर करना।

दूहा ॥ [2]घटी उभै रबि चढ़िय बर। स्नान दान गुर चार ॥
पंग फेरि घेरिय सु घन। भर बिंटे सिर भार ॥ छं०॥२११२ ॥

वीर योद्धाओं का उत्साह।

रसावला ॥ सांमि विंटे रनं, खूर छोहं घनं। बथ्थ मल्लं जनं, धार कुट्टे मनं॥
छं० ॥ २११३ ॥
खूर चट्टे मनं, लोह तत्ती तनं। सीत बित्तं जनं, विट्ठु रेनं मनं ॥
छं० ॥ २११४ ॥
चित्त जोतिष्पनं, सो मनं जित्तनं। तेग बंकी भनं, बज्जि अस्सी तनं ॥
छं० ॥ २११५ ॥
सूर कीनी रनं, भारथं नंसनं। भ्रंम सासिष्पनं, जीव तुल्ले गिनं॥
छं० ॥ २११६ ॥
काल भूअं ननं, जम्म छुट्टे मनं। रज्ज कोटंभटं, रुद्धि घुम्मै धटं ॥
छं० ॥ २११७ ॥
खूरं चित्तं करं, दिष्पियं तुंमरं। स्वामि चल्लै परं, जुद्ध [3]झल्लं भरं।
छं० ॥ २११८ ॥

सामंतों की स्वामि भक्तिमय विषम वीरता।

दूहा ॥ परिग पंच पंचे सु भर। धितनि परिग श्रत पंच ॥
कूह जूह लै लै करिय। नृपति न लग्गी अंच ॥ छं० ॥ २११९ ॥
समर स पुट्ठी समर परि। सामि सुमति चल्ल तेन ॥
सामंतन रुक्यौ सु दल। लीज [4]मुष्य मुह जेन ॥ छं० ॥ २१२० ॥

(१) मो.-झुट्टे। (२) मो.-घरी। (३) मो.-मल्ले। (४) ए. कृ. को.-मुछ।

परिग सूर सोरह सु भर। आदित जुद्ध 'सरीस॥
बीर पंग फेरिय गहन। करि प्रतंग दिव ईस॥ छं० ॥ २१२१ ॥

पंगराज का अपनी सेना को पृथ्वीराज को पकड़ लेने की आज्ञा देना।

कहै पंगुरौ सु भर भर। आज सु दिन तुम काम॥
गहौ चंपि चहुआन कौं। ज्यों जग रप्पै नाम॥ छं० ॥ २१२२ ॥
दूहा गाहा सरसतिय। न्रप प्रसाद धन सथ्थ॥
दुरजन ग्रह एते तुरत। ग्रहै न पच्छै इथ्थ॥ छं० ॥ २१२३ ॥

पंगराज की प्रतिज्ञा सुन कर सैनिकों का कुपित होना।

इह प्रतंग पहु पंग सुनि। थ्रित कोपिय भ्रम काज॥
परे चंपि चहुआन पर। जानि कुलिग्गन बाज॥ छं०॥ २१२४ ॥
जब देषे सामंत इथ। तब लग्यौ घन ताप॥
जानै बिष ज्वाला तपति। कै प्रलै काल मनि आप॥छं०॥२१२५॥
जितै भ्रंम लच्छी लहै। मरन लहै सुर लोक॥
दोऊ सु परि भ्रत सुद्धरै। [2]परे धाइ धर तोक॥ छं० ॥ २१२६ ॥

पंग सेना का धावा करना तुमुल युद्ध होना और वीरसिंह राय का मारा जाना।

भुजंगी ॥ पुरे धाय बीरं रमं पुज्ज दभ्भै। क्रमं पंच धक्के चहुव्वान भज्जे॥
पर्‍यौ पंग पच्छै जुटेढ़ी पठाढौ। दिसं पुब्ब मारूफ बर बंक काढ़ी॥
छं० ॥ २१२७ ॥
चहूआन सूरं अमी बंक झारी। मनों पारधी बिंट वाराह पारी॥
महं माह सूरं प्रचारे सबाहं। [3]तबै बीर बीरं उपम्माति चाहं॥
छं० ॥ २१२८ ॥
पिन्नै लाज मुक्कै चियं पीय होरी। मुरे लज्ज बंधं दोऊ सेन जोरी
बहै पग्ग मग्गं सु बग्गं निनारे। तिरै जोध माया सरे सार पारे॥
छं० ॥ २१२९ ॥

(१. कृ. को.-सरीर। (२) मो.-परत। (३) ए. कृ. को.-तबै।

बहै षग्ग तुट्टै उड़ै टूक नारे। मनो टूटही राति आकास तारे॥
सहै हथ्थ श्वानं फुरी टोप सथ्थं। किधौं सूरिजं भूलियं राह हथ्थं॥
छं० ॥ २१३० ॥

डरै काइरं चिंति मुष्यं दुरायं। मनो प्रात दीपं बिधं कांति गायं॥
तुछं फुट्टि संगं सनाहं न कूरं। मनों जार कट्टै मुषं मौन[1] रूरं॥
छं० ॥ २१३१ ॥

मचै घाइ अघ्घाइ छुट्टै हवाई। मनों टीस ज्यों डंभरू पंति लाई॥
धरी अद्ध आहत्त बज्जे बिषम्मं। पर्‌यौ राव वरसिंघ कित्तीव जम्मं॥
छं० ॥ २१३२ ॥

पंगदल की सर्प से और पृथ्वीराज की गरुड़ से उपमा वर्णन।

कवित्त ॥ पुंग धार पहु पंग। राग सिंधू बज्जाइय॥
मार मंच संधयौ। बीर आलाप चिघाइय॥
सेस सुनिव सामंत। कंन मंडत तिहि रग्गा॥
फन मिसि असिवर धुनिय। जोह कट्टी पग लग्गा॥
गारुरी बीर कमधजक मर। जंच मंच होनं गनिय॥
मनि मथ्थ मेर डस्यो बिषम। मिंगि स्याल गज्जर मनिय॥
छं० ॥ २१३३ ॥

दूहा ॥ मांमि धंम रत्ते सु भर। चढे क्रोध बिष [3]झाल॥
दझ्झै कायर दूर टरि। मिलं गरुर मुंछाल॥ छं० ॥ २१३४ ॥

पंग सेना के बीच में से पृथ्वीराज के निकल जाने की प्रसंशा।

कुंडलिया * ॥ बार पारि पहुपंग दल। इम निकसिय चहुआन॥
छाया राषिसनी ग्रसत। पिट्ठ फारि हनुमान॥
पिट्ठ फोरि हनुमान। गौन मै साठि कोस मुह॥
उदधि मद्धि बिस्तारि। [4]गिलन अंतरिय वहंतह॥
रर्‌कार सबद उच्चार करि। ब्रहमंड कि भिदि मुनि गयौ॥
कहि चंद ध्यान धारत उअर। सागर पारंगत भयौ॥छं०॥२१३५॥

(१) मो.-मैन। (२) ए. कृ. को.-ईम। (३) ए. कृ. को.-ज्वाल।
(४) ए.-मिलन। * यह कुंडलिया मो. प्रति में नहीं है।

पुट्ठि वुट्ठि झाला हलइ । चलि न सकै चहुआन ॥
सामंतनि करि कोट[1] अउ । यों निकसे राजान ॥ छं० ॥ २१३६ ॥

दूहा ॥ जे छची अड्डे अरे । ते झुंझकै असिवान ॥
मानों बुंद समुंद में । परै तत्त पाषान ॥ छं० ॥ २१३७ ॥

पंग सेना का पृथ्वीराज को रोकना और सामंतों का निकल चलने की चेष्टा करना ।

सुभर पंग पिष्पे परत । परत करिय द्रिग रत्त ॥
रवि उद्दित चढि सत्त घटि । तपित तेज आदित्त ॥ छं० ॥ २१३८ ॥

चिभंगी ॥ दृग रत्ते सूरं, पंग करूरं, बजि रन तूरं, फिरि पंती ॥
रुप्पे चहुआनं, पंग रिसानं, द्रोन समानं, गुर कंती ॥
उप बज्जिय कंती, धर रंग रत्ती, बीर समत्ती, अलि बीरं ॥
बर बेन करूरं, दुअ नहि सूरं, रोम डरूरं, छुटि तीरं ॥ छं० ॥ २१३९ ॥

असि कट्टी नीवं, ज्यों ससि बीवं, भै [2]भति भीवं, अनमंकं ।
सब ओडन नप्पे, रज रन रप्पे, अरि घर भप्पे, भरि अंकं ॥
बर बर धर मीनं, तन फल छीनं, ज्यौं जल हीनं, फिरि मीनं ॥
छूरुरो है हल्लैं, करि किन डुल्लैं, बीर सलल्लैं, तन छीनं ॥ छं० ॥ २१४० ॥

अंती बर कंती, पें उर झंती, में मत पंती, विच्छूरं ।
उप्पम कवि पूरं, जलगं भूरं, [3]गज्ज हिल्लूरं, जल घूरं ॥
झुंझकै सिर तुट्टं, पग आहुट्टं, उप्पम घट्टं, कविआनं ।
तुट्टे जिम तारं, यह भग झारं, छूटं सबीरं, सम जानं ॥
छं० ॥ २१४१ ॥

भै बीर बिरुद्धं, जटि आरुद्धं, मंति सु लुद्धं, मपि सेनं ॥
[4]लुधि लुधि आहुट्टिय, बंधन कुट्टिय, कित्ति स लुट्टिय, कवि तेनं ॥
छं० ॥ २१४२ ॥

(१) ए. क. को.-अर । (२) ए. भित्त, को. क.-मति ।
(३) ए. क. को.-गज्जहि तूरं । (४) ए. क. को.-छूटमधीरं ।
(५) मो.-लुधि लोधि ।

एक पहर दिन चढ़ आने पर इधर से बलिभद्र के भाई उधर से मीरां मर्द का युद्ध करना।

कवित्त ॥ बजिग पहर इक अहर । हथ्थ थक्क कमान बहि ॥
हैगै नरभर डररि । अमिज थक्कए षग्ग सह ॥
बीय अरी चित लरत । कोउ मानै नन थक्कै ॥
जोगि नौंद उग्यौ प्रमान । कूह चतुरंग जटक्कै ॥
है नंपि बंध बलिभद्र कों । पज्जूनी अग्गै सयन ॥
उत निक्करे मीर मीरां मरद । ढुंढारी सम्हौ बयन ॥
छं० ॥ २१४३ ॥

बलिभद्र के भाई का मारा जाना।

दुनें मिले मरदान । कथ्थ पै दीह न मुक्कै ॥
खज्ज मंस बिहु बीच । बिंब केसर बर बक्कै ॥
कट्टारी बर कट्टि । मेछ बाहिय पहु लग्गिय ॥
फुट्टि सीस बरकरी । बांम भग्गा सह अग्गिय ॥
बर मुच्छि घाइ कच ग्रह करे । कट्टारिय गहि दंत कढि ॥
तन फेरि अंग झंझर कियौ । को दिव बंध कबंध चढ़ि ॥
छं० ॥ २१४४ ॥

दो पहर तक युद्ध करके बलिभद्र का मारा जाना।

करि उप्पर बर बीर । बली बलभद्र सु धाइय ॥
दल दल मुष मुष पंग । भई द्रप्पन मुष झाइय ॥
है [1]अंठुन दल पंग । वीर अवरत्त हलाइय ॥
ममर अमर कोतिग्ग । ईस नारद रिझाइय ॥
झक झोरि झोरि दल मोरि अरि । बिरह चीर उट्ठाय करि ॥
सामंत पंच पंचह मिलिग । टरि न टरै भर बिप्प हर ॥
छं० ॥ २१४५ ॥

(१) ए. कृ. को.-अंठुलि।

हरसिंह का हथियार करना और पंग सेना का छिन्न भिन्न होना।

भुजंगी॥ चँपै चाइ चौहान हरसिंघ नायौ। जिसे सेंन में सिंघ गज जूथ पायौ॥
करै कूह गज जूह सनमुष्प धायौ। तबै पंग दल समटि चिहुं कोद छायौ॥
छं० ॥ २१४६ ॥

पंगराज का दो मीर सरदारों को पांच हजार सेना के साथ धावा करने की आज्ञा देना।

कवित्त ॥ बली अली दै मीर। उभै बंधव बर बीरह ॥
छत्तिय हथ्थ दुसल्ल। मल्लविद्या साधक सह ॥
पग्ग मग्ग बिन रेह। जुद्ध जानें निग्गम गम ॥
डंडा युद्ध छचीस। बट्ट पाइक पाइक सम ॥
भुज लहै कोरि उभ्भै अभय। स्वामि धंम रत्तं सु रह ॥
अनहित्त पंग लज्जी अदव। दल पगार बिर दैत गह ॥
छं० ॥ २१४७ ॥

करिय कृपा पहुपंग। सहस पंचह दिय मीरह ॥
कुल बियत्त जुध जुत्त। लहै बर लाज अभीरह ॥
स्याम चमर पष्पर सु। स्याम गज गाह सुनित्तह ॥
झंडे स्याम सु साम। पछय पय पुलै न षित्तह ॥
अग्या सु मंगि पहु पंग पहि। आए मीर पठान पुर ॥
आदित्त जुद्ध हरि उग्ग मनि। आए आतुर सज्जि अरि ॥
छं० ॥ २१४८ ॥

मीरों का आज्ञा शिरोधार्य्य करके धावा करना।

दूहा ॥ मंग्यौ आयस नंमि सिर। कहै पंग करि पान ॥
जीय सु पंडो पत्त पहु। गहो बहो चहुआन ॥ छं० ॥ २१४९ ॥

मीर मंडली से हरसिंह का युद्ध। पहाड़राय और हरिसिंह का मारा जाना।

भुजंगी ॥ तबै उप्परी फौज सा राज मीरं। सहस्सं च पंचं बरं बंधि नीरं।

किलक्के किलकी इके आसुरानं। चवै दीन महमूंद महमूंद मानं॥
छं० ॥ २१५० ॥

[1]बली मीर अली दिसा अप्प भष्यै। तनं अज्ज सांई निजं कज्ज रष्यै॥
करौं पिंड षंड [2]निजं स्वामि काजै। गहै चाहुआनं भरं झूझ भाजै॥
छं० ॥ २१५१॥

इके मीर अप्पान लै अप्प नामं। तिनं साष भष्यै [3]कही कंक कामं॥
लही फौज आवंतसा चाहुआनं। हरं सिंघ सिंघं गज्यौ जुद्ध जानं॥
छं० ॥ २१५२ ॥

नयौ सीस प्रथिराज रजि बीर रस्सं। फिर्यौ संमरे इष्ट अप्पं उक्कस्सं।
चले बीर किलकार साथे सु गाजै। करं अप्प आवद्ध सावद्ध साजै॥
छं० ॥ २१५३ ॥

मिल्यौ जुद्ध मंझी ममं आइ मीरं। झरं आवधं बज्जियं धार धीरं॥
मिले मुष्य एकं अनेकं सु धायं। करक्कै सु सीसं परै पूर घायं॥
छं० ॥ २१५४ ॥

परैं मीर एकं अनेकं सु षंडं। कलं कूह बज्जी रुरं मुंड रुंडं॥
कलं भूचरं षेचरं सा करूरं। नचै जंध हीनं कमंडं दु सूरं॥
छं० ॥ २१५५ ॥

रमे तेक चहुआन रस रास तारं। फिरै मंडली जेम पल्ल न्रत्य कारं॥
उभै मीर बल्ली अली संघ लष्यै। क्रमे आतपं तप्पि जल जाम झष्यै॥
छं० ॥ २१५६॥

बली आय प्राहार कीनौ जु जामं। उरं मग्गि तिष्यौ निकस्सौ परामं॥
चलै सेन सम्मं हयौ पग्ग झारं। हयौ रोह मां तूं भिरं मच्छ कारं॥
छं० ॥ २१५७ ॥

बली सीस तुट्यौ पगं पंभ थोरं। मनौं देवलं इंदु तुट्टौ सु तारं॥
अली आय [5]बामं हयौ पग्ग धारं। तुट्यौ सीस उट्यौ पगं भूमि पारं॥
छं० ॥ २१५८ ॥

---

(१) मो.-चली। (२) ए. कृ. को. तनं (३) ए. कृ. को.-कहा।
(४) ए. कृ. को.-धष्यं। (५) ए. कृ. को.-बाहं।

गह्यौ तांम[1] अल्ली उरं अप्प चंप्यौ। गयौ अंस उड्डी तिनं तांम[2] लिप्यौ॥
भग्यौ सेन मीरं भरक्कै धु धामं। सयं सत्त ताई परे पंति तामं॥
छं० ॥ २१५८॥
घनं घाइ अघ्घाय पूंयौ सु यानं। पंयौ सिंघ हरसिंघ करि जीति यानं॥
छं० ॥ २१६० ॥

नरसिंह का अकेले पंग सेना को रोकना और पृथ्वीराज का चार कोस निकल जाना।

कवित्त ॥ करि जुहार[3] नरसिंघ। नयौ चहुआन पहिल्लौ ॥
बरी अनौ सावरौ। लष्प सों भिरयौ इकल्लौ ॥
आगम काय हुअ फिरै। धरनि धुर सों धुर धुंदहि ॥
एक लष्प सों भिरै। एक लष्पह रन रुंधहि ॥
असि घाइ झाइ बज्जै [4]विषम। जै जै जै आयास भौ ॥
इम जंपै चंद बरहिया। च्यारि कोस चहुआन गौ ॥छं०॥२१६१॥

नरसिंह के मरते ही पंग सेना का पुनः चौहान को आघेरना।

दूहा ॥ परत धरनि नरसिंघ कहुं। रुकि गयंद दल अब्ब ॥
मनहु जुद्ध जागिन पुरह। तिन मुक्कयौ सब [5]अब्ब ॥छं०॥२१६२॥
फुनि प्रथिराज सु पच्छ दल। बर रट्ठौर नरेस ॥
[6]सिर सरोज चहुआन कै। भवर सस्त्र सम भेष ॥ छं० ॥२१६३॥

इस तरफ से कनक राय बड़ गुज्जर का मोरचा रोकना।

कवित्त ॥ भौ आयस प्रथिराज। कनक नायौ बड़ गुज्जर ॥
हम तुम दुल्लह मिलन। स्वामि दुज्जै सु अप्प घर ॥
हौं रबि मंडल भेदि। जीव खगि सत्त न [7]घंडो ॥
षंड षंड करि रुंड। मुंड हर हार सु मंडो ॥

(१) ए. कृ. को.-अली। (२) ए. कृ. को.-लेपौ।
(३) ए. कृ. को.-हरसिंह, परंतु हरसिंह के युद्ध का वर्णन पूर्व छंद में हो चुका है।
(४) ए. कृ को.-सकल। (५) ए. कृ. को.-अब्ब। (६) मो.-सिर सराज।
(७) ए. कृ. को. छंडो।

इन बंस भग्गि जानै न को। हों पति [1]कंप असुभ्भयो ॥
इम जंपै चंद बरहिया। कोस षट्ट चहुआन गौ ॥ छं० ॥ २१६४॥

वीरमराय का बल पराक्रम वर्णन।

सुअन धाय जैचंद। नाम बीरम बीरम बर ॥
गरुअ लाज गुन भार। जुद्ध जुति जान ग्यान गुर ॥
बंधव सम जै चंद। प्रीति लिष्यवै प्रेम गुन ॥
अगि आदर न्रप करै। गान उत्तंग अंग सन ॥
सह सत्त सत्त सेना सु तस। बरन रत्त बाना धरै ॥
जहं जहं सु राज काजह समथ। तहं तहं परि अग्गें लरै ॥
छं० ॥ २१६५ ॥

दूहा ॥ ऐरावत बीरम पय्यौ। औ बीरम मुअ धाइ ॥
सम प्राक्रम पंगुर परषि। दिये सु अग्या ताइ ॥ छं० ॥ २१६६ ॥

उक्त मीर वंदों को मरा हुआ देख कर जैचन्द का वीरम राय को आज्ञा देना।

परे मीर देषे उभै। दिय अग्या तमि पंग ॥
गहौ जाइ चहुआन कौं। इनौ सुभर सब जंग ॥ छं० ॥ २१६७ ॥

वीरम राय का धावा करना वीरमराय और बड़ गुज्जर दोनों का मारा जाना।

भुजंगी ॥ सुने आयसं बीर पंगं नरिंदं। चल्यौ नाइ सीमं मनों जुद्ध इंदं॥
सिरं सज्जि गेनं रची फौज तीरं। कजं जुद्ध ईमं रज्यौ रस्स बीरं ॥
छं० ॥ २१६८ ॥

बजी भेरि झुंकार धुंके निसानं। धरा बोम गज्जे सजे देव दानं॥
बड़ं गुज्जरं देषि आवंत फौजं। मनंमुष्प क्रम्यौ दलं संक नौजं ॥
छं० ॥ २१६९ ॥

जपे इष्ट मा उच्चरे बीर मंचं। गरै बंधियं सून सम्मीर जंचं॥
किलक्के सु बीरं गहक्के सु धीरं। कलं कंपिय कातरं भीत भीरं॥
छं०॥२१७०॥

(१) ए. कृ. को.-पंक।

मिली जोगिनी जोग नंचै बिघाई। फिकारंत फेकी पलं पूरि भाई॥
मिल्यौ गुज्जरं मद्धि फौजं सु धायौ। हमै षग्ग षत्तं पलं [1]एक घायौ॥
छं० ॥ २१७१ ॥

परे बिंब षंडं धरं तुंड तुंडं। हकै गिद्धि जाचं परे घोनि मुंडं॥
सिरं बीर आवद्ध नंचै अपारं। नचै नारदं देषि कौतिग्ग भारं॥
छं० ॥ २१७२ ॥

तनं गुज्जरं एक देषै अनेकं। मुषं मुष्प लग्यौ प्रती एक एकं॥
अरी भूतयं बीर नच्चै अपारं। महाबीर लग्गे बरं जुद्ध भारं॥
छं० ॥ २१७३ ॥

धनं धारि उभ्भारि धायौ समुष्यं। मदं मत्त इभ्भं परे इस्स रुष्यं॥
इयौ आइ बड़ गुज्जरं षग्ग धारं। कटे टट्टरं सीस फट्यौ कुठारं॥
छं० ॥ २१७४ ॥

इयौ असि झारं सु बीरम्म तामं। कटे बाहु दूनौ धरं तुट्टि ठामं॥
परे षंड बीरम्म तुट्टे बिभग्गं। धनं धन्न जंप्यौ कनक्कंति लग्गं॥
छं० ॥ २१७५ ॥

करं बाम चंप्यौ निजं सीस अप्पं। करे षग्ग धायौ समं रिम्म धप्पं॥
अरी ढाहि ढंढोरि माझी कनक्के। [2]दुरे कोइ ढारं पलक्के सप्पक्के॥
छं० ॥ २१७६ ॥

बरी अच्छरा बिंद साचीनि मन्नं। हुन्यौ कन्नकू धार सौं घाइ घन्नं॥
सयं पंच सारद्द बीरम्म सथ्थं। परे षेत पंडे कनक्कं सु हथ्थं॥
छं० ॥ २१७७ ॥

बड़ गुज्जर के मारे जाने पर पृथ्वीराज का निद्धुर राय की तरफ देखना।

दूहा ॥ बड़ हथ्थह बड़ गुज्जरह। झुझि झ गयौ बैकुंठ॥
भीर [3]सघन सामित परत। चप निद्धुर अरि दिट्ठ॥छं०॥२१७८॥
पर्‍यौ षेत बड़ गुज्जरह। अप्प पंग दल हक्कि॥
तम्मि सनंमुष नैन करि। दिय आग्या मन तक्कि॥ छं० ॥ २१७९॥

(१) मो.-लयं। (२) प्र. कृ. को.-दुरे कोइ ढारं पलं कइ सक्के। (३) मो. सघन।

जैचन्द की तरफ़ से निछुर राय के छोटे भाई का धावा करना। निछुर राय का सम्मुख डटना।

कवित्त॥ बीजापुर दिग विजय। करत विजपाल नरिंदं॥
सिंधुर लिय पेसंक। च्यारि जनु रूप करिंदं।
बार सहस को पटो। एक एकह प्रति थप्पिय॥
पष्पर पूरब नाय। राव बलिभद्र सु अप्पिय॥
घन सयन अवर पच्छें करैं। क्रमिय पंग आदेस लहि॥
आवंत देषि बंधव अनुज। राव निडर पग मंडि रहि॥
छं० ॥ २१८० ॥

युद्ध वर्णन।

रसावला॥ कमद्धंति धष्यं, दिषे चष्य अष्यं। ब्रम्यो निहुरे यं, 'करी पंग जेयं॥
छं० ॥ २१८१ ॥

सुषं नैन रत्तं, मनों झाल तत्तं। पलो बंब नेनं, रुम्यो सीअ गेनं॥
छं० ॥ २१८२ ॥

सुभे टोप सीसं, घनं अर्ध दीसं। सनाहं सु देही, तिनं मत्ति केही॥
छं० ॥ २१८३ ॥

मनो नीर मद्धं, सुभै [1]लाज सुद्धं। कसे सस्त्र तोनं, गुरं जानि द्रोनं॥
छं० ॥ २१८४ ॥

छुटे बान हथ्थं, मनों इंद्र पथ्थं। लगै ईष गज्जं, बजै जानि बज्जं॥
छं० ॥ २१८५ ॥

मुठी दिट्ठ मंडे, लियै जीव छंडे। हने छचधारी, लुटै भूमि भारी॥
छं० ॥ २१८६ ॥

छुटै अग्गि हथ्थं, जरै सस्त्र सथ्थं। रुके सेन पंगं, मनों [2]ईस गंगं॥
छं० ॥ २१८७ ॥

दिषे पंग नेनं, मनों काल सेनं। अनी मुष्य राजं, गजं जुथ्थ साजं॥
छं० ॥ २१८८ ॥

(१) मो.-कर्मा। (२) ए. क को.-उचाल। (३) मो.-सासि।

अवै मह धारं, न नेनं उघारं। छुटै वाय बेयं, मनों बद्दलेयं ॥
छं० ॥ २१८६ ॥

मुषं चारि धाये, मनों आल आये। हने पीलवानं, उड़ै घास जानं॥
छं० ॥ २१६० ॥

चवै चारि ढक्कै, पछै और रक्कै। करैं तीर मारं, वहै लोह धारं॥
छं० ॥ २१६१ ॥

नदी स्रोन पूरं, फिरै गेन झूरं। गजै गैन काली, नचै पप्पराली॥
छं० ॥ २१६२ ॥

रचै ईस जंगं, रसै रोस रंगं। उभै पिचिपालं, बकै बिक्करालं ॥
छं० ॥ २१६३ ॥

दुअं तोन घुट्टै, पछै पग्ग जुट्टै। हनै तक्कि मद्दं, परे अद्ध अद्दं॥
छं० ॥ २१६४ ॥

झरै अंग अंगं, दवं जानि दंगं। गजं सीस पानं, परै बीज जानं॥
छं० ॥ २१६५ ॥

दूहा ॥ कमध धपत अरि पंग लिपि। तमकि तमकि बर तेज ॥
जानिक अगि बन घन [1]चरन। उमड़ि बाय घन मेज॥छं०॥२१६६॥

भाई बलभद्र और निठ्ठुर राय का परस्पर द्वंद युद्ध होना और दोनों का एक साथ खेत रहना।

भुजंगी ॥ नरे निठ्ठुरं निंद नामंत रायं। बलीभद्र लष्यौ मितं गज्ज गायं॥
सहं नाम बच्यो विधानी करन्नी। छितं छच वत्तो सु मामी सरन्नी॥
छं० ॥ २१६७ ॥

उभै दिट्ठ दिट्ठी मिले बाहु बाहं। नियं उक्ति नाही अगी राह राहं॥
प्रियं पीत रतं गैत पंगं नरिंदं। मिल्यौ षग्ग हंसंक याहं बनिंदं॥
छं० ॥ २१६८ ॥

उठी झार सस्त्रं विसस्त्रंति सीसं। रुधी धार धारंति मानं तिदीसं॥
कवीचंद केली [2]कनवज्ज रायं। सयं तात मातं वरं सिंघ जायं॥
छं० ॥ २१६६ ॥

(१) गो.-जरन। (२) ए. कृ. को.- दुराजे सुरायं।

बियं गभ्भ थानं सु ग्यानं गुरज्जो । न छुट्टै न घुट्टै न तुट्टै उरभ्भौ ॥
घरी ईक दीहं तिहं हंति कालं । मनों रत्त आरत्त मै मत्त मालं ॥
छं० ॥ २२०० ॥
परै अस्व अस्वंग ऊखंग बीयं । बिए भ्रम्म धारी सु धारी सु नीयं ॥
मनों विंद बिंदान दुरजोध बंधं । कटे गंध बाहं जु बग्गो सु गंधं ॥
छं० ॥ २२०१ ॥
भभक्कंत सोंधा तिनं अंग तासं । दुअं घट्टि पंचास कोसं प्रकासं ॥
गयंनं गुंजारं करें भोर भोरं । धयौ आतपं जानि रबि छांह गीरं ॥
छं० ॥ २२०२ ॥
भयौ जंग में जंग आवै न बंटै । उभै सीस ईसं दृग्यारै उभंटै ॥
रवी चंद नारद बेताल रंभा । चवट्टी जमातं निरष्यो अचंभा ॥
छं० ॥ २२०३ ॥

कवित्त । तिमिर बघ्घ रट्ठौर । आय जब पुट्ठ बिलग्गौ ॥
गहु गहु गहु चहुआन । हहि हि दवान सु भग्गौ ॥
कर कक्कस हर सिंघ । सिंघ सम सिंघ न छुट्यौ ॥
जनु कि जंत वै मुपह । सुभष लहौ मुष बट्यौ ॥
घन घाय चाय [1]बित्तिय घरिय । करिग आन सामंत सह ॥
बैकुंठ बट्ट लहौ बिहुन । लरन अप्प अप्पह सु रह ॥छं०॥ २२०४ ॥

जैचन्द का निड्डुर राय की लाश पर कमर का पिछौरा खोल कर डालना।

दूहा ॥ झुझिझ षेत निड्डुर पर्यौ । दिष्पि दुहुं दल सथ्थ ॥
कटिपट छोरि जैचंद पहुं । ढंकिय अप्पन हथ्थ ॥ २२०५ ॥

निड्डुरराय की मृत्यु पर पंग का पश्चात्ताप करना।

कवित्त ॥ तुं कुल रष्यन केलि । बंध बारुन बल बोहिय ॥
तें रष्यौ चहुआन । सांमि संकट सुभ सोहिय ॥
तें आरस अलि अल । उतंग बारधि बल बंध्यौ ॥
जहं जहं इय भर भरंत । तहां फब्यौ सिर मंध्यौ ॥

(१) गो.-चिंतिय ।

रंडरी ढाल ढिल्लिय नयर। मरद मयन झुझयौ पुरिस॥
निद्धुर निसंक उप्पर पहुर। बहुरि पंग बोल्यौ सरिस॥छं०॥२२०६॥

दूहा॥ [1]सम रट्ठौर रट्ठवर। निद्धुर झुझिंझग जाम॥
दिनयर दल प्रथिराज कौं। राह पंग भय ताम॥ छं०॥२२०७॥

निद्धुरराय के मोरचा रोकने पर पृथ्वीराज का आठ कोस पर्य्यन्त निकल जाना।

कवित्त धर फुट्टै पुरतार। लार तुट्टै सिर उप्पर॥
तहां नायो रट्ठि वर। न्रिपति प्रथिराज स्वामि छर॥
पग्गह मीस हनंत। पग्ग पुप्परिय पनं घन॥
आनित बुंद परंत। पंग किद्धीय घरघ्घन॥
बिरचयौ लोह बर सिंघसुअ। पंड पंड तन पंडयौ॥
निद्धुर निसंक झुझझंत रन। अट्ठ कोस नृप छिंडयौ॥
छं०॥ २२०८॥

निद्धुर राय की प्रशंसा और मोक्ष।

अट्ठ कोस अंतरिय। पंग सथ्थरिय परिय भर॥
परि निद्धुर पथ्थरिय। कंस गजराज दंत धर॥
हय हय है भारथ्थ। धवल बंबरह भिरत हुअ॥
ब्रह्म लोक सिव लोक। लोक समि छंडि लोक धुअ॥
रन घरिय राव आरति अरुन। तरुन अरुन मंडल घिलिय॥
अट्ठाह कोस चहुआन पर। बहुरि पंग पारस झिलिय॥
छं०॥ २२०९॥

पंग सेना का पुनः पृथ्वीराज को आघेरना और कन्ह राय का अग्रसर होना।

झिलि पारस पहुपंग। रंग रंगह घन घेरिय॥
घन निसान गय घंट। ठनकि ठंठनि बजि भेरिय॥

(१) ए. कृ. को.-सम रट्ठौर नरिंद वर।

तल वितास धर धरनि । नट्टन गहनह उच्चरयौ ॥
तब कन्ह चहुआन । सघन छंछट संभरयौ ॥
पट्टन पवंग ओड़ौ उगहि । सु गुर सार भेरिय भरन ॥
छुट्टति खामि इंसारि इंसि । तजि धमारि बंछिय मरन ॥
छं० ॥ २२१० ॥

वीर बखरेत का पंग सेना को रोकना और उसका माराजाना।

छंछट छल रष्पनह । [1]पवँग पट्टन प्रवेस किय ॥
तब लगि हय गय भर । भरंति चहुआन चंपि लिय ॥
बलिय बीर [2]बष रेत । षग्ग पोहनि दल [3]रुक्कयौ ॥
तब लगि कँह पटनेस । झारि झंझरि झर झुक्कयौ ॥
उचित मीम तस अंमरह । ममर देषि संपष्पयौ ॥
निड्डर निसंक उप्पर पहर । बहुरि पंग पहु उंतर्यौ॥छं० ॥ २२११ ॥

छग्गन राय का पंग सेना को रोकना ।

दूहा ॥ चंपत अच्छरि रिंढ लगि । चपि अप्पन तन देषि ॥
तन तुरंग तिल तिल करन । भयौ कन्ह मन भेष ॥छं०॥२२१२ ॥
कवित्त ॥ सुनहु बन्न पषरैत । लेहुं ओढ़ौ दल रक्कौ ॥
चहूँ आर चंपंत । अंत ओटह किम चुक्कौ ॥
पहु पट्टन पल्लानि । हटकि करि हनौ गयंदह ॥
सबर बीर संग्रहौं । भीर नह परैं नरिंदह ॥
रुक्कयौ [4]छगन जैचंद दल । सिर तुट्टै असिवर कढ्यौ ॥
तब लगि सु तास दल रुक्कयौ । जब लगि कन्ह इंवर चढ़यौ ॥
छं० ॥ २२१३

छग्गन का पराक्रम और बड़ी बीरता से माराजाना ।

हय कट्टत भू भयौ । भये भूपयन पलट्यौ ॥
पय कट्टत कर चल्यौ । करहि सब सेन समिट्यौ ॥
कर कट्टत सिर भिर्यौ । सिरह सनमुष होय फुट्यौ ॥

(१) ए. कृ. को.-पवन । (२) ए.-वसरेत (३) मो.-लुक्यौ ।
(४) ए. कृ. को.-सिंघ ।

सिर फुट्टत धर धन्यौ। धरह तिल तिल होय तुट्यौ॥
धर तुट्टि फुट्टि कविचंद कहि। रोम रोम बिंध्यौ सरन॥
सुर नरह नाग अस्तुति करहि। बलि बलि बलि छग्गन मरन॥
छं० ॥ २२१४॥

छग्गन की पार्थ से उपमा वर्णन।

गाथा * ॥ पंडव छग्गन षग्गं। सहस गुनं पुज्जियं समरं॥
कौरव दल कमधज्जं। रूकै चहुआन कन्ह मुष अग्गं॥
छं० ॥ २२१५॥

छग्गन का मोक्ष। पृथ्वीराज का ढाई कोस निकलजाना।

दूहा॥ खरि छग्गन छची सुनहु। लियौ सु हूर विमान॥
तिन झूझत निरभै गयौ। अढी कोस चहुआन॥ छं० ॥२२१६॥

कन्ह का रणोद्यत होना, कन्ह के सिर की कमल से और पंग दल की भ्रमर से उपमा वर्णन।

चढत कन्ह सामंत इय। जय जय करहि सु देव॥
मनहु कमल कलिमल भ्रमर। कुहर पंग दल सेव॥ छं० ॥२२१७॥

कन्ह के तलवार की प्रशंसा कन्ह की हस्तलाघवता और उसके तलवार के युद्ध का वाक दृश्य वर्णन।

भुजंगी॥ भये आमुहे सामुहे सेन थट्टं। कसे सीस टोपं समाहे सु भट्टं॥
जबै बंद साहंद को कोप जान्यौ। तबै जंगली राव है वर पलान्यौ॥
छं० ॥ २२१८॥

पयानो कियो दिग्गपालं सु कित्ती। सुअं बीर नर सिंह सा हूर पत्ती॥
नराची कढी कन्ह कै हथ्थ सूरी। महा लोह लंबी लसै लोह पूरी॥
छं० ॥ २२१९॥

किधौं काल कन्या किधौं काल नग्गी। किधौं धूम केतं किधो ज्वाल (1)जग्गी॥
लषे सचु सेना सुअं भंग सोचै। मनो लोह संघार कौ मींच लोचै॥
छं० ॥ २२२०॥

* यह गाथा मो. प्रति में नहीं है। (१) मो.-लग्गी।

गिराये गुरं षेत घन घाय घोरैं। महा बाहु मैं मत्त मैं मत्त मोरैं ॥
मच्यो मार मारं विजै सार बज्जै। कपै कायरं नारि सा सूर गज्जै ॥
छं० ॥ २२२१ ॥

परी जिरह सन्नाह तें बाहु षंडी। मनों टूक करि कंचुकी नाग छंडी॥
परे अंग अंगं धरं सीस न्यारे। मनों गरूर ने षंडि कै व्याल डारे॥
छं० ॥ २२२२॥

घनं घाय लग्गे धुकै धींग धाये। मनों नालि तें कंज नीचें नवाये॥
लगे सेल सामंत घूमंत ठट्ठै। मनों रंग मज्जीठ में बोरि कट्ठै ॥
छं० ॥ २२२३ ॥

उड़ै अग्गि यों दंत दंतो सनेनं। गुढ़ी पुच्छ उट्ठैं मनों झाल रेनं॥
कहूं दौरि कै अग्गि बाहं उघारें। कहूं लाष मायंक के बाक फारें॥
छं० ॥ २२२४ ॥

कहूं वा पचारे कहूं चोट चंडी। कहूं बीर बीराधि ज्यों मोद मंडी॥
कहूं नागिनी सी नवावे न राजी। मनों पिंड कारंड मैं पट्ठि पाजी ॥
छं० ॥ २२२५ ॥

कहूं मुंड रुंडं अरुंडं सुपेली। कहूं ओन के कुंड में मुंड मेली॥
कहुं ओन के सार में कंठ मेलै। मनों सिंध की धार सिंदूर ढोलै॥
छं० ॥ २२२६ ॥

भरी तेग तब बीर जम दट्ठ कट्ठी। गढी गाढ मारी किधों मुट्ठि गट्ठी ।
किधों सच्च के प्रान की गैल नामी। किधों पानि मैं लोह की जेब जामी॥
छं० ॥ २२२७॥

जबै सच्च के लोल कों धाव घालै। मनो काल की जीभ जाहाल हालै ॥
किधों छंद छत्तो निरत्ति निकस्सै। किधों भेदि देही दुआरं दरस्सै ॥
छं० ॥ २२२८ ॥

कहूं ऐंचि तारीन सों अंत ल्यावै। कहूं सच्च के प्रान कों ताकि आवै॥
कहूं चंपि दुसासनं भीम मारे। कहुं मुष्टिकं चंपि कीचक प्रहारै ॥
छं० ॥ २२२९ ॥

लगे सेल सामंत लग्गे न जानैं। परै ओन कै पंक में सीस सानैं ॥
* * * * * * छं० ॥ २२३० ॥

दूहा ॥ ऐ ऐ कन्ह निवत्त कर । धर धर तुट्टिय धार ॥
पहर एक पर इथ्थरे । सिर सिर बुट्टिय सार ॥ छं० ॥ २२३१ ॥

पटटी छूटते ही कन्ह का अद्वितीय पराक्रम वर्णन ।

कवित्त ॥ पट्टै पख छुट्टंत । कन्ह धाराहर बज्ज्यौ ॥
जनुकि मेघ मंडलिय । बीर बिज्जुलि गहि गज्यौ ॥
इय गय नर तुट्टंत । बिरह तुट्टिय तारायन ॥
तुट्टिय घोहनि पंग । राय छोनिय भारायन ॥
इल इलिय नाग नागिनि पुरत । नागिन सिर बुज्झौ रुधिर ॥
आवहि न संग सिंगार मन । मननि सीस मुक्कौ सु धर ॥
छं० ॥ २२३२ ॥

कन्ह का युद्ध करना । राजा का दस कोस निकल जाना ।

भुजंगो ॥ जितं सार धारं जु सारंग तुट्टौ । मनों आवनं मेछ सं सीस उट्ठौ ॥
फटी फौज आवाज सा पंग राई । त्रगी जानि त्रहै धरै बघ्घ धाई ॥
छं० ॥ २२३३ ॥

बजी इक्क इंकार भंकार भेरी । झरी रोम सेना फिरी लज्ज घेरी ॥
धजा बीर बैरिष्ष सावं बरैसा । लगै सीस सामंत सा अंमरेसा ॥
छं० ॥ २२३४ ॥

उड़ै गिद्ध आवद्ध तुट्टै उतंगा । किनक्कै सु ताजी चिक्कै इस्ति चंगा ॥
भभक्कै सु धायं सु रायं इवाई । मनो मारुतं मत्त सामंत थाई ॥
छं० ॥ २२३५ ॥

फिरी चक्क चहुआन की इक्क बज्जी । मनों प्रौढ़ भर्ता न जढ़ा सु लज्जी ॥
इसी कन्ह चहुआन करि [1]केलि रत्ती । फिरै जोगिनी जोग उच्चार [2]मत्ती ॥
छं० ॥ २२३६ ॥

दहं कोहसा स्वामि आराम छुट्टौ । पछै पंग रा सेन आवन उट्ठौ ॥
* * * । * * छं० ॥ २२३७ ॥

कवित्त ॥ दिष्पि सेन पहुपंग । आस ढिल्ली ढिल्ली तन ॥
चिंति कन्ह चहुआन । पट्ट छुट्यौ सुभयौ बन ॥

(१) ए. कृ. को.-रंगकेली । (२) ए. कृ. को.-उच्चार भेली ।

निपत्थ अप्प है जनिय। पंग जंपै जीवन गहु ॥
सु पथ सूर सामंत। जीह जीयत सु बैन लहु ॥
आवृत्त जात धंधो तिनं। सो धंधो जुरि भंजयौ ॥
बज्जियन जीव रुंध्यौ न्रिपति। मुकति सथ्थ है बज्जयौ ॥
छं० ॥ २२३८ ॥

कन्ह का कोप ।

पद्धरी ॥ कलहंत कन्ह कुप्पौ कराल। फरकंत मुंछ चष चढ़ि कपाल॥
चिंती सु चिंत देवी प्रचंड। कह कहति कंक कर मूल मंड ॥
छं० ॥ २२३९ ॥

गररंत सिंघ आमन अरोह। वामंग बाह षप्पर सु सोह ॥
इहि भंति प्रमन सजि देवि दंद। तहं पढ़त छंद अनेक चंद॥
छं० ॥ २२४० ॥

रन रंग रहसि ठट्ठो षयंत। बरदाइ बदत बिरदन अनंत ॥
पहु प्रगट बिरद जिन नरनि नाह। हंतन हनंत आजानबाह ॥
छं० ॥ २२४१ ॥

घोलंत नयन जिहि समर रंग। भारथ्थ कथ्थ भीषम प्रसंग ॥
भज्जनह राय संकर पयान। धूनी न पग्ग पंडल्ल पयान ॥
छं० ॥ २२४२ ॥

देषंत सेन नृप पंग रुक्कि। उद्यान स्रग्ग जनु सिंघ हुक्कि ॥
गहि मंग नंग निम्मलिय हथ्थ। सोहंत बज्ज जनु तात पथ्थ ॥
छं० ॥ २२४३ ॥

पलभलिय सेन न्रप पंग राइ। उद्यान तपत जनु लग्गि लाइ ॥
धर परत धरनि है हिनत मून। बाहंत गुरज सिर करत चून ॥
छं० ॥ २२४४ ॥

तरफरत तड़ित सम तेज तेग। सम सिलह सहित तुट्टत अलेग ॥
बरि अंग अंग तुटि तुच्छ तुच्छ। जन सुकत नीर सर तरफि मच्छ॥
छं० ॥ २२४५ ॥

घन घाय घुम्मि इक रहत थक्कि। बासंत षेलि मतवार जक्कि ॥

है कटे चारि चहुआन जंग। पंचमह साजि है समर रंग ॥
छं० ॥ २२४९ ॥

चार घोड़े मारे जाने पर कन्ह का पांचवे पट्टन नामक घोड़े पर सवार होना। पट्टन की वीरता। कन्ह का पंचत्व को प्राप्त होना।

कवित्त ॥ तब सु कन्ह चहुआन। तुरिय पट्टन पलान्यौ ॥
हिंमि किनकि बर उठ्यौ। मरन अप्पन पहिचान्यौ ॥
उहि कर असिवर लह्यौ। गहिव गज कुंभ उपट्टै ॥
मारै खतानि वह घाव। षुंदि अरि दंतन कट्टै ॥
वह नर निसंक है वर सु धर। पिष्पह बित्त कवित्तयौ ॥
बर मुंड माल हर संठ्यौ। वह रवि [1]स्थलै जुत्तयौ ॥छं०॥२२४७॥

दूहा ॥ पट्टन पवंग पालानि पति। चढ्यो कन्ह चहुआन ॥
कहर कूह कोयो रनह। रह्यौ पंचि रथ भान ॥ छं० २२४८ ॥

मोतीदाम ॥ कुप्यो कर कन्ह सु कंक कराल। बजे पग हथ्थ दुअं अमराल॥
मनों रस बीर बली बिकराल। कुटै अरि गट्टरि कूटत पाल ॥
छं० ॥ २२४९ ॥

फटै सिर सारनि मार विषंड। मनो जगनाथ सु बंटिय हंड ॥
तुटै सिर जाय रहै उत सैन। अजा सुत हंति सिवा बल दैन ॥
छं० ॥ २२५० ॥

परें सब सूर धरण्या सिंभ। मनों कटि रिम्म महा गुर गिंभ ॥
* * * * । * छं० ॥ २२५१ ॥

कन्ह के रुंड का तीस हजार सैनिकों को संहारना।

दूहा ॥ निकस्यौ नृप प्रथिराज पहु। रह्यौ कन्ह दल रोकि ॥
हय हय हय भूतलोक महि। जय जय चवि सुरलोक ॥छं०॥२२५२॥

खरत सीस तुट्यौ सु हर। धर उठ्यौ करि मार ॥
घरी तीन लौं सीस बिन। कट्टै तीस हजार ॥ छं० ॥ २२५३ ॥

(१) मो. वह रवि रथ लै जुत्तयौ।

कन्ह का तलवार से युद्ध करना ।

घोटक ॥ बिन सीस इसी तरवारि बहै । निघटै जन सावन घास महै ॥
धर सीस निरास दुअंत इसे । सुभ राजनु राइ रुकंत जिसे ॥
छं० ॥ २२५४ ॥
धर नाचत उट्ठि कमंध धरैं । भगलं जनु आपस ब्याल करैं ॥
बिय षंड बिहंड सु तुंड तुटै । दुअ फार करारनि सीस फटै ॥
छं० ॥ २२५५ ॥
हरदास कमद्धज आय अरयौ । तिन को तन धावन सों जकर्‌यौ ॥
बल बाम इसो न रहैं एकरयौ । मनों नाहर घेटक में निकरयौ ॥
छं० ॥ २२५६ ॥
कि मनो गजराज छुट्यौ जकरयौ । कविचंद कहै परलो जु कर्‌यौ ॥
असि दोरि दई सु जनेउ उतारि । परयौ हरदास प्रिथी पुर पारि ॥
छं० ॥ २२५७ ॥
बिफुर्‌यौ रन में कर कन्ह सजें । बिन मावत छुट्टि कि मत्त गजें ॥
हहरें हलकै किलकै किलकी । भहरें भरि पच उमा भिलकी ॥

[redacted]

दूहा ॥ अब तुट्टी तरवार कर । तब कट्टी जम दट्ट ॥
इक कटारी दुहुन उर । पंच सहस भर बट्ट ॥ छं० ॥ २२६२ ॥

कटार के विषम युद्ध का वर्णन जिससे पंग सेना के पांच सहस्त्र सिपाही मारे गए।

छिभंगी ॥ कर कढ़ि कटारी जम दड्डारी काल करारी जिय भारी ॥
चंपै चर नारी बारों पारी निकसि निनारी उर भारी ॥
रस सोभत सारी डेढ करारी लंब लँबारी लंबारी ॥
उपजै सुर आरी बजि घरियारी अति अनियारी आहारी ॥
छं० ॥ २२६३ ॥

लग्गै इक आरी छोड़ 'दुआरी जानि जियारी जिभ्भारी ॥
लपकै हियलारी बारह बारी भूषी भारी भाहारी ॥
जनु नागिनि कारी कोप करारी अति आकारी सा कारी ॥
भभकै रुधि भारी भभक भरारी भर भर बारी तन ढारी ॥
छं० ॥ २२६४ ॥

गिरि तें झरकारी झिरना झारी झिरै झरारी झर कारी ॥
बबकै बबकारी बीर बरारी नारद तारी दै चारी ॥
मचि कूह करारी अति उभ्भारी अगिनित पारी धर 'ढारी ॥
* * * * ॥ छं० ॥ २२६५ ॥

दूहा ॥ काल कूट कीनो विषम । पंच सहस भर बद्ध ॥
कादर कन्ह कित्तो सु कर । तब तुट्टिय जमदड्ड ॥ छं० ॥ २२६६ ॥

कटार के टूट जाने पर मल्ल युद्ध करना।

पद्धरी ॥ तुट्टी सु हथ्थ जमदड्ड जोर । बक्यो जु अप्प बल अंग और ॥
गहि पाइ भुम्मि पटकै जु फेरि । धोबी कि बस्त्र सिल पिट्ट सेर॥
छं० ॥ २२६७ ॥

दुअ हथ्थ दोन नर ग्रहै मुंड । छोड़ मथ्थ चूर जनु तुंब कुंड ॥
गहि हथ्थ हथ्थ सुर रे सु तोरि । गज सुंड साथ तोरे मरोरि ॥
छं० ॥ २२६८ ॥

भरि रोस हथ्थ पटकंत मुंड । भिरडंत जानि ओफल सु षंड ॥

(१) ए. क. को.-दुपारी, दुपारी। (२) ए. क. को.-भारी।

गहि पाइ दोइ डारंत चीर। कहुी सु जानि फारंत भीर॥
छं० ॥ २२६८ ॥

गहि कीस मौर भंजै सु ग्रीव। फल मोरि मालि तोरै सु तीव॥
हाकंत मत्त दैलत्त धाइ। डारंत तेव करि हाइ हाइ॥छं०॥२२७०॥
इहि विधि सु कन्ह रिनकेलि किन्न। परि अंग अंग होइ छिन्न भिन्न॥
छं० ॥ २२७१ ॥

चाहुआन का दस कोस निकल जाना।

कवित्त ॥ चाहुआन सुज्जानं। भूमि सर सेज्या सूतौ॥
देषि बिअच्छरि बर। समूह बरनह सानूतौ॥
जनु परि चिय परहंस। हंस आलिंगन मुक्कयौ॥
भर भारी कन्हह। हनंत अवमान न चुक्कयौ॥
धर गिरत धरनि फुनि फुनि उठत। भारथ सम 'जिन बर कियौ॥
इम जंपै चंद बरहिया। कोस दसह भूपति गयौ॥ छं० ॥२२७२॥

कन्ह राय की वीरता का प्रभुत्व।कन्ह का अक्षय मोक्ष पाना।

जिम जिम तन जरजय्यौ। विहसि वर धायौ तिम तिम॥
जिम जिम अंत रुलंत। लष्प दल तिन गनि तिम तिम॥
जिम जिम करिवर परत। उठत जिम मौम सहित बर॥
जिम जिम रुधिर झरंत। सघन घन बरपत मद्दर॥
जिम जिम सु घग्ग बजय्यौ उरह। तिम तिम सुर नर मुनि[1] मन्यौ॥
जिम जिम सु चाव धरनी पय्यौ। तिम तिम संकर सिर धुन्यौ॥
छं० ॥ २२७३ ॥

गह गह गह उच्चार। देव देवासुर भज्जिय॥
रह रह रह उच्चार। नाग नागिनि मन लज्जिय॥
बह बह बह उच्चार। सु रह असुरन धुनि सज्जिय॥
चह चह चहतामंत। तुट्टि पायन पर तज्जिय॥
मुह मुहह मुच्छ कर कन्ह तुअ। चमर छच पह, पंग लिय॥

(१) ए. कृ. को.-जिहि। (२) ए. कृ. को.-गन्यौ।

सिर बंध कंध असिवर ढरिग । पहर एक पट्ट न दिय ॥
छं० ॥ २२७४ ॥

पहर एक पर प्रहर । टोप असि बर बर बज्जिय ॥
बघर पघर जिन सार । पार बट्टन तुटि तज्जिय ॥
रोम रोम बर बिद्द । सिद्ध किन्नर लिन्निय बर ॥
अस्त बस्त बज्जी । कपाट दट्टीच हीर हर ॥
रुधि मंस हंस हरि बंस नर । दिव दिवंग मिटि अम्मिलित ॥
किन्नर कबंध घटि तंति तिन । सुबर पंग दिष्पिय [1]घिलत ॥
छं० ॥ २२७५ ॥

कन्ह के अतुल पराक्रम की सुकीर्ति ।

भुजंगी ॥ परे धाय चहुआन कन्हा करूरं । भयं पारथं बीर भारथ्थ भूरं ॥
बढे मार बज्जे न भज्जै न बग्गं । नहीं नीर तीरं हरं भार लग्गं ॥
छं० ॥ २२७६ ॥

हुते लज्ज भारे सु भारथ्थ नीरं । बड़े सूर अब्बं न दीसै सरीरं ॥
तिनं सम्मं भारं समै नाहि हथ्थं । झरै सब्ब सस्त्रं परं बीर बथ्थं ॥
छं० ॥ २२७७ ॥

झमक्कंत झारे प्रहारंत सारं । मनों कोपियं इंद्र बुट्ठे अंगारं ॥
जितो भोमि [2]चप्पे घिजै पंग इंदं । लरे लोह दीनं सरेहं गुबिंदं ॥
छं० ॥ २२७८ ॥

लगै लोह लोहं पलट्टै ति तत्ती । रमं सामि अप्पे न भौ सार छत्ती ॥
तुटे अस्त बस्तं भयं छीन भंती । असव्वार अस्वं न ढुंढै निरत्ती ॥
छं० ॥ २२७९ ॥

परे मंघरे सूर सारंग पाजं । नरी रंग बज्जै कलं प्रान बाजं ॥
इसी कन्ह चहुआन करि केलि रत्ती । फिरै जोगिनी जोग उच्चार मत्ती ॥
छं० ॥ २२८० ॥

टरै विप्प झूरं दसें दीन बारं । भयं अश्वमेधं सहं ध्रम्मसारं ॥
छं० ॥ २२८१ ॥

---

(१) ए. छ. को.-लिपत । (२) मो. वरषे ।

कन्ह द्वारा नष्ट पंग सेना के सिपाहियों की संख्या।

दूहा ॥ * एक लष्ष सित्तर सहस। कट्टि किये अरि नन्ह ॥
दोय दीन भष्षै सु इम। धनि धनि न्रप्प सु कन्ह ॥
छं० ॥२२८२ ॥

धरनि कन्ह परतह प्रगट। उथ्थौ पंग न्रप हक्कि ॥
मनों अकाल संकरह हँसि। गहिय तुट्टि निधि रंक ॥छं०॥२२८३॥

अल्हन कुमार का पंग सेना के साम्हने होना।

तब झुकि अल्हन षग्ग गहि। भयौ अग्ग बल कोट ॥
सिर अप्पौ कर स्वामि कों। इनो गयंदन जोट ॥ छं० ॥ २२८४ ॥

अल्हन कुमार का अपना सिर को काट कर पृथ्वीराज के हाथ पर रख कर धड़ का युद्ध करना।

कवित्त ॥ करिय पैज अल्हन। कुमार रुद्धौ षग षुल्लै ॥
झरतु धार तन चार। भार असिवर नन डुल्लै ॥
रोइन रन मुंडयौ। बीर बर कारन उट्ठौ ॥
ज्यों अषाढ घन घोर। सार धारह निर बुट्ठौ ॥
पंगुरा सेन उप्पर उझरि। उभै भयन गज मुष्प दिय ॥
उब्बरे देवि सिव जोगिनिय। इह अचिज्ज सें राज किय॥छं०॥२२८५॥

अल्हन कुमार का अतुल पराक्रममय युद्ध वर्णन। वीरया राय का मारा जाना उसके भाई का अल्हन के धड़ को शान्त करना।

पद्धरी ॥ मह माइ चित चिंतीस आल। जंप्यौ सु मंच देवी कराल ॥
आश्रम्म देवि किय निज्ज धाम। कट्टयो सीस निज इष्थ ताम ॥
छं० ॥ २२८६ ॥

मुक्कयो सीस निज अग्ग राज। हुंकार देवि किय निज्ज गाज ॥
धायौ सु धरह बिन सीस धार। संग्रह्यौ बांह बामै कटार ॥
छं० ॥ २२८७ ॥

* यह दोहा मो. प्रति में नहीं है।

उच्छयौ पग्ग बर दच्छ पानि। मंमुहौ धीर धायौ पर्रानि ॥
कौतिग्ग सब्ब देषंत सूर। दिष्यौ न दिट्ठ कारन करूर ॥
छं० ॥ २२८८॥

माझी पयट्ठ सा सेन पंग। बज्जे करूर बज्जंत जंग ॥
कौतिग्ग सूर देषंत देव। नारद्द रुद्र रस हंस एव ॥छं०॥२२८९॥
षेचर रुहंस चर भूअ चार। थक्के सु देषि प्राक्रम करार ॥
महमाइ सुधर उप्पर बयट्ठ। अरि भार सार मंडिय पयट्ठ ॥
छं० ॥ २२९० ॥

धर परै धार तुट्टै सु थार। हलहले पंग सेना सु भार॥
दप्पनिय राय बौरया नाथ। गज चक्यौ जुद्ध सब्बह समाथ ॥
छं० ॥ २२९१ ॥

सूरमा धारह ढहन्त बीर। चंपयौ गज्ज सन्हौ सुधीर ॥
मुष लग्गि आय सम अल्ह जाम। असि झाक हयौ मुष इभ ताम॥
छं० ॥२२९२ ॥

सम अंपि जार तुट्टौ सुदंत। कटि मूल पर्यौ पाद्रप सुमंत ॥
उट्ठयौ हक्कि बौरया नाथ। आयेब अल्ह मम लग्गि बाथ ॥
छं० ॥ २२९३ ॥

चंपयौ उअर अल्हन तास। नष्पयौ धरनि गय उड़ि उमास ॥
बौरया नाथ लघ बंध धाइ। गज चक्यौ पंग लग्गौ सु दाय ॥
छं० ॥ २२९४ ॥

बिंटयौ अब्ब सेना सु धीर। आबद्ध मुक्कि सब सेन बीर ॥
चंपयौ आय गुरु गज्ज जाम। संग्रह्यौ दंत दंतौ सु ताम ॥
छं० ॥ २२९५ ॥

गय हयौ सीस कट्टार मार। महमाइ हँमिय दीनौ हुंकार॥
भग्गै सु गज्ज कीनौ चिकार। ढाहयौ सबै मिलि सूर मार ॥
छं० ॥ २२९६ ॥

अल्हन कुमार के रुंड का शान्त होना और उसका मोक्ष पाना।

कवित्त ॥ सिर तुट्टै रुंध्यौ गयंद। कट्यौ कट्टारौ ॥
तहां सुमरिय महमाइ। देवि दीनौ हुंकारौ ॥

अभिग सद्द आयास। लयौ अच्छरिय उछंगह॥
तहां सु भइ परतष्षि। अरित अरि कहत कहंगह॥
अल्हन कुमार विश्रम सुथ्यौ। रन कि विमानह मनु मन्यौ॥
तिहि दरसि तिलोचन गंग धर। तिम संकर सिर धर धुन्यौ॥
छं० ॥ २२९७॥

दूहा॥ सघन घाय विद्धयो सु तन। धरनि ढल्यौ परिहार॥
परे बहुत्तरि सुभर रन। सद्दे अल्हन सार॥ छं० ॥ २२९८॥

अल्हन कुमार के मारे जाने पर अचलेस चौहान का हथियार धरना।

धुनित ईस सिर अल्हनह। धनि धनि कहि प्रथिराज॥
मुनि कुप्यौ अचलेस भर। मुहि बल देषिव राज॥ छं०॥ २२९९॥
इह चरित्र नट्टिय सु चिर। करिय राज परिहार॥
अद्भुत क्रम देषह नृपति। करौं षेत सर सार॥ छं०॥२३००॥
पय्यौ अल्ह सामंत धर। गही पंग दल अब्ब॥
सुभर रज्जि कमधज्ज दल। सुमन राज गुर ग्रब्ब॥ छं०॥२३०१॥

पृथ्वीराज का अचलेस को आज्ञा देना।

कवित्त॥ तब जंपै प्रथिराज। सुनौ अचलेस संभरिय॥
इह सु मूर आचरन। नहीं सामंत संभरिय॥
मैंन मूर धरि कंध। राह रूंधेत गयौ धन॥
इह अचंभ आचरन। देव दानव दैतानन॥
मुनि दानव परहरि पर। अपर जुद्ध संधि पंगुर दलह॥
संकही सामि संकट परै। सकल कित्ति कित्ती चलह॥ २३०२॥

अचलेस का अग्रसर होना।

सुनत बैंन प्रथिराज। अचल नायौ मरंन सिर॥
है नष्यौ सु तुरंग। बीर कंपे तुरंगधर॥
जुद्ध सन्नित्तह परै। लोह लहरी धर तुट्टै॥
जल विथ्थरि कमधज्ज। घाय लग्गे आहुट्टै॥

अचलेस अग्गि जग्गंत भर। प्रलै अग्नि चैनेच जिम॥
चहुआन अग्ग उभ्भौ भयौ। राम अग्ग हनमंत जिम॥छं॥२३०३॥

अचलेस का बड़ी वीरता से युद्ध करके मारा जाना।

भुजंगी॥ तबै हक्कियं सेन पंगं नरिंदं। दियौ आयसं जानि कल गज्जि इंदं॥
उठी फौज पंगं करै कूह सब्बं। बगे बग्ग कट्ठी गजे बीर गब्बं॥
छं० ॥ २३०४ ॥

करौ अचलेसं जु स्वामित्त पज्जं। करौं षंड षंडं पलं तुभ्भ कज्जं॥
नयौ सीस चहुआन अचलेस तामं। मिल्यौ आय सेना रती कंक कामं॥
छं० ॥ २३०५ ॥

जपे मंच द्रुग्गा करे ध्यान अंबी। सुने आय आमीसमा देवि लुंबी॥
बलं अचलं रूप अद्भुत्त पिष्यो। भयौ मोह सब्बै घटी रुद्र दिष्यौ॥
छं० ॥ २३०६ ॥

विरम्मे घुरम्मे घु बज्जे निसानं। मिले रीठि मत्ती सिरं चाहुआनं॥
दिसं भेष लग्गी रयं रत्त भुम्मी। पयं पात जानं मयं गत्त उम्मी॥
छं० ॥ २३०७ ॥

उछंगं उछारंत अच्छी निरष्यै। दलं दंग पंगं तुरंगं परष्यै॥
कुला केलि सामंत तत्तं पतंगं। परे जुद्ध मत्तं सरित्ता सु गंगं॥
छं० ॥ २३०८ ॥

रहं भान थानं रह्यौ थक्कि रथ्थं। टगं लग्गियं भूच पेचं सु रथ्थं॥
गही पंग सेना भरं षग्ग पानं। मना हक्कि गोपाल गोधन्न थानं॥
छं० ॥ २३०९ ॥

भरक्के धरक्के भरक्के ढरक्के। परे गज्ज बाजं सु कंधं करक्के॥
करे नाम सब्बं परे षग्ग धीरं। वरी जूह मभ्भे गजैकं कठीरं॥
छं० ॥ २३१० ॥

पयंसं सरक्कै धरक्कै धरत्री। परे बिब्बि षंडं सबं मुष्प रत्री॥
किलकारियं देवि सथ्थं सु नंचै। परै पग्ग पानं करै पैज संचै॥
छं० ॥ २३११ ॥

कवित्त ॥ करि विपैज अचलेस । सु छल चहुआन पग्गगहि[1] ॥
अरि दल बल संहन्यौ । पूरि धर भरित रुधिर दहि[2] ॥
मच्छति हैवर तिरहि । कच्छ गज कुंभ बिराजहि ॥
उअर हंस उड़ि चलहि । हंस मुष कमलति राजहि ॥
चवसठ्ठि सद्द जै जै करहि । छचपत्ति परि संचरिय ॥
दोहिथ्थ बीर बाहर तनै । दिल्लीपति चढ़ि उत्तरिय॥छं०॥२३१२॥

दूहा ॥ सुनत घाव बिन्धयो सघन । ढ्यौ अचल चहुआन ॥
भयौ मोह कमधज्ज दल । परें पंच सें थान ॥ छं० ॥ २३१३ ॥

विझराज का अग्रसर होना।

अचल अचेत सु षेत हुअ । परिग पंग बहुराय ॥
पट्टन छर अरु पट्ट छर । उठे बिंभ बिरुझाय ॥ छं० ॥ २३१४ ॥
पर्‍यौ अचल पिथ्यौ अरिय । करिय कोप पहुपंग ॥
अप्प बग्ग कट्ठिय बिरचि । हनू हनौ चवि जंग[3] ॥ २३१५ ॥

पंग सेना का विषम आतंक वर्णन।

लघुनराज ॥ कट्ठी सु बग्ग पंगयं । तमक्कि तोन संगयं ॥
बजे निसान नद्दयं । ठनक्कि घंट मद्दयं ॥ छं० ॥ २३१६ ॥
रनक्कि भेरि भेरियं । नदे भरन्न फेरियं ॥
धरक्कि तोन पप्परं[4] । गहक्कि भार सुभ्भरं ॥ छं० ॥ २३१७ ॥
धरक्कि धाम सुद्दरं । किनक्कि सीम से सुरं ॥
भरं सु राज पग्गयं । लहंति जुत्ति जंगयं ॥ छं० ॥ २३१८ ॥
कुलं अरेह सब्बसं । अरप्पि मांड अप्पसं ॥
अमग्ग बट्ट भंगयं । जुरे अनेक जंगयं ॥ छं० ॥ २३१९ ॥
रते सु धंम्म मामयं । करन्न उंच कामयं ॥
पंतो सु नेह न्विम्मलं । चले सु स्वामि अच्चलं ॥ छं०॥२३२०॥
मरन्न तिन्न मातयं । गरुअ गुन्न गातयं ॥
तपे सु आय आइयं । नयौ सु सीम साइयं ॥ छं०॥२३२१॥

---

(१) सं. करि। (२) ए.-गहि
(३) ए. कृ. का. हनो। (४) सं. पप्परं।

दियौ सु पंग आयसं। गहन्न सब्ब रायसं॥
गहो बहो सबै मिली। सकै न जाइ ज्यौं दिली॥ छं० ॥ २३२२॥
सुने सु बज्ज पंगयं। कढे सु पग्ग गज्जयं॥
* * * * * * छं०॥२३२३॥

पृथ्वीराज का विझराज सौलंकी को आज्ञा देना।

कवित्त॥ दल आवत पहु पंग। दिष्पि चहुआन सब्ब सजि॥
बींझराज चालुक्क। दियौ आयेस अप्प गजि॥
अहो धीर चालुक्क। सहि अनभंग पग्ग धरि॥
सनमुष सजि पल जूह। ताम भर सु भर अंत करि॥
उच्चयौ ब्रह्म चालुक्क तहं। अहो राज प्रथिराज सुनि॥
पष्थ धरंनि घन सूर भर। करौं पंग दल दंति रिन॥
छं० ॥ २३२४॥

विझराज पर पंगसेना के छः सरदारों का धावा करना। विझराज का सब को मार कर मारा जाना।

भुजंगी॥ तब नम्मि सीसं नृपं बिंझ राजं। चल्यौ रिम्म सम्हं घनं जेम गाजं॥
जपे मंच अंबीय सा इष्ट सारं। मनं बज्ज क्रम्मं धरे ध्यान धारं॥
छं० ॥ २३२५॥
दियौ आय अप्पं दरस्सं सु अंबी। चढी जानि सिंघं सु आवज्ज लुंबी॥
सथै सब्ब देवी पगं पष्प रत्तौ। मतं झूझ मत्तौ झलक्कंत कत्तौ॥
छं० ॥ २३२६॥
सबै भूचरं षेचरं पग्ग हक्कै। नचै काल ईसं सु डक्कं तु हक्कै॥
अगं भूत प्रेतं फिरै भूह कारं। करं जोगिनी पच जंपै जै कारं॥
छं० ॥ २३२७॥
चलै अग्ग गिद्धी समं सिद्धि साजं। सिरं सूर कौतिग्ग देषै विराजं॥
रजे देव जानं अधं आय लिष्पै। नचै बीर कौतिग्ग नारद दिष्पै॥
छं० ॥ २३२८॥

(१) ए. कृ. को.-पांति।

लष्यौ पंग सेना सु बिंझं करारं । भयं भीत भीरं सजे सूर सारं॥
मिल्यौ घाव चालुक्क सा सेन मझ्झं।बनं अंबुजं इभ ज्यौं जानि लुझं
छं० ॥ २३२९ ॥

परे पुंडीरकं घनं सेन सारं । किनक्कै सुता जीभ जै दंत भारं ॥
धरं मुंड पूरं चलै स्रोन पूरं । पलं कोच मच्चौ सबं कूक रूरं॥
छं० ॥ २३३० ॥

समं सीम कट्टै तिनं सीस तुट्टै । मिलै रिन्न वट्टं तिनं आव घट्टै॥
तबै थप्परी पीठ अप्पै अंबाई । अरी हंकि ढाहै धरं घाइ घाई॥
छं० ॥ २३३१ ॥

सिरं इट्ठ आवड्ड नप्पै अपारं । भरक्कंत सेना भगी पंग भारं ॥
दिष्यौ पंग दिट्ठी मधी सेना पंती। क्रम्यौ सिंघ जेमं मदं देपि दीं॥
छं० ॥ २३३२ ॥

दिष्यौ सेन दिट्ठी करी हंतिकारं । क्रमे पट्ठ राजा करे पग्ग धारं॥
क्रम्यौ तोमरं देपि सो किरनरायं । क्रम्यौ रुद्रसिंघं सु कंठेगि तायं॥
छं० ॥ २३३३ ॥

जयंसिंघ देवं सु जादव्व बंसी । न्विपं भीम देवं अयौ बंभ अंसी॥
क्रम्यौ सांषुलाराय सो देविदासं । न्विपं बीरभद्रं सु बघ्घेल तासं॥
छं० ॥ २३३४ ॥

बजे आय अड्ड रसं राज बीरं । मिल्यौ पंग सम्मीप सो बिंझ धीरं॥
हयौ झाक सिंगीक बाहू कमंधं । पर्‍यौ अश्व फुट्टी परे सिंगि उड्डं॥
छं० ॥ २३३५ ॥

न्विपं चंद्रसेनं म मूरिज्ज बंसी । नरसिंघ रायं सुनै षड्ड अंसी॥
दुओ आय पंच्यौ भरं पंगतामं । मिले आय अड्डो घटं न्विप्प ठामं॥
छं० ॥ २३३६ ॥

हयो किसन राजं हयं बिंझ राजं । पर्‍यौ भोमि उच्चौ सु चालुक्क गाजं॥
तिनें जुद्धमंतौ महंतं करारं । महा झाक बज्जी समं सार सारं॥
छं० ॥ २३३७ ॥

तिनं तार आवड्ड बज्जै चिघाई । हयौ किसनराजं जिनै अश्व ढाई॥

असी रुद्रसिंघं दयौ बिंझ रायं। सिरं ताम तुट्यौ पर्‍यौ भूमि भायं॥
छं० ॥ २३३८ ॥

बिना सीस सों संग्रह्यौ रुद्रसिंघं। फिरक्यौ सु फेर्‍यौ पलार्‍यौ परिंघं॥
गयो आसु उड्डी तनं तम्मि नंय्यौ। बिना सीस धायो चिषा जुद्ध भुय्यौ॥
छं० ॥ २३३९ ॥

जयं जंपियं देवि सो पुहप नय्यै। टगं टग्ग लग्गी सबं सेन अय्यै॥
घटी दून सारद्ध बिन सीस झुझ्यौ। घनं घाय अघ्घाय अंतं अलुझ्यौ॥
छं० ॥ २३४० ॥

पर्‍यौ विंझराजं रच्यौ रूप जानं। बर्‍यौ मांइ चालुक्क सो बंभ थानं॥
इनं देषि पंगं दलं हाय मानी। अहो बीर चालुक्क कित्ती बषानी॥
छं० ॥ २३४१ ॥

सबै लुच्च लुच्ची न की इद्द रय्यी। भयौ चंद कित्तीतहां सूर सय्यी॥
* * * * ॥ * छं० ॥ २३४२ ॥

विंझराज द्वारा पंग सेना के सहस्र सिपाहियों का मारा जाना।

दूहा ॥ सहस एक परिपंग दल। धन धन जंपै धीर ॥
जै जै सुर बद्दै सयन। धनि धनि बिंझा वीर ॥ छं०॥२३४३ ॥

विंझराज की वीरता और सुकीर्ति।

कवित्त ॥ परत अचल चहुआन। पच्छ गुज्जर रषि लाजं ॥
भिल्ल भाग सामंत। सार न्रप जल तन भाजं ॥
रूप रूप रय्यनह। दैन टट्टी बच्छारं ॥
अरि रुक्की बसि सार। कीव तन भंग प्रहारं ॥
तन तुट्टि गिरह पलचर ग्रस्यौ। बलि बिंटीह बिराधि जिम ॥
इम विट्टि पंति अच्छरि परी। ससि पारस रति सरद जिम ॥
छं० ॥ २३४४ ॥

कलिन कल्यौ असियन मिल्यौ। भरहरि नहि भग्गौ ॥
अजसुन लयौ जम बनि भयौ। अमग्ग न लग्गौ ॥
पहुन लयौ [1]जियन गयौ। अपजस नह सुनयौ ॥

(१) को. कृ. जियतन।

और न ज्यौंदवरि न गयो। गाहंत न गहयौ॥
गयौ न चलि मंदिर दिसह। मरन जानि झ,झयौ अनिय॥
बिंझ दिय दाग तिलकह मिसह। बह बह बह भग्गल धनिय॥
छं० ॥ २३४५ ॥

दूहा॥ परत देषि चालुक्क धर। करिग पंग दल कूह॥
जिम सु देव इंद्रह परसि। रहे बौटि अनजूह॥छं०॥२३४६॥

विंझराज के मरने पर पंग सेना में से सारंगदेव जाट का अग्रसर होना।

कवित्त॥ परत बींझ चालुक्क। गहकि रा पंग सेन दल॥
जट्टराव सारंगदेव। आयौ तपितं बल॥
महस तीन असवार। धार धारा रस मथ्थं॥
त्रिमल नेह स्वामित्त। सिंघ रन बहै सु हथ्थं॥
नाइयौ सीस नंमि पंग कह। दईय सीष पहुउंच कर॥
उप्पारि बग्ग निज सेन मम। भला प्रसंसिय अप्प भर॥
छं० ॥ २३४७ ॥

फिरिय चंपि चहुआन। पंग आयस धाय सु गमि॥
गहौ गहौ उच्चारि। पंग संकर संकर रस॥
देव सीन पहरी। ल,थ्थि ल,थ्थिय आहुट्टिय॥
मरन जानि पावार। मलष संकर रस जुट्टिय॥
बाला सु दृढ़ जावन पनह। देवल पन लिहि त्रिन्नयौ॥
भयौ आट मंडि ढिल्लिय त्रिपति। सुबर बीर अड्डौ भयौ॥
छं० २३४८॥

पृथ्वीराज की तरफ से सलष प्रमार का शास्त्र उठाना।

दूहा॥ भयौ मलष पंमार जब। बज्जि दुहूंदल लाग॥
हसहि सूर सामंत मुष। मुरि कायर अभ्भाग॥ छं०॥२३४९॥

पंग सेना में से जैसिंह का सलख से भिड़ना और मारा जाना।

चोटक॥ गहि बग्ग फिर्‌यौ पति धार भरं। हय राज धरक्कत पाय धरं॥

प्रकाशित हो रहा था। कविचन्द ने आगे जाकर उस विवर की विधिवत पूजा और स्तुति की तब उसमें से सिंह पर सवार श्री भगवती ने प्रगट हो कर दर्शन दिए और कहा कि कविचन्द चिन्ता न कर पृथ्वीराज सकुशल संयोगिता का पाणिग्रहण करेगा परन्तु मौ में में ६४ सामन्त बच रहेंगे।

दिल्ली में चले हुए पृथ्वीराज को तीन दिन तीन रातें पूरी होने में तीन पहर बाकी थे अर्थात् पंचमी मंगलवार * को एक पहर रात्रि गई थी। अतः सब सामन्त और सिपाही सहित पृथ्वीराज ने उसी स्थान पर घोड़ों से उतर कर देवी की पूजा की और स्तुति की और फिर सबने कुछ आराम लेने के लिये कमरें खोलीं। इसके दिन पांच घड़ी रात्रि रहे से फिर कमर कसी गई और भोजन के समय मुकाम शकर पुर के पड़ाव पर डेरे पड़े। भोजन प्रसाद हो चुकने पर पृथ्वीराज ने सब सामन्तों को अपने पास बैठाया और सबका यथोचित प्रणमा करके उनसे कहा "भाइयो मैं कविचन्द की छागर लेकर जैचन्द का दर्बार देखने जा रहा हूं। परन्तु यह सब हिम्मत आपही लोगों के भरोसे पर है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि समय पर तुमलोग मेरा पूरा साथ दोगे। प्यारे भाइयो अधिक क्या कहूं मेरा निस्तार तो आपही लोगों से है। मुझे क्या मेरी चिन्ता तो तुम्हें चाहिए। इसी प्रकार बातें होते होते दो पहर लटक गए और तीसरा पहर हो आया। सामन्तों के बीच में बैठे हुए पृथ्वीराज ने फिर कहा "कहां को जा रहे हैं क्या होना है सो सब जानही लिया अब लाज तुम्हारे ही हाथ है * तीज को बाइस कोस चौथ को चौबीस कोस, पंचमी को छत्तीस कोस और आज षष्ठी को अड़तीस कोस की मंजिल तै हो चुकी है। अब यहां से कन्नौज केवल दो योजन यानी आठ कोस की दूरी पर है। जो बात बरसों से दिल में बसी हुई थी उसे अब संजोगही साक्षात् देखेंगे। पर भाइयो केवल तुम्हारे भरोसे पर। इस पर पुनः राज्यमंत्री जैतराव ने कहा राजन् सूर्य्य और चन्द्रमा बदली की छाह में नहीं छिपते, भेष छिपाए भूप, और बहुमूल्य वस्त्र पहिने हुए कंगाल नहीं छिप सकता। नेह के नैन, मृगध की चोरी, और कुलटा के हावभाव आपही आप प्रगट हुए जाते हैं। युद्ध के समय सूर और सभा में चतुर पुरुष एवं कवि कदापि नहीं छिपते। जैतराव की बात सुनकर पृथ्वीराज बोला। चांद जो हो हम तो दिल्ली से जैचन्द के महल देखने के लिये चले हैं अब जैसा जानो वैसा करो तुम्हारी खुशी। राजा की आखिरी बात सुन कर सामन्त लोग समझ गए कि बस अब हम लोगों की अन्तिम घड़ी आन पहुंची है परन्तु उनका मुख मलिन न हुआ वरन उनके चेहरे पर एक विलक्षण तेजमय आभा आ गई। उनके सब शरीर के रोंगटे खड़े हो गए और बाहु फड़कने लगे। कान्ह, गोयदराय, पज्जून, मलख, निहट्टर, चदपुंडीर, पहाड़राय, जामराय, सिंहप्रमार, अल्लाहाई, बलभद्र, प्रमगराय, कनकराय, और रामराय, आदि सामन्तों के बीच में बैठा हुआ देव के समान राजा पृथ्वीराज कुछ देर तक निगाह करके सब के मुंह की ओर देखने लगा। यह देख कर सब सामन्त एक स्वर से बोल उठे "धर्मावतार अन्नदाता कोई चिन्ता नहीं।

बस फिर क्या था! दरबार बरखास्त हुआ। सब सामन्त अपने अपने डेरों पर आराम करने लगे, इधर पृथ्वीराज भी अपने शिविर में पड़ा करवटें बदलने लगा। इस समय गंगाजी के किनारे पर डेरे पड़े थे इस लिये पृथ्वीराज भूमि पर पड़ा था। सब लोगों ने ख्यालू करके जैसे तैसे सात घड़ी रात्रि बिताई। आधी रात पर जहां चार घड़ी रात और गई कि फिर से कूच के नगाड़े बजे

* मूल पाठ में "सामवचमा आम एक छत्तिस विस्तिन" पाठ है। परन्तु बिलाना रविवार के बाद सामवार का पचमी कैसे हो सकती है। मान लिया गया कि तिथि की हानि हुई परन्तु सामवार के पड़ाव का वर्णन पहिले हो चुका है। सम्भव है कि भाम के स्थान में भूलसे सोम लिख गया हो।

* छन्द १११ में "तीस कास दुअ अग्गरो किये हुकाम सुनाम" पाठ है परन्तु मालुम होता है कि बीसदुअ अग्गरो के स्थान में तीसदुअ अग्गरो भूलसे हो गया है।

और सब सामन्त लोग अपने अपने अनाने बताने से सजे। तय्यारी के समय सब सामन्तों से यह भी कह दिया गया कि वे सब अपना वेष बदल लें जिसमें वे सहजही पहचाने न जा सकें। निदान सब ने ऐसा ही किया और सब ने ऐसे रूप छिपाए कि आठ पहर साथ रहने वाला भी उन्हें न पहिचान सके। आधी रात के पश्चात समयी बृहस्पति बार की संधि में पृथ्वीराज ने घोड़े की बाग उठाई। ग्यारह सौ सवार और सौ सामन्त भी क्रमानुसार नियम बद्ध होकर चलने लगे। सब सेना के आगे आगे सहनाई और नफीरी के स्वर छिड़ते जाते थे तिसके पीछे सब सैनिक और बीच में कविचन्द और पृथ्वीराज थे। कविचन्द गंगाजी की महिमा बखान करता जाता था। और पृथ्वीराज उसे बड़े चाव से सुनता जाता था। ज्यों ज्यों कनौज की सरहद नियराती जाती थी त्यों त्यों सामन्त और सिपाहियों के दिल से भय भागा जाता था और आनन्द से उनकी छाती फूली आती थी। वे भी परस्पर बातें करते जाते थे। कोई कहता कि मैं पाताल लोक का राजा हूंगा, तो दूसरा कहता मैं इन्द्रासन लूंगा, तीसरा कहता मैं सूर्य्यमंडल में मिलूंगा तो चौथा कहता मैं उसे भी पार करके चिन्मय ब्रह्म में लीन होकर तन्मय हो जाऊंगा। अपनी धुनि में सब ऐसे मस्त थे कि जाना था उत्तर को और हो गए सीधे पूरब को। चलते चलते जब देर हो गई तारा चढ़ आया हिन्दी उग आई, दिशाओं में सफेदी झलक आई वृक्षों के पत्ते हिलने लगे रात छट गई, पौ फट गई रति-प्रीता मोतियों का हार उतार कर कन से लिपट गई और संसार में प्रायः प्रभा समिट गई और तब भी कनौज के राजमहल के कलसे नजर न पड़े तब मालूम हुआ कि रास्ता भूल गए हैं।

घड़ी एक में अरुणोदय हो आया और अंधकार का मानों एक प्रकार से सर्वनाश होगया। सूर्य्य भगवान की कोमल किरणों का स्पर्श पातेही जैचन्द के महलों के सुनहले कलसे झिल मिल झलकते हुए देख पड़ने लगे। तब सब कह उठे, वाह कनौज तो यहां से उत्तर है निदान सब ने उसी समय घोड़े की बागें मोड़ दीं। कविचन्द बोला संभरीनाथ, समस्त क्षत्रीवंश और छत्र धारियों में श्रेष्ठ, असंख्य सेना के स्वामी अतुलित बाहुबल वाले धर्मधुरंधर पृथ्वी या इन्द्र के समान यशस्वी कमधुज कुलकमल कनौज राज महाराज जैचन्द के महलों के कलसे यही तो हैं। इसके सामने छत्तीसों वंश के छत्री सिर झुकाते हैं और दरबार में छओं भाषा नवों रस चौदहों विद्या चौसठों कलाएँ आदि देह धरकर विराजती हैं। इतने में सब लोग गंगा की ऐन कगार पर आगए तो देखते क्या हैं कि कहीं पर मतवाले हाथियों के झुंड के झुंड खड़े झूम रहे हैं। कहीं पर सुन्दर किशोर वय राजकुमार घोड़े फेर रहे हैं, कहीं पर भीमकाय पहलवान लोग जोर कर रहे हैं, कहीं पर योंही दस पांच यार दोस्त बैठे मनकी मौज उड़ा रहे हैं कोई गा रहे हैं तो कोई बजा रहे हैं। कहीं वेद पाठी ब्राह्मण लोग स्नान करके ध्यान में बैठे संध्या कर रहे हैं कोई कोई प्रातः वायु के स्पर्श में मगन मन होकर अपनही मरोदे में नाच रहे हैं। कहीं पर धनिक जन स्नान करके गऊ और स्वर्ण का दान कर रहे हैं, कहीं पर सिद्ध लोग समाधि साधे बैठे हैं, कहीं कहीं पर औघड़ लोग अनाप सनाप बक रहे हैं— कहीं पर कवि लोग कवित पढ़ते हैं तो कहीं पर कलकंठी महिलाएँ वृन्द की वृन्द मिल कर मंगल गीत गाती हैं इत्यादि इत्यादि ऐसे मनमोदकारी चरित्र देख कर दर्शकों का चित्त चैतन्य हो गया।

पृथ्वीराज ने कविचन्द से पूछा गंगाजी का स्नान करने से क्या फल होता है दर्शन से क्या फल होता है और जलपान करने से क्या फल होता है सो कहो। इस पर कविचन्द ने उत्तर दिया कि जो फल गंगा जल के दर्शन से होता है सोई फल गंगा स्नान से होता है और सोई फल एक चुल्लू जल पीने से होता है। इस तरह से स्नान ध्यान मज्जन पान सब प्रकार से पापों का नाश करने वाली गंगा के जल को स्पर्श करके है

राजन् अपने कलेवर को पवित्र कीजिए। एक समय की बात है गंगातट पर विहार करती हुई राजा अंबुज की कन्या को देख कर शिव जी उस पर मोहित हो गए। इससे उनका वीर्य्य स्खलित हो गया जिससे बहत्तर हजार कुमार उत्पन्न हुए। वे राजकुमार गंगाजी की ही रेणुका में पले और बड़े हुए। इस समय वे सबके सब रत्नजटित आभूषण कुंडल कवच धारण किए हुए दिव्य रथों पर सवार सूर्य्य मंडल के द्वार पर वहां के चौकसीदार होकर विराजमान हैं। एक समय एक मकरन्द लोभी मलिन्द एक कमल कली के बीच में बन्द हो गया। होनहार की बात उस कमल कली के मुकुलित होने के पहिले ही उसे एक अप्सरी ने उतार लिया और शिवजी को चढ़ा दिया। उसी समय किसी ने शिव जी पर गंगाजल चढ़ाया। बस फिर क्या था वह कीट तत्क्षण शिवमय हो गया। और भी किसी समय किसी नदी में एक हिरण पानी पी रहा था उसे एक सर्प ने डस लिया जिससे वह मर कर नदी की धार में गिर गया। उस नदी में बहता हुआ वह गंगाजी में आगया। गंगा किनारे मायारण्य बैलस्वरूप में नदी फिर रहा था। अस्तु उसने उस की मृगछाला और सींग कैलास को लेजाकर शिवजी को दिए। हे राजन् गंगाजी का महत्व ऐसा है। श्री विष्णु भगवान के चरण कमलों से उत्पन्न हुई त्रिलोकी के त्रिताप एवं परंपरा पापहारिणी शिवप्रिया गंगाजी को साक्षात् शिव जी का हृदय स्वरूप और दोनों किनारों को धर्म स्वरूप जानिए। ऐसी स्वर्ग की सीढ़ी सुरसरी का सलिल स्पर्श करने की सुर नर नाग अप्सरी आदि सब इच्छा करते हैं। कलिकाल के काष्ठवत पाप पुंजों को भस्म करने के लिये हुताशन स्वरूप ब्रह्मा के कमंडल से निकल कर त्रिलोकी को कंपायमान करके नीलकंठ की जटाओं में स्थित हो यावत जगत के जंजालों को जला देने वाली जान्हवी सदैव वंदनीय है। कैसाही राजसी अथवा तामसी प्रकृति का कोई क्यों न हो पर गंगाजल का स्पर्श होने ही वह सतोगुणी हो जाता है। अस्तु हे राजन् इस भवसागर से पार उतरने वाली गंगाजी में मज्जन कीजिए। निदान पृथ्वीराज क्षौरोदक पहिन कर स्नान करने लगा और कविचन्द गंगा जी की स्तुति पढ़ने लगा। उसने कहा—"हे शिव के सीस पर लसित जटाजूट में विहार करने वाली पापनाशिनी गंगा तेरी तरल तरंग अंग से स्पर्श होते ही जन्म जन्मान्तर कृत पापपुंज जल जाते हैं। किन्नर और गन्धर्वादि प्रसन्नता पूर्वक तेरे गुण गान करते और तेरी जयजयकार करते हुए कहते हैं; हम मन्द बुद्धि तेरी प्रसंशा क्या कर सकें तेरे जल से स्पर्श हुए शरीर के पास जमराज के दूत कदापि नहीं जा सकते। वसुन्धरा की शृंगार स्वरूप हिम ऋतु की प्रतिपालक हे शिवबाले तेरे दर्शन मात्र से जमराज के पास जाने का भय जाता रहता है। हे पाप पहाड़ों को विदार कर आनन्द की धारा प्रवाहित करने हारी करुणा रस की मूरत स्वरूप शरणागतों को सुखप्रद और दुष्ट दल दमन करने वाली मात गंगे तेरी जय हो।

उसी समय जैचन्द के महल की कुछ दासियां गंगाजल भरने आई हुई थीं उन्हें देख कर कविचन्द ने हँसते हुए पृथ्वीराज से कहा राजन् देखिए "गोरस बेंचन हरि मिलन एक पथ दो काज" आपके लिये यहां मुक्तितीर्थ पर भी कामतीर्थ प्रस्तुत है अस्तु दोनों हाथ बढ़ा कर दोनों फल लीजिए।

उन जड़ाऊ जेवर और जरीले कपड़े पहिने हुए गंगा के किनारे पर जुटी हुई दासियों को देख कर ऐसा आभास होता था मानो शिवजी के कामदेव को भस्म कर देने पर दिव्य देवांगनाएँ करुणार्द्र हृदया गंगाजी से फरियाद करने आई हों।

झकोर कर झोंके से जल भरते समय पानी में घड़े की परिछाई ऐसी भली मालूम होती थी जैसे राहु और चन्द्रमा लड़ रहे हों और शेषनाग विचार कर रहा हो, * स्नान करते समय उन

* जल में जो सूर्य्य की छाई देख पड़ती है वह चन्द्रमा

मंगलमुखियों के गुलाबी गाल और जड़ाऊ तिलकों की ऐसी शोभा होती थी जैसे पूनों का चन्द्रमा उदय होकर शनैः शनैः ऊपर को चढ़ रहा हो। गङ्गा के किनारे उन स्त्रियों को देखकर प्रायः भ्रम होता था कि हैं यह मुक्तिनीर्थ है या कामतीर्थ।

पृथ्वीराज बोला—आश्चर्य्य है राहु और चन्द्रमा, धनुष और मृग, कीर और बिंबाफल, गज और मृगराज आदि एक दूसरे के सनातन शत्रु इस समय परस्पर मित्रभाव में एकत्रित विराजमान है। विशेष आश्चर्य्य तो यह है कि दो स्वयंभू शंभु भी एक ही आसन पर आसीन देख पड़ते हैं। इस पर कविचन्द ने दासियों की ओर दृष्टि करके कहा कि यह जैचन्द के राज्य का प्रताप है। देखिए तो सही चतुरों का चित्त चुराने वाली इन चंचललोचना पनिहारियों की पैर की अंगुली चम्पा की सी कली जान पड़ती है। उन की अनङ्ग की रङ्ग से भरी हुई सकोमल और सुडौल पिंडुरी और जंघा, पतली सी कमर में नीली साड़ी और उस पर केसरी चूनरी, उसके भीतर मनोज की मौज भर युग यौवन देखने वाले के मन को बेमोल मोल लेते हैं। ऊंची बांह करके पानी भरा घड़ा सम्हालते समय अंचल के अन्दर हृदय पर रुलता हुआ मोतियों का माल एक अजब ही बहार दे जाता है। उनके सचक्कन कपोल सिंहलद्वीपी मोती को भी बेपानी करते हैं। उनके अर्द्ध अरुण ओष्ठ, कीर की सी नासिका मोती एवं दाड़िम के दाने से दांत बड़े ही सुन्दर मालूम होते हैं। किंचित लज्जा से लोचन के कोये को सिकोड़ना और हँस हँस कर गरदन मरोड़ना तो और भी गजब करता है। बाह उनके कमल कली से मुख मण्डल पर जड़ाऊ आड़ इन्दु सी सुशोभित होती है।

पृथ्वीराज ने मुस्करा कर कहा, बाह कविचन्द खूब चूके, जैचन्द की दासी के शीस पर केश ही नहीं। इस पर कविचन्द बोला सुनो सम्भरीनाथ यह नख शिख है। अलि की स्थानता को मात करने वाले बालों की बेणी स्वर्ग के खम्भ पर चढ़ते हुए सर्प की उपमा पाने योग्य है। सम्भरीनाथ जिनको आप सुन्दरी कहते हैं वे पनिहारी हैं। कन्नौज नगर की सुन्दरी महिलाएं यहां क्या करने आवेंगी। वे सदा सतखने महलों पर रहती हैं। कभी पृथ्वीतल पर पैर नहीं देतीं। उनके मुखकमल को या तो सूर्य ही देखता है या उनके पति। उन सुन्दरी महिलाओं के मुखारविंद के दर्शन होने दुर्लभ है उनका दर्शन केवल उन्हींको हो सकता है जिन्होंने पूर्वजन्म में शिव की सेवा करके अनन्त पुण्य संचय किया है।

महाराज! इस नगर के महाजनों की महिलाएँ ऐसी सुन्दर हैं कि मैं आपसे क्या कहूं। उनके श्याम सचक्कन लटकोर कोर कोर केशों की अलकें ऐसी सुशोभित होती है जैसे जन्मेजय के यज्ञ के भय से भागे हुए भुअग उनकी पीठ पर आश्रय पा रहे हों और मांग पर रुलती हुई मोतियों की लरें उनके आहार के लिये दूध की सी धार जान पड़ती है। ललाट पर जगमगाता हुआ जड़ाऊ तिलक चन्द्रमा की गोद में विराजमान रोहनी सा जान पड़ता है। दोनों भौंहें काम के कर की कमानें सी और नासिका निर्वात दीप शिखा सी भान होती है। दोनों कानों के मणिजटित कुंडल उदित एवं अस्तमित नक और अर्क से झलझलाते हैं। दोनों अमोल गोल गडस्थल, गम्भीरी जैसी गोलें, चौर कर चार लाल रङ्ग में रंगे हुए चन्द्रमा एवं बिंबाफल से अधर मोती एवं विद्युन्माला सी उज्ज्वल दंतपंक्ति और गुलाब से गोरे गालों पर लटकती हुई मोतियों की लटें शिव के सिर पर गंगधारा सी बहती हुई जान पड़ती है। कोकनद कनक कुंभ एवं पर्व्वत शिखर से युग यौवन और उनके

का भाग सकेत होती है। जल से डूबा हुआ पङ्क का भाग अपने ऊपरी भाग की छाया के कारण काला मालूम होता है। किसी प्रकार से जल को हिलाने से उक्त आँखें या बिंब ऐसी ऊपर नीचे हिलने लगती थीं मानो जल को हिलाने वाली वस्तु से टकरा करमरा हो। यहां पर कवि ने यही भाव झलकाया है और स्त्री के हाथ को सर्पयुग या सर्प माना है

नीचे रोमराजि सहित उदर की त्रिवली त्रिवेणी की बहार देती है। पीन नितंब, पतली कमर, सुडौर जंघा, कदम एवं नारंगी सा रंगदार सुडौर पिंडुली, केसर के रंग भरे कुमकुमे सी पड़ी पुष्प पांखुरी से मुलायम पैर और उनके नखों से दर्पण की सी द्युति दीप्त होती है।

पृथ्वीराज को देख कर उधर उन स्त्रियों का भी जल भरना भूल गया। ज्योंही ये जल भर घड़े को झोंक के साथ सिर पर रखने लगीं कि उनका घूघट पट खसक गया और अंचल उधर गया, परन्तु क्या करें; दोनों हाथ बिंधे हुए थे इस से वे अत्यन्त लज्जित हो सनिरलिन हथिनी की तरह गरदन दबा कर चल दीं। यह देख कर पृथ्वीराज बोला वाह कैसी सुन्दर मनहरण मुख प्रभा है। कुमोदिनी से यौवन सूक्ष्म रोमराजि और शैवाल से केश कलेज पर चोट करते हैं पीला पीला पट देख कर इंद्र धनुष और उनके गोरे बदन को देख कर विद्युत प्रभा का स्मरण होता है।

इस प्रकार से कन्नौज नगर के उपकंठ में गंगा स्नान करके राजा पृथ्वीराज सेना सहित चार कोस पश्चिम को चला गया और उस दिन यहीं पर डेरा पड़ा। उस दिन तिथि षष्ठी थी। डेरे पर पहुंच कर पृथ्वीराज ने बहुत सा अन्न धन रत्न और स्वर्ण ब्राह्मणों को दान दिया और नित्त नियमानुसार मध्या वन्दन और शिवार्चन करके सब साथियों सहित भोजन करने बैठा। भोजन करके सबने यथास्थान विश्राम किया और रास्ते की थकावट उतारी—उस दिन और रात भर उसी स्थान पर पड़ाव रहा।

वह रात्रि सब की इसी सोच विचार में कटी कि देखें अब संवरे क्या होता है। घड़ी पहर गिनते गिनते संवरा भी हो गया। पूर्वदिशा से भास्कर भगवान ने अपनी कोमल किरणों का प्रसार करके संसार से अन्धकार को मार भगाया। इधर पृथ्वीराज के पड़ाव पर कूच का नगाड़ा बजा और दम के दम में सब लोग कील काटे से दुरुस्त होकर बम बोलने को सन्नद्ध हो गए। पृथ्वीराज भी घोड़े पर सवार होकर सब सेना के बीच में हो गया। गोइन्दराय गहलोत, नरसिंहराय दाहिमा, चन्द सेन पुंडीर, सारंगराय सोलंकी, पज्जूनराय कछवाहा, आजान बाहु लोहाना और लंगरीराय, लक्खनसिंह बघेला, कनकराय बड़गुजर, और बार सिंह इनने सामन्त राजा के आगे थे और सब सेना पीछे। कविचन्द और पृथ्वीराज सब के बीच में थे। इस प्रकार व्यूहबद्ध होकर कुछ थोड़ी दूर चले होंगे कि पृथ्वीराज स्वयं घोड़े पर से उतर पड़ा और सब लोग मिल कर नरनाह काका कन्ह चहुआन के पास गए और उनसे कहा—"नरनाह एक कन्ह के बिना ये सब कौतुक होरहे हैं। क्या कहें कवि महाशय भूम में आग लगा कर अलग हो गए। अब जो कुछ बीतना है सो हम और आप पर बीतेगी। यह जैचन्द का दर्बार बड़ा जबर्दस्त है। यहां से बेदाग बच निकलना जरा टेढ़ी खीर है, इस लिये अब यहां यही बात करनी उचित है जिसमें पति रहे। अस्तु हे चत्रीकुलकमल म्लेच्छ दलदलन कन्ह चहुआन आप अपनी आँख की पट्टी खोल डालिए क्योंकि जिस मर्याद रखा के लिये पट्टी बंधी थी वह बात तो यहां है नहीं। आपकी पट्टी देख कर संभव है कि कन्नौज नगर के लोग सदिग्ध हो जांय। यह सुन कर कन्ह ने पट्टी खोल दी और कहा भाइयो अब सोच विचार करने से क्या होना है जो होनी होगी सो देखी जायगी।

कन्नौज नगर के बाहरी प्रान्त में वहीं पर एक देवी का मन्दिर था जिस पर मोतियों की झालर वाला सोने का छत्र छहरा रहा था। द्वार पर एक प्रशस्त बलि स्थान था जहा पर सैकड़ों भैंसे रोज बलि दिए जाते थे। उस देवी के मन्दिर में नित्त सैकड़ों ब्राह्मण पूजन पाठ करते, नौबत बजा करती और गायक गण ढोल और झाझ के साथ स्तुति गान किया करते थे। उस देवी के मंदिर के सम्मुख जाकर कविचन्द ने हाथ जोड़ कर और नम्रता पूर्वक

मस्तक नवा कर कहा "सहस्रों सूर्य्य के समान प्रभामय साक्षात् अग्नि ज्वाला के समान जाज्वलायमान और उज्ज्वल शक्ति स्वरूप माते भगवती तूं ही इस संसार की उत्पत्तिकारिणी है। इस जगत के यावत् जड़ चैतन्य पदार्थ, सातों पाताल, दसो लोकपाल, पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश, पांचो तत्व तेरी ही सत्ता से उत्पन्न हुए और स्थिर हैं। हे जगत की कल्याणधारिणी चंडी यह तेरा दास कविचन्द बार बार बन्दना करता हुआ तुमसे यही वर मांगता है कि पृथ्वीराज की जीत रहे।" इस पर आकाश वाणी हुई ऐसाही होगा परन्तु नगर को दहिने देते हुए प्रवेश करना। यह वर पाकर पुनः कविचन्द ने कहा "स्वर्ग और पाताल के सब देवताओं में अप्रगण्य पुस्तकधारिणी जगत की कल्याणकारिणी योगमाया अमार संसार से पार होने के लिये मुझे एक तेराही आसरा है। दुष्ट दैत्यों का दलन करने वाली क्षत्रियों की छाया के लिये छत्र स्वरूप माते सरस्वती इस समय चहुआन की रक्षा करने वाली एक मात्र तू ही है। लज्जा की मर्यादा और हवि एवं हुतासन स्वरूप स्मरण मात्र से सिद्धि और जयदायिनी मैं हाथ जोड़ कर बार बार यही विनय करता हूं कि महाभारत के युद्ध में जिस प्रकार पांडवों की रक्षा की थी उसी प्रकार इस समय सोमेससुत संभरी नाथ पृथ्वीराज की रक्षा कर। धन्य भगवती! युद्ध विद्या में निपुण जो क्षत्रिय तेरा स्मरण करके रण में जाता है वह सहस्रों शत्रुओं को नष्ट करके सदा जय पाता है।

तत्पश्चात कविचन्द बोला कि हे वीर वर सामन्तों महाराज पृथ्वीराज कन्नौज नगर में प्रवेश करने की इच्छा करते हैं सो चलिए दक्षिण प्रदक्षिणा देते हुए चलें। निदान सबने बहुत अच्छा कह कर इष्ट देवों का स्मरण करते हुए घोड़ों की बागें उठाईं। प्रातः काल के समय राजा जैचन्द के महलों के नकारखाने पर बजती हुई नौबत भादों में बादल जैसी गरज रही थी। उसी के साथ में उच्च स्वर सहनाई और नकीरी पपीहा एवं कोयल से बोल बोल कर दिल्लीपति पृथ्वीराज के दिल को बेहाल करते थे। आश्चर्य है कि पृथ्वीराज और कन्ह चौहान शत्रु की श्री देख कर भी चुप रहे परन्तु इस समय नीति के अनुसार उन्हें यही करना उचित था। इसीसे दोनों जिस किसी तरह मनही मन मसूस कर रह जाते थे। कुछ थोड़ी दूर आगे जाकर पृथ्वीराज देखता क्या है कि श्यामा बाएँ बोल रही है और भरा हुआ कलस बाएँ आ रहा है। बाँई ओर मगरे पर बैठा हुआ कौव्वा टाँटाँ कर रहा है। दो बैल भी बाँई ओर लड़ रहे हैं और दहिनी ओर लुहार की भट्ठी जल रही है। यह सब अशुभ देख कर कविचन्द का रक्त सूख गया। परन्तु कुछ कड़ा जी करके बोला; धर्मी क्षमा! कुशल के लक्षण नहीं देख पड़ते, यह देखिए बिलारी भी बाएँ से दाए रास्ता काट गई। वाह आपही आप आग की सी चिनगारियाँ नजर आती है और अमभय बदर गरज रहे हैं। यह सुनकर पृथ्वीराज ने हँस कर कहा "अब का सोचन बारं बारा" चलो जो होगा सो देखा जायगा; नाई के बाल आप आंग आवेंगे।

पास ही राजा जैचन्द का एक बाग था जो कि बीस कोस के घेर में विस्तृत था। उस बाग के चारों ओर प्रथम तो पक्का कोट था, तिसके बाद थूहड सेहुंड़ा आदि कोटदार वृक्षों की बारी थी इसके बाद नारंगी और दरमें के दरख्तों की कतारें सुशोभित थीं। उसी के किनारे पास पास नाली कुंड चावड़े ताल पोखरे आदि सुविस्तृत बन बास थे। उस निर्मल जल में लाल लाल अनार दाने और नारंगियों की झांई ऐसी भली मालूम देती थी मानों कलिकाल के क्रूर और कपटी लोगों के कलह से कुपित होकर नवों निद्धि आठों सिद्धि उसी जल में जा पड़ती हों। उस पार बेर और इस पार चंप के पेड़ों की कतार थी। अस्तु चंपे की कलियों का समुदाय तो ऐसा मालूम होता था मानों कामदेव ने जल में दीपावली रची हो और

जल की लहरों में झकर मकर होती हुई झाँई ऐसी भासित होती थी मानों सुरीली तानका मारा कोई तड़प तड़प कर प्राण दे रहा हो। उस बाग में कहीं कहीं पर तो आकाश से बातें करते हुए बड़े बड़े वृक्ष खड़े फूल और फलों के भार से नम्र हो रहे थे और उन पर लिपटी हुई भाँति भाँति की लोनी लताएँ ऐसी सुन्दर लगती थीं मानों निराव-लंबियों को सबल के सहार से उन्नत पथ पाने की शिक्षा दे रही हों और कहीं कहीं बीच बीच में रकम रकम की काट छाँट दार क्यारियों में बरन बरन की फुलवारियाँ लगी हुई थीं। प्रातःकाल के रसालमंजरी के साथ बैठी कूक करती हुई कोयल दिल को बेदम करती थी एक ओर जंभीरी नींबू बिजौरे सेव आदि अनेक प्रकार के खट्टे मीठे फल लटक रहे थे और एक ओर मेवती गुलाब कुद कदंब मौरसिरी आदि सुगन्धित पुष्प फूल रहे थे और उन पर बैठे हुए रस पीते मस्त मन मकरन्द वृन्द आनन्द से गुंजार करते हुए मौज से झूल रहे थे। कभी कभी मोर भी एकाधी धीमी आवाज कस देते थे जिससे मालूम होता था मानो मदन के दबाव में पड़ कर कोई बिरहनी बाला कूक रही हो कहीं कहीं कुंज के कुंज कदली वृक्ष मन्द मन्द वायु से मस्त गयंद से झूक रहे थे। कहीं मेघस्पर्शी ताड़ वृक्षों में लगे हुए फूल मानो बतला रहे थे कि इस असार संसार में कुछ भी नहीं है, मनुष्य जन्म पाकर भी यदि कुछ कर न गुजरे तो जमीन के रहे न आसमान के। परन्तु पिंड खजूर ऐसे जान पड़ते थे जैसे आकाश से उतर कर नवग्रह गोष्ठी कर रहे हों—इत्यादि इत्यादि उस बगीचे का वर्णन कहा तक करें। कविचन्द ने पृथ्वीराज से कहा कि असगुन मिटाने के लिये थोड़ी देर इस बाग में बैठ लीजिए फिर नगर में पैठेंगे। पृथ्वीराज ने कवि-चन्द की बात मान ली और सेना सहित बाग में जाकर थोड़ी देर के लिये विश्राम किया।

वहां से चलकर * पट्टनपुर के प्रकोट में पैठते ही कविचन्द ने कहा देखिए कुकर्म का फल ऐसा होता है। ये लोग जो कोपीन कसे हुए झूले से भटक रहे हैं अपना सब धन माल जुए में हार चुके हैं और ये लोग बात बात पर कसमें खाते हैं सो अपने पक्के जुआरी होने का परिचय दे रहे हैं। जिन्होंने पूर्व्व जन्म में साधु सेवा तो की पर कपट से इस समय नायिकाओं के निकटवर्ती भड़ुए हुए हैं वे लोग जो वेश्याओं से स्नेह रखते हैं सो देखिए कौड़ी के तीन तीन होते फिर रहे हैं और जिनकी दासियों से आशनाई है वे बगुला भगत बने हुए उसकी आशा में सब काम धंधे छोड़े हुए बैठे हैं और कितनेक लोग तो ऐसे हैं कि इन नायिकाओं को देखकर जिनका मन हाथ से चला जाता है। ये देखिए अपनी अपनी अटारियों पर बैठी कुछ उँनीदी सी बमन फटकारती ऐंड़ाई लेती और जँभाती हुई वेश्याएं अपने अपने चीर सँभाल रही हैं और कोई कोई तानपूरा या सारंगी के सुर में मन्द मन्द सुन्दर रागिनी अलाप रही हैं। इनके स्वाभाविक हाव भाव और कटाक्ष देखकर ऐसा जान पड़ता है मानों आकाश में नृत्य करती हुई अप्सराएँ यहां पर श्रम दूर करने के लिए आप बैठी हों। *

वाह उस पट्टनपुर की शोभा का क्या कहना है जहां पर सैकड़ों करोड़पति महाजन निवास करते थे। उन करोड़पति महाजनों और राजाओं के महल भी जहां तहां सुशोभित थे। उन महा-

* पहिले समय में राजा सबल इनका शहर से अलग

हुआ करते थे परन्तु राजा सेवी वा कर्मचारी लोग भी उन्हीं मकानों के आस पास रहने थे इसी से वहां पर एक भिन्न बस्ती हो जाती थी और उस बस्ती का कुछ भिन्न नाम भी होजाता था। जैसे पृथ्वीराज के रहाइस का स्थान लिंगमलोच कहलाता था उसी प्रकार जयचन्द का रहा इस स्थान पट्टनपुर नाम से प्रसिद्ध था। मुद्राराक्षस में भी महानन्द की रहाइस के स्थान का नाम कुसुमपुर दिया हुआ है।

* स्मरण रहे कि पहिले समय में वेश्याएँ और ऐसेही नीच पेशे के लोग नगर के बाहरी प्रान्त में बसाए जाते थे। अस्तु यहां पर कवि ने पट्टनपुर के किसी हाल की नहीं ऐसा पुराने का खाका खींच कर बताया है कि जहां पर वेश्याओं का निवास स्थान होता है वहीं पर अन्य सब प्रकार के कुकर्म नीची पुरुषों का निवास होता है।

जनों और राजाओं के निवास स्थानों से आती हुई केसर, उसीर और मृगमद की सुगन्धि से सारा वायु मण्डल सुवासित हो रहा था। वहां की सजावट बनावट और सफाई देखकर शृंगार रस के नेता घनश्याम तथा कामदेव का भी मोहित होना सम्भव था, कहीं पर गुणी गायकगण राग रागिनियों को गाते और उपंग वीणा आदि बजाते थे और कहीं पर अंग अनंग के रंग से भरी गर-बीली गणिकाएँ कलकंठ से मगल गीत गाती और हाव भाव बनाती हुई नाना भांति की कलाएं कर कर नृत्य करती थीं। इसी तरह और भी सब प्रकार महल प्रति महल आमोद प्रमोदमय चहल पहल की कहल सुन कर ऐसा मालूम होता था मानो यहां घर घर इन्द्रासन और इन्द्र विराजते हैं। ऐसे आनन्दमय नगर पट्टनपुर के प्रत्येक महल और हवेली पर सोने के कलसे चढ़े हुए थे और द्वारों पर मोतियों की झालरदार जड़ाऊ तोरण बँधी हुई थी। उज्ज्वल स्वर्ण की जगमगाहट के कारण समस्त पट्टनपुर में दिन रात दिन सौ फूल हुआ देख पड़ता था।

आगे बाजार में जाइए तो कुछ और ही मजा था। कहीं तमोलियों की दूकानों पर छैल छबीले जवान खड़े पान खा रहे थे। कहीं पर मालिनें बेला, चमेली, चंपा, सेवती आदि सुगन्धित पुष्पों के अच्छे अच्छे लच्छेदार हार गूथ कर खड़े मोल पैसा देनेवालों के गले में पहिना रही थी। कहीं पर दो चार यार दोस्त जुट कर बीणा पखावज आदि बजाते और मनमानी अलापचारी कर के मन की मौज उड़ाते थे। कहीं पर विद्वान पंडित कथा पुराण कहते और कहीं पर दस पांच समझदार जुट कर ज्ञान चर्चा उच्चार किया करते थे।

बजाज लोग अपनी अपनी दूकानों पर सजे बजे बैठे बैठाए नाना भांति के बहु मोल और थुर मोल पदार्थ क्रय विक्रय करते थे। एक तरफ आटे, दाल, घी, चीनी, चावल, चना, चूरा आदि परचून के अटंब लगे थे। एक ओर सूती, ऊनी, रेशमी पशमीनी, जरदोजी, जड़ाऊ, लदाऊ और मखमली आदि भांति भांति के बहुमूल्य और आबदार वस्त्रों की दूकानें थीं। एक ओर जौहरी बाजार में हीरा, मोती, माणिक, मूंगा, पन्ना, पुखराज, फीरोजा, गोमेदक, लहसुनियां आदि नाना प्रकार के रत्नों से जटित सोने चादी के बहुमूल्य गहने बिक रहे थे। वे जड़ाऊ गहने ऐसे आबदार उज्ज्वल और प्रभामय थे कि उनकी और सूरज की ज्योति एक हो रही थी। एक ओर जड़िया लोग डाक पर नग को टांक कर किनारे के कुंदन के ओच रहे थे और एक ओर सुनार जंत्री में से तार खींच रहे थे। जौहरी लोग तकिया से टिके बैठे ऐसे नाना भांति के गहने कटिया पर जोख कर महाजनों को देते थे और उनसे ढेर की ढेर जमा गिना कर घर में धर लेते थे। इस तरह के माल बजार की बहार लेता हुआ कविचन्द राजा तथा जैचन्द के महलों के दरवाजे जा पहुंचा।

वहां देखते क्या हैं कि महलों में आने जाने वाले मनुष्यों की भीड़ के मारे राई डाली भी नहीं जा सकती थी। सदर दरवाजे पर नौबत झड़ रही है। हाथियों के घण्टों के ठनठनाहट और घोड़ों की हिनहिनाहट के कारण कान नहीं दिया जाता था। बड़े बड़े रजपूत राजा लोग मेघवत दीर्घ काय हाथियों पर कोई बाहर से भीतर जा रहे हैं और कोई भीतर से बाहर को आ रहे हैं। राजा जैचन्द का दुर्ग ऐसे मार पेंच का बना हुआ है कि साधारण अवस्था में उसमें छोटे बड़े सब सरलता से आ जा सकते हैं। परन्तु मौके पर अच्छे अच्छे रण कुशल योद्धाओं का भी पास फटकना कठिन है। ऐसे सुगम दुर्गम दुर्ग की रक्षा के लिये जैचन्द के पास

(१) इसी दृश्य देखने को कवि कहता "अधिकतर बरसात में और प्रायः कभी कभी सर्दी की चार बजे के पश्चात् जब पेड़ पर इकबारगी पीलापन छा जाता है इसीको दिन फूलना कहते हैं।

अस्सी लाख * फौज थी तिस में से एक लाख अग्न्यास्त्र चलानेवाले गोलन्दाज और तुपकची, तीन लाख सवार और एक लाख पैदल सदा ड्योढ़ी पर हाजिर रहते हैं और एक लाख राजपूत सदा दरबार में हाजिर रहते हैं। एक ओर बरसात के बद्दलों के बद्दलों की तरह गर्जना करते हुए और शंख बजाते हुए शंखध्वनि योद्धा अस्त्र शस्त्रों की साधना करते और परस्पर जोर आजमा रहे हैं। कोई कोई खम्भ ठोक कर मलखंभ पर उलटी सीधी कैंची लगाता है, कोई सौ सौ मन वजनी लोहे के गोले को उछाल उछाल कर कभी कलाई पर कभी भुजदंड पर और कभी सीने पर लेता है। कोई बान विद्या की साधना में दत्तचित्त होकर अष्टधाती लोह खंभ या मोटे मोटे तवों को बाण से बेध रहा है। कोई कोई पचास मन की जोड़ी मांजना है और कोई बड़े बड़े वृक्षों से लिपट कर जोर करते हुए अपनी सीना सहजोरी जना रहे हैं। कोई यों ही खड़े जोड़ के जोड़ परस्पर बाँह कर रहे हैं।

इन लोगों का यह बल पौरुष देख कर पृथ्वीराज का दिल दहल गया। वह बोला कविचंद देखो तो यह क्या कौतुक है। इन लोगों के सिर से पैर तक सर्वत्र मोर पंख सजे हुए हैं इन अवधूत तपस्वी पुरुषों के नेत्रों से सिंह का सा तेज प्रस्फुटित हो रहा है। और इनके भुजदण्ड मत्तवान हाथी जैसी सुंड हैं। मेरे जान जैचन्द की अस्सी लाख सेना का जी तो यही दस हजार योद्धा हैं कविचन्द ताड़ गया कि राजा कुछ मनहार हुआ है अस्तु उसने सामन्तों को भी इस बात की सूचना और उत्कर्ष देते हुए कहा "इनकी तो कोई फिकर नहीं इन सब की मौत तो अत्ताताई के हाथ है पर फिर भी जैचन्द का दल बल प्रबल है। भिन्न भिन्न भाषाओं के बालनथाल देश देश के योद्धा यहां हाजिर हैं।" कविचन्द की ऐसी बात सुनकर कोई कोई सामन्त कहने लगे "कॉई महाराज आज सवेरेही नौबत बजी। देखा जाय तो जैचन्द की फौज कैसी?" तब कविचन्द बोला रे सामन्त कुमारो क्यों जान बूझ कर आग में हाथ डालते हो? आटे का लौन भी तो नहीं हो, जैचन्द के द्वार पर तीन लाख योद्धा सदा सन्नद्ध रहते हैं। देखो काल पाकर कृष्ण भगवान जरासन्ध के सामने से भाग गए। राजा रामचन्द ने पतिव्रता सीता को त्याग दिया। पांचो पांडवों के देखते द्रोपदी का चीर खींचा गया और सब चुप रहे। समय पाकर सब करना पड़ता है। बुद्धिमानी की यही निशानी है कि जैसा देश वैसा भेष; तात्पर्य्य यह है कि इस समय सान दिखाने में नहीं बनेगा चुप चाप काम साधो। यह सुनकर पृथ्वीराज और सब सामन्त चुप होगए।

इसी तरह चलते चलते कविचन्द राजा जैचन्द के द्वार पर जा पहुँचा। वहां देखता क्या है कि सब द्वारपालों का सरदार हजम कुमार रघुवंशी एक ओर बड़े शान से बैठा हुआ है और कई एक अच्छे अच्छे डील डौलदार सुन्दर युवा द्वारपाल हाथ में सोने की छड़ी लिए हुए खड़े हैं। जो राजा रईस या महाजन लोग दरबार में जाने की इच्छा से आते हैं उनको ये लोग उचित आसन देकर इत्तला करने जाते हैं और फिर दर्बार में पहुंचा आते हैं। कविचन्द को देखकर उन सब ने बड़े नम्रता पूर्वक प्रणाम करके पूछा कहिए कहां से आना हुआ है, कहां जाइएगा और आप यहां किस अभिप्राय से आए हैं? इस पर कविचन्द ने कहा कि मैं शूर शिरोमणि दिल्लीपति महाराज के दर्बार का कवि हूं और मेरा नाम कविचन्द है। द्वारपाल बोला सच

(*) कनौज के राजा जैचन्द के पास अस्सी लाख फौज का होना पढ़ कर आपको आश्चर्य होगा और आप इसे कवि की अत्युक्ति समझेंगे; परन्तु यह अस्सी लाख फौज कभी थी तो सुनिए। इस समय जिस किसी आदमी राजा के नाम से जितने राजपूत होने थे वे सब जब इसी राजा के सैनिक समझे जाते थे। और यही बात अब तक यहीं है भेद एक पञ्चाब छोड़ कर सारे हिन्दुस्तान में जैचन्द का दुहाई फिरती थी। इस समय बुन्देलखंड के कुल राजा मिलाकर एक कराड़ को भाव से अधिक के नहीं है। सब राजों की कुल वर्तमानिक फौज ४० वा ५० हजार से अधिक न होगा पर अवैतनिक फौज में पांच लाख भाई सामन्त है।

है मंगन को किसी की संधि और विग्रह से क्या ! धन्य है महाराज जैचन्द को जिसके वचन-मात्र से दुनिया का दरिद्र दूर होता है और जिसके प्रधान सब से दरद छेते हैं। ऐसे राजा जैचन्द के समान जोरावर न तो कोई हुआ है न होगा; जिसकी आन हिन्दू मुसल्मान दोनों दीन मानते हैं। इस पर कविचन्द ने हँस कर कहा ठहरो तो कल्ह मालूम पड़ता है कि कौन कैसा सहजोर है।

द्वारपाल ने इस पर कुछ उत्तर न देकर उसे सादर आसन दिया और कहा कि आप जरा देर ठहरिए। मैं अभी आपकी खबर करता हूं परन्तु द्वारपाल का स्वामी हेजमकुमार बोला ऐसा तो नहीं है कि राजसूय यज्ञ देखने और यहाँ का भेद लेने दिल्ली से आए हुए आप कोई बसीठ हों। इस पर कविचन्द बोला कि कवि लोग बसीठी नहीं करते ऐसा करने से भेद खुलने पर हमारी सारी इज्जत मिट्टी में मिल जाय। यद्यपि हम मांगते है पर पृथ्वीराज के दान से तृप्त होकर हमें धन पाने की भी विशेष लालसा नहीं है। हमारा तो सब राजाओं के दर्बार देखना ही एक नियम है इसी से आए हैं। तब हेजम कुमार बोला हां आप मंगन है पर आपके साथी मंगन नहीं हैं। इस पर कविचन्द ने मुस्करा दिया और हेजमकुमार ने कहा आप तो राज काज के नियम स्वयं जानते हैं घरीक ठिरमिए मैं अभी जाकर आपकी जाहिरी करता हूं।

कविचन्द से यह कहकर हेजम कुमार दर्बार में गया और जैचन्द के सिंहासन के सम्मुख हाथ जोड़ गरदन नीची करके खड़ा होगया। जैचन्द ने उसकी ओर दृष्टि की तो उसने सिर झुका कर बड़ी नम्रता से प्रणाम किया और विनीत भाव से कहा "महाराज दिल्ली के दर्बार का राज्य कवि कविचन्द बर्दाई श्रीमान के दर्शनों की अभिलाषा से आया है वह बड़ा अच्छा कवि जान पड़ता है उसकी बात बात में रस भरा हुआ है उसकी वाणी समुद्र के समान है, जिसमें उक्ति रूपी अपार तरंगें उठती है, जो युक्ति रूपी सीमा से बाहर कदापि नहीं होतीं और उसका वचन चातुर्य्य ही उसके काव्य समुद्र का रत्न है। वह पुरुष जैसा गुणी है वैसाही मानो आडम्बर युक्त भी है। अस्तु उसे मैं ड्योढ़ी पर रोक कर श्रीमान् के चरणों में सूचना देने आया हूं। जैसी आज्ञा हो ?

ईश्वर जिसे जो पद या वैभव देता है उसीके अनुसार उसे बुद्धि और विचार विवेचना भी देता है। हेजमकुमार की बात सुनकर जैचन्द ने दर्सोंधी को बुलाकर आज्ञा दी कि वह जाकर कविचन्द से मिले और देखे यदि वह दर्बार में आने योग्य हो तो उसे यहां लावे नहीं तो वहीं का वहीं बिदा कर दिया जावे। जैचन्द ने कहा मैंने चार प्रकार के कवि सुने हैं. ब्राह्मण, मुनि ब्रह्मचारी और ठफ। इनमें से तीन तो कवियों के ही भेद हैं परन्तु चौथे वे हैं जिन्हे काला अक्षर भैंस बराबर होता है, काव्य कला, ज्ञान, विज्ञान, अर्थ, अनर्थ, मरम, निरम आदि वे कुछ भी नहीं जानते। इधर उधर से चार छन्द सीख लिए और कवि बन गए। यदि कविचन्द भी कोई ऐसाही हो तो कुछ दे दिवा कर दूर करो पर यदि छहों भाषाएँ नवो रस, ज्ञान विज्ञान और साङ्गोपाङ्ग काव्य का जानने वाला कोई विद्वान और बुद्धिमान कवि हो तो खुशी से उसे मेरे पास लाओ। इस प्रकार जैचन्द की आज्ञा पाकर जब वे दर्सोंधी और कविलोग कविचन्द के पास आए और उस से बातें कीं तो उनका हृदय जाब से दिल खुश हो गया। वे कविचन्द से क्या मिले मानो किसी भूखे को दूध भात का भोजन मिला।

जैचन्द के दर्सोंधी ने जो जो प्रश्न किए कविचन्द ने उनका यथार्थ उत्तर दिया। प्रश्नोत्तर होते होते दर्सोंधी ने कहा कि हमारे महाराज

[१] एक सौंच आने के मंगन। इस समय में पढ़े लिखे नहीं होते केवल गाने बजाने का रोजगार करते हैं परन्तु कोई कोई अब भी राजदर्बारों के आश्रित हैं सो वा तो रंडी वा गवैय्या मात्रा की जांच परख का काम करते हैं और नाजिर कहलाते हैं। वा सवारी शिकारी में कहीं जाते हैं और मांगड कहलाते हैं।

श्रीधर का इष्ट रखते हैं कुछ इस विषय में भी कहिए। तब कविचन्द बोला कि श्रीमानों में श्रेष्ठ श्रीवर श्री सदा जिसके हाथों में रहती है वह श्रीवर और साक्षात् श्री का स्वामी श्रीपति वसुधा का भार हरने हारा द्रौपदी का चीर बढ़ाने वाला विमल विट्ठल भगवान श्रीकृष्णचन्द आनन्द कन्द सदा स्मरण करने योग्य हैं। उस भक्तभयहारी मुरारी ने गज को ग्रह से बचाया, राजा मान का मान रक्खा और विपा को विष के बदले सुधा दी। उसने महाभारत में अर्जुन का रथ हाँक कर अठारह अक्षौहिणी कौरव दल का नाश किया और इस पर जब अर्जुन को गर्व हुआ तो उसने समस्त भारत का भविष्य उसे अपने मुख में दिखा कर उसका गर्व दूर किया। वह अविनाशी गोलोकवासी भगवान सारी सृष्टि का हरता करता और धरता है। वह स्वयं प्रकृति पुरुष है और जग की जंजाल रूपी माया उसके चरणों की दासी है और उस भारत पुरुष के मुख में निवास करनेवाली भारती में इन छहो भाषाओं और नवो रसों की उत्पत्ति है। उस भारती भवानी के कमल सदृश मुखारविन्द दाड़िम के दानेवत रत्न, अचंचल चारु लोचन, सुकनी की सी नासिका, केसर के समान सूक्ष्म और सचक्कन कारे सटकारे केसों से गुथी सर्पणी सी वेणी और इन्दु के समान उज्ज्वल ललाट आदि छः अंगों से ये छः भाषाएँ उत्पन्न हुई हैं।

कविचन्द के ऐसे बचन सुन कर कन्नौज के राज्यकवि और दसौंधी का चित्त प्रसन्न हो गया। उन्होंने कविचन्द को सादर उच्च आसन देकर बड़े प्रेम से पूछा आप दिल्ली छोड़ कर पृथ्वीराज के पास से क्यों चले आए? कहिए घर में सब कुशल तो है। इस पर कविचन्द ने उत्तर दिया कि आप इसका क्या पूछते हैं पृथ्वी तल पर सर्वत्र विचरना और सज्जन दुर्ज्जन की पहिचान करना ही हमारा व्यवसाय है। जिस गंगराज को देखकर इन्द्र का गर्व गिरता है और जिसे एक पृथ्वीराज के सिवाय और सब क्षत्री नवते हैं मैं दिल्ली से उसीका दर्बार देखने आया हूं और कुछ नहीं है। तब दसौंधी बोला सो सत्य है पर आप महाराज जैचन्द को किस प्रकार से प्रसन्न कर सकते हैं क्या आप कुछ अदृष्ट भी वर्णन कर सकते हैं? इस पर कवि कुछ उत्तर न देकर कुछ सोचता सा रह गया। तब दसौंधी ने फिर कहा कि कविचन्द यदि आप सरस्वती के सच्चे बर्दाई हैं तो गंगराज की सभा का कुछ अदृष्ट वर्णन कीजिए। यह सुनकर कविचन्द बोला अच्छा सुनिए मैं सभा का सविस्तर छन्दोबद्ध वर्णन करता हूं आप लोग मेरी काव्य प्रणाली पर पूर्ण ध्यान रखिए। कविचन्द का ऐसा कथन सुनकर और दस पांच पंडित लोग कह उठे भाई देखो सुनो बात पर सब कोई काव्य रचना करते हैं पर अदृष्ट प्रबन्ध पर आशु छन्द कथन करना कठिन काम है।

कविचन्द बर्दाई बोला कि कन्नौजराज महाराज जैचन्द एक बहुमूल्य रत्नजटित गजमुक्ता सिंहासन पर विराजमान हैं, उनके शीश पर सुमेरु गिरि की शृंगों के समान जाज्वल्यमान उज्ज्वल सोने का कोट सुशोभित है। उनके सिंहासन के दाहने और बाएँ पार्श्व में देश देशान्तर के राजा लोग बैठे हैं जिनके ऊपर स्वेत रजत छत्र छहरा रहा है। सिंहासन के सम्मुख विद्वान पंडित और कवि लोगों का आसन है और उनके पीछे नर्तकी और गायकगण बैठे हुए हैं। राजा के ऐन पीछे चाँदी की डाँड़ी वाला छत्ता लिए हुए एक खवास खड़ा है और उसके अगल बगल दो चौंर लिए खड़े हैं। दाहिनी बगल का मोरछल वाला है और तिसके पीछे अन्यान्य खास परिकर के लोग और खासबरदार लोग खड़े हैं। उन अद्वितीय तेजस्वी महाराज जैचन्द का मुख मंडल साक्षात् बाल प्रभाकर के समान दमदमा रहा है, समस्त अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित शस्त्रधारी क्षत्री मात्र उनके हृदय के हार हो रहे हैं केवल एक मात्र पृथ्वीराज ही ऐसा है जो उनके गले में गरल

सा गढना है। महाराज के हाथ में एक नीली चोंच वाला लाल रंग का तोता भी है। उस तोते के पंखों पर बिजली से उज्ज्वल दो पद्म हैं। वह बड़ा ही चतुर और बुद्धिमान पक्षी है। जो बात पंगराज के मुँह से निकलती है वही वह कहता है। इसके सिवाय और भी वह ऐसी प्यारी प्यारी बातें करता है और रकम रकम की बोली बोलता है कि सुनने वाले का मन मुग्ध हो जाता है और आश्चर्य होता है कि हैं एक चिड़िया में ऐसी करामात! वह सुग्गा इस समय ककड़ी खा रहा है। राजा के बगल में एक बाज बैठा है। इस समय अन्यान्य सब राजा रईसों के सिवाय एक सहस्र शंखधुनी भी दर्बार में उपस्थित हैं।

इस प्रकार से कविचन्द का कथन सुनकर सब लोग आश्चर्यान्वित होकर चुप रह गए। दसौंधी ने कवि की प्रशंसा करते हुए कहा यह तो हुआ अब आप दर्बार में उपस्थित सब योद्धाओं के नाम कह जाइए तब जानें। इस पर कविचन्द ने एक एक करके सब दरबारियों के नाम भी कह सुनाए।

कविचन्द कथित राजा जैचन्द के दर्बारियों की नामावली।

नम्बर	नाम	जाति	विशेष
१	रयसल राय	कमधुज्ज	जैचन्द का चचेरा भाई।
२	बीरचन्द	"	रयसल का सगा भाई।
३	मानराय	यादव	
४	गुजरान बीर		
५	कास नरिंद	सूर्य्यवंशी	
६	नृसिंह राय	बघेला	
७	कंठिया राय		
८	प्रतापसिंह		
९	रामरेन राय	कंठेर	करनाटक का सूबेदार।
१०	सारंगराय	भट्टी	
११	मुकुन्दराय	(मोरी) प्रमार	
१२	बीरमराय		दूसरा नाम (नरपाल बीर)
१३	महादेव		तलवार के युद्ध में दक्ष था।
१४	हरसिंहराय		
१५	पूरनराय	सोलंकी	
१६	गोइन्दराय	प्रमार	
१७	प्रतापराय	हम्मीर	
१८	सत्रुलाल		पहाड़ी युद्ध में निपुण।
१९	सांखुलाराय		पाटन का राजा।
२०	सावन्तराय		मल्ल युद्ध में अद्वितीय था।
२१	बीरभद्र	बघेला	राज्य भर के सब किलों का किलेदार।

नम्बर.	नाम	जाति	विशेष
२२	राजा कृष्णराय		
२३	मुकुंदराय		
२४	जैसिंह सूर		डेवा (बाएँ हाथ से हथयार करनेवाला)
२५	रनवीरराय	राठौर	
२६	चन्दसेन	प्रमार	समस्त राठौर राजपूतों का पृथकसेनाध्यक्ष
२७	भीमदेव		आजानबाहु।
२८	नरसिंह सूर	सौलंकी	
२९	रुद्रसिंह	कंठेर	
३०	श्रीरामसेन		विजित राजाओं का नेता।
३१	सांखला देव		
३२	राय राम चन्द्र राव		रानिग।
३३	हम्मीर सेन		समस्त चतुरंगिनी सेना का सेनापति।
३४	सारंग सूर	जाट	
३५	जैसिंह	राठौर	
३६	भीमराय	प्रमार	
३७	अर्जुन राय	निमकुलोत्पन्न	
३८	असोक राय		
३९	बीरभद्र	चन्देल	
४०	सहदेव		
४१	केहरी ब्रह्म	मौलंकी	
४२	हरिचन्द	चौहान	
४३	हरसिंह राय		पासवानों का अफसर।
४४	निसुरत्त खां	मुसल्मान	
४५	ममरेज खां	"	
४६	मीर महबल खां	"	
४७	आरास खां		पीरोज खां का भाई।
४८	कम्मोद खां	"	
४९ ५०	अल्ला खां	"	दोनों भाई।
५१	महमूद खां	"	
५२	अवदुल्ला खां		राजा जैचन्द के चौरवरदार।
५३	सुलेमान खां		"
५४	हरबीर राय		मंत्री के बाएँ हाथ खड़ा हुआ.
५५	मुकुंद	(सिवरा)	गायक (गानेवाला)
५६	श्रीकंठ	कवी	राजा के सिंहासन के साम्हने हाजिर
५७	कमल भटट	राज प्रोहित।	रहने वाले।

कविचन्द बर्दाई को काव्य कला सम्बन्धी सब प्रकार की परीक्षाओं में उत्तीर्ण पाकर दसौंधी सहर्ष दर्बार में वापिस गया और मंगल, बुध, गुरु शुक्र, शनि तथा अन्यान्य नक्षत्रों के बीच में चन्द्र के समान सुशोभित राजा जैचन्द से बोला "कविचन्द बर्दाई बड़ा ही विद्वान और अद्वितीय चतुर पुरुष है, वह छहों भाषा नवों रस और काव्य के अन्यान्य सब प्रकरणों में सांगोपांग दक्ष है। वह त्रिकालदर्शी कवि दृष्ट अदृष्ट सब प्रकार की काव्य रचना करता है। तात्पर्य्य यह है कि वह श्रीमान् की सेवा में उपस्थित होने के योग्य है। कवि की ऐसी प्रसंशा सुनकर जैचन्द ने उसे दर्बार में बुलाए जाने की आज्ञा दी। प्रतिहारी कविचन्द के पास पहुँचा ही था कि तब तक महल की एक दासी जल का घड़ा लिए हुए निकली। उसे देखते ही कवि बोला आह आश्चर्य है। चन्द की सहायता होने पर भी इस मुखचन्द पर भी ये दंद फद, एक अरविन्द पर दो मलिन्द द्वन्द करें-मृग मृग-बाहन से लरें और सरासर दिन को भी शृंगार श्रांत के आर पार बैठे चक्रवाक चौंका करें। सूर्य्य के प्रकाश में कमोदिनी प्रफुल्लित है और योगी हो कर भी काम क्रीड़ा में उन्मत्त हैं। इसी प्रकार से और भी उक्ति युक्ति मय बातें करते सबको हँसाते हुए कविचन्द मर्जयोरिया में जा पहुँचा। वहां से दर्बार साफ देख पड़ता था। कविचन्द देखता क्या है कि पूर्व्व दिशा में उदित अशुमाली भगवान के समान प्रतापवान जैचन्द अपने सब मुसाहिबों के बीच में सुमेरु सा अचल डटा बैठा है। उस यशस्वी महाराज जैचन्द के शीश पर आच्छादित रजत छत्र ऐसा सुशोभित होता था जैसे शरद के चन्द्रमा का प्रतिबिंब या धर्म का समूह पर्व्वताकार होकर छहरा रहा हो तथा चार निधि की आभा, मोतियों की प्रभा, कल्पतरु के पुष्प सहस्त्र दल वाले श्वेत कमल, हिमांचल ने जैचन्द की सुकीर्ति का सहायक होकर उसकी छाया करने को छत्र स्वरूप धारण किया हो।

महाराज जैचन्द की आज्ञा पाते ही हेजमकुमार ने कविचन्द को सिंहासन के सम्मुख जाने का आदेश किया और तदनुसार कवि ने दर्बार में जाते ही दोनों हाथ उठा कर राजा को आशीर्वाद दिया; आशीर्वाद देते हुए कहा "जैसे सब ग्रहों में सूर्य्य और चन्द्रमा, रत्नों में लाल, देवताओं में नारायण, विषयी लोगों में कामदेव, सब गुणों में शील, वर्णों में उक्ति, समस्त इन्द्रियों में चंचल चित्त श्रेष्ठ है उसी प्रकार पहुमी पर के भूपतियों में श्रेष्ठ महाराज दल पुंगुरे को कविचन्द आशीर्वाद देता है।

तत्पश्चात् उसने कहा। इस दर्बार में विराजमान अन्यान्य राजा लोग मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि आदि ग्रहों के मंडल एवं दिगपाल से सुशोभित होते हैं और उनके मध्य में महाराज जैचन्द दिग्पालों के स्वामी से प्रतीत होते है; अहा! इस राजसी आडंबर को देख कर इन्द्र का चकितचित्त होना सम्भव है। मैं कहूं तो क्या कहू। धन्य हैं! इस सभामंडप में विराजमान महाराज जैचन्द को देखकर ऐसा आभास होता है मानों परमात्मा ने पृथ्वी पर दूसरा इन्द्र सिरजा हो, जहाँ तहाँ रंग विरंगे गलीचों की आभा बरसात के बहु रंग बदरों को मात करती हैं। ये रेशमी और ऊनी रोएँ जो सुनहरी तार पट्टी से गुँथे हुए है ऐसे मालूम होते हैं मानों पृथ्वी सूर्य्य की किरणों के साथ साथ चल रही हो, बीच में जड़ी हुई नीलम और माणिक की नन्ही नन्हीं चुन्नी ऐसी भली मालूम होती हैं मानो समुद्र में रकम रकम की मछली पैर रही हों। महाराज के बाजुओं पर दुरते हुए चौंर ऐसे प्रतीत होते है मानो सूर्य्य की प्रखरता देख कर चन्द्रमा ने आन की हो और सीस पर जड़ाऊ छत्र तो साक्षात ऐसा सुशोभित होता है मानो नवग्रह परस्पर विरोध भाव छोड़

(१) हरबानगृह और पौरि के बीच वाला एक ऐसा मुकाम जिसमें दरबार के मानि जाने वाले लोग किंचित विश्राम ले लेते हैं।

कर महाराज की छाया के लिये छत्राकार हो गए हों और करोड़ो काम की कलाओं के समाज दिव्य द्युतिधारी महाराज की तो मैं क्या प्रसंशा करूं।

राजा जैचन्द कविचन्द की इस काव्यकला पर तन मन प्रसन्न हो गया। उसने कवि की प्रशंसा करते हुए उसे उचित आसन पर बैठने की आज्ञा दी। यह देखकर और और दर्बारी लोग भी "वाह वाह के पुल बाँधने लगे" जैचन्द ने कहा कविचन्द में तुमसे पृथ्वीराज के विषय में कुछ प्रश्न करना चाहता हूं। क्या तुम सत्य सत्य उत्तर दोगे। यह सुनकर कविचन्द बोला जिसके अचल दल बल के आतंक से फनीशपति सटपटाता है और कमठ की खोपड़ी खड़ खड़ भी है जिसके दल के चलने से आकाश में आच्छादित धूलि के कारण सूर्य्य प्रच्छन्न हो जाते हैं और जिसके द्वारे से दसों दिग्पाल वायुबाधित दीप शिखा से डगमगाते हैं उस नरश्रेष्ठ राजा जैचन्द के सामने किसकी सामर्थ है जो असत्य कह सके। श्रीमान् जैसी बात होगी वैसी कहूगा।

तदनन्तर कवि राजा जैचन्द की विरदावली बखान करने लगा। उसने कहा जिसने अपने आसन के आस पास सर्वाङ्ग सन्नाह से सुसज्जित ठट के ठट सूर वीरों के बल से पृथ्वी और धर्म के बल से दसों दिशाओं के दिग्पालों को जीत लिया है, जिसने शाह के सहित अन्यान्य सब राजाओं की श्री हीन करके सब पर अपना आतंक जमा लिया है, जिसने निरहुत में अपना थाना बिठा दिया, सेतबन्ध तक समस्त दक्षिण देश अपना लिया, कर्ण डाहल को दो बेर बाँधा, सिद्ध चालुक्य को कई बार परास्त किया, तिलगाना और गोलकुंडा पर अपना निशान रोप दिया, गुड जीरा को बाँध कर छोड़ दिया, बैरागर को ले लिया और शाह जिसका मित्र होकर अपने भाई निसुरत्त को जिसके दरबार में दूत बनाकर रखता है ऐसे बिजैपाल के पुत्र जैचन्द के प्रकोप से सारा जहान थर थर कांपता है पर केवल पृथ्वीराज ही एक ऐसा है कि जो जैचन्द को भी कुछ नहीं समझता। कवि के मुँह से भरी सभा में शत्रु की ऐसी प्रसंशा सुनकर जैचन्द क्रोध के मारे लाल हो गया। वह छूटते ही बोला भला जिसे ईश्वर ने ही मँगना बनाया उसका दरिद्र जाय तो क्योंकर जाय। राजा या धनी लोग दान द्वारा सदा धन रत्न की वर्षा किया करते हैं परन्तु जिनके सिर पर दरिद्र का छत्र आच्छादित होता है उन पर एक भी बूँद नहीं पड़ती।

राजा जैचन्द ने कविचन्द पर ताना मारते हुए कहा, मुँह का दरिद्री घास खाने वाला कृशतन पशु जंगली राव (भिल्ल) की शरण में रह कर भी दुबला क्यों है * तब कविचन्द बोला कि उस जंगली राव पृथ्वीराज चौहान ने घोड़े पर चढ़कर दूर दूर के देशों में अपनी दुहाई फेर दी। निबल तो उसके आश्रित हुआ है पर जो लोग अपने को सबल समझते थे वे भी उसके आतंक से डर कर कांप गए। उनमें से बहुतेरे तो बृक्षों के मूल में मूड़ डाल कर रह गए और बहुतेरे दांत में तिनका दाब कर उसके आगे आए। इस तरह से राजा पृथ्वीराज के शत्रुओं ने सब घास उजाड़ दी अब बरद क्या खा करके हृष्ट रहें। यह सुन कर जैचन्द बोला कि मोती न पाने से न्याय सम्पन्न हंस दुर्बल होता है। गजराज की गर्दन का रक्त न पाने से सिंह दुबला होता है, नाद

---

(१) कहावत भी है कि राजा के सिर पर बारह बीलिया की छाया रहती है।

(२) "परं तोर तिल्लग गोवाल कुड"

* बुह बापुरो अरु तुच्छ तन, जगल रवि सुहइ।
बन उजार पशुबन चरन, कबों दूबरो बरइ॥

यह शाखा दुर्भाग्य है बरद=बरसाई और बैल दोनों पर लगता है। बुह दरिद्र=बैल बिचारा खाता है नहीं कवि ने बुँह से बचन कह कर राजा को असन्तुष्ट किया। बन उजार=बन का बिगाड़ देने वाला वा बन उजारने वाला इत्यादि। इसी प्रकार कवि का उत्तर भी इसी भाव पर है।

के कारण बंधन में पड़ा हुआ मृग दुबला होता है छैला लोग मन की मौज न पाने से और स्त्री अपने यार के बिना दुबली होती हैं परन्तु बैल के दुबले होने के जो कारण होते हैं उनमें से इस समय एक भी उपस्थित नहीं हैं। देखो न तो आषाढ़ का महीना है जिसमें सूखी घास और भूसा खाने को मिले और रात दिन जुताई पड़ती हो, न रात दिन पुरवट (चरखी) खींचनी पड़ती है, न किसी गमार के पाले पड़ा है कि वह मनमाना बोझ लाद कर नाथ खींचता हो और ऊपर से डंडे जमाता हो, न रहट में चलाया जाता है, न रथ में जोत कर अरई लगा दी जाती है तब कहो वरद फिर भी दुबला क्यो है। इस पर कविचन्द ने प्रत्युत्तर दिया कि महाराज सुनिए जिसके स्वामी के यहाँ सहस्रों हाथी घोड़े उपस्थित हों वह रथ में कंधा क्यों दें, क्यों पुरवट खींचे, क्यों रहट में जुते और पीठ पर भार ढोवे। बात यह है कि पृथ्वीराज के शत्रुओं पर सदा शोक की घटा छाई रहती है अस्तु अपने स्वामी के सुयश बखान रूपी कुसिया से उसका हृदयरूपी क्षेत्र जोतने में रात दिन लगा रहता है उधर वे लोग सब खर खा लेते हैं इसी से वरद दुबला है। देखिए पहिले नागौर में शहाबुद्दीन बाँधा गया। फिर सांभरी में भीमदेव सौलंकी परास्त किय गया, फिर मेवाती मुगलों का मुँह मोड़ा गया- इसी प्रकार और भी जानिए। बस इन सब विजित शत्रुओं ने दांत में तिनकें दाब दाब सब घास चौपट कर दी अब भी वरद दुबला न हो तो क्या हो।

कविचन्द का ऐसा कथन सुनते ही जैचन्द के सिर से पैर तक आग लग गई। उसके ललाट में त्रिवली पड़ गई भौंह चढ़ गई आंखें ईंगुर सी लाल हो गई और होठ फड़फड़ाने लगे। उसने दाँत पीसते हुए छाती पर हाथ रख कर एक ठंढी सांस ली और शत्रु की प्रसंशा करने वाले कविचन्द की तरफ गैर की तरह देखते हुए एक अंडाई लेकर कहा 'हां यदि पृथ्वीराज मेरे साम्हने आवे तो बताऊं।' जैचन्द की यह दशा देख कर कविचन्द बोला त्रिलोकी के मालिक कैलाशपति शिव बैल पर सवार हैं उनके गले में सर्पों का हार है और सर्प के शिर पर यह पृथ्वी है जिस पर सातों समुद्र और सुमेर शिखर स्थित हैं। सप्तपुरी और ब्रह्म पुरुष भी उसी पृथ्वी पर हैं अतः यह मेरे अहोभाग्य हैं कि महाराज दल पंगुर ने मुझे वरद (बैल) की उपाधि प्रदान की है। कवि की यह उक्ति सुनते ही जैचन्द का गुस्सा ठंढा पड़ गया उसने कहा वाह कविचन्द बहुत अच्छे। क्या करूं पृथ्वीराज मुझे मिलते ही नहीं। उनके पिता मेरे पिता के मामा * होते थे उन दोनों में परस्पर जैसी चाहिए वैसी पटती रही। जब सोमेश्वर जी का दिल्ली में व्याह हुआ है तब उन्होंने बहुत सा धन रत्न दिया था। तब से फिर अब तक कुछ नहीं लिया दिया। तुम जानते हो कि ज्यों ज्यों दिन बीतते जाते हैं त्यों त्यों दान का ऋण अधिक होता जाता है सो हम और कुछ नहीं चाहते जैसे और सब राजा लोग इस दरबार में आते हैं वैसे वे भी आवें उनका घर है।

यह सुन कर कविचन्द बोला कि आपका जो हुक्म होता है सो ठीक है पर वे अपनी कैसी करते ही जाते हैं। एक बार की बात है जब कि आप दक्षिण देश को विजय करने गए थे तो इधर कन्नौज राज्य को सूना जान कर गजनी का यवन बादशाह चढ़ आया परन्तु सामतों के स्वामी संभरीनाथ ने उसे इस तरफ बढ़ने भी न दिया; वहीं आग बढ़ कर सरहद पर जा लिया और मार कर उलटा भगा दिया। और यह बात भी है कि चौहान आपके दर्बार में कभी नहीं आए हैं। आपके बड़े रघुवंश राय ने जब यज्ञ किया था तब भी मालिक राव जी न आए थे अब आपके यज्ञ में

* बालुकाराव समय के १० वें छन्द से भी यही बात पक्की होती है कि पृथ्वीराज जयचन्द के मामेर कुल में थे। यथा.-पुक्कल दून परमेष्ठ काज, मातुलह वस पृथ्वीराज राज॥

राजा पृथ्वीराज आवें सो क्यों कर आवें। इस पर जैचन्द बोला कि मुझको खबर नहीं है कि गजनी शाह कब चढ़ आया था और चौहानों ने कब मेरा राज्य बचाया था। इस बात को सविस्तर कहो।

तब कविचन्द बोला कि संवत ३४ की बात है जब कि उधर आपने पूर्व्व में समुद्र के किनारे तक दिग्विजय करके दक्षिण देश पर चढ़ाई की तब इधर गजनी पति शहाबुद्दीन ने कन्नौज राज्य को सूना समझ कर अपने मीर मुसाहबों से सलाह की कि इस समय चढ़ाई करके यदि कन्नौज पर दखल कर लिया जाय तो अच्छा हो; अबल तो असख्य धन धान्य हाथ लगे दूसरे सारे हिन्दुस्तान पर अपना कब्जा हो जाय। निदान तत्तारखां निसुरत्तखां और मारुफखां आदि मुसाहबों ने उसकी आज्ञा सिरोधार्य्य करके तीन लाख फौज सजी। जिस समय आषाढ़ के मेघों की भाँति धौंसा चमकाती हुई शाह की चतुरंगिनी सेना हिन्दुस्तान की तरफ चली तो उसके आतंक से सब हिन्दू शासक दबक कर रह गए। शाही सेना के आगे आगे चौकी चलती थी और उसके पीछे सेना सहित शाह स्वयं चला आता था अस्तु जब शाही चौकी कुंदनपुर के पास पहुँची तो वहा के बघेले सरदार ने हथियार पकड़े और शाही चौकी के सिपाहियों को मार कर भगा दिया। जब शहाबुद्दीन को यह समाचार मिला तो उधर से तत्तारखां एक लाख सेना लेकर कुंदनपुर पर चढ़ आया। इधर राय रनसिंघ बघेला भी अपनी सेना सहित मैदान में जा डटा। हिन्दू मुसल्मान दोनों दलों की परस्पर खूब लड़ाई हुई प्रातः काल से लोहा बजते बजते जब मध्यान्ह काल होने को हुआ तो बघेला सरदार और तत्तारखा की परस्पर बरनी ठन गई। दोनों वीर अपनी अपनी तलवारें निकाल कर एक दूसरे पर अपनी अपनी दाव घात तक कर वार करने लगे। इतने में शहाबुद्दीन ने एक बाण ऐसा मारा जो कि राय रनसिंह के कलेजे पार हो गया। इस लिये वह तो उसी दम धराशाई हुआ पर तत्तारखां की खोपड़ी पर भी एक ऐसा हाथ मार कर मरा कि जिससे वह भी खेत में खड़ा न रह सका।

राय रनसिंह के मरने पर राजपूत सेना तो फिर बेदूलह की बरात ठहरी कब तक थम्हे। निदान मुसल्मानी सेना ने कुंदनपुर के किले पर अपना थाना जमा दिया और वहा से गांव के गांव लूटने पाटने और प्रजा को उजाड़ते हुए मुसल्मानी लश्कर आगे बढ़ा। निदान जब वह मुसल्मानी लश्कर आल्हन सागर तक आ गया तब पृथ्वीराज को समाचार मिला। उस समय राजा पृथ्वीराज नागौर में पड़े हुए थे। उक्त समाचार पाकर काका कन्ह, चहुआन राय, वीरसिंह, लक्खन बघेला, लोहाना आजानबाह, चन्द पुंडीर, रामराय बड़ गुज्जर, विग्रराज चालुक और हाहुलीराय हम्मीर आदि सामन्तों को बुलाकर कहा कि देखो यह म्लेच्छ कन्नौज पर चढ़ा जाता है। यदि इसने कन्नौज राज्य पर हाथ डाल पाया तो कोई क्या कहेगा कि हिन्दू राजाओं में कोई भी ऐसा न निकला जो अपनी मर्य्यादा की रक्षा करता इस लिये मेरी इच्छा है कि शहाबुद्दीन को इधर बढ़ने ही न देना चाहिए। राजा की ऐसी मर्जी पाकर रणोन्मत्त सामन्तों ने उसी समय अपनी अपनी सेना तय्यार की और राजा के साथ हो लिए, उक्त सामन्तों को साथ लेकर पृथ्वीराज तो चल पड़े और मुझे कैमास और चामण्डराय को बुलाने के लिये भट्टू पुर को भेजा। पृथ्वीराज ने दिन दूनी रात चौगुनी मंजिल मारते हुए सारुण्डे में डेरा डाला। वहा खबर मिली कि शाही सेना वहां से सात योजन यानी अट्ठाइस कोस के फासिले पर है वहा से आगे चलने की तय्यारी हो ही रही थी कि तब तक चामण्डराय भी आ पहुंचा और चलती मिलती में राजा के साथ हो लिया। सारुण्डे से एक पड़ाव आगे चल कर शङ्करपुर के बगीचे में डेरे पड़े। यहां पर पृथ्वीराज ने फिर से सब सामन्तों से पूछा कि शाही सेना सबल है और हम लोग छरीदा हैं। दूसरे मेड़े डांड़े का मामला

ठहरा इस से रात को पसर की जाय तब बात ठीक उतरेगी।

चामण्डराय की बात सब ने स्वीकार की और तदनुसार सात घड़ी दिन रहते से बम बोली गई। चलते चलते कोई पहर रात्रि गई होगी कि शाही सेना की वही अग्रगामिनी चौकी आबड़ में पड़ गई और राजपूत सेना ने चढ़ी सवारी उसी पर पसर कर दी। वहां क्या था दस पांच सौ सिपाही थे सो मार काट डाले गए उन में से दस पांच जो बच भागे उन्होंने तत्तारखां को खबर की। अस्तु जब तक राजपूत सेना नजदीक पहुंचे कि तब तक मुसल्मानी सेना सब प्रकार से सचेत और सन्नद्ध हो रही परन्तु रात का मौका ठहरा और राजपूतों को उस मैदान के सब घाट घाट और मौके मालूम थे इस लिये उन्होंने ऐसे मोरचे बाँध कर धावा किया कि हजार हाथ पांव मारने पर भी मुसल्मानी सेना उनसे पेश न पासकी। दोनों दल के सिपाही अपने अपने तेग, तलवार, कटार, छुरी, बगुरदा, पेशकब्ज, बाने, सेल साँग आदि शस्त्र निकाल कर एक दूसरे से जूझ पड़े। घड़ी भर में लोहू की नदी बह निकली और जहाँ तहाँ लोथों के अटम्ब लग गए। सौभाग्य वश उसी समय कुछ चन्द्रोदय हो गया जिससे चामण्डराय ने शहाबुद्दीन के हाथी को नजर में दे लिया और मार काट करते हुए उसके पास तक पहुंच कर उसने एक ऐसी सेनी चलाई कि हाथी के कलेजे में तिहाई डट गई, बस हाथी तो होदा फाड़ कर भाग गया और शाह वहीं पर गिर पड़ा। उसका गिरना हुआ कि चामण्डराय ने उसके गले में कमान जा डाली और उसका बाजू जा पकड़ा।

इस प्रकार से तीन लाख मुसल्मानी लश्कर का मुँह मोड़ कर और शहाबुद्दीन को बन्दी बना-कर राजा पृथ्वीराज ने उस जगह से पाच कोस पर करपुर में मुकाम किया। और दो दिन बाद आठ हजार स्वर्ण मुद्रा दण्ड में लेकर शाह को सादर गजनी को विदा किया। इस युद्ध में आठ हजार मुसल्मान मारे गए थे पर राजपूतसेना की थोड़ी कुछ थोड़ी सी खेत हुई थी।

यह सुनते ही राजा जैचन्द ने हँस कर पूछा कि उस पृथ्वीराज के पास ऐसी कितनी सेना है और उसमें कितने सूरमा हैं जिनका तू ऐसा बखान करता है। इस पर कविचन्द बोला कि महाराज मैं उन संभरी नरेश के दल बल का क्या बखान करूं कि उनके दरबार में कितने छत्रधारी हैं। उनके परि-कर में कितने हाथी घोड़े हैं; अथवा उनकी सेना में कितने सूरमा हैं और वे कैसे कैसे बलवान और पराक्रमी हैं। बस इसीमें समझ लीजिए कि तमहर की तरह तेजस्वी पृथ्वीराज जिस तरफ को आँख उठाकर देख देता है उस तरफ तिमिर की तरह उसके शत्रुओं का पता नहीं पड़ता। प्रथम तो उस के दरबार में ऐसे ऐसे सामन्त हैं कि जिनका नाम जहान में जाहिर हो रहा है, दूसरे वे स्वयं ऐसे बलवान हैं कि जब हाथी पर तलवार का हाथ करते हैं तो वह ककरी की तरह कट कर दो हो जाता है और हाथों से हाथी के खीसे मूली की तरह उखाड़ लेते है। अधिक कहां तक कहूं जब तक कोई शत्रु उन पर एक हाथ उठावे कि तब तक वे पचास हाथ मार जाते हैं। क्या कहूं महा-राज पृथ्वीराज सरीखा दुनियां में कोई दूसरा है ही नहीं। अब पटतर दूं तो किसकी दूं और आपको बताऊं कि पृथ्वीराज ऐसा है। जैचन्द बोला कि छत्रधारी के लक्षणों संयुक्त यहां इतने मुकुटबन्ध राजा बैठे है किसी की सिल्वी मिलती हो तो कहो— कविचन्द बोला कि बत्तीसों लक्षण संयुक्त छत्तीस वर्ष की वयवाला राजा पृथ्वीराज ऐसा तेजस्वी है कि बड़े बड़े ताप से प्रतापी राजाओं पर वह राहू होकर लगता है। कोई उसे पृथ्वी देते हैं कोई धन देते हैं कोई उसकी सेवा में तन और मन देते हैं कोई इधर उधर भाग निकलते हैं और कोई छाँह भी नहीं दाबते। महाराज वे पृथ्वीराज ईस उन-

(१) पृथ्वीराज कविचन्द के लेखक के वेष में पाप

हार के हैं। वे राजा पृथ्वीराज ऐसे हैं जैसे गोकुल में कन्ह, पार्थ के पुत्र अभिमन्यु, लंका में रावण और अयोध्या में दशरथ सुत रामचन्द्र हो गए हैं।

कविचन्द का हाव भाव देखकर जैचन्द के हृदय में दमारि सी लग गई। उसके कान, नाक, मुँह और आँखें और लाल लाल होगए। उसने चबड़ी बाँध कर गेदरी मीजते हुए कहा ऐसा राजपूत का बेटा कौन है? कविचंद बहुत चपचप चाबे न चलाजा नहीं तो यहीं खड़ा खुदवाकर गड़वा दूंगा। जैचन्द को इस तरह गुस्से में देखकर पृथ्वीराज का शरीर भी गुस्से से भर गया। उसने अपने को बहुत दबाया और आँखों की रंगत बदल ही गई। भला एक गायरे पर दो सिंह या एक हथिनी के साथ दो हाथी भी कहीं रह सकते हैं। ऐसे रंग ढंग देखकर जैचन्द के जी मे कुछ संदेह हो गया पर उसने बात टालकर कहा "कविचन्द तुमनें पृथ्वीराज की सुकीर्ति तो खूब बखानी और कोई अच्छे अच्छे कवित्त कहो।

गंभीर हृदय और बुद्धिमान राजा जैचन्द मन ही मन विचारने लगा कि पृथ्वीराज ऐसा प्रतापी पुरुष कविचंद की छग्गर लेकर मेरे दरबार में क्यों आने लगा। खैर जो हो अभी बिना समझे अधीर न होना चाहिए। यह सोच कर उसने कहा कविचंद देखो कहा सुनी में बृथा बात बढ़ जाती है कुछ और की और हो जाती है, यदि पृथ्वीराज मेरे सामने आवे तो उसी समय हम दोनों का फैसला हो जाय पर न जाने क्यों वे मुझ से मिलते ही नहीं। इस पर कविचन्द ने कहा कि महाराज पृथ्वीराज कोई ऐसे वैसे पुरुष नहीं हैं। वे बड़े नीतज्ञ हैं, जैसी आप को अपनी बात की बान पड़ी है तैसी उन्हें भी अपनी बात की बान है। राजा पृथ्वीराज चक्रवर्ती राजा अनंगपाल के निज दोहित्र हैं; उन्होंने जब अपने हाथों तिलक काढ़ कर दिल्ली राज्य दे दिया तब इसमें किसी का क्या उन्होंने वह राज्य किसी छल छिद्र से नहीं पाया है जो किसी से दब कर रहें। तब जैचन्द बोला कि सुनो भाई, मैं पृथ्वीराज से दिल्ली के राज्य पर से नहीं चिढ़ा हुआ हूं यदि ऐसा होता तो जब अनंगपाल शहाबुद्दीन की सहायता लेकर दिल्ली पर चढ़ आए थे तब मैं मुसल्मानी सेना का मोरचा मार कर पृथ्वीराज का ही पक्ष क्यों करता। मुझे तो गुस्सा इस बात पर है कि उन्होंने ठाले बैठे उपद्रव करके मेरा यज्ञ बिगाड़ दिया इस पर भी मैंने उन्हें हिन्दू जानकर बचा दिया नहीं तो मजा चखा देता कि जैचन्द से बैर बिसाहना ऐसा होता है। इस पर कविचन्द बोला महाराज भला ऐसा कौन है जो जानबूझ कर किसी के छल में फँस जावे, पितृद्रोही पर भी दया करे, सांप के मुँह में उँगली डाले और अपने पैर पर आप कुल्हाड़ी मारे। अपने बस भर सब उपाय दाव करने पर भी कोई चारा नहीं चलता तब कहने लगते हैं कि हमने तो बचा दिया। कहावत है कि नामर्दी तो खुदा ने दी पर मार मार बर्राना ही है।

कविचन्द से राजा जैचन्द ने हँस कर कहा कवि तुम बड़े जानकार पुरुष हो, क्योंकि तुमने बहुत से दर्बार देखे हैं कहो तो इस समय अपनी समयानुसार राजा अपनी रीति के लिये कौन सा सर्व श्रेष्ठ माना जा सकता है। देखो कविचन्द संसार में जो कुछ है सो नीति ही है। जो लोग यह समझते हैं कि नीति का केवल राज्य कार्य्य से सम्बन्ध है वे बड़ी भारी भूल करते हैं। सामाजिक वा धार्मिक व्यवहारों का धुरा भी इसी नीति पर धरा हुआ है। छोटे से लेकर बड़े तक सब कार्य्य इसी नीति ही द्वारा पूरे पड़ते है। पर हां इतनी विशेषता है कि जो राजा नीति विहीन होकर राज्य करता है उसे धर्महीन कुल कलंक क्षत्री को जीने से मर जाना भला है। इस पर कविचन्द ने उत्तर दिया कि

बान लिए हुए पीछे खड़े थे। तब क्या अब भी कवि लोग कविता कहते समय हाथ उठाकर आत्मश्लाघा का भाव बतलाते हैं अस्तु कविचन्द ने अपने पीछे खड़े पृथ्वीराज की तरफ हाथ उठाकर बतलाया था कि 'पृथ्वीराज बनिहारा है"। "बनिहार" शब्द का समसर और देखना ही अर्थ है यहां इससे यह स्पष्ट ध्वनि निकलती है कि देख ले है पृथ्वीराज।

धर्म्मावतार, यह भी तो बतलाइए कि इस कलिकाल में कहीं राजसूययज्ञ होता है; अब की क्या पहिले भी देखिए, राजा बलि ने यज्ञ किया सो बाँधे गए। चन्द्रमा ने कलंक काटन के लिये यज्ञ किया था सो उसका सारा शरीर जर्जर हुआ। राजा नघु ने यज्ञ किया था सो नर्क में पड़े। हां सीता के त्याग से दुखी होकर जब विचारवान रामचन्द्र ने यज्ञ किया था तब कुबेर स्वयं उनका सहायक था, द्वापर में पांडवों ने यज्ञ किया था सो उनकी सहायता पर श्रीकृष्ण भगवान थे, इस कलियुग में राजसूययज्ञ कौन कर सकता है। सतयुग में राजा कवल के पुत्र ने यज्ञ किया था सो इतनी लुटाई हुई थी कि स्वर्ण का दान लेते लेते ब्राह्मणों के हाथ थक गए थे। उसके पश्चात् राजा मरुत ने यज्ञ किया था जिसका दान पाकर मगनों ने जो फेंक दिया था उसमें सोने का एक पहाड़ बन गया था। उसके पश्चात् राजा ऐल ने यज्ञ किया था जिसने इतना साकिल्य होम किया था कि अग्नि उसको भस्म भी न कर सकी। यह सुनकर जैचन्द बोला कि किसी की मममरी जोड़ने से क्या जिसकी जितनी श्रद्धा होती है सो करता है अपनी अपनी अवस्था के अनुसार सभी अपनी सुकीर्ति स्थापित करके अपना नाम चलाना चाहते हैं।

इस पर कविचन्द बोला महाराज यही तो बात है। यही बात की बात तो पृथ्वीराज के गले पड़ गई है। महाराज राजनीति हँसी खेल नहीं है इस में श्रृंगी का कीट होकर जन्म निर्वाह ले जाना बड़ा कठिन काम है। परन्तु यह काम मंत्री का है कि दोनों व्रत पाले अर्थात स्वामी का रस भी रहे और जो कार्य्य हो उचित हो। देखिए, यह राजनीति न जानने का ही कारण है कि पृथ्वीराज की जो स्वर्ण प्रतिमा स्थापित की गई "सो जैसा बोया वैसा लुना" यह सुनतेही जैचन्द की चोटी से झार निकल गई। उसके कान, नाक, आँख, मुँह, गाल मंजीठ एवं कुसुम की तरह लाल होगए। वह मन ही मन सोचने लगा क्या करूं क्या न करूं बड़े विकट कलहंतर कवि से काम पड़ा है"।

कुछ ठहर कर जैचन्द ने कहा कविचन्द तुम्हारे लिये जो कन्याएं रनिवास से पान ला रही है उनका कुछ वर्णन करो। यह सुनकर कविचन्द बोला महाराज आपके रनिवास में जहां परिन्दा पर नहीं मार सकता वहां का हाल मैं कैसे कह सकता हूं पर हां जो मरजी होती है तो कुछ थोड़ा बहुत कहता हूं सुनिए। आपके महल की दासियां वे सब षोड़स वर्षीया बालाएं ऐसी सुन्दर हैं जैसे सुरपति की रानी सची की सहचरी हों। उन सुकुमारी स्त्रियों के शरीर से सदा केसर की सी सुगन्धि आती है। उनकी एड़ी और पैरों के तलुवे ऐसे लाल हैं जैसे पूनों का चन्द्रमा हो। उनके नखों से उज्ज्वल दर्पण की सी आभा झलकती है और उनके पैर के नूपुर और पाजेब का छन छन शब्द क्या होता है मानों हंस के बच्चे कल्लोल में बोलते हैं। उनकी सचक्कन पिंडलियों से ऐसी सुरखी झलकती है जैसे कोल काल कर ईंगुर भरा हो। उनके ताल वृक्ष की पीड़ से सुडौर जंघा, मदन के बल से नितम्ब, अजबही काट छांट के बने हैं। उनकी मुट्ठी भर पतली सी कमर देख यह उपमा आती है जैसे धर्म ने काम और लोभ को कपट कर उनपर अपनी धजा जमाई हो। उनके उदर पर सूक्ष्म रोम राजि और पीठ पर बड़ी बेनी देखकर यह भाव मन में आता है मानो उनके हृदय दुर्ग पर चढ़ने के लिये ये कामदेव ने दोहरे कमंद लगाए हों। उनके सीने पर नारंगी से युग यौवन उठ आए हैं जिनके भार से पतली सी कमर तीन तीन बल खाती है। उनके कंबु कंठ में जडाऊ चौंकी और पोत का छूटा दोनों एकत्र ऐसे सुशोभित होते हैं जैसे राहु और चन्द्रमा दोनों परस्पर का विरोध भाव तज यहां मित्र होगए हों। उनकी ठोढ़ी पर का तिल कमल पर मलिन्द सा कल्लोलता मालूम होता है। उनके सचक्कन कपोल कुंदकली सी दन्तपंक्ति दीप शिखा एवं काममञ्जरी सी नासिका और कमान सी वक्र भौंहें देखकर दिल बेदिल होता है। उनके दुनिहार जड़ाऊ, नरकुलों पर लटकती

हुई काली काली घुँघराली लटें तो अजबही छटा छाती हैं। उनके मधुर मधुर सुरीले बोल तो कोकिला के गले को भी बे मोल लेते हैं इत्यादि कहाँ तक कहूं। उनका सौन्दर्य्य यदि रच रच कर बर्णन कर चलूं तो इस प्रपंच में सारी जिन्दगी चली जाय।

जब तक दस पांच सहेलियों के साथ हिली मिली कर्नाटी पानों की थाली लिए हुए दर्बार में आ उपस्थित हुई और ज्योंही उसने पृथ्वीराज को देखा कि झट से अपने सीस पर अंचलपट डालकर घूँघट घालने लगी। यह देखकर सारी सभा में सन्नाटा छा गया। सबके मन में सन्देह हो गया कि कविचन्द के साथियों में कहीं पृथ्वीराज हैं अवश्य, सारी सभा में इस बात की खुस बुस होने लगी, और सब लोग परस्पर काना फूसी करने लगे कोई कहता यही खवास पृथ्वीराज है कोई कहता कि नहीं उसके साथियों में से कोई है। दीवान रयमिह और कन्हिया राय तो स्पष्ट कह उठे कि घर आए शत्रु को छोड़ना क्यों; पकड़ना यारो जाने न पावे, परन्तु जैचन्द ने कहा ठहरो। जल्दी न करो देखो जाता कहां है। इतने में कविचन्द ने कर्नाटी को हाथ के इशारे से समझा कर कहा। वहां से कैमास के प्राण लेकर यहां आई अब क्या राजा को भी फँसावेगी। कवि का इशारा समझ कर कर्नाटी ने लगे हाथ झट से सिर पर का पट उतार लिया जिसे देखकर जैचन्द सहित सारी सभा के लोग भौंचक से रह गए; उस समय सभा में नवों रस सन्देह विराजमान थे, नटखट कर्नाटी के घूँघट पट की लौट पलट में पड़कर अत्यन्त आश्चर्य्यन्वित हो जैचन्द अद्भुत रस में रँगा हुआ था और पृथ्वीराज स्वयं हास्य रस में पगा हुआ था। दासी के हृदय पर करुणा रस ने अधिकार किया। इस ऐंचा तानी ने कविचंद को रौद्र रस की मूर्ति बना दिया। जो लोग पृथ्वीराज को पकड़ने पर उद्यत होने पर दबा दिए गए थे उनके मुख पर मुर्दनी छा जाने से बीभत्स का आभास होता था और दरबार में उपस्थित वीर सामन्त तो वीर ही थे। गोख और झरोखों से झाँकती हुई स्त्रियाँ साक्षात शृंगार रस का स्रोत थीं। अखंड शैव सामन्त लंगरीराय स्वयं शान्त स्वरूप था। तब तक दासी ने आकर राजा के साम्हने पान ला हाजिर किए और प्रश्न किए जाने पर उसने उत्तर दिया कि कविचंद पृथ्वीराज के अंतरंग सखा हैं इससे मैं उनकी आधी लज्जा करती हूं। अन्त में राजा जैचन्द ने कविचन्द को सादर पान दिए और कहा कि कविचन्द तुम संकोच न करना जो कुछ तुम माँगोगे सो कल्ह मैं तुम को दूंगा।

यह कह कर राजा जैचन्द ने अपने रावण नामक एक सरदार को आज्ञा दी कि वह कविचन्द के साथ में जाकर नगर के पश्चिम प्रान्त में उमका डेरा करावे और उसके आतिथ्य सत्कार का पूरा प्रबन्ध रक्खे। इस प्रकार स्वामी की आज्ञा पाकर एक हजार सिपाहियों को साथ लेकर रावण कविचन्द के साथ हो लिया और उसे सादर जनवासे तक उसने पहुँचाया। कविचन्द के लिये वह जनवासा ऐसे आडम्बर से सजा हुआ था कि जिसे देखकर आँखों में चकाचौंधी आती थी। हर एक शिखर के ऊपर कुंदन किए हुए कलसे लगे थे और उनके भीतर नाना प्रकार के रंग बिरंग गिलम गलीचे और पलंग लगे हुए थे। उन पलंगों के पाए और पाटी, भाँति भाँति के नगों से जड़े हुए थे और उन पर रेशमी सेज बन्दी से कसे हुए मखमली तोशक पड़े हुए थे। यह सब कुछ था पर जनवासे के बाहर चारों ओर चौकस चौकी बैठी थी कि वहाँ से यदि चींटी भी चाहे कि चली जाऊं तो कठिन था।

डेरे पर पहुंच कर उधर तो नित्त की तरह राजा पृथ्वीराज एक उच्च सिंहासन पर बैठा और कविचन्द सहित सब सामन्त लोग उसकी अर्दली में बैठ कर जो कुछ देखा सुना था उसकी बातें करने लगे। इधर राजा जैचन्द ने निज राज्य मंत्री

(१) कैमास के मारे जाने पर कर्नाटी दिल्ली से भाग कर कन्नौज में आरही थी। वह वहां अपना सर नहीं ढाँकती थी। उसका कहना था कि पृथ्वीराज के सिवाय मैं दूसरे को पुरुष करके देखता ही नहीं।

सुमन्त, सेना नायक मुकुंद परिहार और श्रीकंठ प्रोहित को बुला कर आज्ञा दी कि तुम लोग कविचन्द के डेरे पर जाकर मिजवानी ले जाओ और उसके खान पान और रहन सहन का ऐसा उचित प्रबन्ध कर आओ जिसमें उसका चित्त किसी प्रकार से अप्रसन्न न होने पावे। निज स्वामी की ऐसी आज्ञा पाकर वे तीनो जने भांति भांति के व्यंजन पकवान और पान सुपारी लौंग इलाइची वगैरह लिवा कर कवि के डेरे पर गए। उनके पास पहुँचते ही दरवान ने उन्हे रोका और जब खवास ने अन्दर जाकर जाहिरी की तब वहां से आज्ञा पाने पर वे भीतर बुलाए गए। वहां जाकर वे कविचन्द से मिले और मिजवानी साम्हने रखकर इधर उधर की दस पांच शिष्टाचार की बातें की, पर डेरे के अन्दर का रोबदाब देखकर उनकी नसें ढीली पड़ गईं। वहां से लौट कर वे योंही धूरे पैरों जैचन्द के पास गए और कहा कि महाराज कवि तो कवि ही है पर उसका खवास कोई विलक्षणही पुरुष है और भी उसके डेरे के ठाट बाट और राहु सी अदब मर्य्यादा देख कर यह कहे बिना नहीं रहा जा सकता कि उसके साथ में जितने नौकर चाकर हैं सब एक से एक बढ़ कर तेजस्वी और पुरुषार्थी पुरुष हैं; उन लोगों के मुँह की बातें सुनकर जैचन्द मनही मन कुछ सोच समझ कर चुप रहगया। पर उसके जी में इस बात का निश्चय होगया कि कविचन्द के साथ में पृथ्वीराज हैं और फिर हैं।

इस असार संसार का अंधकार समूह नाश कर प्रकाश स्वरूप श्री भाष्कर भगवान की किरण से उत्पन्न हुई एक कन्या कैलाश शिखर पर एक मेघस्पर्शी वृक्ष से झूला झूल रही थी। उसे देख कर राजा पंग उस पर आशिक होगया और उसकी प्राप्ति के लिये उसने एक पैर से खड़े होकर तपस्या करनी आरम्भ की। उसकी तपस्या से संतुष्ट होकर वशिष्ट ऋषि ने वह कन्या सूर्य्य से राजा को दिलवा दी। वही कन्या इस समय रानी जुन्हाई के नाम से प्रसिद्ध थी।

अस्तु जब रानी जुन्हाई ने सुना कि राजा पृथ्वीराज के दर्बार का कवि कविचन्द आया हुआ है तब उसने गुनमंजरी गुनबेली मदनावती गुनकेलिका मालती लीलावती कलावती आदि सहचरियों और भी दस पांच मुँह लगी सखियों को बुला कर उनसे कहा कि मेरी इच्छा है कि तुम लोग मेरी तरफ से कविचन्द के डेरे पर कलेऊ भोजन प्रसाद की सामग्री लेजाओ इसलिये और सब लोग तो इधर मेवा मिठाई पकवानादि पदार्थों का उचित प्रबन्ध करो और एक सखी जाकर महाराज से अर्ज करो कि वे तुम लोगों के साथ जाने के लिये कुछ सिपाहियों का प्रबन्ध करा देवें।

राजा जैचन्द के उस स्वर्णखचित रत्नजटित सुविस्तीर्ण रनिवास में काम की सी कलाएँ अनेक नवयोवना महिलाएँ थीं। वे सब चित्रनी और पद्मिनी जाति की एक से एक सुन्दर और मनोहर थीं, परन्तु राजा का जुन्हाई रानी पर विशेष प्रेम था। अतः रानी जुन्हाई का सँदेसा पाते ही राजा जैचन्द ने कहा अच्छी बात है और उसी समय एक हजार सैनिकों के सजे जाने की आज्ञा दी। जब तक वे सिपाही पैनसें और कहार वगैरह सज कर दुरुस्त हुए तब तक उधर रनिवास की दासियों ने भी रानी की आज्ञानुसार दो हजार सोने के थारों में सब तरह की मिठाई और पांच सौ थालों में पान सुपारी कपूर केसर कस्तूरी दारिम विजौरी आदि सामान लगा कर रक्खा। उन दो हजार थालियों में से पांच थालों में अगर रस की बरफी, पांच सौ में कपूर के लड्डू, तीन सौ में साफ खोवे की मिठाई, चौसठ थालों में तबक चढ़े हुए पान बीड़े और शेष थालों में और सरंजाम था और प्रत्येक थाल बहुमूल्य दो दो पीताम्बरों से ढके हुए थे। इस सब स्वादिष्ट खाद्य पदार्थ और अन्य बहुमूल्य भिजवानी के साथ एक रत्नजटित सोने के थाल में अत्यन्त मूल्यवान रत्नों का बना हुआ कल पुरजों का हंस भी था जो कि आपही आप राजा का यश बखान करता था।

यह सब सामान ले लिवा कर जो दासियाँ कविचन्द के डेरे पर गई थीं उनका भी हाल सुनिए। वे सब एक तो स्वाभाविक ही स्वयं ऐसी सुन्दर थीं कि जिन्हे देख कर इन्द्र की अप्सराएं भी लज्जित होती थीं, तिस पर भी जब वे सोलहों शृंगार बारहों आभूषणों से सुसज्जित हो रंग विरंगे बहुमूल्य रेशमी और जरतारी वस्त्र पहिन कर बड़ी बड़ी आँखों में बारीक कज्जल लगा कर और पान बीड़े चबा कर चलने को तय्यार हुई तो उनकी अदा बला और चमक दमक देख कर शरद का चन्द्रमा नजर में न चढ़ता था। उनके शीश पर मोतियों की लरें लटक रही थीं, कान में जड़ाऊ ताटंक पड़े हुए थे हृदय पर जड़ाऊ हार बहार देते थे और कमर में पहिने हुए मंद स्वर वाले मेखला तो हंस एवं चकोर के बच्चों की बोली को मात करते थे। निदान वे रति की सी कलाएँ कुसमायुध की सी कमानें वचनचतुर चतुरों का चित्त चुरानेवाली और। भी अन्य सब कलाओं में प्रवीण, मृगलोचनी गजगामिनी कलकंठी सर्वाङ्ग सुन्दर षोड़सवर्षीया दासियाँ अच्छी अच्छी सजी बजी पीनसों में सवार होकर बड़े ठाट बाट के साथ कविचन्द के डेरे पर आईं। एक समय जब कि ब्रह्म निद्रा लेने को पलंग पर लेटे कि इतने में दैत्य दल ने प्रबल होकर उत्पात मचाना आरंभ किया अस्तु ब्रह्मा ने वहीं पड़े पड़े एक ऐसी सुन्दर स्त्री रची कि जिसे देखकर सब असुर मोहित होकर किं-कर्त्तव्य-विमूढ़ हो गए। इसी तरह वे दासियाँ क्या आईं मानो पृथ्वीराज का चित्त चुराने के लिये जैचन्द की भेजी हुई माया की मरीचिकाएँ आईं।

दासियों के द्वार पर पहुँचते दरबान ने अन्दर जाकर कविचन्द को इत्तला की इस पर उधर तो राजा सिंहासन से उतरे और सब ठाट बदला गया इधर दरबान ने दासियों से कहा चलिए। दासियों ने सिरायचे में जाकर सब सामान कवि को नजर किया और कहा हे सब विद्याओं और कलाओं में निपुण तीनों काल के जाननेवाले चहुआन के दरबार के चतुर कविचन्द बर्दाई रानी पुन्हाई ने आपको प्रणाम कह कर आपका कुशल प्रश्न पूछा है; इसके उत्तर में कवि ने कहा कि मेरा भी महारानी को आशीर्वाद कहना और कहना कि दीर्घजीविनी हो और प्रसन्न रहो। यह कह कर कविचन्द ने उन्हें विदा किया। वहाँ से चलकर वे दासियाँ रानी पुन्हाई के पास गईं और उसके पैर छूकर विनीत भाव से बोलीं कि हम लोग श्रीमती की आज्ञा का पालन कर आईं। महारानी जी अपराध क्षमा हो। और तो हुआ सो हुआ परन्तु हमने कवि चंद के खवास को जैसा देखा वैसा कोई दूसरा आदमी भी आज लौं नहीं देखा। यह सुन कर रानी ने उन दासियों को तो योंही बाहरी भीतरी समझा कर लौटा दिया पर वह अपने मन में समझ गई कि पृथ्वीराज वही है।

दासियों के पीठ फेरते ही यहां फिर राजा पृथ्वीराज सिंहासन पर जा बैठा। आस पास सब सामन्त और बीच में कविचन्द बैठ गया, लीजिए फिर ज्यों का त्यों सब दरबार जम गया। पृथ्वीराज ने कहा भाइ कविचन्द कल्ह स्नान करते समय की गंगाजी की छटा अब तक ज्यों की त्यों मन में बसी हुई है इस समय फिर भी कुछ गंगा जी का गुण गान करो। कविचन्द बोला कि महाराज उन पापप्रहारिणी गंगाजी का कोई क्या गुण गान करेगा, उनकी महिमा बड़ी है। सुर नर और नाग आदि भी उनका गुण गान कर के पार नहीं पा सकते। श्री गंगाजी विष्णु भगवान के चरणों से उत्पन्न हो कर ब्रह्मा के कमंडल में आईं और वहां से आकर श्रीशिवजी की जटाओं में समानीं। फिर शिवजी की जटाओं से जो किञ्चित निकलीं सो इस पृथ्वी पर आकर संसार के लोगों को तरण तारण कर रही हैं। इस पृथ्वी पर जितने भर त्रिकालज्ञ और पवित्र आत्मा ऋषि मुनि हैं सब गंगाजी के कूल में कुटी बनाकर रहते हैं और वहीं शुद्ध चित से जप पूजन भजन और योग साधन किया करते हैं। जो मनुष्य पापों से पीड़ित

होकर गंगा के किनारे जा पहुँचते हैं वे क्षण मात्र में सब पापों से मुक्त होकर निर्मल मन हो जाते हैं। संसार भर के जीवधारी मात्र को स्वासा और सत रज तम तीनों गुणों की मूर्ति उस गंगा महाराणी को धन्य है। इस पृथ्वी पर जब अधिक पाप होने के कारण भूमि के भार से शेष का शीश हिलने लगता है तब श्री गंगाजी ही पापों का नाश करके शेष को सहारा देती हैं। पुण्यपुंज एवं शान्ति की क्यारी स्वरूप माता गंगाजी की तरंगे स्पर्श करने से अद्वितीय प्रसन्नता प्राप्त होती है, स्वर्गबासी तेतीस कोटि देवता सदा गंगाजी का गुण गान किया करते है। स्वर्ग में तो उनकी सहस धाराएँ हैं पर यहां पृथ्वी पर केवल एक धारा ने बड़े बड़े पर्व्वतों को तोड़ कर समुद्र का हृदय विदार दिया है। कैसाही पुराना पापी क्यों न हो और वह गंगाजी के महत्व को भी न जानता हो पर किसी तरह किनारे पर आजाय तो वह बिन प्रयास तर जाता है। पापी रावण का नाश करने वाली सती सीता, महिषासुर को नाश करने वाली सिंह बाहिनी शक्ति, महाभारत के युद्ध की भूर द्रौपदी, शुंभ निशुंभ आदि असुरों का संहार करने वाली कालिका श्री शिवजी की अर्द्धांगिनी गिरा और विद्यावरदायिनी सरस्वती आदि इन्ही मात गंगाजी के स्वरूपान्तर मात्र हैं। तात्पर्य्य यह कि समस्त संसार की कर्तृ धर्तृ मात गगा इस वारि धारा स्वरूप से स्वयं अपनी सृष्टि का निरीक्षण परीक्षण और उद्धार कर रही है।

अधिक क्या कहू श्रीगगाजी में स्नान करने या गंगाजल को पान करने की इच्छा करने से ही मानसिक वाचिक और कार्मिक तीनों प्रकार के पाप ताप नाश हो जाते हैं। राजन् इससे अधिक और क्या हो सकता है कि जो सहज शृंगारों सहित स्नान किए जाते हैं वे सब शृंगार भी ससार से शीघ्रही मोक्ष पा जाते हैं। देखिए केसर से गंगाजी की शिवार होती है, अंजन से कस्तूरिया मृग जन्म पाता है, जड़ियों से कगुए उपजते हैं, मिहदी और महावर नागबेल होते है और स्वेद कण समुद्र में सीप होते हैं।

नरनाह काका कन्ह चौहान जैसा सब सामन्तों में सिरे तेजस्वी और बीर था वैसाही अधिक क्रोधी और शुद्ध हृदय था किसी का छल प्रपंच तो मानो उसे छू नहीं गया था। अस्तु कविचंद की कही हुई गंगाजी की महिमा सुन कर बड़े प्रेम से ध्यान-मग्न हो कन्ह बोला 'धन्य महारानी, जो लोग तेरे किनारे पर उत्पन्न होते हैं रहते हैं और आठ पहर तेरा जलपान करते हैं उनके अहाभाग्य हैं। तब पृथ्वीराज बोला काकाजी हममें ऐसे पुण्यात्मा तो एक निद्दुर राय है। इस पर निद्दुर राय ने तो कुछ न कहा कविचंद बोला सो है ही। देखिए आप यहां आतेही पनिहारी को देख कर भ्रम में पड गए। और जब प्रतापी जैचन्द के दर्बार में गए तो छग्गर लेकर खड़े होने की नौबत आई न! यह सुनते पृथ्वीराज तो घायल सूअर की तरह पलट पड़ा। वह बोला हरे कृष्ण मैंने बड़ी भूल की। अब सबेरा होने दो अपने असल स्वरूप से ही जैचंद का दर्बार देखूं तो सही! यह हाल देख कर कन्ह से न रहा गया उसने लाल लाल आंख कर के कहा 'रे भटवा तू जो कुछ करे से सब थोड़ा, बाप दादे खांय न पान दांत निपोरे कंद पिरान, तू तो आशीर्वाद दे दिवा कर दूर हो जायगा। यहां हम लोगों के सिर पड़ेगी। बस भुस में डाली आग महाजन दूर खड़े। तब कविचंद बोला। महाराजा एक समय रावण ने एक ऐसा यज्ञ रचा कि जिसमें वह सब देवताओं को वश में करले। यह देख कर इन्द्र ने कौवे का रूप धारण किया और यज्ञ शाला में जा कर साकिल्य को जूठा कर दिया जिससे वह यज्ञ पूरा न हो सका तब कहिए क्या इन्द्र कौवा हो गया। इतने में वनवीर परिहार आया और उसने कहा कि भोजन तैय्यार है, इस पर इधर तो पृथ्वीराज ने उठने की मुद्रा की उधर गायन्द राय ने कन्ह का हाथ पकड़ कर कहा चलिए भोजन कीजिए जो होगा सो देखा जायगा। उखली में सर दिया तो मूसलों का कौन डर।

निदान जब तक सब लोग भोजन कर करा कर निपटे तब तक संध्या हो गई। दिन भर के थके मांदे तो थे ही, सब सामन्त जहां तहां अपने अपने बिस्तरों पर जा लेटे। राजा पृथ्वीराज भी पैर पसार कर पलंग पर पड़ रहा और कत्थक लोग कथा कहानी कहने लगे। पृथ्वीराज तो यहां थोड़ी देर में सुख की नींद सो गया परन्तु जिन स्त्रियों ने पृथ्वीराज को देख पाया था उनकी राम राम कर के रात कटी मानों पृथ्वीराज उनके साथ पड़ा हुआ उन्हें नींद न लेने देता था।

जब एक प्रहर रात जा चुकी तो राजा जैचन्द का भेजा हुआ एक दूत कविचन्द के पास पहुँचा। उसने कवि से कहा कि औरस अर्थात् महफिल देखने के लिये दरबार से आपका बुलौवा है सो चलिए और छरीदा चलिए। यह सँदेसा पाते ही कविचन्द राजा पृथ्वीराज को यों ही सुख में छोड़कर पंगराज की ड्योढ़ी पर जा पहुँचा, कविचन्द के आने की खबर पाकर राजा जैचन्द भी महलों से निकल कर नाट्यशाला में आ बैठा। जब कविचन्द नाट्यशाला में पहुँचा तो देखता क्या है कि केसर कस्तूरी कपूर अरगजा अंबर आदि की सुगंधि से समस्त नाट्यशाला महक रही है, दस हजार मन तेल और सात मन अगर के फुलेल से भरे हुए सात हजार सोने की मसालें और कई हजार जड़ाऊ दीए जल रहे हैं। कुल मिला कर एक हजार चाँदनी और पाल तने हुए हैं जिन पर नाना प्रकार के जरतारी बेल बूटे और श्रीगोस, गैंड़ा, हाथी, बन्दर, हिरन और शेर आदि भांति भांति के जानवरों के चित्र खचित हैं। उन्हें देखकर ऐसा मालूम होता था मानों वे सब जंगली जीव जन्तु भी जैचन्द के राज्य में परस्पर की असमंजस त्याग कर मेल का मजा ले रहे हों।

जवनिका उठते ही कविचन्द ने देखा कि राजा जैचन्द की नाट्यशाला में सोलहो शृंगार और बारहों आभूषणों से सजी हुई सैकड़ों वेश्याएँ बैठी थीं। जिस समय वे सब की सब उठ कर खड़ी हुईं तो ऐसा मालूम होता था मानों महादेव जी को विजय करने के लिये कामदेव ने अपनी सेना सजी हो। ताल और लय के साथ उनके पैरों के मंद मंद नूपुर क्या बजते थे मानों मकरकेतु महाराज के निसान बज रहे थे। उन वेश्याओं के शरीर पर सर्वांग जड़ाऊ गहने देख कर तो यह उपमा आती थी जैसे कामदेव नवग्रहों को और नवग्रहों ने कामदेव को अपना अपना प्रताप और पौरुष जताया हो और अन्त में वे दोनों दल मिल कर एक हो गए हों। उनकी कमर में रुरती हुई क्षुद्र घंटिकाएं देखकर पिनाक का स्मरण होता था और हृदय पर लटकता हुआ मोतियों का हार गंगधारा की बहार दिखाता था परन्तु उस हार के मोतियों में जो उनके मुख की प्रतिभा देख पड़ती थी उससे कुचें के लहराते हुए उज्ज्वल जल में चन्द्रमा के प्रतिबिंब की सी झलक जान पडती थी।

नाटक ॥

दीपांगी चन्द्रनेत्रा अति नलिन मिली, नैनरंगी कुरंगी।
कोकांगी दीर्घनासा ससुर कलिरवा, नारिंगी सारदंगी।
इन्द्रानी लोलडोला चपल मतिधारा एकबोली अमोली।
पुहपावानी विशालासुभगा गिरवरा, नैनरंभा सु बोली॥

उन सब वेश्याओं ने पहिले उक्त नाटक में श्री सरस्वती जी की स्तुति करके बाएँ हाथ की पहुंचा-जलि मुद्रा करके उसे ऊपर को उठाया और दाहिने हाथ से गुरू को प्रणाम करके मंद पद चालन प्रारंभ किया। कवि कहता है उन श्रेणीबद्ध वेश्याओं को देखकर मुझे तो ऐसा भ्रम हुआ कि ये मानवी हैं अथवा मदन दीपावली की दीप शिखाएँ हैं।

उन्होंने नृत्य के आरम्भ में गणेशजी की वंदना करते हुए कहा कि हे शिवसुत गौरीतनय गजमुख गणेश! हमारे महाराज जैचन्द का यश तेरे एक दंत के समान शत्रु समूह नाशक और उज्वल हो!

तत्पश्चात् उन्होंने थोड़ी देर गत यानी लहरा नाच कर अलाप चारी आरम्भ की और स्वर से लेकर शनैः शनैः पचम और फिर सप्तम तक तान ले गईं। उनके साथ के सफरदाई भी हाहा हूहू गंधर्वों की भाँति वाद्य विद्या में निपुण नाना प्रकार के ठेका, तोड़ा, मुखड़ा, और परनों के हाथ झाड़ते हुए बराबर सम पर सम देते जाते थे। क्या कहें ताथेई तत थेई थेई थेइया, धुगंधिगा धुगंधिका तातांधुना ना, और धाधा धित्ता, चिकिटधा धित्ता, तिटकित दिगगिन धा आदि गत और पखावज के विराम और उसीके साथ नूपुर मेखलाओं की झुंड झुंड झुननननूझा और ऊपर से स रे ग म प ध नी सा ३ सं. नी ध. प. म ग रे. सा. सानी. ध प प म म ग रे सा सरगम और त्रोम त्रोम तन दिरना, ओ दिर दिर दिर दीम, दीम तननतनम ननन् ओ न तान तन दिरदा, तान्य दिरना ए तिराना सुन कर मन कुछ और का और ही होता था। भला उनके ताल स्वर सम और नाच गान की क्या बात कहें, वे सब दारुण देश की शिक्षा पाई हुई थीं जो कि इस बात का घर कहा जाता है। जिस वक्त वे ताल पर निरप निरप कर और तिरपट हो हो कर अदा के साथ भाव बतातीं तो उनके चमकीले चंचल लोचन कुमोदनी पुष्प में खेलते मलिन्द से जान पड़ते थे। वे ऐसे ऐसे तरह बजहदार गहनों से सजी हुई थीं कि देखनेवाले को यह कहना कठिन था कि वे गहनों से ऐसी दिप रही है या गहने उनसे ऐसे दिप रहे है। इतना ही नहीं वे उसी ताल सम मे नाचते नाचते मयूर मृग सिंह हंस चक्र कमल आदि की आकृति बन कर उनके सांगो पांग भाव बतातीं थीं, बीच बीच में कुंदलमी एवं सर्पणी को साध कर जो ऊर्द्ध स्वासा चढ़ातीं तो उनके उरोजों पर हिलता हुआ मोतियो का हार ऐसा सुशोभित होता जैसे हस के बच्चे सच्चे मोती चुन रहे हों अथवा जब कभी बैठ कर समाधि साधने की मुद्रा करतीं तो ऐसा मालूम होता मानो श्री शिव जी ने ही गोपिका रूप धर कर तागी लगाई है और वे मृदग मोर्चंग उपंगादि वाद्य तो बिलकुल अनहद वाद्य का मानचित्र खीच दिखाते थे।

इसी प्रकार से नाच गान और नाना प्रकार के नाटक होते होते तीन प्रहर व्यतीत हो गए। जब रात्रि का चौथा चरण आया अर्थात् धर्मराज की बेला हुई देवालयों में झालरें झंकारने लगी और कुक्कुटें बाँग देने लगा अतएव उधर तो उन चंद्रमुखी मृगलोचनी कलकंठी काम की सी कलाएं वेश्याओं के मुख पर आलस की झांई पड़ने लगी इधर महाराज जैचंद को भी सुखसेज की इच्छा हुई तब नाटक बंद किया गया और दरबार बर्खास्त हुआ। निदान कविचंद को सीख देकर राजा जैचंद तो अपनी चित्रसारी में जा लेटा और कवि डेरों पर आकर मुसुक राजा पृथ्वीराज के पास पहुंचा और यह कहकर "हे शाह को बार बार बंदी करनेवाले संभरीनाथ सवेरा होगया" पृथ्वीराज को जगा दिया।

शय्या से उठकर शौचादि से निश्चित हो सूर्य्य के समान तेजस्वी राजा पृथ्वीराज अपने आसन पर आ बैठा। उसके सूर सामंत भी उसे घेर कर उसके आस पास बैठ गए। उस समय उसके पास सूर्य्य के समान तेजस्वी कन्ह चहुआन, मुगलों का मुख मोडने वाला गोइन्दराय, खुरासान खाँ को बाँधने वाला दाहिमा नरसिंह, हाँसीपुर की रक्षा करने वाला पज्जूनराय, मोतियों के बीच माणिक के समान सुन्दर सारंगसय सोलंकी, स्वामी की सुकीर्ति स्वरुप बघेला ठट्ठाराय को समुद्र तक ठेलने वाला आल्हन राय, गंभीर हृदय बीर चंदपुंडीर, देव गिरि पर लोहा लेने वाला भोंहाराय, मुरतान खां को परास्त करने वाला नारेन बीर और जाजुल्यमान जावला जल्ह इत्यादि सामन्त बैठे थे और बीच में राजा पृथ्वीराज के ऊपर चौर डुर रहा था।

उसी समय राजा जैचन्द का भेजा हुआ एक गुप्तचर आया और यह सब हाल चाल चरचगया। उसने जैचन्द से कहा कि महाराज अकेले कवि के भरोसे न रहिए साक्षात् पृथ्वीपुर इंद राजा पृथ्वीराज बैठा हुआ है। यह समाचार सुनते ही जैसे सवेरे के

समय सरोज, सन्ध्या को कुमोदनी वैसेही जैचंद के जी की कली खिल उठी एवं जैसे दुस्सासन को देख कर भीमसेन, द्रोनागिर उपारते समय हनुमान, गिरगोवर्द्धन पर्वत को उठाते श्रीकृष्ण प्रसन्न हुए थे उसी प्रकार पृथ्वीराज को घर में आया हुआ जान अपने पूर्व बैर भँजाने का सुअवसर जान कर जैचन्द तन मन प्रसन्न हो गया।

राजा जैचंद ने उसी समय शिकार सेना के तय्यार होने की आज्ञा दी। तदनुसार ज्यों ही पहिला निसान (नगाड़ा) बजा कि जहां तहां हाथी घोड़े ऊंट और हिन्दू मुसल्मान सब सिपाही अपने अपने कील कांटे से सजकर दुरुस्त हो गए। दूसरे निशान की आवाज पर सब लोग महलों के दरवाजे पर हाजिर हो यथानियम श्रेणीबद्ध होकर खड़े होगए और तीसरा डंका बजते ही राजा जैचन्द स्वय महलों से निकल कर दरवाजे पर आगया। उसने देखा कि दिग्गजों का मद दलन करने वाले बड़े दँतारे गयंद, वेश्याओं की तरह खमदम से खुरी करते हुए सुनहरे और जड़ाऊ साजों से सुसज्जित अश्व और अच्छे अच्छे सहजोर जबरदस्त फौजी जवान दरवाजे पर हाजिर है। इसके सिवाय उसके आश्रित सैकड़ों छत्रधारी भी अपनी अपनी अनी कनी सेना सहित सेवा में प्रस्तुत हैं। राजा जैचन्द के असवारी पर सवार होते ही धानुक लोग बाजे बजाने लगे, कड़खैत कड़खे गाने लगे और सुनहरी रुपहली गगाजमनी और जड़ाऊ छड़ी लिए हुए नकीब लोग सलामी की आवाजें कसने लगे। राजा जैचंद के आस पास उसकी सुकीर्ति के सौरभ स्वरूप हो स्वच्छ अच्छे लच्छेदार चौंर डुर रहे थे और उसके शीश पर उसका प्रताप स्वरूप छत्र छहरा रहा था।

जिसके दल बल के आगे दसों दिशाओं के दिग्गज दहलते थे ऐसे प्रतापी राजा पंग ने अपने मंत्री सुमंत को पास बुला कर आदेश किया कि मैं कविचंद को बिदा करने के लिये जाना चाहता हूं। इसलिये तुम यथासम्भव शीघ्रही विदाई का सरंजाम लगाकर प्रस्तुत करो और आखेट का जाना बंद किया जाय। उसने मंत्री से कहा, सुमंत तुम जानते हो कि मुकीर्ति की वृक्षबेलि इन्हीं कवियों द्वारा सिंचित होकर बढ़ती है इसलिये कविचंद को ऐसा दान दिया जाना चाहिए कि जैसा हिन्दू मुसल्मान किसी राजा ने कभी किसी मँगते को दिया ही न हो जिसमें पृथ्वीराज को भी मालूम पड़ जाय कि मेरे कवि को किसीने दान दिया और कविचंद भी जाने कि हां कहीं से दान पाया। तब सुमन बोला कि महाराज की मरजी हुई सो ठीक है पर देखिए राजा बीर बिक्रमादित्य ने बेताल कवि को पचास हजार मन सोना, इकतीस मन मोती, तीस मणिजटित साज से सजे हुए हाथी और इकतीस परम सुन्दरी वेश्याएं दान की थीं इससे पराई सममती में क्या अपने वित्त के अनुसार जो आज्ञा हो सो लगा दूं। इस पर जैचंद ने कहा कि अच्छा जो तुम जानो। तब मंत्री सुमन ने अच्छे अच्छे तीस हाथी, जड़ाऊ साजों सहित दो सौ कोतल घोड़े, सौ मन सोना, अमूल्य मणि माणिक और मोतियों से भरे हुए दो बड़े बड़े हंडे और जड़ाऊ जरी बाफ्ता कमखाब कसब और गुलबदन आदि अनेक प्रकार के बहु मूल्य कपड़े कविचंद की बिदाई के लिये लगाकर राजा के साम्हने हाजिर किए।

तीस करा मुत्तिय सघन द्वै से तुरँग बनाय।
दव्य बरद बड मेग लिय भट्ट समंखन जाय॥

अस्तु ज्यों ही उल्लेखित सामान साथ लिवा कर राजा जैचंद कविचंद के डेरे पर चलने को हुआ कि साम्हने सीसमाल पहिने हुए योगी, पंख झाड़ता हुआ गीध, ऊपर का चोंच उठाता हुआ चात्रिक, चोंच में सांप को खाकर चीत्कार कर के उड़ती हुई चील्ह आदि अनेकों विग्रह एव युद्धसूचक असगुन देख पड़े। यह देख कर जैचन्द को और भी निश्चय हो गया और उसने अपनी सेना के खास खास सरदार और पासवानों को समझा कर कहा कि कविचन्द के साथ में पृथ्वीराज है अस्तु तुम लोगों को ऐसा करना उचित है जिसमें वह जाने न पावे और जाता ही पकड़ लिया जाय। इसके बाद

उसने सेनापति रावण को बुलाकर आज्ञा दी कि पहिले तुम कविचन्द के डेरे पर जाकर उसे मेरी अवाई से सचेत कर दो।

स्वामी की आज्ञानुसार रावण ने वैसाही किया और फिर वहां से आकर जोरावर राठौर राजपूतों की एक जमात के साथ जैचंद के साथ हो लिया। वे राठौर राजपूत सिपाही ऐसे डालडोलदार और सहजोर थे कि बड़े बड़े वृक्षों को जड़ से उखाड़ सकते थे और प्रत्येक जवान रोजाना चार चार बकरों की अखनी खाता था। शत्रु के सामने से नजर नीची करना और पराई स्त्री की तरफ आँख उठा कर देखना तो मानो वे जानतेही न थे। ऐसी बिकट वीरमंडली के नेता रावण को साथ में लेकर जैचन्द कविचन्द के डेरे पर पहुँचा। जैचन्द को आते देख कविचन्द ने आगे बढ़कर उसकी आगवानी की और डेरे के बीच में सुसज्जित एक ऊँचे सिंहासन पर उसे सादर बिठाया। तत्पश्चात उसने कहा कि मेरे अहोभाग्य हैं जो आप ने शिकार का जाना छोड़कर यहां आने की कृपा की। श्रीमान मैं भी राजा पृथ्वीराज का कवि हूं और अबतक तेरे सिवाय और किसी के द्वार पर नहीं गया।

तत्पश्चात् और भी दो चार शिष्टाचार की बातें होने के बाद कविचंद ने अपने खवास वेषधारी राजा पृथ्वीराज को इशारा किया कि वह जैचन्द को पान दे। कवि की आज्ञा पाकर पृथ्वीराज ने फौरन पान लेकर जैचन्द के साम्हने किया पर बाएँ हाथ से *। यह देखते ही जैचन्द मन ही मन जल भुन गया पर ऊपर से प्रसन्नता प्रगट करते हुए बड़े गौर के साथ पृथ्वीराज की ओर देखता रह गया। उस समय ऐसा मालूम होता था मानों बहुत दिनों के बाद घर से बाहर होने की छूक पाकर कोई कुलटा अपने पुराने यार को घूर रही हो। पृथ्वीराज ने पानदान को हाथ तो बढ़ाया पर नीचा हाथ कर के पान लेना चाहता था। इस जिद्दम जिद्दा पर जब कवि ने जैचंद की तिवरी चढ़ी देखी तो उसने बड़ी युक्ति के साथ कहा।

श्लोक—तुलसायं विप्रहस्तेषु विभूति श्रिय जोगिनां।
तांबूलं चंडिहस्तेषु त्रयो दानेश आदरं॥

यह सुन कर राजा जैचंद ने पान लेने के लिये हाथ बढ़ाया परन्तु पृथ्वीराज ने ठेलकर पान दिया। इतनाही नहीं पान देते वक्त जैचंद के हाथ को पकड़ कर ऐसे जोर से उसने अंगूठा गड़ाया कि जिससे उसके करपल्लव अर्थात् गदेरी में खून निकल आया। फिर क्या था जैचंद की तो उस समय यह दशा थी कि मानों पृथ्वीराज को अभी कच्चा खा जायगा परन्तु लज्जा वश कुछ कर नहीं सकता था। उसे अब भी इस बात का आगा पीछा था कि मैं कुछ कर बैठूं और पृथ्वीराज न हो तो मेरी बड़ी हँसी होगी। वह मन ही मन सोचने लगा कि मुझे तो जुड़ते ही सभा में संदेह हो गया था कि यह खवास नहीं कोई और है पर अब तो और तौर की भी बात नहीं है इसकी यह हिम्मत देख निश्चय हो गया कि पृथ्वीराज है।

इसी प्रकार सोच बिचार करता हुआ राजा जैचंद वहां से उठ कर महलों को चला गया और जाते ही मंत्री सुमंत को बुला कर उससे कुपित होकर कहने लगा कि पृथ्वीराज को पकड़ कर जान से मार डालो जिसमें सयोगिता की भी आशा टूटे। आप अपना भी कंटक दूर होय 'न रहे बांस न बाजे बांसुरी' तब सुमंत बोला पृथ्वीनाथ कैसी मरजी होती है। भला राजा पृथ्वीराज और कविचंद का खवास बन कर आपके दर्बार में आवे! उसकी ऐसी क्या अटकी पड़ी थी! मैं न मानूंगा। उसने आपको धोखा देने के लिये किसी सामंत सरदार को भेज दिया होगा। महाराज बिना सोचे बिचारे कुछ कर बैठना अच्छा नहीं। वह जो कोई हो कवि के साथ में है, कवि और वसीठ (राज्यदूत) सदा अभय हैं। ऐसा न हो कि एक कंटक टालने का उपाय करें और दूसरा अमिट कलंक

* बाएँ हाथ से लेकर पान जूता का ही दिया जाता है।

माथे चढ़ जाय। अगर कुछ बन बिगड़ जायगा तो घर घर लोग यही कहेंगे कि इतना बड़ा दरबार पर राजा दीवान सब 'बछिया के ताऊ' निकले इसलिये ऐसा कीजिए कि कविचंद को बुला कर उसीसे पूछ लीजिए। जहां तक मेरा अनुमान है वह झूठ न बोलेगा।

यह बात जैचंद के जी में भी आगई। उसने उसी समय कविचंद को बुला कर उसे सादर आसन और बड़े सम्मान से पान देकर कहा कि अट्ठारहों पुराण छओं शास्त्रों के जान्ने वाले छओं भाषाओं में प्रवीण कविचंद बरदाई मैं तुम से एक बात पूछता हूं सच सच बताना, यदि कहीं झूठ बोले तो याद रक्खो जीते जागते घर न जा सकोगे। इस पर कवि ने कहा आप पूछिए भी तो। तब जैचंद ने पूछा कि क्या तुम्हारे साथ में पृथ्वीराज है?

कविचंद ने उत्तर दिया हां महाराज जिसके दाहने पार्श्व में सूर्य्य के समान तेजस्वी सदा आँखों पर पट्टी बँधी रखने वाले पद्मपुर के राजा भोरा भीमदेव के मारने वाले अद्वितीय पराक्रमी कृपाणधारी विकट वीर काका कन्ह चहुआन और बाएँ पार्श्व में राठौरकुलकमल सदा निडर वीर निडुरराय सदा विराजमान रहते हैं वह छत्रधारियों में श्रेष्ठ पृथ्वीपुर इंद सोमेससुत राजा पृथ्वीराज इस समय यहीं विद्यमान हैं। दो बार गज्जनेस को गिरिफ्तार करने वाले गोयंदराय गहलौत, मुसल्मानी सेना के साल सलखकुलकमल आबू नरेश जैतराव, बड़े करारे वीर दोनो भाई हरसिंह नरसिंह, बालुकाराव का बध करने वाला प्रसंग राव झाला, असंख्य द्रव्य का मालिक विग्रराज चहुआन, महोबे का राजा परमाल चंदेल, बहुत से सवारों का स्वामी बारड़राव, साँभर के परिहारों का परास्त करनेवाला अचलेस भट्टी, शाह की बांह गहने वाला पीपा पड़िहार, पहाड़राय तुंअर, एक लाख मीरों को मारने वाला पज्जून कछवाहा नागौर का सूबेदार नरसिंहराव, जालौर को जीतने और कांगुरे के गढ़ को ढहानेवाला सलख प्रमार, मेवाती मुगलों को मारने वाला धीर प्रमार, विपुल भूमि को दबा लेने वाला जामराय यादव और प्रसंगराय खीची, कांगड़े का राजा हाहुली राय, साक्षात् देहधारी वीररस स्वरूप जोगीजंभारा, भीम का नाशक सारंग राय मोरी, सदा एक तलवार का बाँधनेवाला बांका परिहार राना जंजल डोड, शाह के भाई का घातक गुजरात धनी गौर सरदार, कालिञ्जर का किलेदार साक्षात् भीम के समान बलवान अत्ताताई चौहान, पानीपत में प्राण देनेवाले भोंहा चंदेल का भाई, आलील खां की जान लेने वाला राम राय बड़गुज्जर, पर्व्वत के समान भीमकाय और सूर्य्य के समान तेजस्वी माल चंदेल, एक मात्र एक त्रिमूल बाँधने वाला मंडलीक राव बघेला, पृथ्वीराज का अत्यन्त अतरंग सखा धावर राय धीर, शाह को कई बार मार मार कर भगा देने वाला हाडाहमीर, रावतराम सूर जिस की नजर से नजर मिलाना कठिन है, रणतूर के इकतीस रावतों को बांध लेने वाला जावलाजुल्ह, एक हजार नलीबंद ज्वानों का नेता चालुक राय, रिनथंभ में अतुल पराक्रम करने वाला सिंह के समान क्रूर खेतें में खँगार, वरुनराय को मारने वाला संग्राम साह दाहिमा, सुभट राजा भीम को मारने वाला चन्द्रसेन मंडलीक, स्वप्न में भी शत्रु के साम्हने से पीछे पैर न देने वाला सामलासूर, पछवान का जीतकर पृथ्वीराज से एक हजार गांव पानेवाला कनक राय प्रमार, ध्रुव के समान अटल और इन्द्र के समान देदीप्यमान चाटारायटाँका चहुआन, एक हजार धनुर्धारियों का स्वामी सांखुलासूर भुजदेश को जीतने वाला विक्रमादित्य रट्टौर, दो हजार चतुरंगिनी सेना का स्वामी भोजराय, काठियाबाड़ का रहने वाला बांका बीर मोरीराय, अपनी तलवार के बल से दक्षिण के देशों को दबाने वाला बघेलासूर, पृथ्वीराज के आधे पाट का हिस्सेदार संजमाराय का पुत्र लंगरी राय, प्रसिद्ध वीर धीर चदसेन पुंडीर, देवाङ्गनाओं का मन मोहने वाला परम सुन्दर आल्हनराय परिहार

का पुत्र तारनराय, बधनौर का रहने वाला मल्हनाश केहरी, एक अकेला हजार सिपाहियों का काम करने वाला जाजराय यादव, दिल्ली का निवासी पहकरराय कन्हराय दाहिमा, एक हजार नेजेबाज सवारों का स्वामी पंचाइन चहुआन, सदैव रन के लिये उद्यत अत्यन्त क्रूर स्वभाव धीरसिंह परिहार, आदि ये सब सौ सामंतो के सहायक एक हजार सहजोर सैनिकों के साथ राजा पृथ्वीराज कन्नौज में विराज रहा है। महाराज पृथ्वीराज के साथ के ये ग्यारह सौ राजपूत ग्यारह लाख को चुटकियों में उड़ा देने वाले हैं।

यह सुनतेही राजा जैचन्द यह कह कर कि अच्छा देखता हूं उठ कर अंदर चला गया और हुक्म दिया कि कविचंद के डेरे के गिर्द दस लाख सिपाहियों का कड़ा पहरा बिठा दिया जाय, उसने मंत्री से कहा खबरदार पृथ्वीराज निकल कर भागने न पावे। सब फौज को हुक्म दिया जाय कि कमर कस कर लैस हो जावे। देखूं जाता कहां। है आज पृथ्वीराज को नग नग उतार लूं तो सही।

इतनी अवान होते ही कविचंद के डेरे के चारों ओर राठौर सेना के पहाड़ लग गए। जैसे पावस के धुआधार बहर चंद्रमा को आच्छादित कर लेते हैं वैसेही जैचंद की फौज ने कविचंद के डेरे घेर लिए। यह कौतुक देख कर इधर सामंत लोग कहने लगे चलो अच्छा हुआ यह भी जाना जायगा कि कौन कितने में है। काका कन्ह चौहान बोला भाइ अब सब लोग कील काँटे से दुरुस्त हो रहो देर नहीं है।

पृथ्वीराज के पूर्व्व पुरुषों में पप्पयराज नाम का कोई प्रतापी पुरुष हो गया था। उसके दो पुत्र थे जिनमें से एक के संतान में पृथ्वीराज का पिता राजा सोमेश्वर था और दूसरे का संजम राय था जिसका पुत्र लंगरीराय था। अतएव जिस समय भादों के बहलों की भाँति गड़बड़ नगाड़े बजाते और धरो मारो पकड़ो का रव मचाते हुए जैचंद की सेना के तीन लाख सिपाही पृथ्वीराज को पकड़ने के लिये बढ़े तो इधर से लंगरीराय ने लोहा लिया। राजा पृथ्वीराज लंगरीराय का बड़ा सम्मान करता था, वह उसे सगे भाई से भी अधिक मानता था यहां तक कि उसे आधी गद्दी का आसन देता था * अस्तु इस अवसर पर सदा के लिये नमक से उऋण होना विचार कर लंगरी राय ने तलवार पकड़ी और पृथ्वीराज को जुहार करके वह पंग सेना के सामने हुआ। उधर से राजा जैचंद का भांजा राजकुमार सहसमल तीन हजार राठौर राजपूत और चालीस मतवार हाथियों की बीड़ में गसा हुआ मार मार करता चला आता था। सहसमल स्वयं फूल कनक नामक एक बड़े भारी हाथी पर सवार था। लंगरीराय ने उसके साथियों में से दो हजार सिपाहियों को बात की बात में मार गिराया और उस कनक फूल के कुंभस्थल पर ऐसे दमक गया जैसे कंस को पछारने के लियें कृष्ण उसके स्वर्ण सिंहासन पर जा चढ़े हों। अस्तु लंगरी राय के एक ही हाथ में सहस मल का बारा न्यारा हो गया पर उसके एक हाथ में लंगरीराय भी बीच से चिर कर दो हो गया। अपने हिस्से का आधा धड़ तो लंगरी राय का वहीं पड़ा रह गया और आधा धड़ मार मार करता हुआ जैचंद के महलों की तरफ बढ़ा। ड्योढ़ी पर जाते ही उसे (लंगरीराय के आधे अंग को) सात हजार दरवानों ने आड़े हाथों ले लिया पर उनका किया कुछ भी न हो सका। सात हजार दरवानों को मार काट कर वह महलों में धसने लगा। तब राज्यमंत्री सुमत ने तलवार की मूठ पर हाथ डाला और पहरेदार सिपाहियों को ललकारा, फिर क्या था आनन फानन में तीन लाख सिपाही टूट पड़े। वह धड़ एक दरवाजा लाँघ चुका था इसलिये यों कहना चाहिए कि महलों के पहिले चौक में रक्त की कीच मच उठी, सारे महलों में हाय हाय मच गया। रनिवास

* महोबे की लड़ाई में जब संजम राय ने अपने शरीर का मांस गीध को देकर पृथ्वीराज के प्राण बचाए तब संजमराय के मरने पर राजा ने लंगरी राय को आधा राज्य का सत्वाधिकारी मान कर उसे अपने बराबर का मान दिया था।

की सब स्त्रियाँ गोख और झरोखों से तमाशा देखती थीं संयोगिता ने अपनी माता से पूछा "मा यह क्या कौतुक है। यह एक आँख एक कान एक पैर और एक हाथ वाला आधा अंग जिस तरफ को झपट करके तलवार का वार करता है उस तरफ सफाई होहो जाती है। सहस्रों सिपाहियों के सीस काट कर भुट्टे से गिरते जाते हैं।"

उस समय साक्षात् शृंगार रस के सरोवर राज्य महलों के आँगन में वीर एवं वीभत्स रस की सरिता उमड़ रही थी। लाल लाल लोहू के जल में काले काले बाल सेवार से; और सिपाहियों के हाथ पैर मगरमच्छ से, अंगुली इत्यादि छोटे छोटे छिन्न भिन्न अवयव झिंगुर से और ढालें अथवा हाथी के कपाल अच्छे कच्छे से मालूम होते थे। ऐसी सरिता में किशोरवय शूरवीरों के शीश कमल काली से और उनके नेत्र दृग रस लोभी अली से जान पड़ते थे। ऐसे सरोवर में कलह केल करता हुआ मत्त मतंग रूपी लंगरीराय अच्छे अच्छे के छक्के छुड़ा रहा था। इसी तरह घोर घमासान मार काट होते होते लंगरीराय और सुमंत का सामना होगया। दोनों में भर जोर बाँह भरी। दोनों के हाथ एक साथ एक दूसरे पर पड़े और दोनों का एक दम वारा न्यारा हो गया। निदान सुमंत तो घायल होकर गिर पड़ा लंगरीराय के शत्र का विचित्र कौतुक हुआ अर्थात् उसके शीश का तो पता ही न पड़ा कि कहां गया और उसके धड़ के जमीन पर गिरते ही एक चील्ह उसे ले उड़ी और उसे लेजाकर पृथ्वीराज के पास जा पटका। इधर जैचंद के तोपखाने की तोपें आप से आप धल उठीं, सारी पृथ्वी थर थर कांपने लगी मानो बड़ा भारी भूडोल आया हो। धन्य रे लंगरी राय बड़े बड़े वीर हो गए पर तेरा सा युद्ध न किसी ने कभी किया न करेगा। आधे धड़ से तीन लाख वीर सिपाहियों का मुँह मारना सहज नहीं है।

इस युद्ध में जैचंद की तरफ के तीन लाख सिपाही सात हजार घोड़े और कई सौ हाथी काम आए पर पृथ्वीराज की ओर से लंगरी राय और खेते खँगार खेत रहे। धन्य रे लंगरी राय तुझसा एक तूही था, तूने आधे अंग से जैचंद की चौकी रोकी आधे अंग से महलों के आंगन में हड़कंप मचा दिया पंगराज के अस्सी लाख में हाहाकार मचा दिया, मंत्री सुमंत को स्वर्ग में बसा दिया और संसार को आश्चर्योचित कर अद्वितीय शौर्य्य कर करिसमा दिखा दिया। वाह खूब किया! तू उसी संजम राय का तो पुत्र है जिसने महोबे में अपना मांस देकर पृथ्वीराज के प्राण बचाए थे। सच है सिंह के सिंह ही होते हैं।

एक तो सगे भांजे सहसमल का मारा जाना दूसरे राज्यमंत्री सुमंत का सदा के लिये चल बसना ये दोनो बातें राजा जैचन्द को बहुत खटकीं। हाय! शत्रु के एक सामंत ने इतना कर दिखाया। इसी सोच विचार में पड़कर जैचंद विकल हो उठा। जैसे किसी तेजस्वी तपसी के कारण इन्द्र का इन्द्रासन डुलने लगता है वैसेही जैचन्द के जी को चैन नहीं था। उसने उसी समय नगर कोतवाल रावण को बुलाकर कहा कि तुम मुसल्मानी सैनिकों को लेजा कर पृथ्वीराज को अच्छी तरह से घेरो चाहे जो हो पर वह निकल कर जाने न पावे मैं स्वय उसे पकडने के लिये आता हू। खबरदार। सावधान।

रावण ने राजा जैचन्द की ऐसी आज्ञा पाकर फौरन अपनी फौज में हुक्म सुनाया। उसने कहा कि महाराज जैचन्द पृथ्वीराज को पकड़ने के लिये स्वयं सज रहे हैं और मुझे आज्ञा है कि तुम लोगों को साथ लेकर गंगा किनारे घेरा डालूं। रावण के ऐसे बचन सुनकर उसके सिपाही बात की बात में अपने अपने हथियारों से सजकर इस तरह आ जुटे जैसे किसी योगी की समाधि भंग करने के लिये रंभादिक अप्सराएँ उत्सुक होकर पृथ्वी पर आने को उद्यत होती है। वे साक्षात् कराल काल के गाल एवं जमजाल के समान विकराल और भीम के समान भीमकाय और बलवान सिपाही अत्यंत क्रोध के कारण थरथर कांपते थे। उस समय उनके बड़े बड़े लाल लाल नेत्र ऐसे सुशोभित होते थे जैसे

आकाश को जीतने के लिये पृथ्वी में सहस्त्रों मगल ग्रह अजे हों। जैसे वायु के वेग से बदल छिन्न भिन्न हो जाते हैं, अत्यन्त शोक तथा मद की झोंक में सब होश भूल जाते हैं और राज्यमद में आकर अपने पराए एवं न्याय अन्याय का ज्ञान नहीं रहता वैसे ही उन सिपाहियों के रणगंगा स्नान करने से कलंक एवं पाप पुञ्जों का पता नहीं रहता। धर्म से अधर्म और यश से अपयश मिट जाता है अथवा जैसे वीर लोग अहिंसा धर्म को, भ्रमर चंपे की सुगंधि को और तपस्वी सब प्रकार के भोग बिलासों को त्याग देते हैं वैसेही रावण और उसके साथ के सिपाही उस समय जीवन की आशा छोड़कर पृथ्वीराज को पकड़ने के लिये चल पड़े।

आगे आगे रावण और उसके पीछे पीछे राजा जैचंद इस तरह चले जाते थे जैसे अरुणोदय के पीछे सूर्य्य और बाणों की बौछार के पीछे धनुर्धर अर्जुन का रथ उसकी सेना के बड़े बड़े दँतारे हाथी तो ऐसे मालूम होते थे जैसे अनहद नाद हो रहा हो और बीच बीच में लोहे की खड़खड़ाहट स्वर्ग में देवताओं के देवालयों की घरियार बज रही हो। हाथी सुंडें उठाकर घनघोर गर्जना करते और चिंघाड़ मारते, अत्यन्त तेजपुंज अचचल अश्व खुरी करते, ठीं देते और बन्दर की तरह छलागें मार मार कर वायुवेग की खबर लेते थे। उन पर अकड़ कर बैठे हुए सहज स्वभाव क्रोधी बलवान जवान सवार भी लाल आखें किए फूले अंग नहीं समाते थे, पर कपूत कूर कायरों के तो कलेजे बेकाम हुए जाते थे। जैचद के साथ के राठौर राजपूत योधा एक तो सहज स्वभाव ही से अत्यन्त क्रोधी थे पर इस समय तो मानो जलती हुई अग्नि में घी डाल दिया गया। एक बड़े भारी हाथी पर बैठा हुआ राजा जैचंद बार बार यही कह रहा था कि भला यह पृथ्वीराज रूपी शत्रु राठौर कुल को हरा कर जाने न पावे। उसकी ऐसी बातें सुनकर सैनिक लोग जैजैकार शब्द करते हुए धरो मारो पकड़ो आदि पुकारते थे। उस कर्कश रव के मारे यहां पर कान देना कठिन था।

घर छोड़ परदेस में थे। आरंभ में ही आधा अंग लंगरीराव मारा गया, चारों ओर से हजारों शत्रु मार मार करते चढ़े चले आरहे थे इत्यादि यह सब कुछ था पर बाहरे पृथ्वीराज! जिसके कान पर अब भी जूँ नहीं रेंगती थी। उसने हँस कर कहा "कविचन्द यह तो बतलाओ इतना बड़ा राजा जैचन्द यह पंग क्यों कहलाता है। इस पर कविचंद ने उत्तर दिया कि महाराज जैसे पंग अर्थात् लंगड़ा मनुष्य बिना भिंगुरी के सहारे कदापि चल फिर नहीं सकता वैसेही गंगा यमुना के द्वाब पर स्थापित राजा जैचन्द का दल अचल है, एक बार भिंगुरी स्वरूप दोनों नदियों की बाढ़ से इसका दल आध कोस तक बह गया तभी से यह दल पंगुरा या राजा पग कहलाने लगा।

जैचंद की आज्ञानुसार रावण ने सब रास्ते तो इस तरह से नाथ रक्खे थे कि कहीं से हवा के निकलने का सांस नहीं था। उधर से साठ हजार मुसल्मान बहुत से राजपूत और कई हजार मतवार हाथियों की भीड़ लिए हुए जैचद पहुचा। यह देख कर सच्चे स्वामिसेवी सामत सेना में से मलख प्रमार, कनक राय रघुबंसी, लक्ष्मन बघेला, पहारराय भाटिया, और पचाइन चहुआन ये पांच सरदार अग्रसर हुए। उस समय यद्यपि जैचंद के साथ में तत्काल मंत्री पद पर स्थापित हुआ उसी का भतीजा कन्हराय भी उपस्थित था और उसीने पहिली पसर करने की इच्छा की पर जैचंद ने उसे रोक दिया और पहारे खां गोरी सर्दार को आज्ञा दी कि वह सात हजार मुसल्मान सिपाहियों के साथ धावा

(१) यह लकड़ी जिसके सहारे लँगड़े लोग चलते हैं। इसे आज कल बैसाखी कहते हैं।

(२) पाठकों! पहार खां, इस नाम पर आश्चर्य्य न कीजिएगा। जैचंद की सेना के मुसल्मान तुर्किस्तान या अफगानिस्तान से आए हुए नहीं थे-वे यहीं पर मुसल्मान हो गए थे।

सूचना।

—o—

निम्न लिखित पुस्तकें "सेक्रेटरी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी" को लिखने से मिल सकती हैं।

	मूल्य	डाकव्यय
मलिक मुहम्मद की अखरावट	।=)	) ॥
कविवर बिहारीलाल-(बाबू राधाकृष्णदास रचित)	=)	) ॥
हिन्दी भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास (बाबू राधाकृष्णदास रचित)	।)	) ॥
समालोचना-(पण्डित गंगाप्रसाद अग्निहोत्री द्वारा अनुवादित) ...	=)	) ॥
समालोचनादर्श-पद्य-(बाबू जगन्नाथ दास रचित) ...	=)	) ॥
कर्तव्याकर्तव्यशास्त्र - (पण्डित नारायण पांडे रचित) ...	॥)	-)
विसूचिका चिकित्सा	।)	) ॥
हरिश्चन्द्र-पद्य-(बाबू जगन्नाथ दास रचित)	=)	) ॥
भगवद्गीता-(बाबू गदाधरसिंह द्वारा अनुवादित) ...	।-)	) ॥
उथेलो-(बाबू गदाधरसिंह द्वारा अनुवादित)	=)	) ॥
नागरीप्रचारिणी पत्रिका (सभा द्वारा सम्पादित) १२ भाग छप चुके हैं (आठवां भाग नहीं है) मूल्य-प्रति भाग	१)	-)
हिन्दी लेकचर-(बाबू हरिश्चन्द्र रचित)	-)	) ॥
ध्रुवदास की भक्तनामावली, टिप्पणी सहित	॥=)	-)
सदलमिश्र की चन्द्रावती	।-)	) ॥
सूदन कवि का सुजानचरित्र	२)	=)
लाल कवि का छत्रप्रकाश	१।)	-)
नन्ददास की रासपञ्चाध्यायी	।=)	) ॥
प्राचीन-लेख-मणि-माला-१ भाग (बाबू श्यामसुन्दर दास लिखित) ...	१)	-)
अशोक का जीवनचरित्र (ठाकुर सूर्यकुमार वर्म्मा लिखित) ...	।)	) ॥
नेपाल का इतिहास (पण्डित नारायण पांडे लिखित)	।-)	) ॥
पृथ्वीराजरासो-पहिला भाग (समय १-११)	४)	।)
,, दूसरा-तीसरा भाग (समय १२-५४)	१०)	॥)
कुमारसम्भवसार (पण्डित महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा अनुवादित) ...	=)	) ॥
श्रीधर का अंगलामा	।॥।)	-)
धम्मपद (ठाकुर सूर्यकुमार वर्म्मा लिखित)	॥)	-)
सभा के पुस्तकालय की सूची	=)	) ॥
मनोविज्ञान (पण्डित गणपत जानकी राम दूबे लिखित)	॥)	-)
चन्द्रशेखर का हम्मीर हठ	॥)	) ॥

महिलामृदुवाणी (मुंशी देवीप्रसाद लिखित)	...	...	१) -)
दादूदयाल की बानी	...	...	१॥) =)
कवि नूरमुहम्मद की इन्द्रावती १ भाग	...	...	१॥) =)
यूरोपीय दर्शन (पण्डित रामावतार पांडेय लिखित)	...	...	॥) -)
प्रबोधचन्द्रिका	...	...	॥) -)
विरहलीला—आनन्दघन कृत	...	...	=))॥
दादूदयाल का सबद	...	...	१) =)
जोधराज का हम्मीररासो	...	...	२) =)
सरल व्यायाम (बाबू कालिदास लिखित)	...	...	=) -)
पद्माकर कृत हिम्मतबहादुर विरदावली	...	...	॥=))॥
सुघड़ दर्जिन (बाबू ठाकुर प्रसाद लिखित)	...	...	॥) .-)
बनिताविनोद	...	...	१) =)
नवीन दृष्टि में प्रवीन भारत	...	...	१) -)
गीतावली	...	...	।))॥
योगदर्शन	...	...	२) -)
गुरु गीता	...	...	।))॥
रामचरितमानस	...	...	८) ॥)

नोट—ऊपर लिखी पुस्तकों में से अन्त की ७ पुस्तकों को छोड़कर शेष पुस्तकें आधे मूल्य पर काशी नागरीप्रचारिणी सभा के सभासदों को मिल सकती हैं। अन्तिम पुस्तक का मूल्य सभासदों के लिये ६॥) रु० है।

Nagari-Pracharini Granthmala Series No. 4-17

THE PRITHVÍRÁJ RÂSO

OF

CHAND BARDÂI,

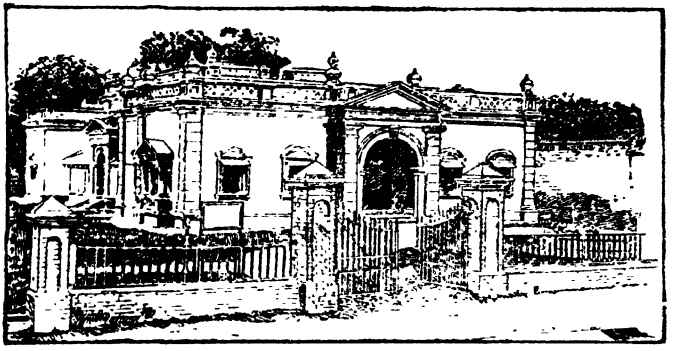
EDITED

BY

Mohanlal Vishnulal Pandia, & Syam Sundar Das, B. A.

With the assistance of Kunwar Kanhaiya Ju.

CANTOS LXI to LXIV.



महाकवि चंद वरदाई

कृत

पृथ्वीराजरासो

जिसको

मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या और श्यामसुन्दरदास बी. ए. ने

कुँअर कन्हैया जू की सहायता से

सम्पादित किया।

पर्व्व ६१ से ६४ तक.

PRINTED BY THAKUR DAS, MANAGER, AT THE TARA PRINTING WORKS, AND PUBLISHED BY THE NAGARI-PRACHARINI SABHA, BENARES.

19.0.

मूल्य १।) Issued 25th April 1910. [*Price R. 1/4/.*

सूचीपत्र ।

—o.—

(६१)	कनवज्ज समय (समाप्त)	पृष्ठ १८२९ से	१९५९ तक
	टाइटिल (भाग ४) और सूचीपत्र	,, १ ,,	३३ तक
(६२)	शुकचरित्र	पृष्ठ १९६० से	१९८५
(६३)	आषेटचष शाप नाम प्रस्ताव	,, १९८७ से	२०१५
(६४)	धीरपुंडीर नाम प्रस्ताव (अपूर्ण)	,, २०१७ ,,	२०२४
	रासोसार	२९५ ,,	३२६

——— o. ———

समरे निज इष्ट सु बीर बलं । धरि संगि उरंगिनि काल पलं ॥
छं० ॥ २३५० ॥

इहकारिय सीस असीस सजं । रस आवरि अप्प सु बीर नजं ॥
जपि मंचह मंछि पलभिभलियं । मिलि देव अयास किलक्कि लियं ॥
छं० ॥ २३५१ ॥

दिपि रूप मलप्प सुपंच सयं । इहकारि सुरारिय जट्ट रयं ॥
बजि आवध झाक सु हाक सुरं । कटि सीस धरद्धर ढारि धरं ॥
छं० ॥ २३५२ ॥

नचि बीर सुरेवि किलक्क लियं । हकि सेनह जट्ट हला बलियं ॥
जयसिंघ सु आय सनंमुषयं । सम आय मलप्प मिल्यौ रुषयं ॥
छं० ॥ २३५३ ॥

बजि आवध झाक करूर सुरं । इय तुट्टि उभै भर छोनि हरं ॥
दुअ हक्कि उठे भर बीर बरं । मिलि आवध सावध बंधि भरं ॥
छं० ॥ २३५४ ॥

असि झारि मलप्प सु पग्ग झरं । जयसिंघ विपडंस दुअ धरं ॥
जय सिंघ परयौ सब सेन लयं । गहि आवध ताहि मलप्प धयं ॥
छं० ॥ २३५५ ॥

मिलि गीठ करार सुधार घरं । मुष लग्गिय भग्गिय मीर भरं ॥
इहकारिय धीर दुहथ्थ कियं । पति धार धस्यौ लषि झंपिलियं ॥
छं० ॥ २३५६ ॥

इल इल्लिय सेन जट्ट भजियं । सय तीन परे बिन हंस लियं ॥
भर भग्गिय देषि सु पंग नृपं । इहकारिय हक्किय सेन अपं ॥
छं० ॥ २३५७ ॥

सब सेन हलक्किय पंग भरं । ग्रह कोपिय जानि करूर नरं ॥
* * * । * * छं०॥२३५८॥

सारंगराय जाट और सलख का युद्ध और सारंगराय का मारा जाना।

कवित्त ॥ तब सु जट्ट सारंग । सुमन सममेर समाहिय ॥
बिरचि पांन करि सीस । सीस मथ्थां पर बाहिय ॥

टोप कट्टि बिय टूक। फुट्टि तिम बिचि सिर फट्यो॥
सुमन षांन कम्मांन। बांन लग्गत सिर थट्यो॥
रिंझयौ सूर सुर असुर दैं। बर बर कहि करिवर धस्यो॥
दुअ हथ्थ मथ्थ दई जहकै। धर बिन सिर धरनी ढस्यो॥
छं० ॥ २३५९ ॥

सलख का सिर कटना।

गाथा॥ असि बर सिर बिरहीयं। बांनं संधांन सट्ठीयं तीरं॥
प्राहार भल्लि ढरीयं। सूरा सलहंत बाह बाह धानुष्पं॥
छं० ॥ २३६० ॥

कवित्त॥ सिर ढरंत धर धुक्कि। झुक्कि कट्टी कट्टारिय॥
बिना कंध आकंध। सुद्ध डोइ किद्ध प्रहारिय॥
लग्गि सु धर फुटि पार। सुरिम सलंष करि बाह्यौ॥
षग्ग ग्राह्यौ षिझि षेत। घाव अद्धं अध बाह्यौ॥
वाहंत घाव धर धर मिल्यौ। पराक्रम्म पम्मार किय॥
धनि उभय सेन अस्तुति करय। प्रथीराज सों[1] जाबु दिय॥
छं० ॥ २३६१ ॥

राह रूप कमधज्ज। गज्जि लग्गयौ आकासह॥
धार तिथ्थ उर जांनि। न्हान पम्मार फिर्यौ तह॥
रुधिर मद्दु जब करिय। जीव तनु तिलनि षंड अस॥
जुरित सीस असि गहिय। पांनि सोभियहि केस कुम॥
करि न्रपति सार न्रप पंग दल। अब्ब अ पति जप सब्ब किय॥
उग्यौ ग्रहनु प्रथिराज रवि। सलष अलष भुज दांन दिय॥
छं० ॥ २३६२ ॥

दूहा॥ दियौ दान पम्मार बलि। अरि सारंग [2]ममषेल॥
मरन जानि मन मझ्झ रत। लरि लष्यन बद्धेल॥छं०॥२३६३॥

पंग सेना में से प्रतापसिंह का पसर करना।

कवित्त॥ बंधव पति कनवज्ज। सिंघ परताप समथ्थह॥
सुत मातुल जैचंद। ब्रह्म चालुक्क सु दत्तह॥

(१) ए.-सों जावादिय। (२) ए.-मन।

तन उतंग गरु अत्त । गात दीरघ्घ इथ्थ भर ॥
सहस घट्ट सेना सुभट्ट । कुल वट्ट जुद्ध जुर ॥
कट्टिय सु वग्ग न्विप नाइ सिर । जनु वहल वद्दी अनिय ॥
जंप्यौ सु अप्प सेना सरस । गहौ राज सुभ्भर इनिय॥छं०॥२३६४ ॥

पृथ्वीराज की तरफ से लष्षन बघेल का लोहा लेना। प्रतापसिंह का मारा जाना ।

इह नाराच ॥ दिषेव सांमि रिम्म सों बघेल सीस नम्मयं ।
करे सु वाज सुद्ध आज नम्म पाय सम्मयं ॥
बचे सु लोल फुल्लि अंग अप्प ईस गज्जियं ।
करों सु षंड अप्प रिम्म सांइ षेत रज्जियं ॥ छं० ॥ २३६५ ॥
करे कृपांन अस्समांन धाय संप रहलं ।
चिते सु कांम स्वांमि तांम गज्ज औ करंकलं ॥
हनूअ मंच जंपि जंच धारि धीर षग्गयं ।
सुचिंति इष्ट आइ तिष्ट इक्क इक्क जग्गयं ॥छं० ॥ २३६६ ॥
मिल्यौ सु धाइ षेत ताइ धारयं करारयं ।
करंत इक्क धक्क डक्क झार धार धारयं ॥
परंत षंड सुंड तुंड बाजि दंत बिज्जलं ।
उड्डंत सीस षग्ग दीस दिष्पि राज दुद्दलं ॥ छं० ॥ २३६७ ॥
नचै कमंध बीर बंध देवियं किलक्किलं ।
करंत घाय एक तेक बिम्बि षंड विट्टलं ॥
रुलंत गिद्ध नच्चि सिद्ध पंषि संप इक्कियं ॥
षेलंति षेच भूचरौर गोमयं गहक्कियं ॥ छं० ॥ २३६८॥
बरंति बिंद अच्छरी भरं सुचित्त चिंतयं ।
करै अचिज्ज कौतिगं सुरं सु जुद्ध मंतियं ॥
धरंत षग्ग धाप यों प्रतष्प लष्पि लष्पनं ।
हयौ बघेल षग्गधार तुट्टि षग्ग तष्पनं ॥ छं०॥ २३६९ ॥
ग्रहौ सु इक्किसं बघेलतं हन्यो कटारियं ॥
करे सु छिन्न भिन्नयं प्रताप भूमि पारियं ॥

करंत हक्क धार षग्ग षग्ग धारि नट्टरे ॥
हने सु राय पंग सेन क्षोनियं पर परे ॥ छं० ॥ २३७० ॥
करी अरूह मज्ज सिंघ लष्पनं गहक्कियं ।
ढरंत धार पंग भार भज्जि हक्क हक्कियं ॥
मघन्न घाय बिद्धि ताय मुच्छि लष्पनं ढरं ।
पर्‌यौ प्रताप पंग भाय पंच सौ परष्परं ॥ छं० ॥ २३७१ ॥

लष्षन बघेल का वीरता के साथ खेत रहना।

कवित्त ॥ जीति समर लष्पन बघेल । अरि हनिग षग्ग झर ॥
तिधर तुट्टि धरनहि धुकंत । निबरंत अङ्ग धर ॥
तहँ गिद्धारव रुरिग । अंत गहि अंतह लग्गिग ॥
तरनि तेज रस वसह । पवन पवनां घन बज्जिग ॥
तिहि नाद ईस मथ्थौ धुन्यौ । अमिय बुंद ससि उल्लस्यौ ॥
बिढस्यौ धवल संकिय गवरि । टरिय गंग संकर हस्यो ॥
छं० ॥ २३७२ ॥

दूहा ॥ सात कमल ससि उप्परह । कन्ह चंद गोयंद ॥
निडुर सलय बरसिंह नर । साध भरै सुर इंद ॥ छं० ॥२३७३ ॥

चौपाई ॥ 'पारस फिरि सेनं प्रथिराजं । है गै दल चतुरंगी साजं ॥
सो ओपम कविराजह ओपी । ज्यों इंद्र पुरी बलि धूरत कोपी ॥
छं० ॥ २३७४ ॥

लष्षन बघेल की वीरता।

कवित्त ॥ दल सु पंग नृप चंपि । राज बिंध्यौ चतुरंगी ॥
तह लष्पन बघ्घेल । षेत संभरि अनभंगी ॥
राज कमाननि षंचि । षग्ग पोलिय पिजि जुट्टिय ॥
कै बड़वानल लपट । बीच सप्पर तें छुट्टिय ॥
करि भंग अग्गि अरि जुग्गि जुरि । मौरि मुहम मूरत्त मन ॥
हय मत्त अंत तिन एक किय । परिन समझि ढूढंत घन ॥
छं० ॥ २३७५ ॥

(१) प्र. कृ. को०-परि पारस सेनं प्रथिराजं ।

पहार राय तोमर का अग्रसर होना ।

दूहा परत वघेल सु मेल किय । रन रट्ठौर सु भार ॥
कनवज ढिल्लिय कंकरह । तोंवर तिट्ठ पहार ॥ छं० ॥ २३७६ ॥
कवित्त ॥ दादस दिन पच्छलौ । घटी पल बीह समग्गल ॥
सविता वासर सेत । दसमि दह पंच विजय पल ॥
मिलिय चंद निज नारि । रारि सज्ज्यौ सु रुद्र रस ॥
रा असोक साहनौ । सहस सेना सु अट्ठ तस ॥
स्वामित्त भ्रम्म रत्तौ सु रह । करै प्रीति रा पंग तस ॥
लष्ष्यो सु जाइ चहुआन दिग । क्रम्यौ फौज बंधिय उक्रमि ॥
छं० ॥ २३७७ ॥

जैचन्द का असोक राय को सहायक देकर सहदेव को धावा करने की आज्ञा देना ।

पंग देषि साहनौ । जात जंगल पह उप्पर ॥
मनह सिंघ पर सिंघ । बीर आवरिय स्वामि छर ॥
तब राधा सहदेव । देषि दिसि वाम समग्गल ॥
चपरत्ता हवि जान । अप्प उद्धर जादव कुल ॥
सिर नाइ आइ अघघा मरकि । दिय अग्गा पह पंग तमि ॥
संग्रहौ जाइ चहुआन कौं । रा असोक साहाय क्रमि ॥ छं० ॥ २३७८ ॥
दूहा ॥ नाइ सीस मिलि निज सयन । दिय अग्गा बर पंग ॥
बंधि अनिय दादस सहस । बाजे बज्जे जंग ॥ छं० ॥ २३७९ ॥

सहदेव और असोक राय का पसर करना ।

सजिय अप्प सहदेव दल । अनिय सु राय असोक ॥
मिल्यौ जाइ मध्ये सु भर । अप्प चिंति उधलोक ॥ छं० ॥ २३८० ॥
रा असोक सहदेव रा । मिलि उभय दल येक ॥
सहस बीस दल भर जुरिग । चलें सु तत्ते तेक ॥ छं० ॥ २३८१ ॥
प्रथीराज बांई दिसा । [1]आवत पल दल देषि ॥
गहिय बग्ग पाहार सम । तपि दिय आयस तेष ॥ छं० ॥ २३८२ ॥

(१) मो.-आवत देख दिलेस ।

पृथ्वीराज को तोमर प्रहार को आज्ञा देना।

कवित्त ॥ दल सु पंग रट्ठिवर। जाम चंपिय दिल्लिय भर ॥
तब जंपिय प्रथिराज। पंड वंसह पाहर नर ॥
हरि हथ्थां हरि गहिहि। बांम रष्यै इहि बीरह ॥
सेस सीस कंपियै। डट्ठ डुल्लिय भुवि भीरह ॥
कविचंद एह आंपुन्न सुनु। बीर मंच उद्धर भन्यौ ॥
ठटुक्यौ सेन जयचंद दल। जए तोंअर टट्टर धन्यौ॥छं०॥२३८३॥

नाइ सीस प्रथिराज। अप्प कस्यौ हय हंसह ॥
तारापति सम तेज। षिचि वाहन हरि वंसह ॥
[1]हंम हंस आपेष। इष्ट मंचं उच्चारिय ॥
चल्यौ जंपि मुष राम। स्वामि धम्महं संभारिय ॥
[2]जोगनी जूह दुअ हुअ। बीर जूह अग्गै सु नचि ॥
निरषंत अमर नारद निगह। अच्छरि रथ सीसह सु रचि ॥
छं० ॥ २३८४ ॥

पहारराय तोमर का युद्ध करना। असोक राय का मारा जाना।

पद्धरी ॥ उप्पारि बग्ग तोमर पहार। गज्जयौ सूर सज्जे सु सार ॥
उट्ठंत रूप अरि बीस दिट्ठ। सौ एक रूप अभिलयंत जिट्ठ ॥
छं० ॥ २३८५ ॥

साहस्स तेग बाहंत ताम। दिप्पे सु षेत षल स्वामि काम ॥
धारा सुधार बाहंत बीर। गज्जयौ मझ्झ मनु करि कंठीर ॥
॥ छं० २३८६ ॥

तुट्टंत सीस उड्डंत रिट्ठ। अब संक बुट्ठि मनु उपल वृट्ठि ॥
तुट्टंति बाह [2]उड़ि सघन घाय। उड्डंत चिल्ह मनु पंष पाइ ॥
छं० ॥२३८७॥

धर धर धरद्धर परै भार। कट कट्ट पग्ग बज्जै करार ॥

(१) पृ.-हंस हेस आयप्प हुअ। (२) मो. मनुं।

तुट्टै विषग्ग उट्ठै अकास। चमकंत तड़ित मनुं मेघभास॥
छं० ॥ २३८८ ॥

परसंत पूर ओनं प्रवाह। गहरंत कंठ सट्ठी सुबाह॥
आइयौ राय अस्सोक गज्जि। दो हथ्थ करारी संग सज्जि॥
छं० ॥ २३८९ ॥

बेहथ्थ हयौ तोमर पहार। भिट्टयौ न अंग तुट्टौ सु सार॥
संग्रह्यौ कंठ तोमर पहार। पचारि सीस उप्पर उझारि॥
छं० ॥ २३९० ॥

करि षंड षंड नंष्यौ धराउ। बिन अंस उड़्यो [1]जरनी निहाउ॥
रिन मझ्झ पर्‌यौ अस्सोक जानि। ओहक्यौ पेंड पंचह परांनि॥
छं० ॥ २३९१ ॥

कवित्त॥ धरिय भार पाहार। पग दल बल ढंढोल्यौ॥
[2]हय गय नर नर पतिय ताम। बंबर झंझोल्यौ॥
छच पच मारुत महंत। अरि बांन उड़ाइय॥
मार मार संभार चंद। जिम[3]मुष मुष मांइय॥
आनंद केलि कलहंत किय। इय हिलोल दल दुम्भरिय॥
तों अर चिबालमारह सुभर। सिरसुबर अझ्झर झरिय॥
छं० ॥ २३९२॥

पहार राय तोमर और सहदेव का युद्ध। दोनों का मारा जाना।

भुजंगी। तबै राइ सहदेव देवंग वीरं। धरे धाइयौ संग से हथ्थ धीरं॥
हयौ राइ पहार सों कंठ मन्नी। परे फुट्टि उट्ठी उकस्सी सु अन्नी॥
छं० ॥ २३९३ ॥

ग्रह्यौ सेल संगै सहं देवि तामं। [4]'चल्यौ बथ्थ हथ्थे उट्ठौ हंस धामं॥
ढरे दून कल्ले बरकूं अचेतं। दुनै सूर जुझ्झै उभै स्वामि हेतं॥
छं० ॥ २३९४ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-धरनी। (२) ए. कृ. को.-हय गय नर पंतिय पताप।
(३) ए. कृ. को.-सुप। (४) ए. कृ. को.-चप्यौ।

परंतं पहारं उठी ओन धारं। उठे बीर मत्ते सु रत्ते करारं॥
सहस्सं सु एकं सयं दून बीरं। करै असि उतंग सा गात धीरं॥
छं० ॥ २३९५ ॥

पंग नेत बंधे किलक्कार उट्ठे। नचै जाम बीरंत रत्ते सु रूढ़े॥
धरक्के सु गोमं धरक्के धरत्री। भरक्कंत सेना सु भग्गै परत्री॥
छं० ॥ २३९६ ॥

ग्रहै गज्ज दंतं फिरक्कंत उड्डै। पियै ओन धारं गजं पात गुड्डै॥
भयो पंग सेनं सनेहंति कारं। फिरै जोगिनी मद्द मद्दी फिकारं॥
छं० ॥ २३९७ ॥

भगै सेन रायं भरक्कै सु पंगं। धरी एक वित्ती भरं बित्ति जंगं॥
उड़ै बीर अस्सं सु आकास मंगै। पहुं राउ पाहार गौ मुत्ति संगै॥
छं० ॥ २३९८ ॥

दूहा॥ गरजै दस्स जैचंद गुर। धुर भग्गौ ढिल्लीस॥
वासर जीजै वेढि थिय। चंद चंद रवि रीस॥ छं०॥ २३९९॥

जंघार भीम का आड़े आना।

तब जंघारो भीम भर। स्वामि सु अग्गे आइ॥
गहि असिवर उभ्भन उससि। कमध कमद्धा धाइ॥ छं० ॥२४००॥

कवित्त॥ रा कमधज्ज नरिंदं। अद्ध षोहनिय तुरंगयि॥
तिन महि अद्दमि जक्क। जौन नग मुत्ति सुरंगिय॥
तिन छुट्टत हल्ल बल्लत। साहि सामंत राज चढ़ि॥
ते थल थक्कवि रहित। चहूआन सु राजन रढ़ि॥
सिथि सिथिल गंग थल बल्ल अबल्ल। परसि प्रांन[1]मुक्किन रहिय॥
जुरि जाग मग्ग सोरों समर। चवत जुद्ध चंदह कहिय॥
छं० ॥ २४०१ ॥

पंग सेना में से पंचाइन का अग्रसर होना।

कुंडलिया॥ सिलहदार पंचाइनौ। करि जुहार पग धार॥
पंग ससुद मझ्झहि परिय। वजि धुंमरि ग्रह पार॥

(१) ए.कृ. को.-मुक्किय।

बजि धुम्मिरि गइ पार। मार जुध्ध परिय उदक मधि॥
ज्यों बड़वानल [1]लपट्ट। मध्थि उट्ठंत नरं नधि॥
मार झार तन झरिग। मौम तुथ्थौ धरनी लहि॥
जोगिनि पुर आवाम। मिलन [2]इंदं इय मौलहि॥ छं०॥ २४००॥

जंधार भीम और पंचाह का युद्ध।

कवित्त॥ दहन पंथ सो इष्ट। देव दाहिन देवं फिरि॥
घात वज्ज निग्घत्ति। इक्कि चहुआन मभिक्ख परि॥
सुबर बंध कमधज्ज। धाक बज्जे इक्केरव॥
हय जुद्धं हर हरी। जुद्ध वज्जी जुझ्झम रव॥
मिलि मार धार विषमह विमल। कमल मौम नच्चै कि जल॥
सिव लोक सेत नन मौन धन। सुर सुर कंदल बत्त फल॥
छं०॥ २४०१॥

पृथ्वीराज का मोरों तक पहुंचना।

दूहा॥ पुर मोरों गंगह उदक। जोग मग्ग तिथ वित्त॥
अद्भुत रस असिवर भयौ। बंजन बरन कवित्त॥
छं०॥२४०२॥

किस सामंत के युद्ध में पृथ्वीराज कितने कोस गए।

कवित्त॥ बेद कोस हरसिंघ। उभै चियत्त बड़ गुज्जर॥
काम बान हर नयन। निडर निडुर भुमि [3]सुभ्भर॥
छग्गान पट्ट पलानि। कन्ह पंचिय द्रग पालह॥
अलह बाल हादमह। अचल विग्घा गनि कालह॥
शृंगार बिंझ मलयह मुकथ। लयन पहारति पंचचय[4]॥
इत्तने सूर मद्य झुझझ तह। मोरों पुर प्रथिराज अय॥
छं०॥ २४०३॥

(१) ए. क. को.-पलट्ट। (२) ए. क. को. हंतं।
(३) ए. क. को.-सुद्धर। (४) मो.-मय।

अपनी सीमा निकल जाने पर पंग का आगे न बढना और महादेव का दस हजार सेना लेकर आक्रमण करना।

पख्यौ पेषि पाइहार। राज कमधज्ज कोप किय॥
पहु सोरों प्रथिराज। निकट दिष्यो सुचिंति हिय॥
गयौ राज जंगलिय। नाथ कनवज्ज मन्नि मन॥
जग्य जोग विग्गार। लहिय जै पुनि हरिय तिनु॥
आइयौ राइ महदेव तब। नाय सीस बोल्यौ बयन॥
संग्रहों राज प्रथिराज को। सहों पहु जंगल सयन॥

छं० ॥ २४०४ ॥

इम कसि सुत सामंत। देव सजि चल्यौ सेन बर॥
खीस नाम पम्मार। प्रिथक परसंसि अप्प भर॥
जपि बाया जगनाथ। बान उच्चारिय धीरह॥
अनी बंधि दस सहस। अप्प सज्जै पर पीरह॥
ठननंकि घंट भेरिय सबद। पूरि निसान दिमांन सुर॥
महदेव चल्यौ प्रथिराज पर। मिलिय जुद्ध मनु देव दुर॥

छं० ॥ २४०५ ॥

महादेवराव और कचरााय का द्वंद युद्ध। दोनों का मारा जाना।

पद्धरी॥ आवंत देषि महदेव सेंन। उप्पारि सीस भर सज्जि गंन॥
मातुलह सयन संयोगि बंध। बर लहन धीर भर जुद्ध नंध॥

छं० ॥ २४०६ ॥

कचरााय चालुक्क धीर। आवंत देषि दल गज्जि बीर॥
सिरनाइ राज प्रथिराज ताम। बल कलिय बदन उरकंक काम॥

छं० ॥ २४०७ ॥

इक वार पहिल लग्गे सु घाय। जित्तए सुभर तिन पंग राइ॥
संजोगि नेंग दिय कंठ माल। पहिराइ कंठ बज्जी भुआल॥

छं० ॥ २४०८ ॥

गज्जियो भीम जिम सुअन भीम । पेषेव जूह मनुहरि करीम ॥
कस्सियो तंग वज्जी सु नेत । संकलपि सीस प्रथिराज हेत ॥
छं० ॥ २४०९ ॥

आयौ समुष्प रिम्माह समथ्थ । चिभाग संग किय सीघ्र हथ्थ ॥
उच्चरिय मंच भैरव कराल । उच्चरिय ध्यान चिपुराइ बाल ॥
छं० ॥ २४१० ॥

किल किलिय किट्ट भैरवह जाम । हुंकार देवि दीनो सु ताम ॥
परदल पयट्ठ उप्पारि बग्ग । घुल्लिय कपाट भर स्वर्ग मग्ग ॥
छं० ॥ २४११ ॥

बाहंत षग्ग भर सीघ्र हथ्थ । कुर सेन मद्धि मनु मिलिय पथ्थ ॥
बाहंत षग्ग आयुध अपार । धर धार धरनि मधि भरनि भार ॥
छं० ॥ २४१२ ॥

किलकार बीर चालुक्क सथ्थ । नाचंत भूत भैरव सु तथ्थ ॥
मुष मुष्प लग्गि चालुक्क [1]चाय । बिबि पंड धरै धर तुट्टि धाय ॥
छं० ॥ २४१३ ॥

कोतिग्ग रास देषंत देव । नारद बिनोद नंचीय एव ॥
बर बरै इच्छ अच्छरिय ताम । पलचर पल पूरै रुहिर काम ॥
छं० ॥ २४१४ ॥

रस रुद्र भयौ भर जुद्ध बीर । पूजंत सब्ब चालुक्क धीर ॥
चालुक्क तेक रस रमै[2] रास । चमकंत षग्ग कर बिज्जु भास ॥
छं० ॥ २४१५ ॥

महदेव सेन हल हलत देषि । ग्रह राह जेम दल ग्रसत [3]पेषि ॥
घन पूरि घाव चालुक्क अंग । बर तत्त सुमत्तन वधिय रंग ॥
छं० ॥ २४१६ ॥

धाइयौ ताम महदेव तम्म । चालुक्क हयो संगी उरम्म ॥
दुअ लग्गि बीर मिलि विषम घाव । आवड्ड तुट्टि दुअ बीर ताव ॥
छं० ॥ २४१७ ॥

(१) मो.-थाइ । (२) मो. राइ । (३) मो.- देषि ।

लग्गे सु बध्थ समवय सरूप। दुअ अट्ठ बरष दुअ ध्रम्म भूप॥
लग्गे सु कंठ असि उट्ठि ताम। दुअ झुझि भूप दुअ सामि काम॥
छं०॥२४१८॥

दुअ चले मुत्ति मारग्ग सग्ग। विम्मान जानि विचि विचिच लग्ग॥
अच्छरिय उंच रुंधें सु नेव। जय जय चवंत नँषि कुसुम देव॥
छं०॥२४१९॥

भेदे सु उरध मंडलह दून। बर मुत्ति गत्ति प्रम्मेसु जन॥
[1]दुअ ढरे गंग महि जल प्रवाह। उप्रमे ताम गुन बंध थाह॥
छं०॥२४२०॥

लोलराय प्रमार और उदय सिंह का परस्पर घोर युद्ध करना और दोनों का मारा जाना।

कबित्त॥ लोलराइ पम्मार। राइ महदेव सु सेवं॥
महस तीन थट सुभट। आय उप्पर बर केवं॥
मार मार उच्चार। मार गज्जे मुष मारह॥
तेन मुष्प जगदेव। धार बज्जिय पति धारह॥
धरि व्योम सीस सजि सामि ध्रम। झर उझार दुझझरति झर॥
मानों कि बघ्घ गहुर बिचह। झपट लपट लेयंत झर॥
छं०॥२४२१॥

वेली भुजंग॥ भुरं झार झट्टं बजे घट्ट घट्टं। लगे पंग भट्टं अगी झल्ल पट्टं॥
भगे थट्ट जानं दहं बट्ट मानं। परे गज्ज बानं भरं थान थानं॥
छं०॥२४२२॥

तबै नील देवं अयो देव मुष्यं। दुअै बीर बाहं दुअै सामि रुष्यं॥
उदै तीन पुत्तं उदैसिंघ देवं। इतै राव बंभं उत देव सेवं॥
छं०॥२४२३॥

दुअंगात उच्चं सिरं उंच धारे। मनो सेन कोटं मझारं मुनारे॥
करं नंपि[2]च्चंमं पगं दोय हथ्थं। उझारै सु मथ्थं दुअं टोप[3]कथ्थं॥
छं०॥२४२४॥

(१) ए. कृ. को.-दुअठंर गंमा मझीं। (२) मो.-व्रमं, को.-चर्म। (३) मो.-कटूटं।

फटै उत्तमंगं टइंनं सुरंगं। गिरं आनि चल्लं रतं धार गंगं॥
धरी एक धारं अपारंति वग्गै। पगं सार तुट्टै जमंदट्ठ लग्गै॥
छं० ॥ २४२५ ॥
इये जर जरं उनके उनाही। ढरे दोइ कलेवरं गंग माहीं॥
सिरं सुम्मनं देव ब्रष्पा विराजै। पछै छूर धारं बरं रंभ [1]छाजै॥
छं० ॥ २४२६ ॥
तिनं सीस देवी दियो सामि काजै। बरं तास कित्ती जगम्मै विराजै॥
जमं ठौर ठेलै गयो ब्रह्म थानं। जिनै जित्तयो लोक परलोक मानं॥
छं० ॥२४२७ ॥

कचराराय के मारे जाने पर पंग दल का कोप करके धावा करना।

कवित्त ॥ गरजे दल जै चंद। सीस पट्ट देन नरेसर॥
समर छूर सामंत। सु पुनि झुझ्झ नर सुद्धर॥
पर्‍यौ भार पम्मार। अंग एकै आचग्गर॥
वासुर तीजै वेढि। कलह बेयक्कि वाहि करि॥
जगि देवन दानव देव जगि। पार मार उरवार पनि॥
थंभयौ कटक घाइनि विकट। [2]देव सु एवं बद्दियनि॥छं०॥२४२८॥
दूहा ॥ कौन सहस मे तीन सय। छूर धीर संग्राम॥
बधि पम्मारह बीर बर। दम गै अस्सव ताम॥ छं० ॥ २४२९ ॥
कवित्त ॥ दुट्ठं पष्यां गंभीर। दुट्ठं पष्यां छच पत्तं॥
दुट्ठ पष्यै राजान। दुट्ठं पष्यै रावत्तं॥
दुट्ठ वाहा दुज्जरह। मात मातुल मुष लष्यै॥
कंठमाल सुभ कंठ। नाग [3]माजौं गह रष्यै॥
संकठह स्वामि बंकट विकट। चिघट रुक्कि कमधज्ज दल॥
अदित वार दसमिय दिवस। गरुअ गंग भ्रंमुंग जल॥
छं० ॥२४३० ॥

(१) मो.-साजै। (२) ए. कृ. को.- देव सुए पग वीद्दय।
(३) ए. छ. को. नाग सौ जोग सुरष्यै

कचरााय का स्वर्गवास ।

संगराय भानेज । राय कचरा अरि कच्चर ॥
गरुअ ध्रंम स्वामित्त । सार संमुह रन अच्चर ॥
पट्टन सिर अरु पट्ट । गंग घट्टह 'घन नष्यौ ॥
जै जै जै जपि सह । नह चिभुअनपति भष्यो ॥
पष्परत पलिय बज्जिय बिहर । उग्रराय रट्ठौर धर ॥
चालुक चलंत सुभ स्वरगमन । ब्रह्म अरघ दीनौ सु धर ॥
छं० ॥ २४३१ ॥

कचरााय का पराक्रम ।

दूहा ॥ परें पंच सें पंग भर । परि चालुक्क सु तष्प ॥
बिलष बदन प्रथिराज भय । बंछिय मरन सु अष्प ॥छं०॥२४३२॥
निसि नौमिय वित्तिय लरत । दसमिय पहु रिति च्यार ॥
पंगपहुमि प्रथिराज भिरि । अथ्थिग आदित वार ॥ छं०॥२४३३॥

सब सामंतों के मरने पर पृथ्वीराज का स्वयं कमान खींचना ।

कवित्त ॥ घरिय सत्त आदित्त । देव दसमिय दिन रोहिनि ॥
रुक्यौ तथ्थ प्रथिराज । पंग सथ्थह अध षोहनि ॥
पंच अग्ग च्यालीस । सत्त सामंत सु रत्तिय ॥
पंच अग्ग पंचास । सद्धि सथ्थह सेवक तिय ॥
वामंग तुरंगम राज तजि । तोन सज्जि सिंगिनि सु कर ॥
बंदेव चंद संदेह नह । जीवराज अचरिज्ज नर ॥छं०॥२४३४ ॥

जैचंद का बराबर बढ़ते आना और जंबारे भीम का मोरचा रोकना ।

दूहा ॥ 'गंग पुट्ठि अग्यै विहर । द्रत बंकौ जल किंदु ॥
उठ्यौ छत्र न्रप पंग पर । मनु हेमं दंड पर इंदु ॥छं०॥२४३५ ॥
गरजे दल जैचंद गुर । धुर मग्ग दिल्ल स ॥

(१) ए. क. को.-घट । (२) मो.-मंग ।

वासुर तीजै बैठितं । चंद चंद रवि रेस ॥ छं० ॥ २४३६ ॥
तब जंघारो भीम भर । स्वामि सु अग्गै आय ॥
गहि असिवर ओड़न उक्कसि । [1]कमध कमड्ढा धाय॥छं०॥२४३७॥

कवित्त ॥ जंघारौ रा भीम । स्वामि अग्गै भयौ ओड़न ॥
दुहूं बाहां सामंत । दुहूं हादस दस को दन ॥
पच्छ सथ्थ संजोगि । कलह कंतिय कोतूहल ॥
महन रंभ मोहनिय । सुरां अमृत तहूलह ॥
दुहूं राय जुद्ध दुंदज भयौ । चाहुआन रट्ठौर भर ॥
घरि च्यारि ओन असिवर झरयौ । मनहु धुम्म अग्गा सु झर ॥
छं० ॥ २४३८ ॥

जंघारे भीम का तलवार और कटार लेकर युद्ध करना ।

भुजंगी ॥ झरं झार झारंति झारंति झारं । ढरं ढार ढारंति ढारंति ढारं ॥
तुटै कंध कामंध संधं उसंधं । बहै संगि षग्गं रतं रंभ रंभं ॥
छं० ॥ २४३९ ॥
चवं सूर सेलं सरं सार सारं । लगै कोन अंगं विभंगं विहारं ॥
चलै ओन सारं [2]बिरंतं सुधारं । मनों वारि रुद्दं अनंतं प्रनारं ॥
छं० ॥ २४४० ॥
बजै घट्ट घट्टं सबद्दं सबद्दं । नको हारि मन्नै नको भेटि हद्दं ॥
तुटै षग्ग लग्गै गहे हथ्थ बथ्थं । मनों मल्ल जूझंत बेजानि वथ्थं ॥
छं० ॥ २४४१ ॥
बढी ओन धारा रनं पूर पूरं । चढ़ी सक्ति जभी कमड्ढंति सूरं ॥
जयंतं जयंतं चवंसट्ठि सद्दं । असी तार झारं नचे नेम नद्दं ॥
छं०॥ २४४२ ॥
बजै जंगलीसं विडारं विडारं । करं धारि झारं सकत्ती करारं ॥
करी फुट्टि सन्नाह प्रगटंत अच्छी । मुषं भीमरा कंध काढंत मच्छी ॥
छं० ॥ २४४३ ॥

(१) मो.-कमधज कमढ्ढां धाय । (२) ए. कृ. को.-चिरत ।

धरे बारडं सिंह आघाय घायं। [1]बरं बार सुष्यं अगंमन्न धायं॥
जिते सेन बिग्घा कटे षग्ग हक्कं। परे कातरं सं भयानंक टक्कं॥

छं० ॥ २४४४ ॥

लघं चंपियं सीम चहुआन धायं। गनो सिंघ क्रम्यौ मद दंति पायं॥
लघं लाघ बंकौ न बाहंत बंकं। मनोंचक्क भेटंत सीसं निसंकं॥

छं० ॥ २४४५ ॥

कटे टट्टरं ट्टव सन्नाह वट्टं। बहै षग्ग झट्टं मनो बीज छट्टं॥
मधे ओन फेफं सु डिंभं फरक्कं। मनो मभ्भ नाराज छुट्टंत झक्कं॥

छं० ॥ २४४६ ॥

न्विपं पोपि धारा धरै धाय धायं। उठै दंग बग्गं मनों लप्पगायं॥
चवै पंग आनं गहन्नं गहन्नं। जगन्माल क्रम्यौ सुन्यौ मौम धुन्नं॥

छं० ॥ २४४७॥

[2]करन्नाटिया राय रुद्दंतिरायं। रवै वाम दच्छिन्न राजंग मायं॥
बहै बिंझ मालं करीवार मथ्थं। दुअं लग्गि झाकं मनो कोपि पथ्थं॥

छं० ॥ २४४८ ॥

कलेवार गट्टें परे छेदि बंभं। मनों भृंग पंछी सु उड्डंत संभं॥
[3]नरं हक्क बज्जी सु रज्जी मकत्ती। रची पुष्प विष्टं यहं देवि पत्ती॥

छं० ॥ २४४९ ॥

असी झाक बज्जंत रज्जंत सूरं। भयं चक्क जुट्टं भयं देव दूरं॥
दलं दून धारों ढरै षंड षंडं। बरं मंग्रहै ईस मीसंति रुंडं॥

छं० ॥ २४५० ॥

यनं थोर सूर राग सूरं बरंती। रचे माल कंठं कुमम्मं हरंती॥
सजै सेंन [4]आवन्न वन्नं विमानं। वरं रोहि तथ्थं क्रमं अप्पथानं॥

छं० ॥ २४५१ ॥

जयं मद्द बद्दं पलं ओन चारं। थक्यौ सूर नारद नच्यौ विहारं॥
घनं घाइ अघघाइ मामंत सूरं। धरे मंडलं मब्ब सामुच्छिजूरं॥

छं० ॥ २४५२ ॥

(२) ए. कृ. को.-मार। (१) मो.-करै लाठिया (२) ए. कृ. को. भरं, झरं।
(४) ए. कृ. को.-कावन्न।

दइ पंच पंग परे सूर सारं । भरं राज सामंत हथ्थं हजारं ॥
भय अद्भूतं रसं बीर बीरं । घटी दून जुद्धं बिहानं बिहारं ॥
छं० ॥ २४५२ ॥

तब जंघारौ जोगी जुगिंद । कत्ती कट्टारौ ॥
असि बिभूति घसि अंग । पवन अरि भूषन हारौ ॥
सेन पंग मन मथन । [1]ब्रम्ह पग गयँद प्रहानं ॥
[2]पलति मुंड उरहार । सिंगि सद् बद्दन ब्रिषानं ॥
आसन सु दिट्ठ पग दिट्ठ बर । सिरह चंद अंम्रत अमर ॥
मंडली राम रावन भिरत । नभौ बीर दुत्तौ समर ॥छं०॥२४५३॥

जंघारे भीम का मारा जाना।

घरिय च्यार रवि रत्त । पंग दल बल आहव्यौ ॥
तब जंघारौ भीम । भ्रंम स्वामित तन तुव्यौ ॥
सगर गौर सिर मौर । रेह रष्पिय अजमेरिय ॥
उड़त हंस आकास । दिट्ठ घन अच्छरि घेरिय ॥
जंघार सूर अवधूत मन । असि बिभूति अंगह घसिय ॥
पुच्छयो सु जान चिभुवन सकल । को सु लोक लोकैं वसिय ॥
छं० ॥ २४५४ ॥

पंगदल की समुद्र से उपमा वर्णन।

भय समुंद जैचंद । उतरि जै जै क्यों पारह ॥
अदभुत दल अममान । अन्न बुड्डहि करिवारह ॥
तहां बोहिय हर ब्रह्म । भार सब सिर पर पधर्‌यौ ॥
उद्धरि उद्ध कुमार । धनि जु जननी जिहि जनयौ ॥
नन करहि अवर करिहै नको । गौर बंस अस बुझझयौ ॥
सो साहिब सेन निबाहि करि । तब अप्पन फिरि झुज्झयौ ॥
छं० ॥ २४५५ ॥

बर छंड्यौ दुहु राय । बरुन छंड्यौ बर बारर ॥
सिर थक्यौ सहि सार । बरुन थक्यौ गहि सारर ॥

(१) गो.-ब्रह्म। (२) ए. कृ. को. लपत। (३) ए.-सिरमार।

रव थक्यौ रव रवन । रवन थक्यौ मुष मारह ॥
धर थक्यौ धर परत । मनुन थक्यौ उच्चारह ॥
पायौ न पार पौरुष पिसुन । स्वामिनि सह अच्छरि जप्यो ॥
जिम जिम सु सिंह सम्मीर सिव । तिम तिम सिव सिव सिव तप्यो॥
छं० ॥ २४५६ ॥

पृथ्वीराज का शर संधान कर जैचन्द का छत्र उड़ा देना।

एक अंग तिय सकल । [1]विकल उच्चरिय राज मुष ॥
अकुटि अंक बंकुरिय । अंसु तिहि लिपिय मद्धि रुष ॥
बिय विमान उप्पारि । देव डुल्लिय मिलि चल्लिय ॥
अम अमंकि आयास । पत्ति अच्छरि [2]अलि मिल्लिय ॥
एक चवै कवि कमल असि । मुकति भ्रंक करि करिय न्रप ॥
तन राज काज जाजह भिरिग । सु मति सीह भट्ट देव वपि ॥
छं० ॥ २४५७ ॥

चार घड़ी दिन रहे दोनों तरफ शान्ति होना।

घरिय चारि दिन रह्यौ । घरिय दुअ वित्तक वित्तौ ॥
नको जीय भय मुक्यौ । नको हार्यौ न को जित्तौ ॥
पंच सहस सें पंच । लुथ्थि पर लुथ्थि अहुट्टिय ॥
[3]लिषे अंक बिन कंक । न को झुज्झयो बिन [4]घुट्टिय ॥
दो घरिय मोह मारुत बज्यौ । करन अंभ बरष्यो निमिष ॥
[5]तिरिगत्त राज तामस बुझ्यौ । दिषिय पंग संजोगि मुष ॥
छं० ॥ २४५८ ॥

जैचन्द का मंत्रियों का मत मान कर शान्त हो जाना।

[6]मुरझानौ जैचंद चरन । चंप्यो हम बर तर ।
उतरि सेन सब पर्यौ । राव कप्यौ हरवै कर ॥
लेहु लेहु न्रप करय । चवन चहुआन बुलायौ ॥

(१) प्र.-चिकल। (२) मो.-अरि मोलय।
(३) प्र. कृ. को.-पिले। (४) मो.-कुट्टिय। प्र.-नको जिल्यो न विघुट्टिय।
(५) प्र. कृ. को.-तिहि लगता। (६) प्र. कृ. को.-मुरझानौ।

खूर बीर मंची प्रधान। मिलि कै समुझायौ ॥
उत परे सथ्थ दूत को गनै। असुगुन भय राजन गिग्यौ ॥
घर हुंत पलान्यौ अमत करि। सीस धुनत नर वै फिऱ्यौ ॥
छं० ॥ २४५९ ॥

दूहा ॥ नयन नंपि करि [1]कनक नह। प्रेम समुद्दह बाल ॥
प्रथम सु पिय ओड़न उरह। मनु भुलवति मुद्द मराल ॥
छं० ॥ २४६० ॥

जैचन्द का पश्चात्ताप करते हुए कन्नौज को लौट जाना।

कुंडलिया ॥ दिष्पि पंग संजोगि मुष। दुष किन्नौ दल सोग ॥
जग्य जऱ्यौ राजन सघन। अवरन हुति संजोग ॥
अवरन अहुति संजोगि। कित्ति अग्गी जल लग्गी ॥
ज्यों पल पट आदऱ्यौ। लीय पुचिय छल मग्गी ॥
मुष जीवन अरु लाज। मनहि संकलपि सिलष्यौ ॥
[2]निबल एम संकलै। आस लग्गी मय दिष्पी ॥ छं० ॥ २४६१ ॥

दूहा ॥ इह कहि परदच्छिन फिरिग। नममकार सब कीन ॥
दान प्रतिष्टा तू अबर। मै दिल्ली पुर दीन ॥ २४६२ ॥
चढि चहुआन दिल्ली रुपह। उड़ी दुहूं दल षेह ॥
छंडि आस चहुआन पहु। गयौ पंग फिरि ग्रेह ॥ छं० ॥ २४६३ ॥

जैचन्द का शोक और दुःख से व्याकुल होना और मंत्रियों को उसे समझाना।

कवित्त ॥ चौ अग्गानी मट्ठि। झुक्कि प्रापीय मुगति रस ॥
छिति छचौ पिति छित्ति। वत्त आवरति खूर वस ॥
चौ अग्गानी पंच। राज पावाम परिग्गह।
अनी पंच मिलि बीर। पंग जंपियत गहग्गह ॥

(१) मो.-कनवज्ज रह। (२) ए. कृ. को.-विबल।

संमूह जुद्ध भारथ्थ मिलि । पंचतत्त मंचइ [1]सरिस ॥
तन छोइ छेह एकादसी । चंद वत्त वर [2]तचरिसु ॥
छं० ॥ २४६४ ॥

फिरयौ राज कमधज्ज । मुक्कि जीवत चहुआनइ ॥
जानि सँजोगि समंध । मग्ग कनवज्ज सु प्रानइ ॥
फिरे संग राजान । मानि मत्तौ बर बीरइ ॥
मनों पल्ल छंडे सिंह । कोप उर केर सु धीरइ ॥
निज चलत मग्ग जैचंद पहु । परे सुभर रिन अप्प पर ॥
किय प्रथुक बन्ह कारन न्रिपति । दीय दाघ जल गंग वर ॥
छं० ॥ २४६५ ॥

समझायौ तिन राइ । पाय लगि बात कहिय जब ॥
जिके खूर सामंत । करौ गोनइ न कोइ अब ॥
फिर्‌यौ न्रपति पहुपंग । सयन दुअ तह घर आयौ ॥
रय ढिल्ली सुरतान । जान आवतह न पायौ ॥
आयौ सु सयन चहुआन कौ । ग्राम ग्राम मंडप छयौ ॥
आयौ नरिंद प्रथिराज जिति । भुअन तीन आनंद भयौ ॥
छं० ॥ २४६६ ॥

पृथ्वीराज का दिल्ली में आना और प्रजा वर्ग का बधाई देना।

दूहा ॥ चली षबर दिल्ली नयर । एकादसि दिन छेह ॥
के रवि मंडल संचरिग । के मिलि मंगल ग्रेह ॥ छं० ॥ २४६७॥

कुंडलिया ॥ बद्धाइय दिल्लिय नयर । अवर सेन जुध मग्ग ॥
घाय घुमत झोरिन घले । श्रवन सुनंतह अग्गि ॥
श्रवन सुनंतह अग्गि । उठी कंचन गिरि अच्छी ॥
कै बड़वानल लपट । निकरि लालन धत गच्छी ॥
कै नाग लोक सुंदरी । सुनि न भारथ कथ्थाई ॥
कै मिलन पीय अंतरह । मिलन आवंग बधाई ॥ छं० ॥२४६८॥

(१) ए. कृ. को.-सरिग। (२) ए कृ. को उच्चरिय।

जैचन्द का पृथ्वीराज के घायलों को उठवा कर तैंतीस डोलियों में दिल्ली पहुँचाना ।

पद्धरी ॥ परि सकल सूर अघ्घाइ घाइ । उच्चाइ चंद नृपराइ थाइ ॥
धरि लियो बीर चालुक्क भीम । बग्गरी देव अरि चंपि सीम ॥
छं० ॥ २४६९ ॥

पम्मार जैत पीची प्रसंग । भारथ्थ राव भारा अभंग ॥
आमानि राव पाहार पुंज । लोहान पान आजान दुंज ॥
छं० ॥ २४७० ॥

गुज्जरह राव रंधरिय राव । परिहार महन नाहर सु आव ॥
जंगलह राव दहिया दुवाइ । बंकटह सु पह बधनौर थाइ ॥
छं० ॥ २४७१ ॥

जदवह जाज रावत्त राज । बर बलिय भद्र भर स्वामि काज ॥
देवरह देव कन्हरहराव । ढंढरिय टाक चाटा दुभाव ॥
छं० ॥ २४७२ ॥

औहठी स पहुपह कर प्रहास । कमधज्ज राज आरज्ज तास ॥
देवतिय हरिय बलिदेव सथ्थ । परिहार पौय संग्राम पथ्थ ॥
छं० ॥ २४७३ ॥

अघ्घाय घाय वर सिंह बीर । हाहुलिय राव हंसह हमीर ॥
चहुआन जाम पंचान मार । लथ्थन उचाय पहु पत्ति धार ॥
छं० ॥ २४७४ ॥

भट्टी चलेस गोहिल्ल चाच । सम विजय राज वघ्घेल साच ॥
गुज्जरह चंद्र सेनह सु बीर । ते जल्ल डोड पामार धीर ॥
छं० ॥ २४७५ ॥

सोढह सलथ्थ उच सच साल । संग्राम सिंह कढ्ढिय दुजार ॥
परिहार दत्त तारन तरन्न । कमधज्ज काल रय सिंघ कन्न ॥
छं० २४७६ ॥

सेंगरह साइ भोलन्न तास । साइरहदेव मुष मल्ह नास ॥

अछ्घाय घाय धर धरह ढाइ। लष्पीन मीच जिय कंक साइ॥
छं० ॥ २४७७॥
डोलिय सु मद्धि संजोग सार। पट कुटिय मद्धि मनु बसिय मार॥
उप्पारि सेव वरदाइ ईस। डोलिय सु सज्जि वर तेर तीस॥
छं० ॥ २४७८॥
संक्रम्यौ सेन दिल्ली सु मग्ग। बंधाय धाय चिय पुरनि अग्ग॥
छं० ॥ २४७९॥

दूहा॥ सघन घाय सामंत रिन। उप्पारिग कवि ईस॥
मध्य अमोलिक सुंदरिय। डोला तेरह तीस॥ छं० ॥२४८०॥
[1]हमकि हसम हय गय घरिग। बाहिर जुग्गिनि नैर॥
हलकि जमुन जल उत्तरिग। बाल हद्ध जु अबेर॥ छं०॥२४८१॥
इक घर सिंधु असंचरिग। इक घर [2]षन्नर मार॥
तेरसि अंबक बज्जि बहु। राज घरह गुर वार॥छं०॥२४८२॥

जैचन्द का बहुत सा दहेज देकर अपने पुरोहित को दिल्ली भेजना।

पुर कनवज्ज कमंध गय। अरि उर गंट्ठिय अथ्थ॥
कहै चंद प्रोहित्त प्रति। तुम दिल्लिय पुर जथ्थ॥२४८३॥
विधि बिचिच संजोगि कौ। करहु देव विधि व्याह॥
हसम हयग्गय सब्ब विधि। जाय समप्यौ ताह॥२४८४॥
नग अनेक विधि बिधि विचिच। और गने कोइ गेउ॥
विजै करत विजपाल [3]निज। लिय सु वस्तु दिव देउ॥
छं० ॥ २४८५॥

पंगराज के पुरोहित का दिल्ली आना और पृथ्वीराज की ओर से उसे सादर डेरा दिया जाना।

मुरिल्ल॥ पुर ढिल्ली आयौ प्रोहित्तह। मंन्यौ मन चह आन सुहित्तह॥
दिय थानक आसन उत्तिम ग्रह। वर प्रजंक भोजन भल भष्यह॥
छं० २४८६॥

(१) मो.-हलकि। (२) ए. कृ. को.-बंदन। (३) ए. कृ. को.-नृप।

दिल्लिय पति दिल्लिय संपत्तौ। फिरि पट्टपंग राइ ग्रह जत्तौ ॥
जिम राजन संजोगि सु रत्तौ। सुह दुह करन चंद महि मत्तौ॥
छं० ॥ २४८७ ॥

दिल्ली में संयोगिता के व्याह की तैयारियां।

कवित्त ॥ कनक कलस सिर धरहि। चवहिं मंगल अनेक चिय ॥
पाँटबर बह, द्रव्य। सज्जि सब सगुन राज लिय ॥
ढरहि चौर गज गाह। इक्क आरती उतारहि ॥
इक्क छोरि करि केस। रेन चरनन की झारहि ॥
इम जंपहि चंद बरहिया। मुकताहल पुज्जंत भुअ ॥
घर आइ जित्ति दिल्लिय न्वपति। सकल लोक आनंद हुअ ॥
छं० ॥ २४८८ ॥

दोनों ओर के प्रोहितों का शाकोच्चार करना।

एक अग्ग तिय सकल। विकल उच्चरिन राजमुष ॥
त्रिगुटि अग्र बंकुरि प्रमान। तहाँ लषित मझ्झ रुष ॥
बीय विवान उच्चरिय। देवि डुल्लिय मिलि चल्लिय ॥
अभ्रम भ्रम किय आइ। सपत अच्छरी सु मिल्लिय ॥
संजोग जोग रचि व्याह मन। गुरु जन सुत अरु निगम घन ॥
प्रोहित्त पंग अरु ब्रह्म रिषि। ग्रसत सुष्य बर दुष्य सन ॥
छं ॥ २४८९ ॥

विवाह समय के तिथि नक्षत्रादि का वर्णन ।

महा नछित्र रोहिनी। मेष भुग्गवै अरक बर ॥
भद्र यह परवासु। तिथ्थ तेरसि सु दीह गुर ॥
इंद्र नाम वर जोग। राज अष्टमि रवि सिज्जौ ॥
चंद चंद सातमो। बुद्ध सत्तम गुर तिज्जौ ॥
गुर राह सन्नि मुरकेत नव। न्वप बर बर मंगल जनम ॥
तहिनह मुक्कि चहुआन कों। [1]छुट्टि पंग पारस घनम॥छं० ॥२४९०॥

(१) ए. कृ. कां. घट्टि।

पंग और पृथ्वीराज दोनों की सुकीर्ति।

पंग राइ उग्गह्यौ। दान है गै भर नर खिय॥
धाराहर वर तिथ्थ। जपह चहुआन बीर किय॥
एक गुनै तिहि बेर। दिये पाइल खष गुन्निय॥
चौसट्ठां कै सट्ट। लच्छि मंजोगि सु दिन्निय॥
ज्यौं भयौ जोइ भारथ्थ गति। सोइ बित्यौ बिप्पक्क जुरि॥
द्वादसवि पंच सूरहति मुक्कि। आरन्भिय पहु पंग फिरि॥
छं० ॥ २४९१ ॥

दूहा॥ दिव मंडन तारक सकल। सर मंडन कमलान॥
रन मंडन नर भर सु भर। महि मंडन महिलान॥ छं०॥२४९२॥
महिलन मंडन न्रिपति ग्रह। कनक कांति ललनानि॥
ता उप्पर संजोगि नग। धरि राजन बलवान॥ छं० ॥ २४९३॥
राजन तन सह प्रिय बदन। काम गनंतिन भोग
सरै न पल लेतें पलनि। न्रपति नयन संजोग॥ छं० ॥ २४९४॥

पृथ्वीराज का मृत सामंत पुत्रों को अभिषेक करना और जागीरें देना।

पद्धरी॥ वैसाष मास पंचमिय सूर। उपरात पथ्य पुष्पह समूर॥
संतिय सु छित्ति प्रथिराज राज। किन्नौ सनान मद्दुरत्त साज॥
छं० ॥ २४९५॥
मंगल अनेक किन्नौ अचार। बाजे बिचित्र बज्जत अपार॥
विधि सु विप्र पुज्जे सु मंत। दिय दान भूरि अनेक जंत॥
छं० ॥ २४९६॥
गुन गंठि कब्बि आये सु चंड। दिय अनंत द्रव्य बीजीउ थंड॥
बद्धाय कीय सब नयर मंत। मृंगारि सहर वाने अनंत॥
छं० ॥ २४९७॥
बद्धाम आय सब देस थान। सनमान सीम पति आय जान॥
बर मद्दल ताम प्रथिराज दीन। सामंत सब्ब तं ग्हान कीन॥
छं० ॥ २४९८॥

सामंत सब्ब बोले सु आय। आदरह सब्ब दीनो सु राय॥
कमधज्ज वीर चंद्रह सुबोलि। निहुरह सुतन सुभ तेज तोलि॥
छं० ॥ २४९९ ॥

दीनो सु तिलक प्रथिराज हत्थ। बद्दारि ग्राम दिय बीस तथ्थ॥
इय पांच गज्ज दीनो सु एक। थप्पो सु ठाम समपित्त तेक॥
छं० ॥ २५०० ॥

ईसरह दास कन्हह स पुत्त। चहुआन कम्म बड़ करन जुत्त॥
दह पंच ग्राम दीने बधाय। इय अट्ठ गज्ज इक दीन ताय॥
छं० ॥ २५०१ ॥

बोलाय धीर पुंडीर ताम। सनमानि पित्त दीने सु ग्राम॥
जिन जिन सु पित्त रिन परे षेत। तेय तेय थप्पि सामंत हेत॥
छं० ॥ २५०२ ॥

सामंत सिंह गहिलौत बोलि। गोयंद राज सुअ गरुअ तोलि॥
दादस्स ग्राम दीने बधाय। इय पंच दीन पितु ठाम ठाय॥
छं० ॥ २५०३ ॥

सामंत अवर उबरे जेह। दिय दून दून ग्रामह सु तेह॥
सनमानि सब्ब सामंत सूर। दिय अनत दान द्रव्यान पूर॥
छं० ॥ २५०४ ॥

आदरह राज गौ उट्ठि ताम। संजोगि प्रीति कारन्न काम॥
* * * ❀ * ॥ * छं०॥२५०५॥

व्याह होकर दंपति का अंदर महल में जाना और पृथाकुमारी का अपने नेग करना ॥

दूर ॥ गौ अंदर प्रथिराज जब। भंडि महूरत व्याह॥
आय प्रिथा कहि बंध मम। करह सु मंगल राह॥ छं०॥२५०६॥
भुजंगी॥ रच्यौ मंगलं मास बैसाष राजं। तिथी पंचमी सूर सा पुष्य साजं॥
असित्तं सपुष्यं मुझ्यौ जोग इंदं। कला पूरनं जोग सा छब्ब बिंदं॥
छं० ॥ २५०७ ॥

लगन्नं सु गोधल्ल सा ब्रष्य केयं। पय्यौ सत्त मै पंच थानं रवेयं॥
पय्यौ नग्ग थानं कला धिट्ट चंदं। तनं ताम सज्जौ निजं उच्च मंदं॥
छं० ॥ २५०८ ॥

तबै आय प्रोहित्त श्रीकंठ तामं। दई आन सो वस्तु अन्नेक नामं॥
रच्यो तोरनं रंन मै उच्च थानं। लहै मोल अन्नेक नालभ्यमानं॥
छं० ॥ २५०९ ॥

गजं गज्ज अट्ठोतरं सौ सिँगारे। तिनं गात उत्तंग ऐराव तारे॥
सहस्सं स पंच हयं तुंगगातं। तिनं नग्ग सा कित्ति साहेम जातं॥
छं० ॥ २५१० ॥

घटं जात रूपं जरे नग्ग उच्चे। गनै कौन मानं तिनं जानि रुच्चे॥
जरे जंबु नद्दं बरं भाज नेयं। गनै कौन प्रामन्न सा संघ तेयं॥
छं० ॥ २५११ ॥

जरे पट्ट पट्टं अनेकं प्रकारं। अग्भूत अन्नेक सा वस्तु भारं॥
ग्रिहं तिष्थ अन्नेक जे पंग राजं। सबै पट्टई सोइ संजाग साजं॥
छं० ॥ २५१२ ॥

करे साजि संजोगि निद्धुरं सु ग्रेहं। सुषं जोति इंदं कला पूरि तेहं॥
* * * ॥ * छं० ॥ २५१३ ॥

विवाह के समय संयोगिता का शृंगार और उसकी शोभा वर्णन।

लघुनराज ॥ प्रथम्म केलि मज्जनं। बने निरत्त रंजनं॥
सु स्निग्ध केस पायमं। सु बंधि वेन बासयं॥ छं० ॥ २५१४ ॥
कुमम्म गुंथि आदियं। सु सोम फूल मादियं॥
तिलक्क द्रप्पनं करौ। श्रवन्न मंडनं धरौ॥ छं० ॥ २५१५ ॥
सु रेष कज्जलं दुनं। धनुष्य मा गुनं मनं॥
सु नासिका न मुत्तियं। तमोर मुष्य दुत्तियं॥ छं० ॥ २५१६॥
सुढार कंठ मालयं। नगोदरं विमालयं॥
अनघ्घ हेम पामयं। सु पानि मध्य भामयं॥ छं० ॥ २५१७॥
कलम्म पानि कंकनं। मनो कि काम अंकनं॥

बलै सु गाढ़ मुद्रिका । कटीव छुद्र घंटिका ॥ छं० ॥ २५१८ ॥
सु कट्टि मेषला भरं । सरोर नूपुरं जुरं ॥
तबे न रत्त आवकं । सतत्त हंस मावकं ॥ छं० ॥ २५१९ ॥
सु बीर चारु सो रसं । सिंगार मंडि षोड़सं ॥
सुगंध व्रन्न हत्थयौ । अभूषनंति भिन्नयौ ॥ छं० ॥ २५२० ॥
सु चारु कट्टि भुल्लयौ । नषं सिषंत डुल्लयौ ॥ छं० ॥ २५२१ ॥
साटक ॥ लज्जमान कटाच्छ लोकन कला, अलपत्तनो अप्पनं ॥
रत्तो रित्त, भया सु प्रेम सरसा, गै हंस बुभ्भाइनं ॥
धीरज्जं च छिमाय चित्त हरनं, गुन्न स्वलं मोभनं ।
सीलं नील सनात नीत तनया, षट दुन आभूषनं ॥ छं० ॥२५२२॥

पृथ्वीराज का शृंगार होना ।

दूहा ॥ करि सिंगार प्रथिराज पट्ट । बंधि मुकट सुभ मौम ॥
मनों रतन कर उग्गरै । उयौ बाल हरि दीस ॥ छं० ॥ २५२३ ॥

विवाह समय के सुख सारे ।

पद्धरी ॥ सिंगार सकल किय राज जाम । उच्चार वेद किय विप्र ताम ॥
बाजिय बज्जि मंगल अनेव । मानंनि उचारि सागुन्न गेव ॥
छं० ॥ २५२४ ॥
जय जया सद्द सद्दै समुद्द । मामंत सूर सब मिलिय जुद्द ॥
बद्धाय आव चवरुम्म सुहाग । आनंत स्वजन गति उच्च भाग॥
छं० ॥ २५२५ ॥
गुरु राम वेद मंचद्द उचार । अनेक विप्र पढ़ि वेद सार ॥
हय रोहि हंस अंगल्ल नरेस । जय जया सद्द अंप्यौ सु देस ॥
छं० ॥ २५२६ ॥
उछरंत द्रव्य अनेक मग्ग । गुन तवन एक अनेक लग्ग ॥
निसुरद्द ग्रद्द तारनद्द जाम । यद्दौ नरेस सम इंद्र तम ॥
छं० ॥ २५२७ ॥

(१) ए. बद्धाय ।

प्रोहित्त पंग रषि ब्रह्म रूप। बंदाय आय नग मुत्ति भूप॥
सिर फिरै विवह पट कूल राज। दिन्हे सु दत्त वाजिच वाजि॥
छं० ॥ २५२८ ॥

रोकियौ राज बर नेक काम। मत्तौ सु हास रस रास ताम॥
सुन षानि कूर लीला सरूप। प्रोषनह काज किय ताम भूप॥
छं० ॥ २५२९ ॥

नग जटित हेम मंडह अनूप। चौरीस ताम सज्जी सजूप॥
हिम षचित पट्ट मानिक्क रोह। वासनह छादि सम विषम सोह॥
छं० ॥ २५३० ॥

टंपत्ति रोहि आसनह ताम। किय विप्र सब्ब सुर मुष्य काम॥
गावंत चक्क माननि सुभेव। आवरिय भोम धामरिय तेव॥
छं० ॥ २५३१ ॥

कमधज्ज बीर चंद्रह सु आय। तिहि तथ्यौ विवह प्रथिराज राय॥
नैवेद [1]ताम धन गय तुषार। मम प्रान मुत्ति माला दुमार॥
छं० ॥ २५३२ ॥

कंसार जाम आहरै राज। वानौ [2]अयास सुरताम साज॥
चब बरस अवर सुर माम जोग। मम मचहु साज्व संजोग भोग॥
छं० २५३३ ॥

मंभरिय बानि आयाम भूप। मन्यौ सु काल बल मनिय कूप॥
बीवाह सेष सब करिय काज। निसि बास धाम पत्तौ सु राज॥
छं० ॥ २५३४ ॥

सुहाग रात्रि वर्णन।

कवित्त ॥ निसावास चहुआन। धाम बर राज मँपत्तौ॥
सुष सेज्या निसि मध्य। रहसि क्रीड़ा रस रत्तौ॥
मिलिय सषिय सब नेह। बीस दस अगविय अष्पनि॥
तिन प्रेरित संजोगि। आनि मम राज ततष्पिन॥
संग्रहिय पानि मंजोगि नृप। अरोहिय निज तल्प बर॥

(१) ए. क. को.-धाम। (२) मो.-अकाम।

संजोगि लष्पि सुच्छम सुतन । नेहन क्रीड़ै काम पर॥छं०॥२५३५॥
निरषत द्रग संजोगि । गयौ प्रथिराज मोह मन ॥
उदय सूर उठि राज । काज किन्नौ सु व्याह पन ॥
आप पंग प्रोहित्त । दीन सब वस्त संभारिय ॥
जे पठई जैचंद । व्याह संजोगि सु सारिय ॥
परवेस विंद कारन न्रपति । आए बज्जन बज्ज घर ॥
पुंषे सु प्रथ्थ सृंगार करि । दीनौ विधि विधि दान भर ॥
छं० ॥ २५३६ ॥

व्याह हो जाने पर पृथ्वीराज का प्रोहित को एक मास पीछे विदा करना ।

दूहा ॥ हेम हयग्गय अंबरह । दासि सहस सत दीन ॥
प्रोहित पंग सु ब्रह्म रिषि । व्याहु विद्धि बहु कीन ॥छं०॥२५३७॥
कवित्त ॥ करिय सु कारन व्याह । दीय दानह विप्रां कवि ॥
प्रोहित पंग नरिंद । तास आदर किन्नौ तवि ॥
ता पछै दुअ पथ्थ । राषि प्रोहित प्रथिराजह ॥
सत सारद हय सु बर । पंचगज दीन सु राजह ॥
कोटेक द्रव्य दीनौ न्रपति । जुगल जुगल हय सथ्थ दिय ॥
बहुआन चिंति रा पंग सम । बढ़ी प्रीति आनंद जिय ॥
छं० ॥ २५३८ ॥

दूहा ॥ दयौ द्रव्य संजोगि घन । चलि प्रोहित पुर पंग ॥
प्रथम राज सुअ इंद सम । विविध विविध बढि रंग॥छं॥२५३९॥
सुभह रम्य मंडिग न्रपति । दिपति दीप दिव लोक ॥
मुकुर मउष अंम्रत झरहि । करहिति मनह असोक ॥छं०॥२५४०॥
वय वसंत छिति संकिय । भ्रम सामंत सु जीव ॥
ग्रीषम गठ्ठि सु पिम्म पह । अम्मत सुधारस पीव ॥छं०॥२५४१॥

सुख सौनारे की ऋतु से उपमा वर्णन ।

चंद्रायना ॥ अगर धुम्म मुष गौषह उनयो मेघ जनु ॥
तहय मोर मल्हार निरत्तहि मत्त घन ॥

सारंग सारंग रंग पहुक्कहि पंषि रस ॥
विज्जुलि कोकल सानि, झमक्कहि जासु मिसि ॥ छं० ॥ २५४२ ॥
दादुर[1]सादुर सोर [2]नवष्पुर नारि घन ॥
मिलि सुर मधि मधु दत्त माधुर मझ्झि मन ॥
सालक पंच पचीस प्रजंकति दुम दस ॥
तहं अथ्थि परवीन सु बीनति दासि दस ॥ छं० ॥ २५४३ ॥
के जुअ जुथ्थ जवादि प्रमादहि मंद गति ॥
केवल अंचल बाय निरूपहि सरद रति ॥
केवर भाय पराक्रत संक्रित देव सुर ॥
केवर बीन बिराजित राजहि बार बर ॥ छं० ॥ २५४४ ॥
दून विधि विलसि बिलास असार सु सार किय ॥
दै सुष जोग म॑जोगि प्रथ्थी प्रथिराज प्रिय ॥
ज्यों रति संगम मारन जानैं रयन दिन ।
केतकि कुसुम लुभाय रह्यौ मनुं भ्रमर मन ॥छं० ॥ २५४५ ॥

सखिपरिहास और दंपतिविलास ।

गाथा ॥ अंबा अंबाह पत्ती । कंती कंताय दिट्ठ मा दिट्ठी ॥
महिला मरम सु मिट्ठी । पती कंताइ [3]इच्छि मिछांइ ॥
छं० ॥ २५४६ ॥

दूहा ॥ भजै न राज स॑जोगि मम । अति सुच्छम तन जानि ॥
तब सु मषी पंगानि बर । रची बुद्धि अप्पान ॥ छं० ॥ २५४७ ॥
मधि अंगन नव दल्ल सु तरु । पच मौर घन उट्ठि ॥
दुक मंजर पर भ्रमर भ्रमि । बास आस रस बिट्ठ ॥ छं० ॥२५४८॥
भार भ्रमर मंजरिन मिग । तुट्टत जानि उटि पंषि ॥
कछु अंतर राजन सुनहि । बोलि बयन दिषि अंषि ॥छं०॥२५४९॥
रस घुट्टत लुट्टत मयन । नन डुलि मंजरि याह ॥
भार भगत कथ्थह सुनौ । अलियल मंजरि याह ॥ छं०॥ २५५०॥

(१) प. कृ. को.-मादुर । (२) प. कृ. को.-नवथ्थुर ।
(३) प. कृ. को. मिंचछ, मिछि ।

गाथा ॥ अप्पह आरुहि अंग । मम डरई मइ देषि भीनंगं ॥
पत्तली षग्ग धारा । इय गय कुंभस्थलं इनई ॥ छं० ॥ २५५१ ॥
अं केहरि मन भीनं । तं गज मत्त जूथयं दलए ॥
नव रमनी रमि राजं । एक पलं जम्म सुष्यांइ ॥ छं० ॥ २५५२ ॥
दूहा । अलिय अलिय एकत मिलिय । रस सरवर संजोगि ॥
सो कविचँद चय वरस रस । पुह प्रगटित रति भोग ॥छं०॥२५५३॥

इति श्री कविचंद विरचिते प्रथिराजरासके कनवज्ज संयोगिता प्रतिष्ठा पूरन राजा जैचंद दल चूरन सामंत जुद्ध दिल्ली आगनन नाम एकसठवों प्रस्ताव संपूर्णम्॥६१॥



Nagari-Pracharini Granthmala Sries No. 4-

THE PRITHVÍRÁJ RÂSO

OF

CHAND BARDÂI,

VOL. IV.

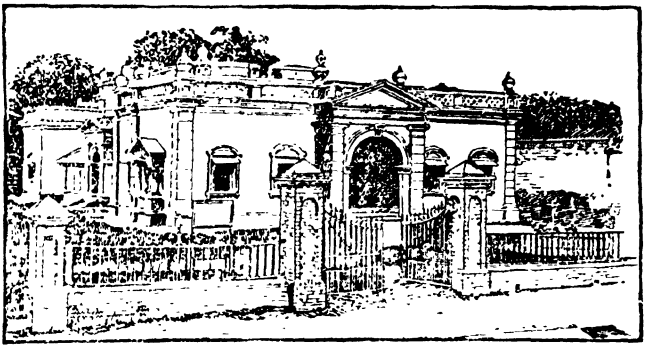
EDITED

BY

Mohanlal Vishnulal Pandia, & Syam Sundar Das, B. A.

With the assistance of Kunwar Kanhaiya Ju.

CANTO LV to LXI.



महाकवि चंद बरदाई

कृत

पृथ्वीराजरासो

भाग चौथा

जिसको

मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या और श्यामसुन्दरदास बी. ए. ने

कुँअर कन्हैया जू की सहायता से

सम्पादित किया।

पर्व्व ५५ से ६१ तक.

PRINTED BY THAKUR DAS, MANAGER, AT THE TARA PRINTING WORKS, AND PUBLISHED BY THE NAGARI-PRACHARINI SABHA, BENARES.

1910.

मूल्य ४)] [*Price Rs. 4/.*

सूचीपत्र ।

(५५) सामंत पंग युद्ध नाम प्रस्ताव ।

(पृष्ठ १४१७ से १४४७ तक)

१ पृथ्वीराज का प्रताप वर्णन । १४१७
२ जयचन्द का प्रताप वर्णन । ,,
३ पृथ्वीराज का शिकार खेलने जाना । १४१८
४ राजा जयचन्द की बड़वाग्नि से उपमा वर्णन । ,,
५ जयचन्द का राजसी आतंक कथन । १४१९
६ जयचन्द के सोमनक नाम मंत्री का वर्णन । १४२०
७ दिल्ली की दशा । ,,
८ जयचन्द का यज्ञ के आरम्भ और पृथ्वीराज को अपमानित करने के लिये मंत्री से सलाह करना । ,,
९ मंत्री का सलाह देना कि रावल समरसी जी से सन्धि करलेने में सब काम ठीक होंगे । १४२१
१० सोमंनक का चित्तौर को जाना । १४२२
११ जयचन्द का मंत्री को समझाना । ,,
१२ रावल समरसी का सोमंनक से मिलना और उसका अपना अभिप्राय कहना। १४२३
१३ रावल जी का सोमनक को धिक्कार करके उत्तर देना । ,,
१४ रावल जी का कहना कि होनहार प्रबल है । १४२४
१५ रावल जी का अपने को त्रिकालदर्शी कहना । १४२५
१६ रावल जी का ऐतिहासिक प्रमाण देकर प्रधान को यज्ञ करने से रोकना । ,,
१७ सोमंनक का कुपित होकर जयचन्द की प्रशंसा करना । १४२६
१८ जयचन्द का राजसी आतंक वर्णन । ,,
१९ यज्ञपुरुष का ऋषि वेष में नारद के पास आना । १४२७
२० नारद का पूछना कि आप दुबरे क्यों है । ,,
२१ ऋषि का उत्तर देना कि मैं मानहीन होने से दुखी हूं । ,,
२२ नारद का कहना कि आपके शुभ के लिय यथासाध्य उपाय किया जायगा। १४२८
२३ सोमंनक का राजा को सलाह देना कि चहुआन से पहिले रावल समरसी को परास्त करना चाहिए । ,,
२४ मंत्री के बचन मानकर जयचन्द का फौज सजाना । १४२९
२५ जयचन्द की सुसज्जित सेना का आतंक वर्णन । ,,
२६ सेना सजनई का कारण कथन । १४३१
२७ जयचन्द का पृथ्वीराज के पास दूत भेजना । ,,
२८ गोयंद राय का जयचन्द के दूत को उत्तर देना । ,,
२९ दूत का गोयंदराय के वचन जयचन्द से कहना । १४३२
३० जयचन्द का कुपित होकर चढ़ाई करना । ,,
३१ जयचन्द के पराक्रमों का वर्णन । ,,
३२ जयचन्द की सेना का प्रताप वर्णन । १४३४
३३ जयचन्द का चहुआन को पकड़ने की तैयारी करना और उधर शहाबुद्दीन को भी उसकाना ,,

३४ जयचन्द की सेना का दिल्ली राज्य की सीमा की भूमि दबाना और मुख्य मुख्य स्थानों को घेरना। १४३५
३५ ऐसे ही समय पर पृथ्वीराज का शिकार खेलने को जाना। १४३६
३६ कैमास की स्वामिभक्ति
३७ जमुना पार करके दवपुर को दहिने देते हुए कन्नौज की फौज का दिल्ली को घेरना। १४३७
३८ सामंतों की प्रशंसा और उनका शत्रु सेना से लड़ाई ठानना। ,,
३९ जयचन्द की आज्ञानुसार फौज का किले पर गोला उतारना। १४३८
४० उधर से सामंतो का भी अग्नि वर्षा करना ,,
४१ घोर युद्ध का आतंक वर्णन। ,,
४२ शस्त्र युद्ध का वाक् दर्शन वर्णन। ,,
४३ कन्ह के खड्गयुद्ध की प्रशंसा। १४३९
४४ घोर घमासान युद्ध का वर्णन। ,,
४५ दिल्ली की सेना के साथ चित्तौर की कुमक का आ मिलना। १४४०
४६ राजा जयचन्द का जोश में आकर युद्ध करना और उसकी फौज का उत्साह। १४४१
४७ जयचन्द का प्रताप वर्णन। ,,
४८ कैमास का राजा पृथ्वीराज के पास समाचार भेजना। १४४२
४९ कन्नौज की सेना का जमुना किनारे मोरचा बांधना और इधर से सामंतों का सन्नद्ध होना। ,,
५० निद्दुर और कन्ह का भाइचारा कथन ,,
५१ भान के पुत्र का कहना कि राजा भाग गया तो हम क्या प्राण दें? इस पर अन्य सामंतो का कहना कि हम वीर धर्म के लिये लड़ेंगे। ,,
५२ यह समाचार पाकर जयचन्द का अपने में सलाह करना। १४४३
५३ सामंतों का एका करके सलाह करना कि किला न छोड़ा जावे। १४४३
५४ सामंतो की पुरैन पत्र से उपमा वर्णन। ,,
५५ कन्नौज की फौज का किले पर धावा करना। ,,
५६ दिल्ली घेरे जाने की बात सुन कर पृथ्वीराज का दिल्ली आना। १४४४
५७ पृथ्वीराज के आने से कन्नौज की सेना का घबड़ाना। १४४५
५८ दो दल के बीच दब कर कन्नौज की फौज का चलचित होना। ,,
५९ युद्ध वर्णन। १४४६
६० इस युद्ध मे मारे गए सामंतों के नाम। ,,
६१ जयचन्द के चौंसठ बीरों मुखियों की मृत्यु। ,,
६२ जयचन्द का घेरा छोड़ कर चलेजाना। १४४७
६३ स्वामिभक्त वीरों की वीर मृत्यु की प्रशंसा ,,

(५६) समर पंग युद्ध नाम प्रस्ताव।

(पृष्ठ १४४९ से १४६३ तक)

१ जयचन्द का चित्तौर पर चढ़ाई करना। १४४९
२ जयचन्द की चढ़ाई का समाचार पाकर समरसी जी का सन्नद्ध होना। ,,
३ युद्ध की तैय्यारी जान कर दरबारी योद्धाओं का परस्पर वार्तालाप करना। ,,
४ रावल जी का वीर और ज्ञानमय व्याख्यान। १४५०
५ योग ज्ञान वर्णन। ,,
६ मनुष्य के मन की वृत्ति वर्णन। १४५१
७ रावल जी का निज मंत्री प्रति शारीरिक ज्ञान कथन और अमर समाधि का क्रम वर्णन। ,,
८ रावल जी की समुद्र से उपमा वर्णन। ,,
९ जीवन समय की दिवस और रात्रि से उपमा वर्णन। ,,

१० कनकराय रघुवंसी का मानसिक वृति के विषय में प्रश्न करना। १४५२
११ रावल समरसी जी का हृदय कुंडली और उस पर मन के परिभ्रमण करने का वर्णन करना। १४५३
१२ रावल जी का मन को वश करने का उपदेश करना। १४५४
१३ दुंढाराय का कहना कि राजा का धर्म राज्य की रक्षा करना है। ,,
१४ मंत्री का कहना कि सबल से वैर करना बुरा है। १४५५
१५ रावल जी का उत्तर देना। ,,
१६ रावल जी का सुमंत प्रभार से मन पूछना। ,,
१७ सुमंत का उत्तर देना कि तेज बड़ा है न कि आकार प्रकार। ,,
१८ सिंह जू का रात्रि को छापा मारने की सलाह देना। ,,
१९ रावल समरसिंह जी का कहना कि दिन को युद्ध कर स्वच्छ किर्ति संपादन करनी चाहिए। १४५६
२० चढ़ाई के समय चतुरंगिनी सेना की सजावट वर्णन। ,,
२१ युद्ध वर्णन १४५७
२२ पंग के दल का व्याकुल होना। १४५८
२३ पंगराज का हाथी छोड़ कर घोड़े पर सवार होना। ,,
२४ रावल जी के वीर योद्धाओं का शत्रु को चारों ओर से दबाना। १४५९
२५ युद्ध की तिथि और स्थल का वर्णन। ,,
२६ दोनों सेनाओं का परस्पर घमासान युद्ध वर्णन। ,,
२७ रावल समरसिंह जी के सरदारों का पराक्रम वर्णन। १४६०
२८ समरसिंह जी के शत्रु सेना मे घिर जाने पर १२ सरदारों का उनको बेदागबचाना। १४६२
२९ इस युद्ध में दो हजार सैनिकों का मारा जाना। १४६२
३० रावल जी को निकालकर वीरों के विकट युद्ध का वर्णन। ,,
३१ रावल जी के सोलह सरदारों का मरा जाना। १४६३
३२ सरदारों के नाम। ,,
३३ रावल जी का विजयी होना और आगे की कथा की सूचना। ,,

(५७) कैमास वध नाम प्रस्ताव।

(पृष्ठ १४६५ से १५०९ तक)

१ राजकुमार रेनसी और चामंडराय का परस्पर घनिष्ट प्रेम और चंदपुंडीर का पृथ्वीराज के दिल में संदेह उपजाना। १४६५
२ पृथ्वीराज का नगर के बाहर सभा रचकर वर्षा की बहार लेना और सायंकाल के समय महलों को आना। ,,
३ हाथी के छूटने से घोर शोर और घबराहट होना। १४६७
४ हाथी का थान स छूट कर उत्पात करना और चामंडराय का उसे मार गिराना। ,,
५ शृंगारहार का मरना सुनकर राजा का क्रोध करना और चामंडराय को कैद करने की आज्ञा देना। १४६८
६ लोहाना का बेड़ी लेकर चामंडराय के पास जाना। १४६९
७ चामंडराय के चित्त का धर्मचिंता से व्यग्र होना। ,,
८ गुरूराम का चामंडराय को बेड़ी पहनाना। १४७०
९ चामंडराय का बेडी पहिनना स्वीकार कर लेना। ,,

१० इस घटना से अन्य सामंतों का मन खिन्न होना। १४७०
११ पृथ्वीराज का शिकार खेलने जाना। „
१२ राजा की अनुपस्थिति में कैमास का राज्य कार्य्य चलाना। „
१३ दिन विशेष की घटना का वर्णन। १४७१
१४ कैमास का चलचित्त होना। „
१५ करनाटी की प्रशंसा और उसकी कैमास प्रति प्रति। „
१६ दोनों का चित्त एक दूसरे के लिये व्याकुल होना, और करनाटी का अपनी दासी को कैमास के पास प्रेषित करना। १४७२
१७ करनाटी के प्रेम की सूचना पाकर कैमास का स्त्री भेष धारण कर दासी के साथ हो लेना। १४७३
१८ सीढ़ी चढ़ते हुए इंछिनी रानी का कैमास को देख लेना। १४७४
१९ मुगे का इंछिनी प्रति वचन। „
२० इंछिनी का पत्र लिख दासी को देकर पृथ्वीराज के पास भेजना। „
२१ दासी का पृथ्वीराज के पड़ाव पर पहुंचना। १४७५
२२ राजा और सामंतों की सुषुप्ति दशा। „
२३ दासी का राज शिविर में प्रवेश। १४७६
२४ दासी का नूपुर स्वर से राजा को जगाने की चेष्टा करना। „
२५ दासी का राजा को जगाना और इंछिनी का पत्र देना। „
२६ पृथ्वीराज का इंछिनी के महल में आना १४७७
२७ राजा प्रति इंछिनी का वचन। „
२८ इंछिनी का राजा को कैमास और करनाटी को दिखाना।
२९ बिजली के उजेले में राजा का बाण संधान करना। १४७८
३० कैमास की शंका। „
३१ बाण वेधित-हृदय कैमास का मरण। १४७८
३२ कविकृत भावी वर्णन। १४७९
३३ कैमास की प्रशंसा। „
३४ अन्यान्य सामंतों के सम दूषण। १४८०
३५ राजा का कैमास को गाड़ देना। „
३६ करनाटी का निकल भागना। „
३७ उपोद्घात। १४८१
३८ देवी का कविचंद से स्वप्न में सब हाल जनाना। „
३९ कविचन्द के मन में शंकाएं होना। „
४० देवी का प्रत्यक्ष दर्शन देना। „
४१ सरस्वती के दिव्य स्वरूप की शोभा वर्णन। १४८२
४२ सरस्वत्युवाच। १४८३
४३ पावस वर्णन। „
४४ कैमास और करनाटी का कामातुर होना। १४८४
४५ कैमास का करनाटी के पास जाना। १४८५
४६ इंछिनी रानी का पत्र। „
४७ पृथ्वीराज का इंछिनी के महल में जाना इंछिनी का राजा को सब कथा सुना कर कैमास करनाटी का बतलाना। „
४८ राजा का कैमास को मार कर गाड़ देना और करनाटी का भाग जाना। १४८६
४९ पृथ्वीराज का अपने शिविर में लौट कर आना। १४८७
५० देवी का अन्तरध्यान होना। „
५१ प्रभात वर्णन। „
५२ पृथ्वीराज का रोजाना दरबार लगना और कविचन्द का आना। „
५३ दरबार का वर्णन। १४८८
५४ पृथ्वीराज की दीप्ति वर्णन। „
५५ उपस्थित सामंतों की विरदावली। „
५६ कविचन्द का राजा के पास आसन पाना १४९०
५७ कन्ह का कविचन्द से मानिक राय के पुत्रों की पूर्व्व कथा पूछना। „

५८ कवि का उत्तर कि 'मानिकराय की रानी के गर्भ से एक अंडाकार अस्थि निकली' १४९१
५९ मानिक राय का उसे जंगल में फिकवा देना। ,,
६० मानिक राय का कमधुज्ज कुमारी के साथ व्याह करना। ,,
६१ गजनी पति का मानिकराय पर आक्रमण करना। ,,
६२ उस अस्थिअंड का फूटना और उसमें से राजकुमार का उत्पन्न होना। १४९२
६३ उक्त राजकुमार का नामकरण और उसका सम्भर का राजा होना। १४९३
६४ संभर की भूमि की पूर्व्व कथा। ,,
६५ कविचन्द का आशीर्वाद। १४९४
६६ राजोवाच। १४९५
६७ राजा का कहना कि यदि तुम सच्चे वरदाई हो तो बतलाओ कैमास कहां है ,,
६८ कवि का संकोच करना परंतु राजा का हठ करना। १४९६
६९ चन्द के स्पष्ट वाक्य ,,
७० राजा का संकुचित होना। १४९७
७१ सब सामंतों का चित संतप्त और व्याकुल होना। ,,
७२ सब सामंतों का खिन्न मन होकर दरबार से उठ जाना। ,,
७३ सब के चले जाने पर कविचन्द का भी राजा को धिक्कार कर घर जाना। १४९८
७४ पृथ्वीराज का शोकग्रस्त होकर शयनागार में चला जाना और नगर में चरचा फैलने पर सबका शोकग्रस्त होना। १४९९
७५ कवि का मरने को उद्यत होना। १५००
७६ कविचन्द की स्त्री का समझाना। ,,
७७ स्त्री के समझाने पर कवि का दरबार में जाना और राजा से कैमास की लाश मांगना। १५०१
७८ पृथ्वीराज का नाहीं करना। १५०२
७९ कवि का पुनः राजा को समझाना। १५०२
८० कवि का कैमास की कीर्ति वर्णन करना। १५०३
८१ कैमास की लाश उसके परिवार को देना। ,,
८२ राजा का कैमास के पुत्र को हाँसीपुर का पट्टा देना। ,,
८३ पृथ्वीराज का गुरुराम और कविचन्द से पूछना कि किस पाप का कैसे प्रायश्चित होता है। १५०४
८४ कविचन्द का उत्तर देना। (सामयिक नीति और राजनीति वर्णन) ,,
८५ राजा का कहना कि मुझे जयचन्द के दरबार में ले चलो। १५०७
८६ कवि का कहना कि यह क्योंकर हो सकता है। ,,
८७ पृथ्वीराज का कहना कि हम तुम्हारे सेवक बन कर चलेंगे। ,,
८८ कवि का कहना कि हां तब अवश्य हमारे साथ जाओगे। ,,
८९ राजा का प्रण करना।
९० कैमास की स्त्री का उसका मृतकर्म करना, राज महलों की शुद्धता होनी, सब सामंतों का दरबार होना। १५०८
९१ कैमास के कारण सब का चित दुखी होना। १५०९
९२ राजा का कैमास के पुत्र को कैमास का पद देना। ,,

(५८) दुर्गा केदार समय।

(१५११ से १५५१ तक)

१ पृथ्वीराज का कैमास की मृत्यु से अत्यंत शोकाकुल होना। १५११
२ सामंतों का गोष्ठी करके राजा के शोक निवारण का उपाय विचारना। ,,

३ सामंतों का राजा को शिकार खेलने लिवा जाना। १५११

४ पृथ्वीराज के शिकारी साज सामान का वर्णन। १५१२

५ शहाबुद्दीन का दिल्ली की ओर दूत भेजना। १५१४

६ धर्म्मायन कायस्थ का शाह को दिल्ली की सब कैफियत लिखना। ,,

७ दूतों का गजनी पहुंच कर शाह को धर्म्मायन का पत्र देना। ,,

८ दुर्गा भाट का देवी से कविचन्द पर विद्यावाद में विजय पाने का वर मांगना। १५१५

९ देवी का उत्तर कि तु और सब को परास्त कर सकता है, केवल चन्द को नहीं। ,,

१० दुर्गा का कहना कि मैं पृथ्वीराज से मिलना चाहता हूं इस पर देवी का उसे वरदान देना। ,,

११ प्रातःकाल दुर्गा भाट का दरबार में जाना। १५१६

१२ दुर्गाभट्ट का शहाबुद्दीन से दिल्ली जाने के लिये छुट्टी मांगना। ,,

१३ तत्तार खां का कहना कि शत्रु के घर मांगने जाना अच्छा नहीं। ,,

१४ शाह का कविचन्द की तारीफ करना। १५१७

१५ इस पर दुर्गा भट्ट का चकित चित होना। ,,

१६ शाहाबुद्दीन का दुर्गाभट्ट को छुट्टी देना और भिक्षावृति की निन्द करना। १५१७

१७ दुर्गा केदार का दरवार से आकर दिल्ली जाने की तय्यारी करना। ,,

१८ दुर्गा केदार का ढाई महीने में पानीपत पहुंचना। १५१८

१९ शिकार में मृत पशुओं की गणना। ,,

२० राजकुमार रेणसी का सिंह को तलवार से मारना। ,,

२१ पानीपत के मैदान में डेरा पड़ना। १५१९

२२ गोठरचना। ,,

२३ गोठ के समय दुर्गा केदार का आ पहुंचना १५२०

२४ कवि के प्रति कटाक्ष वचन। ,,

२५ कवि की परिभाषा। ,,

२६ दुर्गा केदारकृत पृथ्वीराज की स्तुति और आशीर्वाद। १५२१

२७ पृथ्वीराज का दुर्गा केदार को सादर आसन देना। ,,

२८ दुर्गा केदार का निज अभिप्राय कथन। १५२२

२९ उसी समय कविचन्द का आना और राजा का दोनों कवियों में वाद होने की आज्ञा देना। ,,

३० दोनों कवियों का गुढ़ युक्ति मय काव्य रचना। ,,

३१ कविचन्द का बचन। १५२३

३२ दुर्गा केदार का बचन (वैसन्धि) ,,

३३ कविचन्द का उत्तर देना। ,,

३४ दोनों कवियों में परस्पर तन्त्र और मंत्र विद्या सम्बन्धी वाद वर्णन। १५२४

३५ केदार के कर्त्तव्य से मिट्टी के घट से ज्वाला का उत्पन्न होना और विद्याओं का उच्चार होना। ,,

३६ कविचन्द के बल से घोड़े का आशीर्वाद पढ़ना। १५२५

३७ दुर्गा केदार का पत्थर की चट्टान को चलाना और उसमें अंगुठा बैठा देना। ,,

३८ कविचन्द का शिला को पानी करके अंगुठी निकालना। ,,

३९ दुर्गा केदार का अन्यान्य कलाएं करना और चन्द का उत्तर देना। १५२६

४० देवी का बचन कि मैं कविचन्द के कंठ में सम्पूर्ण कलाओं से विराजती हूं। ,,

४१ अन्तरिक्ष में शब्द होना कि कविचंद जीता। ,,

४२ दुर्गा केदार का हार मान कर राजा

को प्रणाम करना और राजा तथा सब सामंतो का दुर्गा केदार की प्रशंसा करना १५२६

४३ सरस्वती का ध्यान। १५२७

४४ सरस्वती देवी की स्तुति। ,,

४५ देवी का वचन। १५२८

४६ दुर्गा केदार का कवि को पुनः प्रचारना। ,,

४७ कविचन्द का बचन। ,,

४८ घट के भीतर से लाली प्रगट होकर देवी का कविचन्द को आश्वासन देना। १५२९

४९ चन्द कृत देवी की स्तुति। १५३०

५० पुनः दुर्गा केदार का अपनी कलाएँ प्रगट करना और कविचन्द का उन्हें खण्डन करना। ,,

५१ अन्त में दोनों का बाद बराबर होना। १५३१

५२ दोनो कवियों की प्रशंसा। ,,

५३ पृथ्वीराज का दुर्गा केदार को पांच दिन मेहमान रखकर बहुत सा धन द्रव्य देकर बिदा करना। १५३३

५४ दुर्गा केदार कवि का राजा को आशीर्वाद देकर बिदा होना। १५३४

५५ कवि की उक्ति। ,,

५६ कवि का शहाबुद्दीन से रास्ते में मिलना। ,,

५७ गजनी के गुप्तचर का धर्म्मायन के पत्र समेत सब समाचार शाह को देना। ,,

५८ शहाबुद्दीन का पृथ्वीराज पर चढ़ाई करना। १५३५

५९ तत्तार खां का फौज मे हुक्म सुनाना। ,,

६० यवन सरदारों का शाह के सम्मुख प्रतिज्ञा करना। १५३६

६१ शहाबुद्दीन की चढ़ाई का आतंक वर्णन। ,,

६२ शहाबुद्दीन का सोनिगपुर में डेरा डालना और वहां पर दुर्गा केदार का उससे मिलना और दूतों का भी आकर समाचार देना। १५३७

६३ शहाबुद्दीन का कवि से पृथ्वीराज का समाचार पूछना और कवि का यथा विधि सब हाल कह सुनाना। १५३८

६४ सुलतान का मुसाहिबों से सलाह करके सेना सहित आगे कूच करना। ,,

६५ दुर्गा केदार के पिता का दुर्गा केदार को समझाना और धिक्कारना। १५३९

६६ दुर्गा केदार के भाई का पृथ्वीराज के पास रवाना होना। ,,

६७ कवि का पृथ्वीराज प्रति सँदेसा। ,,

६८ कविदास की होशियारी और फुरती का वर्णन। १५४०

६९ दास कवि का पानिपत पहुंचना और पृथ्वीराज से निज अभिप्राय सूचक शब्द कहना। ,,

७० कवि के बचन सुनकर राजा का सामंतों को सचेत करना और कन्ह का उसी समय युद्ध के लिये प्रबन्ध करना। १५४१

७१ चहुआन सेना की सजाई और व्यूह रचना। १५४२

७२ शहाबुद्दीन का आ पहुंचना। ,,

७३ यवन सेना का व्यूह रचना। ,,

७४ यवन सेना का युद्धोत्साह और आतंक वर्णन। १५४३

७५ तत्तार खां का आधी फौज के साथ पसर करना, बादशाह का पुष्टि में रहना। ,,

७६ दोनों सेनाओं का परस्पर साम्हना होना। १५४४

७७ हिन्दू मुसल्मान दोनों सेनाओं का घोर घमासान युद्ध वर्णन। ,,

७८ बरनी युद्ध वर्णन। १५४५

७९ लोहाना का फुर्तीलापन। ,,

८० लोहाना और पहाड़राय का शाह पर आक्रमण करना और यवन सेना का उन्हें रोकना। १५४६

८१ क्षत्रिय वीरों का तेज और शाह के

वीरों का धैर्य्य से युद्ध करना। १५५७
८२ उक्त दोनों वीरों का युद्ध और अन्य सामंतों का उनकी सहायता करना। ,,
८३ यवन सेना का पराजित होकर भागना। १५५८
८४ छः सामंतों का शाह को घेर लेना। ,,
८५ लोहाना का शाह के हाथी को मार गिराना। ,,
८६ शाह का पकड़ा जाना। १५५०
८७ मृत वीरों की गणना ,,
८८ लोहाना की प्रशंसा, शाही साज सामान की लूट होना। ,,
८९ पृथ्वीराज का सकुशल दिल्ली जाना और शाह से दंड लेकर उसे छोड़ देना। १५५१
९० दंड वितरण। ,,

(५९) दिल्ली वर्णन समय।

(पृष्ठ १५५१ से १५६४ तक)

१ पृथ्वीराज की राजसी। १५५३
२ दिल्ली के राज्य दरबार की शोभा। ,,
३ निगमबोध के बाग की शोभा वर्णन ,,
४ दरबार की शोभा और मुख्य दरबारियों के नाम। १५५४
५ दिल्ली नगर की शोभा वर्णन। १५५५
६ राजसी परिकर और सजावट का वर्णन १५५६
७ राजकुमार रेनसी का दुंढा की गुफा पर जाकर उसका दर्शन करना, दुंढा की संक्षेप में पूर्व कथा। १५५६
८ रेनु कुमार की सवारी और उसके साथी सामंत कुमारों का वर्णन। १५६०
९ बसंत उत्सव के दरबार की शोभा, राग रंग और उपस्थित दरबारियों का वर्णन। १५६२

(६०) जंगम कथा प्रस्ताव।

(पृष्ठ १५६५ से १५७५ तक)

१ सुसज्जित सभा में पृथ्वीराज का विराजमान होना। १५६५
२ राजा को एक जंगम के आने की सूचना का मिलना। ,,
३ राजा का नृत्यकी को बिदा करना। ,,
४ पृथ्वीराज का जंगम से प्रश्न करना और जंगम का उत्तर देना। १५६६
५ संयोगिता का स्वर्ण मूर्ति को जयमाल पहिराना। ,,
६ संयोगिता का दूसरी बार फिर से स्वर्णमूर्ति को माला पहिराना। ,,
७ पुनः तीसरी बार भी संयोगिता का पृथ्वीराज की प्रतिमा पर जयमाल डालना। १५६७
८ जयचन्द का कुपित होकर सभा से उठ जाना। ,,
९ पंगराज का दैवी घटना पर संतोष करना। ,,
१० राजा जयचन्द का संयोगिता को गंगा किनारे निवास देना। १५६८
११ पृथ्वीराज का अपने सामंतों से सब हाल कहना। ,,
१२ पृथ्वीराज की संयोगिता प्रति चाह और कन्नौज को चलने का विचार। १५६९
१३ कविचन्द का दरबार में आना और राजा का अपने मन की बात कहना। १५७०
१४ कवि का कहना कि कन्नौज जाने में कुशल नहीं है। ,,
१५ पृथ्वीराज का फिर भी कन्नौज चलने के लिये आग्रह करना। १५७१
१६ रात्रि को दरबार बरखास्त होना, सब सामंतों का अपने अपने घर जाना, राजा का शयन। ,,
१७ राजभोग प्रभात वर्णन। ,,

१८ कविचन्द का विचार। १५७२
१९ पृथ्वीराज का कतिपय सामंतों सहित शिकार को जाना। ,,
२० बाराह का शिकार। ,,
२१ शिकार करके राजा का शिवालय को जाना। शिवजी के शृंगार का वर्णन। १५७३
२२ पृथ्वीराज का स्नान करके शिवार्चन करना, पूजा की सामग्री और विधान वर्णन। १५७४
२३ पूजन के पश्चात् कविचन्द का राजा से दिल्ली चलने को कहना। १५७५

---

(६१) कनवजज समय।

(पृष्ठ १५७७ से १९५१ तक)

१ पृथ्वीराज का कविचन्द से कन्नौज जाने की इच्छा प्रगट करना। १५७७
२ कवि का कहना कि छद्म वेष मे जाना उचित होगा। ,,
३ यह सुन कर राजा का चुप हो जाना और सामंतों का कहना कि जाना उचित नहीं। ,,
४ राजा का इंछिनी के पास जाकर कन्नौज जाने को पूछना। १५७८
५ वसंत ऋतु का वर्णन। ,,
६ ग्रीष्म ऋतु आने पर पृथ्वीराज का रानी पुंडीरनी के पास जाकर पूछना। १५७९
७ रानी पुंडरनी का मना करना। ,,
८ वर्षा के आने पर राजा का इन्द्रावती के पास जाकर पूछना। १५८१
९ इन्द्रावती का दुखी होकर उत्तर देना। ,,
१० वर्षा ऋतु वर्णन। ,,
११ शरद ऋतु के आरम्भ में तैयारी करके राजा का हंसवती के पास जाकर पूछना। १५८३
१२ हंसवती के वचन। १५८३
१३ शरद वर्णन। ,,
१४ हेमंत ऋतु आने पर राजा का रानी कुरंभा के पास जाकर पूछना और उसका मना करना। १५८५
१५ रानी का वचन और हेमन्त ऋतु का वर्णन। ,,
१६ शिशिर ऋतु का आगम। १५८७
१७ पृथ्वीराज का कविचन्द से पूछना कि वह कौन सी ऋतु है जिसमे स्त्री को पति नहीं भाता। १५८८
१८ कविचन्द का कहना कि वह ऋतु स्त्री का ऋतु समय (मासिक धर्म) है। १५८९
१९ रानियों के रोकने पर एक साल सुख सहवास कर पृथ्वीराज का पुनः वसंत के आरंभ में कन्नौज को जाने की तैयारी करना। ,,
२० गुरुराम का कूच के लिये मुहूर्त सोधना ,,
२१ राजा का रविवार को अरिष्ट मुहूर्त में चलने का निश्चय करना। ,,
२२ पृथ्वीराज का कैमास के स्थान पर जैतराव को राजमंत्री नियत करना। १५९०
२३ राजमंत्री के लक्षण। ,,
२४ राजा का जैतराव से पूछना कि भेष बदल कर चलें या योंही। ,,
२५ जैतराव का कहना कि छद्म वेष में तेजस्वी कहीं नहीं छिपता इससे समयोचित आडंबर करना उचित है। १५९१
२६ पुनः जैतराव का कहना कि मुझसे पूछिए तो मैं यही कहूंगा कि सब सेना समेत चल कर यह उथल पथल कर दिया जाय। ,,
२७ गोविंद राय का कहना कि ऐसा उचित नहीं क्योंकि शहाबुद्दीन भी घात मे रहता है। ,,
२८ अन्त में सब सेना सहित रघुवंश राय

	को दिल्ली की गढ़ रक्षा पर छोड़ कर शेष सौ सामंतों सहित चलना निश्चय हुआ।	१५९२
२९	रात्रि को राजा का शयनागार में जाकर सोना और एक अद्भुत स्वप्न देखना।	,,
३०	कविचन्द का उस स्वप्न का फल बतलाना।	,,
३१	११५१ चैतमास की ३ को पृथ्वीराज का कन्नौज को कूच करना।	१५९३
३२	पृथ्वीराज का सौ सामंत और ग्यारह सौ चुनिंदा सवारों को साथ में लेकर चलना।	,,
३३	साथी सामंतों का ओज वर्णन।	१५९४
३४	सामंतो की इष्ट आराधना।	,,
३५	राजा के साथ जानेवाले सामंतों के नाम और पद वर्णन।	१५९५
३६	पृथ्वीराज का जमुना किनारे पड़ाव डालना।	१५९८
३७	जमुना के किनारे एक दिन रात विश्राम करके सब सामंतों को घोड़े आदि बांट कर और गढ़ रक्षा का उचित प्रबन्ध करके दूसरे दिन पृथ्वीराज का कूच करना।	,,
३८	पृथ्वीराज का नावों पर यमुना पार करना।	१५९९
३९	पृथ्वीराज के नांव पर पैर देते ही अशुभ दर्शन होना।	,,
४०	नांव से उतरने पर एक स्त्री का मिलना	,,
४१	उक्त स्त्री के स्वरूप का वर्णन।	,,
४२	राजा का कवि से उक्त महिला के विषय में पूछना।	१६००
४३	राजा का कविचंद से सब प्रकार के सगुन असगुनों का फल वर्णन करने को कहना।	१६०१
४४	कविचंद का नाना प्रकार के सगुन असगुनों का वर्णन करना।	,,
४५	कवि का कहना कि आप सफल मनोरथ होंगे परन्तु साथही हानि भी भारी होगी।	१६०४
४६	यह सुन कर पृथ्वीराज का कैमास की मृत्यु पर पश्चाताप करके दुचित्त होना	,,
४७	सामंतों का कहना कि चाहे जो हो गंगा तीर पर मरना हमारे लिये शुभ है।	,,
४८	वसंत ऋतु के कुसमित बन का आनंद लेते हुए सामंतों सहित राजा का आगे बढ़ना।	,,
४९	राजा के चलने पर सम्मुख सजे बजे दूलह का दर्शन होना।	,,
५०	आगे चलकर और भी शकुन होना और राजा का मृग को बाण से मारना	१६०५
५१	इसी प्रकार शुभ सूचक सगुनों से राजा का बत्तीस कोस पर्यंत निकल जाना।	,,
५२	एक रात्रि विश्राम करके पृथ्वीराज का आगे चलना।	,,
५३	उक्त पड़ाव से राजा का चलना और भांति भांति के भयानक अपशगुन होना।	१६०६
५४	एक ग्राम में नट का भगल (अंग छिन्न दृश्य) खेल करते हुए मिलना।	,,
५५	जैतराव का कन्ह से कहना कि राजा को रोको यह अशगुन भयावक है। कन्ह का कहना कि मै पहिले कह चुका हूं।	१६०७
५६	कन्ह का कहना कहने सुनने से होनी नहीं टरती।	,,
५७	पृथ्वीराज का सब सामंतों को समझाना।	१६०८
५८	पंचमी सोमवार को पहर रात्रि गए पड़ाव पड़ना।	,,

५६	सामंतों का कहना कि सबने हटका पर आप न माने।	१६०८
६०	सामंतों का कहना कि हमें तो सदा मंगल है परन्तु आप हमारे स्वामी हो इस लिये आप का शुभ विचार कर कहते हैं।	१६०६
६१	प्रातःकाल पुनः चहुआन का कूच करना। स्वामी की नित्य सेवा और उनका साहस वर्णन।	,,
६२	इस पड़ाव से पांच योजन चलने पर पृथ्वीराज का कन्नौज की हद में पहुंचना।	१६१०
६३	एक दिन का पड़ाव करके दूसरे दिन पुनः प्रातःकाल से पृथ्वीराज का कूच करना।	,,
६४	प्रभात समय वर्णन।	,,
६५	वन प्रान्त में एक देवी का दर्शन करके राजा का चकितचित्त होना।	१६१२
६६	देवी का स्वरूप वर्णन।	,,
६७	राजा का पूछना कि तू कौन है और कहां जाती है।	१६१३
६८	उसका उत्तर देना कि कन्नौज का युद्ध देखने जाती हूं।	,,
६९	पृथ्वीराज का चंद से अपने सपने का हाल कहना।	,,
७०	पूर्व की ओर उजेला होना, एक सुन्दर स्त्री का दर्शन होना।	,,
७१	उक्त सुन्दरी का स्वरूप वर्णन।	,,
७२	राजा का उससे पूछना कि तू कौन है और कहां जाती है।	१६१४
७३	उस सुन्दरी का उत्तर देना।	१६१५
७४	कवि का कहना कि यह भविष्य होनहार का आदर्श दर्शन है।	,,
७५	भविष्य वर्णन।	,,
७६	देवी का पृथ्वीराज को एक बाण देकर आप अलोप हो जाना।	,,
७७	पृथ्वीराज को शिवजी के दर्शन होना और शिवजी का राजा की पीठ पर हाथ देकर आशीर्वाद देना।	१६१६
७८	पुन पृथ्वीराज का पयान वर्णन।	,,
७९	कन्ह को एक ब्राह्मण के दर्शन होना। उसका कन्ह को असीस देकर अन्तर्ध्यान होना।	,,
८०	हनुमानजी के दर्शन होना।	१६१७
८१	कविचन्द का हनुमानजी से प्रार्थना करना।	,,
८२	लंगरीराव को सहस्राबाहु का दर्शन और आशीर्वाद देना।	,,
८३	गोयन्दराय को इन्द्र के दर्शन होना।	,,
८४	एक बावली के पास सब का विश्राम लेना। कवि को देवी का दर्शन देना।	१६१८
८५	समस्त सैनिकों का निद्राग्रस्त होना और पांच घड़ी रात से चल कर शंकरपुर पहुंचना।	,,
८६	राजा का सामंतों से कहना कि मैं कन्नौज को जाता हूं बाजी तुम्हारे हाथ है।	१६१९
८७	पृथ्वीराज प्रति जैतराव के बचन कि छद्मवेश में आप छिप नहीं सकते।	,,
८८	सामंतों का कन्नौज आकर जयचन्द का दरबार देखने की अभिलाषा में उत्सुक होना।	१६२०
८९	मुख्य सामंतों के नाम और उनका राजा से कहना कि कुछ परवाह नहीं आप निर्भय होकर चलिए।	,,
९०	तुच्छ निद्रा लेकर आधिरात्रि से पृथ्वीराज का पुनः कूच करना।	१६२१
९१	पृथ्वीराज का कहना कि कन्नौज निकट आया अब तुम भी वेष बदल डालो।	,,
९२	सामंतों की तैयारिया और वह प्रभात वर्णन।	१६२२

९३ सब का राह भूलना परंतु फिर उचित दिशा बांध कर चलना। १६२३
९४ पास पहुंचने पर पंगराज के महलों का देख पड़ना। ,,
९५ कन्नौज पुरी की सजावट और सुखमा का वर्णन। ,,
९६ पृथ्वीराज का कवि से गंगा जी का माहात्म्य पूछना। १६२४
९७ कवि का गंगा जी का माहात्म्य वर्णन करना। ,,
९८ पुनः कवि का कहना कि गंगा स्नान कीजिए। १६२५
९९ सब सामंतों सहित राजा का गंगा तीर पर उतरना। ,,
१०० कवि का गंगा के माहात्म्य के संबंध मे एक पौराणिक कथा का प्रमाण देना ,,
१०१ राजा का गंगा को नमस्कार करना, गंगा की उत्पत्ति और माहात्म्य वर्णन। ,,
१०२ जयचन्द की दासी का जल भरने को आना। १६२६
१०३ कवि का दासी पर कटाक्ष करना। ,,
१०४ गंगा जी की स्तुति। १६२७
१०५ राजा का गंगा स्नान करना। ,,
१०६ कवि का पुनः गंगा जी की स्तुति करना ,,
१०७ कविचन्द का उस दासी का रूप लावण्य वर्णन करना। १६२८
१०८ संक्षेप नख सिख वर्णन। ,,
१०९ दासी के जल भरने का भाव वर्णन। १६२९
११० जल भरती हुई दासी का नख सिख वर्णन। ,,
१११ पृथ्वीराज का कहना कि क्या इस दासी को केश है ही नहीं। १६३०
११२ कवि का कहना कि यह सुन्दरी नागरी नहीं वरन पनिहारिन है। ,,
११३ कन्नौज नगर की गृह महिलाओं की सुकोमलता और मर्य्यादा का वर्णन। ,,
११४ उनके पतियों की प्रशंसा। १६३०
११५ कन्नौज नगर की महिलाओं का सिख नख शृंगार वर्णन। १६३१
११६ दासी का घूंघट उघर जाना और उसका लज्जित होकर भागना। १६३२
११७ दासी के मुखारविंद की शोभा वर्णन। ,,
११८ गंगा स्नान और पूजनादि करके राना का चार कोस पश्चिम को चलकर डेरा डालना। १६३३
११९ दूसरे दिन एक पहर रात्रि से तय्यारी होना ,,
१२० राजा पृथ्वीराज का सुख से जागना और मंत्री का उपस्थित होकर प्रार्थना करना। १६३४
१२१ व्यूह बद्ध होकर पृथ्वीराज का कूच करना। ,,
१२२ सबका मिलकर कन्ह से पट्टी खोलने को कहना और कन्ह का आंखों पर से पट्टी उतारना। ,,
१२३ तत्पश्चात् आगे चलना और प्रभात समय कन्नौज में जा पहुंचना। १६३५
१२४ देवी के मंदिर की शोभा और देवी की स्तुति। ,,
१२५ सरस्वती रूप की स्तुति। १६३६
१२६ कवि का देवी से प्रार्थना करना कि पृथ्वीराज की सहायता करना। ,,
१२७ कवि का कहना कि नगर को दहनी प्रदिक्षणा देकर चलना चाहिए। १६३७
१२८ पृथ्वीराज के नगर द्वार पर पहुंचते ही भांति भांति के अशकुन होना। ,,
१२९ कन्नौज नगर का विस्तार और उसके चारों तरफ के बागानों का वर्णन। १६३८
१३० पृथ्वीराज का नगर में पैठना। १६३९
१३१ नगर के बाह्य प्रान्त के वासियों का रूपक तदनन्तर नगर का दृश्य वर्णन। १६४०
१३२ कन्नौज नगर के पुरजनों का वर्णन। १६४१

१३३ कविचन्द का राजा सहित राजद्वार पर पहुंचना । १६४२
१३४ राजद्वार और दरबार का वर्णन । ,,
१३५ कन्नौज राज्य की सेना और यहां की गढ़ रक्षा का सैनिक प्रबंध वर्णन । १६४३
१३६ नागाओं की फौज का वर्णन । १६४४
१३७ नागा लोगों के बल और उनकी बहादुरी का वर्णन । ,,
१३८ संखधुनी लोगों का स्वरूप और बल वर्णन । ,,
१३९ पृथ्वीराज का उन्हें देख कर शंकित होना और कवि का कहना कि इन्हें अत्तातोई मारेगा । १६४५
१४० सामतों का कहना कि चलो खुल कर देखें कौन कैसा बर्ता है । ,,
१४१ कविचंद का मना करना । ,,
१४२ उसका कहना कि समयोचित कार्य करना बुद्धिमानी है देखो पहिले सबने ऐसा ही किया है । ,,
१४३ राज का कवि की बात स्वीकार करना । १६४६
१४४ कवि का पूछते पूछते द्वारपालों के अफसर हेजम कुमार रघुवंशी के पास जाना । ,,
१४५ द्वारपालों का वर्णन । ,,
१४६ प्रतिहार का पूछना कि कौन हो ? कहां से आए ? कहां जाओगे ? ,,
१४७ कवि का अपना नाम ग्राम बतलाना । १६४७
१४८ हेजम कुमार का कवि पर कटाक्ष करना । द्वारपाल वाक्य । ,,
१४९ कवि का उत्तर देना । ,,
१५० हेजम कुमार का कवि को सादर आसन देना । ,,
१५१ हेजम कुमार का वचन । ,,
१५२ कवि का कहना कि कवि लोग बसीठपन नहीं करते । १६४८
१५३ हेजम कुमार का उसे बिठाकर जैचन्द के पास जाकर उसकी इत्तला करना । १६४८
१५४ हेजम कुमार का जयचन्द को बाकायदे प्रणाम करके कवि के आने का समाचार कहना । १६४९
१५५ कवि की तारीफ । ,,
१५६ राजा जैचन्द का दमोंधी को कवि की परीक्षा करने की आज्ञा देना । १६५०
१५७ दमोंधी का कवि से मिलकर प्रसन्न होना । ,,
१५८ कवि और डिंगियों का भेद । ,,
१५९ दमोंधियों का कवि के पास आना और कविचन्द का कवित्त पढ़ना । १६५१
१६० दमोंधी के प्रसन्न होकर कवि को स्वर्ण आसन देना । १६५२
१६१ दमोंधी का कवि का कुशल और उस के दिल्ली से आने का कारण पूछना । ,,
१६२ कवि का उत्तर देना कि भिन्न भिन्न राज्य दरबारों में विचरना कवियों का काम ही है । ,,
१६३ दमोंधी का कहना कि यदि तुम बरदाई हो तो यहीं से राजा के दरबार का हाल कहो । १६५३
१६४ कवि का कहना कि अच्छा सुनो मैं सब हाल आशुचन्द प्रबन्ध में कहता हूं । ,,
१६५ दमोंधी का कहना कि यदि आप अदृष्ट प्रबन्ध कहनेहैं तो यह कठिन बात है । ,,
१६६ कविचन्द का जयचन्द के दरबार का बर्णन करना । ,,
१६७ जयचन्द का वर्णन । १६५४
१६८ दरबार में प्रस्तुत एक मुरगे का वर्णन । १६५५
१६९ दमोंधी का कहना कि सब सरदारों के नाम गाम कहो । ,,
१७० कविचन्द का सब दरबारियों का नाम गाम और उनकी बैठक बर्णन करना । ,,

१७१ दसौंधी का दरबार मे जाकर कवि की शिफारिस करना। १६५७
१७२ कवि का एक कलश लिए हुई स्त्री देखकर उसकी छवि बर्णन करना। १६५८
१७३ कवि की विद्वत्ता का वर्णन। १६५६
१७४ कविचन्द का दरबार में बुलाया जाना „
१७५ राजा जयचन्द का ओज साज वर्णन। „
१७६ हेजम का अलकाव बोलना और कविचन्द का आशीर्वाद देना। १६६०
१७७ कवि का आशीर्वाद देना। „
१७८ जयचन्द की दरबारी बैठक बर्णन। „
१७९ जयचन्द की सभा की सजावट का वर्णन „
१८० राजा जैचन्द को प्रसन्न देखकर सब दरबारियों का कवि की तारीफ करना। १६६१
१८१ पुनः जयचन्द का बल प्रताप और पराक्रम बर्णन। „
१८२ इस समय की पूर्व कथा का संक्षेप उपसंहार „
१८३ पृथ्वीराज का नाम सुनते ही जयचन्द का जल उठना। १६६३
१८४ पुनः जयचन्द की उक्ति कि हे बरद दुबला क्यों है? „
१८५ कवि का उत्तर देना कि पृथ्वीराज के शत्रुओं ने सब घास उजार दी इसी से ऐसा हूं। „
१८६ पुनः जयचन्द का कहना कि और सब पशु तो और और कारणों से दुबले होते हैं पर बैल को केवल जुतने का दुःख होता है। फिर तू क्यों दुबला है। „
१८७ पुनः कवि का उपरोक्त युक्ति पर प्रत्युत्तर देना। १६६४
१८८ कवि के बचन सुनकर जयचन्द का अत्यंत कुपित होना। „
१८९ कवि का कहना कि धन्य है महाराज आपको! आपने मुझे बरद पद दिया। बरद की महिमा संसार में जाहिर है। १६६५
१९० जयचन्द का कहना कि मुझे पृथ्वीराज किस तरह मिले सो बतलाओ। „
१९१ राजा जयचन्द का कहना कि पृथ्वीराज और हम सगे हैं और तुम जानते हो कि सब राजा मेरी सेवा करते हैं। „
१९२ कविचन्द का कहना कि हां जानता हूं जब आप दक्षिण देश को दिग्विजय करने गए थे तब पृथ्वीराज ने आपके राज्य की रक्षा की थी। १६६६
१९३ जयचन्द का कहना कि यह कब की बात है आह यह उलहना तो आज मुझे बहुत खटका। „
१९४ कवि का उक्त घटना का सविस्तर बर्णन करना। १६६७
१९५ शहाबुद्दीन का कनौज पर चढ़ाई करने का मंत्र करना। „
१९६ मंत्रियों का कहना कि दल पंगुरा बड़ा जबरदस्त है। „
१९७ शाह का कहना कि दिल छोटा न करो दीन की दुहाई बड़ी होती है १६६८
१९८ शहाबुद्दीन का हिन्दुस्तान पर चढ़ाई करना और कुंदनपुर के पास राय-सिंह बघेल का उसे रोकना। „
१९९ हिन्दू मुसल्मान दोनों सेनाओं का युद्ध बर्णन। १६६९
२०० मुसल्मानी सेना का हिन्दू सेना को परास्त कर देश मे लूट मार मचाते हुए आगे बढ़ना। १६७०
२०१ नागौर नगर में स्थित पृथ्वीराज का यह समाचार पाकर उसका स्वयं सन्नद्ध होना
२०२ पृथ्वीराज का सब सेना में समाचार देकर जंगी तैयारी होने की आज्ञा देना। १६७१
२०३ कुमक सेना का प्रबंध। „

२०४ पृथ्वीराज का सारंडे के मुकाम पर डेरा डालना जहां से शाही सेना कवल २८ कोस की दूरी पर थी। १६७१
२०५ पृथ्वीराज की सेना का ओज वर्णन। १६७२
२०६ पृथ्वीराज का सात घड़ी दिन रहते से धावा करके आधी रात के समय शाही पड़ाव पर छापा मारना। „
२०७ दोनों सेनाओं का घमासान युद्ध होना और मुसल्मानी सेना का पराभूत होना। १६७३
२०८ चन्द पुंडीर का शाह को पकड़ लेना। १६७४
२०९ पृथ्वीराज का खेत फरवाना और लौट कर दरपुर में मुकाम करना। „
२१० पृथ्वीराज का शाह से आठ हजार घोड़े नजर लेना। „
२११ कविचंद का कहना कि पृथ्वीराज ने इस प्रकार शाह को परास्त कर आपका राज्य बचाया। „
२१२ जैचन्द का कहना कि पृथ्वीराज के पास कितना औसाफ है। „
२१३ कवि का उत्तर देना कि उनकी क्या बात पूछते हैं पृथ्वीराज के औसाफ कम परंतु कार्य्य बड़े हैं। „
२१४ पृथ्वीराज का पराक्रम वर्णन। १६७५
२१५ जैचन्द का पृथ्वीराज की उनिहार पूछना। „
२१६ कविचन्द का पृथ्वीराज की आयु बल बुद्धि और शकल सूरत का वर्णन करके पृथ्वीराज को उनिहारना। „
२१७ जैचन्द का कुपित होकर कहना कि कवि वृथा बक बक करके क्यों अपनी मृत्यु बुलाता है। १६७६
२१८ पृथ्वीराज और जैचन्द का दूर से मिलना और दोनों का एक दूसरे को घूरना। १६७६
२१९ जैचन्द का चकित चित्त होकर चिन्ता ग्रस्त होना और कविचन्द से कहना कि पृथ्वीराज मुझ से मिलते क्यों नहीं। १६७७
२२० कवि का कहना कि बात पर बात बढ़नी है। „
२२१ कवि का कहना कि जब अनंगपाल पृथ्वीराज को दिल्ली दान करने लगे तब आपने क्यों दावा न किया। „
२२२ जैचन्द का कहना कि अनंगपाल जब शाह की सहायता लेकर आए थे तब शाही सेना को मैंने ही रोका था। १६७८
२२३ कवि का कहना कि यदि आपने ऐसा किया तो राजनीति के विरुद्ध किया। „
२२४ जैचन्द का पूछना कि इस समय सर्वोत्तम राजनीति का आचरण करने वाला कौन राजा है। „
२२५ कवि का कहना कि ऐसा नीति निपुण राजा पृथ्वीराज है जिसने अपनी ही नीति नीति से अपना बल प्रताप ऐश्वर्य्य आदि सब बढ़ाया। १६७९
२२६ पुनः कवि का कहना कि आपका कलियुग में यज्ञ करना नीति संगत कार्य्य नहीं है। „
२२७ राजा जैचन्द का कवि को उत्तर देना। १६८०
२२८ राजा जैचन्द का कहना कि कवि अब तुम मेरे मन की बात बतलाओ। १६८१
२२९ कवि का कहना कि आप मुझे पान दिया चाहते हैं और वे पान रनिवास से अविवाहिता लौंडियां ला रही हैं। „
२३० राजा का पूछना कि तुमने यह कैसे जाना। „

२३१ कवि का कहना कि अपनी विद्या से। १६८२
२३२ कवि का उन पान लाने वाली लौंडियों का रूप रंग आदि वर्णन करना। ,,
२३३ उक्त लौंडियों की शिख नख शोभा वर्णन। ,,
२३४ दासी का पानों को लेकर दरबार में आना और पृथ्वीराज को देख कर लज्जा से घूंघट घालना। १६८४
२३५ कवि का इशारा कि यह दासी वही करनाटकी थी। ,,
२३६ दासी के शीश ढांकने से सभासदों का सन्देह करना कि कवि के साथ में पृथ्वीराज अवश्य है। ,,
२३७ उच्च सरदारों और पंगराज में परस्पर मुगबुग होना। ,,
२३८ कविचन्द का दासी को इशारे से समझाना। १६८५
२३९ दासी का पट पटक देना और पंगराज सहित सब सभा का चकित चित्त होना। ,,
२४० उक्त घटना के संघटन काल में समस्त रसों का आभास वर्णन। ,,
२४१ जैचन्द का कवि को पान देकर विदा करना। १६८६
२४२ राजा का कोतवाल रावण को आज्ञा देना कि नगर के पश्चिम प्रान्त में कवि को डेरा दिया जाय। ,,
२४३ रावण का कवि को डेरों पर लिवा जाना। ,,
२४४ रावण का कवि के डेरों पर भोजन पान रसद आदि का इन्तजाम कर के पंगराज के पास आना। ,,
२४५ डेरों पर पहुंच कर पृथ्वीराज का राजसी ठाठ से आसीन होना और सामंतों का उसकी मुमाहबी में प्रस्तुत होना। १६८७
२४६ सब सामंतों का यथास्थान अपने अपने डेरों पर जमना। ,,
२४७ पृथ्वीराज के डेरों पर निज के पहरूवे बैठना। ,,
२४८ पंगराज का सभा विसर्जन करके मंत्रियों को बुलाना और कवि के डेरे पर मिजवानी भेजवाना। ,,
२४९ सुमंत का कवि के डेरे पर जाना, कवि का सादर मिजवानी स्वीकार कर के सबको विदा करना। १६८८
२५० सुमंत का जैचंद के पास आकर कहना कि कवि का सेवक विलक्षण तेजधारी पुरुष है। ,,
२५१ जैचन्द के चित्त में चिन्ता का उत्पन्न होना। १६८९
२५२ रानी पंगानी के पास कविचन्द के आने का समाचार पहुंचना। ,,
२५३ रानी पंगानी का कवि के पास भोजन भेजना। ,,
२५४ पंगानी रानी "जुन्हाई" की पूर्व्व कथा। १६९०
२५५ दासियों की शोभा वर्णन। ,,
२५६ रानी जुन्हाई के यहां से आई हुई सामग्री का वर्णन। ,,
२५७ कवि के डेरे पर मिठाई ले जाने वाली दासियों का सिख नख शृंगार वर्णन। १६९२
२५८ उक्त दासी का कवि के डेरे पर आना। १६९३
२५९ दरवान का दासी को कवि के दरवार में लिवा जाना। ,,
२६० दासी का रानी जुन्हाई की तरफ से कवि को पालागी कहना और कवि का आशीर्वाद देना। ,,
२६१ दासी का रावर में वापस जाकर रानी से कवि का आशीर्वाद कहना १६९४

२६२ यहां डेरों पर यथानियम पृथ्वीराज की सभा का सुशोभित होना और राजा का कवि से गंगा जी के विषय में प्रश्न करना। १६६४
२६३ कविचंद का गंगा जी की स्तुति पढ़ना। १६६५
२६४ श्रीगंगा जी का माहात्म्य वर्णन। १६६६
२६५ गंगा जी के जलपान का माहात्म्य और कन्ह का कहना कि धन्य हैं वे लोग जो नित्य गंगाजल पान करते हैं। १६६७
२६६ सामंत मंडली में परस्पर ठट्ठा होना और बातों ही बात मे पृथ्वीराज का चिढ़ जाना। ,,
२६७ कन्ह का कविचन्द से बिगड़ पड़ना। १६६८
२६८ कविचन्द का राजा को समझाना और सब सामंतों का कन्ह को मना कर भोजन प्रसाद करना। ,,
२६९ सब का शयन करने जाना। १६६९
२७० पृथ्वीराज का निज शिबिर में निःशंक होकर सोना। ,,
२७१ जैचंद का कवि को नाटक देखने के लिये बुलवाना। ,,
२७२ जैचंद की सभा की रात्रि के समय की सजावट और शोभा वर्णन। १७००
२७३ राजा जैचन्द की सभा में उपस्थित नृत्तकी (वेश्याओं) का वर्णन। ,,
२७४ वेश्याओं का सरस्वती की वंदना करके नाटक आरंभ करना। १७०१
२७५ नृत्यारंभ की मुद्रा वर्णन। १७०२
२७६ मंगल आलाप। ,,
२७७ वेश्याओं का नृत्य करना; उनके राग, बाज, ताल, सुर, ग्राम, हाव, भाव आदि का और उनके नाटय कौशल का वर्णन। ,,
२७८ सप्तमी शनिवार के बीतक की इति। १७०४
२७९ नृत्यकी (वेश्या) की प्रशंसा। १७०४
२८० निपहरा बजने पर नाच बंद होना जैचंद का निज शयनागार को जाना और कवि का डेरे पर आना। १७०५
२८१ इधर पृथ्वीराज का सामंत मंडली सहित सभा में बैठना, प्रस्तुत सामंतों के नाम और गुप्तचर का सब चरित्र चरच कर जैचन्द से जा कहना। ,,
२८२ दूत के बचन सुनकर जैचन्द का प्रसन्न होना और शिकारी तैयारी होने की आज्ञा देना। १७०६
२८३ जैचन्द की शिकारी सजनई की शोभा वर्णन। १७०७
२८४ जैचंद का सुखासन (तामजाम) पर सवार होना। १७०८
२८५ पंगराज का मंत्री को बुलाकर शिकार की तैयारी बंद करके कवि की विदाई के विषय में सलाह करना। ,,
२८६ मंत्री सुमंत का अपनी अनुमति देना। १७०९
२८७ कविचंद की विदाई के सामान का वर्णन। १७१०
२८८ पंगराज के चलते समय अमकुन होना। ,,
२८९ पंगराज का चिंता करके कहना कि जिस प्रकार से शत्रु हाथ आवे सो करो। ,,
२९० मंत्रियों की सलाह से पंगराज का कवि के डेरे पर जाना। १७११
२९१ जैचन्द का शहर कोतवाल रावण को सेना सहित साथ में लेना। ,,
२९२ रावण के साथ में जाने वाले योद्धाओं का वर्णन। ,,
२९३ रावण का कवि को जैचन्द की अवाई की सूचना देकर नाका जा बांधना। १७१२
२९४ पंगराज के पहुंचने पर कवि का

	उसे सादर आसन देना और उसका सुयश पढ़ना ।	१७१२
२९५	खवास वेषधारी पृथ्वीराज का जैचन्द को बाएं हाथ से पान देना और पंगराज का उसे अंगीकार न करना	१७१३
२९६	कवि का श्लोक पढ़कर जैचन्द को शान्त करना ।	१७१४
२९७	जैचन्द का पान अंगीकार करना परंतु पृथ्वीराज का टेल कर पान देना ।	,,
२९८	पृथ्वीराज का जैचन्द के हाथ में नख गड़ा देना ।	,,
२९९	इस घटना से जैचन्द का चित्त चंचल हो उठना ।	,,
३००	जैचन्द का महलों में आकर मंत्री से कहना कि कवि के साथ खवास पृथ्वीराज है उसको जैसे बने पकड़ो ।	१७१५
३०१	मंत्री का कहना कि पृथ्वीराज खवास कभी न बनेगा यह सब आपके चिढ़ाने को किया गया है ।	,,
३०२	जैचन्द का कवि को बुलाकर पूछना कि सच कहो तुम्हारे साथ पृथ्वीराज है या नहीं ।	,,
३०३	कवि का स्वीकार करना कि पृथ्वीराज है और साथ वाले सब सामंतों का नाम ग्राम वर्णन करना ।	१७१६
३०४	जैचन्द का हुक्म देना कि पड़ाव घेर लिया जाय, पृथ्वीराज जाने न पावे ।	१७२०
३०५	इधर सामंतों सहित पृथ्वीराज का कमरें कस कर तैयार होना ।	,,
३०६	दोनों ओर के वीरों की तैयारियां करना ।	१७२१
३०७	पृथ्वीराज के सामंतों की तैयारियां और उनका उत्तेज ।	,,
३०८	पंगदल की तैयारी और लंगरीराय का पंगदल को परास्त कर के राजमहल में पैठ पड़ना ।	१७२२
३०९	लंगरीराय के आधे धड़ का पराक्रम वर्णन और उसका शान्त होना ।	१७२३
३१०	जैचन्द के तीन हजार मुख्य योद्धा, मंत्रीपुत्र भानेज और भाई आदि का मारा जाना ।	१७२४
३११	लंगरीराय का पराक्रम वर्णन ।	१७२५
३१२	पृथ्वीराज का धैर्य्य ।	,,
३१३	अपनी सब सेना के सहित रावण का पृथ्वीराज पर आक्रमण करना ।	१७२६
३१४	रावण की फौज का चौतरफा नाके बंदी करना ।	,,
३१५	रावण का पराक्रम और उसकी बीरता का वर्णन ।	१७२७
३१६	रावण के पीछे जैचन्द का सहायक सेना भेजना और स्वयं अपनी तैयारी करना ।	,,
३१७	पंगराज की ओर से मतवाले हाथियों का झुकाया जाना ।	१७२८
३१८	पंगराज और पंगानी सेना का क्रोध ।	,,
३१९	दोनों सेनाओं का परस्पर मिलना ।	,,
३२०	पंगराज का सेना को प्रगट आदेश देना ।	१७२९
३२१	पृथ्वीराज का कविचंद से पूछना कि जैचन्द को पंगु क्यों कहते हैं ।	,,
३२२	कवि का कहना कि इसका पूरा उपनाम दलपंगुरा है क्यों कि उस का दलबल अचल है ।	,,
३२३	जैचन्द की सेना का मिलना और पृथ्वीराज का पड़ाव पर घेरा जाना ।	१७३०
३२४	जैचन्द का मुसल्मानी सेना को आज्ञा देना कि पृथ्वीराज को पकड़ो ।	,,
३२५	युद्ध-रँग राने सेना समूह में कवि का नवरस की सूचना देना ।	१७३१
३२६	पृथ्वीराज का सामंतो से कहना कि	

तुमलोग जरा भीर सम्हालो तो तब तक मैं कन्नौज नगर की शोभा भी देख लूं। १७३२

३२७ सामंतों का कहना कि हम तो यहां सब कुछ करें परंतु आप को अकेले कैसे छोड़ें। ,,

३२८ कन्ह का रिस होकर कहना कि यदि तुमें ऐसाही कहना था तो हम को साथही क्यों लाए। १७३३

३२९ परन्तु पृथ्वीराज का किसी की बात न मानकर चला जाना। ,,

३३० युद्ध के बाजों की आवाज सुनकर कन्नौज नगर की स्त्रियों का बीर कौतूहल देखने के लिये अटारियों पर आ बैठना। ,,

३३१ जैचन्द का स्वयं चढ़ाई करना। ,,

३३२ जैचन्द की चढ़ाई का ओज वर्णन। १७३४

३३३ पंगराज की सेना के हाथियों का वर्णन। १७३५

३३४ दल पंगुरे के दल बदल की चढ़ाई का आनंक वर्णन। ,,

३३५ समस्त सेना में पृथ्वीराज को पकड़ लेने के लिये हल्ला होना। १७३६

३३६ कन्नौज सेना के अश्वारोहियों का तेज और ओज वर्णन। १७३७

३३७ इतने बड़े भारी दलबल का सामना करने के लिये पृथ्वीराज की ओर से लंगरीराय का आगे होना। १७३८

३३८ लंगरीराय का साथ देने वाले अन्य सामंतों के नाम। ,,

३३९ दोनों सेनाओं का एक दूसरे को प्रचार कर परस्पर मार मचाना। १७३९

३४० सायंकाल होना और सामन्तों के स्वामिधर्म की प्रशंसा। १७४०

३४१ युद्ध भूमि की बसंतऋतु से उपमा वर्णन। ,,

३४२ पंगराज का पुत्र की तरफ देखना। १७४०

३४३ पंग पुत्र के बचन। १७४१

३४४ पंगराज का क्रोध करके मुसल्मानों को युद्ध करने की आज्ञा देना। ,,

३४५ पंग सेना का क्रोध करके पसर करना, उधर पृथ्वीराज का मीन चरित्र में लवलीन होना। ,,

३४६ घोर घमासान युद्ध होना। १७४२

३४७ लंगरीराय के तलवार चलाने की प्रशंसा। ,,

३४८ जैचन्द के मंत्री के हाथ से लंगरी राय का मारा जाना। १७४३

३४९ कन्ह का गुरुराम को पृथ्वीराज की खोज में भेजना। ,,

३५० पृथ्वीराज का कन्नौज नगर का निरीक्षण करते हुए गंगा तट पर आना। १७४४

३५१ पृथ्वीराज का गंगा किनारे संयोगिता के महल के नीचे आना। ,,

३५२ पृथ्वीराज का गले की माला के मोतियों को मछलियों को चुनाना। १७४५

३५३ संयोगिता और उसकी सखियों का पृथ्वीराज को गौख में से देखना। ,,

३५४ पृथ्वीराज का संयोगिता का देखना। १७४६

३५५ पृथ्वीराज और संयोगिता की देखा देखी होने पर दोनों का अचल चित्त होजाना। ,,

३५६ संयोगिता का चित्रसारी में जाकर पृथ्वीराज के चित्र को जांचना और मिलान करना। १७४७

३५७ संयोगिता की सहेलियों का परस्पर वार्तालाप। ,,

३५८ संयोगिता के चिबुक बिन्दु की शोभा। ,,

३५९ संयोगिता का पृथ्वीराज को पहिचान कर लज्जित होना। १७४८

३६० संयोगिता का संकुचित होते हुए

ईश्वर को धन्यवाद देना और पृथ्वीराज की परीक्षा के लिये एक दासी को थाल मे मोती देकर भेजना। १७४८

३६१ दासी का चुप चाप पीछे जाकर खड़े हो जाना। १७४९

३६२ पृथ्वीराज का पीछे देखे बिना थाल में से मोती ले लेकर मछलियों को चुनाना। ,,

३६३ थाल के मोती चुक जाने पर दासी का गले की पोत पृथ्वीराज के हाथ में देना। यह देखकर पृथ्वीराज का पीछे फिर कर दासी से पूछना कि तू कौन है और दासी का उत्तर देना कि मैं रनवास की दासी हूं। १७५०

३६४ दासी का हाथ से ऊपर को इशारा करना और पृथ्वीराज का संयोगिता को देखकर बेदिल हो जाना। १७५१

३६५ संयोगिता का इच्छा करना कि इस समय गठबंधन हो जाय तो अच्छा हो। १७५२

३६६ संयोगिता का संकुचित चित्त होना। ,,

३६७ ऊपर से दस दासियों का आकर पृथ्वीराज को घेर लेना। ,,

३६८ दासियों का पृथ्वीराज पर अपनी इच्छा प्रगट करना। ,,

३६९ संयोगिता की भावपूर्ण छवि देखकर पृथ्वीराज का भी बेबस होना। १७५३

३७० सखियों की परस्पर शंका कि ब्याह कैसे होगा। ,,

३७१ अन्य सखी का उत्तर कि जिनका पूर्व्व संयोग जागृत है उनके लिये नवीन संबंध विधि की क्या आवश्यकता। ,,

३७२ दूती का पृथ्वीराज और संयोगिता को मिलाना। १७५४

३७३ पृथ्वीराज का संयोगिता के साथ गंधर्व विवाह होना। ,,

३७४ पृथ्वीराज का संयोगिता से दिल्ली चलने को कहना। १७५४

३७५ संयोगिता का क्षण मात्र के लिये बिकल होकर स्त्री जीवन पर पश्चाताप करना। ,,

३७६ दंपतिसंयोग वर्णन। १७५५

३७७ पृथ्वीराज का संयोगिता प्रति दक्षिण से अनुकूल होजाना। ,,

३७८ संयोगिता का दिल खोल कर अपने मन की बातें करना, प्रातःकाल दोनों का बिलग होना। १७५६

३७९ गुरुराम का गंगातीर पर आ पहुंचना। ,,

३८० पृथ्वीराज का गुरूराम को पास बुलाना। ,,

३८१ गुरुराम का आशीर्बाद देकर सब बीतक सुनाना। ,,

३८२ गुरुराम का कहना कि सामंतों के पास शीघ्र चलिए। १७५७

३८३ कन्ह का पत्र पढ़कर पृथ्वीराज का चलना और संयोगिता का दुखी होना। ,,

३८४ पृथ्वीराज का घोड़ा फटकार कर अपनी फौज में जा मिलना। १७५८

३८५ मुसल्मान सेना का पृथ्वीराज को घेरना पर कन्ह का आड़ करना। ,,

३८६ सात मारों का पृथ्वीराज पर आक्रमण करना और पृथ्वीराज का सब को मार गिराना। १७६९

३८७ पृथ्वीराज को सकुशल देखकर सब सामंतों का प्रसन्न होना। १७६०

३८८ सामंतों की प्रतिज्ञाएं। ,,

३८९ कन्ह का पृथ्वीराज के हाथ में कंकन देखकर कहना यह क्या है। ,,

३९० पृथ्वीराज का लज्जित होकर कहना कि मै अपना पण पूरा कर चुका। १७६१

३९१ कन्ह का कहना कि संयोगिता को कहां छोड़ा। ,,

३९२ पृथ्वीराज का उत्तर देना कि युद्ध

	में स्त्री का क्या काम ।	१७६१
३९३	कन्ह का कहना कि धिक्कार है हमारे तलवार बांधने को यदि संयोगिता सकुशल दिल्ली न पहुंचे ।	,,
३९४	पुनः कन्ह के बचन कि उसे यहां छोड़ चलना उचित नहीं है ।	१७६२
३९५	पृथ्वीराज के चले आने पर संयोगिता का अचेत हो जाना ।	,,
३९६	सखियों का उसे सचेत करने की चेष्टा करना ।	,,
३९७	संयोगिता का मरने को तैयार होना, सखियों का उसे समझा कर संतोष देना ।	१७६३
३९८	संयोगिता का बचन ।	,,
३९९	संयोगिता का झरोखे में झांकना और पृथ्वीराज का दर्शन होना ।	१७६४
४००	पृथ्वीराज का संयोगिता को मूर्छा से जगाकर कहना कि मेरे साथ चलो ।	,,
४०१	संयोगिता का कहना कि मैं कैसे चलूं यदि लड़ाई में मैं छूट गई तो कहीं की न रही ।	१७६५
४०२	पृथ्वीराज का कहना कि मेरे सामंत समस्त पंग दल का संहार कर सकते हैं ।	,,
४०३	संयोगिता का कहना कि जैसा आप जाने पर मैं तो आपको नहीं छोड़ सकती ।	,,
४०४	संयोगिता का जैचन्द का बलप्रताप बर्णन करना	१७६६
४०५	संयोगिता प्रति गोइन्दराय का बचन ।	,,
४०६	हाहुलिराय हम्मीर का बचन ।	१७६७
४०७	संयोगिता का बचन ।	,,
४०८	चंद पुंडीर का कहना कि सब कथा जाने दो यज्ञ विध्वंस करने वाले हमी लोग हैं या कोई और ।	,,
४०९	यह सुनतेही संयोगिता का हठ छोड़ना ।	१७६७
४१०	कन्ह बचन कि स्वामी की निंदा सुनना पाप है, हे पंग पुत्री सुन ।	१७६८
४११	कन्ह का बचन कि मैं अपने भुज-बल से ही तुझे दिल्ली तक सकुशल भेज सकता हूं ।	,,
४१२	चन्द पुंडीर का कहना जिस पृथ्वीराज के साथ में निद्दुररायसा सामंत है उसके साथ तुझे चिंता कैसी ।	१७६९
४१३	रामराय बड़गुज्जर का बचन ।	,,
४१४	आल्हन कुमार का बचन ।	,,
४१५	मलप पँवार का बचन ।	१७७०
४१६	देवराज बग्गरी और रामरघुबंस के बचन ।	,,
४१७	पुनः आल्हन कुमार का बचन ।	,,
४१८	पल्हन देव कच्छावत का बचन ।	१७७१
४१९	संयोगिता का बचन कि यह सब है पर दैव गति कौन जानता है ।	,,
४२०	दाहिमा नरसिंह के बचन कि सुन्दरी वृथा हमलोगों का क्रोध क्यों बढ़ाती है । कहते हैं कि सकुशल दिल्ली पहुंच जावेंगे ।	,,
४२१	पुनः मलप का बचन ।	१७७२
४२२	सारंगदेव का बचन ।	,,
४२३	रामराय रघुबंशी का बचन ।	,,
४२४	भोंहारात्र चंदेल का बचन ।	१७७३
४२५	चंद पंडीर का बचन ।	,,
४२६	निद्दुरराय का बचन कि जो करना हो जल्दी करो बातों में समय न बिताओ ।	,,
४२७	संयोगिता के मन में विश्वाश हो जाना ।	१७७४
४२८	संयोगिता का मन में आगा पीछा बिचारना ।	,,
४२९	संयोगिता का पश्चाताप करके राजा से कहना कि हा मेरे लिये क्या	

जघन्य घटना होरही है। १७७४
४३० राजा का कहना कि इसका बिचार न करा यह तो संसार मे हुआही करता है। ,,
४३१ संयोगिता का कहना की होनी तो हुई सो हुई परंतु चहुआन को चित से नहीं भुला सकती। १७७५
४३२ पृथ्वीराज का संयोगिता का हाथ पकड़ कर घोड़े पर सवार कराना। ,,
४३३ अश्वारोही दंपति की छबि का वर्णन। ,,
४३४ संयोगिता सहित पृथ्वीराज का व्यूह बद्ध होकर चलना। १७७६
४३५ पंग दल में घिरे हुए पृथ्वीराज की कमल संपुट भौंरे की सी गति होना। १७७७
४३६ पृथ्वीराज के हृदय में यौबन और कुल लज्जा का झगडा होना। ,,
४३७ वय भाव। ,,
४३८ लज्जा भाव। ,,
४३९ वय विलासिता भाव। ,,
४४० पृथ्वीराज के हृदय में लज्जा का स्थान पाना। ,,
४४१ कवि का कहना कि पंगदल अति बिषम है। १७७८
४४२ पृथ्वीराज का बचन कि कुछ परवाह नहीं मैं सबको बिदा करूंगा। ,,
४४३ कविचंद का पंगदल में जाकर कहना कि यह पृथ्वीराज नवदुलहिन के सहित है। ,,
४४४ अंतरिक्ष शब्द (नेपथ्य में) प्रश्न। ,,
४४५ उत्तर। ,,
४४६ चहुआन पर पंग सेना का चारों ओर से आक्रमण करना। १७७९
४४७ प्रकोपित पंगदल का बिषम आतंक और सामंतों की सजनई। ,,
४४८ लज्जा भाव कि लज्जा के रहने से संसार में कीर्ति अमर होगी। १७८०
४४९ पृथ्वीराज के मन का लज्जा का अनुयायी होना। ,,
४५० पृथ्वीराज का बचन। ,,
४५१ पंग सेना के रण वाद्यों का भीषण रव। १७८१
४५२ पंगराज की ओर से एक हजार संख धुनियों का शब्द करना। ,,
४५३ सेना के अग्र भाग में हाथियों की बीड़ बढ़ना। ,,
४५४ मतवारे हाथियों की ओजमय शोभा वर्णन। १७८२
४५५ सुसज्जित सेना संग्रह की रात्रि से उपमा वर्णन। १७८३
४५६ पंग सेना का अनी बद्ध होना और जैचन्द का मीर जमाम को पृथ्वीराज को पकड़ने की आज्ञा देना। ,,
४५७ जंगी हाथियों की तैयारी वर्णन। ,,
४५८ रावण कोतवाल का सब सेना में पंगराज का हुक्म सुनाकर कहना कि पृथ्वीराज संयोगिता को हर लाया है १७८४
४५९ जैचन्द का रावण और सुमंत से सलाह पूछना। ,,
४६० सुमंत का कहना कि बनसिंह और कहर कठौर को आज्ञा दी जाय। १७८५
४६१ जैचन्द का कहना कि पृथ्वीराज मय सामंतों के जीता पकड़ा जावे। ,,
४६२ रावण का कहना कि यह असंभव है इस समय मोह कहने से आपकी बात नहीं रह सकती। १७८६
४६३ रावण के कथनानुसार जैचन्द का मीर जमाम को भी पसर करने का हुक्म देना। ,,
४६४ रावण का कहना कि आप स्वयं चढ़ाई कीजिए तब ठीक है। ,,
४६५ पंगराज का कहना कि चोरों को पकड़ने मै क्यों जाऊं। ,,

४६६ पुनः रावण का प्रत्युत्तर की आपने हठ से सब काम किए। १७८७

४६७ कुतवाल का बचन कि जिसका पालन करना हो उसे प्राण समान माने परंतु संग्राम में सबको कष्ट जाने। ,,

४६८ मुसल्मानी सेना नायक का सेना सहित हरावल में होकर आगे बढ़ना १७८८

४६९ पंगदल को आते देख कर पृथ्वीराज का फिर कर खड़ा होना। ,,

४७० पृथ्वीराज की ओर से बाघराज बघेले का तलवार खींच कर सामने होना। १७८९

४७१ सौ सामंत और असंख्य पंग दल में संग्राम शुरू होना। ,,

४७२ पुनः रावण का बचन कि पृथ्वीराज को पकड़ने में सब सेना का नाश होगा। ,,

४७३ केहर कंठेर का कहना कि रावण का कहना यथार्थ है। ,,

४७४ पंग का उत्तर देना कि सेवक का धर्म स्वामी की आज्ञा पालन करनाहै। १७९०

४७५ पंग को प्रणाम करके केहर कंठेर और रावण का बढ़ना। ,,

४७६ उनके पीछे जैचन्द का चलना। ,,

४७७ जैचन्द के सहायक राजा रावतों के नाम। ,,

४७८ पंग की चढ़ाई का आतंक वर्णन। १७९१

४७९ क्षत्री धर्म की प्रभुता। १७९२

४८० प्रफुल्ल मन वीरों के मुखारबिन्द की शोभा वर्णन। ,,

४८१ पृथ्वीराज को पकड़ने के लिये पांच लाख सेना के साथ रूमीखां और बहरामखां दो यवन योद्धाओं का बीड़ा उठाना। १७९३

४८२ आगे रावण तिस पीछे जैचन्द का अग्रसर होना और इस आतंक से सब को भाषित होना कि चौहान अवश्य पकड़ा जायगा। ,,

४८३ हरावल के हाथियों की प्रभुति। १७९४

४८४ पंगदल को बढ़ता देखकर सयोगिता सहित पृथ्वीराज का सन्नद्ध होना और चारों ओर पकड़ो पकड़ो का शोर मचना। ,,

४८५ लोहाना आजानबाहु का मुकाबला करना और वीरता के साथ मारा जाना। १७९५

४८६ लोहाना के मरने पर गोयन्दराय गहलौत का अग्रसर होना और कई एक मीर वीरों को मार कर उसका भी काम आना। ,,

४८७ गोयदराय की वीरता और उसके मरने पर पज्जूनराय का हथियार करना। १७९६

४८८ पज्जूनराय पर पांच सौ मीरों का पैदल होकर धावा करना और इधर से पांच सौ सामन्तों का उसकी मदद करना। १७९७

४८९ नरसिंहराय का वीरता के साथ मारा जाना। ,,

४९० नरसिंहराय की वीरता और उसका मोक्ष पद पाना। १७९८

४९१ मुसल्मान सेना का जोर पकड़ना और पज्जूनराय का तीसरे प्रहर पर्य्यंत लड़ना। ,,

४९२ मुसल्मान सेना के चिन्त विचलित होने पर उधर से बाघराज बघेले का पमर करना और इधर से चन्दपुंडीर का मौका रोकना। १७९९

१९३ मीर कमोद और पुंडीर का युद्ध और पुंडीर का मारा जाना। ,,

४९४ चद पुंडीर की वीरता। १८००

४९५ चद पुंडीर के मरने पर कूरभराय का धावा करना और बाघराज और कूरंभराय दोनों का मारा जाना। ,,

४९६ कूरम्भ के मरने पर उसके भाई पल्हनराय का मोरचे पर आना। ,,

४९७ पाल्हन की वीरता और दोपहर के समय उसका खेत रहना। १८००
४९८ पाल्हन और कूरंभ की उद्दंड वीरता और दोनों का मोक्ष पद पाना। १८०१
४९९ पज्जूनराय का निपट निराश होकर युद्ध करना। ,,
५०० पज्जूनराय के पुत्र मलैसी के वीरता और ज्ञानमय बचन। १८०२
५०१ मलैसिंह का वीरता और परक्रम से युद्ध करके मारा जाना। ,,
५०२ उधर से रावण का कोप करके अटल रूप से युद्ध करते हुए आगे बढ़ना। १८०३
५०३ पंग सेना की ओर से मतवारे हाथियों का झुकाया जाना। ,,
५०४ सामंतों का हाथियों को बिचला देना जिससे पंग सेना की ही हानि होना। ,,
५०५ सामंतों के कुपित होकर युद्ध करन से पंग सेना का छिन्न भिन्न होना इतने में सूर्य्यास्त भी हो जाना। १८०४
५०६ कन्ह के अतुलित पराक्रम की प्रशंसा १८०५
५०७ सारंगराय सोलंकी का रावण से मुकाबला करना और मारा जाना। ,,
५०८ सालवी सारंग की वीरता। १८०६
५०९ सायंकाल पर्य्यंत पृथ्वीराज के केवल सात सामत और पंगदल के अगनित वीरों का काम आना। ,,
५१० प्रथम दिन के युद्ध मे पंगदल के मृत मुख्य सरदारों के नाम। १८०७
५११ मृत सात सामन्तों के नाम। ,,
५१२ पंगदल के मारे गए हाथी घोड़े और सैनिकों की संख्या।
५१३ जैचन्द के चित्त की चिन्ता। १८०८
५१४ जेतराव का चामण्डराव के बन्दी होने पर पश्चाताप करना। ,,
५१५ अष्टमी के युद्ध की उपसंहार कथा। ,,
५१६ पृथ्वीराज की बाराह और पंगराज की पारधी से उपमा वर्णन। १८०९
५१७ अंधेरी रात में मांसाहारी पशुओं का कोलाहल करना। ,,
५१८ सामंतों का कमल व्यूह रच कर पृथ्वीराज को बीच में करना। १८१०
५१९ पृथ्वीराज का प्रिया के साथ सुख से शेष रात्रि बिताना। ,,
५२० सब सामंतो का सलाह करना कि जिस तरह हो इस दंपति को सकुशल दिल्ली पहुँचाना चाहिए। ,,
५२१ जैनराय जनदुर और भौंहा चंदेल का बिचारना कि नाहक की मौत हुई। १८११
५२२ आकाश में चाँदना होते ही सामंतों का जागृत होना और राजा को बचाने के लिये व्यूह बद्ध होने की तैयारी करना। ,,
५२३ गुरुराम का कन्ह से कहना कि रात्रि तो बीती अब रक्षा का उपाय करो १८१२
५२४ कन्ह का कहना कि औघट से निकल चलना उचित है। ,,
५२५ राजा पृथ्वीराज का सोकर उठना। १८१३
५२६ पृथ्वीराज से सामंतों का कहना कि आगे बढ़िए हम एक एक करके पंग सेना को छेड़ेंगे। ,,
५२७ सामनों का कहना कि सत्तहीन क्षत्री क्षत्री ही नहीं है। ,,
५२८ सामंनों का कहना कि यहां से निकल कर किसी तरह दिल्ली जा पहुंचो। ,,
५२९ राजा का कहना कि मरने का भय दिखाकर मुझे क्यों डराते हो और मुझ पर बोझ देते हो। १८१४
५३० पृथ्वीराज का स्वयं अपना बल प्रताप कहना। ,,

५३१ सामन्तों का कहना कि राजा और सेवक का परस्पर का व्यवहार है। वे सदा एक दूसरे की रक्षा करने को बाध्य हैं। १८१४
५३२ सामन्तों का कहना कि तुम्हीं ने अपने हाथों अपने बहुत से शत्रु बनाए हैं। १८१५
५३३ सामन्तों के स्वामिधर्म की प्रभुता। ,,
५३४ पुनः सामन्तों का कहना कि "पांच पंच मिल किजे काज, हारं जीते नाहीं लाज" इस समय हमारी कीर्ति इसी में है कि आप सकुशल दिल्ली पहुँच जावें। ,,
५३५ पुनः सामन्तों का कथन कि मर्दों का मंगल इसी में है कि पति रख कर मरें। १८१६
५३६ राजा का कहना कि मैं तो यहां से न जाऊंगा। रुक करके लड़ूंगा। १८१७
५३७ सामन्तों का उत्तर देना कि ऐसा हठ न कीजिए। ,,
५३८ पृथ्वीराज का कहना कि चाहे जो हो परन्तु मैं यहां से भाग कर अपकीर्ति भाजन न बनूंगा। १८१८
५३९ सामन्तों का कहना कि हठ छोड कर दिल्ली जाइए हम पग सेना को रोकेंगे। ,,
५४० पृथ्वीराज का कहना कि यहां से निकल कर जाना कैसा और शरीर त्याग करने में भय किस बात का। १८१९
५४१ सामन्तो का मन में पश्चाताप करना। ,,
५४२ राजा का कहना कि सामन्तों सोच न करो कीर्ति के लिये प्राण जाना सदा उत्तम है। ,,
५४३ पृथ्वीराज का किसी का कहना न मान कर मरने पर उतारू होना। १८२०
५४४ सामन्तों का पुनः कहना कि यदि दिल्ली चले जांय तो अच्छा है। ,,
५४५ पृथ्वीराज का कहना कि मैं तो जयचंद के सामने कभी भी न भागूंगा। १८२०
५४६ कविचन्द का भी राजा को समझाना पर राजा का न मानना। १८२१
५४७ जामराय जदव का कन्ह से कहना कि यह व्याह क्याही अच्छा है। ,,
५४८ व्यूह बद्ध सामन्त मंडली और पृथ्वीराज की शोभा वर्णन। ,,
५४९ उक्त समय संयोगिता और पृथ्वीराज के दिलों मे प्रेम की उत्कंठा बढ़नी। १८२२
५५० कन्ह का कुपित होकर जामराय से कहना कि तुम समझाओ जरा माने तो मानें। ,,
५५१ जामराय जदव का राजा से कहना कि विवाह की यह प्रथम रात्रि है सो सुख सेज पर सोओ। १८२३
५५२ दरबार बरखास्त होकर पृथ्वीराज का संयोगिता के साथ शयन करना। ,,
५५३ प्रातःकाल पृथ्वीराज का शयन से उठना सामन्तों का उसके स्नान के लिये गंगाजल लाना स्नान करके पृथ्वीराज का सन्नद्ध होना। ,,
५५४ प्रातः काल होतही पुनः रंग दल मे खरभर होना। १८२४
५५५ प्रभात की शोभा वर्णन। ,,
५५६ प्रातः काल से जैचन्द का युद्धवीर होकर सेना से पुकारना कि कोई भाग न पावे। १८२६
५५७ जैचन्द का पूर्व दिशा से आक्रमण करना। १८२७
५५८ सुख नींद सोते हुए पृथ्वीराज को जगाने के लिये कविचन्द का बिरदावली पढ़ना। ,,
५५९ पृथ्वीराज का सुख से जागना। १८२८

५६० पृथ्वीराज का शयन से उठकर संयोगिता सहित घोड़े पर सवार होना और धनुष सम्हालना। १८२८

५६१ पंग सेना का व्यूह वर्णन। १८२९

५६२ वीर ओज वर्णन। ,,

५६३ सूर्य्योदय के पहिले से ही दोनों सेनाओं में मार मचना। १८३०

५६४ युद्ध वर्णन। १८३१

५६५ अरुणोदय होते होते भीमिगराय का काम आना। ,,

५६६ अरुणोदय पर सापुला सूर का मोरचा राकना। १८३२

५६७ एक घड़ी दीन चढ़े पर्य्यन्त सामंतों का अटल होकर पंग सेना से लड़ना ,,

५६८ सामंतों का पराक्रम और फुर्तीलापन १८३३

५६९ पङ्गराज की अनी का व्यूह वर्णन और चंदेलों का चौहानों पर धावा करना और अत्तताई का मोरचा मारना। ,,

५७० इतने में पृथ्वीराज का दसकोस बढ़ जाना परंतु हाथियों के कोट में घिर जाना। १८३४

५७१ पृथ्वीराज का कोप करके कमान चलाना। ,,

५७२ एक प्रहर दिन चढ़ते चढ़ते सहस्रों योद्धाओं का मारा जाना। ,,

५७३ जैचन्द का कुपित होकर सेना को आदेश करना। १८३५

५७४ घनघोर युद्ध वर्णन। ,,

५७५ पृथ्वीराज के सात सामंतों का मारा जाना और पंग सेना का मनहार होना परंतु जैचन्द के आज्ञा देने से पुनः सबका जी खोलकर लड़ना। १८३६

५७६ दूसरे दिन नवमी के युद्ध के ग्रह नक्षत्रादि का वर्णन। १८३७

५७७ जैचन्द की आज्ञा से पंग सेना का कोप करना और चौहान की तरफ से पांच सामंतों का मोरचा लेना। इन्हीं पांचों के मरते मरते तीसरा पहर हो जाना। १८३८

५७८ वीर योद्धाओं का युद्ध के समय के पराक्रम और उनकी वीरता का वर्णन १८३९

५७९ उक्त पांचों वीरों की वीरता और उनके नाम। ,,

५८० पृथ्वीराज को पकड़ लेने के लिये जैचन्द की प्रतिज्ञा। १८४०

५८१ जैचन्द का अपनी सेना की आठ अनी करके चौहान को घेरना और सेना के साथ राजकुमार का पसर करना। उक्त सेना का व्यूहबद्ध होना। मुख्य योद्धाओं के नाम और उनके स्थान। ,,

५८२ वीर रस माते योद्धाओं का ओज वर्णन। १८४१

५८३ लड़ते लड़ते दोपहर होजाने पर संभरी नाथ का कुपित हो हाथ में कमान लेना। १८४२

५८४ घनघोर युद्ध का वाक्चित्र दर्शन। ,,

५८५ पृथ्वीराज की कमान चलाने की हस्तलाघवता। १८४३

५८६ पृथ्वीराज का जैचन्द पर बाण चलाने की प्रतिज्ञा करना और संयोगिता का रोकना। १८४४

५८७ पृथ्वीराज के घोड़े की तेजी। ,,

५८८ चहुआन की तलवार चलाने की हस्तलाघवता। ,,

५८९ सात घड़ी दिन शेष रहने पर पंगदल का छिन्न भिन्न होना देखकर रयसलकुमार का धावा करना। १८४५

५९० पृथ्वीराज के एक एक सामन्त का पङ्ग सेना के एक एक सहस्र वीरों से मुकाबला करना। ,,

५९१ घमासान युद्ध वर्णन। १८४५
५९२ नवमी के युद्ध का अन्त होना। १८४७
५९३ सामन्तों का कहना कि अब भी जो बचे हैं उन्हें लेकर दिल्ली चले जाओ। ,,
५९४ नवमी के युद्ध में तेरह सामंतों का मारा जाना। ,,
५९५ मृत सामन्तो के नाम। ,,
५९६ संध्या को युद्ध बंद होना। १८४८
५९७ पंग सेना के मृत रावतों के नाम। ,,
५९८ नवमी के युद्ध की उपसंहार कथा। ,,
५९९ पंग सेना का पराजित होकर भागना तब शंखधुनी योगियों का पसर करना। १८४९
६०० शंखधुनी योद्धाओ का स्वरूप वर्णन। ,,
६०१ पृथ्वीराज का कवि से पूछना कि ये योगी लोग जैचन्द की सेवा क्यों करते हैं। ,,
६०२ कविचन्द का शंखधुनियों की पूर्व्व कथा कहना। १८५०
६०३ तेलंग देश का प्रमार राजा था उसके रावत लोग उससे बड़ी प्रीति रखते थे। ,,
६०४ उक्त प्रमार राजा का छत्तीस कुली क्षत्रियों को भूमि भाग देकर बन में तपस्या करने चला जाना। ,,
६०५ राजा के साथी रावतों का भी योग धारण कर लेना। १८५१
६०६ ऋषियो का होम जप करते हुए तपस्या करना। ,,
६०७ एक राक्षस का ऋषि की गाय भक्षण कर लेना और ऋषियों का सन्तापित होकर अग्नि में प्रवेश करने के लिये उद्यत होना। ,,
६०८ नारद मुनि का आना और सब योगियो का उनकी पूजा करना। ,,
६०९ नारद मुनि का योगियों को प्रबोध करना। १८५२
६१० नारद का कहना कि तुम जैचन्द की सेवा करो वहां तुम युद्ध में प्राण त्याग कर साक्षात मोक्ष पावोगे। ,,
६११ कवि का कहना कि ये लोग उसी समय से जैचन्द की सेना में रहते हैं। १८५३
६१२ नारद ऋषि का जैचन्द के पास आना और जैचन्द का पूछना कि आप का आना कैसे हुआ। ,,
६१३ नारद ऋषि का शंखधुनी योगियों की कथा कहकर राजा को समझाना कि आप उनको सादर स्थान दीजिए। १८५४
६१४ कवि का कहना कि तब से जैचन्द इन्हे अपने भाई के समान मान से रखता है। १८५५
६१५ जैचन्द की आज्ञा पाकर शंखधुनियों का प्रसन्न होकर आक्रमण करना। ,,
६१६ शंखधुनियों का पराक्रम। ,,
६१७ युद्ध की शोभा और वीरों की वीरता वर्णन। १८५६
६१८ शंखधुनी योगियों के सामने भौंहा का घोड़ा बढ़ाना। १८५७
६१९ मांस भक्षी पक्षियों का वीरों के सीस लेल कर उड़ना। ,,
६२० एक चील्ह का बहुत सा मांस लेजाकर चील्हनी को देना। ,,
६२१ चील्हनी का पति से पूछना यह कहां से लाए। १८५८
६२२ चील्ह का कहना कि जैसा अपने पुरुषों से प्राचीन कथा सुनता था सो आज आखों देखी। ,,
६२३ चील्हनी का पूछना किस किस मे और किस कारणवश यह युद्ध हुआ ,,

६२४ चील्ह का सब हाल कहना। १८५८
६२५ चील्ह का चील्हनी से युद्ध का वर्णन करना और उसे अपने साथ युद्ध स्थान पर चलने को कहना। ,,
६२६ शंखधुनी योगियों के आक्रमण करने पर महा कुहराम मचना। १८६०
६२७ बड़ी बुरी तरह से घिर जाने पर सामंतों का चिंता करना और पृथ्वीराज का सामंतों की तरफ देखना। ,,
६२८ पृथ्वीराज के सामनों का भी जी खोल कर हथियार चलाना। ,,
६२९ पृथ्वीराज का कुपित होकर तलवार चलाना और बान बर्साना। १८६१
६३० इसी समय कविचन्द का लड़ने के लिये पृथ्वीराज से आज्ञा मांगना। ,,
६३१ पृथ्वीराज का कवि को लड़ाई करने से रोकना। १८६२
६३२ कविचन्द का राजा की बात न मान कर घोड़ा बढ़ाना। ,,
६३३ कविचन्द के घोड़े की फुर्ती और उसकी शोभा वर्णन। ,,
६३४ कविचन्द का युद्ध करके मुसल्मानी सेना को विदार देना और सकुशल लौट कर राजा के पास आजाना। ,,
६३५ कवि का पराक्रम और राजा का उसकी प्रसंशा करना। १८६४
६३६ कवि का पैदल होजाना और अपना घोड़ा कन्ह को देना। ,,
६३७ नवमी को एक घड़ी रात्र गए जैचन्द के भाई का मारा जाना। १८६५
६३८ जैचन्द का अत्यन्त कुपित होकर सेना को ललकारना। पंग सेना के योद्धाओं का धावा करना। उनकी वीर शोभा वर्णन। ,,
६३९ सामन्तों का बल और पराक्रम वर्णन। १८६६
६४० चिल्हनी का युद्ध देखकर प्रसन्न होना। १८६६
६४१ केहरि कंठीर का पृथ्वीराज के गले में कमान डाल देना। ,,
६४२ संयोगिता का प्रत्यंचा काट देना और पृथ्वीराज का केहरि कंठीर पर तलवार चलाना। १८६७
६४३ तलवार के युद्ध का वाक् दृश्य वर्णन। ,,
६४४ नवमी की रात्रि के युद्ध का अवसान। सात सौ शंखधुनियों का मारा जाना। १८६८
६४५ नवमी की रात्रि के युद्ध की उपसहार कथा और मृत योद्धाओं के नाम। ,,
६४६ युद्ध वर्णन। १८७०
६४७ सामंतों की प्रशंसा। १८७१
६४८ अत्ताताई का युद्ध वर्णन। ,,
६४९ अत्ताताई की सजावट और युद्ध के लिये उसका ओज एवं उत्साह वर्णन ,,
६५० अत्ताताई पर मुसल्मान सेना का आक्रमण करना। १८७२
६५१ अत्ताताई का यवन सेना को विदार देना। ,,
६५२ अत्ताताई का अतुलित पराक्रम वर्णन १८७३
६५३ अत्ताताई के युद्ध करते करते चहुआन का गंगा पार करना। ,,
६५४ गंधर्वों का इन्द्र से कहना कि कनौज का युद्ध देखने चलिए और इन्द्र का ऐरावत पर सवार होकर युद्ध देखने आना। १८७४
६५५ पृथ्वीराज का कविचन्द से अत्ताताई की कथा पूछना। ,,
६५६ कविचन्द का अत्ताताई की उत्पति कहना कि तूअरों के मंत्री चौरंगी चहुआन को पुत्री जन्मा और प्रसिद्ध हुआ कि पुत्र जन्मा है। १८७५

६५७ पुत्री का यौवन काल आने पर माता का उसे हरिद्वार में शिवजी के स्थान पर लेजाकर शिवार्चन करना। १८७५

६५८ शिव स्तुति। ,,

६५९ कन्या का निराहार व्रत करके शिव जी का पूजन करना। १८७६

६६० शिवजी का प्रसन्न होना। ,,

६६१ कन्या का वरदान मांगना। ,,

६६२ शिवजी का वरदान देना। ,,

६६३ शिवजी का वरदान कि आज से तेरा नाम अत्ताताई होगा और तू ऐसा बीर और पराक्रमी होगा कि कोई भी तुझसे समर में न जीत सकेगा १८७७

६६४ कवि का कहना कि अत्ताताई अजेय योद्धा है। १८७८

६६५ अत्ताताई के वीरत्व का आतंक। ,,

६६६ उस कन्या के दिल्ली लौट आने पर एक महीने में उसे पुरुषत्व प्राप्त हुआ १८७९

६६७ इस प्रकार से कवि का अत्ताताई के नाम का अर्थ और उसके स्वरूप का वर्णन बतलाना। ,,

६६८ अत्ताताई के मरने पर कमधुज्ज सेना का जोर पकड़ना और केहरि मल्ल कमधुज्ज का धावा करना। १८८०

६६९ पग की कुंपत सेना का अनेक वर्णन ,,

६७० युद्ध स्थल की पावस से उपमा वर्णन। १८८२

६७१ पगराज के हाथी की सजावट और शोभा। ,,

६७२ पंगराज की आज्ञा पाकर सैनिकों का उत्साह से बढ़ना। उनकी शोभा वर्णन। ,,

६७३ पृथ्वीराज की तरफ से हाड़ाहम्मीर का अग्रसेन होना। १८८३

६७४ पंग सेना में से काशिराज का मोरचे पर आना। ,,

६७५ काशिराज के दल का बल। ,,

६७६ काशिराज और हाडा हम्मीर का परस्पर युद्ध वर्णन। १८८४

६७७ दोनों का द्वंद युद्ध और दोनों का मारा जाना। ,,

६७८ नवमी का चन्द्र अस्त होने पर आधी रात को दोनों सेनाओं का थक जाना ,,

६७९ पृथ्वीराज का पंग सेना के बीच में घिर जाना। १८८५

६८० रात्रि को सामतों का सलाह करना कि प्रातःकाल राजा को किसी तरह निकाल ले चलना चाहिए। ,,

६८१ पृथ्वीराज का कहना कि तुम लोग अपने बल का गर्व करते हो। मैं मानूंगा नहीं चाहे जो हो। १८८६

६८२ सामतों का कहना कि अब भी न मानोगे तो अवश्य हारोगे। ,,

६८३ पृथ्वीराज का कहना कि जो भाग्य में लिखा होगा सो होगा।

६८४ दिशाओं में उजेला होना और पंग सेना का पुनः आक्रमण करना। ,,

६८५ जैचन्द के हाथी की शोभा वर्णन। १८८७

६८६ सामतों का घोड़ों पर सवार होकर हथियार पकड़ना। ,,

६८७ चहुआन के सरदारों के नाम और उनकी सज धज का वर्णन। ,,

६८८ प्रातः काल पृथ्वीराज का जागना। ,,

६८९ पंगराज का प्रतिज्ञा करना। ,,

६९० प्रातः काल की चढ़ाई के समय पग सेना की शोभा। १८८८

६९१ पृथ्वीराज का व्यूहबद्ध होना और गौरग देव अजमेरपति का मोरचा रोकना। १८८९

६९२ पृथ्वीराज की ओर से जैतराव का बाग सम्हालना। ,,

६९३ पृथ्वीराज का घिर जाना और बीर पुरुषों का पराक्रम। ,,

६९४ युद्ध के समय शोणित प्रवाह की शोभा। १८८९
६९५ घुड़सवारों के घोड़ों की तेजी और जवानों की हस्तलाघवता। १८९०
६९६ जैचन्द के भाई वीरमराय का वर्णन १८९१
६९७ वीरमराय का चहुआन सेना के सम्मुख आकर सामंतों का प्रचारना। ,,
६९८ दसमी रविवार के प्रभात समय की सविस्तर कथा का आरंभ। १८९२
६९९ नवमी के रात्रि के युद्ध में दोनों दलों का थक जाना। ,,
७०० संयोगिता का पृथ्वीराज की ओर और पृथ्वीराज का संयोगिता की ओर देखकर सकुचित चित्त होना।
७०१ चारों ओर घोर शोर होने पर भी पृथ्वीराज का आलस त्याग कर न उठना। ,,
७०२ सब सामन्तों का राजा की रक्षा के लिये सलाह करके कन्ह से कहना। १८९४
७०३ कन्ह का कवि को समझाना कि अब भी दिल्ली चलने में कुशल है। ,,
७०४ कविचन्द का पृथ्वीराज के घोड़े की बाग पकड़ कर दिल्ली की राह लेना। १८९५
७०५ पृथ्वीराज प्रति कविचन्द का वचन। ,,
७०६ राजा पृथ्वीराज का चलने पर सम्मत होना। ,,
७०७ सामन्तों का व्यूह बांधना धाराधिपति का रास्ता करना और निरछे रूख पर चौहान का आगे बढ़ना। ,,
७०८ शौचादि से निश्चिंत होकर दो घड़ी दिन चढ़े जैचन्द का पसर करना। १८९६
वीर योद्धाओं का उत्साह। ,,
सामन्तों की स्वामि भक्तिमय विषम वीरता। ,,
७११ पंगराज का अपनी सेना को पृथ्वीराज को पकड़ लेने की आज्ञा देना। १८९७
११२ पंगराज की प्रतिज्ञा सुनकर सैनिकों का कुपित होना। ,,
११३ पंगसेना का धावा करना तुमुल युद्ध होना और वीरसिंह राय का मारा जाना। ,,
११४ पंगदल की सर्प से और पृथ्वीराज की गरुड़ से उपमा वर्णन। १८९८
११५ पंगसेना के बीच मे से पृथ्वीराज के निकल जाने की प्रशंसा। ,,
७१६ पंग सेना का पृथ्वीराज को रोकना और सामन्तों का निकल चलने की चेष्टा करना। १८९९
७१७ एक पहर दिन चढ़ आने पर इधर से बलिभद्र के भाई उधर से मीरां मर्द का युद्ध करना। १९००
७१८ बलिभद्र के भाई का मारा जाना। ,,
७१९ दो पहर तक युद्ध करके बलिभद्र का मारा जाना। ,,
७२० हरसिंह का हथियार करना और पंग सेना का छिन्न भिन्न होना। १९०१
७२१ पंगराज का दो मीर सरदारों को पांच हजार सेना के साथ धावा करने की आज्ञा देना। ,,
७२२ मीरों का आज्ञा शिरोधार्य्य करके धावा करना। ,,
७२३ मीर मंडली से हरसिंह का युद्ध। पहाड़राय और हरिसिंह का माराजाना। ,,
७२४ नरसिंह का अकेले पंग सेना को रोकना और पृथ्वीराज का चार कोस निकल जाना। १९०२
७२५ नरसिंह के मरते ही पंग सेना का पुनः चौहान को आघेरना। ,,
७२६ इस तरफ मे कनक राय बड़ गुज्जर का मोरचा रोकना। ,,

७२७ बीरमराय का बल पराक्रम वर्णन। १६०४
७२८ उक्त मीर बन्दों को मरा हुआ देखकर जैचन्द का बीरम राय को आज्ञा देना। ,,
७२९ बीरम राय का धावा करना बीरम राय और बड़ गुज्जर दोनों का मारा जाना। ,,
७३० बड़ गुज्जर के मारे जाने पर पृथ्वीराज का निड्डुर राय की तरफ देखना। १६०५
७३१ जैचन्द की तरफ से निड्डुर राय के छोटे भाई का धावा करना। निड्डुर राय का सम्मुख डटना। १६०६
७३२ युद्ध वर्णन। ,,
७३३ भाई बलभद्र और निड्डुर राय का परस्पर द्वंद युद्ध होना और दोनों का एक साथ खेत रहना। १६०७
७३४ जैचन्द का निड्डुर राय की लाग पर कमर का पिछौरा खोल कर डालना। १६०८
७३५ निड्डुर राय की मृत्यु पर पग का पश्चात्ताप करना। ,,
७३६ निड्डुरराय के मोरचा रोकने पर पृथ्वीराज का आठ कोस पर्य्यन्त निकल जाना। १६०९
७३७ निड्डुर राय की प्रशंसा और मोच। ,,
७३८ पंग सेना का पुनः पृथ्वीराज को घेरना और कन्हराय का अग्रसर होना। ,,
७३९ बीर बखरेत का पंग सेना को रोकना और उसका मारा जाना। १६१०
७४० छग्गन राय का पंग सेना को रोकना। ,,
७४१ छग्गन का पराक्रम और बड़ी बीरता से मारा जाना। ,,
७४२ छग्गन की पार्थ से उपमा वर्णन। १६११
७४३ छग्गन का मोच। पृथ्वीराज का ढाई कोस निकल जाना। १६११
७४४ कन्ह का रणोद्यत होना, कन्ह के सिर की कमल से और पंग दल की भ्रमर से उपमा वर्णन। ,,
७४५ कन्ह के तलवार की प्रशंसा, कन्ह की हस्त लाघवता और उसके तलवार के युद्ध का वाक दृश्य वर्णन। ,,
७४६ पट्टी छुटतेही कन्ह का अद्वितीय पराक्रम वर्णन। १६१३
७४७ कन्ह का युद्ध करना। राजा का दस कोस निकल जाना। ,,
७४८ कन्ह का कोप। १६१४
७४९ चार घोड़े मारे जाने पर कन्ह का पांचवे पट्टन नामक घोड़े पर सवार होना। पट्टन की बीरता। कन्ह का पंचत्व को प्राप्त होना। १६१५
७५० कन्ह के रुंड का तीस हजार सैनिकों को संहारना। ,,
७५१ कन्ह का तलवार से युद्ध करना। १६१६
७५२ तलवार टुटने पर कटार से युद्ध करना। ,,
७५३ कटार के विषम युद्ध का वर्णन जिससे पंग सेना के पांच सहस्र सिपाही मारे गए। १६१७
७५४ कटार के टुट जाने पर मल्ल युद्ध करना। ,,
७५५ चाहुआन का दस कोस निकल जाना। १६१८
७५६ कन्ह राय की बीरता का प्रभुत्व। कन्ह का अक्षय मोच पाना। ,,
७५७ कन्ह के अतुल पराक्रम की सुकीर्ति। १६१९
७५८ कन्ह द्वारा नष्ट पंग सेना के सिपाहियों की संख्या। १६२०

७५९ अल्हन कुमार का अपना सिर काट कर पृथ्वीराज के हाथ पर रख कर धड़ का युद्ध करना । १९२०

७६० अल्हन कुमार का अतुल पराक्रम मय युद्ध वर्णन । वीरया राय का मारा जाना उसके भाई का अल्हन के धड़ को शान्त करना । ,,

७६१ अल्हन कुमार के रुंड का शान्त होना और उसका मोक्ष पाना । १९२१

७६२ अल्हन कुमार के मारे जाने पर अचलेस चौहान का हथियार धरना । १९२२

७६३ पृथ्वीराज का अचलेस को आज्ञा देना । ,,

७६४ अचलेस का अग्रसर होना । ,,

७६५ अचलेस का बड़ी बीरता से युद्ध करके मारा जाना । १९२३

७६६ बिंफराज का अग्रसर होना । १९२४

७६७ पंग सेना का विषम आतंक वर्णन । ,,

७६८ पृथ्वीराज का बिंफराज सौलंकी को आज्ञा देना । १९२५

७६९ बिंफराज पर पंग सेना के छः सरदारों का धावा करना । बिंफराज का सब को मारकर मारा जाना । ,,

७७० बिंफराज द्वारा पंग सेना के सहस्र सिपाहियों का मारा जाना । १९२७

७७१ बिंफराज की वीरता और सुकीर्ति । ,,

७७२ बिंफराज के मरने पर पंग सेना में से सारंगदेव जाट का अग्रसर होना । १९२८

७७३ पृथ्वीराज की तरफ से सलष प्रमार का शस्त्र उठाना । ,,

७७४ पंग सेना में से जेसिंह का सलष से भिड़ना और मारा जाना । ,,

७७५ सारंग राय जाट और सलष का युद्ध और सारंगराय का मारा जाना । १९२९

७७६ सलष का सिर कटना । १९३०

७७७ पंगसेना में से प्रतापसिंह का पसर करना । ,,

७७८ पृथ्वीराज की तरफ से लष्मन बघेल का लोहा लेना । प्रतापसिंह का मारा जाना । १९३१

७७९ लष्मन बघेल का बीरता के साथ खेत रहना । १९३२

७८० लष्मन बघेल की बीरता । ,,

७८१ पहार राय तोमर का अग्रसर होना । १९३३

७८२ जैचन्द का असोक राय को सहायक देकर सहदेव को धावा करने की आज्ञा देना । ,,

७८३ सहदेव और असोक राय का पसर करना । ,,

७८४ पृथ्वीराज का तोमर प्रहार को आज्ञा देना । १९३४

७८५ पहार राय तोमर का युद्ध करना । असोक राय का मारा जाना । ,,

७८६ पहार राय तोमर और सहदेव का युद्ध । दोनों का मारा जाना । १९३५

७८७ जंधार भीम का आड़े आना । १९३६

७८८ पंगसेना में से पंचाइन का अग्रसर होना । ,,

७८९ जंधारभीम और पंचाइ का युद्ध । १९३७

७९० पृथ्वीराज का सोरों तक पहुंचना । ,,

७९१ किस सामंत के युद्ध में पृथ्वीराज कितने कोस गए । ,,

७९२ अपनी सीमा निकल जाने पर पंग का आगे न बढ़ना और महादेव का दस हजार सेना लेकर आक्रमण करना १९३८

७९३ महादेवराव और कचरारांय का द्वंद युद्ध । दोनों का मारा जाना । ,,

७९४ लीलाराय प्रमार और उदयसिंह का परस्पर घोर युद्ध करना और दोनों

को मारा जाना। १६४०
७६५ कचरा राय के मारे जाने पर पंग दल का कोप करके धावा करना। १६४१
७६६ कचरराय का स्वर्गवास। १६४२
७६७ कचरराय का पराक्रम। ,,
७६८ सब सामंतो के मरने पर पृथ्वीराज का स्वयं कमान खींचना। ,,
७६६ जैचंद का बराबर बढ़ते जाना और जंघारेभीम का मोरचा रोकना। ,,
८०० जंघारेभीम का तलवार और कटार लेकर युद्ध करना। १६४३
८०१ जंघारेभीम का माराजाना। १६४५
८०२ पंगदल का समुद्र से उपमा वर्णन। ,,
८०३ पृथ्वीराज का शर संधान कर जैचंद का छत्र उड़ा देना। १६४६
८०४ चार घड़ी दीन रहे दोनों तरफ शांति होना। ,,
८०५ जैचंद का मंत्रियों का मत मानकर शांत हो जाना। ,,
८०६ जैचंदका पश्चाताप करते हुए कन्नाजे को लौट जाना। १६४७
८०७ जैचंद का शोक और दुःख मे व्याकुल होना और मंत्रियों का उसे समझाना ,,
८०८ पृथ्वीराज का दिल्ली में आना और प्रजावर्ग का वधाई देना। १६४८
८०६ जैचंद का पृथ्वीराज के घायलों को उठवा कर तैंतीस डोलियों में दिल्ली पहुंचाना। १६४६
८१० जैचंद का बहुत सा दहेज देकर अपने पुरोहित को दिल्ली भेजना। १६५०
८११ पंगराज के पुरोहित का दिल्ली आना और पृथ्वीराज की ओर से उसे सादर डेरा दिया जाना। ,,
८१२ दिल्ली में संयोगिता के ब्याह की तैयारियां। १६५१
८१३ दोनों ओर के पुरोहितों का शास्त्रोच्चार करना। ,,
८१४ विवाह समय के तिथि नक्षत्रादि का वर्णन। ,,
८१५ पंग और पृथ्वीराज दोनो की सुकीर्ति १६५२
८१६ पृथ्वीराज का मृत सामंतों के पुत्रों का अभिषेक करना और जागीरें देना। ,,
८१७ ब्याह होकर दंपति का अंदर महल में जाना और पृथका कुमारी का अपने नेग करना। १६५३
८१८ विवाह के समय संयोगिता का शृंगार और उसकी शोभा वर्णन। १६५४
८१६ पृथ्वीराज का शृंगार होना। १६५५
८२० विवाह समय के सुख सोर। ,,
८२१ सुहाग रात्रि वर्णन। १६५६
८२२ ब्याह हो जाने पर पृथ्वीराज का पुरोहित को एक मास पीछे विदा करना। १६५७
८२३ सुख सौनार की ऋतु से उपमा वर्णन। ,,
८२४ सखिपरिहास और दंपति विलास। १६५८

शुक चरित्र प्रस्ताव

[बासठवां समय]

सुख विलास वर्णन ।

अरिल्ल ॥ उत्तर पष्य अषाढ पविचं । आर्द्रा मंडल मंडि नषिचं ॥
दान भोग फल इह लछि गत्तिय । विलसन राज करै नवनित्तिय॥
छं०॥ १ ॥

पृथ्वीराज की मदान्धता ।

कवित्त ॥ इक जोवन धन मह । मह राजन मद वारुनि ॥
अरु मद देह अरोज । संग नव बनिता तारुनि ॥
अरु बंधन पति साह । पैज कनवज्ज सँपूरिय ॥
एते मद राजनं । दुष दंदह करि दूरिय ॥
आनंद कंद उमगे तनह । संजोगी सर हंस सरि ॥
जानै न राज अस्तम उदय । महि जोवन मानै सु परि ॥छं०॥ २॥

पृथ्वीराज का अंतर महल में सभा करना और संयोगिता को अर्द्ध आसन देना ॥

आर्या ॥ आषाढ़े [1]मासे दुतियानं । राज सभा मंडिय महिलानं ॥
सां इंछिनि दच्छिन पामारी । सील सुद्ध पति व्रत सँचारी ॥
छं० ॥ ३ ॥
मुक्की मा जदि पुत्ति पँगानी । न्याय वट्ट प्राया प्रीयानी ॥
सिंघासन राजन मनमानी । कैलासौ लच्छिय इह [2]दानी ॥
छं० ॥ ४ ॥

(१) प्र. कृ. को.-दिवस । (२) मो.-दामी ।

इक प्रौढह इक्कह मुगधानं । दुहु लच्छन बंधे बंधानं ॥
इंछिनि प्रौढ पविच्च पुंआरी । मुगध संजोगिय पंग कुमारी ॥
छं० ॥ ५ ॥
दुविधि प्रीति राजन प्रति पारी । चतुरत्तन चिंत्यौ बर नारी ॥
म्हे बरनी [1]बरुनि बर संच्यौ । बिनयं बल पंगज [2]पति अंच्यौ ॥
॥छं० ॥ ६॥

मुख्य पटरानी इंछनी के हृदय में ईर्षा उत्पन्न हुई ॥

लिषि नेनं सु चिन्ह विनानं । बसि करि मोहि [3]सु मुष्य सयानं ॥
तिय परिमान तिया परि जानं । इहां अ [4]देस जु है कछु आनं ॥
छं० ॥ ७ ॥
मैं बिनया बिनया बर संच्यौ । कनवज्जनि बसि करि कर पंच्यौ॥
बान पंच धरि काम विनानं । धर धर धुक्कि परी महि आनं ॥
छं० ॥ ८ ॥
दूहा ॥ सूरत [5]खन्नौ धव धवनि । रमनि रमे रति रंग ॥
मम संजोगि आलिंगनह । भ्रमन चित्त अति भ्रंग ॥ छं० ॥ ९ ॥

रानी इंछनी का अपने पालतू सुग्गे से दुःख कहना।

मुरिल्ल ॥ छिन छिन छिन छिन किसलय तन तुट्टी। मन लोट्टन लोट्टन पर [6]मट्टी॥
अब्ब अ गढ़पति सुअ अति [7]मंदुल । भोजन ताहि करावति तंदुल ॥
छं० ॥ १० ॥
चोटक ॥ भषि तंदुल मंजुलयं मुषयं । क्रमयं क्रम कीर कहै सुषयं ॥
तवं इंछिनि इंछिनियं [8]मिलयं । बमयं बम बामनयं अलियं॥
छं० ॥ ११ ॥

(१) ए. कृ. को.-बरुनी। (२) ए. कृ. को. प्रभु। (३) मो.-सम्मुख।
(४) ए. कृ. को.-बरन्नी। (५) ए. कृ. को. महा। (६) मो.-मृदल।
(७) मो. मिलनं-अलिनं।

सगया सग महन पान नयं । घन सार निहारन आननयं ॥
रसना रस रचित दूध चियं । रदनं छदनं पिन पीन पियं ॥
छं० ॥ १२ ॥

कवरी कुसुमं विसरंत नयं । श्रुति कुंडल लाल दुसाजनयं ॥
दुति मुत्तिय नासिकयं सुहयं । सुनि स्वामिनि स्वामि सुहं दुहयं ॥
छं० ॥ १३ ॥

सुग्गे का इंछनी की बातों पर रुष्ट हो जाना।

दूहा ॥ सुष दुष इंछिनि सु दुज । मन मंडिय सुनि कान ॥
मोसे बातें बहुत किय । करौं पवरि चहुआन ॥ छं० ॥ १४ ॥

पुनः सुग्गे का कहना कि तू मुझे एक रात्रि के लिये संयोगिता के शयनागार में पहुंचा दे।

कवित्त ॥ सुक उचरंत सु कौय । इंछि पम्मारि पवित्तिय ॥
जैत अनुजि अंजुलिय । सलप नंदनि अनुरत्तिय ॥
समय अमय भरतार । हार हरनौ उर जंपिय ॥
अमय उमय दुरजनिय । वास विस्तरि 'कर कंपिय ॥
विलसैन विसरि रस प्रिय प्रियनि । बिरह विसरजन भ्रमन करि ॥
हारम्य संजोगिय निसि निगम । महल मोह मंडिपहि धरि ॥
छं० ॥ १५ ॥

सौत बैर से संतप्त इंछनी का संयोगिता से संबंध बढ़ाना।

दूहा ॥ धर चिय कर चिय निसि निगम । जाम दुनिसि गई वित्ति ॥
सुक सुंदरि मंदिरनि मिल । पंजुलि प्रसन प्रतीति ॥ छं० ॥१६॥
पिच घात सों मन मिलै । और बैर मिट जाइ ॥
सौंति बैर अंतर जलनि । दिन प्रति ग्रीषम खाइ ॥ छं० ॥ १७ ॥
मुष मिट्ठी बित्तां करै । मन में देत सराप ॥

(१) ए. कृ. को. करु। (२) ए. कृ. को.- पंगुलि।

बंटै प्रेम सु प्रीय कौ। अंतर दझ्झै आप ॥ छं० ॥ १८ ॥

एक दिन संयोगिता का सब रानियों का न्योता करना।

एक दिवस संजोगि ग्रह। महमानिय सब सौति ॥
आनि सुष्प प्रगटन मछर। अधिक [1]सपतनी होति ॥ छं०॥१९॥
सौति सुहागिलि सुष्प दिषि। लग्गै नैन अँगार ॥
ज्यों ज्यों वह छंदा करै। त्यौं त्यौं करवत धार ॥ छं० ॥ २० ॥
* धन ग्रह बंढन मुत्ति नग। हेम पटंबर सार ॥
पुनि चिय प्रिय बंढन सुरति। लगै अधिक षग धार ॥छं० ॥ २१ ॥

सुग्गे की चातुरी का वर्णन।

लघुनराज ॥ अयं महे मयं जुरी। प्रसाद प्रेम मंजुरी ॥
उछंम पाट पानयं। सगुन्न कीर जानयं ॥ छं० ॥ २२ ॥
सनूर निद्र वासयं। प्रतीति रौति दासयं ॥
करं जु बंद सुंदरी। नरम्म द्रष्टि मंजुरी ॥ छं० ॥ २३ ॥
निगम्म बेद बादयं। बरन्न आदि सादयं ॥
सु चातुरी चितं चढं। पुछंति कीरयं पढं ॥ छं० ॥ २४ ॥
निरम्म रूप निद्रयौ। तिलक्क सोर सद्दयौ ॥
जुवत्ति रौति जानयं। हरम्य तुष्ट मानयं ॥ छं० ॥ २५ ॥

रानी इंछनी का पिंजरे को हाथ में लेकर संयोगिता के महल को जाना।

दूहा ॥ कर धर इंछनि कीर लिय। हीर मुत्ति जुत कंठ ॥
मन मंजुल नंडुल दधहि। प्रेम पुच्छ भ्रम नट्ठ ॥ ॥ छं० ॥ २६ ॥
दुज पंजर बहु भांति रचि। अरु [2]जरीय जर झूल ॥
आडंबर जग रच्चई। भट वेस्या भ्रत भूल ॥ छं० ॥ २७ ॥
मुरिल्ल ॥ मपि मंकुल सावक्कित सद्दिय। [3]ग्रिह ग्रिहस राज मद्रिग बद्दिय ॥
दाहिम्मिय समदं महिलानिय। संजोइय भुवनह संपानिय ॥
छं० ॥ २८ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-सपत्नी। * छन्द २१ मो. प्रति में नहीं है।
(२) ए. कृ. को. नगीन। (३) ए. कृ. को.-"ग्रह ग्रह राज सभा द्रग बद्दिय।

संयोगिता के महल का वर्णन।

वचनिका ॥ क्वचित् शृंगाराय। मुक्ति बंधन विहाराय ॥
नवन दृष्टि निहाराय। रंजनं घनसाराय ॥
मृगमदगंध उछाराय। अलि निवास उभाराय ॥
मृदु मंजरी रस सुराराय। एवं काम विहाराय ॥ छं० ॥ २९ ॥

संयोगिता का सब रानियों को उचित आदर देना।

सुरिल्ल ॥ द्रिग द्रिग मों रंजिय पंगानिय। आमन समरकंद दिय दानिय॥
जर जरौन चवरिय तिर चानिय। काजल कुंकुमयं कृत पानिय॥
छं० ॥ ३० ॥

पृथ्वीराज की दसों रानियों के नाम।

वचनिका ॥ प्रथम पुंडीर जादी। इंद्रावती राज सादी ॥
सुंदरी हमीर जानी। जबूं गिर इंछिनी मानी ॥
कूरम्भी पज्जून जाता। बलिभद्र नाम भ्राता ॥
कंजानी बड़ जन गज्जरी भ्राता। सदलासांमि राता ॥
हंस गमनी हंसावती सुजानी। दिवासी सरूपा सुमानी ॥
दाहिमी रूप रवनी। मत्त मातंग गमनी ॥
आदरं आदि राजा। बीनानं कंठ बाजा ॥ छं० ॥ ३१ ॥

पृथ्वीराज और संयोगिता के प्रेम का प्रभुत्व।

दूहा ॥ न्रप बर चामर सषि सरहि। वपु गुंजहि हर नच्छ ॥
कला केलि दिन दिन चढिय। सुभग सँजोई सिच्छ ॥ छं०॥३२ ॥
सुभ आदर रानिय सुपट। चरित चित्त चहुआन ॥
दुर दिन दाहिम्मिय महिल। किम किन्नौ पायान ॥ छं०॥ ३३ ॥
श्लोक ॥ सगुनं ज्येष्ठ जेष्ठानां। ज्येष्ठ रूपं सरूपिनां ॥
ज्येष्ठं पितु मान राजानां। ज्येष्ठा[1] मान बिलोकनी ॥ छं०॥३४॥

(१) का०- ए.-जेष्ठ।

पृथ्वीराज का रनिवास में जाकर सब रानियों को देने के लिये वस्त्र आभूषण देना।

दूहा ॥ राजन उठि मन्त्रिय महल। गहिलै गुरजन सथ्थ ॥
जु कछु चरित तिहि महिल किय। सुनहु सु बूझन कथ्थ ॥
छं० ॥ ३५ ॥

नग मुत्तिय बंटन बसन। तात संजोइय दत्त ॥
सहस असंघिन लघ्घियौ। गनि को कहै निरत्त ॥ छं० ॥ ३६ ॥

रसावला ॥ छबी छब्बि पट्टं, अनेकं [1]निघट्टं।
मनी मुत्ति बट्टं, नगं नेम तट्टं ॥ छं० ३७ ॥
सु गंधं सु घट्टं.....संजोगि सु ग्रेहीं[2]।
उछंगं सु देहीं.....॥ छं० ॥ ३८ ॥
अलष्यं गनानं, सु कोरी प्रमानं. सची सोभ रागं। द्रुतं देव वागं॥
छं० ॥ ३९ ॥
अनंदं सु लागं, निसा किति जागं। भुअं भानं भागं, धुअं मत्त मागं॥
॥छं०॥४०॥
दिपंतौ सुहागं, [3]अवूरत्त रागं। * * * * ॥ छं० ॥४१ ॥

सब रानियों का परस्पर मिल कर अपनी अपनी विरह वेदना कहना।

दूहा ॥ अनु दिन सषि संकुल विकल। अकल केलि सुनि चंद ॥
बरष एक सषि सुष समझि। परषि प्रीति फुनि मंद ॥ छं०॥४२ ॥
परसप्पर मिलि बत्ति कहि। हम नहिं दिट्ठौ कंत ॥
बरष इक्क हम घम करौ। नह लग्गौ गति अंत ॥ छं० ॥ ४३ ॥
क्रम क्रम तट छंडै सरहि। बर छंडै रति जोर ॥
मति छंडै बिरह तनहा। गति पावस मति मोर ॥ छं० ॥ ४४ ॥

(१) ए. कृ. को.-निहदं। (२) ए. कृ. को.-सुग्रहे। (३) ए. कृ. को.-अनूरत्त।

अरिल्ल ॥ पमइ न सब किसु लच्छिन पिम्महि। दहियन रोस सुधारति (1)नेमहि॥
रमिय न निज निज पति क्रीलाः। बिन इंछिनि सब ग्रेह सुजानं॥
छं० ॥ ४५ ॥

रानी इंछनी का पृथ्वीराज और संयोगिता के प्रेम की परीक्षा करने के लिये संयोगिता को अपना सुआ देना और संयोगिता का उसे प्रसन्नता पूर्व्वक स्वीकार करना।

इंछिनि इंछिय अच्छनि रष्यन। राज संजोइय प्रेम परष्यन ॥
दुज दिय इष्थ प्रजंक संजोइय। निसि गति मोहि कथा सुनि तोइय॥
छं० ॥ ४६ ॥

दूहा ॥ दिय पामारि पविच्च सुक। लिय संजोइय बंदि ॥
पन प्रजंक टट्टन टरति। गति न कहै सुर सहि ॥ छं० ॥ ४७ ॥

संयोगिता का सुग्गे को अपने महल में ले जाना। उसकी शोभा वर्णन।

चंद्रायन ॥ लीय सु दुज्ज संजोइय पत्तिय माल बर।
जहां आभास सुभासहि मनि मानिक्क जर ॥
चिच विचिच विचिच सु चित्तह रंजि रस।
थंभ सुरंग अनूप अलंकृत अंग तस ॥ छं० ॥ ४८ ॥
विधि विधि वास तरंग अनंग उछाह अति।
मधु माधव किय वास सुभासित रंग रति ॥
जर पंजर कल धौतन उत्त विराजि मनि ॥
सुप आये पित ताम विरामित साल बनि ॥ छं० ॥ ४९ ॥
आर्या ॥ मिलि सा सुष्य सयानं। मानि गानि अन्न उत्तिम विधानं ॥
सत्त विहंग विहंगर बानं। मज्जन संजोगि रचि रहि ठानं ॥
छं० ॥ ५० ॥

(१) ए. क्. को.-मेनह।

संयोगिता का स्नान करके नवीन वस्त्र आभूषण पहिनना। संयोगिता के अंगों का सौन्दर्य्य वर्णन।

मोतीदाम ॥ रचे सब मज्जन रज्जन ठान। निरंतर अंतर ग्रेह गुरान ॥
सजे सब भूषन पंगज अंग। कलेवर सानि सनेह सु ठंग ॥
छं० ॥ ५१ ॥

लहस्सिय कज्जल लोइन लोइ। अनंग उभार चल्यौ तन तोई ॥
धरे बर पट्ट कनक्कस रूअ। करे बर पट्ट सु घट्टित दूअ ॥
छं० ॥ ५२ ॥

सरोहिग पट्ट संजोगिय ताम। मनों सजि पट्टर तिज्जय काम ॥
अनेक सुगंध सुबासित बार। सवी सब आनि सु बंधिय धार ॥
छ० ॥ ५३ ॥

सने हरि आनि सुधा रस बास। बहू बिध उस्वत अप्प सु राज ॥
जलप्पय वासन तज्जिय तिन्न। अरोहित पट्ट जिके चित चिन्ह ॥
छं० ॥ ५४ ॥

सुगंध सु धूप अनोपम वास। अनेक सु भांति बिबिद्ध बिलास ॥
कनप्पय बुंद चुवै चर केस। तही भय तम्म सु रप्पहि रेस ॥
छं० ॥ ५५ ॥

उभै कुल उप्पर कच्च चुअंत। मनों मुति नागिनि संभु [1]युअंत ॥
कुचग्गलि केस सुभै सित लग्ग। सुधा सचि कुंभ सरप्प उरग्ग ॥
छं० ॥ ५६ ॥

विराजित भंति अलक्क सु मुप्प। मनों हरि बीहरि सम्मिय रुप्प ॥
तिलक्क सभाल रची रचि रेय। मनों मय ग्रेह दुआरनि देय ॥
छं० ॥ ५७ ॥

घनं भुअ दूअ तिलक्कस रानि। जिते धर अद्धर लग्ग [2]सुतानि ॥
रचे जल कज्जल रेघ सु भेय। मुपौ भय काम जरे जनु एय ॥
छं० ॥ ५८ ॥

(१) ५. को.-पुअंत। (२) मो.-सुजानि।

चलचल नेन सु नासिक रूअ। कुसुमह मधि कलरै [1]अलि दूअ॥
कटाच्छह सेत चखै सति बंक। नयै जनु वीर कचोल कनंक॥
छं० ॥ ५९ ॥

तिलक जरावध बहन बिंदु। सज्यौ रथ सारहि काम सु इंदु॥
जुआ ध्अ कंध धरे कच एन। तटंकह चक्क जिते तिअ तेन॥
छं० ॥ ६० ॥

चिबुकह बिंद असेत सु बानि। प्रसारित कंज अली सिसु ठानि॥
सुनै जुरि आनि सु नग्ग सु घट्ट। जनों सजि काम जिते दुअ पट्ट॥
छं० ॥ ६१ ॥

रोमावलि बान मनंमथ तान। करै कुच ओट द्रिगं म्रिगं ठान॥
रची बर मानिक [3]घुद्रनि रुच। मनोहरि रास सबैं ग्रह सुच॥
छं० ॥ ६२ ॥

बने सब भूषन धारिय अत्ति। झनक्किय नूपुर घूघर गत्ति॥
मनों बजि बाजिच काम स भूप। विजै कज बाज सबै पुर नूप[4]॥
छं० ॥ ६३ ॥

[5]तमो रसमो रस पूरिय मुष्प। बनै सब रास तजै भव दुष्प॥
अनोपम रूप सिंगार वितूल। धरै कवि मत्त रहे गति भूल॥
छं० ॥ ६४ ॥

संयोगिता का सेज पर जाना और सुग्गे को भी चित्रसारी में ले जाना।

चौपाई॥ रचि शृंगार अनोपम रूपं। चातुरता गति मति आनूपं॥
मंगहि दुष्ट मुकंमति गत्ती। बिधि परजंक [6]संजोगि सपत्ती॥
छं० ॥ ६५ ॥

दूहा॥ गय गति इंछनि दीय दुज। लिय मन हरष सु जानि॥
दुह चातुरता दूत है। कहन सुनन परिमान॥ छं० ॥ ६६ ॥

(१) ए.कृ.को-अति। (२) ए.कृ.को-थानि।
(३) ए.कृ.को.-गुद्रनि, युद्रनि। (४) मो.-नूप।
(५) मो.-"तमोर सर्पूरय मोरि समुष्प" (६) ए. कृ. को.-सजोइय।

शैय्या सुखमा ।

विराज ॥ प्रजंकं सु जोई, तलप्पं सु सोई । प्रहूनं समोही, कुंज सुष्प सोही॥
छं० ॥ ६७ ॥

धुआ धूप रुद्धं, उअं सुक्कि गंधं । प्रसंसं प्रहूनं, फलं वासि पूनं॥
छं० ॥ ६८ ॥

चिघा तुष्ट कामं, रति देव धामं । दुजं स्वस्ति मंचं, निरष्यै सुगंचं॥
छं० ॥ ६९ ॥

निसा दीप दानं । रतिं की प्रमानं । * * * ॥छं० ॥ ७०॥

रतिवर्णन।

कवित्त ॥ रम क्रीडत विपरीत । चिंति दंपति दंपति रिति ॥
पंच पंच सुट्ठए । पंच लग्गेति पंच पति ॥
उठिय बाल सज्जिय दुकूल । सुक पंजर सु धाम चित ॥
हर हराट उप्पज्यौ । तजिय अकौट कान छत ॥
धरि थान कथ्थ सुक सौं कहिय । रहि न लज्ज लज्जी विलग ॥
जग पुब्ब भाव भांवरि सु बत । सुवर बाल उट्ठी सु द्रिग ॥
छं० ॥ ७१ ॥

[1]ससि रुन्नौ म्रग [2]बद्धौ । कद्धौ सुक सप्त दीप तन ॥
तम सु देव पुलि पंग । जोति संदीप छिनहि छिन ॥
हुई लज्ज अचलीय । कलिय मुद्धं गति जानं ॥
छिम छिम तमह रंतिपति । परसि पहु पंजलि थानं ॥
न्रप तुष्टि काम कमलारमन । भवन द्रष्टि रुचि रमन मन ॥
जिम जिम सु बिनय बिलसिय प्रबल । तिम तिम सुकबुद्धिय प्रमन॥
छं० ॥ ७२ ॥

दूसरी रात्रि का रति विलास वर्णन ।

तारक ॥ * दुतिया दिन संझ बिजै कुल कम्म । सहचरि प्रौढ़ रमै रति रम्म॥
दुष्यम सुष पिम्म मनोहर रीति । बिलसिय आस भयं भव जीति॥
छं० ॥ ७३ ॥

(१) को.-ससि। (२) को.-बद्धयौ। * मो.-प्रति में नहीं है।

युक्त ॥ आसीनी सज्जानी विग्यानी उद्धानी निरधानी ध्यानी उरधानी॥
वय न्यानी सम्मानी अलसंजु तानी उहित न्यानी सषि आनी॥
पारस संजोइय मुष मुष मोहिय संतोहिय * *
* * * * * * छं० ॥ ७४ ॥

दूहा ॥ संकल अंकुलयं विपय । चय कंकन उन पान ॥
प्रथम रवन रवनिय मिलिय । रति गति राजन थान ॥
छं० ॥ ७५ ॥

सुख सहवास का क्रमशः चाव और आनंद वर्णन ।

चोटक ॥ तन कंपन कुं पुनयं पुनयं । सनयं सनयं सिरयं धुनयं ॥
वलयं चलयं नकयं चकयं । अलि भारन मंजरियं भगयं ॥
छं० ॥ ७६ ॥

प्रियनं प्रियनेति पियूष पियं । धकयं धक छंडिन तोहि अयं ॥
खजनं रजनं भजनं भवनं । चतुरष्ट न तुष्ट रचै रवनं ॥छं०॥७७ ॥
कलिनं अलिनं खलिनं वयनं । सयनं [1]चलिनं चलिनं रचनं ॥
* * * । * * ॥ छं० ॥ ७८ ॥

दूहा ॥ सुनि संचल अंचिल रवनि । तन धर हरि दिढ कम्म ॥
सपि पारस [2]सारस व्रतन । नव कर बंधिलि अरम्भ ॥छं०॥७९ ॥

पारस ॥ नै व्रत मज्ज्या, जोवन पुज्ज्यौ ।
.... छं० ॥ ८० ॥
सैसव साता, रम्मन कांता ॥
विलसिन तांता, सुर [3]तित आंता ॥ छं० ॥ ८१ ॥

दूहा ॥ अग्गिराज संजोगि सौं । मानि चतुरभय चित्त ॥
एकादस पूरे अपँग । पंचम परसु सहित्त ॥ छं० ॥ ८२ ॥

एकम से लगा कर पूर्णिमा पर्य्यंत का रति वर्णन ।

चोटक ॥ इकितं इकितं कितयं कितयं । दह अंगुलि संमुषयं मितयं ॥
अमियं अपि वासन तं हितयं । मनुं आप निषङ्ग पतं चितयं ॥
छं० ॥ ८३ ॥

[१) ए. क. को.-सलिनं । (२) मा.-पारस । (३) ए. क. को.-सुगतिन ।

सुक द्रष्टिहि द्रष्टिनि छोह खजं। दिव दीपक अंचलयं सु भजं ॥
दुतियं दिन केलि कला वरयं। चितयं चिष मंझि समावरयं ॥
छं० ॥ ८४ ॥

उभयं दुति दीहनि चामरनं। दुतितीय दिनं सम तुट्ट रनं ॥
षट षष्टिय खज्जि सु नीर दियं। सत सत्तय पौमिनि प्रेम प्रियं ॥
छं० ॥ ८५ ॥

चवदून दिनं दिनयं दिनयं। निज नोमिय नौरसयं भनयं ॥
दसमी दिसि हृद्दिय प्रीति घनं। दस एकह एक सु एक मनं ॥
छं० ॥ ८६ ॥

रति द्वादस द्वादस देवतियं। दस तीनि सिआर षिलो कलियं ॥
दस चारि चयं सुकयं मुकयं। सुभ पूनिम इंछिनि सो भषयं ॥
छं० ॥ ८७ ॥

रति के अंत में दंपति की प्रफुल्लता और शोभा वर्णन।

कवित्त ॥ देषि वदन रति रहस। बुंद कन [1]स्वेद सुभ्भ वर ॥
चंद किरन मन मथ्थ। इथ्थ कुट्ठे जदु डुक्कर ॥
सु कविचंद वरदाय। कहिय उप्पम श्रुति चालह ॥
मनो मयंक मनमथ्थ। चंद पूज्यौ मुत्ताहय ॥
कर किरनि रहसि रति रंग दुति। प्रफुलि कली कलि सुंदरिय॥
सुक कहै सु किय इंछिनि [2]सुनवि। पै पंगानिय सुंदरिय ॥
छं० ॥ ८८ ॥

दूहा ॥ अप्रापत प्रापति सु पति। कर संजोइय काम ॥
उर आनंदिय अप्प वर। ते चिय पुज्जिय वाम ॥ छं० ॥ ८९ ॥
सुष सुष मंडिग रति रवन। सुभ इंछिनि प्रति प्रात ॥
गुरजन गुर लज्या दवन। विपथ विकंपन गात छं० ॥ ९० ॥

इंच्छनी का सुग्गे से संयोगिता का रतिरास पूछना।

लज्जन लप्पन जन सजन। कहुं सुक संकुल पंथ ॥
अनि रतु तु तन जंपनह। तं पिन पिन तं अथ्थि ॥ छं० ॥ ९१ ॥

(१) ए. क. को.-दीय। (२) मो.-श्रेद। (३) ए. क. को.-सुनहि।

सुग्गे का कहना कि यद्यपि ऐसा करना पाप है परंतु कहता हूं सुन।

इसन गुरज्जन सबकि मुष। दूषन मुगध बधूनि॥
फिरि फिरि फिरि पंजर परनि। मंजरि कलि हरि धनि॥छं०॥९२॥

संयोगिता के मुख की शोभा वर्णन।

अरिल्ल॥ सुनि इंछिनि [1]पंगी जु रवन्नी। धपत राज सुभ लाज मवन्नी॥
आननयं काननयं कन्नी। पूनिम पूरनयं सुक वन्नी॥ छं०॥९३॥

सुग्गे का पृथ्वीराज और संयोगिता का अंतरंग रास वर्णन करना और सखियों साहित इंच्छनी का चित्त दे सुनना।

बाघा॥ छंदम छंदयलं सुक छंदं। मो मंजीरनयं सुर मंदं॥
बर किंकिन पंकित पुक्कारं। हक्कित क्रित्त सुर मुर उच्चारं॥
छं०॥९४॥
विपन पनोकनु मंधरि धीरं। पंडन कल पल करि अति भीरं॥
कच ग्रहि रति रिझन रंग रोरं। पंपुलितं ललितं गति मोरं॥
छं०॥९५॥
काकज पाल नयं सब दंधी। भाष छ उच्चरियं [2]मन मुंधी॥
अम्रतयं म्रतयं भभ राजं। तंदुल मंदुलयं करि साजं॥ छं०॥९६॥
भूषन दूषनयं करि दूरं। उम्मन चुम्मनयं करि पूरं॥
जं जं लोचनयं छिन जूरं। तंतं उच्चरियं मुष मूरं॥ छं०॥९७॥
हं हं हं कुलयं कल लज्जी। चरवर चंच पुटी सुर सज्जी॥
.... छं०॥९८॥
[3]धर धर छत्तिय नच्छित लोलं। हर हर सावकिय हसि बोलं॥
दुंदुन मंदुनयं दुरि दुरियं। परिजय पंक पजंकनि सुरयं॥
छं०॥९९॥

---

(१) प्र. कृ. को. पगिनि। (२) मो.-परि।
(३) मो.-धर धर धर छतियन छिन लोलं।

सरनं मारयनं प्रिय सरयं। तिथि विधि पंच दसी दिन भरयं॥
इहि विधि केलिनि पाइ जियन्नं। इति एकंत पुकारि पियन्नं॥
छं०॥१००॥

कवित्त॥ सुकिय वक्र कटाछय। श्रवन लग्गत श्रोपम थपि॥
शिव कंद्रप द्रग कूप। श्रवन कन्या लेयन धुपि॥
दुति तरंग उल्हसहि। फेरि ता कूपन माहीं॥
तात रंग सागरह। पर्‌यौ मनु बुंद अथाही॥
सुक कहै सुकिय इंछनि सुनहि। धम्म धमेकन छंडि तत॥
तारंग तंत तरुनी सु बर। सुबर बाल भ्रुट्टिय सुमति॥छं०॥१०१॥

दूहा॥ श्रुति राजन इंकित इँसन। कुंचित इंसन नयन्न॥
चुटि चाटंकन भगन किय। नग बिनु रहन मवन्न॥छं०॥१०२॥

सुग्गे के दूतत्व की धृष्टता का कथन।

कुंडलिया॥ जो रस रसनन अनुदिनह। अधर दुराइ दुराइ॥
सो रस दुज कन कन कह्यौ। सषिन सुनाय सुनाइ॥
सषिन सुनाइ सुनाइ। हियै सुचि सुचि लज मन्नह॥
सुथल विथल थल कंपि। नेन नटकीय नहन्नह॥
जियन मरन मिलि मेंन। कह्यौ अद्भुत प्रिय रस॥
ए रस अंतर भेद। प्रीय जानै चिय जौ रस॥छं०॥१०३॥

इंच्छनी का संयोगिता के गूढ अंगों के विषय में पूछना।

दूहा॥ फुनि पुच्छति इंछिनि सु कहि। सौति रूप मनि साल॥
तौ पुच्छौं कैसी कहै। अंतरंग सु बिसाल॥छं०॥१०४॥

सुग्गे का संयोगिता के प्रच्छन्न अंगों का वर्णन करना।

कवित्त॥ किसल थूल सित आसित। थान चव एक एक प्रति॥
पानि पाइ कटि कमल। मथल रंजे सुछिम अति॥
कुच मंडल भुज मूल। नितंब जंघा गुरुअत्तं॥
करज हास गोकन्न। मांग उज्जल सा उत्तं॥

कुच अग्र कच्छ द्रिग मद्धि तिल। स्यामा अँग सब्बं गवन॥
षोडस सिंगार सारूव सजि। सांइ रँजै संजोगि तन॥छं०॥१०५॥

सुग्गे का सम्पूर्ण शृंगार सहित संयोगिता के नख शिख का वर्णन करना।

पद्धरी॥ संजोग जोग जय संत तंठ। आनंद गान जिन करिय कंठ॥
बर रचिय केस विचि सुमन पंति। विच धरे जमन जल गंग कंति॥
छं०॥१०६॥

सिर मद्धि सीस फूलह सुभास। किय जमन अद्ध सुर गिरि प्रकास॥
कुंडली मंडि बंदन सु चंद। कसतूर ढिगह घनसार बिंद॥
छं०॥१०७॥

बर किरन भोम परसत प्रकार। मनों ग्रसित राह ससि सहित तार॥
ओपमा भूअ बेनी विसाल। नागिनी असित ससि सहत बाल॥
छं०॥१०८॥

ओपमा भाव उच्चरि बिदूष। मनुं ससी राह सित पष मजष॥
सैसब्ब मद्धि जोवन प्रवेस। देषियै नैन मग अति सुदेस॥
छं०॥१०९॥

ओपम सु कव्वि बरदाय कीय। ज्यों ग्रेह उंच दिसि जल निदीय॥
सित असित सोभ द्रिग बर बिसाल। कै ससिज प्रगटि तम मद्धि बाल॥
छं०॥११०॥

ओपम्म चंद नासिक बिसाल। मनों अरै लरन रवि राह बाल॥
ओपम्म अधर कवि कहि विद्रुष्य। उग्गरे अद्ध ससि चषि मजष॥
छं०॥१११॥

सोभै सुरंग दंतनि सु पंति। कदलीन केत कै मुत्ति कंति॥
कै तरु सु बिंब लुंबो सुरंग। ससि भूम गंग जल सिँचि अनंग॥
छं०॥११२॥

मधु मधुर बानि कलयंठ रह। आनँग अनेव केवल सु सह॥
तारक्क तेज नग जटि सुरंग। ओपम्म चंद तिन कहि सु अंग॥
छं०॥११३॥

[1]विन्नतह सत्त सब चिच छूर। सेवहित सत ग्रह तप करूर॥
नन धरै अरनि धारे सु तब्ब। तिन मभिझ रहिग ससि कला सब्ब॥
छं० ॥ ११४ ॥

कप्पोल कला कल नगज मीप। दुहुं परी होड़ मयुषं समीप॥
चिवली सुरंग बिच पीति जोति। ओपम्म सुबर तित मभिझ होति॥
छं० ॥ ११५ ॥

उछराह रेह गुरु जोज गम्म। परदष्पि देत ससि देषि इम्म॥
मुतियन भाल कुच विच सुरंग। प्रतिब्यंब फलकि मुष उदिम अंग॥
छं० ॥ ११६ ॥

ससि अंग मौन विद्र मनि चाहि। ससि सहत कढत अहि गंग माँहि॥
[2]जगमगत कंठ सिर कंठ केस। मनु अट्ठ ग्रह चंपि ससि सीस बैसि॥
छं० ॥ ११७ ॥

नग माल लाल कुच पर बिसाल। ओपम्म चंद चिंती सु साल॥
चिंतिय सु बेर बर सिंभ पुब्ब। मनमथ्थ जक मुष फुंकि उच्च॥
छं० ॥ ११८ ॥

निक्करि सु माल उर बली भासि। ओपम्म चंद बरदाय तास॥
बिय पंति सोम रचि अति सुलाह। ससि गहन चढत जनु नृपति राह॥
छं॥ ११९ ॥

सोभै चिमाल कुच तट तरंग। जनु तिथ्थराज मँडलौ अनंग॥
सोभै सुरंग कुंचकी वाम। जनु संबरेह पटकुटी काम॥छं०॥१२०॥
राजीव रोम राजै सु कंति। उत्तरन चढ़त पप्पौल पंति॥
चित लोभ भरिग ग्रहराज अंति। दिठि राह मेर परसरि सु पंति॥
छं० ॥ १२१ ॥

कटि तट्ट छुद्र घंटिय रुरंत। जगमग सु नग्ग ओपम्म कंति॥
कविचंद देषि ओपम्म भासि। ग्रह लगे चंपि जनु सिंघ रासि॥
छं० ॥ १२२ ॥

कटि घाट निट्ठ मुट्ठहि समाय। मनुं ग्रहन धनुष मनमथ्थ राय॥

(१) मो.-विनतह। (२) मो.-जगमत्त।

नितंब गरूअ द्रप्पन कि काम। उदै अस्त भानु जनु पंति वाम॥
छं० ॥ १२३ ॥

बर जंघ रंभ विपरीत तंभ। कै पिंडि दिट्ठ मनमथ्थ संभ॥
ओपम्म वीय कविचंद सादि। मनमथ्थ हथ्थ उत्तरि घरादि॥
छं० ॥ १२४॥

पिंडीय पग्ग ओपम्म थट्ट। कुंकुम कनक्क सम तेज घट्टि॥
नष न्हमल तेज तारक्क मुत्ति। कंद्रप्प द्रप्प दिपि कार धुत्ति॥
छं०॥१२५॥

षोड़स सु सज्जि सजि मुत्ति बाल। घुंघरन नग्ग जटि अति सु माल॥
गह अट्ठ होड़ तजि होड़ हंस। सजि तेज भूलि गति भूलि तंस॥
छं० ॥ १२६ ॥

पृथ्वीराज और संयोगिता के परस्पर प्रेम नेम और चाह का वर्णन ।

दूहा ॥ अह निसि सुधि जानै नहीं। अति गति प्रौढ़ सु रथ्थ॥
गुरु बंधव भ्रित लोक सब। मन विपरीत सु गत्ति॥छं० ॥ १२७ ॥
विजुरन मन चित्तै नहीं। मनो बसंत रिति भ्रंग॥
रस लोभी भ्रम भ्रम भ्रमे। विसराए सब अंग॥ छं० ॥ १२८ ॥

चोटक ॥ सगना जिहि च्यारि परंत गुरं। सोइ चोटक छंद प्रमान घरं॥
पय मत्त बनं बरनं बरनं। निय नाग कहै चष जा अवनं॥
छं० ॥ १२९ ॥

पवनं गति सीत सुगंध सु मंद। लगै भ्रम गीतन मन्न अनंद॥
जगी जगि भ्रंग निभ्रंग निवार। सुनिद्धनि कंठिय कंठ सहार॥
छं० ॥ १३० ॥

कुहक्क कुहु कांम सु धांम धमारि। उड़ै पिय पंथ पराग सवार॥
मुकलित मल्लित हल्लित पोंन। ननं कविचंद रसंमि सु मोंन॥
छं० ॥ १३१ ॥

प्रथम्मह प्रेम दुवं सुष [1]लष्षि। उदै रवि रथ्थ मनों रथ मष्षि॥
मुदै न लिनं अलिनं रहि मंझि। मधु व्रत मत्त बसो जिन संझ॥
छं० ॥ १३२ ॥

रहै गहि संपुट लंपट नारि। सु पंष पराग हरै उन हारि॥
रसं घन घुंटि गुलाल सु थाल। घटी घटि लग्गि फ़ु निप्फ़ु नि लाल॥
छं० ॥ १३३ ॥

बरब्बर बौर सिरी बर बौर। गिरै जिनि लग्गि पिया अलि और॥
मधू रस मिश्रित पाडर डार। बजे रव रंग उपंग सु मार॥
छं० ॥ १३४ ॥

सु वेत सेवंति कुमक्क,म काज। षिजै जिन [2]षीन अहो षगराज॥
सु चंपक चारु वितामन कंध। दरस्सन देवि कियौ दल गंध॥
छं० ॥ १३५ ॥

लगै अंग केतु कि पंग पराग। तुटै लगि कंठक कोइय भाग॥
बन व्रत्त बेलि बिलंबहु बेलि। क्करों दिन केक करन्निय केलि॥
छं० ॥ १३६ ॥

लबक्किय लग्ग लवंग निहार। मनों न सु गंध कुसम्म अपार॥
सहै न बियोग बुरै सिर [3]गात। तजै तिन कंत बसंत प्रमात॥
छं० ॥ १३७ ॥

अबस्सर प्रीति न मुक्कहि प्रान। [4]हँसै तिन नेह न बेन सुजानि॥
इसी विधि कंत मधू मधु नारि। कहै मिसि धार बसंत बिचारि॥
छं० ॥ १३८ ॥

अली लगि कंत किमंध सु गंध। लगे न्रप काम पगानिय बंध॥
रते रति राग पराग बचन्न। रहै टग लग्गिय काइक मन्न॥
छं० ॥ १३९ ॥

सबै षट रित्तुनि राज बसंत। भने भमरावलि नाम सु कंत॥
* * * ॥ * * * छं० ॥ १४० ॥

(१) ए- कृ. को.-लग्गि अग्गि। (२) मो.-हीन। (३) मो.-मात।
(४) मो.-हमै तिन नेनहं बेन सजान।

दंपति के रतिरस की रात्रि के युद्ध से उपमा वर्णन।

कवित्त ॥ लाज गढ्ढलोपंत। वहिय रद सन ढक रज्जं ॥
अधर मधुर दंपतिय। लूटि अब दैव परज्जं ॥
अरस प्ररस भर अंक। षेत परजंक पटक्किय ॥
भूषन टूटि कवच्च। रहै अध बीच लटक्किय ॥
नीसान थान नूपुर बजिय। हाक हास करपत चिहुर ॥
रति वाह समर सुनि इंछिनिय। कीर कहत बत्तिय गहर ॥छं०॥१४१॥ *

कर कंकन मुद्रिका। छुद्र घंटिका कटि तट ॥
वसन जघन पहिराइ। भार वित्तयौ मघन थट ॥
कुच निहार कंचुकिय। भुजनि बंधे बाजू बँध ॥
पग तोड़र नूपुरिय। हरे रुपि अड़िग षेत मधि ॥
संग्राम काम जौतें भरनि। करिय रौझ कनवज्जनिय ॥
तंबोल पान दीनो अधर। कीर कहत सुनि इंछिनिय॥छं०॥१४२॥ *

तम रस तौय सँजोगि। सुमन सहत्तौय बिमराइय ॥
पति कों नव रस भँवर। प्रीति पौमिनि मिरछाइय ॥
हाय भाय विभ्रम कटाच्छ। हंस सरह पग रज्जं ॥
नेह बीर बचननि पराग। लाज कोदिव सुष पज्जं ॥
जन जंत रूप लहरीति गुन। दुत्तिय थह थाहं मयन ॥
सक्कंत प्रेम उद्दित उद्दित। बर फुल्लित बर सुनि बयन ॥छं०॥१४३॥

मदन बयट्ठौ राज। काज मंचौ तिहि अग्गै ॥
हाय भाय विभ्रम कटाच्छ। भेद संचारि विलग्गै ॥
काम कमलनौ बनिय। चक्कनिय निय नित्यं भर ॥
मोह विहि पिभ्भति। प्रज्ज मो मनिय पिंड बर ॥
बीनीति मधुर तिहि लाभ बसि। बसि संजोग माया उरह ॥
जथपन मग्ग गहि अँगम गति। नृप क्रम सह छुट्टिय बरह॥छं०॥१४४॥

* छन्द १४१ और १४२ मा.प्रति में नहीं है।

संयोगिता की समुद्र और पृथ्वीराज की हंस से उपमा वर्णन।

दूहा ॥ दुहु दिसि बढिय सनेह सब । संजोगिय बर कंति ॥
जियन बार बिछुरत तरुनि । हंस जुगल बिछुरंत ॥ छं० ॥ १४५ ॥
रूप समुंद तरंग दुति । नदि सब कौ मलि मानि ॥
गुन मुत्ताहल अप्पि कै । बस किन्नौ चहुआन ॥ छं० ॥ १४६ ॥
गुर चित्त चिय देषंन प्रिय । दुज मिटि दोन न बार ॥
निमुष रूप संजोग कौ । टरै न वार अतार ॥ छं० ॥ १४७ ॥

कुंडलिया ॥ उज्जल कहु संजोगि में । नेह स पुत्ती रूप ॥
कला सहित पूरन्न ससि । अहि अजीज मिलि भूप ॥
अहि [1]अजीज मिलि भूप । तिमर तोरेज पंग दल ॥
राह रूप सुरतान । लग्गि सु कौनी कीव बल ॥
* * * । तप विडंभूत न मुज्जल ॥
चकवा कहु जनंन । सुष अरपति अति उज्जल ॥ छं० ॥ १४८ ॥

दूहा ॥ दो इंछनि पुच्छै सषी । किहि वय किहि मति रूप ॥
किहि लच्छन उनिहार किहि । किम दच्छिन रचि रूप ॥
छं० ॥ १४९ ॥

संयोगिता के अंग प्रत्यंगों पर प्रतीयालंकार कथन।

कवित्त ॥ ससि रुन्नौ म्रग वच्छौ । काम हीनौति मीन रति ॥
पंकज अलि दुम्मनौ । सुमन सुम्मनौ पयन पति ॥
पतँग दीप लग्गिय न । मीन दुम्मनो जीय नम ॥
सुकिय मथिय सुष दिष्ट । चितचिंतति नेह भ्रम ॥
सुष मक्ति हीन सो दान न्रप । हाव भाव विभ्रम अवन ॥
यों रति चरित्त मंगल गवन। सुनि इंछनि इंछनि रमन ॥
॥ छं० ॥ १५० ॥

ऐरापति भय मानि । इद गज्ज वाग प्रहारं ॥
उर सँजोगि रस महि । रच्यौ दबि करत विहारं ॥

(१) मो.-अजीत।

कुच उच्च जनु प्रगट्टि । उकसि कुंभस्थल आइय ॥
तिहि ऊपर स्यामता । दान सोभा दरसाइय ॥
बिधिना निमंत मिट्टत कवन । कीर कहत सुनि इंछनिय ॥
मन मथ्थ समय प्रथिराज कर । करज कोस अंकुस बनिय ॥ छं० ॥ १५१ ॥

दूहा ॥ वै दुष चिय इंछिनि सुनिय । रूप प्रभूतन साहि ॥
चिसल तेज लग्गिय चिभू । संजोगी सुनि ताहि ॥ छं० ॥ १५२ ॥

संयोगिता की स्वाभाविक एवं सहज लुनाई का वर्णन ।

इनुफाल ॥ सुनि इंछिनीय सु जानि । रस करनि घरि सुनि कान ॥
लज देहु विटप सकाम । बर ब्रन्न [1]दिप्पय वाम ॥ छं० ॥ १५३ ॥
मुष कइन कंत सु बत्त । तिय बदन धूम सरत्त ॥
सुनि कहत ओपम ताइ । मुष संभ द्रप्पन झांइ ॥ छं० ॥ १५४ ॥
अति छीन बहल जेम । ससि तेज तरुनि कितेम ॥
सुनि इंछिनि बर जोइ । कर छुट्टि मैला होइ ॥ छं० ॥ १५५ ॥
बर रूप सागर बट्टि । मनमथ्थ मथि करि कट्टि ॥
भरि एक सकन निस्संक । पुन लभ्भ लोइन रंक ॥ छं० ॥ १५६ ॥
ट्रिग सहित देषिय जोइ । तन चिविध ताप न होइ ॥
सुष बढै दिषि तजि दंद । ज्यों जाय सो नँद कंद ॥ छं० ॥ १५७ ॥
चतुरान देषिय रिष्य । सातुक भाव विसिष्य ॥
न्रिप देषि बल्लिय सथ्थ । बर बेन सम लै हथ्थ ॥ छं० ॥ १५८ ॥
गुन चवन सुनन न कोइ । कवि थके ओपम जोइ ॥
ससि सरद कहि हँस लोइ । शिवगंग बहरी होइ ॥ छं० ॥ १५९ ॥
चामीय करतिय जोग । सँजोगितासी जोग ॥
सुनि इंछिनी तजि रीस । लछिने बाल बतीस ॥ छं० ॥ १६० ॥
भय रूप शंकर पीय । होवै न चीय न बीय ॥
ससि पंचमिय घटि बट्टि । चिय देषि यह मुष चट्टि ॥ छं० ॥ १६१ ॥
सम नही इसिमती जोइ । छिन गरुअ छिन लघु होइ ॥
देषंत चीय सुरंग । तब भयौ काम अनंग ॥ छं० ॥ १६२ ॥

(१) मो.-दिप्पय ।

उप्पनौ देषि सु हंस । जौ लियौ बन कौ अंस ॥
सुनि कोकिला कलि राव । भयौ बरन स्याम सुभाव ॥छं०॥१६३॥
ओपम्म दीजै आहि । सो नहीं ओपम चाहि ॥
बस चौय अह निसि प्रीय । जुमि जम्म सम्हौ जोय ॥छं०॥१६४॥
सैसब वासी नारि । जो भइ पुब्ब संसार ॥
मति मान गरुअ समह । रति करी छबि बर रह ॥ छं० ॥ १६५॥
वह नहरि नारि न बीय । किहु नाइ रचि बुधि कीव ॥
सँजोगि मन कढ़ि ओइ । छिन बीय द्रप्पन होइ ॥ छं० ॥ १६६॥
सम्मान प्रीति विपंग । सो पुच्च चिय मन अंग ॥
* * * * ॥ * छं० ॥ १६७ ॥

संयोगिता के नेत्रों का वर्णन

दूहा ॥ बाला संभरि बंलि बयन । मीत मीत रति रंग ॥
राह केत मंगल बिचें । जमुन सरसती गंग ॥ छं० ॥ १६८॥
मर बल अंबर बदन सौ । लोयन सो करपाइ ॥
ईह अपूरब चरि अरक। पंती अट्ठ कलाइ ॥ छं० ॥ १६९ ॥

सुग्गे की उक्त बातें सुन कर इंछिनी रानी का अत्यंत दुखित होना।

मुरिल्ल ॥ कल कल बानी सुक्क प्रगासै । दृह बाल बे कौतिक भासै ॥
जो को दीष दीह तो बालं । जंघी जेम तोहि तो कालं ॥
छं० ॥ १७० ॥

दूहा ॥ जं देही तौ दुप्पई । दुप्पह सुप्प सरीर ॥
दुप्प न अन्नं सुप्पतं । किय सो कंनि धरीर ॥ छं० ॥ १७१ ॥
सतम बरस सज्जिय अरय । दीन छीन सैसव्व ॥
दृह चौय अरु थिर अरथ । देह विधिनि लिषि देव ॥छं०॥१७२॥
राजन सुक पुच्छन विगति । भयो इँछिनि दुप राज ॥
हूं माया रस भुल्लयौ । नहु पायौ गुन काज ॥ छं० ॥ १७३ ॥

सुग्गे का इंछिनी को समझाना कि वृथा दुःख करने से क्या लाभ है ।

गाथा ॥ जीवं वारित रंगं । आयासं नथ्थिवै दुष्प देहं ॥
भाविय भाविय गतनं । किं कारनं दुष्प बालायं ॥ छं०॥१७४ ॥

रानी इंछिनी का कहना कि सौत भाव का दुःख मैं भुला नहीं सकती ।

दूहा ॥ सीत सोत चंचल भयं । भिरिग दोष अनुराग ॥
मनु चित नेन व्याहन चढ़े । दुज काननि पुछि भाग ॥छं०॥१७५॥
जौ पुच्छै सुप दुष्प मौ । तौ मौ एह अंदेस ॥
देषि कहै बर बत्त मैं । किहि गुन रचिय नरेस ॥ छं० ॥ १७६ ॥

सुग्गे का सलाह देना कि यदि तूं यह महल छोड़ दे तो तेरा दुःख आप घट जावे ।

सुनि बाला बर बेन मुहि । मंच मेद बहु मेस ॥
जौ बंछै इंछिनि महल । तौ मेटै अंदेस ॥ छं० ॥ १७७ ॥

इंछिनी का महलों से निकल कर चलने की तैयारी करना ।

कवित्त ॥ सुक पंजर करि हेम । माल मोतीन मंच जरि ॥
धन सुगंध निकुरास । देस संप गुरिग हय धरि ॥
दस हथ्थी इंछनि रसाल । माल बिय माल [1] उनंगी ॥
सेत रत्न बर सुमन । मुक्कि करि गंध सुरंगी ॥
नर मेघ नारि कंचुकि मरस । दुइ दामौ बर भज्जि मन ॥
क्रम चुकंति दुक्कति विकम । बयन दरसि मज्जल नयन॥छं०॥१७८॥

राजा का इंछिनी को रोकना और मान का कारण पूछना ।

अरिल्ल ॥ दस हथ्थी पंजर धर मुक्किय । दिसि संजोगि राज दिठि रुक्किय ॥
नन तुच्छौ न्रप पच्छिल रत्ती । ज्यों सर फुट्टै हंस प्रपत्ती ॥छं०॥१७९॥

(१) ए. कृ. को.-उतंगी ।

सुग्गे का कहना कि इस सब का कारण संयोगिता है।

दूहा ॥ वक्र दिष्ट संजोग की। सुक कहि न्रपहि सुनाय ॥
एक अचिज्ज इंछिनिय। में ग्रह दिट्ठी राइ ॥ छं० ॥ १८० ॥
मुरिल्ल ॥ गरजी तब ढोलक सघनं। बद्दि न घन नेह सयन्नं ॥
दोष आकोचन भोज पलायौ। धगि अंकुरिय बिरह पनायौ ॥
छं० ॥ १८१ ॥

राजा का कहना कि रे पक्षी तु ही ने भेद किया फिर ऊपर से बातें बनाता है।

दूहा ॥ कहै सुक फुनि फ,नि न लग। न्रिप सुनि कही न बत्त ॥
मंच भेद उप्पर करी। करत चित्त अनुरत्त ॥ छं० ॥ १८२ ॥

सुग्गे का इंछिनी से कहना अच्छा तुम दोनों निपट लो।

जब सुक न्रप कानंन लौ। तब पुच्छयौ बर जोइ ॥
जो कछु कह्यौ सु कंत मौं। ज्यौं कह्यौ कंत जो होय॥छं०॥१८३॥

राजा के मनाने पर इंछिनी का मान जाना।

पद्धरी ॥ मति मान रूप लच्छीय मान। जोवन सु पीव आनंद थान ॥
करवत्त दोष कप्पन कुंवारि। वर कंक दिन्न बर सब्ब गारि ॥
छं० ॥ १८४ ॥
धुम्मर बदन्न दुप दमित पाइ। ज्यौं आनंद जाइ कुमलाइ पाइ ॥
मंडित्त मत्त तिहि चाहुआन। मुप रुट्ठि चीय नन रुट्ठि प्रान ॥
छं० ॥ १८५ ॥

राजा पृथ्वीराज को रानी के मान करने का दुःख होना।

चौपाई ॥ न्रप पर दुष्य अलप्प जु किन्नौ। ज्यौं बारि गयौ तरफै रहि मीनौ॥
दुष निद्रा निसि घट्टिय आई। तिहि न्रप सज्ज सपन्नौ पाई ॥
छं० ॥ १८६ ॥

रात्रि के राजा पृथ्वीराज का स्वप्न देखना। स्वप्न वर्णन ।

भावी गति आगम विगति। को मेटन समरथ्थ ॥
राम युधिष्ठिर और नल। तिन मैं परी अवथ्थ ॥ छं० ॥ १८७ ॥
मान करै मति हीन नर। जोवन धन तन रूप ॥
कौंन न छिन ह्वै है गये। बिना ज्ञान रस कूप ॥ छं० ॥ १८८ ॥

इति श्रीकविचंद विरचिते प्रथिराज रासके शुक विलास वर्णनो नाम बासठवों प्रस्ताव संपूर्णम् ॥ ६२ ॥



आषेट चष श्राप नाम प्रस्ताव ।

[तिरसठवां समय]

कन्नौज में समस्त सगे संबंधियों के मारे जाने से पृथ्वीराज का खिन्न मन होकर उद्विग्न होना ।

दूहा ॥ जिन बिन नृप रहते न छिन । ते भट कटि कनवज्ज ॥
उर उप्पर रष्यत रहै । चढै न चित हित रज्ज ॥ छं० ॥ १ ॥

कवित्त ॥ कटे कुटुंब मन मित्त । हितकारी का का भट ॥
कटे सूर सामंत । सजन दुज्जन दहंन ठट ॥
कटे सुसर सारे सहेत । मातुलह पछय फुनि ॥
कटे राज रजपूत । परम रंजन अवनी जन ॥
निसि दिन सुहाइ नह नृपति कौं । उच्च साम छंडै गहै ॥
अंतरति अग्नि उद्वेग अति । सगति सूल साल्यै सहै ॥
छं० ॥ २ ॥

राजा के मन बहलावे के लिये रानी इंछिनी का कहना कि हम लोगों को अहेर का रहस दिखाइए ।

दूहा ॥ तब सारे अंते उरह । कीनौ मनौ विचारि ॥
नृप अग्गै उच्चार किय । धरि मुष अग्ग पंवारि ॥ छं० ॥ ३ ॥
चरन लग्गि युग जारि करि । कह्यौ सुनहु महि इंद ॥
हमहि सिकार दिपाइये । मत्त मृगादि मयंद ॥ छं० ॥ ४ ॥
क्यौं बराह बागुर रूकै । क्यौं बंधहि बर बानि ॥
क्यौं छुट्टै छर डोरि कै । क्यौं जुट्टहि मक स्वान ॥ छं० ॥ ५ ॥

राजा का कहना कि तुम लोग अपनी तय्यारी करो ।

विहसि बयन अलसित नयन । दिय इह उत्तर राय
गोठि करो गोरी सकल । तो आषेट खिलाइ ॥ छं० ॥ ६ ॥

रानियों का राजा की आज्ञा मानना।

कहि परमान प्रनाम करि। रानिय मानिय बात॥
सकल्ल घरच्च संजोगिता। साज सु जोवत प्रात॥ छं० ॥ ७ ॥

राज महल के प्रभात की आभा वर्णन।

पद्धरी॥ हुअ प्रात रात पति अस्त हुअ। उड़गन सु गए तजि बिना धूअ॥
पसरे पवंन तर वरन पान। जोगिंद अग्य पूरै विषान॥छं०॥८॥
झल्लरि झनंक भई देव द्वार। घुल्ले किनंकि ग्रह ग्रह किंवार॥
नर नारि वारि फिरि लाज कीन। झट झट झटक्कि पट कूल लीन॥
छं० ॥ ९ ॥
उठि प्रात गात दुजराज मंजि। पढि बेद मंच हरि देव रंजि॥
गर बंध धंध छुट्टिय सुधेन। लीनौ अछादि गौरै न गेन॥
छं० ॥ १० ॥
नौबति निसान दरबार बज्जि। रिप रोर चोर गय कुहर भज्जि॥
सहनाइ सुरति कीनौ सँचार। गायन लखित गरवर उचार॥
छं० ॥ ११ ॥
पावन प्रसाद घुल्लै पुरान। अविलुत्त धार हर होत न्हान॥
सत सती पाठ पाठी करंत। जप ध्यान इक्क नव ग्रह धरंत॥
छं० ॥ १२ ॥

रानी संयोगी का शैय्या से उठ कर गांठ की तैयारी के लिये आज्ञा देना।

तिहि बार जागि रानी सँजोइ। दिय हुक्क बोलि बड़वार दोय॥
झट लेहु साह झगरू बुलाइ। मागै सु द्रव्य दीजौ गिनाइ॥
छं० ॥ १३ ॥
करियो अनेक पकवान बानि। सक्कै न कोइ जिन जाति जानि॥
सौरँभ सँवारि मिलइ अनेक। घन सार सार मृग मद विवेक॥
छं० ॥ १४ ॥
एलचि लवंग संगति सँवारि। स्यामा समेत सद सुट्ठि डारि॥

रा[illegible]मठी रंग रचि मिरचि देहु । पुनि सकल भांति गोरसहु खेहु ॥
छं० ॥ १५ ॥

दूहा ॥ खेहु सरस सक्कर पहिल । षांडी षंड अनंत ॥
विंजन बहु बनवाइयो । लागे गहर गनंत ॥ छं० ॥ १६ ॥
पानि पंथ पहुंचाइयो । सकल वाटिका बीच ॥
कीजहु बहु आचार सों । दरसन लहै न नीच ॥ छं० ॥ १७ ॥

रनिवास की कतिपय दासियों के नाम ।

चोटक ॥ सुनि सद्द इतैं श्रुति स्वामिन के । नमि तुंग चले गज गामिन के ॥
गुनवेलि सहेलनि बीच बड़ी । रूप कैं चित जाचप कोर गड़ी ॥
छं० ॥ १८ ॥

मदनावति मालति मोहनियं । कमला विमला संग सोहनियं ॥
बुधिलाल खिलावति लाजमती । क्रम माल मराल गवन्न गती ॥
छं० ॥ १९ ॥

पठ मंजरि पंजरि नेन नगी । सुर हंसिय बंसिय पेम पगी ॥
ललिता कलिता चलिता सु सषी । रतनावलि रामगिरी निरषी ॥
छं० ॥ २० ॥

जमनी जिय वल्लभ जोति जगी । कुँज बेला जुही सु हिया अदगी ॥
गुनकेलि गुलाल मनाल भुजा । कच लंबिन कोमल देह सुजा ॥
छं० ॥ २१ ॥

मधु माल तिमार सुमार सुषी । मुगधा मधु बेनि मयंक मुषी ॥
चित चोप चंबेलिय चंप कली । सब सेवति स्वामिनि भांति भली ॥
छं० ॥ २२ ॥

धर माकर मानव नारंगियां । बलभा कलभा सुर सारंगियां ॥
इरदासिय रासिय रूप जितो । निकसी करि बेन प्रमान तितो ॥
छं० ॥ २३ ॥

जितनी सिष स्वामिनि पास लही । तितनी झगरू सहु जाय कही ॥
छं० ॥ २४ ॥

झगरू कंचुकी का सब सामान ले जाकर पानीपत में गोठ का सामान रचना।

चौपाई ॥ झगरू साह साज सब लई। सो पइंचाय नीरपथ दई ॥
बारी सघन वारि बहु जहां। बैठि गोठ विस्तारी तहां॥छं०॥२५॥

अग्नि कोण में रनिवास के डेरे लगना।

कवित्त ॥ सीत भीत आदीत। वास अगनेव कोन किय ॥
बगरि वारि वारिज्ज। जमि रहहि निसानिय ॥
सुष खुट्टहि संजोग। जुवति जे भोन भोन सुष ॥
विरह वियोगिनि अंग। अग्गि ज्वाला असंषि दुष ॥
चक्कीय चक्क चिंता विषम। दिघ्घ रैंन दारुन दई ॥
जानै कि प्रान कै प्रान पति। आनि कानि कासों कहै॥छं०॥२६॥

डेरों पर तैयारी हो चुकने पर पृथ्वीराज का रानियों सहित पानीपत की यात्रा करना।

दूहा ॥ तिन रिति मन म्रगया करिय। चढ़न कहत चहुआन ॥
आगैं आगैं अंगनां। पानीपंथ मिलान ॥ छं० ॥ २७ ॥
एक मास क्रीड़ा अवधि। करिय संभरी नाथ ॥
गोटि साज पहिलें पठय। चल्यौ रागिनी साथ ॥ छं० ॥ २८ ॥
सलष सुतादिक आदि दै। राज लोक लै सथ्थ ॥
पूजि प्रिया सगपन मिलै। चली सु पानीपथ्थ ॥ छं०॥ २९ ॥
लाख ढाख सुषपाल महि। डोला रथ्थ रसाल ॥
सावन सरित उमंडि ज्यौं। चले चली त्यौं बाल ॥ छं० ॥ ३० ॥

संपूर्ण समारोह के साथ रनिवास की यात्रा।

मोतीदाम ॥ किती गज ढालन बाल चढाइ। किती चक डोल अमोल बैठाइ॥
किती सुषपाल विसाल अरोहि। सुषासन आसन धामन सोहि ॥
छं० ॥ ३१ ॥

(१) ए. कु. को.-ब्रज।

कितो रखको पखकि महि बैठि । कितो मकना ढकना तन पैठि ॥
कितो रथ पथ्थ चढी चखि मांन । मनों विवुधी अब रोहि विमांन ॥
छं० ॥ ३२ ॥

चिहूं दिसि भासिय दासिय सथ्थ । गहै सब साज सिँगारन बथ्थ ॥
कितो डिढडा बिड़ बाडिढ पाय । कुंपी इक कंध सुगंधनि ढाय ॥
छं० ॥ ३३ ॥

डरैं उर स्वामिनि ते चल चूक । चलै लहु आतुर सीस सिँदूक ॥
कितो छर छग्गर कंध न लीन । चली इय इंकि लचै कटि छीन ॥
छं० ॥ ३४ ॥

झनझझन [1]झंझ नसह सुनंत । घनं घन घुघ्घर घोर गुनंत ॥
घनं घन कंकन बज्जि सुढार । गनं गन धावत जात न पार ॥
छं० ॥ ३५ ॥

जगंम जगेव जराव वसंन । डगं मन जानि अरुन्न किरन्न ॥
सज्यौ मनु जच्छि प्रजापति जाग । चल्यौ सुर नारिन कौ जनु माग ॥
छं० ॥ ३६ ॥

मनों मघ मंडिय पंडव भूप । जुरे नर नारिन इंद अनूप ॥
चल्यौ जलि घोजन कौ सब संग । नही जिन कै सब अंग अनंग ॥
छं० ॥ ३७ ॥

लखै कर कंचन लट्ठिय कद्दु । उठै झुकि क बहु बोलत तथ्थ ॥
चले तिन संग चढे गुर राम । बड़े बपु वेस बड़े गुनधाम ॥
छं० ॥ ३८ ॥

चले दिन दिघ्घन जे रजपूत । चले चढि साहि सिरोमनि सूत ॥
चले कुल कायथ चौदह जान । भयौ इतमाम[2]करे जग कान ॥
छं० ॥ ३९ ॥

सबैं सित उज्जल अंबर साजि । मनो निकसे कल हंस विराज ॥
* * * * * छं० ॥ ४० ॥

---

(१) गो. झझर । (२) प्र. कु. को. भरे ।

रानियों का शिविर स्थान पर स्थानापन्न होना ।

दूहा ॥ जथ्थ मंडि झगरू करिय। तथ्थ गयौ रनवास ॥
बाग बावरी बहु जहां। कूप ताल [1]पनिवास ॥ छं० ॥ ४१ ॥
बारी में भारी बनिक। रच्च महल सुधराय ॥
मनों सोभ कैलास की। लीनी लोभ [2]छिंडाय ॥ छं० ॥ ४२ ॥
कहै रवनि प्रथिराज को। उर पुर धरि अनुराग ॥
चली विलोकैं चिहुं दिसा। पानि पंथ को बाग ॥ छं० ॥ ४३ ॥

शिविरस्थान के उपवन की शोभा वर्णन।

भुजंगी ॥ बनी सुभ्भ बारे फले [3]दृष्य नेकं। रटै बैठि पंषी सु भाषा अनेकं॥
ठटे अंब नीबू सु जंबूव रोसं। लुटै भूमि [4]जूमी हरे हेरि होसं॥
छं० ॥ ४४ ॥
कक्कूं चंपकं चारु चेची चिनीयं। मनों दीपकं माल मनमथ्थ दीयं॥
कहूं नालि केलं रुवेलं बिदामं। सुकं सारिका टोल बोलंत तामं॥
छं० ॥ ४५ ॥
कहूं [5]पक्क डारं अनारं दरक्की। कहूं सोभ सारं सु तारं तरक्की॥
कहूं कंछुहारी सुपारी निवारी। कहूं केवरा केतकी भौर भारी॥
छं० ॥ ४६ ॥
कहूं लाल जालं गुलालं सु पुंजं। कहूं जाति पंती भरं भोर गुंजं॥
करैं केलि में केलि मोरं चकोरं। कहूं कंकरली करत्रान ओरं॥
छं० ॥ ४७ ॥
फलै फाल से फैलियं लोंग वल्ली। दलै दुष्य साषं सु दाषं प्रचल्ली॥
कहूं चंदनं कंदनं ताप तापं। जहां काम क्रोड़ा गहै बान चापं॥
छं० ॥ ४८ ॥
कहूं पंडुरं डार बैठे परेवा। कहूं बीज पूरी सिंदूरी करेवा॥
कहूं मारनी फेरिकै बारि ल्यावै। कहूं नाग वल्लीन [6]कूं नीर प्यावै॥
छं० ॥ ४९ ॥

---

(१) को.कृ.-पतिवास। (२) ए. कृ. को.-छिनाय। (३) ए. कृ. को.-वृछ।
(४) मो झूमी। (५) मो.-कप्प। (६) मो.-कों।

कहूं घट्ट थट्टं रहट्टं चलावै। कहूं मालनी बाल माला बनावै॥
कहूं ढेंकुरी ढारि कै बारि काढै। कहूं थान उंचो सँचै नीर चाढ़ै॥
छं० ॥ ५० ॥

दूहा ॥ चरस सरस ढरि ढेंकुरी। रहट बहत बसु जाम॥
बापी कूप तडाग तें। भरत चहबचा ताम॥ छं० ॥ ५१ ॥
इहि विधि सब रनिवास नें। सुष पायौ लषि बागु॥
जिन निरषिय तिन कहिय यों। आज हमारो भागु॥ छं० ॥ ५२ ॥
बाग लषौ रनिवास नै। रानी आग्यौ लेय॥
षान पान अरु सेज सुष। सुष मनुहारि करेय॥ छं० ॥ ५३ ॥

रानियों के पानीपत पहुँच जाने पर पृथ्वीराज का कूच करना।

रानी पहुंचीं जानि कै। राजा चल्यौ तुरंग॥
पायन पेलै वाइज्यों। धाय न जाय कुरंग॥ छं० ॥ ५४ ॥
न्रपति चढे सब चढि चले। जे भरबंक बिरद॥
घर ढहु अरि दल दलन। जे कट्टैं गजरद॥ छं० ॥ ५५ ॥

पृथ्वीराज की तैयारी और उनके साथी सामंतों का वर्णन।

हनूफाल ॥ चढि चले अन्नु अ राव। सिर सेत छत्र सुभाव॥
कूरंभ षंभ चमून। जम रूप जानि जमून॥ छं० ॥ ५६ ॥
मुह अग्र मोरिय बीर। न्हिव्वान आनन नीर॥
चढ़ि चले चंपि चंदेल। हय मुक्कि मंडित षेल॥ छं० ॥ ५७ ॥
तिन सिद्धि संभरि वार। जग मभ्भ एक जुझार॥
उर साल साहि सहाब। मुष चंड मंडित काब॥ छं० ॥ ५८ ॥
लिय संग रंगह स्वान। इक इक्क संग दै ज्वानि॥
अनरोम के बहु रोम। इक मात तात न षोम॥ छं० ॥ ५९ ॥
मुष रत्त कोमल कान। द्रिग रत्त गति गुर रान॥
जोगिंद निंद सु भाय। मृग धाय जाइ न पाय॥ छं० ॥ ६० ॥
पटकंत बाघ बराह। झटकंत रोझ अगाह॥
पट जरै जेब जराय। रज संकरन डुरवाय॥ छं० ॥ ६१ ॥
इक संकही आरोह। इक पालिकी प्रति सोह॥

रज सथ्थ चौतो वान। चष ढंकि पथ्थ पयान ॥ छं० ॥ ६२ ॥
जुर रारु बाज सिचान। तुरमती तेज उड़ान ॥
पिठका कुही चष ढंकि। पुट चंच पदनष बंक ॥ छं० ॥ ६३ ॥
फुनि लै फँदैत कुरंग। जिन अंग सोभ सुरंग ॥
हुम संत हुंकत हेरि। दस कोस आवत फेरि ॥ छं० ॥ ६४ ॥

कवित्त ॥ पानी पंथह राय। आय पेखत आषेटक ॥
फिरि पहार उज्जार। देषि बंधा आगेटक ॥
नै विहंड बन हंकि। संकि नव षंड मंड वर ॥
मूर खूर बाधंत। बाज छांडत छंडि वर ॥
बेधहि बराह उच्छाह मन। तानि इक्क सर इक्क खहै ॥
पावै न जान सावज्ज अवर। ऐन सैन मेलै गहै ॥ छं० ॥ ६५ ॥
एक सत्त बाराह। बान बेंधे कि खान गहि ॥
सावज अवरन हंसि। नंस कीनो म्रगादि महि ॥
पंछि पंछ पंछीन। मारि संघारि बहुत किय ॥
सु से म्रगाल को गिनै। छेद छिद्दार भार जिय ॥
बीभच्छ बीर रस रुद्र मचि। करुन कासु पिष्यो न मन ॥
पच्छलै जाम विश्राम कहु। फिर्यो संग सामंत गन ॥ ६६ ॥

डेरों पर पहुंच कर पृथ्वीराज का मर्दन करवा कर यमुनाजी का स्नान करने जाना ।

डेरा नृप आवंत। सुनत रानीन सुष्य दुष्य ॥
सपजि रहे सब अंग। धाय प्रथिराज सुद्धि दिय ॥
सुनि मरदन को हुकम। होत मरदनी बोलि लिय ॥
बय किसोर तन थोर। कछि अच्छरि समान चिय ॥
तिन नेह देह मलि देहु सुष। बरषि मेह शृंगार रस ॥
अंग जमुन उग्ग अस्नान करि। चल्यो भूप सँग विप्र दस ॥
छं० ॥ ६७ ॥

राजा का स्नान कर के गोदान करना ।

कासमीर करि तिलक। आद्ध तर्पन अंजुलि दिय ॥

देव सेव किय विप्र। अप्प दंडोत पंच किय॥
तुलसीदल इर अरपि। मृत्य असिवर कौ मंगिय॥
चरनोदक मुष धार। राज बैठ्यौ बजरंगिय॥
सत धेन शृंग सोवन्न मढि। षुर रज्जत राजंत अति॥
शृंगारि दत्त दिय दुजुन कंह। पठहि पाठ जे बेद प्रति॥छं०॥६८॥

कुमारी कन्याओं और ब्राह्मणों को भोजन करवा कर राजा का सब सामंतों सहित भोजन करने बैठना।

नव कन्या पहिराय। दान नवग्रह कौ कीनौ॥
इच्छा भोजन पूछि। सहस विप्रन कौ दीनौ॥
भोजन किय जिहि ठौर। सब्ब भर तहं पधराए॥
नित्य करम करि इतौ। तहौ अप्पन प्रभु आए॥
पांवरी पाय जूरो सिरह। षीरोदक अरु पीतपट॥
कर माल जपत नँद लाल मुष। गुण विसाल मँग विप्र थट॥
छं०॥६९॥

गो गोमय चोको। विचिच चिचे अति चावक॥
लीक धवल धर हरित। धरी सिगरी भरि पावक॥
कोमल आसन मंडि। मंडि बाजोठ अग्र मुष॥
तहां बैठ्यौ चहुआन। गंग सम्हौ उतर[1]रुष॥
सामंत सूर दष्यिन दिसा। पति मंडे सोभंत अति॥
संमुहो चंद बरदाय बर। सबै दिष्यि यहि दैव भति॥छं०॥७०॥

राजसी भोजन परोसे जाने का वर्णन।

ऊंकार पूरान। कियौ पंडित प्रवीन दुज॥
श्रीरघुनाथ चरिच। गाथ भंजनह वीस भुज॥
नूत नूत पल्लव पधारि। पचावलि मंडिय॥
धोय तोय बिन छिद्र। धरे दोना ढिग[2]ठंडिय॥
कोविद उदार उज्जल दुजन। परुसन कौ आरंभ किय॥

(१) ए. क्र. को.-मुख। (२) ए. क्र. को.-गंठिय।

भरि छाव काव को कवि कहै। प्रथम अनूपम पूप खिय ॥
छं० ॥ ७१ ॥

परस की विधि और जिनसों का वर्णन ।

दूहा ॥ पूप अनूप परूसि पुनि। पुरी सुष्प पुरि मेलि ॥
ललित लूचई लै चलै। [1]ऊँच रती विधि वेलि ॥ छं० ॥ ७२ ॥

पकवान और मिठाई।

मोतीदाम ॥ भरि [2]पीठि भींतर लोन सिलाय। कचौरिय मेलि चले दुजराय ॥
धरे निसराज सिषा जनु फेरि। धरे ढिग वातर भाँवर हेरि ॥
छं० ॥ ७३ ॥
सुते बर घेवर पैसल पागि। लषै चष [3]फेरि गई उर आगि ॥
जलेबनि जेब कहै कवि कौन। महा मधु माठ मिटावन मौन ॥
छं० ॥ ७४ ॥
सुधारस फेन कि फेनिय आय। तिनं पर बूर गरूर मिलाय ॥
करे कर सक्करपारे सुधार। महा दुति मुक्तिय सेव सिधारि ॥
छं० ॥ ७५ ॥
बनी तिय नारि कसार भरित्त। कलपानिय बानिय पागि घिरत्त॥
करी सबनी सब ही महि सार। गिंदोरन और करै सब आर ॥
छं० ॥ ७६ ॥
धरे घुरमा अरु णिंडपजूर। बिही अपरोट निही सुष पूर ॥
नय नसपातिय पैठै पकाय। दछौ रिय दीनिय भूषन गाय ॥
छं० ॥ ७७ ॥
पगे मधु पान पनंगह बेलि। दए गुर सक्कर अमृत ठेलि ॥
बिए पकवान धरे बहु भांति। धरे तिन ऊपर पापर आनि ॥
छं० ॥ ७८ ॥
दूहा ॥ आनि सँधाने सब धरे। मूल फूल फल कंद ॥
मैदा के पैदा करै। सुमन मेलि मकरंद ॥ छं० ॥ ७९ ॥

(१) ए.कृ.को.-उंचरची। (२) ए.कृ.को.-पिरि पिछिय। (३) ए.कृ.को.-परि।

अचार वर्णन ।

वचनिका ॥ करि कंज पुंज धारे । रचि चंपकं सु धारे ॥
बहु बेलि है चँबेली । करनी कनैर केली ॥
बकलं बधूक आने । घनसार डार साने ॥
मचकुंद कुंद कीने । करि केवरे नवीने ॥
कल केतकी किति कौ । पुनि पाडरं जिति कौ ॥
जुहियं जगत जैनी । भ्रम भूलि भोंर सेनी ॥ छं० ॥ ८० ॥

चरबन वर्णन ।

दूहा ॥ भांति भांति चरबन रचै । चना चिरंजी चारु ॥
चोंरा चाहत चेंन [1]चष । मिलि मृग मदु घन सार ॥ छं० ॥ ८१ ॥
करे कसेरू करहरी । गोंद गटा ठट ठानि ॥
पय के बहु घटि कर करे । कर कपूर [2]पुट वानि ॥

तरकारियां और गोरस का वर्णन ।

भुजंगी ॥ धरौ घीर औटलौ करी घीर ताकी । बियौ जंपियै किं सुधादासि जाकी ॥
महा सहि घृत घालि बूरा [3]मिनाई । सबैं सूर सामंत जीमैं सराई ॥
छं० ॥ ८२ ॥
धरे षट्ट घेरे रु घाटे जुड़ाने । बरा बिंद्र राका समं सोधि आने ॥
किते विंजनं बेसनं के बनाये । करम्बा करोंदी कि [4]किंदुरे गनाये ॥
छं० ॥ ८३ ॥
नए नूत नींबू नए नालिकेरं । रची नारिंगी नासपाती सु मेलं ॥
करे अम्रतां कैथ सथ्थं विजोरें । मनों डार तें पारिकें आनि मोरे ॥
छं० ॥ ८४ ॥
करारं कढी मद्धि भौंजी पकौरी । बरी मूंगरी [5]पाखरा षट्ट मोरी ॥
महा मद्धु मैदान की मेलि रोटी । कछू जामिनी नाथ ते जोति मोटी ॥
छं० ॥ ८५ ॥

(१) ए. कृ. को.-सुख। (२) ए. कृ. को.-पुर। (३) ए. कृ. को.-बनाई।
(४) ए. कृ. को.-किंदूरी। (५) ए. कृ. को.-मांषकी।

धरे भोजनं मंडनं आनि माँडै। भिगे सक्करा षीर सों सेन छाँडै॥
रवा केरु आमोइनं देव नाए। घने घृत्त अंगा करी षोभि लाए॥
छं० ॥ ८६ ॥

कढी कट्ट मैदा पिठी मेलि षाटी। बनी बेटई अंगुली षात चाटी॥
रची रोटियं मिश्रियं चैन पायौ। तहां सालनं आन रानी पठायौ॥
छं० ॥ ८७ ॥

लै लै विप्र दौरे सुरंधेर तारू। बने सूरनं बेगनं मेलि मारू॥
करी बानि बिंबा गयौरा परोसे। बरे लै धरे बीरजे बेस रोसे॥
छं० ॥ ८८ ॥

सदन सेमि सँ मांच चंडा चलाए। ढका देत से टेढ साढं किधाए॥
कंकोरा करेला मुरेला सराहे। भली भांति भाड़ानि के ढंड चाहे॥
छं० ॥ ८९ ॥

रवा संफरी छोंकरी लैधरी ते। कली कच्चनारं भलीजे करीते॥
धिरत्तं भरत्तंभ टाकौ सुधारयौ। नहीं बाकलं बिजूरा में पधारयौ॥
छं० ॥ ९० ॥

रच्यौ राइ तौनाय तौ लोंग मिरचें। धना सुंठि लै राइ मिल्लाय सिरचें॥
परोसे नवीनं चनाके निमोना। मिरी मेलि नींबू धरे केलि दोना॥
छं० ॥ ९१ ॥

दूहा॥ अर उर कर परिकर लए। संभरिवै मुष माँगि॥
जनु [1]पटुता करि पांनिसों। षटरस राषे षाँगि॥ छं० ॥ ९२ ॥
सुर सँधानौ सुर जनौ। धर्‍यौ दही सों सांधि॥
फूल फूल फल के जिते। तिते करे कर रांधि॥ छं० ॥ ९३ ॥

दाल भाजी और खटाई भरी पकौड़ियों का वर्णन।

चोटक॥ सरसों सूआ के साक जिते। गिरिराज सुराथिय रांधि तिते॥
बथुआ बड़ साग बवोत बने। बरबाय बिरंग सवाद सने॥
छं० ॥ ९४ ॥

(१) ए. कृ. को.—बहुता।

चनकं अरु पोचिय चूक बन्यो। तहां [1]सोंरिय त्योंरन जाय गन्यो
लगि डाड पयाल पयाल कसौ। मघवा उतकै होय बालक सौ॥
छं० ॥ ९५ ॥
दिव दारू सुदारु है साकन में। सुर बातिय मेंबिय पाकन में॥
नव पल्लव नीव रु नाय धरी। करई गति काढि सु दूरि करी॥
छं॥ ९६ ॥
भरि भाजन भात उलेंड इतौ। भर भीमन जेंइ सकंत जितौ॥
तबही [2]पसवायत भत्त लियं। सुकमार सपेद सुगंध कियं॥
छं० ॥ ९७ ॥
अरुनं बरुनं पुनि पीत रच्यौ। इक इक्क सनंमुष कोच सच्यौ॥
मसुरी मुँग माष चना बिधि चौ। दधि धोय [3]सुधारियदारि सुचौ॥
छं० ॥ ९८ ॥
रसरा मठदै पुट केसर कौ। कछु आननही सनमे सरकौ॥
बर बारि बराबर घृत्त लयौ। [4]सदसुभित सोसुर भीन अयौ॥
छं० ॥ ९९ ॥
कुसलं मुसलं समधार परै। अनषंडित मानहु गंग झरै॥
अपनी बटि बास तिमांस परै। इठिवास सुवासनि आभ भरै॥
छं० ॥ १०० ॥
चकतार अपार सवा दल सै। बनि भूति अभूतिनि वंद गसे॥
सुहितं उर हूल कयं परसं। द्रिगदेषि सरंबक सेत रसं॥
छं० ॥ १०१ ॥
मधु मीन रचे पचि भंति इति। कनवज्जनियं कनवज्ज जिती॥
घन षंड मरग्गल सों सपजे। जिन बासन बानिक धृम्म तजे॥
छं० ॥ १०२ ॥

पछावर की परस का वर्णन।

दूहा॥ जेंइ अघाने जठर पर। जलपिय फेरति पानि॥
तुच्छ षुधा पाछें रही। तब लई पछावरि बानि॥ छं० ॥ १०३ ॥

(१)नो०-स्योंरिय। (२)ए.कृ.को.—पसकायत। (३)ए.कृ.को.—सुधारसदारि। (४)ए.कृ.को.—दस।

मोतीदाम ॥ बढ़ी रुचि देषि कढी कर खेत। बिचैं मिरचैं मिलि खींग समेत ॥
बिकत बिकत सुषट्टिय धार। लई सुष मंगि हुई मनुहार ॥ ॥
छं० ॥ १०४ ॥

करिबां कठ पत्तनि की सब सानि। बंध्यौ दधि आनि धस्यौ ढिग छानि ॥
मट्ठा दधि छानि रवानि बघारि। जहां मिलि जीर घनं घनसार॥
छं० ॥ १०५ ॥

पनं बहु अंबुअ अंबुल मेलि। निचोरिय दारिम दाष सुठेलि ॥
गज पय औटिय धार उझांटि। धरे भरि भाजन मिश्रिय बांटि ॥
छं० ॥ १०६ ॥

मिली मधि जारक षारिक चूक। सवारिय झारि भए भष भूक ॥
भए चिपतें सब सामँत साथ। कहें सुष किति रहे षचि हाथ ॥
छं० ॥ १०७ ॥

सँजोगिय स्वामिनि कौ परधान। पंषा गहि प्रीति करै सनमान ॥
कहै सब सथ्थ भई अम भीर। छमा करियौ चित चूक सधीर ॥
छं० ॥ १०८ ॥

कहै सुष सामँत श्रीसुष राज। भए हम पूरन पावन आज ॥
तहां तप तो इक इथ्थ धुवाय। अरचिय दच्छि करंदम काय ॥
छं० ॥ १०९ ॥

दए सुषवास कपूर भुआइ। मँडे अप अप्प मिलावन जाइ ॥
जिमावत ओसर यों रनिवास। इसी भँति राज रह्यौ इक मास ॥
छं० ॥ ११० ॥

भई चढती चढती मनुहारि। दिन प्रति हास बिनोद [1]उचारि ॥
छं० ॥ १११ ॥

आखरी दिन चलते समय राजा का शिकार करने की तैयारी करना और प्रोहित गुरुराम का मना करना।

दूहा ॥ चल्यौ अंत कै ओस न्रिप। बरज्यौ प्रोहित राम ॥
कुसल भई अरु रस रह्यौ। क्यों न पधारहु धाम ॥ छं० ॥ ११२ ॥

(१ ए. ब. को.-उधारि।

मृगया सदा विगार हुअ । सुनौ कहूं समुझाय ॥
आप लह्यौ रषि राज पै । दसरथ पंडव राय ॥ छं० ॥ ११३ ॥

राजा का शिकार के लिये तैयारी का वर्णन ।

हँसि नरिंद हय पर चढ्यौ । भई निसान धमंक ॥
सत्त समंद कलँमलै । संकर चित्त चमंक ॥ छं० ॥ ११४ ॥

कवित्त ॥ चमकि रुद्र चग घुले । चमकि सिर दुले सेस महि ॥
भरकि उठे दिगपाल । उरकि दिगपाल सोच रहि ॥
हलकि हले गिरि मेर । हलकि कुब्बेर संक हिय ॥
धरकि धरा धहराय । धरकि दिग्गजनि [1]कंप किय ॥
आषेट हेट प्रथिराज कौ । एक मुष्य कवि को कहै ॥
उड़ि धूरि पूरि [2]अंमर भर्‌यौ । रबिन व्योम मंडल वहै ॥
छं० ॥ ११५ ॥

कंषं गंगन चिन्ह । चिन्ह नन घंनं सुझ्झै ॥
नह वह भरि कान । आननन तान सु बुझ्झै ॥
सहस सीरषा पुरुष । सहस द्रिग सहस हथ्थ कौ ॥
दलि तरु चक्रित छिन्न । भिन्नभद्द अन्न अथ्थकौ ॥
हय गय पयाद पायान मय । अकथ कथ्थ कविचंद कहि ॥
डगमगहि पिंड ब्रह्मंड कौ । आज राज प्रथिराज रहि ॥
छं० ॥ ११६ ॥

दूहा ॥ रह्यो नहीं संभरि धनी । चल्यौ चित्त अति चाव ॥
उगमगि पहुमि पयान भर । ज्यों जल रीती नाव ॥
छं० ॥ ११७ ॥

शिकारी सामान, बन की शोभा और बनैले जीव जन्तुओं का वर्णन ।

पद्धरी ॥ चढि चल्यौ चाहु चहुआन भान । सुर नाग नरनि भूल्यौ वसान ॥
धमकी धरन्नि पुरतार भार । वढि संक लंक संसार सार ॥ छं० ॥ ११८ ॥

(१) मो.-चँपि (२) ए. कृ. को. अंतर ।

लिय डोरि डोरि संकरन खान। चढ़ि चले रथ्थ पथ चीतिवान॥
मृगयस्त हस्त हुंकरत मुष्ष। फँद बंध शृँग संग्राम रुष्ष॥
छं० ॥ छं० ॥ ११८ ॥

जुर बाज कुही तुरमती धूत। को अन्य गनै पंची अभूत॥
चहुआन गयौ उद्यान दूरि। गिरवर उतंग बन सघन पूरि॥
छं० ॥ १२० ॥

उज्जार जार सुभझै न मग्ग। भरि सकै कौन भर डक्कि डग्ग॥
सीस 'पसि रस्स सामर सिंहारि। कहुं साल ताल सागोन सार॥
छं० ॥ १२१ ॥

कहुं झीक झुंड झिर झानि झार। कहुं बेलि बेर बेकल अपार॥
कचनारि कोह गिरि नारि आरि। गुरजैन गैन परसंत चारि॥
छं० ॥ १२२ ॥

अनछिद्र छांह सों करिय छोर। कपि कच्छ बेलि कपि त्याग ठौर॥
कूं परित रत्त करलै सरल्ल। षट तीन भार तरु तें तरल्ल॥
छं० ॥ १२३ ॥

फुलित फलित फबि चारु फेर। वसु जाम झाम पसु पंछि घेरि॥
कहुं मृगमयंद मातंग मत्त। सु मले सियाल सूकर भिरत्त॥
छं० ॥ १२४ ॥

कहुं रीछ दुच्छ सोवंत छांह। बंदर लंगूर कंगुरन मांहि॥
फुंकर फनिंद तर को तरन्नि। सब सकै कौन कोविद बरन्न॥
छं० ॥ १२५ ॥

दूहा॥ हरि हरि हरि बन हरित महि। हरन पिष्पयै अंषि॥
सारँग हकि सारँग हने। सारँग बारनि करष्पि॥ छं० ॥ १२६ ॥

शिकारी पलुए जानवरों का कौतुक।

कवित्त॥ आषेटक रमि राज। बाज जुर कुही छंडि कर॥
ऐन सेन बाराह। हनहि बरहकि तकि उर॥

(१) ए. कृ. को. परि।

बागुरी परि उरझंत । रोझ सांमर असंष सुस ॥
और जीव को कहै । उहै भेडलह खाल कस ॥
बन बीच कीच मचि श्रोन बहि । भनिन चंद परिमित लहै ॥
सोमेस नंद आनंद सर । क्रीड कोप[1]जंतुन सहै ॥ छं० ॥ १२७ ॥

जंगली जानवरों की स्वच्छन्दता और उनके शिकार होने का वर्णन ।

रघुनराज ॥ बाराह राह रोकयं । वधिकयं विलोकयं ॥
हस्ति दूब अंकुरं घनंत दट्ठ बंकुरं ॥ छं० ॥ १२८ ॥
धुरं अवनि[2] उप्परं । खलित्त वेलि विप्परं ॥
कली कुसुंम मंजरं । अरुन्न नील पिंजरं ॥ छं० ॥ १२९ ॥
तजंत ते मधुक्करं । करंत मुष्य डुंकरं ।
रोमंच अग्ग उभ्भरं । डरंत देषि सुभ्भरं ॥ छं० ॥ १३० ॥
खचतं भूमि उद्दरं । वरन्न स्याम बद्दरं ।
सपेद दंत कंतयं । सुआनि बग्ग [3]पंतयं ॥ छं० ॥ १३१ ॥
टगट्टगंत नेनयं । तारकजेम रेनयं ।
अहार कंद मूलयं । भयो सुकंध थूलयं ॥ छं० ॥ १३२ ॥
डढाल चीय भूलियं । फिरंत नह कूलयं ।
त्रिमल्ल नंद बौचयं । करंत खोटि कौचयं ॥ छं० ॥ १३३ ॥
सुनंत कूह सेनयं । लग्गयो सुकान दैनयं ।
चमकि चप्प पुल्लयं । इकाल उट्ठि चल्लियं ॥ छं० ॥ १३४ ॥
भिरंत छंडि भज्जयं । निरत्ति दैन रज्जयं ।
प्रपत्तयो धनुद्धरो । सिकार भाल गुद्दरो ॥ छं० ॥ १३५ ॥
हरष्पि नाथ संभरी । ज्यों भोर मेघ डंबरी ।
हलक्कि फौज उप्परी । दिसा दिसान विप्फुरी ॥ छं० ॥ १३६ ॥
पँवार जैत बग्गरो । हते व्यपत्ति अग्गरो ।
विकट्ट आल जंगरो । अठार भार चंगरो ॥ छं० ॥ १३७ ॥

(१) भो.-जंत्रन । (२) भो.-उप्परं । (३) भो. पंतयं ।

गये सुचूकि ढाइरं। बबक्कि उठि नाइरं॥
* * * * * * ॥छं०॥ १३८ ॥

जैतराव का सिंह को मारना।

कवित्त॥ सोर घोर सुनि श्रवन। रवनि रवनीय मंद जगि॥
निडर अंग ऐडाय। बाघमुख पग्गि क्रोध अगि॥
अधर दंत चाटंत। चाटि इथ्थल हुस्यार हुअ॥
पटकि पुंछ मच्छर दहारि। उच्छारि उछंग भुअ॥
पर्‍यौ सुजैत धाराधिपति। अति सरीस पटक्यौ सुधर॥
उठि हक्कि हाक ओझर हन्यौ। गयौ तुट्टि करिवार कर॥छं०॥१३९॥

बलिभद्र का सिंहनी को मारना।

सिंघ सँघार्‍यौ पिष्पि। षिष्पि सिंघन बबकारिय॥
समुप राज प्रथिराज। निरखि आवत ललकारिय॥
मनहु माघ केमास। मेघ कल बायनि बिस्तरि॥
यों कँपै सह काय। हाय मुष उटहि न सस्तर॥
बलिभद्र राय बलिवंड धपि। कर कृपान बाही सु बर॥
उछरंत लंक कटि अद्ध परि। अद्ध आय लग्यौ सु कर॥छं०॥१४०॥

अध लग्यौ कर आय। ताहि जम दट्ठ घाय किय॥
भाल जाल महि हन्यौ। छेदि बेहाल ठेलि दिय॥
घरी च्यार सब सथ्थ। रह्यौ थहराइ लग्गि टग॥
ग्रेह देह अरु नेह। गए भय भूलि मग्ग जग॥
हँसि कहै राज कविचंद सों। ए भर अरि असुपत्ति सिर॥
करतार लज्ज रष्पै कलह। कटे कन्ह से जंग थिर॥ छं०॥ १४१॥

राजा का गत घटना पर सोच करना परंतु कवि का भुलावा देकर उसे शिकार से फिराना।

कहै चंद कवि तथ्थ। राज गत बत्तन सूचहु॥
जुद्ध सु मानुह दिघ्घ।। सोग संतापन पूचहु॥

धरहु मल्ल अग चलहु । पग्ग पब्बय उज्जारहि ॥
बहु बराह बकि राह । दाह बाहं बर मारहि ॥
भुल्लाय बत्त चहुआन कौं । चल्यौ भट्ट सुष अग्ग धरि ॥
न्रम्यौ न मिटै न्रिम्मान कछु । तहां इक्क आइय षबरि ॥ छं० ॥ १४२ ॥

कुछ सामंतों का राजा को एक सिंह की सूचना देना।

सोलंघी संतोष दास । नंदन नारायन ॥
तुच्छ पटे पग दौरि । पवन बिन न्रिपति परायन ॥
आसा लगि धावंत । रहै दासा तन खोयै ॥
रेन दीह जानेन । रहै हिय हुकुम जु कियै ॥
तिन कह्यौ आय प्रथिराज सहुं । सिंघ एक भाल्यौ निकट ॥
निठुर निसंक कंदर मँद्यौ । बीज तेज लोचन बिकट ॥ छं० ॥ १४३ ॥

राजा का सूचना पाकर सिंह की खोज में चल पड़ना।

गाथा ॥ यों सु न्रपति श्रवन्नं । गवनं कीन खीन कोवंडं ॥
कोमल पद संचारं । उच्चारं कोमलं भासं ॥ छं० ॥ १४४ ॥
केभर अग्गं पच्छं । केभर वास दच्छिनं अंगं ॥
दारा ग्रं दुज राजं । ढारं तेन पारियं छेरं ॥ छं० ॥ १४५ ॥

होनहार की प्रभूति वर्णन।

कवित्त ॥ जलधि जनक समि तनौ । और अमृत्त तन तातन ॥
बंधु धनंतर वैद । पोषि रष्यन वपु पातन ॥
लच्छि बहनि बुध बदै । विपागु बल्लभ बहिनेज ॥
भव भूषन किय भाल । कुटम उड़गन गन केज ॥
लग्यौ कलंक घटु जाइ घटि । इक्क निसा पूरन्न रहि ॥
प्राचीन कीन लग्यौ कठिन । सु क्यों मिटै सिरजंत महि ॥
छं० ॥ १४६ ॥

हरि कर धरै पषान । देव निरवंसी रष्यै ॥
बलि दव्वे पाताल । अभय भष पावक भष्यै ॥

(१) ए. कृ. को.-तायन।

ब्रह्मपूज पर हरी। रुद्र कापाल लगायो॥
इंद्र अंग भग भई। सुक्र रषि नेन भगायो॥
सतवती सीय दुष पाइ जिय। रसातास गइ फट्टि भुअ॥
रूप नघुष नागपन भुग्गयो। नमो नमो सिरजंत तुअ॥
छं० १४७॥

बिछुरे नल दमयंति। रहे हरचंद नीच घर॥
नारद नारी भए। आप पायो दसरथ्थ भर॥
राम बसे बनवास। पंडव अनषंड विपति सहि॥
राइ लगे बिन राइ। भयो बिय टूक चंद कहि॥
बपु जरि अनंग दुअ अंग बिन। नरग राज क्रकिला सु दुअ॥
गजमुष गनेस अजमुष दछिन। नमो नमो सिरजंत तुअ॥
छं० ॥ १४८॥

सायर षारत सह्यो। अृंग रिषि सह्यो अृंग सिर॥
पग पंगुर सनि देव। पंग [1]इनमंत संत चिर॥
अच्छि राज की अच्छि। पिंग इक्क भई सर्प षत।
षरमुष रावन राव। अंध कुर रावनं दिषत।
भगवंत भिक्ष कर तन तज्यो। पारथ पुरषारथ गरयो॥
विक्रम नरिंद वायस भष्यो। कासिर वारो निब्बयो॥ छं०॥ १४९॥

सिंह के धोखे से कंदरा में धुआं करवाया जाना।

दूहा॥ कंदर अंदर धूम किय। सिंघ भरम प्रथिराज॥
पुत्र पुरान नहो सुन्यो। अति गति होत अकाज॥ छं०॥ १५०॥

धुआं होने पर कंदरा के अंदर स्थित मुनि को कष्ट होना और उसका घबड़ा कर बाहर आना।

पद्धरी॥ चिन पच कट्ठ लगि उठी झार। गइ गुहा मंझ धसि धूम धार॥
चट पट्ट सद्द सुनियै न कान। फ,ट्टिय सु झाल छुट्टै औसान॥
छं० ॥ १५१॥

(१) मो.-हवंत।

सब जीव जंत भजि सैल तज्जि । धररायं झार पावक गरज्जि ॥
चष श्रवा संकि पारंत चीस । कलमलि मुनिंद मन भई रीस ॥
छं० ॥ १५२ ॥

कोमल सु कमल द्रग श्रवै नीर । रद चंपि अधर कंपत सरीर ॥
जट जूट छूटि उरझंत पाय । भ्रग चरम परम नंष्यौ रिसाय ॥
छं० ॥ १५३ ॥

तमि तोरि डारि दिय अच्छ माल । निकस्यौ रिषीस बेहाल हाल॥
गहि दर्भ हस्त वर नीर लीन । प्रथिराज राज कहुं आप दीन ॥
छं० ॥ १५४ ॥

इम तप्प वप्प साधंत साध । नर सूं विरुद्ध नाहिन अराध ॥
फल पच ग्रास पालंत प्रान । सब संग त्यागि सेवन उद्यान ॥
छं० ॥ १५५ ॥

कहुं रंक राइ जांचहि न जायि । नन जीव जंत आवै सँताय ॥
निर वैर काल काटत कठिन्न । भव सिंधु मध्य तेँ भए भिन्न ॥
छं० ॥ १५६ ॥

नन इच्छ भछ्य वर भोग जोग । कहि चुक इमहि सँतवत लोग॥
करूं भस्म भूम पब्बय समेत । सुषि सरित सिंधु रष्यौ बरेत ॥
छं० ॥ १५७ ॥

ना रषों चिन्ह षठ तीन भार । तब होय चेत संसार सार ॥
.... । .... छं० ॥ १५८ ॥

ऋषि का शाप देने के लिये उद्यत होना ।

कुंडलिया । तब अचेत चेतै सुचित । जब लग्गै सिर मांहि ॥
इह कहि आपन कों भयौ । गही पुरष इक बांह ॥
गही पुरष इक बांह । गेंन ते उतरत तच्छिन ॥
कहै निरा अपराध । साध पीरेंन तम्मि चिन ॥
तमि चिन पचन तोरियै । बिना सँतापै सब्ब ॥
ताहि दंड किन देहु झुकि । जिहि दुष दीनौ तब्ब ॥
छं० ॥ १५९ ॥

कवित्त ॥ सुरहि बच्छ मृगराज । छवा गजराज जथ्थ थल ॥
चिचक हरिन बराह । राह पीवंत दुक्क जल ॥
आष इष्पि चष अग्ग । घात मंजार न मंडै ॥
फन करि पवन भषंत । मोर पंनग नह षंडै ॥
परताप मथ्थ गुरु हथ्थ कौ । नको जीव जीवह भषै ॥
तिहि जियत आज रिषिराज कहि । कंदर बैसंनर धषै ॥
छं० ॥ १६० ॥

ऋषि का चुल्लू में जल लेकर शाप देना कि जिसने मुझे कष्ट पहुंचाया वह शत्रु द्वारा अन्धा किया जाय।

गाथा ॥ इहि रिषि कहि बरबैनं । तजि संसार आपियं रायं ॥
मोद्रिग जिहि दुख दीनं । तास तुम चच्छ कड्ढइं ॥छं०॥१६१॥

कवित्त ॥ कं अंजुलि कुस पकरि । कहै रिषराज सुनहु सब ॥
जिहि मो द्रिग दुष्पए । निरा अपराध आय अब ॥
ता जुग लोचन जोनु । अयनजुग बीतत कड्ढय ॥
मन बयन नहि टरै । विप्र षिझि षिझियों रट्टय ॥
जितिक पीर हम भोगवैं । भूमि लोक अवलोक इहि ॥
सत गुनी विरधता होइ चष । चख्यो चाइ मुनि ईस कहि ॥
छं० ॥ १६२ ॥

ऋषि का शाप सुन कर पृथ्वीराज का भयभीत होना।

सुनिय बयन अवन्न । कंपि प्रथिराज थरथ्थर ॥
जिते सथ्थ सामंत । सूर उर चास धरद्धर ॥
गये बदन कुमिलाय । सकि अति अधर अद्ध उध ॥
बोलत बोल न बनै । [1]सने संताप साप दध ॥
रिषि आप दाप कौ अंग में । को ठिल्लै पल एक लगि ॥
जंगलन जाइ नन जाइ घर । भरि न सरकै भूप डग ॥
छं० ॥ १६३ ॥

(१) ए. कृ. को.-मनें।

कविचंद का ऋषि के पैरो पर गिर कर क्षमा मांगना ।

तबहि चंद कवि दौरि । [1]विप्र पद रह्यौ विप्र गहि ॥
छमि स्वामी अपराध । साध मुनि फुनि उद्धार कहि ॥
तुम सु षंड ब्रह्मंड । षंड नव तुम तप चल्लहि ॥
तुम भ्रंमन जीमूत । बरषि जीवन प्रति पल्लहि ॥
केहरि भरंम हम धूम किय । पायक बसिइय देव हुअ ॥
सँकुचि नरिंद कंप्प डरपि । बरपि इथ्थ सिर सोम सुअ ॥

छं० ॥ १६४ ॥

कविचंद का ऋषि से कहना कि यदि किसी से भूल में अपराध हो जाय तो माहात्मा लोग सहसा शाप नहीं देते ।

पिय व्रत ध्रुव के वंस । भूप जयवंत सिकारं ॥
मूल मंडि प्रथि रोकि । बैठि दुरि जाल कटारं ॥
मुह अग्गै इक रिष्य । निकसि प्रावरि मृग छालं ॥
भ्रम कुरंग इनि तक्कि । बान लगि उच्चर दुसालं ॥
कामंति जोग बल रष्यि तन । यप्पन मन तिन षिमा किय ॥
कविचंद कहत रिषि राज सुनि । पुनि कुपि आपन नृपति दिय ॥

छं० ॥ १६५ ॥

कुंडलिया ॥ करि सनमान न सकिय दुज । सिव षिझि चक्र चलाय ॥
सिर लग्गं घुप्परि उछटि । जानु चिहुंटिय जाय ॥
जानु चिहुंटिय जाय । हाथ आकर्षंत छुट्टिन ॥
तीन कोडि इज्जार सठि । तीरथ करि अट्टन ॥
न्हावंत सरोवर दछिन महि । पातक पुट्टि विछुट्टि गय ॥
तीरथ कपाल मोचन तहां । नाम परठि परसन्न हुअ ॥

छं० ॥ १६६ ॥

(१) ५. कृ. को.-विप्र प्रदच्छि प्रस्यौ गहि "

कवि का कहना कि हम स्वारथी और आप परमार्थी जीव हैं सो कृपा कर शाप के उद्धार का उपाय बतलाइए।

कवित्त ॥ तुम जप तप पर हेत। देत वपु रिषि दधीच परि ॥
तुम युति श्रुति कहि सकै। तुम्ह पद चिन्ह धरै हरि ॥
हम स्वारथ लगि फिरहिं। इष्ट स्वारथ [1]आराधन ॥
हम संसारी जीव। हम सु अपराधह साधन ॥
नन सरन आन तुम सरन तजि। रष्पि सरन प्रथुराज हथु ॥
कट्टै सराप जा पुन्य करि। सो बताउ बरदान तिथु ॥ छं० ॥१६७॥

ऋषि का कवि से नाम ग्राम पूछना और कवि का अपना और राजा का परिचय देना।

[2]चंद बदन्न मुन्निंद। कहै तुम नाम ठाम कहु ॥
तो मुष सबद रसाल। सुनत सुष होय हियै बहु ॥
तबहि भट्ट भाषंत। स्वामि मो नाम चंद कवि ॥
वह नरिंद प्रथिराज। लज्ज भरि रह्यौ देव दवि ॥
अब ह्वै कृपाल प्रभु उद्धरहु। कछुक देऊ बरदान फिरि ॥
अप्पौ नरिंद फिरि उद्धरहु। जिहि पारंगत[3] होहि तिरि ॥
छं० ॥ १६८ ॥

ऋषि का संकुचित होकर राजा का प्रबोध करना और कहना कि शहाबुद्दीन तेरे हाथ से मारा जायगा।

चौपाई ॥ हौं बालक दुरवासा तनौ। सक्ति बात सब तोसौं भनौं ॥
इह न्रप तोहि दियौ बरदान। तेरे कर मरिहैं सुलतान ॥
छं० ॥ १६९ ॥

यों कहि रिषि अंतर सकुचान। मुह अग्गै न्रप मुष कुम्हिलान ॥

---

(१) ए. कृ. को.-आधारन। (२) को.-चंद बदन्न सुन्निंदं। मो.-चंद वचन्न मुनिंद।
(३) ए. कृ. को.-होत।

देपि दया उर भई मुनिंद। बोल्यौ रिजु दुज आउ नरिंद॥
छं० ॥ १७० ॥

पुनः ऋषि बचन कि कवि राजा और शाह एक मुहूर्त में मरेंगे।

दूहा ॥ नृप चहुआन रु चंद कवि। अरु गोरी सुलतान॥
इक महूरत में मरैं। इह हम दिय बरदान ॥ छं० ॥ १७१ ॥

ऋषि के बचन सुन कर पृथ्वीराज का प्रसन्न होना।

आनंद्यौ प्रथिराज सुनि। निज मन करै विचार॥
देहन दनु देवन रहै। साह सहित सुत सार ॥ छं० ॥ १७२ ॥

पृथ्वीराज का अंतरप्रबोध ज्ञान।

कवित्त ॥ देह न देवनि रहै। रहै नह देव दान बनि॥
देह न मुनि पैं रहै। देंह नह रहै मान बनि॥
देह न नागन रहै। देह नह रहै नगन गन॥
देह न जच्छन रहै। देह नह रहै पुन्य जन॥
रहि है न देह गंधब्ब बर। गुझिझक सिद्ध अबद्धि बस॥
मन मझझ कहै चहुआन चिरु। रहै लैन हारे सु जस॥
छं० ॥ १७३ ॥

पृथ्वीराज का ऋषि के पैरों पड़ना और ऋषि का राजा का सिर स्पर्श करना।

दूहा ॥ यों विचारि प्रथिराज उर। लग्यौ रिष्पि कै पाय॥
मन में सकुचि [1]मुनिंद कर। नृप शिर लयौ उचाय ॥छं०॥१७४॥

कविचन्द और मुनि का प्रश्नोत्तर।

(कवि वचन)

तब मुनिंद हौं चंद कवि। पूछत इह अंदेह॥
सकल कुटंबी लोक में। कोन सु सांचो नेह ॥ १७५ ॥

(१) मो. नरिंद।

मुनि वचन।

पूरन सकल विलास रस। सरस पुंच फल दान॥
अंत होइ [1]सहगामिनी। नेह नारि को मानि॥ १७६॥

कवि वचन।

गाथा॥ किं तन त्रिभुवन सारं। किं तन मध्य सार रिष ईसं॥
किं पुनर पिता मभ्भं। [2]सारं तत्त उत्तरं [3]देहुं॥ छं०॥ १७७॥

मुनि वचन।

नर तन नर पुरसारं। नर तन मद्धि सार तप सीयं॥
सहि देही मद्धि सारं। बाचं इक बुध [4]बद्धाई॥ छं०॥ १७८॥

कवि वचन।

को दुज धरम कथेयं। को नृप धरम परम संसारं॥
किं बनिकं धन धरमं। किं धरमं क्षुद्र सहायं॥ छं०॥ १७९॥

मुनि वचन।

श्रुति पठनं दुज धरमं। भू भुज धर्म्म नित्त निस्तेयं॥
दया सुधर्म्म बनिक्कं। सेवा श्रम सुद्र सहाइ॥ छं०॥ १८०॥

कवि वचन।

दूहा॥ कोन नगन अंबर छतें। को ढंको बिन चीर॥
को हारै अंधौ फिरै। को जीते तजि तीर॥ छं०॥ १८१॥

मुनि वचन।

जस हीनौ नागौ गिनहु। ढंक्यौ जग जसवान॥
लंपट हारै लोह छन। चिय जीतै बिन बान॥ छं०॥ १८२॥

कवि वचन।

राजरिद्धि [5]वाधंत क्यों। किहि मग राज बिलाय॥
[6]भूषेउ नृप छंडै कहा। कहा भूष मं षाय॥ छं०॥ १८३॥

---

(१) मो.-सहचारिनी। (२) मो.-नारं। (३) ए. कृ. को.-देहि।
(४) मो.-बरदाई। (५) ए.कृ.को.-मेटे कवन। (६) ए. कृ. को.-भूषौ।

मुनि वचन।

रिषि पूजा लच्छी बढ़ै। रिषि अपमान विलाय॥
रिषि विभूति भूषै तजै। अनि वित भूषै धाइ॥ छं० ॥ १८४ ॥

कवि वचन।

किंहि मग कंटक विकट है। को मग सरल सुभाइ॥
किन मग चलियै रन दिन। किहि मग परै न पाई॥
छं० ॥ १८५ ॥

मुनि वचन।

हरि विमुषें मग कंटकी। हरि मग सरल सुभाइ॥
हरि मारग निरभै सदा। अनि मग धोचौ धाइ॥ छं० ॥ १८६ ॥

कवि वचन।

को मैलौ पट ऊजलौ। को उज्जल पट मैल॥
कौ भूल्यौ मारग लगै। को भूल्यौ ही गैल॥ छं० ॥ १८७ ॥

मुनि वचन।

मन मैलौ मैलो वहै। मन उज्जल सु पवित्त॥
हरि विमुषे भूले फिरै। भूलि न हरि जिन चित्त॥ छं० ॥ १८८ ॥

कवि वचन।

भुगति मुगति किन निकट है। कातें दूरि दिषाइ॥
किन आवध जग जिति यहि। किन हारत जगजाइ॥छं०॥१८९॥

मुनि वचन।

समदरसी तें निकट है। भुगति मुगति भरपूर।
विषम दरस वा रन तें। सदा सरबदा दूरि॥ छं० ॥ १९० ॥
पर योमिनि परसै नहीं। ते जीते जग बीच॥
परतिय तकत रैन दिन। ते हारे जग नीच॥ छं० ॥ १९१ ॥

सुजस वान जग में जिये। कुजसी मृतक समान ॥
दाता जागै रैन दिन। सोवै सूम अजान ॥ छं० ॥ १९२ ॥

कवि वचन।

को वैरागी ग्रेहही। को रागी वनवास ॥
को लूटै परलच्छि कों। काते लच्छि उदास ॥ छं० ॥ १९३ ॥

मुनि वचन।

निरलोभी वैराग ग्रह। लोभी वनहूं राग।
पटुभाषी परवत भषै। कटुभाषी तिय भाग ॥ छं० ॥ १९४ ॥

कवि वचन।

किहि मुनि कोन अराधि है। विनही ओसर देषि ॥
तुम वचननि सुष पाइयै। तुम दरसन सु विसेष ॥ छं० ॥ १९५ ॥

मुनि वचन।

रूप कार कवि वेद वर। मरमी असिधर होइ ॥
वंदी जन धनवंत जड़। ए आराधी लोइ ॥ छं० ॥ १९६ ॥

कविचंद और सब साथियों सहित राजा का डेरों को वापिस चलना।

इतनी सीष रिषीस की। सुनि पग वंदे चंद ॥
सम नरिंद असवार ह्वै। चले दले आनंद ॥ छं० ॥ १९७ ॥

सेन सुरन सहनाइ के। नहि निसान धुंकार ॥
चोधिन चमक चिराक की। नह वंदी हुंकार ॥ छं० ॥ १९८ ॥

बिन बेरां डेरां गयौ। भूपति भयौ उदास ॥
मरन हान सें मग्गई। सुनिय सकल रनिवास ॥ छं० ॥ १९९ ॥

डेरां लगै डरावना। रह्यौ कटक सब मौन ॥
नर नारी नारी नरें। मनो प्रान किय गोन ॥ छं० ॥ २०० ॥

उक्त शाप का संवाद पाकर रानी संयोगिता का दुःख करना।

चित्त चिंति संयोगिता। कोन कियौ मैं पाप॥
भोग समें संयोग में। कंतह भयौ सराप॥ छं० ॥ २०१ ॥

कवित्त ॥ कै मैं कट्टी [1]जाय। गाय चरती हकारी॥
कै कांसौ पग छियौ। धूम मैं नागिनि मारी॥
कै न्योति विप्र परहर्‌यौ। कह्यौ नन बैन सासु कौ॥
तेल लोंन वर हेम। चोर घर धर्‌यौ कासु को॥
कीनी न कानि कै जेठ की। कै बोलत ज्वाब न दयौ॥
बुल्ल्यौ सराप रिपि कंत कौं। सती हारु कें इर लयौ॥
छं० ॥ २०२ ॥

डेरों से चल कर दिल्ली आना और ब्राह्मण को दान देकर महलों में प्रवेश करना।

दूहा ॥ दान दयौ रनिवास नें। अरु दिय दान नरेस॥
अयन उभय में नयन डर। कियनिय महल प्रवेस॥छं०॥२०३॥
गैर महल राजन भयौ। सहित संजोइय वाम॥
पोरि न रष्यो पोरिया। जे इतबारी धाम॥छं०॥ २०४ ॥

इति श्रीं कविचंद विरचिते प्रथिराज रासके राजा आषेट चष श्राप नाम त्रिसठवों प्रस्ताव संपूर्णम् ॥६३॥



(१] मो.-नाय या माय।

धीरपुंडीरनाम प्रस्ताव ॥

[चौसठवां समय ।]

संयोगिता व्याह के ढाई वर्ष बाद राजा पृथ्वीराज का अपनी सामंत मंडली के बल की परीक्षा करने की इच्छा करना ।

दूहा ॥ सुष विलास संजोगि सम । विलसत नव नव नित्त ॥
इक दिन मन में उप्पनी । ऐ ऐ वित्त कवित्त ॥ छं० ॥ १ ॥

कवित्त ॥ मास तीस दिन पंच । महिल मंद्योज राजबर ॥
जुद्ध घटै सामंत । बैर सु बिहीन सँबर पति ॥
सुभर ह्वर सामंत । उरह भुज पनबर जान्यो ॥
तीन मास तिथ दिननि । तिनहि संसार सु मानौ ॥
तन तुंग तेझ वावन्न मन । तन तिहित्त उद्धी न गिन ॥
कैमास बिना आमंत घटि । हुं जानत आभंग इन ॥ छं० ॥ २ ॥

पृथ्वीराज का कन्नौज से भागकर आने पर पछतावा करना ।

दूहा ॥ जुध अनेक सामंत करि । नहुं भाग्गौ कहुं ठौर ॥
इम भज्जन कनवज्ज मति । अब दिष्यौ भर और ॥ छं० ॥ ३ ॥
कबही पिट्ठि न मे दई । अब लग्गी इह षौरि ॥
करौं परीछा ह्वर भर । जित्तौ असुर बहोरि ॥ छं० ॥ ४ ॥

बलिभद्रराय का राजा से कहना कि सामंतों की परीक्षा के लिये जैतखंभ बनवाया जाय ।

कवित्त ॥ तब कहै राव बलिभद्र । सत्त सामंत अभंगम ॥
इन बल घटै न राज । मंत घट्टै बर आगम ॥

एक सुवर सुर अंत । तीर बाहै बल मुक्कै ।
पंच सबद संभरै । मद्द गजराजह चुक्कै ॥
सामंत संगि प्रथिराज सुनि । जैत षंभ बर फोरियै ॥
पारष्पि देषि चल वीर नृप । जोय संदेह न जोरियै ॥छं०॥५॥

निगमबोध (तीर्थ) स्थान पर जैतखंभ का बनवाया जाना निश्चय होना ।

दूहा ॥ सुनिय मंच प्रथिराज बर । मनि परधान सुमान ॥
जैत षंभ मंडन सु मति । निगम बोध बर थान ॥ छं० ॥ ६ ॥
मुरिल्ल ॥ जिन दिन बल सामंत सु घट्टै। जानि मन्नि प्रथिराज सु थट्टै ॥
बाल वृद्ध जोवन बलकाजं । जैत षंभ चिंत्यौ प्रथिराजं ॥ छं० ॥७॥

श्रावण मास वर्णन ।

कवित्त ॥ श्रावन भावन भवन । रवन रवनी मिलि राजहि ॥
सविता जेम समुद्द । धरनि धारा हर साजहि ॥
पच्छिम पवन प्रसारि । धार जल हर धर हरयौ ॥
षाल नाल भरि ताल । भरत जलनिधि जल भरयौ ॥
परि मोर सोर उठि चोर जिय । जीवन जाचक मौल गन ॥
नर नारि चतुर वर चित्त कों । हरियालो सावन हरन ॥छं०॥८॥

नवदुर्गा में सामंतों के पूजा पाठ और उनके उत्साह का वर्णन ।

ग्यारह से बावना । मास आसोज विपष्पिय ॥
नव दुर्गा नव दीय । नवल सामंत न रष्पिय ॥
नव सत्त नव दीह । महिष जोगिनि झिल्लारहि ॥
हवन मंच दुज पढहि । पूजि दुर्गा जग्गारहि ॥
उच्छह उतंग तिहि राइ पर । जुरन तेग बंधहि नृपति ॥
संपदा चिति चहुआन की । प्रथीराज तेजह तपति ॥छं० ॥ ९ ॥

पृथ्वीराज का सब सामंतों को जैत खंभ के निर्माण और अपनी आज्ञा की सूचना देना।

तट्टह अट्टह अट्ट। अठै अगदीह सु मंडिय॥
अट्ठ अट्ठ प्रमान। सहर सिंगारि सिकंडिय॥
आइट्ठं सै दून। राज अग्या भर मंडिय॥
जैत षंभ जैतान। जोर जुद्धा जो पंडिय॥
आनंद तेज अग्या सु भर। भूपर भूप भुअप्पतिय॥
मानिक राइ कुल उद्धरन। प्रथीराज छचहपतिय॥ छं०॥ १०॥

पृथ्वीराज का जैत खंभ बनवाए जाने की आज्ञा देना।

एक समैं प्रथिराज। बत्त जंपिय भर सारनि॥
अष्ट धात करि षंभ। सिंगि कट्टै बल पारन॥
तिहि समान नहि बीर। विजय दसमी इह किज्जै॥
अप्प अप्प बल तोकि। इष्टनिय जाप जपिज्जै॥
सुनि सूर सजल आनंद मन। पुनित महल राजन उठ्यौ॥
सुनि धरि आइ जालंध दर। प्रसन करन कारन इठ्यौ॥
छं०॥ ११॥

चंद पुंडीर के पुत्र धीर पुंडीर का जालंधरी देवी की उपासना करना।

सगति भोग संसार। सगति कर जोग जुगति जग॥
सगति मुगति बर दैन। सगति आधार नाग नग॥
सगति महा सुख करन। सगति बिन सुष्य न पावै॥
सगति राज निज काज। सगति नर सुर जय लावै॥
इह जानि धीर मन ध्यान धरि। सगति उपास बिचार वर॥
आनंद कंद नृप चंद सुअ। धीर जाप लीनौ सुधर॥ छं०॥१२॥
सुभ असोज रवि मूल। सिद्धि जोगह सुष कारिय॥
दुर्ग साहि थापनो। धीर आराधि बिचारिय॥

धन सुलगन मुष गरुअ। धीर जालपा उपासै ॥
ग्रह सुथान मति मान। कनक दुति षोड़स भासै ॥
एकंग मंत सद्ध सुमन। भूमि सयन सुद्धह [1]वसन ॥
गो दुद्ध हार बर इक्कलै। व्रत उचार बोलन रसन ॥छं०॥१३॥

पूजन विधि, देवी का प्रसन्न होना और धीर पुंडीर का वर मांगना।

पद्धरी ॥ सहि धाम छाय वासं सुसुद्ध। बासना उग्ग कर पूर उद्ध ॥
अन्यन प्रवेस तिन ग्रह पवित्त। कारज्ज कज्ज हैं आइ मित्त ॥
॥ छं० ॥ १४ ॥
आसनह हेम चयकोन कुंड। कर सेत माल जपि उंच तुंड ॥
परिधान वस्त्र सारत्त रज्जि। अंबरह सेत उप्पर सु सज्जि ॥
छं० ॥ १५ ॥
आसन्न एज अग्गैं अनूप। स रजित तथ्थ जालंध रूप ॥
तस अग्ग संग सेरह बतीस। धज धोम षग्ग अग्गै सु कीस ॥
छं० ॥ १६ ॥
सुध्यान जाप दस सहस होम। धरि ध्यान होम जज्जिय सु कोम ॥
धरि हीय ध्यान जालंध देवि। मन वच्च क्रम्म चिंतिय सु तेव ॥
छं० ॥ १७ ॥
चय पष्प वीच भय निसा जाम। आदिष्ट देवि बुल्लिय सु ताम ॥
मँगि मंगि मंगि नर बीर सत्ति। इछंत काज जो मुभ्भ भत्ति ॥
छं० ॥ १८ ॥
बुल्ल्यौ सु बीर जालंध माइ। सु प्रसन्न देवि जो मुभ्भ भाइ ॥
बर एक सुद्ध अप्पहु सु अम्ह। फुट्टै व संग मो जैत यंभ ॥
छं० ॥ १९ ॥
जंपै सु देवि रे धीर धीर। फुट्टै व जु यंभ मो सक्ति वीर ॥
राजन सु तोहि अप्पै पसाव। ग्रामह सु थान आदर सु भाव ॥
छं० ॥ २० ॥

(१) ए. कृ.-सरन।

आये सु जात मुझझाइ सु रंभ । फुट्टै सु संग तो जैत पंभ ॥
चिंतै सु चिंत मुझ जहां चित्त । जइं जहां संकट तो पास सत्त ॥
छं० ॥ २१ ॥

जंपै सु धीर जालंध मात । फुट्टै सु पंभ आंउ सु जात ॥
फुट्टै जु संग मो सकति तिष्य । भुंजों सु अन्न तो दरस दिष्यि॥
छं० ॥ २२ ॥

बरदान दियौ देवी सु धीर । नीसान प्रान बज्जै सु भीर ॥
संमरें धीर देवी सवइ । छुट्टै सु दुष्य नर वै मरइ ॥ छं०॥ २३ ॥

देवी का बरदान ।

कवित्त ॥ हेम दंडि सिर मंडि । मंच द्रिग आन मिलाइय ॥
धूप दीप साषा सु गंध । जंच अरु ध्यान जु पाइय ॥
नारिकेल फल सुफल । महिष पारंभ पंच बिय ॥
बिनै बिद्वि सारंत । करिय पूजा अनंद जिय ॥
बर धीर मिली मग्गी सुबर । प्रसन उमा परतष्य हुअ ॥
चर चित्त बीच करहि न कछू । पंभ फोरि जैपत्त तुअ॥छं०॥२४॥

धीर पुंडीर का कुमारी कुमारियों को भोजन करा कर उपारन करना ।

दूहा ॥ कुम्मारी कुम्मार सहु । बोलि सु भोजन दीन ॥
अनँत विप्र भोजन विविध । धीर सु पारन कीन ॥ छं० ॥ २५ ॥
अति आनंद सु धीर किय । भयौ हूर रस भास ॥
अनत विप्र भुंजे भगति । दिय सबइ षिन तास ॥ छं० ॥ २६ ॥

जैतखंभ का वर्णन और सामंतों का नित्य प्रति अभ्यास करना ।

कवित्त ॥ जैत षंभ मंडयौ । स्वामि सामंत परष्यन ॥
अष्ट धात कर अष्ट । रेष गज अष्ट सु रष्यन ॥

अष्ट मुष्टि चा रूष्टि। वाहि कहूँ जु संगि बर॥
इष्ट देव सत सील। संच आभंग रंग भर॥
तारूअ तुंग सह सत्त भर। इस अभ्यास दिन प्रति करहि॥
इक मुट्ठि दु मुट्ठि ति मुट्ठि लगि। किहुन सार दुअ अँग सरहि॥
छं० ॥ २७ ॥

धीर का जैतखंभ भेदने के लिये जाना।

चकित चित्त चहुआन। सूर सामंत न सुझ्झहि॥
नर पष्पर भर भिरन। षंभ सों षिझि षिझि झुझ्झहि॥
तीन पष्प दिन पंच। बीर नीसानन बज्जिय॥
सबर बैर सुरतान। जाहि सं'मुह करि सज्जिय॥
पुंडीरराय चंदह तनौ। धीर नांउ बै अंकुरिय॥
रन सिंह कंध षप्परि तरकि। हेम तुल्य लिन्नौ तुरिय॥छं०॥२८॥

धीर पुंडीर की अवस्था और बल का वर्णन।

नव बिय बरष प्रधान। तुंग लच्छिन उतंग तन॥
चल्यौ सिंह सामंत। बीर पुंडीर धीर घन॥
ताजी तुंग उतंग। बैस बीय पय अढारै॥
मीरन रत्त सु गत्त। पियै जल अभ्भ क चारै॥
बर चंद जंपि चंदह तनौ। विभर मेछ बस्र अंकुरिय॥
तन पष्पि परष्पन न्विपति बल। चढि तुरंग धंधरि परिय॥
छं० ॥ २९ ॥

अश्व वर्णन।

विराज॥ लियो सेत ताजी, सुधा जीति साजी। तुला हेम तोलं, महालीन मोलं॥
छं० ॥ ३० ॥
अनूपं ऐराकी, सहै ना सुधाकी। दुअं गात उच्चं, सरूपं सकुच्चं॥
छं० ॥ ३१ ॥
षड़ै षाल नालं, तगै लंघि तालं। भरै दान भारी, कहां पंषि कारी॥
छं० ॥ ३२ ॥

धीर का खंभ के पास पहुंचना।

दूहा ॥ ध्यान उमा करि सुमन धरि। धीर वीर मन लाइ ॥
जैत षंभ फोरन सु वर। भौ जालंधर आइ ॥ छं० ॥ ३३ ॥

पृथ्वीराज का ससैन्य जैतखंभ पर जाना और धीर का आना।

कवित्त ॥ विहँसि चल्यौ चहुआन। हूर सह सेन बुलायौ ॥
जैत षंभ रोपयौ। लोह मन तीस मिलायौ ॥
भयौ राइ आयेस। कुंअर सब बिंभौ षेलइ ॥
सेंथि तीर तरवार। संग सरवर कर मेलइ ॥
चिहुटै न चोट दुअ अंगुरिय। उहित संग मथ्थै धरिय ॥
अप्पी सुराइ तिहिं अप्प करि। भनहु हूर सह अहि उहिय ॥
छं० ॥ ३४ ॥

दूहा ॥ दिवस अट्ठ पुज्जिय सकति। नवल नवम्मिय दीह ॥
सिलह सुरंग सु मंडि किय। चल्यौ तुरंगम सींह ॥ छं० ॥ ३५ ॥
भुजंगी ॥ चल्यौ सिंह सामंत पुंडीर भारी। धरै कंध सोहै सकत्ती करारी॥
जुरै जूह कालंग्रसै सार सारै। पिभै षंभ तेजी दुहूं अंग डारै ॥
छं० ॥ ३६ ॥

हुरी भेरि भंकार नीसान धाई। उठी वेद विप्रान विप्रान झाई ॥
तपै तेज वाही विभागी ततारी। उनें धात में धात कट्टी निनारी॥
छं० ॥ ३७ ॥

मिटै रेन रायां दिपो अंग चंडी। तुला सीर दंडी मनो धर्म मंठी॥
छं० ॥ ३८ ॥

पृथ्वीराज का आज्ञा देना और धीर का जैत खंभ भेदना।

कवित्त ॥ हो रावत मंडली। कोरि मच्छर मन मंडहु ॥
सो तुरंग तन घिस्यौ। संग वाहिर गहि कड्ढहु ॥

बंस कुली छचीस। करहु बल आवल भावै॥
संगि न टारी टरै। अंतु षिन अद्ध दुलावै॥
अप्यौ तुरंग चहुआन तब। विहसि धीर पुंडीर किय॥
उप्परिय जैत खंभह सहित। तब पसाव प्रथिराज किय॥
छं० ॥ ३९ ॥

पृथ्वीराज का धीर को सिरोपाव जागीर आदि देना।

भुजंगी॥ कियौ राय परसाद पुंडीर ओटं। मही मंसु कामं जुडिं सारकोटं॥
दिये पंच हज्जार ग्रामं सु थानं। झँडा माहि वैरष्य पीलं निसानं॥
छं० ॥ ४० ॥

रष्यतं वष्यतं तुरंतं उचायौ। अप्यौ सद्द सामंत पुंडीर आयौ॥
तबै बोल बोले सु उच्चै अचाए। कहै राय चहुआन सों बोल चाए॥
छं० ॥ ४१ ॥

अबै मरन कै करन कै करहिं साई। बाधन कै गहन कै सुरतान घाई॥
छं० ॥ ४२ ॥

राजा का धीर पर अपनी पैज प्रगट करना।

कवित्त॥ चारि वचन चहुआन। दिए वर धीए अचाये॥
मरन काम चहुआन। करन अरि हरन बताये॥
गहे धीर सुरतान। इष्य अप्पन चहुआनं॥
जोध कीस धोषंत। करै सु विहान प्रमानं॥
जो धीर राइ इम उच्चरै। काम साम साझत करै॥
प्रथिराज काय भंजन भिरन। धर भज्जत सन्हौ मरै॥ छं०॥४३॥

धीर का मस्तक नवा कर राजाज्ञा को स्वीकार करना।

आगें धीर सधीर। इष्य चहुआन मथ्थ दिय॥
आगें सूर सहूर। ताप उतराध तेज किय॥
आगें वर कैलास। गहे पीनाक सु साजे॥
आगें कंचन तेज। धरे नग तेज विराजे॥

करे और शेष मुसल्मान सेना उनकी सहायता पर रहे। स्वामी की ऐसी आज्ञा पाकर वे वृक्ष के समान बड़े बड़े डील डौल वाले नमकहलाल मुसल्मान जवान दर्पण के समान चमकते हुए शस्त्र निकाल कर अल्ला अल्ला का हल्ला मचाते हुए टिड्डी दल की तरह उलट पड़े। इधर से अपने अपने घोड़ों को एड़ें देकर वे रणोन्मत्त पाचो सामत भी उनको रोकने के लिये आगे हुए। सोमेश्वर के सुपुत्र राजा पृथ्वीराज रूपी सूर्य्य पर यह पग सेना साक्षात् राहु स्वरूप थी। पृथ्वीराज के साथी लोग अपने स्वामी की रक्षा करने पर तन मन से उतारू थे; पर सच पूछिए तो उस समय उनका रक्षक एक मात्र मोर-मुकुट वाला ही था।

उस घमासान के समय वह युद्धस्थल साक्षात् नवो रसों का नौचौकिया महल हो रहा था, जहाँ नाचते हुए भूत बैताल अद्भुत स्वरूपधारी कविचंद रौद्र रस में रँगा और कायर भयानक रस में डूबे थे। हाय हाय करते हुए घायल करुणा और परस्पर वार करते हुए शूर रुद्र रूप थे। उस समय भी खुशी से हँसता हुआ सलख प्रभार हास्य का और पड़े हुए घायल वीरों के पंजर से निकला हुआ साम मज्जा वीभत्स रस का रूप दिखलाते थे। मर कर मुक्ति पाए हुए योद्धा शान्ति रस के स्वरूप थे, और आकाश मे पुष्प वर्षा करती हुई अप्सराएं तो साक्षात् शृंगार रस की मूर्ति ही थीं।

उधर तो जैचंद का दल बादलों की तरह चढ़ा चला आ रहा था। इधर पृथ्वीराज ने अपने सामन्तों से कहा कि भाइयो यदि आप थोड़ी देर इधर पग सेना का मुकाबला करें तो मै जाकर कन्नौज नगर को भर आँखों देख आऊ। यह सुन कर सामन्तों ने कहा कि हम यहा शत्रु सेना से लड़ेंगे, पर हमारा यह धर्म नहीं है कि ऐसे समय में हम आपको अकेले जाने दें। तब पृथ्वीराज बोला आप लोग इस बात की चिन्ता न करें मेरा रक्षक वही परमात्मा है जिसने यह जीवन दिया है और जो अनन्त कलाओं से सारे संसार के चर अचर पदार्थों में व्याप्त है। तुम लोग इधर की सम्हाल रखना मैं जरा गंगा जी का दर्शन कर आऊँ। यह सुन कर काका कन्ह चौहान से न रहा गया। वह खिसिया कर बोला "रे मूर्ख! यदि तुझे इसी तरह अकेले फिरना था तो हम लोगों को किस लिये साथ में लाया। अरे क्यों जान बूझ कर हमारे माथे कलंक का टीका लगाता है। यदि वहाँ कुछ बन बिगड़ गई तो तेरा तो क्या सभरीवंश की बदनामी होगी।" इसका पृथ्वीराज ने कुछ भी उत्तर न दिया। सब लोगों के समझाने बुझाने और इतने बड़े पग दल के दर्शन के भय ने राजा पृथ्वीराज के हृदय पर इस प्रकार कुछ असर न किया जिस प्रकार चिकने घोड़े पर पानी की बूंद नहीं ठहरती। सबके रोकते रोकते पृथ्वीराज घोड़े पर सवार होकर अकेला ही कन्नौज नगर के दक्षिण प्रान्त की तरफ चल दिया और घूमता फिरता एक ऐसे स्थान पर जा पहुंचा जहां गंगा के किनारे एक ऊंचे महल के छज्जे पर दस सुंदर कोमलाङ्गी स्त्रियाँ जैचन्द के दल के जुझाऊ बाजों का रव सुन कर उन्माद से उझक उझक कर देख रही थीं कि कहा क्या हो रहा है।

उधर तो चहुआन घोड़े पर चढ़ कर चलता हुआ, इधर जैचंद की फौज ने कविचन्द के सिरायचों को चारो ओर से घेर लिया। उस समय उस सेना की सजावट का तमाशा देख कर सुरेश भी शंकित हो रहा था। पैदल और धनुर्धर सिपाहियों की कौन गिनती करे। उस सेना में अस्सी लाख सवार और अस्सी हजार हाथी थे। उनके बीच में विराजित राजा जैचंद बार बार यही कह रहा था कि सब सामन्तो सहित पृथ्वीराज जीता पकड़ लिया जाय। भला! भाग कर जाने न पावे। पंग दल के पक्खर पड़े हुए भैंगलों और घोड़ों के बोझ से शेष नाग का फन झुका जाता था। पृथ्वी छोटी नाव के समान सी डगमगा रही थी। आकाश में छाई हुई धूल के कारण तेजस्वी सूर्य्य चन्द्रमा बन रहा था। धन्य! ऐसे प्रतापी विजयपाल के पुत्र

जैचद की सेना की ठोकर राजा पृथ्वीराज के सामन्तों के सिवाय और कौन मोड़ सकता था ! इस अस्सी लाख सेना ने दस दस लाख के आठ भाग होकर चहुआन के सामन्तों को आठों दिशाओं से घेर लिया। इस थोड़ी सी जगह में इतनी बडी फौज इस तरह दुस कर व्यूहबद्ध हुई कि सिपाहियों के आपस में ही हाथों से हाथ पावों से पाव और बालों से बाल उलझ रहे थे विशेष कसमस के कारण परस्पर घिस घिसा कर सैकड़ों हाथियों के झोले चूर चूर होकर धूल में मिल गए। अधिक कहां तक कहें दस कोस पर्य्यन्त हाथी के खोसों की कतार के सिवाय और कुछ भी नहीं देख पडता था। उस समय उस शोभायमान महनपुर की हजारों हवेलियां धूल में मिल गई बाग बगीचे उजड़ गए, जल के स्थान में स्थल, और थल की जगह जल हो गया।

उस समय दसों दिशाओं के दिग्पाल पृथ्वी को दाँतों से दबाए हुए थे। अधिक भार के कारण शेषनाग की गरदन टूटी जाती थी। सूर्य्य दृष्टि से लोप हो रहा था, कमठ मटपटाता हुआ गरदन सिकोड़ कर रह गया था और सुमेरगिरि चूर चूर होकर गंगा की धूल और रेणुका बन रहा था, वह रेणुका शिव जी की जटाओं से झर कर उनके गले में डोलते हुए सर्प के सिर पर पडी। सर्प ने जो फन उठा कर फुफकार भरी तो चद्रमौलि के चन्द्रमा से अमृत झर पडा। वह अमृत बिन्दु उनके आसन के व्याघ्र चर्म पर पड़ा जिससे वह सजीव होकर दहाड़ उठा। सिंह की दहाड़ सुन कर बूढ़ा बैल भाग खड़ा हुआ जिससे भूतनाथ महा शिव की समाधि भग हो गई। अस्तु उन्होंने जब क्रुद्ध होकर तीसरा नेत्र खोलने की इच्छा की तो तीनों लोक चौदहों भुवन और इक्कीसों ब्रह्मांड में महा हाहाकार मच गया। सुर मुनि गधर्व अप्सराएँ और यक्षादि आकाश से पुकार कर कहने लगे हे जैचद ऐसा उत्पात क्यों करता है। देख तेरी सेना के आतक से तीनों लोकों में त्राहि त्राहि हो रहा है। दुर्गम गिरि दब कर चूर चूर हुए जाते हैं। धरती धँसी जाती है। समुद्र सूखा जाता है। वाराह भगवान खीसे पर नजर लगाए हुए हैं और कमठ बड़ी कठिनता से घड़ी पल पूरे कर रहा है। वाह तेरी चढ़ाई क्या है मानो प्रलय का नमूना है। नहीं! नहीं!! सब तरह से प्रलय के सामान प्रस्तुत हैं। यदि तेरी विकट सेना के आतंक में आकर दिग्गजों ने दांत उठा लिए तो वाराह अपने एक खीसे पर सब भार कदापि न सह सकेगा। जो वाराह ने पृथ्वी को छोड़ दिया तो शेष को भी बस गए गुजरे समझ लो। रहा अकेला कच्छप सो वह भी बिचारा पानी में गोता लगा जायगा। बस लीजिए प्रलय हो चुका! इसलिये हे जैचद जरा शान्त हो। तेरा घेरा हुआ पृथ्वीराज जायगा कहां!

जैचद की सेना के साथ साथ अन्यान्य राजाओं की बनी ठनी सेना तो ऐसी मालूम होती थी जैसे पूर्व्व दिशा में टिड्डी दल उमड़ रहा हो। उन राजकुमारों के अत्यन्त तेज और फुरतीले घोड़े ऐसे मालूम देते थे जैसे अभी सूर्य के रथ में से खोल कर लाए गए हों। उनकी तेजस्विता के कारण उन्हें हरिण से उपमान दे सकते थे क्योंकि हरिण एक बनैला पशु है। उनके सवार दुधारा झलने वाले थे। खिची हुई बाग होने के कारण उनकी गरदन का घुँघट गुने की तरह गोल बन रहा था। फेन गिराते हुए उनका उमंग से हिनहिनाना ऐसा मालूम होता था मानों सैकड़ों मोर्चंगे या एकतारे बज रहे हों। सर्वाङ्ग लोहे की पाखलों से मढ़े घाट औघट सर्वत्र हवा से बात करते हुए वे बहुत भले मालूम देते थे। उनमें अरब के अरबी, काठियावाड़ के कठील और कच्छ के कच्छी आदि सब तरह के अच्छे अच्छे खेत वाले चार हरिया, सुरंग, कुम्मैत, कुल्ला, समद, अबलख, सिरगा आदि नाना रंग के घोड़े थे। वे हजार रोकने पर भी धीर बाँधे नहीं रहते थे। जहाँ कहीं जरा देर के लिये खड़े हो जाते थे वहाँ की जमीन में खुरों से

खोद कर खड्डे कर देते थे और बिजली की तरह हत्थी की किलावों पर लाफ जाना तो उनका सहज करतब था। ऐसे घोड़ों की पीठों पर बैठे हुए कमल की गुलाबी और खंजन सी बड़ी बड़ी आँखों और चन्द्रमा से चमकदार सुन्दर चेहरे वाले किशोर वय राजकुमार तो ऐसे सुशोभित होते थे मानों कन्नौज नगर में आज साक्षात कामदेव ने अवतार धारण किया हो। ऐसे सैकड़ों छत्रधारी और राजकुमारों के बीच में स्थित राजा जैचंद का दल बल पारावार रहित समुद्र के जल के ऐसा जान पड़ता था। उस पंग सेना में एक साथ बजते हुए सोलह हजार निशानों का स्वर ऐसा जान पड़ता था जैसे दसों दिशाओं में घन घोर मेघ गरज रहे हों, और सबेरे के समय सूर वीरों के शरीर पर के सनाह तथा उनके अस्त्र शस्त्र तो ऐसे चमचमा रहे थे जैसे साक्षात् सौदामिनी हो अथवा गंगा स्नान करके सूर्य्य भगवान स्वयं किनारे पर खड़े हों।

ऐसी बड़वाग्नि रूपी पंग सेना में अद्वितीय वीर लगरीराव तो पहिलेही आहुति हो चुका था। उसके बाद पहिले कहे हुए पाच सामन्त आगे हुए थे, परन्तु जब देखा कि पग सेना का दल बल अचल एवं कठिनता से जेय है तब चंदपुंडीर का भाई पद्माडराय तूंअर अपने भाई और बेटों के सहित, भानगय कछवाहा, सांखुला सूर और केहरीराय मोरी ये सरदार और भी मैदान पकड़ गए। जिस समय ये सामन्त म्यान से तलवार निकाल कर मार मार करते हुए शत्रु सेना पर टूटे उस समय अच्छों अच्छों की अक बक भूल गई। सैकडों सिपाहियों के सिर धड़ से अलग हो कर गिरने लगे, लाश पर लाश पड़ने लगी और जहा तहा रक्त के कुंड भर गए, किसी का सर कट गया और कबंध मार मार करता, किसी का पेट फट गया और आँते निकल पड़ीं तो वहीं बिल बिला कर वे बस हो रहे। और कोई धज्जी धज्जी होकर मरे पर भी पीछे पैर न देते सामन्त लोग जिस किसी मतवाले हाथी के मथार पर हाथ मार कर उसे बीच में कलीदा सा फाड़ देते थे तब ऐसा जान पड़ता था मानो चंद देव ने वीरों के लिये मुक्ति का मार्ग खोल दिया हो। इसी तरह घमासान मार होते होते पग सेना में से रुद्र प्रताप नामक एक बड़ा भारी सरदार काम आया। और पंग सेना का एक कोट भी टूट गया जिससे सारी सेना में हल चल मच गई पर सामंत बच्चे बाण से बाज न आए, सारे दिन युद्ध होते होते संध्या होने को हुई पर धारा नरेश राजा भान बराबर उसी तरह करारे वार करता रहा। घड़ी इधर तो घड़ी उधर, इसी तरह लोह पर लोहा बजाता हुआ चौरंग चाचर सी खेलता रहा। जब बराबर बारह घंटे के परिश्रम से श्रान्त होकर सूर्य्य भगवान अस्ताचल को प्रयाण करने लगे तब इधर राजा भानु ने भी समर में शीश देकर भानु भगवान को अपने जीव का दान देकर यहां से बिदा किया।

उस समय कन्नौज नगर रूपी उपवन में रण रक्षित पग सेना ने वसन्त ऋतु का समा बाँध रक्खा था। मतवाले हाथियों के गंडस्थलों से झड़ना हुआ मद कुसुम सौरभ सा बह रहा था। कायर कपूत पीले पड़ कर पुराने पत्तों की तरह पलायमान हुए जाते थे। वीरों के रतनार नेत्र और कर पल्लव मानों कोपलें निकल रही थीं। घावों से भर भर चलता हुआ रुधिर मानो भौंरों का गुञ्जार था, कड़खे गाते हुए बीर ऐसे जान पड़ते थे मानों कू कू कर कोयलें बोल रही थी। जवानों के रंग बिरंगे वस्त्र वही भाँति भाँति के फूल फूल रहे थे और समस्त पंग सेना सोई त्रिविध वायु थी।

सायंकाल का युद्ध बन्द हो जाने पर राजा जैचन्द के पुत्र ने अपने पिता के पास जाकर विधिवत प्रणाम किया और बाईं ओर जा खड़ा हुआ। जैचन्द ने उससे पूछा कि क्या हुआ तब उसने उत्तर दिया कि महाराज कुछ न पूछिए ऐसा युद्ध हुआ कि कुछ कहने की बात नहीं। वे

सामन्त लोग तो ऐसे पराक्रमी है कि जैसे महाभारत में पाण्डव लोग हो गए है। तीन घड़ी पर्य्यन्त तो ऐसा युद्ध हुआ कि मुझे अपना बिगाना नहीं सूझा। परिणाम यह हुआ कि न तो अपना दल बिचला न सामन्त लोग पराजित हो सके। अपनी तरफ के कुल बारह हाथी और दो हजार योद्धा खेत रहे पर पृथ्वीराज की तरफ के कुछ थोड़े से सिपाही मारे गए हैं। यह समाचार सुन कर जैचन्द के क्रोध का ठिकाना न रहा। उसने उसी समय मंत्री को बुला कर कहा कि मै स्वयं चढ़ाई करूंगा, देखो रात भर पहरे में कोई गड़ बड़ न पड़ने पावे।

इधर तो मार काट हो रही थी उधर राजा पृथ्वीराज चहुआन मछलियों का तमाशा देखने में लगा हुआ था। संयोगिता की एक दासी उससे कहने लगी कि हे राजकुमारी कन्नौजचन्द के साथ में यहाँ पर पृथ्वीराज आया हुआ है और यह बात राजा जयचंद को मालूम हो गई इस लिए उसने सुमन्त को आज्ञा दी कि वह जाकर पृथ्वीराज को पकड़े। स्वामी की आज्ञा पाकर सुमन्त ने सहस्रों शूर वीर सिपाही हाथी घोड़े रथी पदाती और धनुर्धारी आदि चतुरंगिनी सेना लेकर कन्नौज के डेरे जा घेरे और एक दल ने पृथ्वीराज को पकड़ने के लिये धमर की। अतएव उधर से सामन्तों ने अपने बचाव का उपाय किया। सब लोग तो घन व्यूह होकर एका जगह जम कर रह गए पर एक लगरीराय नामक सामन्त तलवार फटकारता हुआ पग सेना पर झपटा। इधर से भी नौबत नगारे और महनाई बजाते और मार मार करते हुए वीर लोग बढ़े, लगरीराय घिर गए। परन्तु उस बांके वीर लगरीराय ने ऐसा पराक्रम किया कि जिसको देख कर देवता भी चकित हुए। घड़ी भर में पग सेना के सहस्रों सिपाही काम आगए। जब उसका ऐसा पराक्रम देखा तो मन्त्री सुमन्त स्वयं घोड़े पर से उतर कर उसके सामने आ डटा। दोनों ने अपना अपना अच्छा रण कौशल दिखाया। होते होते सुमंत के एक हाथ से लंगरीराय दो होकर गिर गया। परन्तु सुमन्त को भी इस योग्य न छोड़ गया कि वह खेत में खड़ा रह सके, इसलिये पंग सेना के सिपाही मंत्री सुमन्त को उठा कर मोरचे पर से चल दिए। यह सब समाचार जानकर जैचंद ने राजकुमार कन्ह को आज्ञा दी कि वह स्वय सामन्तों पर पसर करे और जिस तरह से हो सके पृथ्वीराज को पकड़ लावे। अस्तु जब वह राजकुमार स्वयं बड़ा भारी दल बल लेकर सामन्तों पर चढ़ आया तब इधर ग्यारह सामन्त अग्रसर हुए और सारे दिन उन्होंने ऐसी मार की कि इतनी बड़ी सेना उन थोड़े से सामन्तों के जुट्ट को फोड़ने में भी समर्थ न हो सकी। उनका पराक्रम देखकर अपने अपने विमानों पर चढ़े देवता भी आकाश से जयध्वनि करते हुए पुष्पों की वर्षा कर रहे थे।

जब राजा पृथ्वीराज डेरे से निकल कर अलकापुरी के समान सुसज्जित और सुखमय कन्नौज नगर में पहुँचा तब देखता क्या है कि सब सांचे में ढले हुए एक से एक बढ़ कर मतवडे मकान आकाश से बातें कर रहे है। जिनकी साम्हनी सलामी पर नाना प्रकार के गुबज लगे हैं, और गोप मनोहर झरोखे और जालिया कटी हुई है। जिनके बड़े बड़े दरवाजे बड़ी बड़ी कुर्सिया और बड़े बड़े सुविस्तृत आंगन है। उनके छज्जों पर तथा आगन आदि में जहा तहा मौके से बेलें छाई है, फुलवारी के गमले रक्खे है और सुन्दर स्वच्छ जल से भरे फौवारे झरने के समान झर रहे है। आस पास तबेले भी है जिनमें हाथी घोड़े बैल तथा और भी किस्म किस्म के पालतू जानवर बंधे हुए हैं। पहिला खड साधारण विस्तार के लिये, दूसरे खड में बैठक है और तीसरे मरातिब में चित्रसारी है। चित्रसारी के द्वार की किवाड़ी पर की जाली और महराबों पर सोने की मेंढी नक्काशी की हुई है और जहा तहां बीच बीच में नग भी जड़े हुए हैं, जालियों में जड़े हुए हीरे ऐसे भले मालूम देते है जैसे कन्नौज नगर की सुखमा का आनन्द लेने के लिये आकाश

से तारागण उतर आए हों। उन गौखों और झरोखों में बैठी हुई मृगनैनी स्त्रिया मोती भर कर माँग सम्हार रही है। उन आनन्द मग्न हँसती खेलती और सहज स्वभाव से इठलाती हुई महिलाओं के सब भाव मुख से कहे नहीं जा सकते हैं, उनके जड़ाऊ जेवरों और रंग बिरंगे बालों की चमक दमक देख कर आँखों में चकाचौंधा आती थी। वे राती कीसी कलाएँ सुन्दर महिलाएँ बेल बूटे युक्त किनारीदार रेशमी साड़ी पहिने थीं माथे पर झबिया झूम रही थी। गले में दोहरी पोत के छुटे और चम्पकली खुल रही थी, कमर में क्षुद्र घंटिका और पैरों में पैजनी पहने हुए थीं।

ऐसे विचित्र चरित्र देखता हुआ राजा पृथ्वीराज तो गंगा किनारे जाकर मछलियों के तमाशे में भूल रहा परन्तु राजा जैचन्द को पृथ्वीराज का पकड़ लेना कब भूलना था? राजा पृथ्वीराज कन्नौज नगर की शोभा देखता भालता हुआ नगर के दक्षिण प्रान्त में गंगा किनारे पर स्थित संयोगिता की चित्रसारी के पास जा पहुँचा और गगाजी की तरल तरगों का आनन्द लेने लगा। इसी बीच में घोड़े के किसवार का एक मोती टूट कर गगा में जा गिरा, उसके ऊपर सैकड़ों छोटी छोटी मछलियाँ टूट पड़ी और आपस में लड़कर चाटे खाती हुई कभी उसे ऊपर ले आती कभी नीचे लेजाती थी। यह तमाशा देखकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और उसने घोड़े की किसवार के मोती तोड़ तोड़ कर गगा में फेकना शुरू किया।

इधर यहां दासी की कही हुई कथा सुनकर जब संयोगिता ने जाना कि पृथ्वीराज यहां आगया है तब उसके शरीर में रोमाञ्च हो आया और वह ऐसी प्रसन्न हुई। कि जिसका कुछ ठिकाना नहीं परन्तु सकोच वश कुछ कह नहीं सकती थी इतने में पग सेना के निशान फहराने लगे जिन्हे सुनकर सखियों सहित सयोगिता छज्जे पर जा चढ़ी और चौंकती सी इधर उधर देखने लगी, और जब उसकी नजर पूर्व्व ओर गई तो कुछ देखकर आपही आप सहम कर चित्र लिखी सी रह गई, वह मन ही मन सोचने लगी "हैं! आज यह दोहरा सूर्योदय कैसा? नफीरी शहनाई रणतूर आदि जंगी निशानो का रव सुनकर उसी समय पृथ्वीराज ने भी गरदन उठाई, तब देखता क्या है कि गज पर सिंह, सिंह पर पर्वत, पर्वत पर भ्रमर भ्रमर पर चन्द्रमा, चन्द्रमा पर सुवा, सुवा पर मृग, और मृग पर दो चाप चढ़ाए हुए मनसिज स्वय विराज रहा है, तात्पर्य्य यह कि संयोगता और पृथ्वीराज की आँखे चार होगई और दोनों का मन एक दूसरे पर ऐसा जा लगा जैसे चुम्बक पर लोहा जा चिपकता है।

जो वय बुद्धि उस समय संयोगिता की थी उसी वय बुद्धि की उसकी सहेलिया भी थीं सब पन्द्रह पन्द्रह सोलह सोलह वर्ष की चंचल नेत्र और चंचल मनवाली थी उनके रोम रोम में चपलता भरी हुई थी। उनमें से कोई भी खेली खाई और जमाने की देखी भाली प्रौढ़ा नहीं थी। अस्तु जो गति संयोगिता की थी सो उन सबकी थी। वे बड़ी देर तक तो टकटकी लगाए पृथ्वीराज की देखती रहीं फिर कोई कोई कहने लगी "अहा कैसा सुन्दर पुरुष है! मानो भानु भगवान की कला है" कोई कहती, नहीं री कामदेव का अवतार है, कोई कहती यह तो मनुष्य है नहीं कोई दिव्य योनि नाग या गन्धर्वों में से है, कोई कहती चलो बैठो दुनिया में एक से एक बढ कर पड़े है। ऐसे ऐसे सुन्दर सैकड़ों मनुष्य पड़े होंगे। कोई कहती अरी मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि यह कहीं वही राजा पृथ्वीराज न हो जिसके प्रण पर संयोगिता प्राण न्योछावर कर रही है। उन सहेलियों ने और जो कुछ कहा वह सबतो सयोगिता ने सुना ही नहीं परन्तु आखिरी बात सुनते ही वह चौंक पड़ी। शरीर भर के रोंगटे खड़े होगए और स्वेद झलक पड़ा। उसका सारा शरीर कामदेव के रथ के पताके की तरह थर थर काँपने लगा। गोरे गोरे गालों पर पसीना बहने लगा और लहराती हुई लटे उसे पोंछ पोंछ कर साफ करने लगी। बोल रुक गया, गला भर आया, दँती बँध गई और होठ फड़ फड़ाने लगे। स्याम बिंदु वाली ठोडी भी धीरे धीरे हिलने

लगी और दोनों आंखों के ऊपर की पलकों की बरौनी तो मोहों से ऐसी लग कर रह गई जैसे किसी ने उन्हें वहीं चिपका दिया हो। बड़ी देर लोथिर रहने के कारण गढ़ों पर भी पानी झलकने लगा। अस्तु संयोगिता का यह सब हाव भाव उसकी सहेलियों ने परख लिया कि यह पुरुष वही पृथ्वीराज चौहान हैं जिस पर संयोगिता जी जान से मर रही थी। वे कहने लगीं "हाय हम अनजान क्या जानें। प्रेमियों के मन परस्पर एक दूसरे को आप पहिचान लेते हैं। धन्य है भगवान प्रेम का पंथही निराला है।"

उनमें भी जो कुछ सयानी और समझदार थीं वे संयोगिता से बोलीं कि हे राजकुमारी आपका हाव भाव देखकर हमें तो ऐसा मालूम होता है कि आपका मनहरण राजा पृथ्वीराज यही है। यहां कोई गुरुजन भी नहीं है जिसकी लज्जा करना हो कहिए तो पूछ पठवाया जाय कि आप कौन है। यह सुन कर संयोगिता सहम कर रह गई कुछ ठहर कर उसने कहा क्या करूँ इस समय माता पिता की बात स्मरण आती है और हृदय की वेदना तो जैसी है सो जीही जानता है। हाय न जाने इस करम में क्या लिखा है। मेरी तो इस समय सांप छछूंदर की गति होरही है। तब सखियों ने उत्तर दिया "अरी वीर क्यों बावरी हुई है? धीर धर जो करम लिखा होगी सो तो होगा ही फिर हाथ की बिल्ली छोड़ कर म्याओं म्याओं क्यों करना? यह सुनकर लम्बी सांस लेते हुए संयोगिता बोली "सच तो कहा यदि यही वह चित चोर है तो जीते जी उससे दो बोल बोल भी तो लूं।"

छप्पय।

दृष्ट फट्ट संजोगिदाम झिलवार हथ्थ दिय।
मुगबन्धन चहुआन पुव्व श्रोयान मेट्ट किय॥
पुव्व रूप गिद्धोत्र मद्ध मनमथ्थ सम्भारिय।
भय मृग पग नरिन्द चन्द बन्धन बन डारिय॥
हक्कैतिहक्कक हाका सखिन मूर गौप अपबन्धमिख।
बेधन्त आनि बाहन भुअल भृगुकच्छीस कामग इख॥

निदान संयोगिता ने एक थाल में मोती भरकर एक दासी को दिया और कहा कि तू स्वयं कुछ न बोलना यदि वह पृथ्वीराज है तो तुझ से आपही पूछेगा। संयोगिता की ऐसी आज्ञा पाकर वह दासी चुप चाप पृथ्वीराज के पीछे आखड़ी हुई और वहीं से मुट्ठी भर भर मोती उसके हाथ में देने लगी। होते होते थाल के सब मोती चुक गए तब उसने गले का हार तोड़कर मोती देना आरम्भ किए परंतु जब वे भी चुक गए तब उसने गलें का छूटा तोड़ कर मुट्ठी भर पोत राजा के हाथ पर रखदी। ज्योंही राजा ने पोत देखी कि वह बड़े आश्चर्य्य में पड़ गया। उसने चकित चित होकर जो पीछे देखा तो एक नवयौवना स्त्री खड़ी है। पृथ्वीराज ने उससे पूछा क्या तू अप्सरी है अथवा कोई नाग कन्या या देव कन्या है? उसने कहा नहीं मैं पंगराज के रनिवास की दासी हू और इस समय उस राजकुमारी संयोगिता की टहलनी हू जिसने सम्भरीनाथ राजा पृथ्वीराज चौहान पर तन मन न्योछावर कर रक्खा है। महाराज वह चन्द बदनी मृग लोचनी किशोर वयस्का राजकुमारी रात दिन उसी सम्भरीनाथ के ध्यान में मग्न रहती है। यह कहकर ज्यों ही दासी ने संयोगिता की ओर हाथ का इशारा किया कि वह वह है त्योंही पृथ्वीराज की भी वही दशा होगई जो पल भर पहिले संयोगिता की थी। पृथ्वीराज के होठ कांपने लगे उन्हें जंभाई आने लगी और उनके नेत्रों में जल भर आया। दासियों सहित संयोगिता तो यह सब चरित्र पहिले से देख रही थी बस इस समय यद्यपि दोनों के शरीर दूर दूर थे पर दिल एक में मिल गए थे। यह हाल देख कर जब और सहेलियाँ संयोगिता की इच्छा जानने के लिये चौंकना होकर इधर उधर देखने लगीं तो वह आपही आप बोली क्या कहूँ कुछ कहते नहीं बन आती। मेरे गले में तो गुड़ भरा होसिया है! संयोगिता का इतना कहना था कि चट से दस दासी दौड पड़ी और उन्होंने पृथ्वीराज को चारों ओर से घेर लिया। उस समय ऐसा मालूम होता था मानो रुद्र को वश

करने के लिये कामदेव ने धावा किया हो। जब उन्होंने पृथ्वीराज को घेर लिया तब सब एक स्वर से बोलीं वाह विधाता बड़ा सुघड़ है, कैसा हंस का सा जोड़ा मिला दिया, जिसके लिए संयोगिता आज बरसों से तरस रही थी सो आप घर बैठे आगए।

हमारे पूर्व्व महर्षियों ने जो इस संसार को सागर से उपमा दी है और स्त्री को उसका एक नमूना माना है सो बहुतही ठीक है। हमारे इस अभिनय के सम्बन्ध में संयोगिता का स्नेह ही सरोवर का अगम जल था। हाव भाव कटाक्षादि मुख दृग के हेतु स्वरूप सरोवर के आवर जावर थे, उसके मीठ मीठे बचनही सिवाल, कुच तट पर क्रीड़ा करते हुए चक्रवाक थे, बड़े बड़े नेत्र कमल और भ्रमरस्वरूप और प्रीति का झीना तार सोई मृनाल था जिसमें बड़े बड़े वीरों में अजेय राजा पृथ्वीराज रूपी मत्त मतंग सहजही बँध गया।

पृथ्वीराज के चित्रसारी में पैर देनेही फौरन ब्याह की तयारी होने लगी। पर वहा उन सखी सहेलियों के सिवाय कोई था भी नहीं जो विवाह करावे और विवाह की साक्षी दे। अस्तु वे सहेलियाँ परस्पर कहने लगीं यहाँ किसी की आवश्यकता भी नहीं है अन्तरिक्ष में स्थित देवता ही हमारे साक्षी हैं, और प्रीति की रीतिही कुछ दूसरी होती है, ऐसे दम्पति विवाह सदा गन्धर्वविवाह होते है। जैसे पहिले रुक्मणी और गोविन्द का, नल और दमयन्ती का गन्धर्व विवाह हो चुका है उसी प्रकार पृथ्वीराज और संयोगिता का गन्धर्व विवाह होजाय। सखियों की ऐसी बातें सुनकर दोनों के चेहरे ऐसे खिल उठे जैसे चन्द्रमा को देखकर कुमोदिनी खिल उठती है। बस फिर देर क्या थी संयोगिता ने राजा का हाथ पकड़ा, राजा ने संयोगिता का हाथ पकड़ लिया और उसे अपने बाएँ पार्श्व में बिठा लिया और सखियों ने गाँठ जोड़ दी और बैठ कर मंगल गान करने लगीं।

इस प्रकार से विवाह हो चुकने पर गाँठ छोड़ कर ज्योंही राजा पृथ्वीराज डेरे पर जाने को तय्यार हुआ कि राजकुमारी संयोगिता के शरीर में काटो तो खून नहीं। उसने निराशा भरी नजर से पृथ्वीराज के मुख की ओर देखते हुए बिदाई का पान दिया और आपही आप बोली "हा दुर्दैव! जिसके लिये बरसों से बाट जोह रही थी आज वह हाथ में आकर भी चला जाता है, यह कहकर उसने अपनी छाती पर धौंसा मारा और लम्बी साँस लेकर यह कहती हुई कि हाय स्त्री का जन्म कुछ भी नहीं संयोगिता पछाड़ खाकर पलंग पर से इस प्रकार गिर पड़ी जैसे निराश्रित होकर नई बेली लटक पड़ती है। उससमय संयोगिता का सारा शरीर पीला पड़ गया और वह पड़ी पड़ी थर थर काँपने लगी। परन्तु उसकी दृष्टि पृथ्वीराज पर थी। उसे देखकर ऐसा जान पड़ता था मानों योग निद्रा मग्न होकर वह अपने प्यारे के पूर्व्व सस्कार का ध्यान कर रही हो। उस की ऐसी दशा देखकर पृथ्वीराज भी प्रतिमा की तरह स्थिर रहगया। सच है पृथ्वीराज तो मनुष्य था इस जाल में तो वज्र का भी भोम होजाना सम्भव है। उस की सखियाँ भी कह उठीं क्या करें बेचारी जिसे चातक की तरह स्वाति की बूँद मान कर ताक रही थी उसे भर आँखों देखने भी न पाई, जी खोल कर दो बातें भी न कर पाई और वह चलने को कमर कस कर तैयार है। एक तो संयोगिता स्वय पृथ्वीराज के दिल में बस रही थी उस पर आखों के सामने उसकी यह दीन दशा तीसरे ऊपर से और चार औरतों के ताने इत्यादि सब कारणों से पृथ्वीराज की आँखें भी डब डबा आईं और वह तुरन्तही दक्षिण से अनुकूल होकर बैठ गया। पर उसे ये बातें भी चैन नहीं लेने देती थीं कि मेरे सामन्त पग सेना से घिरे हुए हैं! अस्तु वह बड़े सोच विचार में पड़ा हुआ था कि क्या करूँ क्या न करूं।

तब तक सामने गुरुराम आते हुए देख पड़े। इन्हे देखकर पृथ्वीराज के जी में जी आया। उसने उसी समय बाँदियों को आज्ञा दी कि वे जाकर सादर गुरुराम को लिवा लावें। काका कन्ह का भेजा हुआ गुरुराम भी न जाने कब से भूलता भट-

कता फिर रहा था और मनही मन सोच रहा था कि क्या करूँ कहाँ जाऊँ किससे पूछूँ इत्यादि, तब तक दासियाँ पहुँच गई और उन्होंने उसे अपने साथ लाकर राजा के साम्हने खड़ा कर दिया। राजा पृथ्वीराज को देखतेही गुरुराम ने दोनो हाथ उठाकर आशीर्वाद दिया और कहा "धन्य राजन! वहा वालों को न यहा की खबर है न आपको वहा की खबर है। दोनो ओर का हाल जानने वाले एक मात्र अन्तरिक्ष वासी देवता है। यहा शृंगार रस का श्रोत बह रहा है। वहा वीर रसका वाण बरस रहा है। महाराज पंगराज के प्रधान सामन्त को मारकर लगभग राव मारे गए। इसके सिवाय इन्दमन, कूरम्भ, दूरजन राय, सलखसिंह प्रमार, प्रतापराय तूअर, भीमराय रघुबंसी, जैसिंह बघेला और धारा धनी राजा भानुराय इत्यादि कई वीर काम आ चुके है। इस समय और सब कथा कहने का समय नही है बस इतने में समझ लीजिए कि ये सामन्त फिर फिर न मिलेंगे बस देर न कीजिए चलिए। यह कहकर गुरुराम ने काका कन्ह का लिखा हुआ पत्र राजा के हाथ में दिया और आप एक दासी को बीच में देकर मयोसे बोला "शूर वीरों को समर रूपी सरोवर में स्नान करने का सुअवसर सौभाग्य से हाथ आता है इसमे गोता लगाने से हाल का दुःख तो रहे कई जन्म जन्मान्तर के दुःख दूर होजाते हैं। इसके तट पर भूत बेताल योगिनी और रम्भादिक अप्सगण सदा निवास करती है। सूक्ष्म केश वही सिवार है और सुकीर्ति रूपी भ्रमर चारों ओर उड़ उड़ कर सुकृत की कमाई रूपी कमल कली का रस लिया करते है अस्तु ऐसे सरोवर में स्नान करने से शूर वीरो का तन मन सब निर्मल हो जाता है।

काका कन्ह का पत्र पढ़ कर पृथ्वीराज वहा से चट चलहा दिया और घोड़ा बढ़ाते हुए डेरे के पास आ पहुँचा। परन्तु यहा तो कहीं से भी जाने का मार्ग नहीं था चारों ओर पग सेना बारीकी गर्मी हुई थी। पृथ्वीराज को देखतेही धरो पकड़ो करते हुए सैकड़ों सिपाहियों ने उसे घेर लिया। यह देखकर चहुआन चौकन्ना होगया और उसने अपनी तीर कमान और तलवार सम्हाली और घोड़े को एड लगाई कि एक सपाटे में ही पल्ले पार होजाऊँ पर मुसलमान जमात से सात मीर सरदार पृथ्वीराज के घोड़े के साम्हने आगए। गुरुराम प्रोहित जो अब तक राजा के पीछे पीछे आता था झपट कर आगे आगया। यह देखकर पृथ्वीराज ने कहा "क्षमा गुरु जी, यहा आपके आगे होने का काम नही है आप का आशीर्वाद ही मेरे लिये काफी है।" परन्तु गुरुराम ने यह कहते हुए कि यहाँ हमारा आपका स्वामी सेवक का नाता है पृथ्वीराज के आगे आए हुए सब मीरों को मार गिराया। पीछे से राजा ने कमान पर वाण चढ़ाया और बात की बात में जल्लाल खा और पीरोज खा दो खानों को मार गिराया। राजा का तीसरा वार खाली गया और ज्योंही चौथा वाण चढ़ाने लगा कि प्रत्यचा टूट गई। तब राजा ने तलवार निकाली और सघटित मीर दल को काई के समान काटने लगा। पृथ्वीराज ने पल भर में मीर दल के सैकड़ों सिपाही और हाथी घोड़े काट डाले और सकुशल अपने सामन्त समूह मे जा मिला।

स्वामी का सकुशल देखकर सब सामन्त अत्यन्त प्रसन्नता के कारण हँस पड़े। उस समय स्नेह और शौर्य्य के कारण पृथ्वीराज के दोनों नेत्र गुस्से में भरे मनवाले हाथी की तरह लाल होरहे थे। राजा का ऐसा वीर वेष देखकर वे सामन्त लोग इस लिये और भी प्रसन्न थे कि आज हम अतुल पराक्रम करके या तो शूर शिरोमणि स्वामी को प्रसन्न करेंगे और अथवा चल बसे तो अप्सराओं को आलिंगन करेंगे। वाह आज हमारा पराक्रम देखकर सुर नर नाग सब प्रसन्न होंगे। सब सामन्त राजा के आस पास खड़े हुए थे। काका कन्ह ने जो साम्हने से आकर देखा तो देखता क्या है कि राजा के कर मे कङ्कण बंधा हुआ है और ललाट पर टीका लगा हुआ है पर गले में मोहनमाला नहीं है। इस पर कन्ह ने मुस्कराकर पूछा "यह बात क्या है।" काका जी के ऐसे बचन सुनकर पृथ्वी-

राज ने नीचा सर करके उत्तर दिया क्या कहू केवल उसी का प्रण नहीं था मेरी भी प्रतिज्ञा थी और यहां आकर भी प्रतिज्ञा पालन न करता तो क्या कहलाता। परन्तु मुझे तो आप लोग आंखें दिखा रहे थे इसी से उसे वहीं रोती हुई छोड़ कर चला आया हूं। यह सुनतेही काका कन्ह कड़क कर बोले, खूब किया। पर यह क्या किया जो बहू को वहीं छोड़ आए अरे धिक्कार है कोई अपनी स्त्री को भी इस तरह छोड़ता है क्या चिन्ता थी, हम सौ में से जब तक एक भी जीता रहेगा तब तक तुम्हारा कोई बाल बाका नहीं कर सकता। और तुम दोनों को सकुशल दिल्ली पहुँचा देगें। हरे कृष्ण हम सौ राजपूत बच्चे और तुझे अकेली एक स्त्री सहित दिल्ली तक न पहुँचा सकें। सांसारिक समृद्धि की शोभा स्त्रियों से है, सुख की साधना योग में है, भय के त्रास में दुःख है और स्नेह से चल चित्त होता है। कामदेव से शोभा बढ़ती है और समर में सुकीर्ति होती है और भय से भीत होता है अस्तु मनुष्य इसी भ्रमनाओं में पड़ा रहता है। इस समय संसार सुख की मूल स्त्री और सुकीर्ति साधक समर दोनों तेरे साम्हने उपस्थित हैं फिर भी ऐसी स्त्री जिसका जीवन मरन एक तेरे ऊपर निर्भर है उससे यदि विमुख होजायगा तो लोग क्या कहेंगे कि शत्रु के घर मे स्त्री को छोड़कर चल दिए इसलिये चाहे जो हो संयोगिता को साथ ले लेना उचित है। पृथ्वीराज का तन मन तो स्वयं संयोगिता के स्नेह में सना हुआ था, काका कन्ह का सिखावन सुनकर वह दंग होगया।

इधर जब से पृथ्वीराज ने पीठ फेरी तब से संयोगिता थोड़े पानी में मछली की तरह तलफ रही थी। उसकी सहेलियो ने शरीर में चन्दन पोत कर और पखा झल कर ज्यों त्योंकर उसे सचेत किया तब वह भी बेहाल हो उठी। कभी गोख में झाँकती तो कभी पलंग पर पड़ी तड़फड़ाती थी। सखिया उसे हजार समझाती बुझाती पर वह किसी की एक न सुनती थी। जब वह किसी तरह न मानी तब कोई कोई कहने लगीं अरी राजकुमारी तूने भी तो ऐसे को दिल दिया जिसे तेरा पिता तेल में होकर देखता है उसके लिये कहाँ तक कलपेगी जिसके ऊपर हजारों हाथ उठे हुए हैं। यह सुनतेही संयोगिता ने हाथों से मुँह मूँद लिया और ढाढ़ मारकर रोती हुई बोली अरी सखियो क्यों जले पर नमक लगाती हो मरे को गाली देने से क्या हाथ आएगा। अन्धा आरसी नहीं देख सकता, गूंगा बातें नहीं कर सकता, बहरा संगीत का स्वाद नहीं पा सकता और न निर्बल सबल पर जय पा सकता है। इसी तरह करम लिखी के साम्हने किसी की बुद्धि विद्या एक नहीं चलती। मैंने जो कुछ किया सो गन्धर्व गन्धर्वी के कथनानुसार और मुझे यह भी निश्चय है कि उनकी बाणी फलेगी। हाय गुरुजनों की इच्छा के विरुद्ध माता पिता के मना करने हुए भी जो कार्य्य किया जाता है उसका परिणाम कदापि अच्छ नहीं होता। यह कह कर संयोगिता सिसकती हुई शरद के चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब समान चित्र लिखीसी रह गई। क्षणेक निस्तब्ध रह कर फिर वह विविध प्रकार के विलाप वाक्य उच्चारण करती हुई गोख की जाली से सिर मारने लगी। उस स्वर्ण खचित गोख की जाली में तड़प तड़प कर सिर मारती हुई संयोगिता ऐसी सुशोभित होती थी जैसे पूर्णिमा का चन्द्रम अग्निशिखा से युद्ध कर रहा हो। उधर से राजा पृथ्वीराज भी सौ सामन्तों में गसा हुआ यहीं को चला आ रहा था। वह तो यह तमासा देख कर मनही मन सोचने लगा, हैं यह क्या हो रहा है अग्निशिखा के बीच में चादनी का प्रकाश कैसा! गंगा के चहले में पड़ कर क्या चन्द्रमा तड़फ रहा है अथवा मृगतृष्णा देखकर मछली तड़फ रही है।

संयोगिता विलाप करती करती अचेत होकर गिर पड़ी। सखियों ने उसे उठा लिया और बे यत्न कर के फिर उसे चेत में लाई। वह उन्मीलित आंखों से निराश सूचक कटाक्ष करती हुई ठंढी सास भर कर बोली 'हा या तो यह बात झूठी है कि शूरवीर पुरुष सदा सच्चे होते है या राजा कायर

है।" तब तक पृथ्वीराज भी आ पहुँचा और बोला "नहीं दो में से एक भी नहीं है। री मूर्खा क्या कहती है! हम एक नहीं एक लाख हैं और ऐसे हैं कि हाथी के दाँत मूली से उखाड़ लें, उठो चलो' एक घड़ी पहिले जिसके लिये हाय हाय कर सिर मार रही थी उसे इस तरह कहते हुए साम्हने खड़ा देख कर संयोगिता सहम गई। वह बोली मैं आपके साथ कैसे चलूं आपके साथी बहुत थोड़े हैं यदि कहीं मुझे छोड़ कर भाग गए तो मैं दोनों दीन से गई। यह सुनकर राजा पृथ्वीराज ने हँस कर कहा "अच्छा देर न करो और जो इन्हीं थोड़े से साथियों से समस्त पंग सेना को नाश कर दूं तब तो प्रसन्न होगी।" इस पर संयोगिता बोली "हे नाथ आपके सब सामन्त मेरे पिता की सेना के साम्हने दाल में नौन है। मुझे आश्चर्य्य है कि आप फूंक से पहाड़ उड़ाया चाहते हैं। मैं आपसे पल भर भी अलग नहीं रहना चाहती पर अन्देशा मुझे इतनाही है" यह कह कर संयोगिता सहम कर रह गई और आपही आप कहने लगी हाय मैं बड़ी पापिन हू जो स्वामी की निन्दा करती हू पर क्या करू समय ऐसा ही है इसमें बेबस हू। उस समय साक्षात् शृंगार रस स्वरूप संयोगिता अपना आगा पीछा सोच कर मनही मन मुस्कराती हुई हास्य रस की मूर्ति होगई। उसके वचनों से करुणा रस चुआ पड़ता था पर उसका वाक्य विलास अद्भुत रस का उद्दीपक था, उसकी हार्दिक दृढ़ता ही वीर, और पिता के भय का आभास भयानक रस का भण्डार था। समर के दृश्य का मानचित्र वीभत्स और सामन्तों के पराक्रम के भाव उसके चित्त में आश्चर्य्य उपजाते थे पर इन सब बातों में उलझा कर जब होनहार के भरोसे ईश्वर को टेक कर रह जाती तब वह साक्षात् शान्ति रस की प्रतिमूर्ति बन जाती थी। कुछ ठहर कर संयोगिता बोली "आर्य्यपुत्र मेरे पिता का दल बल बड़ा है, जब उनकी सारी सेना सजती है तब पृथ्वी उथल पथल होने लगती है। घोड़ों की टाप से उड़ी हुई धूलि आकाश में इस तरह से आच्छादित होजाती है मानो स्वयं सूर्य्य भगवान ने शंकित होकर ऊपर से छाता तान दिया हो। बड़े बड़े नदी नाले और ताल तलयों का कीच निकल आता है और पहाड़ राई राई होकर धूल में मिल जाते हैं पंग सेना के चलते समय दिग्पाल दहल जाते हैं और फनीस फूस फूस कर फन फटकारने लगता है।"

यह सुनकर गोयन्द राय गहलौत से न रहा गया वह कहने लगा, 'हे कमधुज्ज कुमारि क्या कहती है। मैं अकेला सारी सेना सहित जैचन्द को मजा दिखा सकता हूं। राजा पृथ्वीराज का रुख रूखा होने पर सब सामन्त एक साथ बदल पड़ें तो न जाने क्या हो। कितने ही भेड़ियों की भीड़ क्यों न हो पर क्या वे अकेले सिंह का कुछ कर सकते हैं? तू चिन्ता न कर मैं अकेला तुझे दिल्ली तक सकुशल पहुँचा दूंगा"। यह सुनकर संयोगिता बोली "हा ठीक है पर जब पंग दल चलता है तब पाताल तक में हल चल मच जाती है और शेष नाग को कस कर कुंडली मारनी पड़ती है। पंग सेना के भार के कारण जब शेषनाग एक फन पर पृथ्वी का बोझ नहीं सभाल सकते तब वे अपने दस सहस्त्र फनों पर इस तरह से हेर फेर करने लगते हैं जैसे स्त्री अपनी कोमल अँगुलियों से गरम बरतन को पकड़ती है। यह सुनकर हाहुलीराय हम्मीर बोला "सुन रानी, हममें से कोई अकेला एक सामंत तेरे पिता के अस्सी लाख को मार सकता है। तू है किस फिक्र में!" तब पुनः संयोगिता बोली कि मेरे पिता के यहां बीस हजार बख्तरिये हैं, सोलह हजार निशान हैं, सत्तर हजार हाथी हैं और तीस लाख अन्य दुधारा और नेजेवाले सवार हैं और पैदलों की तो गिनती कौन करे ऐसे सेनासमूह में फँस कर तुम सौ सामन्त क्या करोगे सो मेरी समझ में नहीं आता। तब चन्द पुंडीर बोला हमारा सब दल बल देखा हुआ है। जब हम लोगों ने यह विचार कर दिया तब क्या ये सब ओसफ नहीं थे? यह सुनतेही संयोगिता की हठ की गांठ छूट गई।

नरनाह काका कन्ह महाशय तो सदा के मुँह तोड़ कहने वाले थे, उनसे यह सब बकवाद न सुनी गई, वे आंखें गुरेर कर बोले "थारो धिक्कार है ऐसे क्षत्री पुत्र को जो स्वामी की निन्दा कानों से सुनकर जीता रहे। और हमारे तुम्हारे रहते ये संयोगिता ऐसी बातें करे, इधर उधर का कोई भी हमारी शरण आ जाय तो तन में सांस रहते उस की रक्षा करने से कदापि न फिरे फिर ये तो अपने घर की बहू हैं।" उसने संयोगित से कहा हे पृथ्वीराज की अर्द्धाङ्गिनी जब तक कन्ह चहुआन के चोले में दम है तब तक तू किसी बात की चिन्ता न कर। मुझ से क्रम से सुर नर नाग असुर आदि सब परिचित हैं। मनुष्य की क्या काल की भी मजाल नहीं जो मेरी तलवार के सामने ठहर सके। हे सुन्दरी ! मै अपनी भुजाओं के बल से सारी सेना सहित कन्नौज को गंगा में बोर सकता हूं और तुम दोनों को दिल्ली के तख्त पर स्थापित कर सकता हूं। देख तो सही ये सौ सामंत ऐसे वैसे नहीं है इस भारत भूमि के श्रृंगार स्वरूप हैं इन अतुलित बली पराक्रमी और तेजस्वी सामन्तों के प्रताप से समार परिचित है। ये सौ तन पर एक मन है और स्वामिसेवा के लिये तो सदा हाथ पर सिर लिए हुए हाजिर रहते है इस लिये अबलापन छोड़ कर कलेजा पक्का कर और चलने को तय्यार हो जा।

गोयद राव गहलोत बोला "हाथ कंगन को आरसी क्या ? क्या अभी हम में से एक लँगरीराव को हाथ नहीं देखे। लड़ते लड़ते कट कर दो होगया पर फिर भी राज मत्री को मार गिराया और सारी असी लाख सेना की अकबकी भुला दी।' चन्दपुंडीर बोला 'सुनो पगानी सूरवीर घर घर नहीं होते और न कोई हथियार बाँध लेने से ही शूर वीर होता है। शूर स्वरूप अग्नि शिखा में ऐसे वैसे सहस्त्रों सिपाही पतिंगे की तरह आहुति होजाते हैं और किस को कहें चतुरंग निहरराय को देख।' यह सुनकर कनक राय बड़गजर बोला "ठीक तो है सुदर्शन चक्र के सामने काल का बल नहीं चल सकता। राम नाम के स्मरण करते ही पाप पहाड आप जल जाते हैं। जल का स्पर्श होते ही मैल धुल जाती है। मंत्र गुणी के सामने अनाई की कारवाई नहीं चलती। सिद्ध के सामने सिद्धियां बेकाम होती हैं इसी प्रकार अष्ट ग्रह और उड़गण समूह के रहते हुए भी राहु सूर्य्य और चन्द्रमा को ग्रस लेता है" तदनन्तर अल्हन कुमार बोला "सुनो रानी जिस शरीर में उस सर्व व्यापी परब्रह्म परमात्मा की चिन्मय शक्ति के विशेष भाग का वास या अभ्यास रहता है वही पुरुष वीर होता है और यही कारण है कि शूर वीर पुरुष तन त्यागने पर सांसारिक बंधनों से रहित हो ब्रह्म में जा मिलता है। अस्तु जब वह शत्रु समूह के सम्मुख समर में खड़ा होता है तब उनके बल और सिपाहियों की शक्ति भी उसी की शक्ति में मिलकर तन्मय होजाती है जैसे गंगाजी में नदी और इसी से शूर पुरुष सदा विजयी होते हैं। ऐसा विचारकर पक्की गांठ बांध लो कि-ये सौ सामंत जिनमें एक तुम्हारा भाई भी है तुम्हें दिल्ली पहुचा सकते है।

सलख प्रमार बोला "हे सुन्दरी जिस प्रकार उस अनादि अनत ब्रह्म का किसी ने पार नहीं पाया उसी प्रकार शस्त्र बल का भी कोई पार नहीं पा सकता। यह वीरविद्या रूपी मेघ मनुष्य तन रूपी वायु में मिला हुआ सदा घनघोर गर्जना किया करता है और जब पाखंड रूपी पाप का प्रचड प्रचार होता है तब यह मेघ की धारा बरस कर धरा पर प्रलय कर देता है सो आज यह पृथ्वीराज मेघ कन्नौज का प्रलय करेगा;' इस पर देवराज बगरा ने कहा "हा, और इस पंग सेना के प्रलय में सुन्दरी संयोगिता सहित राजा पृथ्वीराज इस तरह से सुरक्षित रहेंगे जैसे मृणाल का कदप।" तदनन्तर अल्हन कुमार बोला कि "हे सुन्दरी संयोगिता हम लोग पग दल रूपी समुद्र को अगस्त की अजुली होकर आचमन कर जायंगे, अथवा हम लोग कमलनैन कृष्ण की तरह अपने शस्त्र रूपी गोवर्द्धन की छाया में इन्द्र के समान

प्रतापी तेरे पिता कर के प्रेरित मूसलधार रूपी सेना समूह से तुझे वृज भूमि की भाँति बचा लेंगे।" तत्पश्चात् पल्लहनंद कूरंभ बोला "हम लोग बात की लाज पर प्राण देने वाले पानी वाले क्षत्री हैं, हमलोगों के पंचतत्व रचित तन पिंजर में पंच प्राण रहते हुए राजा को आंच नहीं आ सकती। यदि हममे से एक भी हो तो तुझे दिल्ली तक पहुँचा सकता है फिर यहां तो हमलोग सबके सब उपस्थित हैं तब चिंता किस बात की है। ऐसे ऐसे एक क्या हजार पंग दल क्यों न सजे पर हम सामंत लोग चलचित्त होने के नहीं।"

तब संयोगिता बोली "किसी गहन वन में एक तालाब था जिसमें नाना प्रकार के कमल फूले हुए थे। किसी एक कमल कली में एक रस लोभी मलिंद आन बैठा और संध्या समय पाकर वह कली बंद हो गई। उसने विचारा की चलो रात्रि तो मौज से कटेगी सवेरा होतेही उड़ चलेंगे। पर सूर्य्योदय होने के पहले ही दैवात् एक हाथी आया औरैं उस कमल कली को तोड़ कर निगल गया।" यह सुन कर दाहिमा नरसिंह बोला कि "रानी देर करना वृथा है आप चलें, जब पंग सेना के बीच में पहुंचना तब देखना कि क्या तमाशा होता है हम सामत लोग भागने वाले नहीं हैं।" सारंगराय बोला कि "हे पंगकुमारी हम लोग सदा खड्ग धार की नाव पर से संसार के पार होने को तय्यार हैं। पृथ्वीराज रूपी सूर्य्य चला होगा और हम लोग सुमेर शिखा की तरह अचल रहेंगे (संयोगिता की) तेरे किरण रूपी प्रताप से हजारों कायर लोग मारे पड़ेंगे। यदि कहीं राहु रूपी राजा पंग ने चहुआन कुल सूर्य्य को ग्राम करने की चेष्टा की तो हममे से एकही कोई उसे सपरिवार नष्ट कर देगा।" कनक राय रघुबंसी ने कहा कि "हम लोग निष्कलंक क्षत्री कुल में उत्पन्न हैं, हमारे (क्षत्री) कुल की यही लीक है कि बोटी बोटी क्यों न कट जांय पर पीछे फिर कर न देखना, यह तेरे दीन बचन हमारे कलेजे पर बज्र से लगते हैं। पंगराज हैं क्या चीज? हमारी तलवार के सामने यदि यमराज आवें तो उसे भी दाँतों पसीना आजाय।" मोहराय चंदेल बोला "संयोगिता तू बत्तीसो लच्छनों से युक्त एक कुलीन राजकुमारी है पर तुं मति की बड़ी ओछी है यही तुझ में एक ऐब है। कहते तो जाते हैं कि यह तो राजा जैचंद हैं यदि इन्द्र भी चढ़ आवे तो हम लोग उसका मुँह तोड़ दें। हमलोग सब एक सौ छै सामंत हैं और दिल्ली यहां से केवल पंचानवे कोस है। यदि प्रति कोस एक एक सामंत कटता जावे तो भी दिल्ली तक तेरे साथ को ११ बचे रहेंगे।" चंद पुंडीर बोला "संयोगिता हम लोगों को लो न समझ हम एक एक सामंत लाख लाख का मुँह तोड़ने वाले हैं पंग सेना रूपी घास के लिये हमको तू आग समझ। राजा पृथ्वीराज सारी पंग सेना को इस तरह छिन्न भिन्न कर देगा जैसे कि मखशाला में कृष्ण बलराम ने बड़े बड़े भटों को पटक पटक कर मारा था।"

तब निधुररय सब सामन्तों से और पृथ्वीराज से बोला कि "इन व्यर्थ की बातों में क्या रक्खा है कि हम ऐसे हैं वैसे हैं जो है सो आपही मालूम हो जायगा। अपने मुँह मियां मिठु भगवान न कहावें सौ बात की बात यह है कि चलना हो तो जल्दी करो नहीं तो दिल्ली की दिशा को अर्घ दो। मैंने तो सच्ची कही, न बनी हो तो जीभ मेरी काट डालो।" यह सुन कर सब सामतों की तरफ से गोयंदराय ने कहा कि "हे पंग कमभुज कुमारी देर करने का काम नहीं है उठो चलो जल्दी करो हम सब सामन्तों की यही बात पक्की है कि अपने जीते जी आप दोनों पर आंच न आने देंगे जैसे कुछ बन पड़ेगा तुम्हें दिल्ली तक पहुंचावेंगे"।

एक तरफ गुरू जनों की लज्जा और कुल की लीक का विचार कर दूसरी तरफ नेह का निर्वाह विचार कर संयोगिता सकुच कर ऐसे रह गई जैसे जांघ उघर जाने पर कोई कुल बधू लज्जा कर रह जाय। यह सोचने लगी कि मेरा तो पूर्व्व संस्कार पूरा हुआ। देवताओं के कार्य साधन के

लिये जो ऋषि का शाप सिर पर लिया था उसके मोचन का समय आ गया। पर हाय! पछतावा यही है कि मेरे कारणसंभरीनाथ चहुआन की भी मृत्यु होगी और ये सब अद्वितीय पुरुषार्थी सामन्तों का भी संहार होने वाला है। खैर जो हो पर इन लोगों की अचल कीर्ति अवश्य स्थापित होगी: तब राजा पृथ्वीराज ने कविचंद को कने मारी जिसे समझ कर वह बोला "इसका सोच विचार क्या करती हो मरना जीना तो लगाही रहता है किसी को भी इस संसार में एक सा नहीं रहना केवल सुकीर्ति की कहानी रह जाती है।" इस पर संयोगिता फिर विचारने लगी कि जब पहिले मैंने प्रण लिया तब नहीं सोचा। भाई बंधुओं ने बहुत धिक्कारा गुरुजनों ने समझाया पिता का यज्ञ बिगड़ा सारे जमाने में जिसके जो मुंह आया सो कहा। तब नहीं सोचा अब सोचने से क्या होना है। जो स्वामी को पाकर भी छोड़ देती हूं तो दोनों दीन से जाती हूं। यह विचार कर संयोगिता कटाक्ष से पृथ्वीराज की ओर देखती हुई उठ खड़ी हुई और पृथ्वीराज ने संयोगिता का बाँया हाथ पकड़ा। उस समय वे दोनों रतिकाम की जोड़ी के ऐसे थे।

यही सब आगा पीछा सोचते हुए संयोगिता की आखों में आँसू भर आए। तब तक पृथ्वीराज ने हाथ खींच कर उसे घोड़े के पुट्ठे पर बिठा लिया। घोड़े पर बैठी हुई संयोगिता और पृथ्वीराज ऐसे सुशोभित होते थे जैसे उच्चैश्रवा पर दो बाल सूर्य्य विराजमान हो। और आँख से उठी हुई घोड़े की पूँछ साक्षात् हिम के छत्र के समान देख पड़ती थी। संयोगिता के घोड़े पर सवार होतेही सामन्तों ने पृथ्वीराज को चारो ओर से घेर लिया। ईशान में काका कन्ह और केहर कंठीर, पूर्व्व में निड्डुरराय, अग्नि कोण में सलख प्रमार, लक्खन बघेला और जैतराव, दक्षिण में प्रहारराय तूंअर भोंहा चदेल और अल्हन कुमार, नैऋत में दलसिंह दाहमा और लक्खन बघेला, मरुत दिशा में बीरसिंह और लखन बघेला, उत्तर में गक्खर गुरेस, और पश्चिम में बलिभद्रराय कुरंभ और जामराय जदव थे। इस प्रकार व्यूह बद्ध होकर संयोगिता सहित राजा पृथ्वीराज चलने को हुआ और पंग सेना ने चारो ओर से उसे घेर लिया। उस समय राजा पृथ्वीराज साक्षात नारायण और संयोगिता लक्ष्मीस्वरूप थी क्यों कि उन्होंने उस समय समर सरोवर में स्नान करने वाले सहस्रों वीर पुरुषों को सहजही मुक्ति प्रदान की।

जब राजा पृथ्वीराज सुंदरी संयोगिता को साथ लेकर चलने लगा तब एक तरफ संयोगिता का अनन्य स्नेह दूसरी तरफ शत्रु से समर करने का उत्साह दोनों की खींचा तानी में पड़ कर उसका दिल अग्नि ज्वाला की झार से लसे हुए कमल पुष्प की भाँति व्याकुल हो गया। स्नेह और शौर्य्य दोनों के आन्दोलन से उद्विग्न होकर वह कभी तो अपनी प्रिया के चन्द मुख का चकोर बना रहता और कभी कट्टर सामंत मंडली को देख कर सिंह स्वरूप हो जाता था। इस समय पृथ्वीराज की दो स्त्रियों के खसम की सी दशा हो रही थी। मानो उसके हृदय का एक हाथ विषय वासना के हाथ में था और दूसरा लज्जा के। विषय वासना कहती थी दिल्ली को चल और राजपूती बाने की लज्जा कहती थी नहीं पंग दल को दलन कर ले तब चल। विषय वासना कहती स्वादिष्ट भोजन, सरस मसाले वाले पान, और नवयौवना सुंदरी संयोगिता का उपभोग कर। इस पर लज्जा कहती ऐसा नहीं ऐसा कर जिसमें लोक परलोक दोनों बने। इस कुभार्या के कहे में आने से जन्म भर की कमाई कीर्ति पर पानी फिर जायगा। लोग कहेंगे बड़े बहादुर और दबंग बने फिरते थे पर पंग दल से दब कर दुम दबा कर चल दिए। इस पर विषय वासना से इसके सिवाय और कुछ न कहते बना कि यह सब तूफान मेरी ही बदौलत है न।

लज्जा पुनः बोली राजा पृथ्वीराज यह अवसर घर में घुसने का नहीं है। ये झेला हिलाते हुए हाथियों के हेला, तबेला के तबेला तेज ताजी और उज्वल शस्त्र लिए हुए सैकड़ों सिपाही जो तेरी बाट

जाह रहेहैं उन्हें देख। यह सुनतेही पृथ्वीराज ने विषय विलास की ओर से मुंह फेर लिया और लज्जा को सादर हृदय में स्थान दिया। तब तक कविचन्द बोला कि "हे राजन्! इस विषय पंग दल के मुहँ मे पड़ना उचित नहीं है। सुकुमारी सुन्दरी सयोगिता को लेकर घर में मौज उड़ाओ।" वह सुन कर पृथ्वीराज ने उत्तर दिया कि कविचन्द यह क्या कहते हो इस समय मेरे सब सामत साथ मे है। मै पृथ्वीराज कैसा जो मार कर इन सब के धुर्रे न उड़ादूं। जाओ और पंग दल में पुकार कर कहो कि जिस पृथ्वीराज को तुम पकड़ना चाहते हो वह खुले मैदान खड़ा हुआ है जिसे सामर्थ्य हो वह चला आवे।

यह कह कर पृथ्वीराज सामंतों सहित व्यूह बद्ध हो धीरे धीरे चलने लगा और कविचन्द ने पंग-सेना के बीच में पहुँच कर कहा कि किसके लिये यह आडवर है इसपर उधर के नकीब ने उत्तर दिया कि कविचंद के साथ में राजा पृथ्वीराज छिपकर आया हुआ है उसी को पकड़ने के लिये यह सेना सजी है और उसी पर यह बाजे बज रहे है। तब कविचंद ने हाथ उठा कर कहा कि "वह राजा जैचद का यज्ञ विध्वस करने वाला राजा पृथ्वीराज सुदरी संयोगिता का पाणिग्रहण करके खड़ा है और वह पंग पुत्री विदाई में युद्ध का आभूषण माँगती है सो आकर उसे सतुष्ट कीजिए।"

यह सुनते ही सोलह हजार निशान बजाती हुई सारी पग सेना चारो ओर से इस तरह से घिर आई जैसे पुरवाई हवा का रुख पाकर भादों के बादल गड़गडा कर चढ़ आते है। उस समय और की तो क्या कहें महादेवजी की भी ताली खुल गई और वे सुर में सुर मिलाते हुए डमरू बजाने लगे कमठ के सटपटाने से समुद्र में हलचल मच गई, शेष नाग कुंडली कसने लगे, सारा ब्रह्माण्ड डगमगा उठा और ब्रह्मा सोच समुद्र में गोते मारने लगा कि क्या करूं क्या न करूं। जैसे रावण पर राम ने, महिषासुर पर शक्ति ने और शिशुपाल पर कृष्ण ने कोप करके चढ़ाई की थी उसी प्रकार पग दल ने पृथ्वीराज को घेर लिया। घोड़ों के टाप की धूल के कारण सूर्य्य प्रच्छन्न हो गया, धरती धसने लगी और दसों दनी दाँत पीसने लगे। पंग सेना के सवार सिपाहियो को कौन कहे उसमें तो इतने छत्र धारी थे कि जिनके छत्रों की छाया से कोसों तक भूमि आच्छादित हो रही थी। उनके शरीर पर की झिलमें गंगा जल सी झिल मिला रही थीं और उज्ज्वल टोप बग पांत को मात करते थे। कोई कोई गुरु गोरखनाथ की सी धगली और ऊपर से झुके खोल झिलमिली से सजे थे और उनके भीतर छत्तीसो बाने कसे हुए थे।

पृथ्वीराज के कविचंद को पंग सेना को प्रचारने के लिये भेजने के बाद बहुत कुछ सोच विचार करके वह विलास कुछ कहने को थी कि तब तक पग सेना ने आकर चारो ओर से घेर लिया और सु अवसर पाकर लज्जायुत बोली कि "हे राजा पृथ्वीराज! अब मुँह जली विषय वासना का मुँह भी न देखिए इस अवसर पर बढ़ बढ़ कर हाथ दीजिए और पल्ले भर भर कर सुकीर्ति लीजिए जिसमें आपका क्षत्री जन्म सफल हो।"

पग सेना के तबल निदुर ढोल और मृदग इस ताल से बज रहे थे जैसे नारद जी के नृत्य के लिये दक्षिण देश के उपग बज रहे हो। अलगोजे और बसियो के स्वर से तो सहजही मृग मोहित होते थे। गुडीर सब्बे की ध्वनि तो ऐसी मधुर मालूम देती थी जैसे शिव की जटाओं से पतित भागीरथी में अप्सराएं मज्जन कर रही हों। सुर सामंतों के चित्त में चौगुनी चाह उपजाने वाले सिंघ सहनाई और नफेरी के स्वरो से तो ऐसा जान पड़ता था मानो इन्द्र के अखाड़े में अप्सराएं नाच रही हों और इन सब स्वरो के ऊपर सिंगी नरसिंह रणतूर झाझ और घंटों की भीषण ध्वनि तो कलेजे कँपाती थी इन बाजों का शब्द सुन कर एक सहस शंखध्वनि वीरों ने भी जयकार किया। उनका ओज देख कर ऐसा मालूम होता था मानो बन्दरों की सेना ने लंका पर हल्ला बोला हो, पर इस समय बांका वीर पृथ्वी-

राज ही रघुकुल कमल राम की उपमा पाने योग्य था जिसने थोड़े से सामंतों से इतने बड़े पंग दल में हलचल मचा दिया है।

पंग सेना की हरावल में हाथियों की भीड थी जिन पर अच्छे अच्छे छत्रधारी छत्री सवार थे और उनके सिरों पर उज्ज्वल छत्र और स्वच्छ गुच्छेदार चौर दुर रहे थे। वे वायु के समान वेग गामी और पर्व्वत सरीखे भीमकाय सिंहलद्वीपी और दक्षिणी खेत के दतारे हाथी ऊपर को सूंड उठाए हुए बड़े जोर शोर से चिंघाड़ते गडगड़ाते और गर्जते थे और अंकुस की चोट खा कर चिक्कारते हुए बढ़े चले आते थे।

ऐसे हाथियों पर बाजू से बाजू सटा कर बैठे हुए बडे बड़े मस्त दीर्घ शरीर वाले राजा लोग साक्षात देवता से प्रतीत होते थे। बैरखों और कलसियों से सजे हुए हौदे और अम्बारी विमान से जान पड़ते थे और जहां तहाँ मोतियों के लच्छे बिजली से चमचमाते थे। उन सुमेर शिखर को भी सूंड से ढहा देने वाले मतवाले हाथियों के कपोलों से मद धार बह रही थी और झुंड झुंड भौंरे उनपर छत्राकार आच्छादित थे। उनके कुंभ पर जरतारी और रेशमी सिरी पड़ी हुई थी और भसुंड नाना प्रकार के रंग बिरंगे बेल बूटे से रंगे हुए थे। उन हाथियों के चलते समय ऐसा आभास होता था मानो वन और पर्वतों को लिए हुए बनदेव आ रहे हों। अधिक बकवाद कौन करे उस समय उनके आतंक से सुरों का भी शंकित होना संभव था।

इस प्रकार बहुत से हाथी घोड़े ऊंट और पैदलों की चतुरंगिनी सेना ने चारों ओर से बाजे बजाने और धरो पकडो का हल्ला मचाते हुए सौ सामन्तों सहित राजा पृथ्वीराज को घेर लिया। उस समय पंग दल रूपी समुद्र में शूर वीरों के टोप कमल कली से देख पडते थे और राजाओं के छत्र छतिया से छहरा रहे थे। अनेक भत बेताल निशाचर रूपी मगर मत्स्य कोलाहल और क्रीडा करते थे और शूर वीर रूपी हंस हँस हँस कर प्रसन्नता प्रगट कर रहे थे। निदान राजा जैचंद के आश्रित सब सरदारों और राव राजाओं ने उसके सम्मुख प्रस्तुत होकर पृथ्वीराज को पकड़ने के लिये बढ़ने की अनुमति चाही। परन्तु राजा जैचन्द ने मीर जमामखां और कमाम खां को आज्ञा दी कि पहिली वार तुम करो। स्वामी की ऐसी आज्ञा पाते ही बलवान मुसल्मान सेना चारों ओर से इस तरह से चढ़ चली जैसे चकवा चकवी में विछोह डालने के लिये रात्रि की अंधेरी झूमने लगती है। पंग सेना में लाल वैरखे बसन्त ऋतु में वृक्षों की नई कोंडें से लहलहा रहे थे। बाजे बादल से गरज रहे थे और कडखे और जागडों के गान तो ऐसे जान पड़ते थे मानो वीररस स्वयं शरीर धारी होकर मौज से तान लगा रहा हो। लाल नगों से जडी हुई उज्ज्वल लोहों की सिरी हाथियों के कुंभ पर ऐसी सुशोभित होती थी मानो हेम कूट को विदार कर पारस का पहाड़ लिए हुए गंगधारा बह रही हो और घोडों के सीस पर की उज्वल सिरी जान पडती थी मानों राहु ने सूर्य्य के कलेजे में कटार भोंक दी हो।

राजा जैचन्द के आज्ञानुसार रावण ने सारी सेना में हुक्म पुकारा कि पृथ्वीराज राजकुमारी संयोगिता को हरण किए लिए जाता है इसलिये पंगराज की आज्ञा है कि सारी सेना सुसज्जित होकर उसे पकडे। निदान सेना के इकट्ठे होजाने पर जब जैचन्द मीर जमाम और कमाम खां को आज्ञा देने लगा तब रावण ने निवेदन किया कि मीर दल की आज्ञा हुई सो ठीक ही है पर राव बनसिंह, राव बनबीर और केहर कटीर इन लोगों को भी आज्ञा दीजिए कि ये भी पसर करें। यदि सच पूछिए तो इन के ऐसा दूसरा वार छत्री तो है ही नहीं। तब जयचन्द ने उत्तर दिया बहुत अच्छी बात है पर तूने हमें यज्ञ के आरम्भ में क्यों न बताया पर खैर तब नहीं तो अब सही। वीरसिंह बघेला केहर कंठीर और नरावर सिंह इन लोगों को हुक्म दिया जाय कि ये सब सामन्तों सहित पृथ्वीराज को जीता पकड लावें कोई मारा न जावे। इस पर रावन ने उत्तर दिया कि महा

राज यह बात झूठी है मीठा मीठा हप्प कड़ुआ कड़ुआ थू। आप जानते नहीं हैं कि वह जुग्गिनपुर राव राजा पृथ्वीराज है और उसके साथ में ये रण बांकुरे सामंत हैं जिनके आतंक से दुनिया थर थर काँपती है। उन्हें पकड़ लेना दिल्लगी नहीं है। यह सुनकर जैचन्द ने और मीर जमाम और कमाम को ही हुक्म दिया कि तुम जाओ और पृथ्वीराज को पकड़ लाओ मुझे तुम लोगों का बड़ा भरोसा है। आशा है कि तुमलोग भी अपना नमक अदा करोगे।

रावण ने फिर जैचन्द से पूछा कि महाराज यदि ऐसा ही है तो कृपा करके आप स्वयं कमर कसिए तब ठीक होगा। कहावत है कि बिना अपने सींके सरग नहीं देख पड़ता। यह सुनकर जैचन्द झल्लार बोला रे कुटवार क्यों व्यर्थ हठ कर रहा है तेरा काम है चोर तस्कर लंपट और दुराचारियों को पकड़ना बाँधना त इन राजकाज के मामलों और युद्ध की बातों को क्या जाने। बिच्छू का मन्त्र जानकर सर्प के बिल में हाथ डालता है। तब रावण पुनः बोला कि अन्नदाता ठीक है। ऐसे ही तो सोच विचार बिना यज्ञ का ठान ठान दिया और कुछ खबर न की, जब उसने यज्ञ विध्वंस कर दिया और घर से आकर बेटी को लिए जाता है तब भी आप नहीं चेतते और सन्देसा खेती करवाते है। हाराज ऐसे मौके पर न चूकें। जाये लड़के को भा लक्कड़ समझ कर व्यवहार करना होता है फिर वह तो शत्रु है। इस पर जैचन्द ने गुस्से होकर उत्तर दिया कि चुप रहो मुँह में लगाम लगाओ, जाओ अपना काम देखो छोटे मुँह बड़ी बातें मत करो।

अपने आगा का आयसु पाकर दो दो दुम्बे खानेवाले खुरासानी खा खाडे खड खडाते हुए पृथ्वीराज को पकड़ने के लिये दौड पडे। उन खानों की खोपड़ियों पर जग जरा सा बाल था। वे सब झोल झाल अँगरखे और सूथने पहने हुए गीध की सी आँखे नेड़े सरीखे मुँह वाले बडेही भयानक भेष में थे। वे सब तुर्की फारसी और पश्तो बोलते थे और मालिक का हुक्म पातेही खाँडे की बिल्ली तौलते थे। राजा जैचन्द की सेना में ऐसे साठ हजार खाँ नौकर थे। अस्तु आगे आगे खानों की जमात थी और उस के पीछे बाघ सिंह बघेला और मेघासिंह बिजुली ये राजपूत वीर हाथियो की बीड़ लेकर चल रहे थे इस पंग सेना के बीच में वे सौ सामन्त ऐसे जान पड़त थे जैसे कोट के बीच में मुनारें खडी हों।

रावण फिर बोला महाराज आप जो सामन्तों सहित राजा पृथ्वीराज को पकड लेने की इच्छा करते हैं सो झूठ है। इसका परिणाम यही होगा कि आपकी सारी सेना कट मरेगी। महाराज व्याज के लालच में मूल न गमाइए। भारी भीड़ भड़क्का देखकर डरपोक डरते हैं सामन्त सच्चे सूरवीर हैं वे जो सब दल को मार काट कर निकल जांयगे और आप हाथ मलते रह जांयगे। केहरि कंठीर ने भी कहा कि जो रावण कहते है उसमें सन्देह नहीं। ये लोग महा कहर हैं इस तरह सीधा उँगलियों घी नहीं निकलेगा। उन से युद्ध करने की आज्ञा दीजिए। शत्रु पर विजय पाने का यही एक उपाय है दूसरा नहीं। यह सुनकर कन्ह कमधुज्ज भी बोला कि स्वामी पर संकट पड़ने के समय सेवक को उचित है कि वह साम दाम और भेद का विचार करके स्वामी को उचित सलाह दे। जो ऐसा न करके मुँह देखी बातें करता है वह सात जन्म नर्क में पडता है। इस समय आपके सब सुभट युद्ध की इच्छा करते हैं सो आप आज्ञा दीजिए। यह सुनकर कन्ह और कंठेर राजा जैचन्द को जुहार करके आगे बढ़ चले, पीछे से चतुरंगिनी सेना से घिरा हुआ राजकुमार कदपकेतु भी था। चहुआन दल रुपी बादल को बिदारने के लिये पगमेना पवन स्वरूप होकर चढ़ चली।

पंग दल के और सब सरदार और सहायक राजा लोग तो जहां तहां अपने अपने मोरचों पर थे परन्तु कंदर्प के समान सुदर राजकुमार कंदर्पकेतु पर्वत के समान भीमकाय पल्हनराय, चदेरी का राजा पचाइन, कर्णाट देश का किल्हना, नरेश कन्ह चन्देल, भीषणाइक वांका वीर बग्गरी राय, इन्द्र के समान तेजस्वी इन्द्रराय, वीर वीरसिंह राय, मालवी पचाइन राय, मोरी देवदत्त दाहमा सिरदार और सारी

मुसल्मान सेना का अफसर खुरासानखा-ये सरदार राजा जैचन्द की खास अर्दली में थे।

शेष ने जब धरा को शीस पर धारण किया तब वह धरनीधर कहलाया और भार अधिक होने से जब उसने कुडली कसी तो उसका कुडलेश नाम पड़ा, गिर से भूमि गिर न पड़े इस भय से जब वह अह अह करने लगा तो अहि कहलाया, डर कर नाग की शरण लेने से नाग, चित्त भ्रम होने से चिक्षक और कंपायमान होने से कंपम कहलाया, इस प्रकार पग सेना के दबाव से शेषनाग के अनेक नाम पड गए परन्तु ऐसे सबल पग दल को देख कर सामन्त लोग मन ही मन हँसते थे और एक दूसरे से परस्पर कहते थे कि यारो समर मे पार होने के सुपथ और विपथ केवल दो रास्ते है। विपथ यह है कि धन धरती और स्त्री के लिये सोते जागते सदा मरना मारना विचार रहे और दूसरा सुपथ यह है कि स्वामी के काम के लिये सदा सिर हथेली पर लिए रहे। यही दूसरा पथ सर्व श्रेष्ठ है क्योंकि इसमे सदासुकीर्ति मिलती है। यह क्षत्री जाति का कैसा अनोखा धर्म है कि चोले मे दम रहते यह मरने मारने मे नहीं चूकती।

सहज भयानक अर्द्धरात्रि के समय रणतूर और भेरियों का भीषण नाद करते हुए पग दल ने सामन्त समूह को घेर लिया। उस समय शूर वीर पुरुषों के चेहरे बाल प्रभाकर एवं चमीकर से चमक रहे थे। जैसे प्राप्तामिद्धि और वयःसन्धिप्राप्त बाला के मुख मडल पर एक विलक्षण चमक आजाती है वैसेही इस मुअवसर पर वीरों के चेहरे खिल रहे थे। और जैसे हजारा कमल पर या हाथी के गुलगुलो पर भौर आच्छादित रहते है वैसेही अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित पग सेना के सिपाही सामन्तो पर झुक पडे। पग सेना मे बजते हुए निशान सहनाई और नफीरी के सुरपर अप्सराएं मोहित होती थी। घटो की टन टन और नगाडो की गड गड मे दिल गड बड होते थे। भैंस की सींग के बने हुए सदबग की मरधा, भोपों और तबल की टंकार मे अषाढ़ के बादलों की बहार याद आती थी। रावण की आज्ञा पाकर जिस समय सब सिपाहियों के दल इकट्ठे होने लगे उस समय ऐसा जान पड़ता था मानों वीर रस की नदिया उमड कर समर समुद्र से मिलने जा रही हों। सिपाहियों के अस्त्र शस्त्र तरगे थीं और सुकीर्ति की आशा ही उस नदी की फेन थी। ऐसी जन्म जन्मान्तर के कर्म्मबन्धनों से मुक्त करदेनेवाली नदी के आतंक से दिग्पाल डगते और सुरसमूह और गन्धर्वादि उसे देखकर प्रसन्न होते थे।

राजा जैचन्द की फौज का जोड़ तोड देख कर अबाल वृद्ध युवा सब यही कहते थे कि आज पृथ्वीराज का पानी इधर नहीं बच सकता। जैचंद के दल के हाथी तो ऐसे जान पड़ते थे मानो पर्व्वत पैर वाले होकर उसकी सेवा में उपस्थित हुए हों। पूरन राव सोलंकी हम्मीरराव प्रमार और गोयद राव बघेला ये तीन राजपूत सरदार पैंगदल की दरेसी के अफसर थे। अस्तु जब हाथी घोड़ों सहित सब सेना सज कर दुरुस्त होगई तो उक्त दोनों सरदार सारी सेना को लेकर जैचंद के सम्मुख हाजिर हुए और उसकी आज्ञा सिर पर रख कर वे लोग सारी सेना सहित धर्ग मारो पकड़ो बांधो जाने न पावे आदि भयानक रव करते हुए पृथ्वीराज को पकड़ने के लिये बढ़ चले। उस समय आकाश मे सूर्य्य का रथ स्थिर होगया। देवता लोग तमाशा देख कर स्तभित हो रहे और सारी वसुधरा थकर रम में सन गई।

निदान जब अल्ला अल्ला का हल्ला करता हुई सात हजार म्लेच्छ मडली ने सामन्त सेना पर धावा कर दिया तो उधर से हरहर करता हुआ गोयद राव गहलौत घोड़े पर से उतर पड़ा और दोनों हाथों मे दो तलवारें ले कर मार काट करते हुए मुसल्मान दल मे इस तरह से पिलपड़ा जैसे सुदर्शन चक्र दैत्य एवं दानव दल को विदार रहा हो। वीर गोयद राव के मारे मुसल्मानी दल में हलचल पडगया, अल्ला अल्ला की जगह हाय हाय होने लगा, बड़े बड़े वीर जादे कट कट कर पट गए और बेजान होकर यों ही जवानी के अरमान भरे जवान

मे चल बसे। हौतं हाते मीर हमाम खा का सामना हो गया। उसने जुड़ते ही गोयंद राय के सीने पर तोमर का वार किया और चाहा कि कमान मे सिर बिधा कर उसे जमीन चुमा दे परतु गोयद राव छटक कर अलग हो गया। इस पर उसने बालीक का वार किया, हो मर्मभेदी हाथ खा कर भी राजपूत वीर मीर हमाम पर ऐसा झपटा जैसे सिहनी पर सिह, पर उसने उसी बीच में नेजा कलेजे पार कर दिया। इस पर गोयद राव केवल कुत का एक वार कर सका कि मीर ने तलवार से उसका माथा उड़ा दिया। सर तो गिर गया पर रुड ने कटार का पार करके मारिया को मारही गिरगया और चार मीर और भी मारे। इतने मे आरास खा का जखर कलेजे मे लगा और गहलोत वीर का रुड भी शान्त हो गया। इस तरह से एक पहर पर्यन्त अतुल पराक्रम करके जब गोयद राय गहलोत स्वर्ग को चला गया और मीर मेना सीना सहलोर होकर आगे को बढ़ी तब इधर से पज्जन राय ने बिल्ली खोली। उसके मुकाबले मे उधर से पाच भी मुसल्मान सिपाही छट निकले। यह देख केहर राय, कटेर प्रमार, पीपा राय पडिहार, मोहनराय चन्देल, भप कच्छवा राय चालुक्क और दाहिमा नरसिह राय ये पाच सामन्त पैदल होकर पज्जुनराय की सहायता पर चले। निदान उधर से मुसल्मान जवान मुसल्लिम इमान यानी दीन इस्लाम पर दृढ़ हो कर और इधर से ये राजपूत जातीय लज्जा मे रजित हो कर एक दूसरे को ललकार ललकार और प्रचार प्रचार कर खाडे तलवार कटार छुरा छुरी बिछुआ और मेल साग शक्ति आदि से दोनो में घमासान युद्ध हुआ। अन्त में पज्जन राय का सिर कटकर अलग जा पड़ा पर धड़ ने वह पराक्रम किया कि जिसे देख कर देवता भी उसकी स्तुति करने लगे। उसने क्षण भर में सारी खुरासानी सेना को छिन्न भिन्न कर दिया।

पज्जन राय के पार होते होते दिन का तीसरा पहर व्यतीत हो गया। इधर से बाघ राय बघेला और मीर कमोद खा विषम कोलाहल करते हुए सामंत समूह पर टूटे। उन्हें आड़े हाथो लेने के लिये इधर से चद पुडीर ने हथयार सम्हाले और मार मार पुकारता हुआ फटकारता हुआ वह पंग दल में इस तरह से पिल पड़ा जैसे मतवाला हाथी किसी स्वच्छ जल से भरे हुए कमल बन के सरोवर मे पैठ पड़े। हजारों सीस को मारते काटते हुए जब वह मीर कमोद खा के आगे पहुचा तो उसने दूर से देखते ही पुडीर पर भाला चलाया। इधर से इसने भी भेल चलाई। दोनो के वार एक दूसरे पर भरपूर बैठे और उसी दम वे दुनिया से चल बसे। चद पुडीर के परते परते मध्य भगवान अस्त होने को हो गए पर दो दल में से बलहीन कोई भी न रहे। चद पुंडीर के गिरते ही इधर से कूरम राय ने और उधर से बाघ राय बघेले ने बाने सम्हाले और दोनो लगर से उछल कर एक दूसरे के सामने आगए। पहिले तो दोनो तलवारो से लड़ते रहे परन्तु जब दोनो की तलवार टूट गई तो उन्होने कटार से युद्ध किया और दोनो एक दम एक दूसरे का उदर वारपार फोरफार हथयारो के वार करने लगे। घड़ी भर रक्त भर जाने से वसुधरा लाल हो उठी और यो गिनी रक्त पी पी कर हकारें लेने लगी। खच खचा खच मार करते हुए पज्जन राय का भरन मीर से सामना होगया। भरन मीर ने जुड़ते ही पज्जन राय के कलेजे मे नेजा पेल दिया जिससे पज्जन राय मूर्छित हो कर गिर पड़ा परन्तु गिरते हुए भी भरन मीर पर तलवार को एक वार करता गया। पज्जन राय को गिरता देख कर नरसिह राय दाहमा भरन के सामने आया। भरन ने पहिले तो उस पर बाण चलाया पर बाण को जब उसने न माना तब उस ने तलवार का वार किया। इधर नरसिह का भी वार साथ ही हुआ जिससे दोनो का माथाही बाग न्यारा हुआ। नरसिह राय का सिर तो गया पर दोनो अपने अपने बाँए हाथ एक दूसरे के गले मे डाल कर इस तरह से रह गए जैसे बहुत दिनों से बिछुड़े हुए दो मित्र मिल रहे हो। कूरम राय के मरनेपर उसकी

सगा भाई पल्हमिंह खेत में उतर पड़ा और पग दल बदल में बरसते हुए अस्त्र शस्त्र रूपी जलधारा की जरा भी परवाह न कर के करारे वार करने लगा, बरन यों कहना चाहिए कि पंग दल रूपी बदल जो पृथ्वीराज रूपी प्रजा को बोर देने के लिये आया था पल्हमिंह ने आड़े आकर उसकी बौछार भी पृथ्वीराज पर न आने दी। पज्जन राय उसके भाई और पुत्र इन कूरम कुल कमल सपूत राजपूतों ने ऐसा पराक्रम किया कि पग सेना के अगणित सिपाही काट कर पाट दिए, अन्त में आप भी टुक टुक हो कर कट मरे। उनका हंसा तो रवि मंडल को भेद कर भगवान चिन्मय ब्रह्म में लीन होगया और उनके शीश शिव जी ने रुंड माला में पोह लिए।

कह चुके हैं कि चंद पुंडीर के मरने तक तीसरा प्रहर हो चुका था और जब पल्ह सिंह भी मर चुका तो पज्जन राय का पुत्र मलै सिंह चार तलवारें बांध कर पग सेना में पिल पड़ने को उद्यत हुआ। कूरम कुल के दो चार भाई बेटे और भी उसके साथ में थे, वे भी चार चार तलवारें लेकर लपक पड़े। इस किशोर वयराज कुमार सिंह ने ऐसा अद्वितीय पराक्रम दिखाया कि और तो क्या पग सेना के लोग भी उसकी प्रशंसा करते थे। वह दमक कर जिस सवार पर हाथ देता वह मय जिरह बख्तर के कट कर कड़ी सा लुढ़क जाता था। ऐसे सघटित पग दल में मलै सिंह का घोड़ा इस तरह दौड़ा दौड़ काम देता था जैसे भरे तालाब में मछली तैरती हो। पग सेना के बीच में पहुंच कर उसने अपने साथियों से कहा कि भागो एक दिन कभी मरना है फिर क्षत्रियों को ऐसी मौत भाग्य से मिलती है। बहुत जिएंगे सौ वर्ष जीएंगे फिर तो मरेंगे न। मनुष्य की आयु सौ वर्ष की मानी गई है तिसमें से कुछ समय सोने में गया कुछ लड़कपन और बुढ़ापे में गया कुछ सुख दुःख में गया अंत में है मरना, तब ऐसा मरना किस काम का कि खाट पर पड़े पानी को तरस तरस कर मरें—ईश्वर ने राजपूत जाति में जन्म दिया है हाथ में तलवार दी है और ऐसा सुअवसर भी सामने है आओ इस तरह से मरें कि हिन्दू मुसलमान सब जान जाय। कौन देखता है कि कौन किस का बाप और कौन किस का बेटा है। यह कह कर वह दो हाथ दुधारे चलाने लगा और शत्रु से नाको कड़ची सी काटने लगा। उसके मारे मारे पग सेना में हल चल मच उठा। पग सेना के सिपाहियों को मालूम होता था कि एक नहीं कई एक मलैसिंह मार कर रहे हैं। वह एक ही हाथ में कई एक जबरदस्त जवानों की गरदनें काट देता था उसकी वीरता देख कर इधर से सामन्त उधर से और सरदार सब उसकी तारीफ करते थे। घायल पज्जन राय भी पुत्र का पराक्रम देख कर फूला अंग नहीं समाता था अस्तु जब मलै सिंह के शरीर में अत्यन्त गहरे साठ घाव आचुके तब वह मूर्छित हो कर गिरपड़ा और तब तक भी सूर्य भगवान भी अस्ताचल की ओट में हो गए। इस प्रकार से जब सूर्य्य स्वरूप राजा पृथ्वीराज पर पंग दल का ग्रहण पड़ने के समय कूरंभ-कूल-कमल पज्जुन-पुत्र मलै सिंह युद्धक्षेत्र के शस्त्रसरोवर में स्नान भुजाओं का दान देकर संसार से बाहर हो गया। तब रावण ने हाथियों के आगे बढ़ाए। जाने की आज्ञा दी। रावण की आज्ञा पाकर ज्योंही महावतों ने हाथियों के कुंभ पर अंकुश लगाया कि वे पर्व्वत के समान दीर्घ काय मदान्ध दंतार दिग्गज कूकने चिक्कारते और गड़गडाते लंबी लंबी सूंडें हिलाते हुए सामन्त मंडली को दबाने के लिये बढ़ चले। यह देख कर इधर नरनाह कन्ह चहुआन ने तलवार पकड़ी और उन हाथियों के झुंड पर अगराज की तरह वह झपट पड़ा। अस्तु काका कन्ह तो पैदल दल को छोड़कर एक दम हाथियों का मुंह मोड़ने पर उद्यत हुआ और सारंग राय सोलंकी रावण के मुकाबले में सवार और पैदलों की मारकाट करने लगा। काका कन्ह उन सैकड़ों हाथियों से इस तरह से लड़ रहा था जैसे कोई पहलवान अखाड़े

म खड़ा होकर अपने पट्ठो को जोर कराता हो। कभी लपक कर किसी के कुभ को फलीदा सा फार देता। कभी हिये में सेल पेल कर विट्ठा सा विदार देता था। कभी भसुंड से सुड काटकर अलग कर देता और कभी दोनो दात पकड़ कर मूली से उखाड़ लेता था। कन्ह की तलवार का घा खा कर वे बज्रवत शरीर वाले हाथी मेघो की तरह गरजते थे। जब कभी काका कन्ह सिर पर मेल की अनी पेल कर जोर से ठेलदेता तो थर थर कापता दो पैर से खड़ा हुआ हाथी ऐसा भासित होता मानो हनुमान ने द्रोणगिरि या कृष्ण ने गोवर्द्धन को उठा लिया हो। काले काले हाथियों के कुंभ पर कन्ह की तलवार भादों के बादलों मे बिजली सी विलीन होती जान पड़ती थी। शरीर के घावों से रक्त के झरने झर रहे थे, हाथियों की सुंड मगर सी लोटती और ढाले कछुए सी उतराती फिरती थी, वीरों के सिर कमलकली से सोहते और गिद्धों की चोंच में दबी हुई आंतों की माला मृणाल सी लहराती थी। धन्य है। ऐसे समर सरोवर मे सच्चे स्वामीसेवी राजपूत बच्चे ही पैर कर पार हो सकते है। ऐसे वैसे दिल के कच्चे तो किनारे पर जाने मे हिचकते है। इधर कन्ह तो हाथियों के ठेले में कहर कर रहा था उधर मारग राय सोलकी सिपाहियों के सिर तन से जुदा कर रहा था। वह वीर जिस वीर की खोपड़ी पर हाथ देता उसका खोपड़ा मय टोप के खरबूजा सा कट जाता था, कंध पर हाथ पड़ने से कटोवा सा कट जाता था और भडार पर हाथ लगने से हलुआ सा बिथर जाता था। इतने में कई एक सिपाहियों ने मिल कर मारग राय को मार लिया, पर मजा यह हुआ कि कन्ह के पराक्रम के कारण हाथियों का दल विचल उठा जिसमे पगदल को भारी हानि पहुची, सैकड़ो सिपाही दब कर चूर होगए।

इतने में अँधेरा अधिक होगया इसलिये हाथियार चलना बन्द किया गया। उस अष्टमी की लड़ाई मे पग दल के सात हजार मुसल्मान सिपाही, दो हजार घोड़े और बहुत से हाथी मारे गए और वहीं पर चाहुआन के केवल सात सामन्त काम आए। धन्य रे सामन्तो, इसमें सन्देह नहीं कि तुम इस भारती माता के सच्चे सपूत और राजपूत कुल की मर्य्यादा स्वरुप थे तुमने थोड़े से होकर भी इतने बड़े पग दल को इस तरह से दहला दिया जैसे तूफान तरनी को हिलाता है। तुम तो अकथ पराक्रम कर के चल बसे पर तुम्हारी सुकीर्ति ससार में अचल होकर बस रही है तुम लोग डेरों की तरफ हरे भी न और वृक्ष मे जा मिले। तुम्हारे शीश शिव ने रुडमाला में पोह लिए।

रात्रि को युद्ध बद होने पर जब लाशें उठाई गई और नरसिंह राय दाहिमा, गोइन्द राय गहलौत, चद पुडीर, मारग राय सोलकी, पल्हन राय सामला, मुरमले सिंह, आदि कूरमों के शव लाकर रक्खे गए तो पृथ्वीराज रोता हुआ पज्जून राय से लिपट गया। गोयद राय भी अब तक सिसकता था। एक तरफ राजा पृथ्वीराज पछताता और दूसरी ओर जैतराव सिंह पीट पीट कर रोता और कहता कि हाय दैत्य-दल-गंजन चामंड राय को क्योंकर छोड़ आए। राजा पृथ्वीराज तो अपने मृत मामियों की लाश पर लोट लोट जाता था पर और लोगों को दीन दुनिया की खबर न थी। वे अपनी ईसी धुनि में मस्त थे कि कब विहाना हो और कब हम भी पग दल पर हाथ साफ कर के अपने पराक्रम का कौतुक दिखावें।

इधर जब राजा जैचद पर जाहिर हुआ कि अपनी सेना के महल्ले सिपाही मारे गए पर सामत समूह मे से केवल सात सरदार बच रहे है तब क्रोध और लज्जा ने उसके दिल मे खलबली डाल दी। उसने गवन को बुला कर आज्ञा दी कि आज आधी रात तक तो चाँदनी है बाद इसके रात अधेरी होगी उसी समय तुम कन्नौज से दस कोस तक बराबर कोस कोस के फासले पर चौकी बिठा दो और इधर इन लोगों को भी इस तरह से घेर रहो कि कहीं से निकलने को राह न पा

सकें। स्वामी की ऐसी आज्ञा पाकर रावत ने इसी हिसाब से चौकी बिठा कर घेरा डाल दिया गया हो। राजा पृथ्वीराज बाराह और उसके सौ सामंत अकेले डङ्कारों में किसी तरह कम न थे जिन्होंने अपने शस्त्र रूपी बीसों में पग दल रूपी दल को बिदार कर चहला मचा दिया।

ज्योंही भगवान चन्द्रदेव अस्ताचलगामी हुए कि इधर सामंत भी चौकन्ने हो बैठे। उन्होंने राजा पृथ्वीराज को बीच में दे लिया और आप सब आस पास हो गए। जैसे शरद ऋतु में सब तारागण चन्द्रमा को घेरे रहते हैं, समुद्र बड़वानल को उदर में रखता है, कमल की पखुरी पराग को घेरे रहती है और स्वरूप को जैसे स्नेह लपट रहता है उसी प्रकार सामंतों ने राजा को अपनी मंडली के बीच में रक्षित रक्खा। निस्संग आधी रात के समय जब कि मित्र द्रोही पुरुष का हृदय आपही आप उबलने लगता है पथिक की वधू अपने पति की राह पर आंख लगा कर रह जाती है युवा पुरुष युवतियों को आलिंगन कर उनका सारा शृंगार बिगार देते हैं और मारम के जोड़े सरोवरों में कल्लोल करते हैं वैसेही सब सामंत व्यूह बद्ध हो कर आगत मरण मुहूर्त के लिये प्रोग्राम बनाने बैठे।

निडुरराय कमधज, भोंदाराय चन्देल और जैन राय प्रमार राजमंत्री आदि सब लोग एकत्र बैठ कर परस्पर बातें करने लगे कि भाई जो कुछ अनुमान किया था वही आगे आया, क्या कहें जिस दिन से कैमास मरा उस दिन से सभी बातों का काया पलट हो गया है। खैर और तो जो हुआ सो हुआ पर भाट के कहे में आकर राजा ने यह तो ऐसा कुकर्म कमाया कि न जमीन के रहे न आसमान के। इतने में और भी दस पांच सामंत आए और कविचंद भी आगया। कविचंद ने कहा अब जो कुछ होनी थी सो तो हो चुकी, आगे को क्या करना है सो बिचारना चाहिए और मेरे बिचार में तो यही आता है कि जैसे कुछ बन पड़े सो राजा को तो यहां से बेदाग निकाल दिया जाय और आप लोग पग दल को दलन कर अक्षय कीर्ति लाभ करें। इस समय वीरों के लिये वह गति सहज है जो योगियों को हजारों वर्ष के परिश्रम से नहीं मिलती। निदान यह सल्लाह पक्की हो चुकने पर सबने गुरु राम से कहा कि वह जाकर राजा तक इस बात की खबर करे। गुरु राम ने पलका के पहरे पर बैठे हुए काका कन्ह के कान में जाकर कहा कि रात तो जैसे तैसे गई सवेर क्या होगा?

यह सुनते ही काका कन्ह झल्लाकर बोला कि कल्ह क्या होगा इसके लिये झकां तुम और भट्टा जिसके साथ राजा आया है। सच है पज्जून राय कहते थे सो वही बात हुई। इस अमुर बुद्धि ने भाट के कहे में आकर वह काम किया कि कुछ कहते नहीं बनता। इस आंघट की नाव को ईश्वर ही पार लगाने वाला है। हम तो यह जानते हैं कि जहां सूर वीरों के थट का जगमोहन बना है, मुकीर्ति के कलम रक्खे हैं, युद्ध विद्या की चेतवर लिखी है और पृथ्वीराज और संयोगिता लक्ष्मीनारायण स्वरूप में विराज रहे हैं ऐसे देवालय में वीर जय करते हुए शत्रु के सीसों के पुष्प चढ़ा कर मांज में पूजा करें। हमारी क्या पूछते हो हमें तो दोनों हाथ लड्डू है। कन्ह की ये सब बातें संयोगिता ने सुन लीं और उसने पृथ्वीराज को जगा दिया। पृथ्वीराज शैय्या से उठकर क्रोध में कांपता हुआ बाहर निकल आया और वहां जा पहुंचा जहां सब सामंत जुटे बैठे थे।

सामंतों ने पृथ्वीराज से कहा कि हम लोगों की यह सल्लाह पक्की हुई है कि आप तो संयोगिता सहित दिल्ली को चलें और हम लोग एक एक कर के पग दल का मोरचा रोकें। ऐसा करने से एक तो आप बेदाग बच निकलेंगे दूसरे हमारी अक्षय कीर्ति स्थापित होगी। महाराज सत्त डिगने से पत जाती है, पत जाने से अपयश होता है, अपयश से अधर्म बढ़ता है और अधर्म से नर्क होता है, परन्तु हम लोग अपने सत्त अर्थात् स्वामीसेवा के धर्म को त्याग कर संसार में अपयशभाजन नहीं हुआ

चाहते। इस समय हमारी सब की यही आन्तरिक इच्छा है कि हमारा स्वामी हमारी बाहु बल रूपी नौका पर चढ़ कर पग सेना रूपी समुद्र में पार हो जाय। आपके प्रताप से हम लोग जीवन के सब सुख भोग चुके है, अब इसे तिलाजुली देकर आपको दिल्ली तक पहुचाना ही हमारा अभीष्ट है। यह सुन कर पृथ्वीराज बोला क्या तुम्हारी अकल पर पत्थर पड़ गए है जो मुझे मरने मे डरवाते हो, बिना मौत के कोई किसी का मारा नहीं मरता। काका साहब आप इसी घमड मे भूल रहे है क्या, जो आपने भीमदेव को मार लिया, मै हिन्दू मुसल्मान दोनो दीन का राजा राजा पृथ्वीराज हूं जिसे तुम आज अपना आश्रित बनाना चाहते हो। यह सुनकर सामन्त बोले कि सूर वीर सदा स्वामी की शरण में होते है पर जब स्वामी के सामने जाकर कुछ बनी बिगड़ी की विनती करनी हो या गांव का पट्टा लिखाना हो तब स्वामी काल दुकाल मे रक्षा करे। जब कोई अनाकचीनी आपत्ति ऊपर आन पड़े तो स्वामी रक्षा करे, पर युद्ध के समय तलवार पकड़ कर जब खड़े होते है तब राजा राजपूतो की शरण मे होता है।

इस बात पर चाहुआन और भी चिढ़ गया। वह बोला कि मैंने देश भर के दुर्गम दुर्गों को जीतकर अपना करलिया, बड़े बड़े राजा लोग मेरी आन मानते है, नौखड पृथ्वी पर मेरा यश जाहिर है। मै अपने मुह मे कहाँ तक क्या कहू मैंने अच्छो अच्छो की नाकों चना बिनाकर छोड़ा है और आज मै भाग कर निकल जाऊं। देखू कौन भागता है? तब सामन्त बोले महाराज यह बात नहीं है कि हमलोग आप पर अपना अहसान चढ़ाते हो। जैसे सिंह वन को रखता है और वन सिंह को रखता है, शेषनाग पृथ्वी को रखता है और पृथ्वी शेष को रखती है। कुलनि कुलवधू की रक्षा करते है और कुलवधू कुल की लीक को पालती है, मेह मे जल बरसता है और मेह जल मे बनते है और जन्म मे मरन तथा मरन से जन्म होता है इसी प्रकार राजा गवनो को और गवन राजा को रखते है, यह परस्पर व्यवहार की बात है इसमे अनग्य या पै की बात नहीं है। हे भानराय भट्टी और हमीनखा को और पहाररांय को शरण में रख कर उनका प्रतिपालन करने वाले, नौअर तत्तारी पहाररांय और मेवाती मुगलों को दड देने वाले और दिल्ली के दुर्ग की रक्षा करने वाले राजा पृथ्वीराज, इस समय मौका आया है जो कुछ हमलोग कहते है उसपर ध्यान दीजिए और आज्ञा दीजिए कि हमलोग अपनी सलाह के अनुसार ही अरि मे अड। उन सब सामन्तो की माहम भरी बातें सुन कर कविचद मनही मन कहता था बाहरे सपूत राजपूत! मौत से सब डरते है पर आज से तुमलोग मौत के पीछे पड़े हुए हो। एक सबल शत्रु को मेल के लिये अपना कलेजा खोल रहे हो, आपने स्वामी से कहते हो कि आप जाइए और आप इहा से तिल भर भी नहीं हिलना चाहते। वाह तुम्हे मरजाना मंजूर है पर अपने कुल की लीक से हटना मजूर नहीं। एक बार नहीं हजार बार धन्य है राजपूतो। तुम्हारे सिवाय और किसका ऐसा जिगरा होसकता है।

सामन्त लोग पुनः बोले वर्णोत्तमा अल्पदाना पचो मे परमेश्वर बसता है। कहा है पाच पच मिल कीजे काज, हारे जीते होय न लाज, सो इस समय हम सब पचो की यही सलाह है कि आप तो यहा से जरूर कुशल निकल चले और हमलोग एक एक कर के कट मरें। हे गहाबदीन गोरी का गर्व चूर कर हिन्दुस्तान की हद रखने वाले, भीमदेव सोलकी का महारथ और रणश्रम के यादगों की रक्षा करने वाले राजा पृथ्वीराज, बात इतनी है कि यदि यहा पर कुछ बन बिगड गई तो जैचद की आन रह गई और जो आप सयोगिता सहित बेदाग बचकर दिल्ली जा पहुचे तो आपकी बात रहेगी और जैचन्द की हेठी हो जायगी।

पृथ्वीराज बोले कि सुनो सामतो जैसे मच्छी लज्जा से कुलवधू की, फौज से राजा की, बाणी से कवि की, ध्यान से योगी की, आपत्ति मे मित्र की, और आत्म अनर बोध से ज्ञान की परख होती है

वैसेही ऐसे अवसर पर सूर वीरों को परम्ब होती है। फिर तुम यह बात कैसे कहते हो कि तुम लोग लड़ो मरो और मै भाग जाऊं। जैसे मेघ वायु मे, पृथ्वी जल मे, लोभी संचय से, दानी देने मे, साहसी मत्त से और मागने वाले कुछ पाने मे प्रसन्न होते है उसी प्रकार सूर वीर पुरुष मरने का मौका पाकर प्रसन्न होते है। इसलिये इन्ही सिद्धान्तों पर दृढ होकर पगमेना मे युद्ध करते करते मरना ही मुझे स्वीकार है। इसपर सामतों ने कहा कि ऐसा हम चाहते ही है इसीपर कमर कसे खड़े है पर अपनी तरफ भी तो देखिए यदि ऐसा हुआ तो घर घर लोग तालियां देंगे। इस समय अपनी बात तो इसी मे है कि आप सयोगिता को लेकर क्षेम कुशल दिल्ली जा पहुंचे।

पृथ्वीराज पुनः बोला कि भाइयो इस क्षत्रीतन का मरने मे ही मगल है इसीमे इसका सुयश है इसीमे इसकी मुक्ति है और इसीमे इसकी सब करनी कथनी है। एक क्षत्री पुत्र के लिये समर मे मरने मे अधिक सुखा की बात और क्या हो सकती है। फिर दिल्ली को पहुचने की आशा मे शत्रु को पीठ दिखाना कितने कलक की बात है। यह जीवमात्र काल की डाढ मे दबे हुए है पल भर का भरोसा नहीं फिर जान बूझ कर अपकीर्ति का कलक क्यो मत्थे पर लो। माया मोह लोभ क्रोध इर्षा आदि विकारों मे बाछित इस जीवन मे हजारों सुख दुख झेलने पड़ते है इस लिये इस देह को तोड़ना ही भला है। और सुख भी क्यो न हो और हजार वर्ष भी क्यो न जिए पर पग मे जग लेने मे न हटेंगे, न हटेंगे।

इस पर सामत बोले जैसे इच्छा आपकी पर हम लोग तो मर बेल कर सुख करने है अपने जीते जी आपका अनिष्ट नहीं देखा चाहते। तब पृथ्वीराज बोला कि भाइयो सुख दुख सब अपनी-अपनी होनी करनी के अनुसार होता है भाई बेटा सेवक सखा कोई किसी के सुख दुख के भागी नहीं हो सकता और इसी तरह कोई किसी के मले बुरे का सग अपयश मे भी हिस्सा नहीं ले सकता। मुझे तुम्हारे बल पराक्रम पर भी पूरा भरोसा है इसीसे कहता हू कि पग सेना मे लड़ो लड़ते लड़ते तुम्हारे मर जाने पर यदि मेरा कुछ हो भी तो तुम्हे कोई क्या कह सकता है। मरना मारना हम क्षत्रीपुत्रो का व्यवसाय है इसमें किसी का क्या, पर छाती फुला कर बातें न करो। देखो भाइयो यदि हम लोग इस तरह से लड़ कर मर भी गए तो मगल काव्य के समय वीर मातायें हमारी तुम्हारी करनी के गीत गा गा कर अक्षत उछालेंगी और जो भाग गए तो आधी रात्रि के समय पर्य्यक पर पड़ी हुई कामान्ध कामिनी भी हमे घृणा करेगी। आहा! जिस सुकीर्ति के निमित भीष्म ने मृत्यु मागी, दधीचि ने हाड दिए, दुर्योधन ने सपरिवार प्राण दिए, राम वनवासी हुए, राजा दिलीप ने सिह को देह का मास दिया, मै पृथ्वीराज आज उस कीर्ति के लिये मुख फेर जाऊ। नहीं कभी नहीं, सौ क्या सहस्र वर्ष क्यों न जिऊ।

तब सामत बोले धन्य महाराज, सिर नहीं कपार है हमलोग भी तो यही बात कहते है। यहा पर यदि आपकी जरा कुछ भी घट बढ़ बात हो गई तो राजा जैचद की कीर्ति पर मानो कलमा चढ़गया। कृपा करके हमारी कही मान कर आप दिल्ली को चलिए, हमलोग न हटेंगे, पगदल को काट कपट कर पाट देंगे और हमलोग भी तिल तिल होकर कट मरेंगे। यह सुन कर पृथ्वीराज बोला रे सामतो तुम बार बार यही बात कहते हो। तुम्ही क्षत्री हो तुम्ही को बात की आन है मै कुछ भी न हुआ, यहा स्वामी सेवक की बात नहीं है। एक क्षत्री तुम हो, एक क्षत्री मै हू। दिल्ली को जाऊगा तो पगदल को तहस नहस करके, नहीं तो नहीं। हरे कृष्ण क्या ऐसा मौका बार बार मिलेगा। तुम लोग मेरी फिकर न करो अपनी करनी पार उतरनी होती है। जैसे पुराना वस्त्र त्याग करने वाला वस्त्र पहनते है, उसी प्रकार मर कर नवीन शरीर प्राप्त होगा इसमे आगा पीछा क्या सोचना। यह

सुन कर सामंत लोग निस्वास परित्याग करके बोले कि महाराज हम लोगों के मुंह में कुछ और और पेट में कुछ और नहीं है। हम लोग मन कर्म बचन तीनों से क्षत्रियत्व के सत्य व्रत पर आरूढ़ है अब आप हम लोगों को स्वामिद्रोही न जानिए। तब कविचंद बोला कि सामंतो सोच न करो सोच करने से बल पराक्रम और साहस सब नष्ट होते हैं। साहस हीन होने से कर्तव्य और कीर्ति मे बट्टा लगता है और कीर्ति गई तो जानो कि सब कुछ गया। इस लिये अब वह यतन बिचारो जिसमें राजा का भी रुख रहे और बात बनी रहे।

इसी तरह जिरह होते हुवाते रात्रि चली गई पर राजा ने किसी की मांख न मानी। वह गुस्से से भरा लाल लाल आंखे किए हुए मरने पर ही उतारू रहा। दरबार बरखास्त होते समय फिर सामंत बोले कि जैसे सर्प का विष मंत्र के पास होता है उसी तरह हम सेवक होकर स्वामी के बश में है। हमें अपने धन जन गेह दारा पुत्र परिवार आदि का कुछ भी मोह नहीं है सब कुछ देख सुन चुके है, इस समय केवल यह आशा शेष है कि राजा पृथ्वीराज क्षेम कुशल घर जा पहुंचे। इस पर पृथ्वीराज बोला कह तो चुका, न जाऊंगा। क्यों फिर फिर वही बात कहते हो। अचल ध्रुव चाहे चल हो जाय, समुद्र मर्य्यादा लाघ जाय. सातो समुद्र सूख जांय और चद्रमा चांदनी चाहे छोड़ दे पर यह पृथ्वीराज जैचंद को पीठ दिखाकर दिल्ली जाने वाला नहीं। यह सुनकर सामंत लोग सन्न रह गए किसी ने कुछ कहे सुने बिना अपना अपना रास्ता लिया और जहां तहां मोरचों पर सब जा डटे।

उसी समय जामराय यादव ने नरनाह कन्ह से कहा कि भाई सवेरा होते होते जो होगा सो देखा जायगा। इस समय राजा के सुहाग की रात्रि का सुख लेने का प्रबन्ध करो। जहां घरनी वहां घर, जहां घर वहां घरनी। वैसे तो सबके ब्याह हुआ ही करते हैं पर यह ब्याह बड़ा मंगलमय है इस लिये आज ब्याह की पहिली ही रात्रि को सुख सौनारा हो जाना उचित है। यह सुन कर कन्ह ने सब सैनिकों को हथियारों से दुरुस्त होकर पृथ्वीराज के शिविर के चारों ओर चौकस चौकना रहने की आज्ञा दी और बारह सामंतो को घोड़े पर सवार कराके चौगिर्द गस्त करने पर सहेज दिया और इधर जामराय यादव से कहा कि आपने बहुत अच्छा सोचा पर आपही जाकर राजा से कहिए मैं न बोलूंगा उसके जी में आवे सो करे। जिस दिन से कैमास मरा उस दिन से तो उसकी मत मारी गई है सब काम उलटे सीधे करता है, बिना किसी की सलाह लिए हुए भाट के कहे में आकर यहां आन पहुचा। पर हमें क्या हम तो इस चोले में सांस रहने अपने बस भर उसकी रक्षा करेंगे और शत्रुओं का सत्यानाश करेंगे, आगे आग जाने लुहार जाने।

कन्ह को रिसाना हुआ समझ कर जामराय उस के पैरों पर गिरपड़ा और बोला बस बस आप कुछ न कहें, आप केवल इस तरफ की डाट फाट रक्खें, मै जाता हूं। यह कहकर जामराय राजा पृथ्वीराज के पास पहुचा और उससे बोला कि आज ब्याह की पहिली रात्रि है सो आप सुख सेज सोइए इधर की फिकर न कीजिए। इधर हम लोग चौकस चौकना हैं। पृथ्वीराज तो यह चाहता ही था, जाम राय की बात सुनकर उसका जी घी हो गया, सारे दिन समर के परिश्रम का पता न पड़ा, सयोगिता को गले लगा लेने की अभिलाषा में मस्त होकर पंग दल को तिरस्कार करता हुआ प्रिया के समीप पहुचा। उसकी नजर से नजर मिलते ही काम का शायक कलेजे पार हो गया जिससे और सब बातों की कौन कहे वह अपने तक को भूल गया।

दोहा।

सुधि भूली संग्राम की, भूली अपनि देह।
जो न भयो बस पग दल, भयो सो बाम सनेह॥
नयन चरन कर मुख उरज. विकसत कमल अकार।
कनक बेलि जनु कामिनी, लचक निवारन भार॥
रवनि रवन मन राज भय, भयो नैन मन पग।
मगन भो संग्राम तजि, मेट्यो प्रथम रस जग॥

तब मुगज रत्नसिंघ सिरखि,हँसि आसन मुख दिट्ठ।
रचिय काम सयनह मुवर. दिय आज्ञा भर उट्ठ॥

कुल्ला कर के ऊपर से बीड़ा चबा कर राजा पृथ्वीराज तो संयोगिता के साथ सोने चला गया और इधर सब सामन मोरचे बाँध कर चारों कोने चौकस चौकी पर बैठ गए। राजा के शिविर से दस हाथ के फासले पर कविचंद स्वयं पहरे पर बैठा। निड्डुर राय, जामराय यादव, बलभद्रराय सिंह पामर, मामला सूर, नरनाह कन्ह, राजमंत्री जैतराव, हाहुलाराय हम्मीर और जघारा भीम उत्तर दिसा में, पहार राय तोमर, मलख प्रमार, हाडा हमीर के दोनों भाई, पीपा परिहार और कुछ धीरवर्गी राजपूत पश्चिम दिशा में. मलख का पुत्र लोहाना आजानबाहु, प्रसंग राय खींची दक्षिण दिशा में और सेना सहित शेष सब सामन पूर्व दिशा में पहरे पर बैठे।

इधर राजा पृथ्वीराज तो सामंतों के पहरे में संयोगिता के साथ सुखशैय्या पर सो रहा था पर उधर पगराज को कब कल पड़ती थी। उसके दिल में तो इस बात की चुलबुली पड़ी हुई थी कि कब सवेरा हो और कब पृथ्वीराज पर धमक कर के उसे पकड़ लिया जावे। उसने रात भर आँख न मचकाई। घड़ी घड़ी धावन भेज कर इस बात का समाचार लेता रहा कि कहीं मोरचे के सिपाही तो गाफिल नहीं हैं। बरन पाच हजार सिपाहियों की जमात के साथ वह स्वयं चौकी देखता फिरता था। इस जैचंद की जलेब में जितने असवार पैदल थे सब के साथ जलती हुई मशालें आगे आगे चलती थीं। इसी तरह पहरे पर भी हजारों मशालें जल रही थीं। उस समय ऐसा मालूम होता था मानो अभिमन्यु के मारे जाने पर महाभारत का दृश्य सामने आगया हो। राजा जैचंद मोरचे मोरचे स्वयं कहता फिरता था कि खबरदार पृथ्वीराज भागकर निकलने न पावे अगर निकल जायगा तो जिसके मोरचे पर से जायगा उसका सपरिवार नाश कर दूंगा।

इस तरह से राजा पृथ्वीराज की आरती सी उतारते जैचंद को फिरते फिराते सारी रात्रि व्यतीत हो गई और पूर्व दिशा में भास्कर भगवान के बालक अरुण की अवाई की सफेदी दिखाई देने लगी। उसी समय पंग सेना में हुक्म पुकारा गया कि पूर्व दिशा से आक्रमण कर के पृथ्वीराज को इसी समय धर लिया जाय। स्वामी की ऐसी आज्ञा पाकर पग सेना के निशान बजने लगे, ढोल मृदंग भेरी नफेरी सहनाई और बाभियों के सुरों से दिगाएँ गूँज उठीं। जोगड़ा लोग सिंघुणिया के सुरों में उत्कर्ष तान से कड़खे गा गा कर वीरों के चित्त चौगुने चग पर चढ़ाने लगे, इसी तरह से हलकप मचाई गई पंग सेना समुद्र की सी बाढ़ चली आती थी परन्तु राजा पृथ्वीराज को अभी कुछ खबर भी न थी। वह संयोगिता के गले में हाथ डाले हुए बेसुध सो रहा था। इस समय सामन सेना की तो वह दशा हो रही थी कि न कुछ कहते बनता था न चुप रहा जाता था।

अतएव अवसर जान कर कविचंद ने विरदावली अलापी जिसे सुनते ही राजा पृथ्वीराज चट से उठ बैठा। उसने आज्ञा दी स्नानों के लिये गंगा जल लाया जावे। तदनुसार कुछ सिपाहियों के साथ दो पेसादार गंगा जी को गए। यद्यपि बीच में पंग सेना के पहरेदारों ने बहुत कुछ आपत्ति की पर उन्होंने गंगाजल लाकर राजा के सामने हाजिर कर दिया। तब राजा पृथ्वीराज ने शौचादि से निश्चिन्त हो गंगाजल से स्नान कर के वस्त्र बदले और ईश्वर स्मरण करते हुए हथियार कसे। तब तक सब सामन और सिपाही लोग भी अपने अपने जगी अताने बताने से सज कर और व्यूहबद्ध हो कर हाजिर हुए. राजा ने रकाब पर पैर दिया और कविचंद ने उसे आशीर्वाद दिया। संयोगिता भी साथ चलने को तय्यार थी अस्तु पृथ्वीराज ने घोड़े पर सवार होकर उसका हाथ पकड़ा और वह भी राजा पृथ्वीराज के पैर पर पैर देकर घोड़े के पुट्ठे पर जा बैठी। उस समय दंपति के मुखमंडल अस्तमित भानु और उदित राका के समान शोभित होते थे। इस तरह से घोड़े पर सवार होकर और व्यूहबद्ध वीर सामंतों के बीच में होकर पृथ्वीराज बाग उठाने

बाला ही था कि हल्ला गुल्ला मचाते हुए पंग दल ने आकर घेर लिया। यह देख कर पृथ्वीराज ने कमान हाथ में ली और वह सड़ासड बान चलाने लगा। पृथ्वीराज के चलाए हुए एक एक बाण में सात सात हाथी आर पार होते जाते थे। निशान हाथियों की भीड़ तो हट गई पर उधर से चार हजार जवान नंगी तलवारें लेकर दौड़े।

उधर पग दल की व्यूह इस प्रकार से थी। सब से आगे अर्थात् हरावल में दो हजार मतवारे हाथियों का हेला जिन पर नागगोर जंबूर और हथनार आदि सजे हुए थे। उनके पीछे अश्वारोहियों की भीड़ लिए हुए बलिभद्र जंगम और केहर कडीर थे, उनके पीछे पैदल और सवारों की गंगा जमनी जमात से घिरे हुए राजा जैचंद स्वयं थे। तस्करों की सहकारिणी रात्रि का अवसान हो चुका था पर अभी अंशुमाली भगवान या उनके वाहक अरुण के दिग्दर्शन नहीं हुए थे कि पग दल ने जंगी निशान बजाते और धरो मारो पकड़ो का रव मचाते हुए सामन समूह को आ दबाया। पंग सेना का यह आतंक सांखुला सूर से न सहा गया। वह किरण सरीखी उज्वल तलवार सूरत्व हुआ पंग दल पर टूट पड़ा और अरि पंग दल रूपी अंधेरे को ध्वंस करके उनके रक्त प्रवाह से बिना अरुण के उसने अरुणोदय कर दिया। सामन सेना के चक्रवाक वीर इस अरुणोदय को देखकर तन मन से प्रसन्न हो गए पर कुमुद रूपी पंग का मुख मलीन पड़ने लगा और उसके दल स्वरूप दल कम कर संपुटित होने लगे। सच्चे सूर चहुआन के कर स्वरूप वीर उदिग पगार ने एक पहर पर्य्यन्त अतुल पराक्रम किया। उस समय के समय भेरी नफेरी सहनाई और संख की लै में मिल कर तलवारों का झनाझन सुर ऐसा सुहावना मालूम होता था मानो स्वर्ग के देवालयों की झालरें झनझना रही हों। योद्धा में वीर अत्यन्त तेज तुरंग तड़प तड़प कर [illegible] हाथियों के कुंड कूकने और चिंघारने थे और मौर्य्य मदमाते सूर वीर किन्नर से नाचते हुए झुमक झुमक कर हथियार चलाते थे। जब कब कोई दोनों एक साथ वार करके दम की दम में पार हो जाते थे। जब कब दो एक दूसरे के सामने गटा में गटा डटा कर खडे रह जाते थे, एक तलवार का वार करता तो दूसरा ढाल पर ले लेता, वह सेल चलाता तो यह उसे हाथ से पकड कर ठेल देता, किसी के शरीर पर हाथ पर हाथ पड़ने पर भी केवल पुष्पवर्षा सा होता, और किसी का सर नट का सा बेटा उछल कर दूर जा गिरता. किसी का मुंड मार मार बकता और रुंड कहर करता फिरता था। कोई अशक्त होकर रक्त में लथ पथ पड़ा मछली से तरफराता था पर कोई गिर भी पड़ने पर फिर में उठ उठ कर लड़ता था इस प्रकार में वीर उदिग पगार ने मार क्या झेला मानो तलवार की धार में मोक्ष का द्वार खोला क्योंकि उस समय सहस्रों सूर वीर कोई तो आकाश में मुस्करानी हुई अप्सराओं के हिये का हार हुए और कोई उन्हें भी निदर कर परम पद को चले गए।

भूनिंग राय के पुत्र उदिग पगार ने इस प्रकार एक प्रहर पर्य्यन्त विषम पराक्रम कर के पग दल का कलेजा दहला दिया। उसके युद्ध में योद्धा तो बहुतेरे कटे परन्तु एक दूसरे पर खड़क खड़क कर हजारों नंगा तलवारें और सेलें टूट फूट कर धूर में मिल गईं। एक घड़ी दिन चढ़ने पर उदिग पगार कुछ सुस्त पड़ते देख पड़ा, इसपर सूर वीर सांखुला सूर खांडा लोल कर झपट पड़ा और उसने भी आँख मींच कर वह हाथ साफ किए कि जिसका कौतुक देख कर देवता भी मुंह बाकर रह गए। घरी भर में हजारों हाथी घोड़े ऊंट कट कट कर पट गए लोथ पर लोथ अट गई और लोहू के कुंड भर गए, और इतने बड़े पंग दल में हलचल मच गई। जहाँ तहाँ हाय हाय होने लगा और योगिनी तुंमर और नारदादि पंचम स्वर में विदुरिए अलाप अलाप कर पृथ्वीराज की जै बोलने लगे। एक प्रहर दिन चढ़े इधर में वीर उदिग पगार और सांखुला सूर

खेत रहे और उधर पंग सेना का बनसिंह नामक एक सरनाम सरदार खेत रहा। पंग दल में वह पुरुष बहादुर था अस्तु उसके मरते ही राजा जैचंद छाती पर हाथ रख कर रह गया।

बीर बनसिंह एक विशेष रणकुशल सेनानायक था उसके रहने इन सौ सामंतों को भी नाकों दम आगया था ये लोग जिस रुख पर जाना चाहते थे उसी तरफ बनबीर पहिले बन्दोबस्त कर रखता था परन्तु जब वह मारा गया तब सामंतों सहित पृथ्वीराज बराबर आगे बढ़ने लगा। यह देख कर जैचंद ने स्वयं सेना का व्यूह बाँधा, सोलह हाथी, सात हजार मुसल्मान सिपाही आगे करके जैचंद सामने चला और आठ हाथी और कुछ सेना के साथ पहाड़ राय और आठ हाथियों सहित अपनी निज की फौज के साथ चंदेल के चंदेल राजा के भाई ने बाएं बाजू से धावा किया। यह देख कर अत्तानाई जो अब तक बाईं तरफ था झट बमक कर दहिनी तरफ आ गया। इस प्रकार व्यूह बद्ध होकर भादों के मेघों की तरह गर्जना करते हुए पर्वत के समान बड़े बड़े मतवाले हाथियों को आगे करके पंग दल ने पुनः पृथ्वीराज पर धावा किया। इतने हेर फेर में पृथ्वीराज मैदान में दम कौम डट गया था परन्तु पग दल ने फिर से जा दबाया और जैचंद ने हाथ उठाकर कहा कि भला पृथ्वीराज भाग कर निकलने न पावे। जैचंद का हाथ उठा हुआ देख कर पृथ्वीराज ने जो एक तीर मारा तो उसके घोड़े को आकर लगा जिससे वह बेकाम होकर उसी दम गिर गया।

पृथ्वीराज का ऐसा पराक्रम देखकर जैचंद के चित्त की चिन्ता चौगुनी हो गई एवं उसकी अग्नि वत क्रोध ज्वाला में आहुति पड़ गई। जैचंद घोड़े से उतर कर हाथी पर सवार हो गया और अपने सिपाही और सामंतों सहित पृथ्वीराज पर इस तरह से झपटा जैसे हरिनों के समूह पर, हजार झार हो कर दावानल झपटता है। हा इस भाट रूपी बांस की गांठ से निकली हुई दमारि ने अस्सी लाख उनको और भी उनको जलाकर भस्म कर दिया। नवमी के दिन पहर भर दिन चढ़े जिस समय पंग दल को सामंत समूह पर दुर्मग यमर हुई उस समय चतुरानन चिंताग्रस्त होकर सोचने लगा हा! आज मेरी बरसों की कमाई मिट्टी में मिली जाती है जो दम मास गर्भ में रख कर बड़े यत्न से पाल पोस कर इतने बड़े किए गए थे वे दम के दम में बेदम होने जाते हैं और यही नहीं वे मेरी सृष्टि से निकल कर उस शक्ति में लीन हो जाते हैं जहां मेरा भी गुजारा या चारा नहीं है। उस समय राजा जैचंद स्वयं लाल आंख किए हुए बाण वर्षा कर रहा था। और पकड़ो पकड़ो कहते हुए पृथ्वीराज को धर लेने के लिये ऐसा उन्मुक्त हो रहा था जैसे महाभारत में भीम दुश्शासन के लिये। इन पग की क्रोध रूपी हुताशन में पृथ्वीराज साक्षात घी के समान था और सौ सामंत अन्य सांकिला की सामग्री के समान थे।

पृथ्वीराज को पकड़ लेना पग दल का अभीष्ट था और सामंतों का कर्तव्य था पृथ्वीराज को बचाना। अस्तु इसी अपनी अपनी बात पर डटे दोनों दलों के वीर जान को हथेली पर लिए हुए बेकसर होकर पराक्रम कर रहे थे। ये सामंत लोग तो उस बन तट रूपी पग दल में बिजली से तड़प रहे थे। कोई हाथी के पुट्ठे पर हाथ देकर उसे कटीला सा काट गिराते थे। कोई मय घोड़ा सवार को चीर कर चार कर देते थे और कोई पैदल दल को दलन करने में दत्तचित्त थे। इसी तरह मारा मार होते होते उस समर भूमि पर रक्त का सरोवर भर गया और लोथों के अटब लग गए। रक्त पी कर योगिनी मांस खाकर पलचर और गीत गा गा कर भूत बेतालादि थके गए पर वीर सामंतों के हाथ न थके. पहर दिन चढ़े से दो पहर होते होते पंग दल में से जैसिंह सूर, पहाररराय गुजर, कन्हराय, नन्हराय और रनवीरराय बगरी ये पांच नामी सरदार काम आए। इन लोगों के मरने से पंग दल का बेग फिर से कम पड़ गया सब लोग जहां तहां ठहक कर रह गए और पृथ्वीराज ने पुनः आगे

बढ़ने के लिये बाग उठाई। यह देखकर जैचंद ने बड़े आवेग में आकर कुछ कुवाच्य कहते हुए अपने सैनिकों को बड़े जोर से ललकारा। तब तो पंग दल ने तमक कर बड़े ताव से घेरा डाला और पगराज की आज्ञानुसार तब तक शंखधुनी भी सज कर आगए।

उस दिन नवमी रवि वार को मेष का सूर्य्य और सिंह का चंद्रमा था। जगनाम योग चित्रा नाम योगिनी और रोहिणी नक्षत्र था। मंगल और बुध तीसरे थे केन्द्र का बृहस्पति था, सूर्य्य चन्द्रमा और शुक्र गोचर पड़ते थे और राहु पर उनकी पूर्ण दृष्टि थी। इस योग में युद्ध होते होते जब दो पहर हो गए तो पंग दल मनहार होकर झिझक रहा और सामंतों सहित राजा पृथ्वीराज पुनः आगे बढ़ने लगा तब जैचंद ने अपनी सेना को पद्मव्यूहाकार रचकर उसके आठ दल किए। एक दल का मालिक मुसल्मानी सेना का नेता धरि खा हुआ दूसरे सौ हाथियों की बीड़ लेकर सूर्य्यवंशी मल्हन नरेश चला तीसरे दल हजार राजपूतों के बीच में कदर्प कुमार था तिसके पीछे तिरहुत का राजा केहर कठेर, बीच में देवगिरि का राजा भान राय यादव, तिसके बाद देव दहिया तानारी था, उसके पीछे मदनग मोरी और उसके बाद अत्यन्त बलवान भीषम खदारी था। इन लोगों ने लपक कर जब सामंत समूह को फिर से घेर लिया और चारों ओर से एक बारगी पमर करके चहुवान को बांध लेना चाहा तब इधर से मालराय चदल, भानराय भट्टी, भुआल धवलेस, वीर सामला सूर और पहार राय तुअर इन पांच सामंतों ने तलवारें पकड़ीं और अपने भूत वैतालों के दल बल सहित चौसठ योगिनी और बावन वीर इनकी सहायता पर खड़े हुए। जिस समय वे असल पांचों वीर पांच राजपूत प्राणों का मोह छोड़ कर अष्टदल कमलवत व्यूह बद्ध पगदल को दलन करने के लिये बदल कर खड़े हो गए, उस समय उनके ओज से भरे हुए चेहरे उदित अंशुमाली से दग दमाते थे अब वे ऐसे सुशोभित होते थे जैसे लाल मुख वाले पांच सुग्गों ने समुद्र की थाह लेने का प्रण किया हो। उनकी उस शोभा पर मनुष्य क्या आकाश में स्थित देवाङ्गनाएं भी बार बार बलि जातीं और उनकी बलैयाँ लेती थीं।

परन्तु जब उन पांच सामंतों ने तमक तमक कर हाथ देना आरंभ किया तो वे उस समुद्र समान पंग दल में बड़वाग्नि बनगए। लहरों के समान बेग से बढ़ते हुए पंग दल को उन्होंने उसी दम जहाँ का तहाँ रोक कर उन्हें एक भी कदम आगे न बढ़ने दिया। और बात की बात में शत्रु सेना के सहस्रों सवार और पैदलों को काट कपट कर पाट दिया। उन उच्चवंशी उच्चसाहसी पांच राजपूतों के ऊंचे हाथ देख कर अंतरिक्ष वासी देवता समूह वाह वाह और उनके अघातों से पृथ्वी पर पतित शत्रु हाय हाय की पुकार करते थे। राजा जैचंद की आज्ञा पाते ही पंग सेना के सिपाही उन पांचों पर बिजली से लपक पड़े, इतने दुरद बदर में जुट पड़े और हीं हीं हींसने ठीं ठीं ठीं देते और फुर फुर फुर करते हुए घोड़े चारों ओर से टूट पड़े। खड़ खड़ बख्तर खड़कने लगे, तलवारें झनाझन झालरें सी बजने लगीं, सना सन तीर सनसनाने लगे और लवालब लोहू भर गया। वे बचाव की आशा से रहित हियाव और चाव भरे पांचों राजपूत बच्चे दाव पर दाव करते घाव पर घाव सहते पीछे पांव देने का भाव भी न करते थे। इसी तरह झिलते मिलते कटते काटते मरते मारते वे पांचों भी पैचन्द को प्राप्त होकर इस असार संसार से पार हो गए। उन के कलेवर पृथ्वी पर पतित होते देख कर देवताओं ने स्वस्तिवाचन करते हुए प्रसन्नता से पुष्प वृष्टि की पर अप्सराएं आपस में झगड़ने लगीं, एक कहती उसे मैं वरूंगी दूसरी कहती नहीं वह मेरे योग्य है पर वे पांचों इन्हें यों ही लड़ते झगड़ते छोड़ कर उस आनन्दमय चिदानन्द में लीन हो गए जहां जाकर फिर इतर प्रपंचों में एक दम भवन्मा ही टूट जाता है। वाह रे वीरो खूब पराक्रम किया दुनिया को

बतला दिया कि सच्चे स्वामिभक्त राजपूत बच्चे ऐसे होते हैं। राजपुतो देखो तुम्हारा यही कर्त्तव्य है कि बान पर प्राण देना पर जीते जी बान हाथ से न जाने देना।

उक्त पाचो सामंतों के खेत रहते रहते साढे अठारह घड़ी दिन व्यतीत हो चुका था अन्य सामंतों सहित राजा पृथ्वीराज भी कुछ मैदान जीत गया था। उन पाचो के खेत रहते ही कैहर कठौर हाथियों का हला पीछे छोड़ कर केवल सवार और पैदल दल लेकर झपटा और सामंत समूह को उसने जा लिया। यह देखते ही पृथ्वीराज ने फारन घोड़े की बाग फेर दी और उसके साथी सामंत लोग भी हार ज्वारी की तरह बदल कर झपट पड़े। राजा पृथ्वीराज ने कंध से कमान निकाल कर उस पर बाण संधाना। उस समय शहाबुद्दीन का काल वह कमान ऐसी भासित होता था मानो दूज की जुन्हैया उदय हो रही है। कमान पर बाण चढाकर पृथ्वीराज ने संयोगिता से कहा कि देख मै इस बाण से तेरे पिता को मार कर मोर झकझट की जड मिटा देता हूँ इस पर संयोगिता कापती हुई हाथ जोड़ कर बोली कि इस समय मेरे कहने से उन्हे क्षमा कर दीजिए यह सुन कर राजा पृथ्वीराज ने अनमने हो कर बाण उतार लिया और जान लिया कि सचमुच यह स्त्री पूरी कलहनागिनी है।

परन्तु इस ओर अधिक ध्यान न देकर पृथ्वीराज ने घोड़े को एड़ लगाई। वह तत्ता तुषार पग सेना पर इस तरह से तड़प गया जैसे घने घने बदलों में सौदामिनी दमदमाती है। उधर से हा हा लगे लगे कह कर पंग दल का बढना हुआ और इधर से राजा पृथ्वीराज की कमान से छूटे हुए बाण से अच्छे अच्छे जबरदस्त ज्वान पत्ते से फट जाते थे घोड़े घाव खाकर मछली से तड़फड़ाते थे और हाथी पीठ दिखाकर चिक्कारते हुए भागे जाते थे। परन्तु इस बाण वर्षा की बौछार सहते हुए भी पगदल आगे बढ़ आया मियाँहियों ने नंगा तलवार लेकर पृथ्वीराज पर हमला किया, वरन एक तलवार का बार भी पृथ्वीराज के सीने पर बैठ गया तब तो उसने नमक कर तलवार निकाली और इस पराक्रम से कहर करने लगा कि पंग सेना के छक्के छूट गए उस दैत्यबंशी राजा पृथ्वीराज ने दम भर में हजारों पैदल सवार और हाथी काट गिराए। पृथ्वीराज जिस पैदल पर हाथ फेरता था मानो उसकी आ बनती थी।

सन्ध्या को युद्ध बन्द होने पर फिर सब सामन्तों ने राजा पृथ्वीराज से कहा कि महाराज! हमें अपने जीते जी यह हाल देखना पड़ा। दो घाव आपको लगे दो घाव आपके घोड़े को लगे. और एक घाव सुन्दरी संयोगिता को लगा। हमलोग आपके चरण छूकर बार बार यही विनती करते हैं कि हमारे आखों देखते आप कुशल से दिल्ली जा पहुँचिए। हाय! हम लोगों के लिये इससे अधिक दुःख और लज्जा की क्या बात हो सकती है कि हमारे देखते रानी संयोगिता को और आपको घाव आजाय लड़ने में हार जीत हुआ ही करती है और दूसरे की हिंसा करना दुर्जन लोगो का सहज व्यवसाय है अस्तु इस ओर ध्यान न देकर आप दिल्ली को जाइए यहा हम सौ है सो समझते रहेंगे।

कहावत है कि कोई बजावे कमाही पर ऊधौ नाचै बेमाही, सो गति पृथ्वीराज की थी सबने हजार समझाया पर उसने एक न मानी। पहिली रात्रि की तरह आज भी आधी रात तक चाँदनी का चन्दना होनेही करनाटक को जीतने वाला भैरू भट विरदधारी राव रैसल राय सर पर आ पहुँचा। गुड देस का सुग्रीव राय. बाव राय बघेला, मुकंदराय मोरी आदि सरदार उसके साथ में थे और कन्ह राय सरहटा, हरसिंह राय और नरपाल राय नामक नैपाल का राजा उसकी सहायता पर पीठि सेना के नेता थे। इसभी को बड़े सवेरे ही रणवाद्यों का भीषण नाद करते हुए रसल राय सरदार ने सामन्त समूह पर आक्रमण किया इधर से पुनः अत्ताताई आगे हुआ। राजा पृथ्वीराज ने भी कमान पर बाण चढ़ाया और गत सध्या की तरह और सब सामन्त भी शत्रु सेना पर हाथ साफ

करने को उद्यत हुए। अद्वितीय अत्ताताई सीने में सेल पेल पेल कर पंग दल के मुखिया सरदारों की खबर लेने लगा। छक पाकर रैसल राय ने पृथ्वी राज पर वार करने की इच्छा से उस तरफ को घोड़ा बढ़ाया पर वीर अत्ताताई ने बीच में आकर घोड़े के सीने में सिंगी पेल दी जिसमें वह रैसल राय को लिए दिए जमीन पर लोट गया। रैसल के गिरतेही अत्ताताई ने उसी सिंगी से उसका भी काम तमाम किया। इसपर कन्हराय मरहटा लपक कर साम्हने आया पर वीर अत्ताताई ने एकही हाथ में उसे मार गिराया इन दोनों के मरते ही सारी पगसेना बे दूलह की बरात की तरह भाग उठी।

यह देख कर राजा जैचंद ने एक सहस्र शृंग धुनी सन्यासियों को आक्रमण करने की आज्ञा दी। तदनुसार सर्वाङ्ग मोर पंख से सुसज्जित वे शृंगधुनी सन्यासी हर हर कहते हुए घोड़े पर से उतर पड़े और सामन्त समूह को पगास्त्र कर पृथ्वीराज को पकड़ लेने के लिये बढ़े। उन अत्यन्त बलवान और तेजस्वी तपस्वियों के आतंक से सामन्त लोगों का हृदय भी थर्रा गया और सब अपनी अपनी बगलें झांकने लगे। उसी समय पृथ्वीराज ने कवि चन्द से कहा कि ये ऋषिस्वरूप शृंगधुनी वैरागी बड़े तप और तेज के पूरे जान पड़ते हैं परन्तु आश्चर्य्य है कि ये सांसारिक माया मोह से रहित होकर भी राजा जैचन्द की सेवा क्यों करते हैं। इस पर कवि चन्द ने उत्तर दिया कि उज्जैन नगरी में सदा से प्रमारों का राज्य चला आता है।

एक समय वह था कि ये उज्जैन्याधिपति प्रमार वंशी राजा सारे देश के शासक थे। उसी समय कोहर कटेर नामक एक राजा हुआ उसके पश्चात् उसका पुत्र प्रताप राय गद्दी पर बैठा। प्रतापराय का पुत्र रामराय तैलंग हुआ। उसके साथ में एक हजार रघुवंशी क्षत्री थे जिनके साथ में दस लाख फौज थी। वे रघुवंशी राजपूत बड़े ही बलवान प्रतापी और अतुल पराक्रमी थे। जब रामराय तैलंग बूढ़े हुए तो उन्होंने अपना सारा राज्य नौखण्ड नौकुली क्षत्रियों को वितरण कर दिया, उसने तोमरों को दिल्ली का राज्य दिया चावंडों यानी चालुक्यों को पट्टन दी। चहुवानों को सांभर की भूमि, कमधुजों को कन्नौज दिया, परिहारों को मुरदेश यानी मरु भूमि दी. बारडों को सिंधु देश दिया, यादवों को सोरठ देश दिया और जाबालों को दक्षिण देश और चारणों को कच्छ और भाटों को पूर्व देश का राज्य दिया. इस तरह से यह साग राज्य सकल्प करके बन में तपस्या करने चलागया। यह देखकर सच्चे स्वामि सेवी रघुवंशी राजपूत भी संसार के नेह नाते को अनित्य जान कर आप भी तपस्वी बन कर उत्तराखण्ड को चले गए। वे सब के सब एक उत्तग पर्व्वत-वेष्ठित गहन बन में जाकर निश्चल मन से तपस्या करने लगे परन्तु उस बन के बासी निश्चर सदा उनकी तपस्या में विघ्न किया करते थे। पर वे वीर पुरुष कदापि विचलित न होते थे तब एक दिन उन दुष्ट निशाचरों ने उनकी उस गाय को चुग कर मार खाया जिसके दूध घी से वे होम किया करते थे। बात यह उन सब को बहुतही खटकी यहां तक कि एक चिता रच कर वे सब अग्नि में प्रवेश करने पर उद्यत हुए। उसी समय नारद मुनि वहां आ पहुँचे उन्होंने अर्घ पाद्य आसन वंदनादि सब प्रकार से नारद जी का यथोचित सम्मान किया इसपर नारद जी ने प्रसन्न होकर उनसे पूछा कि यह क्या करने हो तब उन्होंने अपना सारा हाल वर्णन किया जिसे सुन कर नारदजी बोले कि हे क्षत्रिय वीरो तुम अग्नि में प्रवेश करने के पाप से मुक्त नहीं हो सकते तुम्हें चाहिए कि अभी तुम बीस वर्ष पर्य्यन्त और भी तपस्या करो और तत्पश्चात रण क्षेत्र में प्राण त्यागो। एक क्षत्री पुत्र के लिये समर में मरने से अधिक श्रेयस्कर दूसरा मार्ग है ही नहीं। तपस्या का रास्ता बड़ा टेढ़ा है अनेकानेक कष्ट सहकर जन्म भर तपस्या की पर कहीं इन्द्रिय डुलगई अथवा अन्य किसी प्रकार से व्रत भग होगया कि सब किया कराया मिट्टी में मिल गया।

नारदजी के ऐसे बचन सुन कर वे लोग बोले कि महाराज आपकी आज्ञा सिर माथे पर है, पर हमें

अन्देसा इस बात का है कि समर में सम्मुख होकर हमें मारेगा कौन इस पर नारदजी ने उत्तर दिया कि गंगा के कूल पर कन्नौज नगर में राजा जैचंद राज्य करता है किसी विशेष कारण वश उससे और दिल्लीपति राजा पृथ्वीराज से बैर होगा और उनमें जब परस्पर बैर होगा तब तुम लोग काम आओगे और सायुज्य मुक्ति पाओगे। यह सुन कर वे सब नारद जी के चरणों पर गिर और बोले कि धन्य प्रभु आपने हमें अति उत्तम उपदेश दिया।

उनको इस प्रकार समझा बुझाकर नारदजी वहां से चलते हुए और चट वे राजा जैचन्द के पास पहुचे। नारद जी को दूर से देखतेही राजा जैचन्द सिंहासन पर से उतर कर उनके पैरों पर गिर पड़ा और उन्हें सादर आसन देकर उसने नारदजी की विधिवत पूजा की और तब हाथ जोड कर बोला कि आज मेरे अहोभाग्य है जो आप का पधारना हुआ। यदि किंकर के योग्य कुछ आज्ञा हो तो कहिए। तब नारदजी बोले उज्जैन के राजा नैलग प्रमार के तप करने को चले जाने पर उसके सब सखा और सेनानायक खिन्न तन एक मन एक हजार रघुवंशी राजपूत भी तपस्या करने लगे। उन्होंने दो सौ वर्ष पर्य्यन्त घोर तप किया पर एक दिन रात्रमी ने उनकी गौ मार डाली जिसमें वे अत्यन्त खिन्न मन हो कर अग्नि प्रवेश द्वारा आत्महत्या करने पर उतारू हुए। यह देख कर मैं ने उन्हें समझाया कि ऐसा न करो तुम क्षत्री हो इस लिये रण क्षेत्र में तन त्याग कर अलभ्य पद प्राप्त करो।

श्लोक॥ जीवित्वे लभ्यते लक्ष्मी मृते चापि सुरांगना।
विना विध्यवासिनी काया का चिंता मरने रने॥

अस्तु वे मेरी बात मान गए। अब वे जटाओं में मोर मुकुट बाँधे चक्र लिए शंख बजाते हुए सब के सब आपके पास आवेंगे सो आप उनको स्थान दीजिए गा। ये एक तो स्वभावतः बड़ेही शूर वीर और पराक्रमी थे तिस पर तपस्या का बल पाकर तो वे निपट अजेय हो रहे हैं वे लोग तुम्हारे किसी गाढ़े समय में काम आवेंगे उन एक हजार को दस लाख के बराबर समझिए। यह कह कर नारद जी चले गए।

काल पाय वे रघुवंशी शम्बभुनी तपस्वी भी राजा जैचंद के दरबार में आ पहुंचे उन्हें पाकर राजा जैचंद ने उनको बड़े आवभगत से लिया और अपने बड़े भाई के समान मान कर उन सबको अपने दरबार में स्थान दिया। तब से आज की घड़ी तक वे लोग गंगा के किनारे निवास करते हुए मौज से समय बिता रहे थे आज जैचंद की आज्ञा पाकर उन्होंने आप पर पसर की है अतएव सामरिक माया मोह से रहित एक हजार तो वे सब हैं और कहर कठेर, प्रतापसाय, सिंधुआ पन्नार रामसाय, प्रमार कांहुयासाय, रानागुंडीर रायपरवत राय और सामंत राय साम्बुला इतने सरदार उनकी सहायता पर हैं।

अभी कविचंद की बातें खतम न होने पाई थी कि अग्नि ज्वाला के समान जाजुल्यमान नेत्रों वाले वीर जिनकी टेढ़ी टेढ़ी मूछें भौंहों को स्पर्श कर रही थीं वज्र मूल शक्ती तोमर तलवारें और बानें हाथों में लिये हर हर करते हुए सिर पर आ पहुचे। उनके आज मे भरे हुए लाल लाल चेहरे ऐसे चमचमाते थे जैसे सैकड़ों सूर्य्य उगे हों। वे घन घोर नगाड़ों के साथ में शख बजाते और सिर पर मोर पच्छ बांधे हुए ऐसे चले आते थे जैसे सावन भादों के कुहकुहा कर नाचते हुए मोरों की सेना लिए हुए पावस ऋतु चढ़ी चली आ रही हो। उन्हें आ पहुचा देख कर इधर से निडर राय कमधुज जैतराय प्रमार और भोंहा राय चंदेल ने चोंट कर आगे कदम दिए। उन्होंने जुड़तेही चील्ह की तरह घोड़ा उड़ाते हुए भोंहा राय का सिर उड़ा दिया। उसका सिर तो शिवजी की रुद्र माला में पोहा गया और उसके धड़ को एक चील्ह चंगुल में चांप कर ले उड़ी और अति उत्तग पर्वतावेष्टित निविड़ बन में एक बरगद के वृक्ष के कोटर में जा पहुची जहां उसकी वत्सला पत्नी रहती थी।

निदान मांस यहां से ले जाकर ऊपर कोटर में तो चील्ह सपरिवार भोजन करने लगी और उसी के नीचे चौसठियों का एक समूह वीरों के सम्बन्ध भक्षण करता और वीरों के गुण गान करता था। भोंहा चंदेल के शत्रु का नाम पाकर चिल्हनी सपरिवार अत्यंत संतुष्ट हुई।

खान पीने से तृप्त हो अन्त में उसने अपने पति से पूछा कि आजकल ये माल टाल कहां से लाते हो। जहां देखो तहां आजकल पलचरों के भण्डार लबालब भरपूर हैं। मैंने अपने बड़े बूढ़ों से सुना है कि सबसे प्रथम बड़ा भारी युद्ध देवासुर संग्राम हुआ।

तत्पश्चात महादेवजी ने तारकासुर का वध किया फिर लंका में रावण से युद्ध हुआ और फिर यहां भारत का युद्ध हुआ उसके पश्चात फिर आज तक वह बात देखने सुनने में नहीं आई पर आज कल फिर कहीं विषम काण्ड उपस्थित हुआ जान पड़ता है। कहीं तो यह रक्त प्रवाह किसके लिये हो रहा है किसी सुन्दरी का विवाह है या कोई किसी पर वैर भेजा रहा है अथवा दो दल योंही गर्व में आकर अपना अपना पराक्रम दिखाने के लिये एक दूसरे को मारते हैं। इस पर चील्ह ने उत्तर दिया कि राजा जैचंद यज्ञ विषम का वैर भंजा रहा है पृथ्वीराज ने सुन्दरी संयोगिता का पाणिग्रहण किया है और वे दोनों परस्पर शत्रु एक दूसरे से कम पराक्रमशाली भी नहीं हैं। चिल्हनी ने कहा कि ऐसा ही आज मैंने चौंसठियों देवी का कहते सुना है जिस समय उसने किसी एक बड़े बांके वीर को सिर शिवजी को समर्पण किया तब उसने कहा था कि मनुष्यों में ऐसा युद्ध आज तक देखने में नहीं आया वे लोग साक्षात देवताओं का सा पराक्रम करते हैं जिस समय किसी कदर वीर का रुंड उठ खड़ा होता है तो टुटुर के टुटुर अमयार घोड़े और झुण्ड के झुण्ड हाथियों को चटुट पटुट काई की भांति काट देता है। उन लोगों का युद्ध कौशल देख कर आकाशवासी देवतागण पुष्पवर्षा करते हैं रंभादिक अप्सरागण देख देख कर हंसती हैं और उन्हें वरने को भगती हैं और नबुर और नारद आदि गंधर्व उनके गुणगान करते हुए फूले अंग नहीं समाते उनका रणकौशल देखकर सूर्य का रथ स्थिर हो जाता है बैताल ताल देते हैं नारद नाचते हैं पर बाँकि छाती पर हाथ मारमार कर पछताती है। यह सुन कर चील्ह बोला हां सच है ऐसा युद्ध अब तक देखने सुनने में नहीं आया है जब दोनों दल के सिपाही नंगी तलवार सूंत कर सामंत समूह पर आए तो राजा पृथ्वीराज ने साक्षात अर्जुन के समान बानावली करके आकाशवासी देवताओं को भी चकितचित्त कर दिया। उसकी प्रिया अपने पति का पराक्रम देख कर चित्र लिखी सी रहगई। जिस समय जैचंद की आज्ञा पाकर चारों ओर से बाण बर्षाते हुए दस हजार मुसल्मानों ने आक्रमण किया तो राजा पृथ्वीराज और उसके सौ सामंत घायल सिंह की तरह पछल कर खड़े होगए। उन पराक्रमी सामंतों के बीच में अचलचित्त राजा पृथ्वीराज साक्षात ध्रुव के समान अचल होकर डटा था। जिस ओर से मुसल्मान सिपाही झुंड के झुंड करकर जोर से वार करते थे उसी ओर को राजा पृथ्वीराज घोड़े की बाग उठा देता और अगणित बाण मार कर सवाटिन मीर मेना को काई सा फाड़ देता था इसी तरह युद्ध होते होते सन्ध्या होगई पैर दल के सिपाही भी सारे दिन के परिश्रम से शान्त होगए थे इसलिये युद्ध बन्द होगया और आलस्य भरे नेत्रों वाली नवदुलहिन संयोगिता को हृदय से लगाकर पृथ्वीराज भी सुख से सुता दूसरे दिन पुनः पैर सेना ने समर की और राजा पृथ्वीराज ने पुनः अनुलित पराक्रम दिखाया इस बार उसने तलवार से युद्ध किया, राजा पृथ्वीराज जब मतवाले हाथी के कुंभ पर तलवार का वार करता तो वह खरबूजा सा फट जाता था। मतवाले हाथी के कांधे कांधे कुंभ में पृथ्वीराज की उज्जवल तलवार बद्दलों के बीच में जुन्हैया सी चमकती थी उसमें जो गजमुक्ता के कण लपटे लगे आते थे वे ऐसे जान पड़ते थे मानो दूज की जुन्हैया को नागगण लपट रहे हों। इसी प्रकार युद्ध होते होते

सूचना।

—o—

निम्न लिखित पुस्तकें "सेक्रेटरी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी" को लिखने से मिल सकती हैं।

	मूल्य	डाकव्यय
अलिफ मुहम्मद की अक्लरावट	(=)	)॥
कविवर बिहारीलाल-(बाबू राधाकृष्णदास) रचित	=)	)॥
हिन्दी भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास (बाबू राधाकृष्णदास रचित)	।)	)॥
समालोचना-(पण्डित गंगाप्रसाद अग्निहोत्री द्वारा अनुवादित) ...	=)	)॥
समालोचनादर्श-पद्य-(बाबू जगन्नाथ दास रचित) ...	॥)	)॥
कर्तव्याकर्तव्यशास्त्र-(पण्डित नारायण पांडे रचित)	॥)	-)
बेसूचिका चिकित्सा	।)	)॥
हरिश्चन्द्र-पद्य-(बाबू जगन्नाथ दास रचित)	=)	)॥
भगवद्गीता-(बाबू गदाधरसिंह द्वारा अनुवादित) ...	।-)	)॥
उथेलो-(बाबू गदाधरसिंह द्वारा अनुवादित)	॥)	)॥
नागरीप्रचारिणी पत्रिका (सभा द्वारा सम्पादित) १३ भाग छप चुके हैं (आठवां भाग नहीं है) मूल्य-प्रति भाग	१)	-)
हिन्दी लेकचर-(बाबू हरिश्चन्द्र रचित)	-)	)॥
ध्रुवदास की भक्तनामावली, टिप्पणी सहित	॥=)	-)
सदलमिश्र की चन्द्रावती	।-)	)॥
सूदन कवि का सुजानचरित्र	२)	=)
लाल कवि का छत्रप्रकाश	१।)	-)
नन्ददास की रासपञ्चाध्यायी	।=)	)॥
प्राचीन-लेख-मणि-माला-१ भाग (बाबू श्यामसुन्दर दास लिखित) ...	१)	-)
अशोक का जीवनचरित्र (ठाकुर सूर्यकुमार वर्म्मा लिखित) ...	।)	)॥
नेपाल का इतिहास (पण्डित नारायण पांडे लिखित)	।-)	)॥
पृथ्वीराजरासो-पहिला भाग (समय १-११)	४)	।)
,, दूसरा-तीसरा-चौथा भाग(समय १२-६१ असमाप्त)... ...	१४॥)	॥)
कुमारसम्भवसार (पण्डित महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा अनुवादित) ...	=)	॥)
श्रीधर का जंगनामा	॥।)	-)
धम्मपद (ठाकुर सूर्यकुमार वर्म्मा लिखित	।-)	-)
सभा के पुस्तकालय की सूची	=)	)॥
मनोविज्ञान (पण्डित गणपत जानकी राम दूबे लिखित)	॥)	-)
चन्द्रशेखर का हम्मीर हठ	॥)	)॥

महिलामृदुवाणी (मुंशी देवीप्रसाद लिखित)	१)	-)
दादूदयाल की बानी	१॥।)	≈)
कवि नूरमुहम्मद की इन्द्रावती १ भाग	१॥)	≈)
यूरोपीय दर्शन (पण्डित रामावतार पांडेय लिखित)	॥।)	-)
प्रबोधचन्द्रिका	॥।)	-)
विरहलीला—आनन्दघन कृत	≈)	॥)
दादूदयाल का सबद	१।=)	≈)
जोधराज का हम्मीररासो	२)	≈)
सरल व्यायाम (बाबू कालिदास लिखित)	।=)	-)
पद्माकर कृत हिम्मतबहादुर विरदावली	॥।)	)॥
प्रतापनाटक	।।)	-)
परिचर्या प्रणाली	।)	)॥
मित्रलाभ	-)।	)।।
दुःखिनी बाला	-)॥	)॥
निःसहाय हिन्दू	।)	)॥
भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का जीवन चरित ..	॥=)	-)
गोभिलीय गृह्य कर्म प्रकाशिका	१।)	
अन्त्येष्टि दीपिका	≈)	
सुघड़ दर्जिन (बाबू ठाकुर प्रसाद लिखित)	॥।)	-)
चलितविलोद	१)	≈)
नवीन दृष्टि में प्रवीन भारत	१)	-)
गीतावली	।)	)॥
योगदर्शन	१)	-)
गुरु गीता	।)	)॥

नोट—ऊपर लिखी पुस्तकों में से अन्त की १२ पुस्तकों को छोड़कर शेष पुस्तकें आधे मूल्य पर काशी नागरीप्रचारिणी सभा के सभासदों को मिल सकती हैं।

Nagari-Pracharini Granthmala Series No. 4-18

THE PRITHVÍRÁJ RÂSO

OF

CHAND BARDÁI,

EDITED

BY

Mohanlal Vishnulal Pandia, & Syam Sundar Das, B. A.

With the assistance of Kunwar Kanhaiya Ju.

CANTOS LXIV to LXVI.



महाकवि चंद बरदाई

कृत

पृथ्वीराजरासो

जिसको

मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या और श्यामसुन्दरदास बी. ए. ने

कुँअर कन्हैया जू की सहायता से

सम्पादित किया।

पर्व्व ६४ से ६६ तक.

PRINTED BY THAKUR DAS, MANAGER, AT THE TARA PRINTING WORKS, AND PUBLISHED BY THE NAGARI-PRACHARINI SABHA, BENARES.

1910.

मूल्य १।)] Issued 10th August 1910. [*Price Rs. 1/4.*

सूचीपत्र ।

—o—

(६४) धीरपुंडीर नाम प्रस्ताव .... पृष्ठ २०२५ से २१०२ तक
(६५) विवाह समय .... ,, २१०३ ,, २१०४
(६६) बड़ी लड़ाई प्रस्ताव (अपूर्ण).... ,, २१०५ ,, २१५२
रासोसार ... ... ३२७ ,, ३५८

आगें सु धीर पुंडीर वर। अरू स्वामि इथ्थ वर मथ्थ दिय ॥
सामंत जैत चामंड वर। मिच इथ्थ दिम सयन किय ॥
छं० ॥ ४४ ॥

चामंडराय का कहना कि धीर क्यों लड़कपन में आकर व्यर्थ की प्रतिज्ञा करते हो, दोनों पक्ष का बल तो तौलो।

हंसि बोले चामंड। धीर सुनि बात हमारी ॥
पातिसाह दल विषम। तुरी अगनित है भारी ॥
घर बैठे अप्पनै। बोल तुम बहु बोलहु ॥
मेर भरन कहौ बथ्थ। सिंघ मम कुंजर तोलहु ॥
रे सुनहि सूर पुंडीर कुल। एतो झूठ न तुम कहहु ॥
जिहि सात फेर हस्ती फिरहि। किम सु साहि जीवत गहहु ॥
छं० ॥ ४५ ॥

दूहा ॥ घर सूरा मठ पंडिया। गाम गमारां गोठि ॥
पंच मझ्झ बोलत बयन। धुज बिछुट्टिय होठ ॥ ॥ छं० ॥ ४६ ॥

गाथा ॥ अलमायं जे न मा पुरियेण। जे अप्परास मुच्चरिया ॥
ते पथ्थर टंकि उकोरौ अग्ग। कवहौ नह अनहा हुंतौ ॥
छं० ॥ ४७ ॥

राम हरडियं कु नरिंद भासियं। इयर लोय पड़ि वत्त ॥
पुत्र उठानय गुरुअं। पछालहु अंचलहु अंचं ॥ छं० ॥ ४८ ॥

सुर मिरि मूलं बड़ बीज पल्लवं। सुअन लोइ पड़ि वत्तं ॥
पुत्र ठानय लहुअं। पछा गरुअंच गरुअंचं ॥ छं० ॥ ४९ ॥

धीर का कहना कि मैंने जो कहा है वही करूंगा।

कवित्त ॥ हौं पुंडीर नरेस। हौं सु झुझार सबर बर ॥
हौं सुत चंदह तनौ। ठिल्लि दल देहुं चिविध घर ॥
मोहि इष्ट बल सकति। मोहि बानै बर सज्जित ॥
मो मम अवर न बीर। माहि उप्पर दल गज्जित ॥

हौं सुनौ सच्च दाहन दहन। हौं सुति नहिं तिन बर गनौ॥
बर बीर धीर इम उच्चरै। गहुं साहिब हसती हनौ॥छं०॥५०॥

धीर की बीर प्रतिज्ञा की चरचा का सर्वत्र फैल जाना।

दूहा॥ बढि अवाज ढिल्लिय नगर। धीर ग्रहन कह्यौ साहि॥
हँसिहि खुर सामंत ह। कुटिल दिष्ट मुष चाहि॥ छं०॥५१॥

एक महीने पांच दिन में यह समाचार उडता हुआ शहाबुद्दीन के कान तक पहुँचा।

कवित्त॥ मास एक दिन पंच। बत्त दिसि विदिसि न झूझं॥
चंद पुत्त कौ चाव। पेषि प्रगट्यौ जस धूअं॥
दिसि दष्यन पुब्बाह। रहस उत्तर पच्छाहं॥
गल्ह वान गल्हा करंत। चिहु चक्क सवाहं॥
अद्भुत बत्त संसार सुनि। पुंडी राइ हरट्टिया॥
गज्जनै साहि साहाब दर। मुष मुष कित्ति प्रगट्टिया॥ छं०॥५२॥
मंगि दोय बर मात। राज प्रथिराज महाभर॥
जैत षंभ जिम्मनह। साहि बंधन आनन धर॥
तब तुट्टिय चवसट्ठि। दियौ बल षंभह फोड़न॥
अरु जु साहि बंधनह। ताहि बर बंक पधीरन॥
इह कहत मात दिन्नौ सु बच। सुनत साह अचरिज्ज हुअ॥
पिष्पह सु बीर बल कारनै। जैत षंभ आरंभ किय॥छं०॥५३॥

दूहा॥ बज्जा नाम पुंडीर तुअ। लज्जा दान सु षग्ग॥
निम्म निहाई बत्तरी। किम्मि दुहाई मग्ग॥ छं४॥५४॥

जैत प्रमार और चामंडराय के मन में धीर की ओर से डर पैदा होना।

पद्धरी॥ दुहुं मग्ग नाम पुंडीर धीर। नीसान प्रात बज्जंत धीर॥
पामार जैत चावंड राय। तिट्ठान राग लग्गेति घाय॥छं०॥५५॥

कल मली चित्त बहु भंति आइ।* * *
दीवान मान आदर अदब्ब। षिन षिन सुताय लग्गै सु गब्ब॥
छं० ॥ ५६ ॥

बलिभद्र बीर जामानि अह। षीचीय राव षिझि कहिय सह॥
बग्गरिय राव देवाधि देव। आजानवाह बोलंत मेव॥
छं० ॥ ५७ ॥

रावन्न राम गुज्जरी नेह। लौहोन बत्त पुंडीर छेह॥
उपगार चंद चिंत्यौ सु तभ्भ। रष्यौ पूर चालुक्क मभ्भ॥
छं० ॥ ५८ ॥

तापंत राज सज्जी न बज्जि। फट्टंत तोन तम कवन कज्ज॥
घटि बटित और गावार रंग। हर गाम धाम देसा दुरंग॥
छं० ॥ ५९ ॥

ता मुनिय सत्त उद्धंत त्रित्त। जगि जलनि जानि सिंच्यौ सु घ्रत्त॥
गांमी गमार पुंडीर सूर। तिहि जाइ तुट्टि सुरतान पूर॥
छं० ॥ ६० ॥

दादुरति कोट जिहि भार सह। पुज्जै न कोइ कोकिलति बह॥
आचरन सिंध जंबुक कुलाइ। भज्जंत प्रात मिलि सुगह ताय॥
छं० ॥ ६१ ॥

बंबर विरह बामा सु पानि। बंधे सु कोन बर सूर तान॥
उच्चरे बीर चामंड राय। जिन वीय बंस सामंत पाइ॥
छं० ॥ ६२ ॥

इम लज्ज सूर सामंत भार। प्रथिराज राज बल उद्ध सार॥
अपराध बंध धरि धात षंभ। जानै न जुद्ध सुरतान गिंभ॥
छं० ॥ ६३ ॥

प्रथिराज ताहि अप्पै सुलक्ख। हिंसार कोट पट्टन पलक्ख॥
गज बाज बीर बैरष्प सेत। नीसान मेघ रन पीत नेत॥
छं० ॥ ६४ ॥

बरजै न कोन सामंत राइ। इहि मुष्य अप्प रहनो न जाइ॥

सुभ्भ्रं न काम कोई प्रमान। बहुआन पचाऱ्यौ सकट खान॥
छं० ॥ ६५ ॥

अरदास कायस्थ का शहाबुद्दीन को धीर की प्रतिज्ञा का सारा हाल लिखकर सूचना देना कि धीर सपरिवार जालंधरी देवी की पूजा करने जायगा।

कवित्त ॥ लिखि अरदास जुगत्ति। जैत सुरतान सुपट्टिय॥
कोतूहल गूजर गमार। मुखही मुख ठट्टिय॥
नाना ही गीचर गियान। पांवार पुंडीरां॥
राज छज्जि रवि देउ। सूह सज्जल सम्मीरां॥
मभ्भांह गुज्ज अंतर कियौ। बीसां हीरा बत्तियां॥
सांइनौ संग बंछै मरन। सोई साहस छत्तियां॥ छं० ॥ ६६ ॥

वचनिका ॥ बज मांम हमंद ईन। सुलतान साहाब दीन॥
तुरकमां ताज। गज्जने बीर बाज॥
अरदास जैत काज। लिखी बंदगी साज॥
तिन उनह कौ गुनाह। डिभरू बिरद बाह॥
बहुत कुल षंचना। देवी दिवाना॥
दरबार हिंदवाना। गज्जने साहिपति साहिपनाह॥
छं० ॥ ६७ ॥

कवित्त ॥ इति अरदास लष दई। जैत गौरी सुबिहानं॥
ग्रह्व गमार पुंडीरी। सीस लग्गी असमानं॥
अवसि मास आसोज। दैव अष्टमि गुरवारं।
पूजि मिसह जालंधि। संग सब्बै परिवारं॥
इह घात साहि सुबिहान कों। नन्है सुप बड्डिय कही॥
बरजंक अचानक रचि बल। तबहि साह से सुप गही॥छं०॥६८॥

आश्विन की नौ दुर्गा में धीर का देवी पूजने जाना।

गरजि मेघ निंबरिय। सरद सरवरिय अहन्निय॥
जल थल निम्मल तिज। अकास बह बास अवन्निय॥

हंस बंस सारस सबह । कंकेलि कु कंदे ॥
सलित सरोवर मन । बजाद अम्रत कर चंदे ॥
रति नइय नौमि अहइ सुदिय । जल जलह पूजन विहँसि ॥
सिद्धा न सिद्ध करि चंद सुअ । अंबइ रिपु पारस परसि ॥
छं० ॥ ६६ ॥

धीर का व्रत से पैदल चलना ।

दूहा ॥ सूर तेज अति सरद कौ । आगम चढ़े विराज ॥
जालंधर वर परसने । बोल पुवंतर काज ॥ छं० ॥ ७० ॥

कवित्त ॥ चल्यौ लै निज भ्रत्त । जात आलप्प अलप्पिय ॥
पाय चलत उविहान । पान भोनह तजि तप्पिय ॥
धीर हार इक बार । भूमि संथाह सधारिय ॥
मौंन धारि जप सार । धूप दीपह पुज्जारिय ॥
सामंत अमंतन जानि कै । सकै न दुष टारन दइय ॥
इह दुष्ट कष्ट निज सेव कहुं । जानि जननि प्रगट भइय ॥छं०॥७१॥

जालंधरी देवी का धीर को स्वप्न में सूचना देना कि शाह के भेजे हुए गुप्त दूत तुझे पकड़ने आरहे हैं ।

निसा मद्धि मातंग । बोल समधीर सु बत्तिय ॥
चौंडराय पामार । साहि संमुह लिषि पत्तिय ॥
अट्ठ सहस गष्परी । धीर पकरन तो पठ्ठिय ॥
गुपत तेग गहि गोप । भेष कप्पर करि लठ्ठिय ॥
पय पय सु तुभझ संकट हरौं । बोल बोल सानिध करौं ॥
इम कहत देवि अप्रछन्न हो । तो प्रयज भ्रा सम धरौं ॥छं०॥७२॥

सप्तमी शुक्रवार को धीर का जलंधरी देवी के स्थान पर पहुंच कर पूजन और दान करना ।

दिन सुक्रह सप्तमिय । जाय जालंधर पत्तिय ॥
दान न्हान परमान । मान मानह करि अत्तिय ॥

तहं हिंदू वर मुसलमान। लष्य विप्र सुआवहि ॥
जवनिक कुल छुवौ। कुलाल घोड़स मिलि धावहि ॥
जानै न कोइ नर भर चपति। प्रवत लग्गि पारस पर्‌यौ ॥
कोटन सु कोट भंडार भरि। घन सु द्रव्य हाहुलि भर्‌यौ ॥
छं० ॥ ७३ ॥

जैत प्रमार और हाडा हम्मीर की शाह प्रति सूचना।

दूहा ॥ तब लिष्यौ कपट कग्गर करह। जैत पमार हमीर ॥
बोल्यौ बोल अचग्गरौ। तिन पकरायौ धीर ॥ छं० ॥ ७४ ॥
गहिय पानि कहि साहि इम। कोइ भर मीर मलिक ॥
धीरहि गहि आनै निजरि। साहब लह सो सक्क ॥ छं० ॥ ७५ ॥

शाह के धीर के पकड़ लाने का बीडा रखना और गष्पर लोगों का बीड़ा उठाना।

कवित्त ॥ दिए पान सुरतान। लिए आरिष्य हथ्थ धरि ॥
कहै साहि साहाब। जियत ल्यावहु सु बंधि कर ॥
अट्ठ सहस गष्परी। नेग गहि चढ़ें तुरत्तह ॥
संक न मानौ जाइ। धीर बैठौ बिन मत्तह ॥
संदेस कहौ पुंडीर सों। चलि रावत-नहिं संक जरि ॥
तब बेढलेउ चिहु पासु तें। लै आवहु बेसास करि ॥
छं० ॥ ७६ ॥

उक्त गष्परों का योगी के भेष में जालंधरी देवी के स्थान पर धीर के पास जाना।

तक्यौ साहि गज्जनै। धीर जालंधर जत्तह ॥
सहस अट्ठ गष्परिय। भेष करि कप्पर रत्तह ॥
गहि आनौ छल बल। पुंडीर राइ चंद कुम्मारह ॥
कर कगार लिखदिये। मेद राजैत पमारह ॥

तारन्न तुंग साधक सकल । मनों मोन मूरत रचिय ॥
गुन गुपत इच्छ गुपती धरिय । भुगति मंगि जोगिय इँसिय ॥
छं० ॥ ७७ ॥

छद्म वेषधारी योगियों का धीर से भिक्षा मांगना ।

दूहा ॥ धीर निकट ठाढे भये । कपट हेत सहरूप ॥
जोरि इच्छ तिन विन्नयो । भुगति देहि इम भूप ॥ छं० ७८ ॥

गष्पर लोगों का धीर को घेर का गजनी लेचलना ।

कवित्त ॥ सिंध विहच्छें आव । नाव नगखि उत्तरिय ॥
आनि तच्छ गजराज । ढाल मभ्भ्रें बैसारिय ॥
अट्ठ सहस गष्परी । अट्ठ दिसि सेवा सारत ॥
इम आवै भर धीर । रच्छ बैठो जनु पारथ ॥
प्रजलोक देह देहह दुनी । दिष्पन भर धर उंमही ॥
जानै कि इन्द्र मुख विष्पनह । उलटि मोर नग उंमही ॥
छं० ॥ ७९ ॥

धीर का गजनी पहुंचना और नगर निवासियों का कौतुक से उसे देखना ।

पद्धरी ॥ आरोहि गज्ज पुंडीर धीर । लै चलै घेरि गष्पर गहीर ॥
गष्परी सहस अट्ठह प्रमान । नाषिच बिंटि सविता समान ॥
छं० ॥ ८० ॥

मुक्के विवाह चिन्हाव धाय । उत्तर्यो सिंध जोजन सवाय ॥
सब लोक सिंध मंडल जु रेस । दिष्पनह धीर वीरत बरेस ॥
छं० ॥ ८१ ॥

दादसह भान मुष प्रगटि जोति । नित उंच थान बह, प्रात होत ॥
कै कहै साहि इनि है कंधानि । दै है सु प्रगट कै कहै दान ॥
छं० ॥ ८२ ॥

इन भंति सहर गज्जन सपत्त । बंदियन विरद आसिष्य दत्त ॥
संकरह हेम तोलह चिसत्त । निय पाय कहि किय धीर दत्त ॥
छं० ॥ ८३ ॥

जसु दान डंकि गज्जन सु देस । इम पत्त हार असुरह नरेस ॥
उम्मरा मीर सब मिले आय । दिष्पनह धीर पैजह पराइ ॥
छं० ॥ ८४ ॥

आलीन मध्य देषै इ रम्म । दिषि रूप धीर सुकै सरम्म ॥
पुंडीर आइ दरबार चाहि । गज्जनी लोक कौतिग नमाइ ॥
छं० ॥ ८५ ॥

राजद्वार पर दर्शकों की भारी भीड़ होना और गष्षर सरदार का शाह से धीर की गिरफ्तारी का हाल वर्णन करना।

कवित्त ॥ गज्जन वासी लोक । केक पर दिष्पन आइय ॥
चंद पुत्त मुष चंद । कुंद सष जानि सधाइय ॥
मीर मलिक उंमरा । भीर मत्ती दरबारह ॥
ठाम न लभ्भै कोइ । ताहि पिष्पन भर भारह ॥
अचरिज्ज भयौ सब सहर में । जब आयौ दरबार क्रम ॥
पुच्छै जु साहि जब धीर सो । बै विरह खिन्ना विषम ॥छं०॥८६॥

भुगति देन कहि भूप । इच्छ कप्परी जु तुम कहु ॥
निसा आदि एक लौ । पूजि मूरति सब तुम कहु ॥
बोलि मंगि सहु सिद्ध । फेरि दीनौ हुंकारौ ॥
ठाम ठाम संग्रहिय । फेरि धरियौ धुत्तारौ ॥
जो जनवि पंच उग्यौ अरक । तपत सिंधु सिंधि उत्तरिय ॥
दादसौ दिवस दादस सकल । साहि धीर इकत करिय ॥छं०॥८७॥

धीर के पकड़े जाने का समाचार चारों ओर फैलना। धीर के षवास "वैजल" का अधीर होकर अन्न जल छोड़ देना॥

कुंडलिया ॥ दह दह कोइ दहत्त बिन । फिरि फट्टी पुकार ॥
बर षवास लंघन करिय । पानी पन्न अहार ॥

पानी पत्र अहार । धीर सुरतान जान गय ॥
जाम देव गज्जरह । भइय आवाज साद भय ॥
मिलिय षलक दरबार । दुनिम लग्गी दर सोइं ॥
गो सु पुरह गज्जनै । किरिति पट्टी दह कोइं ॥ ८८ ॥

बैजल षवास का स्वप्न देखना ।

कवित्त ॥ घालि रष्यौ पुंडीर । धीर धीरत्ति न रष्यं ॥
षग षोलंत विहथ्थ । सिद्ध षोवहिसि दिष्यं ॥
जाम देव गज्जह नरिंद । मंच छल सिर पटि नष्यं ॥
तत्तारह पुंडीर । मेछ सिरदार न भष्यं ॥
उप्पारि लियौ सुरतान पै । धीर न धीरत्तव डुलं ॥
मनि छाम चंद चंदह तनौ । छल विचारि षग्गन घुलं ॥
छं० ॥ ८९ ॥

गहत धीर षावास । मंत चरननि अरि रुद्धौ ॥
तीन सहस विच एक । सीस गुपती आलुद्धौ ॥
निसा मद्धि चमचमी । रीस भारी तन भग्गौ ॥
कूट बज्ज भष खुटि । धाय सह परवत लग्गौ ॥
सत अद्ध कोस वाहत सुवर । फिरि पच्छौ आइय उकति ॥
षावास चंद पुंडीर रषि । प्रात उड़ग्गन तजहि भति ॥ छं० ॥ ९० ॥

दूहा ॥ विषय वास बेजल सुवर । तन सोइ दिषि भय भार ॥
दिवि नरिंद खंधन करै । पानी पान अधार ॥
छं० ॥ ९१ ॥

इम सहस्स ढिलिय सहर । गहन धीर सुरतान ॥
अट्ठ सुपन विपरीत तय । वडव बंध कंधान ॥ छं० ॥ ९२ ॥

तत्तारखां का धीर से कहना कि तूने यह क्या प्रतिज्ञा की ।

कवित्त ॥ मिलि षलक षान पट्ठान । साह सभा भरि मंडे ॥
तहं सुधीर पुंडीर । आय उत्तर कर छंडे ॥
वे अदान नादान । धात भजै धष लग्गी ॥
अंग रंग चह आन । देस देस धन लग्गी ॥

गामी गमार पुंडीर कुल । बाप भखेरा पुत्र बट ॥
सुरतान थान दिट्ठान दिट्ठ । कित कुरान चिंतै 'सुचट ॥छं०॥९३॥

शाह का सुपना ।

सुनौ थान तत्तार । साह लह्यौ सुपनौ निसि ॥
है गै निधि चतुरंग । चिंति राजस तामस विधि ॥
बर बंधे गजपति नरिंद । बोल बद्दे उच्चारे ॥
वह वह करि उच्चरिय । षग्ग अरियन सिर झारे ॥
बिपरीत सुपन बानिक हुअ । कर बंधे नृप बन्ध बर ॥
सोचयौ सुपन अहि डिंभरू । बर बंधत छुट्टै बि भर ॥
छं० ॥ ९४ ॥

दर्शकों का बिचारना कि देखें हिन्दू कैदी को शाह क्या सजा देता है।

हरमहार सिंगार । गोष आली दिसि जहै ॥
षलक थान उम्महिय । साहि हिंदू दुअ वहै ॥
कोतूहल आलम उदार । दल बहल उम्मै ॥
इनै कि छंडै साहि । चढी चिंता चित दूने ॥
करतार आहि रष्षै करां । ताहि रोम बद्दै कवन ॥
रहिमान राम बद्दै कछू । ताहि निमष रष्षै कवन ॥ छं०॥९५ ॥

कवि की उक्ति कि मारनेहारे से रखनेवाला बड़ा है ।

दूहा ॥ मारै आहि रमा सु बर । तिनह न रष्षै कोइ ॥
रष्षनहारो राम जिन । मारि न सक्कै कोइ ॥छं० ॥ ९६ ॥

एक आपत्तिग्रस्त हिरन की कथा ।

कवित्त ॥ एन एक आरन्य । चरन पारद्धिय दिष्षिय ॥
ता पछ औसर पाई । फांद पारद्धिय बंधिय ॥

(१) ए. को. सुचंड ।

दिस दच्छिन कुंकरन। करत घुर घुरा सिंह सम॥
उत्तर दिसा असाध। दंग लग्गो करार दम॥
पिछु दिसा रुकि आरिष्ट चव। कहां जान पावै हिरन॥
तिहि वार एम दूम उच्चयो। मो गुपाल रष्यहु सरन॥छं०॥९७॥

अनल उट्ठि आघात। अनल उड़ि फंद दहे तिन॥
तब वलाह वरसंत। बुझ्यो दावानल सो वन॥
स्वान होत सनमुष्य। धर्यो जंबुक लगि पुट्ठै॥
जात देषि मृगराज। रीस करि पारधि रुट्ठै॥
तानंत धनुष गुन तुट्टयो। चल्यो एन बिन संक मन॥
करुना निधान रष्यन करहि। ताहि मारि सक्कै कवन॥छं०॥९८॥

दूहा॥ रष्यन हारो राम जिन करि राषै इहि भांति॥
वधिक सिचाना वधि रषै। पारापति दंपत्ति॥
छं०॥९९॥

कवि का कहना कि मरने वाले को कोई बचा नहीं सकता और इस विषय पर जयद्रथ की मृत्यु का प्रमाण।

भुजंगी॥ नवं दून रष्यं जयं जैतरथ्यं। तहां अप्प अग्गया धरं तंत रथ्यं।
नवं दून षोइं निषंडी अचीनी। मिले पंड कुरषेत जैजरथ रंनी॥
छं॥१००॥

करी पैज पारथ्थ जैजरथ बंधं। तिनं रष्यनं जाय जैजरथ सिंधं॥
कियं अग्गिहारी दछिनी छितानं। तियं पुट्ठि चोनं दिसा पूरि वानं॥
छं०॥१०१॥

भरं भूरि सरना रथं रथ्थ यानं। दरं दुस दुरसासनं सुष्षि वानं॥
गजं गाज जल सिंधुता पुट्ठि ओपै। कतं जास जुद्धं सतं लोक लोपै॥
छं०॥१०२॥

दिसी दिस्सि वानं समानं सुदेहं। मानों वाल प्रोढ़ा सुनारी सुनेहं॥
अयं तथ्थ सारथ्थ देवक्कि पूतं। इनै जुद्ध जैजरथ उडि सीस वित्तं॥
छं०॥१०३॥

इते पंचनी साजि अजथ्थ भथ्थै। बधै देव को ताहि हरि देव रथ्थे॥
इते वीर विश्वास करि धीर बोल्यो। पढै पंचनी साज अंजरज तोल्यो॥
छं० ॥ १०४ ॥

शाह का धीर से कहना कि प्राण का मोह करने वाला क्षत्री सच्चा नहीं है।

दूहा ॥ मिले धीर पुंडीर वर। वर गोरी सुरतान।
बोलि वीरवर धीर कों। चित साले चहुआन ॥छं०॥१०५॥

कवित्त ॥ सें पुच्छै सुरतान। अबे तूं चंदह नंदन॥
तोहि विरद हम कहै। अथ्थ वर वैर निकंदन॥
अवसानह संकरै। जीव रावत जो बंचह॥
ता जननिय को दोस। मरत षत्री जो संचहय॥
इह जीभ हाड बाहिर पिसुन। एतौ झूठ न भांषिये॥
कहुं धीर लाज कारन कवन। प्रान राषि पति मुक्खिये॥
छं० ॥ १०६ ॥

धीर का उत्तर देना कि मेरा जीवन अपनी पैज निर्वाह के लिये है।

न मैं षग्ग संग्रहयौ। न मैं सिगिंनि कर मंचिय॥
नहुं टाच्यौ टंकुच्यौ। पति लग्गत तन संचिय॥
टल्यौ सु हूं जोगिंद्र जानि। धीर धीरं तन गहयौ॥
चाव हिसि विंटयौ। घुंदि घुंदहि मन रहयौ॥
बुल्यौ जु बोल चहुआन सौं। सो न बोल छंडै हियौ॥
गहि साहि हथ्थ अथ्थन कह्यौ। ताहि पैज कारन जियौ॥
छं० ॥ १०७ ॥

बादशाह वचन।

पति पैज संसही। पैज पति ही सों बंधी॥
पति सरन पति मरन। कर पति पति सों संधी॥

पति रत्तन संसार। गयौ पति इच्छ न आवै॥
कोटि वत्त जो करै। पत्ति लच्छौ वस गावै॥
पति गये मरन दीनै नही। सो पति तन किम संग्रहै॥
आदर सु पत्ति दीजै अगत। ते पति रत संग्रहि रहै॥छं०॥१०८॥

धीर पुंडीर बचन।

है पत्ति पत्ति कुपत्ति। सही पति सो धीरह धरि॥
धरी जु अधरी होंहि। सही पति तेह होइ नरि॥
इही काज है पत्ति। धीर बोल्यौ परमानं॥
कंक बंक करि साहि। कह्यौ बंधन चहुआनं॥
रीस सम संभ अच्छिर खिषी। में अरि बंधन साम उर॥
करतार इच्छ केती कला। तौ करौं पत्ति संची सु धर॥छं०॥१०९॥

बादशाह बचन।

सुनत आप सुरतान। धीर चंदो नहि चुक्कै॥
जो दरोग पुंडीर। धाहि गोरी गहि मुक्कै॥
सुद्ध जुद्ध संग्राम। षेत पुरसान षिसावहि॥
ता दिन धार हिस्सार। कोट चंदह तन पावहि॥
धीर नाम ता दिन लहौ। कहहि काम आषर कहहि॥
राजान काज पुंडीर नृप। चार दिसा बंध्यौ रहहि॥छं०॥११०॥

धीर पुंडीर बचन।

पैज काज पारथ्थ। नाथ दुरजोधन भंज्यौ॥
पैज काज श्री राम। लंक दसकंधर गंज्यौ॥
पैज काज श्री कृष्ण। कंस मथुरा महि मार्यौ॥
पैज काज बलिराय। रूप वामन करि गाह्यौ॥
पुं पैंज काज बंधन सहिस। तुम बंधन चष्पे नही॥
ज्यों तेल नीव वपु तिलहही। ते साहि इसी वत्ती कही॥छं०॥१११॥

बादशाह बचन।

धीर नाम तुहि धरिग। धीर रन होय तो जानौ॥
भरनि चंड धर संड। नयन दिट्ठ सुलतानौ॥
नेज अग्र धज अग्र। अग्र बंबरि ढाहानी॥
अग्र बान कम्मान। पंष बिद्धहि दीवानी॥
अंबूर नारि इथ नारि घन। धन अग्राज फुट्टै अगा॥
इक्का इक्क फुट्टै हिया। तब न कोय लग्गै सगा॥छं०॥११२॥

धीर पुंडीर बचन।

तं दीठी तिहि बेर। साहि तत्तार न सग्गा॥
बजि अग्राज अंबूर। छोरि घुरसानी भग्गा॥
अप्पानी घर बत्त। मत्त ओही तूं जानै॥
जे दड्ढौ होंहि दूध। फूंकि सों मही असानै॥
हौं धीर धीर पग मंडिहौं। जो तुम परषन पग मंडिहौं॥
मृगराज हाक ज्यौं मृग्गनिय। यों देषत सत छंडिहौं॥
छं०॥११३॥

सोई सेर जिहि सेर। भरकि कुंभी कुँभ भंजै॥
सोई सेर जिहि सेर। गाज अप्पन बल गंजै॥
सोई सेर जिहि सेर। पुंछ पटकत धर कंपै॥
सोई सेर जिहि सेर। देव दानव जिय चंपै॥
सोइ सेर साहि गहिकर करन। अजापुत्त जिम आनिहौं॥
मुष बोल सास जो धीर हिय। तो पकरि लेउं सुरतान हौं॥
छं०॥११४॥

बादशाह बचन।

फुनि जंपै सुलतान। धीर तैं भाखो बोखौ॥
किन सायर बाहयौ। मेर किन इथ्थह ठेल्यौ॥
किने खुर संग्रह्यौ। किने सपन धन पायौ॥
कांन सिंघ सो जुद्धि। बेलि जीवत घर आयौ॥

सुलतान दीन साहाब सों। एतो झूठत तूं कहहि ॥
जिहि सात फेर इथ्थी फिरहि। किम सु साहि जीवत गहहि ॥
छं० ॥ ११५ ॥

धीर पुंडीर वचन।

जो विषधर विष अधिक। तौ गरूड़ सौं ग्रब्भस मंडय ॥
जो गल ग्रब्भै सिंघ। तौ कोरि कुंजर बन छंडय ॥
जो घन सघन मिलंत। तौ पवने परचंड निकंदय ॥
जो पसरहि रवि किरन। तौ कुह फट्टय धग बंदय ॥
जो राह चंपि चंदह गहहि। तो का तारायन रष्पनौ ॥
जहिनह साहि चहुआन रन। तहिन धीर परष्पनौ ॥
छं० ॥ ११६ ॥

बादशाह वचन।

वे हिंदू के कुफर। बोल भी कुफरे कहै ॥
गांमी गल्ह गमार। रोस अपनौ ना छंडै ॥
बंधि लिया बलहीन। मरन को काहे चाहै।
जब उंदर जम ग्रहै। गुरब सों लत्ता वाहै ॥
पैज पटंतर सब सही। जब कछु देषि दिषाइये ॥
हुं हुं करंत अप्पन मुषै। रासभ ओपम पाइये ॥
छं० ॥ ११७ ॥

धीर पुंडीर वचन।

रवि न उगै अथ्थवै। चंद चंदनो ना छंडै ॥
कोड़ करहै उढ़। वसुह वासग भर छंडै ॥
पवन थकि थिर रहै। अरु जलधिहि जल घुट्टै ॥
मेर डरै डग मगै। धूअ तुहै रवि छुट्टै ॥
जौ ना जियत साहहिंगहौं। जौ न घग्ग पारौं रवरि ॥
तौ बोल धीर धरनौ घिसै। बसै न हर अंगह गवरि ॥
छं० ॥ ११८ ॥

बादशाह बचन।

वे हिंदू नादान। साहि पावस पलान्यो॥
है गै घंट निसान। नाग मुक्तिन घर आन्यो॥
हम हमीर इलबले। करे द्रिगपाल दसों दिसि॥
कमट विमट होय पिट्ठ। डिट्ठ ठठ कोल दूला धसि॥
हाकंत हक कंपै भवन। तहां तूं मो सम्हो भिरै॥
आदान बंध हिंदू सहर। गरहां करि मिट्ठे परै॥ छं०॥ ११९॥

धीर पुंडीर बचन।

कहै धीर सुलतान। बात संभरि इक मेरी॥
तो अग्गें में बहुत। गरब अग्गी बहुतेरी॥
बयना बल बंधिया। बयन रहसी संसारा॥
तबहि इक बज्जसी। सब आमसी अहारा॥
आवह साहि सजाह कसि। धग्ग मार मचायहों॥
गहि साहि आन चहुआन पै। बंदर जेम नचायहों॥छं०॥१२०॥

बादशाह बचन।

तब गोरी सु विहान। धीर पुच्छै सुमत्ति कल॥
देव द्रष्ट बंधिहै। मंच बंधिहै कि संसल॥
छलकि प्राण बंधिहै। सपन बंधै सुविहानं॥
देव केव अवतार। हाम बंधन परमानं॥
बंधिहै बंधि रसनह सुबल। सब बंधन जो छुट्टि है॥
को मंच वीर आरिष्ट बल। कै भूत फिरत्ता घुट्टिहै॥छं०॥१२१॥

धरी पुंडीर बचन।

उदर ताम उच्छरय। आम बसि परि न विसारह॥
मच्छताम तरफरय। आ मनह दध्ध उजारह॥
गंवर ताम गहुवय। आ मनह केहरि गज्जय॥
हिरन फालतां करय। आ मनहि चीतौ सज्जय॥

सुमेर ताम गद्द अत्तनइ। जब न हनू गह्ह करि कटय॥
अस मस समूह दस तत्त बल। जब न धीर पय्यर चढ़य॥
छं० ॥ १२२ ॥

बादशाह बचन।

रे धीर भ्रुं ठ चिंतवत। सेस लभ्भै न अंनि पर॥
दस सत फंन समूह। जीह विय विंव बीय धर॥
मरद जु मुष्य उचरै। जु कछु भग्गै भर भीरं॥
तिनं साह कों थाप। डरै अब बंधन धीरं॥
इम कहूं अधर बद्दे बढग। बढिग मीर मीरां करसि॥
जम इथ्थ परै जो छुट्टिहो। तौ सामि बचन करिहौ परसि॥
छं० ॥ १२३ ॥

धीर पुंडीर बचन।

कहै धीर सुलतान। आन अल्लाह साहितौ॥
जब ढाला ढींचाल। माल उद्याल देषिमौ॥
आषाढां डंडूर। तुट्टि तरवर तन पत्तिय॥
उड्डि सेन जल जेम। रेनि घल्लो गल वथ्थिय॥
जिहि तेज तुंग लोगहि तरनि। जनु अयास फट्टै किरनि॥
टैवाह द्रुग्ग मत्तह भिरन। जन विसासि हिंदू नरन॥
छं० ॥ १२४ ॥

बादशाह बचन।

छिल्लिय ढाहि अवास। पकरि चहुआनह दंडों॥
मोरों मत्त गयंद। सज्जि सब सेन विहंडों॥
चौरासी मंडली बंधि। अप्पन घर आनौ॥
बैरावत सुनि बात। पैज अप्पन परवानौ॥
सुरतान कहै साहाब दी। षिनक गुसामन महि धरौं॥
गढ़ भूमि बंक तौ ढाहि करि। रनवासौ घर घर करौं॥
छं० ॥ १२५ ॥

धीर पुंडीर बचन।

गज्जि लेउं गज्जनौ। सार सुरतान विहंडौं॥
मारौं मेछ मसद। टेक मनमहि नहिं छंडौं॥
करौं जंग जल्लाल। हाक देषे तुहि अष्पिनि॥
नचहि बीर बेताल। छुट्ट पूरौं यसु पंषिनि॥
बहौं जु पहुमि पंजर बलन। बलह अप्प कह मुष कहौं॥
इह सच्च रंच झुट्ठिय नहीं। तौ पति सुपंच मभझह लहौं॥
छं० ॥ १२६ ॥

बादशाह बचन।

गर जँजीर संकरिय। पाय बेरी को कट्टइ॥
षनि न गज्जि गज्जियहि। तेज बल सर्व निघट्टइ॥
तुहि धीरंतन नाम। षान पीपर खो डुल्लहि॥
लज्जहीन हिन लज्ज। बचन फुनि फुनि कहि बुल्लहि॥
जितोंब कालिह ढिल्लिय नयर। समर न को संमुह रहय॥
सुरतान कहै साहाब दी। तब पयज्ज किम न्विह्वइय॥छं०॥१२७॥

धीर पुंडीर बचन।

मोरों तरपि जँजीर। थाट मोरों साहन तुअ॥
मोहि बचन नहिं टरहि। गंग नहिं बहै अटल धुअ॥
कीर भार उच्चरहि। सात सायरनि दिगंतर॥
बरुन बयन पिट्टियहि। काल पिष्पियहि निरंतर॥
पुंडीर धीर इम उच्चरय। कोंन झूठ झंषै वयन॥
गहि पातिसाहि राजन अपों। इह चरित्र पिष्पों नयन॥
छं० ॥ १२८ ॥

बादशाह बचन।

वे हिंदू नादान। बोल बौलै सिर पष्पै॥
कौं ढंकै असमान। कोंन साथर मुष भष्पै॥
किनें पवन झिल्लिया। किनें गहि बासग नथ्था॥

किन अमरा जित्तिया। किनें कंद्रप्प सुमथ्था॥
बडा जु बोल मुषन्ह निया। इता बोल सिर पर धरैं॥
सुलतान कहै पुंडीर सुनि। इह क्यों ही पूरी परै॥
छं० ॥ १२९ ॥

धीर पुंडीर वचन।

घन अंबर ढंकिया। अस्ति सायर मुष पित्ता॥
योग पवन झल्लिया। किसन गहि बासग खित्ता॥
गोरष जम जित्तिया। इनू कंद्रप्प न लग्गा॥
हुवि अग्गै सुलितान। भिड़े कोई दिन भग्गा॥
चहुआन साहि दिनई समर। सजि चतुरंगम चढ्यौ॥
अथ्थाह नीर ढीमर जिमें। सुमीन तनी परि कढ्यौ॥
छं० ॥ १३० ॥

बादशाह बचन।

डालै इसम हमीर। कीट हिंदू दल घुदोँ॥
आन साहि अलाल। जोर जोगिनिपुर रुद्दोँ॥
बेकुसाब आसा गमार। गरुअत्तन गामिय॥
बोलांही रावत्त। थंभ फुट्टै बहु नामिय॥
आहत्त घात आमिष्ष जिम। ग्रामी ग्रब कट्टों रसें॥
मति नसै प्रान रष्षै पुरिस। छची छल छंडै इसै॥
छं० ॥ १३१ ॥

धीर पुंडीर बचन।

छल छंडै सुरतान। बलनु छंड्यौ जिंहि बंधौ॥
जीय रष्यौ पतिसाह। जियत पति साहह संधौ॥
तन रष्यो तजि टेक। तेग रष्यो घुदि आलम॥
जद ढंकों करिवार। डोल लग्गौ मुष लालन॥
जल जात घात रष्षै जलै। दूध विनट्ठौ दूध हिम॥
लजनीय साहि गज्जन मनह। धीर पयंपै अरथ विय॥छं०॥१३२॥

बादशाह बचन।

जे दरिया उत्तरिग। पलह पडुरे न कलय॥
जोगिनि बर गंजरिग। पवन पन्नरे न हलय॥
जिन भैरूं भरमंत। ते डरें डंकनी न डक्कं॥
जिन पंचाइन धक्क। ते जाहिं अंबुक्क न हक्कं॥
हों गोरी नरिंद दैवान गति। नंद पुंडीर न चंद सुअ॥
सामंत लाष सष्यं मिलय। सहै न साहस भ्रम्म सुअ॥छं०॥१३३॥

धीर पुंडीर बचन।

सोई पारथ भारथी। नमे निकस्यौ मुष का बनि॥
सोइ किस्न करतार। दुक्यौ स निडर गल्हावनि॥
सोई सूर बलसूर। राह गलि जाय गहंतह॥
सोई ग्राह गजराज। चक्र करि हन्यौ स्रिकंतह॥
मति करै साहि मन गर्व तुअ। छिति नाम जोहै छचिय॥
निर बीर पहुमि कबहूं नहीं। बडां बडेरी बसु मतिय॥
छं० ॥ १३४ ॥

बोल बोलि चहुआन। बचन सो बचन पलट्टों॥
फुनि इम चढ्डि पुंडीर। तोरि तासह नहि मिट्टों॥
तीन लाष उमराव। सहस सं भरि सत्तरि वै॥
इह जानि जोनि यान। करै सरहन सब नर वै॥
गज अगंज भूपति सरन। गोरी सयन निघट्टिहों॥
इम कहै धीर सुरतान सौं। बाउ बहंतो कट्टिहौं॥छं०॥१३५॥

हों दरोग जो कहौं। सूर उग्गै पच्छिम दिसि॥
हों दरोग जो कहौं। ईद उग्गमे कुहुं निसि॥
हों दरोग जो कहौं। बयन चुक्कै दुरवासा॥
हौं दरोग जो कहौं। बोल बोलै बिन सासा॥
बोले सुधीर जो बोल मुष। तो पाइन रेषा सरिस॥
पतिसाह इथ्थ साहों नहीं। तौ चंद पुत्त जायौ न अस॥
छं० ॥ १३६ ॥

बादशाह बचन ।

दुह दरोग बोलंत । परै दो जिग चंदानी ॥
दुह दरोग बोलंत । सेन हंसिहै सुलतानी ॥
दुह दरोग बोलंत । लाज छुट्टै पति घट्टै ॥
दुह दरोग बसि जोइ । लोइ षंचै सब सट्टै ॥
बड्डा न बोल बड्डा कहै । चाड परंतह जानियै ॥
धावंत धीर से धावनो । ते रावत बष्यानियै ॥ छं० ॥ १३७ ॥

धीर की बातें सुनकर तत्तार खां का तलवार की मूठ पर हाथ रखना ।

सुनै बोल सुलतान । धीर संमु जे सहिय ॥
बे काजे हाजुर । गमार नाजुर ह्वै बहिय ॥
तंपित षान तत्तार । मुट्ठि तत्तार सु संगिय ॥
षंचि क्रम्म आवरन । दिट्ठ सुरतान जु ढिग्गिय ॥
बिय करै दरस आलम चरित । मुहि सु'चच्च बच्चा बगसि ॥
आनंद चंद बच्चा इहां । सुनि सु गरुह लग्गै रहसि ॥
छं० ॥ १३८ ॥

तत्तार खां बचन ।

एही गरुह सुनंत । गाल फारो लगि क्रम्मा ॥
एही गरुह सुनंत । षाल कट्टो दुहु दम्मा ॥
एही गरुह सुनंत । प्रान कट्टो अप्पानिय ॥
एह रम्य आरम्य । द्रोह लग्गै सु विहानिय ॥
आदिट्ठ पिट्ठ हिंदू अहं । कै छुरान गट्टी गलां ॥
चढ़ि तुरकवान हिंदुवान दिसि । इस सहाय कीजै इलां ॥
छं० ॥ १३९ ॥

(१) ए.-सच्च ।

धीर पुंडीर बचन ।

बे कायर बल हीन । पकरि सिंगिनि क्या तोलै ॥
वे ततार गामी गमार । साहि अग्गैं क्यौं बोलै ॥
अग्गैं आउ मेदान । ज्वान मरदुन मुष जोरहि ॥
जानि अजा गहि सिंघ । हाड़ पवनं तन तोरहि ॥
कोतिग्ग साहि आलम निजर । षेत भंजि भूकौ करौं ॥
दस षान और तुम दब्बिलै । में चंद बचा तुमतें डरौं ॥छं०॥१४०॥

तत्तारखां बचन ।

अरे धीर नादान । बोल बोले बरबंके ॥
चढ़त साहि साहाब । दीन तीनो पुर मंके ॥
तुम पतंग जड़ जीव । क्यों सुदिग पालन मोरे ॥
अति सूरौ जो चना । होइ पब्बय फुनि फोरे ॥
बोलियहि बोल अप्पां सरिस । बे अजाद बचनह न कहि ॥
करि रहम साहि रष्यै तुझै । नतरु षबरि अबही लहहि ॥छं०॥१४१॥

धीर पुंडीर बचन ।

कहै धीर तत्तार । षान सुनि बत्त हमारी ॥
चढत साहि साहाब । दीन को सहै सहारी ॥
हौं सुधीर पुंडीर । एक लष्षा दह जानौं ॥
तुम देखत हरि साहि । सेन समुह सु भानौं ॥
तुम तुरक मान हिन्दुअ सु हम । हम तुम पटंतर कहौं ॥
हम परत स्वामि परहथ परैं । तुम परहथ जीवत रहौं ॥छं०॥१४२॥

तत्तार खां का कुपित होकर धीर पर तलवार उठाना और शाह का हाथ धर लेना ।

हाला हल किय नैंन । हथ्थ तत्तार पधारह ॥
छीन लिये सुरतान । रोस देषंत अपारह ॥

या बुद्धें या बुद्ध। याहि छंडै जु बड़ाइय ॥
पुछैं षां षुरसान। अंग औसाफ चढ़ाइय ॥
आदांन बंध हिंदू इहां। झुट्ठाई सच्चा करहु ॥
पट्टाय चंद बच्चा घरां। पच्छैहौ चंपौ धरहु ॥

छं० ॥ १४३ ॥

धीर पुंडीर बचन।

जे जीवहि अंग मैं। सही ते जमहि न भग्गै ॥
जे कामहि मह मद्दे। लहकि ते कुलहि न लग्गै ॥
जे स्वारथ संदेस। देह दष्पै न परष्पै ॥
जे जोगह जंगमैं। नेह नारी न निरष्पै ॥
डःयौ न साहि डंबर डरनि अंमर लगि हक्कों सयन ॥
मो धीर नाम ब्रह्मह धरिग। चंद पुत्त जम्मह भय न ॥

छं० ॥ १४४ ॥

बादशाह का धीर के बल की परीक्षा के लिये उसे उत्कर्ष देना और धीर का वृक्ष उखाड़ना।

साहिबदी सुरतान। कहत पुंडीर धीर सुनि ॥
धात षंभ में संग। फोरि तैसो बल करि फुनि ॥
मुह अग्गै दरखत। षान इहि बंधत हथ्थिय ॥
सो नंघो जपारि। जोर दिष्पै सब सथ्थिय ॥
हनुमान लंक जिम चंदसुत। बढि गुमान हिमगिरिं सिखर ॥
धक धूलि बथ्थ भरि हथ्थ गहि। जर समेत षेजर उषरि ॥

छं० ॥ १४५ ॥

शाह का धीर से कहना कि मांग जो मांगना हो।

दूहा ॥ षूब षूब सुरतान कहि। षूब धीर बल तुझ्झ ॥
मंगि मंगि जो मंगना। सोव समप्पौं तुझ्झ ॥

छं० ॥ १४६ ॥

स्लोक ॥ यावत् दरिद्री सोपि । यावत् साहि न द्रष्टया ॥
लिलाट लिखितं धाता । दारिद्रनो पलायते ॥ छं० ॥ १४७ ॥

धीर का कहना कि मुझे किसी बात की भूख नहीं केवल तुझे पकडना चाहता हूं।

कवित्त ॥ ज दिन जननि हौं जनिग । त दिन बाजे बहु बज्जिग ॥
तदिन बंस पुंडीर । विरद बानै मुहि सज्जिग ॥
तहिन मान महंत । तहिन पट्टो लिषि हथ्थह ॥
तहिन गाम कुठार । राव रावत मुहि सथ्थह ॥
असपत्ति सेन दल गंजि हौं । धीर नाम तादिन लहौं ॥
बासन पसाव तादिन लहौं । जबहि साहि जीवत गहौं ॥
छं० ॥ १४८ ॥

बादशाह बचन।

चंद नंद मति मंद । तोहि परतीत हियै यह ॥
आसानी असपत्ति । जुद्ध करि कै लैहूं गहि ॥
जुद्ध करत जौ मुओ । मोज इह किन कों दिज्जै ॥
इह संसार निरास । आस छिनहू नह किज्जै ॥
नृपनंद निद्धि न विगड जड । सो जल को जल मे रहिय ॥
करतार मौज रोजी करत । इह मनुष्ष हथ्थह नहिय ॥
छं० ॥ १४९ ॥

धीर पुंडीर बचन।

जब लगि पंजर सास । आस तब लगि ना छंडौं ॥
जब लगि हियै हुँकार । साहि दल बल करि षंडौं ॥
जब लगि कर पग जोर । मानि मच्छर नह मेलौं ॥
जौ काया कायंम । ठाट साहिब क्रम टेलौं ॥
सुलतान थान उमराव सह । गह गहिये गुर गाहिहौं ॥
इहि हस्त हथ्थि भंजे हलक । सही साहि तो साहिहौं ॥
छं० ॥ १५० ॥

शाह का धीर को सिरोपाव और निज का घोड़ा देना।

तब हँसिय साहि सुरतान। उंच सिरपाव मँगायौ॥
जो सुरतानह पाट। तुरिय सोई पल नायौ॥
राग वाग पष्षर समेत। तही तुरत निवाज्यौ॥
पर्‍यौ निसानन घाव। जानि विय भद्रव गाज्यौ॥
चौदह सै गैंवर गुरहि। सहजहि सेन समूह दल॥
सुरतान कहै साहाबदी। अब किन सज्जसि आव बल॥

छं० ॥ १५१ ॥

धीर का घोड़े पर चढ़ कर कहना कि इसी घोड़े पर से तुझे पकड़ूंगा।

जपौ तुरी चढ़ि मंच। बीर चवदह सें सथ्थह॥
मनं ग्रन्न पुंडीर। साहि ग्रहिहौं से इथ्थह॥
विडारो गज जूह। सुंड मुंडन महि पिट्टौं॥
तीन लष्ष सत्तरि। सहस करिवर वर कट्टौं॥
जित्तेव अन्न हिंदू तुरक। भिरौं बहक्कि पचारि रन॥
पुंडीर धीर इम उच्चरै। मम संकहि सुरतान मन॥ छं०॥१५२॥

शाह का कहना कि तू चल मैं भी तेरे पीछे आया।

तेक दीन कब्बाय। तुंग तेजौं दह वाहिय॥
अर जीना संजोइ। रेसरय सनमुष छाइय॥
लै हिंदू आदान। जाय चंगा पछाइय॥
हौं आयो तो पच्छ। लष्ष लोहा सम्हाइय॥
सज्जाम आलि आलंम करि। सामंता सब्बां कहौ॥
जंगाह राज बज्जै भरां। तुम राकौ कानी रहौ॥ छं० ॥ १५३ ॥

धीर पुंडीर बचन।

जेते जिते कबाइ। साहि मोंदी में इथ्थहि॥
वे हिंदुअ वे मुसलमान। कथ्थां वे कथ्थहि॥

मे झुट्ठा सद्दाव । साहि जो अंग न नंचा ॥
जो अंग न नंचिया । तो साहि झुट्ठा में सद्दा ॥
अप्पाइ बोल बप्पां हलै । अप्पां बोल सु इडियया ॥
चंगोइ चंद बद्दा बचन । इह सलाम करि कथ्थिया ॥छं०॥१५४॥

धीर पुंडीर को पान देकर बिदा करने के बाद शाह का देश देश को परवाने भेज कर सहायक बुलाना और चढ़ाई की तैयारी करना ।

धीर इथ्थ दिय पान । षान षुरसान निसानह ॥
कदलि वास कैलास । रोइ डुट्ठै फरमानह ॥
हवस रूम गष्परिय । भोज भष्पर भर भारिय ॥
अंग कुलंग तिलंग । देस नंदन निरवारिय ॥
जल्लाल दीन नंदन नवल । सुनि अवाज इहि निज रकिय ॥
पुंडीर धीर पच्छै पहर । मिलि मिलान जोजंन दिय ॥छं०॥१५५॥

धीर इथ्थ दिय पान । पच्छ निसान जु सद्दे ॥
षान तेग तत्तार । तरयि कस उप्पर बद्दे ॥
दह दीहा आलंम । गंभ गंभीर उपट्टे ॥
जाने बहल उत्तरा । देस दच्छिन पुर छुट्टे ॥
आडंड षंड जोगिन पुरां । धरि लग्गी संभरि धरां ॥
प्रथिराज देव उप्परि दपत । इह हल्ली यह घेघरा ॥छं०॥ १५६ ॥

शाह की सुसज्जित सेना की चैत्रमास से उपमा वर्णन।

सज्जि फौज सुरतान । अग्ग माधव रिति आनिय ॥
पच लता वैरष्प । पहुप अंडा सनमानिय ॥
छच नूत मंजरि समान । ढाल नव अष्प पवन इलि ॥
गज्जि गहर नीसान । जोर जल्लाल उमड़ि चलि ॥
सजि फौज मंत गरजंत अग । मनहु पवन बहल इलिय ॥
कहि चंद बंद बरदाइ बर । देषि धीर मन भइ रलिय ॥छं०॥१५७॥

धरीय तीन रवि चढ़िय । चल्यो गोरी नरिंद बल ॥
रत्त डंड संदूक। रत्त धज चोंर साहि पर ॥
रत्त गजनि गज झुंप । रत्त बैरष बर टोपं ॥
अग्गै षान रती सनाह । रंग रनबी बर ओपं ॥
ओपम एह कविचंद कहि । देषि सुबर सुखितान बर ॥
षह जीत राह रवि सरस हुअ । मनों अस्त किय भोम बर ॥
छं० ॥ १५८ ॥

शाही सेना का आतंक वर्णन ।

चलत रेन रवि लुद्धि । चक्क चक्की चष ढरयौ ॥
सेस भार कलमल्यौ । कुंभ आरंभरि डरयौ ॥
सरिता जल मुक्कयौ । नीर साइन नहि पुरयौ ॥
हय हय हय उचरंत । चक्क चक्की बिसु चरयौ ॥
अंधियार भयौ वासुर असत । दिसा विदिसि सुझ्झै न तह ॥
साहाबदीन चालंत दल । डरहि राय सत मंडलह ॥छं०॥१५९॥

शाह के कूच के समय अशकुन होना और तत्तार खां का कूच बंद करने को कहना ।

भुजंगी॥ चल्यो साहि आलम तें चित्त दूनी। मिली वाट वाराह नौडार खूनी॥
रवं मिच नीचं फिकारंत फेकी । उडी ग्रद्ध पच्छं मनों मोन केकी॥
छं० ॥ १६० ॥
खरी मग्ग मंजार ह्वै सद्दस जूनी । परी बूंद आकास तें ओन दूनी॥
चल्यो उंट फेकी फिकारंत केसं । सितं चौर नारी सु मुग्धं उद्देसं॥
छं० ॥ १६१ ॥
पख्यो पंजरी कोक पूके पुरानं । जरी लोह भट्टी सुदेखी सुरानं॥
गही वग्ग फेरी ततारं सुभाई । रही आज दीहं जमाराति सांई ॥
छं० ॥ १६२ ॥
पठं पै जपै गँवरां निवारी । कहै देव देवंग रवं पहारी॥
मनं मति छंडी विमासं अधारी । रच्यो षेल मंडी सु क्रीला विहारी॥
छं० ॥ १६३ ॥

दई रोज रोजं करी बंध बंधी। खरै ऐन चहुआन सो स्वामि सद्धी॥
इला एक अल्ला तनी आखि छंडी। दई एक देइं तनी तीन षंडी॥
छं० ॥ १६४ ॥

शाह का कहना कि वह परवरदिगार सब जगह पर है फिर शकुन अशकुन क्या?

कवित्त॥ सुनी षान तत्तार। तेग सहै सुष सहा॥
जो कर इक्क तनीय। रोजगारो नफजंदा॥
वली अली आदंम। पैन पैगंबर कीनो॥
वे भूखे तुम जान। किसव जिन तेग न लीनो॥
पल्लटे मेष छंडी दुनी। षरस पीर हाजुर निजर॥
गज नेज साह गोरी घरां। करि निवाज बंदहु सफर॥छं०॥१६५॥

जहां पीर पर सिद्ध। बंग जिहि ठाम न दिज्जिय॥
जहां मुसाफ नह पठय। कतेब कुतबा नव चिज्जय॥
जहां सुनाहि कुरान। नही मह्जिद घर पर किन॥
परै न गाय लिज्जै। षुदाय रेजा करि वारन॥
जहां हुकम नाहिं काजी करत। तुरकनि षनि गड्डिय जहां॥
सुरतान कहै साहाबदी। सो जिहान हमकों कहां॥छं०१६६॥

शाह का मीरा शाह के समय की घटना का प्रमाण देना एवं मीरा शाह का संवाद वर्णन।

रोसन अली फकीर। गसा रमता अजमेर॥
दही मोल ले चषत। हुआ षट्टा दिय फेर॥
गुज्जरियां पुकार। जाय दरबार सितावं॥
छडी भिंटी गुनहि। काटि अंगुरि बिन ज्यावं॥
मक्कां सु जाइ फिरियाद करि। मीरां सैद हुसेन अग॥
नौयति षुदाय मद्यत करन। इह अख्यिय मन धरि उमग॥
॥ छं० ॥ १६७ ॥

दूहा ॥ मरना जाना हक्क है । जुग रहैगी गप्पां ॥
सा पुरसों का जीवना । थोड़ाई है भप्पां ॥ छं० ॥ १६८ ॥

मुसल्मानी लश्कर का सौदागरों के भेष में अजमेर आना ।

भुजंगी ॥ कहै दीन कज्ज परस्सै कुरानं । करों रद्द मद्दं सबैं हिंदवानं ॥
नमै पीर पैगंबरें थान मक्कां । रहा बन्न नामं जुगं च्यार चक्का ॥
॥ छं० ॥ १६९ ॥

दिनं सत्त छूते सु बीवाह अड्डे । करं कंकनं सेहरा बंधि चड्डै ॥
तनंमंन एकं चोआलीस यारं । चले संग सौदागिरं रूप धारं ॥
॥ छं० ॥ १७० ॥

जलं पंथ के अछ अच्छे उतंगा । पुलै नाव ज्यों तीर वेगं विहंगा ॥
दरबाफ जरदोज जरकस्स झूलं । रहै नेंक चष्पं ढंकै मष्प तूलं ॥
॥ छं० ॥ १७१ ॥

इसे अग्ग लीये धरा हिंदवानं । दियौ आय डेरा अजमेर थानं ॥
दरबार जाए कह्यो मीर षोरं । सनंमुष्प उभै रहे हथ्थ जोरं ॥
॥ छं० ॥ १७२ ॥

इयं हेरि लयायौ षंधाई सुगट्ठं । रवी अर्थ कै कन्ह दधि मथ्थि कट्ठं ॥
सुनै कन्न आना महीपत्ति आयं । सबें छोरि फेरें तुरंगा दिषाय ॥
॥ छं० ॥ १७३ ॥

पुरी ए वियांचा वकी राह गीरं । रहव्वाल चल्लै न हल्लै सरीरं ॥
दमानंक कूदंत नाचंत थालं । निरष्पे परष्पे हरष्पे भुआलं ॥
॥ छं० ॥ १७४ ॥

मुहं मंगि दामं करे कौल बोलं । लिहे पंच सें हैवरं हेरि मोलं ॥
जमा जोरि मंडै सवा लष्प दामं । लिये कागदं कायथं अंक तामं ॥
॥ छं० ॥ १७५ ॥

करे छाप आपं बुलाए हजूरं । सनंमान चहुआन रष्पै गरूरं ॥
गयो संभरीनाथ दै हथ्थ बीरा । करे चूक सक्यौ नहीं तथ्थ मीरा ॥
॥ छं० ॥ १७६ ॥

अजैपाल जोगी करामात अग्गं। उठे इथ्थ नाहीं मनोंकोनि नग्गं॥
निवाजं गुदारे दियं बंग जग्गं। गये देव हिंदून के भज्जि तग्गं॥
॥ छं० ॥ १७७ ॥

करं काफरं जो इहां मौत दीजै। मलूरत्ति कीनी दही पीर हीजै॥
तिन कारनं अप्पने इथ्थ अप्पं। कटे सीस बेगं चलो पुट्टि धप्पं॥
॥ छं० ॥ १७८ ॥

इलाहा महमंद रस्सूल इल्ला। कलमा पढ़ै जोर किन्नो सुकील्ला॥
मिले आप मेंसं मुषं दस्त चूमें। इसे सेर ज्वानं भषै दोइ पुम्मै॥
॥ छं० ॥ १७९ ॥

तिनं षिज्जि विज्जू जिसी तेग कट्टी। चमक्के घरंको चरं सहस अट्टी॥
॥ छं० ॥ १८० ॥

कवित्त॥ चौआलीसों यार। कट्टि नंगी समसेरं॥
कर कट्टे सिर अप्प। चढें बिंटली सुरमेरं॥
हिंदू मूसलमान। जुरत हय गय घन पायल॥
चहुआन आना नरिंद। जीति उम्मौ अजरायल॥
कटि खीन भिन्न होइ मीर परि। अमर रषिओ साफ धर॥
तहि थान आय दरबेस इक। ढवाज मोंनदी बंधि घर॥
॥ छं० ॥ १८१ ॥

सवासेर दिन मान। आनि तहं पुहप उछारत॥
रज कंकर करि दूर। धूर इत्तियां बुहारत॥
अमाराति दै सुपन। मीर इह कौन हुकंमं॥
तुम ऊपर चढ़ि है। सवामन सदा कुसंमं॥
अजमेर पीर तुम प्रगट हो। कितक दिवस के अंतरै॥
हिंदवान पान घटिहै अवनि। इहन कोल इम परत रै॥छ०॥१८२॥

उक्त संवाद सुनाकर शाह का कहना कि दिल को मजबूत करो और चलो।

दूहा॥ इहसु कथा कहि साहि सों। पुनि अष्पिय तत्तार॥
कायर पन मन छंडि दै। धीर पकरि गहि सार॥ छं०॥ १८३॥

तत्तार का मोरचे बंदी से आगे कूच करना और एक पड़ाव के फासले से बराबर धीर के पीछे पीछे चलना।

कवित्त ॥ तू आतुर पतसाहि । हाम हिंदू सामंतां ॥
जोरा सौं ज्यौ जक्क । बघ छंडै धावंतां ॥
मे मंतां सुलतान । सुभभ्भ सुलताना मेला ॥
करि मेला भंडार । जंग छोड़ै सुध वेला ।
टिल्ला पहार ठट्ठा टिला । वट्ट निघट्टा वहियै ॥
कोटाह कोट सा सिंधु तिय । इम हिन्दू दल सिद्धियै ॥
॥ छं० ॥ १८४ ॥

जल जोवन साहाब । दीन सुलतान दुरंगे ॥
किए कूच पर कूच । कुरँग तारीय कुरंगे ॥
जथ्थ रेनि रहै धीर । दीह तहां सोइसु अच्छै ॥
बर बेली पुंडीर । साहि फल पच्छै पच्छै ॥
आवाज बज्जि दिल्ली सहर । यह पुकार पहुक्किया ॥
राजोह माम पंचो दिहां । ग्रहां धीर गहक्किया ॥ छं० ॥ १८५ ॥

धीर पुंडीर के वापिस आने की खबर दिल्ली में होना दर्शकों की भीड़ होना और धीर को देखकर राजा का प्रसन्न होना।

ग्रह आप्पनां छंडि । राजग्रह धीर धवंदा ॥
ढा ढिल्ली रा लोय । ताहि देखन आवंदा ॥
निय नीचानी नैन । वमन उँचा उचारां ॥
जा लग्गानी अग्गि । जोह जंपी पुकारां ॥
दरबार राज भर भौर घन । मन उलास भेट्यो धनी ॥
भुअ भंग दुःष दुःषांह गत । जनो कि नाग खट्टी मनी ॥
छं० ॥ १८६ ॥

दूहा ॥ सासंता मंतां अमत । का चिंता इत वारि ॥
उट्ठि न सिर संभुह सहय । लज्जा विरहां भार ॥ छं० ॥ १८७ ॥

भुजंगी ॥ पाधरे दीह सा चाहुआनं । सिरं उच्च बज्जे सु भेरी निसानं ॥
सितं छत्र रत्तं रवत्तं निसुभं । इला एक राजंग ते सुभ्भ उभ्भं ॥
छं० ॥ १८८ ॥

धीर पुंडीर के आने का समाचार सुन कर रानी पुंडीरनी और इंछनी का उत्सव मनाना।

कवित्त ॥ सा इंछिनि पामारि । राज बज्जे बज्जायौ ॥
धा धंधानी छंडि । प्रौढ जोवन लज्जायौ ॥
अरि अनंद चंदाइ । चंद जाया जनु अज्जा ॥
हेम चीर इम्मेल । मेल नग आरति कज्जा ॥
उछंग अंग राजन दरां । राज काज सब सुद्धरे ॥
सा धान साहि देषंतही । आज हिन्द, दिन पद्धरे ॥ छं०॥१८९॥
प्रथीराज चहुआन । विलसि वसुधा सह उप्पर ॥
डंड भरइ चक्कवै । पिसुन पौलै कोलू धर ॥
सहहि न कोइ संग्राम । पुव्व पच्छिम रुद्द छिंन ॥
इह अपुव्व पिष्षयौ । गौर गाजनै ततच्छिंन ॥
रहि न कोइ सुनतै श्रवन । जइं जइं सिंघ पुकारयौ ॥
आकंप भयौ सब सप्पर मैं ॥ जब सुरतांन हुंकारयौ ॥छं०॥१९०॥

धीर का पृथ्वीराज से मिलाप।

दूहा ॥ भुज भिंटलौ संभरि धनी । नयन वयन मिटि चाहि ॥
जबै न सीस सँमुत सुहर । लज्ज विरद मइ ताहि ॥ छं॥ १९१ ॥

धीर से राजा का पूछना कि तू गिरफतार कैसे और क्यों हुआ।

कवित्त ॥ हेट हेट गजंन गयंद । वरनि यहि सूर सुअ ॥
अग्ग मग्ग पुंडीर । मीर रावत्त न लीह तुअ ॥
तू अलंग जुरि जंग । घग्ग घचिनि वहु अद्धो ॥
सु कौ गयौ गज्जन । गयंद मोहि अचरज बद्धो ॥

संभरि वै इम उच्चरइ । रिपु गरिष्ट कुंजर जवइ ॥
कहि भीर धीर पूरस वदन । जीवत्त गज्जो कारन कवन ॥
छं० ॥ १९२ ॥

चामंडराय और जैतराय का धीर को धिक्कारना ।

हँसिय चौंड राजैत । सामंत अभंगे ॥
षंभ फोरि गारवयौ । चंद गभरू खूचंगे ॥
मुष नन्हा आदान । बोल बड्डा बहि लग्गा ॥
ग्रव गमार पुंडीर । साहि बंधै बल भग्गा ॥
सुलतान दीन सिख स्वामि सिर । भरिन जियन आसुर कर्यो ॥
वर वरन खूर इम उच्चरहि । धीर जननि ग्रभ न गर्ज्यो ॥ छं०॥१९३॥

दूहा ॥ गर्ज्यो न ग्रव पुंडीर तुअ । जिन खज्जाई माय ॥
बंचि प्रष्टि राजन तनी । कही सुनाय सुनाय ॥ छं० ॥ १९४ ॥

धीर का पृथ्वीराज से एकान्त में सब बीतक कहना ।

कवित्त ॥ समौ जानि सहि रह्यो । धीर संमुह बोलाही ॥
अधसि होय संग्राम । दिट्ठ चावंड जिताही ॥
राज मद्धि मरजाद । समुद हद लोप नग्गौ ॥
पहुप वार पुंडीर । दाहि दाहिम भर भग्गौ ॥
षिज सार धार पुंडीर पर । सिलह बंधि संमुष तही ॥
एकथ्थ जथ्थ प्रथिराज न्रप । तहां विवरि बत्त चंदह कही ॥
छं० ॥ १९५ ॥

धीर का भरे दरबार में पुनः प्रतिज्ञा करना ।

आज लियौं गज्जनी । आज तुरकाइन डंडों ॥
मोरों आज गयंद । आज सब सेन विहंडों ॥
आज जीति गोरी । समूह पर दल विद्दारों ॥
आज चंद की आन । आज जन स्वामि उवारों ॥
सोइ आज पैज वरदाय भनि । संभरि धनी सुधारिहौं ॥
पुंडीर धीर इम उच्चरै । आज मेछ दल मारिहौं ॥छं०॥१९६॥

चामंड का कहना कि बात कहकर पछलना वीरों के लिये लज्जा की बात है और धीर का शपथ करके कहना कि वही करूंगा जो कहा है।

कहै राव चामंड। धीर बत्तां अविचारी॥
पातिसाह दल विषम। तुरी अगनित है मारी॥
तीन लष्ष तोषार। घालि पष्षर घूंमावै॥
मीर मलिक उमराव। काहु सावंग न आवै॥
अति जुरत नयन षंडै षलन। फिरि पच्छौ संका करै॥
ता जननि दोस दुरजन हँसै। जो बोल बोलि पच्छै टरै॥छं०॥१९७॥

धूर गाज विज्जल विसय। बोल सा पुरिस न घुट्टौ॥
वह न्विब्बहै नियान। सो न हो अंत अछुट्टौ॥
करै पैज पुंडीर। षग्ग षिचिन षिसि भज्जइ॥
सिरन तुट्टि धर परय। जननि जामंत न लज्जय॥
पुंडीर धीर इम उच्चरै। हो न बयन बोलों घनौ॥
हैवर मलिक हथ्थइ हनौ। तब सुधीर चंदइ तनौ॥ छं०॥१९८॥

चामंडराय का बचन।

चंदा बसै अकास। करइ कितनौ रन पाइय॥
कनै लंक इधि मंझ। कोइ कंचन लै आइय॥
को केहरि बध ग्रहै। पाय को प्रबत ठेलै॥
को दरिया दुस्तरै। अनिल को अंकम झेलै॥
रावत्त राव सब संभरइ। चामंडराइ इम उच्चरै॥
साजै विसेन [1]आसम असम। अब सुधीर तुअ किम सरै॥
छं०॥१९९॥

धीर पुंडीर का बचन।

जब खगि सिर अरु मास। जीभ मुष बक्कय[2]॥

(१) ए.-आलम। (२) को.-चक्कय।

जब लगि हिये हुंकार। मुच्छ मुष मच्छर पारक्रय ॥
जब लगि कर करिवार। गहिय गज्जनवै गंजौं ॥
ढाल ढोल नेजा पराइ। संभरि वै रंजौं ॥
जब लग्गि सीस दूहि कंध पर। पवन मेघ बरसंत घन ॥
इम कहत धीर चावंड सों। पैज पतट्टय प्रान बिन ॥छं०॥२००॥

धीर का घर जाना और सब कुटुम्बियों का उससे सहर्ष मिलना।

निज ग्रह पत्तौ धीर। राज दरबारह संतौ ॥
अति उछाह आनंद। बिरद भर भारब हंत्तौ ॥
मिले अब्ब पुंडीर। आय चय राय ब्रग्ग बर ॥
अति सुमान दिय दान। ब्रब्ब जिहि आनि मंडि कर ॥
जै जया सबद जंपै जगत। बाल ब्रद्ध उच्छव तरन ॥
अति प्रेम सहित अंतर मिले। रस सुमाह रच्चे करन ॥छं०॥२०१॥

धीर के कुटुम्बियों का उसकी गिरफ्तारी पर लज्जा और शोक प्रगट करना।

एक मद्धरत मिलिय। सब्ब संबोध सत्त किय ॥
ता पच्छै एकंत। बोलि भर बच्छ अप्पजिय ॥
रंघर राव विरंम। सिंघ सागर पुंडीरह ॥
साहि थान सुम्मान। रामहरि राव हमीरह ॥
माखन सु मदर पति मत्त मन। कमधज केल्हन जाम पति ॥
बैठे सु चित्त चिंता सु चित। बिरद लाज लग्गी सु अति ॥
छं० ॥ २०२ ॥

धीर का अपना बीतक कहना और सबका प्रबोध करना।

पद्धरी ॥ जंपै सु धीर पुंडीर ताम। निज ब्रग्ग चित्त चिंता विराम ॥
मौ बोलि बचन अप अग्ग उंच। कंधैव तुंम सोमाल सुंच ॥
छं० ॥ २०३ ॥

नाथ मै जेठ सामंड राय। सुरतान सरिस किय बंध दाइ ॥
बंधयो कपट करिहौं जु बंधि। बुझ्यौ न कोय जित दुष्ट संधि ॥

छं० ॥ २०४ ॥

लै गये साहि संमीप मोहि। संमिलिय सु दल दरबार बोहि॥
इन इनौ सह जंपै सु सह। सबदो हमीर गंभीर ग्रब्ब ॥

छं० ॥ २०५ ॥

परब्रह्म कर्म चिंते विचित्त। आवरे ग्यान आहित्त हित्त ॥
तत्तार तत्त अब्बै विअब्बि। पंचिनिय सुफल जैद्रथ्थ सब्बि ॥

छं० ॥ २०६ ॥

छंड्यौ जु साहि गुरु गरुह काज। चिंते सु चिंति अति आजि साज॥
चब्यौ जु साहि दल बल असंधि। लग्गी जु काम कारज्ज धंधि॥

छं० ॥ २०७ ॥

चामंडराय पामार जैत। आहित्त चित्त जंपै उहैत ॥
सो चिंति चिंति चिंतौ सु काज। त्रप होइ जैत बहु सु लाज ॥

छं० ॥ २०८ ॥

धीर के कुटुंवियों के बचन।

कवित्त ॥ तब जंपै हरिराव। सरिस सारंग पुंडीरह ॥
कहिय धीर सा सुनिय। बात आश्वत्त सुहीरह ॥
जंपै रंघर राव हित्त। कह मत्त विचारह ॥
सीस काज सम धरौ। सूर सम गरुह गुंजारह ॥
सजि चढौ अप्प सेना सकल। करो बंध अप्पान भर ॥
पहरे षेत पतिसाह सों। करहु झार उभझार झर ॥

छं० ॥ २०९ ॥

धीर पुंडीर का बचन।

तब तमि जंपै धीर। जुद्ध सामंत कंध तुम ॥
सजे सुभर अप्पान। प्रान अब्बौ सुझ्झ दम ॥
राज काज राजंग। अंग बद्धहि सु अप्प जस ॥
कै जीतै उध लोक। सुजस आवरहि छोभि तस ॥

इम कहै सब्ब सज्जै सुनिज । एक चित्त आखित्त सब ॥
तजि मोह सोह संसार सुष । जग्यौ भोर अभ्भीर तब ॥
छं० ॥ २१० ॥

धीर का शिकार खेलने की तैयारी करना खदाइयों का आना और धीर का घोड़े मोल लेना ।

उभै पष्ष सुर मास । रोज तीसइ रमि[1] मंडल ॥
खगया करत अभ्यास । राग रँग रास मुषंडल ॥
सत्त सहस सब सुभट । साठि दस सिंधुर सज्जिय ॥
बंदुक बानइ जोर । बेद दस नौबसि बज्जिय ॥
पुंडीर धीर चंदइ तनौ । अति गुमान विरदां बहै ॥
ऐराक तुरिय से पंच लै । सोदागर ईसप कहै ॥ छं० ॥ २११ ॥
किय हुकंम बज्जीर । मोलि लियै ऐराकिय ॥
दिये दांम दस लष्ष । पंच लष्षइ रहि बाकिय ॥
संझ समै करि मइल । सबै बगसे रावत्तां ॥
प्रात समै चढ़ि धीर । भये सुभ सगुन अवत्तां ॥
तब जैतराव चावंड मिलि । सोदागर ईसफ कहिय ॥
घर जाइ जिंद लै जीवतौ । तुम धीर घत्त घल्लै सहिय ॥ छं० ॥ २१२ ॥

चामंडराय का सौदागरों का धीर पर घात करने को उसकाना और सोदागरों को अपने में मंत्र विचारना ।

मिलि विचिच इक ठौर । बुद्धि आलोच विचारिय ॥
दांम जिंद अरु लाज । बड़े बिय बोह सुहारिय ॥
तब चौमन उच्चरिय । धीर महिमान सु संडइ ॥
घान घान विधि विवइ । एक चित्त लै घग घंडइ ॥
मांनी सु मत्त सब मंत मिलि । धीर प्रान इन विधि हरौ ॥
प्रगटै सु बात सामंत सुनि । हुये गहर सबै मरौ ॥ छं० ॥ २१३ ॥

---

(१) ए०-रवि ।

ईसफ मियां का धीर के दरबार में जाना, दरबार का वर्णन।

दूहा ॥ करि निवाज ईसफ मियां। गयौ तहां दरबार ॥
मह मानी ईसफ करै। धीर होइ असवार ॥ छं० ॥ २१४ ॥

कवित्त ॥ चिचसारि कच ढारि। पान सोवन जिरि रचिय ॥
लाख पंच पौरोज। घने सघनं करि पचिय ॥
दिवस तेज परि मंद। अरक ढादस करि अग्गिय ॥
तारक तेज फटिक। सघन चुनि तारन लग्गिय ॥
सामंत विलास सुष रहसि तहं। हिंदु लाट हीरां अरै ॥
संगीत राग सरसै रवन। पाच न्हित्य अग्गै धरै ॥
छं० ॥ २१५ ॥

धीर का सौदागरों के डेरे पर जाना।

दूहा ॥ इह ईसफ अरदास करि। मिलिक देस को जाय ॥
महमानी मीयाँ करै। धीर पधारौ पाय ॥ छं० ॥ २१६ ॥

धीर का नित्य कृत्य वर्णन।

कवित्त ॥ पंच सेर फुल्लैल। षट्ट जन मरदत तासह ॥
बाहु दंड परचंड। भीम आकार सु रंगह ॥
सहस कलस भरि नीर। इक्क विच कलस गंगाजल ॥
करि सनान पवित्त। कीय पंच गौ महाबल ॥
आमान साठि सजता वहै। पंच मुद्दुर सोहन्न मय ॥
इम नित्य धीर चंदह तनौ। पलक पग्ग वंदै सुजय ॥छं०॥२१७॥

दूहा ॥ सुचि रुचि सेवा सगति रुचि। सरचि चरचि तरवारि ॥
फुनि आसन कीनौ असन। भोजन साल पधारि ॥वं०॥२१८॥
तहां सुभर खीने सवनि। सचि सुआर करि साद ॥
षटरस भोजन भांति ब। तिन महि चित्त सवाद ॥ छं०॥२१९॥

धीर पुंडीर के कलेऊ का वर्णन।

कवित्त ॥ पै अग्ग दग्ग मन तीन। सत्त सेरह बिच सक्कर ॥
पंद्र सेर रद्द भोग। एक सीरावन बक्कर ॥
सत्त सेर रोगांन। सेर पंचह कढ़ि लुच्चिय ॥
घ्रित पावक बहु अवर। करत उभै दुज सुच्चिय ॥
पहति ओर पच स्वादु। जोग राज मढकौ सुभरि ॥
च्यार घटिय दिन बाजतें। सीरामन सामंत करि ॥छं०॥२२०॥

शाह का सिंधु तट पर पहुंचना और धीर का अपनी सेना सहित तैयार होना।

अरिल्ल ॥ साजत सयन सह पुंडीरह। तब आये तट सिंध हमीरह ॥
साजि निकट आयौ सुरतानह। है गै भार साज सब बानह ॥
छं० ॥ २२१ ॥

सुनिय बत्त सा दिल्लि नरेसं। गाजे गेंन वेंन असहेसं ॥
चल्यौ धीर साजै निज सथ्थह। हूर धीर संग्राम समथ्थह ॥
छं० ॥ २२२ ॥

पुंडीर वंशी योद्धाओं का वर्णन।

कवित्त ॥ सहस तीन पुंडीर। धीर बर बचन अचाए ॥
चियन बसिन बसि द्रव्य। बसु अबहु मोह गमाए ॥
मंझ मेलि सामंत। रयन अद्धी ते जग्गा ॥
सुनि अवाज सुरतान। रंक धन जानि बिलग्गा ॥
दुअ घटिय सोम दिन पानि पथ। सहस सट्ठ सेना चली ॥
अनभंग जैत अग्गा अगर। बिच चमंड बज्जह बली ॥
छं० ॥ २२३ ॥

अयुत एक पुंडीर। धीर सम खोह लरन कहि ॥
बरकि बीर तम संत। सिंघ भष पान लहि ॥
दुअन पष्य वीरंग। जुरे जिन जंग बहुत किय ॥
भूमि जम्म बहु सरच। दुट्ठ बल सकति बहुनि जिय ॥

तन तुरंग तिन नेह तजि। भजिय मरन चित एक करि ॥
बढ़ि लोह छोह छुट्टै जुरन। अरन वत्त कविचंद धरि ॥
छं० ॥ २२४ ॥

आठ हजार सेना सहित जैतराव और चामंडराय का आगे बढ़ना।

सहस एक देवंग। भेरि नफ्फेरि पंच सैं ॥
सहस तीन अँबकीम। ढोल बंदिन सु अट्ठ सैं ॥
सौ सुगंध जोति किय। अट्ठ ग्रेहं सुभ छंदं ॥
दिसा सूर सुष मिच्छ। बोलि बरदाइय चंदं ॥
घट घटिय लगन जुड़इ तनौ। पहर तीन विक्तिग विषम ॥
उपरंत सेन साजै जुरहि। तब सु साहि साजी सुषम ॥
छं० ॥ २२५ ॥

सुलतान के आने की खबर होना और सबका सलाह करना कि अब क्या करना चाहिए।

जब ग्रह आयौ धीर। पुट्ठि सुरतान सँपत्तौ ॥
सुनिय राय चामंड। जैत सम मन्न मिलंतौ ॥
सज्जिग इय गय साहि। सिंधु आयौ यह उप्पर ॥
धीर तेन छंडयौ। पच्छ चंपौ दल दुत्तर ॥
कत्यांह एह अप्पन करिय। अब्ब कहौ कहा किज्जियै ॥
भज्जै जराज सुलतान रन। तौ इन मति अप्पन छिज्जियै ॥
छं० ॥ २२६ ॥

जेन बल न जै होइ। तेह भुभ्भकै कनवज्जां ॥
सोइ मंत सुद्धरै। जैन जित्ते रन रज्जां ॥
सत्त मंत सुभ चरिय। जैत चामंड सु उट्ठिय ॥
गये सजन निज ग्रेह। आय सब सथ्थ स पुट्ठिय ॥
चामंड गज्ज मंथ्यौ चढन। सम बेरी दाहिम्म बर ॥
आयौ सु चंद बरदाय तिहि। खेत सु बुल्ल्यौ गुभ्भ गुर ॥
छं० ॥ २२७ ॥

कविचन्द का चामंडराय के घर जाकर उससे बेड़ी उतार कर युद्ध में चलने के लिये कहना और चामंड का कविचंद की बात मान लेना ।

पद्धरी ॥ जंपहि सु तथ्थ भट चंद कथ्थ । तुम रची बुद्धि सबह समथ्थ ॥
स्वामित्त भ्रंम तुम रत्त राइ । बेरी सु धरौ अग्याहु राइ ॥
छं० ॥ २२८ ॥

दल मेलि साहि आयौ असंषि । देषहु सु जुद्ध तुम उभय अंषि ॥
बेरी सु काढि तुम जुरो जुद्ध । जानौ सु सब्ब गुर घात अब्ब ॥
छं० ॥ २२९ ॥

कहौ सुमंत बेरी सुपाय । जै होइ जेम चहुआन राय ॥
चहुआन कन्ह गोयंद राज । कमधज्ज राइ निहुरह लाज ॥
छं० ॥ २३० ॥

पज्जून राय बंधव बरुन्न । कनवज्ज अग्र सुभ्भे सुरन्न ॥
ढिल्लीय अवर दिष्यो न राज । जिहिँ होइ आज चहुआन लाज ॥
छं० ॥ २३१ ॥

जिम जुरौ बेत बल विषम घाइ । तुम तजौ बीर बेरी सु पाइ ॥
मन्यौ सुमंत चामंड चंद । मन भए सुध्ध उथ्थह अनंद ॥
छं० ॥ २३२ ॥

पय तरह खोह कढ़ै सु ताम । खंगरह जानि दुभ्भह विराम ॥
मंगयौ कनक वाजी सु एह । जातिहि जुगंम अति सुध्ध देह ॥
छं० ॥ २३३ ॥

पथ्थरह चमर गज गाह रज्जि । सोभ्रंन मुद्र सुभ तेज सज्जि ॥
आवद्ध बंधि सब सज्ज भाजि । सोभंत जानि भीषम समाजि ॥
छं० ॥ २३४ ॥

चावंड रोहि बाजी सु अथ्थ । जंप्यौ सुमंच निज इष्ट जथ्थ ॥
सजि चल्यौ सज्ज दाहिम्म सथ्थ । दै सहस सूर गरुअत्त हथ्थ ॥
छं० ॥ २३५ ॥

सम चल्यौ जैत निज सेन साजि। सारह सहस सेना सुगाजि॥
चढ़ि चलिय उभय घन बज्ज बाज। तब चल्यौ अप्प प्रथिराज राज॥
छं० ॥ २३६ ॥

पृथ्वीराज का यह समाचार सुन कर कुपित होना और लोहाना को भेजकर चामंड को पुनः बेड़ी पहनवाना।

कवित्त ॥ गाजि गरुअ चहुआन। सुनत अप ग्रेह सपत्तौ॥
दीन उतर ता पछै। बोलि लोहान सु तत्तौ॥
तुम बेरी खे जाहु। पाय चावंड सु घत्तौ॥
इन हम आग्या तजी। अप्प बल राह उमत्तौ॥
हम करत राज कैमास की। अरु सगपन सन मंध घन॥
आकस्सि मन्न हम क्रोध घन। मभ्भ गहि रष्यौ सुमन॥
छं० ॥ २३७ ॥

खे बेरी लोहान। ग्रेह चावंड सपत्तौ॥
धरि अग्गै चावंड। देषि प्रज्जरि चित चिंत्यौ॥
कहै राय चावंड। सुनौ लोहाना तुम बर॥
न्रिप आग्या सिर सजौं। नतरू जानहु तुम हित हर॥
निज स्वामि भ्रंम षंडो नहीं। हिय अरोहिय सहि हर॥
बेरी सुलीन चावँड विहँसि। पय आरोहिय अप्प कर॥
छं० ॥ २३८ ॥

शाही सेना की सजावट वर्णन।

मोतीदाम॥ घट दूनति साह सजे सुरतान। जहं छप्प सुजी कनजीक निसान॥
मज ढाकनि माखि चिह्नं दिसि फेरि। तहां रन सद्द मद्दज्जन भेरि॥
छं० ॥ २३९ ॥

जर कंमर तोजह मेखति कंठ। तहां लग्ग करी धर पाइक गंठ॥
तहां छप्प मौज अदद्द सुभार। तहां बिज्जल नाय चमै असवार॥
छं० ॥ २४० ॥

तहां घन डंबर अंबर रेन। तहां अन जेवन कीवन रन॥
तहां पार सिपै रसना रस बोल। तहां आरस के जम जेजम तोल॥
छं० ॥ २४१ ॥
तहां दलनि मलनि फौज प्रवेस। तहां दादस फौज नई भर सेस॥
तहां तज्जिय अज्जिय गज्जन राव। तहं वज्जय सिंग महिष्यन चाव॥
छं० ॥ २४२ ॥
उव उद्दिय उद्दिय मुझ्झन केस। रही चक्क चौंरनि मौर सुदेस॥
तहां दिष्पिहि फौज सु भौरन कोज। मनो चव चम्म कुलंगनि बाज॥
छं० ॥ २४३ ॥
रवि जानि उपौ दुअ बहल मंझ। कलकूह कुलाहल बीरति संझ॥
उड़ि रेन रही दल दुंदभि षंग। फिरि फौज पुंडीर कुलंगनि वंग॥
छं० ॥ २४४ ॥
बजी सहनाइ निसान गुंडीर। सुलतान घरां मिलि मंझ पुंडीर॥
छं० ॥ २४५ ॥

पृथ्वीराज का अपनी सेना का मोर व्यूह रच कर चढ़ाई करना।

दूहा॥ देषि फौज सुरतान दल। मति मंडे रन साज॥
मोर व्यूह मति मंडि कै। तब सज्ज्यौ प्रथिराज॥
छं० ॥ २४६ ॥

व्यूह वर्णन।

कवित्त॥ आरध वेस नरिंद। छच बर मुझ कहि गद्दै॥
सबै सेन प्रथिराज। मोर व्यूहं रचि छद्दै॥
चौंच राव चामंड। जैत द्रिग बंधि प्रमानं॥
नष पिंडी पुंडीर। सेन उभ्भौ सुरतानं॥
बर कंध बंध बंधौ न्विपति। पुंछ बीर कूरंभ रचि॥
चलनेव उद्दै उहित सुभर। मद्दन रंभ दोउ दीन मचि॥
छं० ॥ २४७ ॥

(१) ए-पुंडीर।

पच्छराज प्रविराज । जाम जहो घट भहों ॥
रीछ मोर पष्परी । स्यांम चमरनि गज महों ॥
स्याम ढाल ढलकंत । स्याम गजपंति विराजै ॥
स्याम धजा झलकंत । मेघ पंतिय दुति लाजै ॥
वर नेज च्यार तहँ उज्जले । दुति सु बग्ग पंकनि चल्यौ ॥
मोर सद्द वीर सुरतान सुध । जिम कुरंग सन्हौ चल्यौ ॥
छं० ॥ २४८ ॥

दूहा ॥ चले दिष्ट संभौ मरद । पौन नीर रस पान ॥
उंच दिष्ट के असुर वर । चढ़ि तक्कत चहुआन ॥ छं० ॥ २४९ ॥

कवित्त ॥ मद गयंद झरि कीच । बीच मुत्तिय झलकंतिय ॥
मनों मेघ विज्जुलिय । बनें सा नैननिदंतिय ॥
सुभर सूर वर साजि । अप्प अप्पन धर चलिय ॥
एक एक अग्गरे । आनि भद्रव घट दलिय ॥
आभरन दान बुंदनि बरषि । सक सद्दाव उप्पर ढलकि ॥
जद्दव सुजाम देषिय न्रपति । समनजैत बद्दिय किलकि ॥
छं० ॥ २५० ॥

चाहुआन सेना की श्रेणीबद्ध दरेसी और चाल का क्रम वर्णन ।

भुजंगी ॥ किलक्कंत फौजं सु मौजं दिठंनी । बने हेम जेजंम रंजं मथंनी ॥
अगै तिष्प पाइक्क घाइक्क कूदै । करं कंनरं भाल ग्रीवं स जूदै ॥
छं० ॥ २५१ ॥

उड़े डंबरं अंमरं रेन पूरी । कियं कूक पुत्तारिका इक्क मूरी ॥
परै भीर कंची रनं जैत रुट्ठी । परें बंध कंधं इयं नार छुट्ठी ॥
छं० ॥ २५२ ॥

धरै आवधं उग्गि सक्कै विमानं । तिनं नाम लीजै वरद्दाय जानं ।
सुमे सुभ्भ बाने समाने दिठाने । तहां कब्बिचंदं उपंमं बषाने ॥
छं० ॥ २५३ ॥

हिमामं हिमारी इसै हेम चारी ।तियं तीस जना सपरि जुद्ध भारी।
गजंगाह उग्गाह दुग्गाह कच्छै । मुसली मुरली अरली उलच्छै ॥

छं० ॥ २५४॥

सनेतं सकेतं समेतं पतीषी । पवं मोर सिंधोर दामं उचीषी ॥
निलं नील सम्मील उम्मील पीलं । रनकी घनकी सचीरंति नीलं ।

छं० ॥ २५५ ॥

महा मीर माही उमाहं उचंनी । परी पाट डोरी सकोरी दिठंनी ॥
तरंतार झंडे सषं सद्द अंसं । उड़ै देषि धीरज्ज मीरज्ज हंसं ॥

छं० ॥ २५६ ॥

नयौ ताप आदव्व सों जुद्धि कीजै । इसी बुद्धि भग्गै नतौ लोह लीजै ॥
इसी फौज जादव्व कूरंभ सज्जी । नयौ ग्रब्ब गौरी सु ग्रब्बानि लज्जी ॥

छं० ॥ २५७ ॥

दिषे षान षुरसान तत्तार दिट्ठी। हुयौ भ्रम्म धीरज्ज रहि निट्ठ निट्ठी॥
मुरे षान षानं स लाजी अहारै । भये अट्ठ इज्जार इय तज्जि तारै॥

छं० ॥ २५८ ॥

पहर तीन तिन सों तिनं लोह तुट्टी। मनों संभरी जानि भरियार कुट्टी॥

छं० ॥ २५९ ॥

दूहा ॥ बजी कूह सन्नीह बर । फिरि गजराज प्रमान ॥
षाडुआन बर भग्गतें । चंपि सेन सुलतान ॥ छं० ॥ २६० ॥

मुस्लमानी सेना की ओर से हाथियों का झुकाया जाना और राजपूत पैदल सेना का हाथियों को विड़ार देना।

कवित्त ॥ रन तत्तार टट्टरै । सेंन चंपी चतुरंगिय ॥
इस्तकाल बल राज । उठे गज झंपि सुषंगिय ॥
पीलवान रा एन । इस्त अंकुस गजमथ्थं ॥
सबर संगि उलभरी । झरी झारिय झरि इथ्थं ॥

---

(१) ए.-सतीरं ।

उम्मडे मीर अम्मा अगर । कूह कादर पच्छे फिरिग ॥
सामंत कोइ अप्पै अपन । अप्प सेन जपर परिग ॥
छं० ॥ २६१ ॥

हाथियों का विचला कर अपनी फौज कुचलना और शाही सेना का छिन्न भिन्न होना ।

अप्प सेन उप्परै । परे गजराज काज अरि ॥
अस्स सहित असवार । मेर उच्छारि डारि धर ॥
सर संमुह परि पौखवान । मिट्टी मामं घन ॥
तहां चंपि हाजी । हुजाब देषंत तस्स घन ॥
सब सेन बीर भर हरि गई । गज जपर गज बर परै ॥
बिय बंटि रिद्धि बंछो विषम । धाइ बीर सन्हो खरै ॥
छं० ॥ २६२ ॥

हाथियों के बिड़र जाने पर पृथ्वीराज का तिरछे रुख से धावा करके मार काट करना ।

दूहा ॥ छंड़ि बीर गजराज मुष । तिरछौ परि सुरतान ॥
भौ टमंक दिसि विदिसि डुलि । रन रुंध्यौ चहुआन ॥
छं० ॥ २६३ ॥

युद्ध वर्णन ।

भुजंगी ॥ करं काल डोरू कियं सिंघ नदं । सयं सकति वादी वरदाय चंदं ॥
सिर स्याम सन्नाह वाहंमि चक्कं । धरे अग्र बानं सुदुर्गामि बक्कं ॥
छं० ॥ २६४ ॥
गलै राग गावंत सिंधू सगिंधू । गलै माल जा लुल कन्नैर बंधू ॥
अगे षेचरं षेतपालं बेतालं । तहां भैरवं नद जोगीद्द कालं ॥
छं० ॥ २६५ ॥
दोउ कन्न जोग्यं न कर पच मंडै । तिनं दर्सनं देषि साइस्स षंडै ॥
फिरै तिष्पि निष्पी पताका तिरत्तो । लुवं जानी लागी सुग्रीषम्म तत्तो ॥
छं० ॥ २६६ ॥

टगं टग्ग लग्गी सुधं सुद्ध मोहै। बजी तीन तारी सिरे स्याम सोहै ॥
लई कट्टि बूकी बिभूती उड़ाई। भए दीह चहुआन साजे सबाई॥
छं० ॥ २६७ ॥

दिसं अग्ग बट्टी सु चट्टी पुकारै। लिये लक्करी सेन गोरी निकारै ॥
लियं लष्ष सेना सुरत्तान सट्टी। रनं राह वाराह बरदाइ बट्टी ॥
छं० ॥ २६८ ॥

हँसै सब्ब सामंत सम राज भट्टं। भइ बारही फौज एकं सुबट्टं ॥
बड़े षंड पुंडीर सै तीन अष्यं। तिन मंडलाजी तुरंगी जनष्यं ॥
छं० ॥ २६९ ॥

उड़ी खोह अग्गी जर गिद्ध पंषी। भरी देषि करदाय बरदाय सष्षी ॥
परे रुंड मुंडं भरं भूमि सोहै। पियै श्रोन पंचारि बारिक्ष डोहै ॥
छं० ॥ २७० ॥

चले राह वै राह बैकुंठ भारी। घरी सत्त रवि मंडलं छिद्र कारी ॥
चयं जाम रन धाम भिरि भूप वित्ते। बजै धीर सों भीर सुरतान कित्ते॥
छं० ॥ २७१ ॥

कवित्त ॥ तीरब्रह्म चामंड। झंड हेमानि दंड करि ॥
रजक पत्त सिर मंडि। फौज आषंड मंडि सिर ॥
उच्च अवाज नीसान। कान वीय सेन निसाननि ॥
पर पहार उत्तंग। थंभ थंथरि परि थनानि ॥
नक्केरि भेरि सहनाइ सुर। सुर कपाट बज्जिय रवरि ॥
अग्गाम जैत चामंड दल। सिंध सहाव सुप्परि दवरि ॥
छं० ॥ २७२ ॥

शाही सेना के दो हजार योद्धा मारे गए, राजपूत सेना की जीत रही।

भुजंगी ॥ धमी सेन आसम्म की कूक फुट्टी। जरं अंध गोरा वरं मट्टि छुट्टी ॥
करं कुट्टि कम्मान बानं सनद्धी। मनों खोर वासन्न आसन्न नद्धी ॥
छं० ॥ २७३ ॥

धरं अद्ध अद्धं रनं धार धारं। करं धाम धामं सुषं मार मारं॥
गलं वज्ज भिट्टै सनेही सनेहं। उभै खूर जुट्टै मनों एक देहं॥
छं० ॥ २७४ ॥

उने श्रोन घुंघ्घी सु जने उनाही। भए दीन दून सु सज्जे सबाही॥
घटं एक को एक घुट्टै सु घुट्टै। नई गंठि मुंडा बली जोग छुट्टै॥
छं० ॥ २७५ ॥

इसो जुद्ध दीठो न सुन्यो कहांई। मिले जेत चामंड सुरतान घाई॥
परै सहस दै बान भिरि चाहुआनं। बढी जेत पिथ्थी सु वज्जै निसानं॥
छं० ॥ २७६ ॥

धीर के भाई और कविचन्द के पुत्र का मारा जाना।

दूहा॥ षेत परिग कविचंद सुत। परिग बंध धर धीर॥
गहिय मह षिलची षरे। पसरत अट्ठ अमीर॥ छं० ॥ २७७ ॥

श्लोक॥ मानवानां च नागं च, कौरवानां न पांडवं।
गोरीयं जुद्ध हिंदूनां, न भूतो न भविष्यति॥
छं० ॥ २७८ ॥

संध्या होने पर दोनों सेनाओं का विश्राम लेना।

कवित्त॥ भइय संझ दुहु वेर। षेत दुहु दीन न छंडिय॥
लुथ्थि लुथ्थि आहुट्टि। इथ्थ चव पंचय चढ्डिय॥
बरन मेछ बर हिंदु। श्रोन सुभयंन सुभ्भरन॥
दून अभंग घट भंग। चित्त भग्गौ जु जुद्ध रन॥
पुंडीर सत्त रन सत्त किय। बरन बीर रंभा बरी॥
अष्टमी जुद्ध मंगलन कौ। धरौ अद्ध विय सब टरिय॥
छं० ॥ २७९ ॥

दूसरे दिवस का प्रातःकाल होना और दोनों सेनाओं में युद्ध आरंभ होना।

दूहा॥ कायर चोर चकोर बर। निसि घट तें खलघात॥
खूर चकुर अरु बाल बधु। ए वछे वर प्रात॥ छं० ॥ २८० ॥

कवित्त ॥ खुर आवे वर खुर । चढ़िग सामंत तुरंग घन ॥
ससिय तार उड़गन सु । द्रग्ग वीर नंचंत फिरहू गन ॥
हाहा हूहू गंधव्व । रंभ आरंभ अरुन अघ ॥
अति आतुर रन चित्त । अंम जम्मन कग्गह नघ ॥
वर जोग लग्ग जोती तनं । सस्त्र वाय वर डोलई ॥
वर पंग पंच लद्दै सुवर । सुगति बंध वर षोलई ॥
छं०॥ २८१ ॥

अरुन तरुन उद्दयंग । फौज पच्छै सुखतानी ॥
मिलन खुर सामंत । रेन अद्धी सम्मानी ॥
तास तुंग ववरि हि । मांम नेजे उड़ि मंडिय ॥
रवि झिंगुर झुंमुषिय । हींस हींसा रव छंडिय ॥
मंडिय प्रभात नारद सवद । दोऊ सेन सज्जत रहिय ॥
इक वार वीर वीरह तनौ । किल किलकि जोगिनि कहिय ॥
छं० ॥ २८२ ॥

युद्धवर्णन । राजपूत सेना का जोर पकड़ना और मुसलमान सेना का मनहार होना ।

भुजंगी ॥ बजे लोह कोहं सुकोहं दु दीनं । खई नाग वीरं गते ओनि भौनं ॥
झनझंत सारं किनझंत ताजी । मनों नट्टिवी नट्टि नागिन्न बाजी ॥
छं० ॥ २८३ ॥

बुलै घाय अघ्घाय सा ओत बुंदं । उठै तार झंकार ज्यों तार दुंदं ॥
उठै धींग धक्कै गजं ढाल मालं । मनों पच्च डंडूर आषाढ़ कालं ॥
छं० ॥ २८४ ॥

चँपी सेन आलंम जुरि तीन जामं । भए फौज अट्ठं चवं एक ठामं ॥
परे सहस सोरह उभै हिंदु थानं । गजं बाज हज्जार तीनं सुजानं ॥
छं० ॥ २८५ ॥

समं सोमवारं सु कारंति थानं । चले लष्ष दोपाल इथ्थे इथानं ॥
फिरैं एकठे लष्ष फिरि चंद नंदं । परे बाल लाजी तिनें नासकंदं ॥
छं० ॥ २८६ ॥

मथी सेन आलम्म की है हिलोरं। पँगी आनि धारिज्य दरिया हिलोरं॥
अमी अग्ग सेना अमी इथ्थ वथ्थं। रहे सेत खूरं सुरे सूर तथ्थं॥
छं० ॥ २८७ ॥

मिले मभ्भ पुंडीर हिंदू तुरक्की। सुरै सुथ्थ नाडी सुधारै सुरक्की॥
सजे खूर सन्नाह ते हिंदु मेछं। तिके जानियै वीर जोगिंद केछं॥
छं० ॥ २८८ ॥

कढे लोह हक्की सु बक्कीं हवाई। करी दीन दीनं दु दीनं दुहाई॥
लिए इथ्थ नेजा उनंके उनाही। रहे हल्लि नेजा न हल्लै हलाही॥
छं० ॥ २८९ ॥

सतं अट्ठ अट्ठं कमट्ठं स उट्ठै। जिनें मोह माया रसं बंधि छुट्टै॥
भषै जंबुकं गिद्ध सीवंत हस्सै। फुटी सांग इथ्थं तिरच्छं सु खस्सै॥
छं० ॥ २९० ॥

कहै हक्क बाजी विराजी सु गाजी। घटं कंध तुट्टै किनं कै सु ताजी॥
उड़ी ओन छिंछी छवी खग्गि विंदू। दहै दाह अग्गी मनो दार तिंदू॥
छं० ॥ २९१ ॥

कढी तेग तेगं जु तेगं चमंकी। तहां तब्बरं तुंद मीरं दमंकी॥
तजे दीन दीनं दुहुं अंस भारी। मिले बंध बधं सु जोधं करारी॥
छं० ॥ २९२ ॥

ततथ्थे ततथ्थी करै थंग थंगं। नरै रंग भैरो विताल उतंगं॥
कढे रुद्ध रद्धी विरुद्धं विचारी। करै दंत दंती विकस्संत सारी॥
छं० ॥ २९३ ॥

बजे घाय आवरत सावरत रुक्कै। मनों चच्चरी डिंभरू तार चुक्के॥
नचे बंधं कंधं कबंधं सवानं। मनों सस्सि मेषं पछी चौज कानं॥
छं० ॥ २९४ ॥

खरं तंज दीसें परंतं न दीसं। मनों भूतमाया कुरी जोग ईसं॥
इकै सांग बाही इकै तेग साजी। मनों नग्गनी जोह भू किरत्तकाजी॥
छं० ॥ २९५ ॥

कढी एक सथ्थं उचं इथ्थ उंचं। झलक्कै सु पग्गं महातेज संचं॥
तिनकी उपम्मा कही चंद वंकं। दिसी पच्छमी जानि उगयौ अरकं॥
छं० ॥ २९६ ॥

खई वीभि कमान सुरतान गोरी। फटै पक्षरा अस्सु भै विभ्भ जोरी॥
परे सब्ब थानं महामीरवानं। मनों प्रात तारे दिषै आन आनं॥
छं० ॥ २९७ ॥

महारुद्र वीरं भयानक्क दीसं। लगे जोगिनी रीस तादंत पीसं॥
'रसं साहि गोरी अदं बुद्ध कंदं। भयौ छूर प्रथिराज परभात चंदं॥
छं० ॥ २९८ ॥

धीर पुंडीर का धावा करना।

पुलें टोप लोलंत बोलंत छूरं। खिये चोर तोरं मरोरंत मूरं॥
पन्यौ धाइ पुंडीर तेजो पटाढ़ी। जिने बोल पुच्छै मुषं मुच्छ डाढ़ी॥
छं ॥ २९९ ॥

इसौ चंद बच्चा विरच्यौ सु तामं। करी अट्ठ चव फौज एकं सुठामं॥
चंप्यौ जानि कें जम्म सुरतान साहे। कह्यौ थान जादे कुसादे कुसादे॥
छं० ॥ ३०० ॥

कह्यौ छंडि ताजी सु को बोल पीलं। वह्यौ वाय वेगं मनो धूम झोलं॥
मिली चारि अंघी अनी दिट्ठ दीनौ। उनें इथ्थ ठिएथ्यौ इनै सिंघलीनौ॥
छं० ॥ ३०१ ॥

दुहूं इथ्थ पुल्लै इलक्कै सु बथ्थै। कहै देव देवन्न जोगिन्न सथ्थै॥
महाचंद पुत्तं सबीरं लुहानं। कहै तेन बोलंत आवं सुहानं॥
छं० ॥ ३०२ ॥

झंडा माह वैरक्क दिट्ठो सुरानं। इसै सब्ब सामंत पुंडीर मानं॥
उनै उग्ग मंडो जु षंभं प्रमानं। खियो सिंह ताजी सु हेमं समानं॥
छं० ३०३ ॥

उतें मंडली मेछ जोरी सु साजं। इतें हिंदु साजे प्राथीराज काजं॥
कहै सिंघ सामंत छूरं लुहानं। परै अप्पनै काम कनवज्ज थानं॥
छं० ॥ ३०४ ॥

दियं च्यार देसं सु पुंडीर रायं। कह्यौ अप्प पतिसाह भीरं सुनायं॥
छं० ॥ ३०५ ॥

धीर की सहायता के लिये पिशाच मंडली सहित देवी का आना।

कवित्त ॥ चवदह सें बर बीर। भए भर धीर सहाई ॥
जालंधर जगमात। जीत करिबेंको आई ॥
भैरव भूत भयंक। भए तहां आनि सषाई ॥
ईस सीस कारनै। दई तहां आनि दिषाई ॥
सुचि चंद जेम न्रप चंद सुअ। घट घट प्रति प्रति व्यंब हुअ ॥
सामंत सूर इम उच्चरै। बलि बलि बीर भुअंग भुअ ॥
छं० ॥ २०६ ॥

महादेव का पारवती को गजमुक्ता देकर कहना कि वीर धीर को धन्य है।

दूहा ॥ ईस सीस षिय माल कजि। गौरा कजि गज मुत्ति ॥
पिया समंपति मुत्ति पिय। षिय प्रिय पुच्छत बत्त ॥ छं०॥२०७॥
सीस सदा सिवष्यावतें। मुत्ति लहै कहों आदि ॥
कोन धीर पहिरो असन। धीर वीर सु प्रसाद ॥ छं० ॥ २०८ ॥

पारवती का धीर के विषय में पूछना।

पारवती कह्यौ कोन सुत। कहा पराक्रम कोन ॥
पाट पुंडीर सुचंद सुअ। ब्रह्म रूप परवीन ॥ छं० ॥ २०९ ॥

धीर की बीरता का वर्णन।

कवित्त ॥ इसौ धीर बर बीर। जिसौ पारथ भारथ्थह ॥
इसौ धीर बर बीर। जिसौ पारथ सारथ्थह ॥
इसौ धीर बर बीर। जिसौ जोधा दुरजोधन ॥
इसौ धीर बर बीर। जिसौ हनमंत बलिय मन ॥
सुतचंद दंद दारुन दुअन। अग्निरूप जिन सत्रु जन ॥
मन मोह रोह माया रहित। अंगद जिस अंग धीर तन ॥
छं० ॥ २१० ॥

पारवती का प्रश्न कि क्षत्री जीवन का मोह क्यों नहीं करते।

दूहा ॥ जिहि जीवन कारन जगत । बंछै लोक विचार ॥
करै सुधम्म सुकम्म अति । किम तजि छचिय सार ॥
छं० ॥ ३११ ॥

शिव का बचन कि क्षत्रियों का यह कुल धर्म है।

गाथा ॥ तापस नष्ट अतोषौ । संतोषो नष्ट नरपति ।
लज्जा नष्टति गनिका । अनलज्जा नष्ट कुल जाया ॥
छं० ॥ ३१२ ॥

दूहा ॥ धरा सहित नंषै सु धर । सीस जाय धर जीय ॥
मरन सीस लीनै वहै । कुला क्रम षचीय ॥ छं० ॥ ३१३ ॥

जीवन मरन की व्याख्या।

कोन मरै जीयै कवन । कोन कहां विरमाय ॥
प्रानी वपु तरु पंषिया । तरु तजि अन तरु जाय ॥ छं० ॥ ३१४ ॥
ज्यों औरन परधान तजि । नर जन धरत नवीन ॥
यों प्रानी तजि कायपुर । और धरे वपु भीन ॥ छं० ॥ ३१५ ॥
कबहूं जीव मरै नहीं । पंचतत्व मिलि भेद ॥
पंची पंचन में समें । जीव अछेद अभेद ॥ छं० ॥ ३१६ ॥

आत्मा की व्याख्या।

मोतीदाम ॥ अछेद अभेद अषेद अपार । अजीत अभीत अप्रीत अमार ॥
अमोल अभोल अतोल अमंग । अकंज अगंज अखुंज अभंग ॥
छं० ॥ ३१७ ॥
असेष अभेष अलेष अवीह । अरेष अभेष अदेष कवीह ॥
अमान अभान अज्ञान अलिप्त । अथान असान अवान असिप्त ॥
छं० ॥ ३१८ ॥

संसार में कर्म मुख्य है कर्म से जन्म होता है ।

गाथा ॥ कर्म वस्य नरं जीवं जं कर्मं क्रियतं सो प्राप्ति ॥
कर्म सुभं च असुभं। कर्म जीव प्रेरकं प्रानी ॥ छं० ॥ ३१९ ॥
स्लोक ॥ नमे न बध्यते कर्म। कर्मेन बंध प्राप्तिकः ॥
यं कर्मं क्रियते प्रानी। सो प्रानी तच गच्छति ॥ छं० ॥ ३२० ॥
दूहा ॥ औसरि दुअ जुट्टे सुरन। अत सोभत इन भंति ॥
अगर भंज जनु द्वै भिरै। मय मत्तं मय मंत ॥ छं० ॥ ३२१ ॥

शूर वीरों की वीरता और उनका तुमल युद्ध वर्णन ।

विराज ॥ मयमत्त भिरे, फिरि जुद्ध घिरे। तरवारि तरै, तकि घाव करै ॥
छं० ॥ ३२२ ॥
जमदट्ठ जुरै, तिय नीति सुरै। पन सूर सुषं, न सुरंत नषं ॥
छं० ॥ ३२३ ॥
इस भत्य इसें, जमरूप जिसें। नर मच्छ नचै, हरहार रचें ॥
छं० ॥ ३२४ ॥
धर उट्ठि धरं, सजते समरं। भभकै भभकं, रुधिकै लुभकं ॥
छं० ॥ ३२५ ॥
जुगिनी जितनी, किलकें तितनी। ततथे ततथे, नचि वीर नथे ॥
छं० ॥ ३२६ ॥
गुरगात भरं, कच उंच करं। तिन कट्ठि तनं, बढि रंभ बनं ॥
छं० ॥ ३२७ ॥
दंत ऐंच दँतो, कटि छूर कँत्तो। भिरि एम भरं, जनु सिंघ जुरं ॥
छं० ॥ ३२८ ॥
गाथा ॥ जुद्ध करंते जोधं। जे जे जंपि असुर ससुरानं ॥
कुद्दै इम किरवानं। खोइं खोडार कुद्दै घन एमं ॥ छं०॥३२९ ॥

धीर की विलक्षण हस्तलाघवता ।

दंडक ॥ धीरवर धरिवै किरवानह। धाप धपै धपतो वर वानह ॥
झाट विझाट करं दस ठेलत। घाट कुघाट किए घट पेलत ॥
छं० ॥ ३३० ॥

बाटनि काट करी अति भीतर। लोटत लोटत ज्यों बन बिंतर ॥
बाढ़नि बोढ़ दिए तरवारनि। बाजर बाढत भीख पहारनि ॥
छं० ॥ ३३१ ॥

सीसन पीस किये सिरदारन। पी भज भाजन चौलषि आरन ॥
सेलन मेल सनंमुष मंडहि। लेख विभेख करा झर झंडहि ॥
छं० ॥ ३३२ ॥

ढेरत इथ्थ उधेरत पंजर। षंडत षग्ग षसे रत षंजर ॥
छं० ॥ ३३३ ॥

शहाबुद्दीन का घोड़ा छोड़ कर हाथी पर सवार होना।

कवित्त ॥ ऐ सहाब सुलतान! तुरिय छंडवि गज चढ्यौ ॥
धीर बीर सम्मूह। रोस संमुह बर बढ्यौ ॥
ह्वै समेत असवार। हथ्थि पुंडीर सु चंपै ॥
जिमि मुष्पह अमरोज। चंद नंदन नह कंपै ॥
कढि कटार गज तोखि हित। राइ अभ्रम रवि जुद्ध खरि ॥
कद्दार नंषि षग्गह कढ्यौ। करिय सीस सिर खीह झरि ॥
छं० ॥ ३३४ ॥

धीर का हाथी को मारना और शाह का जमीन पर गिर पड़ना और धीर का शाह को पकड़ लेना।

उडिग रेन गय नंग। साहि संमुह गजि पिल्ल्यौ ॥
धनिय धीर पुंडीर। साहि सनमुष असि मिल्ल्यौ ॥
दसन तुंड किय दोन। मुंड छंडिय सुंडाहल ॥
गिरत भूमि सुरतान। घाँन कीनो कोलाहल ॥
झक झोरि तोरि अवझरि उजरि। गहि हमेख हम्मीर लिय ॥
हय कंध डारि अद्धौ असुर। पैज पुंडीर प्रमान किय ॥
छं० ॥ ३३५ ॥

धीर का तलवार चलाते हुए शाह के हाथी तक पहुंचना।

षग कहुत सुरतान। अप्प मनि भय इय चढ़िय॥
धर ततार इक षंचि। सिंगि रंगिय रुधि मंडिय॥
इनिव इथ्थ पुंडीर। धीर धर फट्टि सनाहिय॥
जनु छि प्रात आइत्त। ब्रह्मपुर पंच समाहिय॥
उर फुट्टि पंच टट्टर करह। बर बिडुरि षग्गह डरिय॥
गहि दंत मंत सुनि सुनि सुनिय। झमकि झमकि बिजुरिय झरिय॥

छं० ॥ ३३६ ॥

शाह के अंग रक्षक योद्धाओं का शाह को बचाना।

साहि पास सौ मीर। दुइ उभै दुइ पासं॥
उभै अग्ग सु विहान। बान अरजुन प्रति मासं॥
कंजानी कम्मान। बान सु विहान तीन तिय॥
तेही बेर हुसेन। दिष्ट देषी घुरि अत्तिय॥
तब साहि इथ्थ कम्मान लै। षिभि करि कुंडलि क्रंद बर॥
तन फुट्टि लुट्टि हुस्सेन पर। रोस परिग परि मीर धर॥

छं० ॥ ३३७ ॥

मुसल्मान योद्धाओं का पराक्रम और हुसेन सुविहान (सुभान) का मारा जाना।

एक बान सुबिहान। षान हुसेन चढ़ाइय॥
दूजै बान तकंत। बंध धीरह टाराहिय॥
तक्कि बान तिय साहि। भरकि भग्गौ हिँदवानं॥
सकल सूर सामंत। करै अस्तुति सु विहानं॥
पट बान कमान जु नंषि करि। अरि दिसि हरि चक्कह चलिय॥
कढि तेग मुट्ठि छुट्टै नहीं। दिन पलट्यो सु विहान जिय॥

छं० ॥ ३३८ ॥

ढारि जंग जुरि जूह। जूह गजराज ढंढोरिय॥
ढाल मद्धि ढंढोरि। बीर अविहरि दल मौरिय॥

दल मीरे सुरतान । बीन पुरतान बहोरिय ॥
बहुरि वीर अंजान । वीरन वाहिर बहुतेरिय ॥
तेरिय सु वीर चतुरंग वर । वीर वीर वीरं कहिय ॥
अछरी वीर रस मर सुभरि । मेद मेद न छप रहिय ॥
छं० ॥ ३३९ ॥

गुन रन मूंदे सेस । छंद सुभर आसिय मुष ॥
दुष सुष मया विमोह । क्रोध रँग वीर सकल दुअ ॥
अहइं इंती इंत । रंत दंतन धरि दंती ॥
मनु मराल लै चित्त । दंत सुरताल रलंती ॥
धर बोल परै सुरतानं नग । पूज पुट्ठि तें षुट्ठि वर ॥
दल ढुंढि फिरावन एक दल । अग्गी सोहि गोरीहु झर ॥
छं० ॥ ३४० ॥

पुंडीर की पैज का पूरा होना ।

धीर बचन सुनि साहि । दिट्ठ मरदां बिष जोरन ॥
धीर तकि सुरतान । साहि तक्के उन तोरन ॥
ठेलि गज्ज इय पत्ति । अग्ग ठेल्यौ पुंडीरं ॥
कढ्ढि बंक सो तेग । हन्यौ गज सीस सु वीरं ॥
निह टीव बीज बहल विहर गज्ज परिग गजपति कहिय ॥
इय कंध डारि अग्गी असुर । पैज पुंडीर प्रमान किय ॥
छं० ॥ ३४१ ॥

पुंडीर के पैज निर्वाह की बधाई ।

भुजंगी ॥ गग्गी साहि इय्यें जु पुंडीर रानं । कहै हर सामंत पैजं प्रमानं ॥
हन्यौ एक गज जूह कोटं प्रमानं । कहै देव देवं जु भारथ्थ जानं ॥
छं० ॥ ३४२ ॥

कहै चंद वत्तं समंदं रहानं । तहां चंद हरज्ज चित्तौ भषानं ॥
अश्वनी कुमारान वासी कहानं । जिसो पथ्थ पंडीस जोधं रचानं ॥
छं० ॥ ३४३ ॥

कहै चंद कित्ती सु बेली भषानं । रहै मिल्लि मेलं सुरत्तान सानं ॥
जिते राव चावंड सही अभानं । अहो धीर पुंडीर पैजं बखानं ॥
छं० ॥ ३४४ ॥

उवं षंड इथ्थं रुधी धार पानं । हिमं आ समानं जु सीहं पलानं ॥
कियौ स्वामि कै काज पैजं प्रमानं । * * छं०॥३४५॥

कवित्त ॥ नव सें जहां सिलार । पास ठट्ठे इंमीरह ॥
एक लाष साहन समुंद । चवकोदह भीरह ॥
बेद लष्ष तरवारि । सघन नेजा पसरंतह ॥
अट्ठ लष्ष गुर धार । मेघ जिम झरवर संतह ॥
पुंडीर राय कालह सरिस । भिन भुअंग चित्तह भन्यौ ॥
बीरंग बंस चंदह तनौ । साहि गह्यौ इथ्थौ इन्यौ ॥ छं० ॥ ३४६ ॥

शाही सेना का सब रखत छोड़ कर भागना ।

सिंधु सहाव उप्परह । जैत संग्राम धाम रन ॥
छच दंड वर चमर । दंड छंडिग सु गंध घन ॥
तुरस तोरि मवरिय मरोरि । रवरिय दल बहल ॥
जनु निदंत दच्छिनिय । पाइ ठिल्लिग सुभट्ट षल ॥
मुनि नयन गयन लग्गिय अगनि । पल पलाय गोरिय सयन ॥
सो सह वह दस दिसा हुअ । ग्रह्यौ ग्रह्यौ बुल्लिय बयन ॥छं०॥३४७॥

शहाबुद्दीन के खवास सेरन का घर पहुंचना और उस की स्त्री का उसे धिक्कारना ।

बिय षवास सेरन सु नाम । गोरिय गयंद कुल ॥
तिहि सु सत्त जोरू सु व्रत । रोचि निय भ्रम्म बल ॥
सय सिंदू कुल परह । ताहि दिट्ठो गज कन्ना ॥
यं न षानि पति साहि । हाथ असहा वह वन्ना ॥
उच्चार भार बुल्लिय बयन । निय जुवहि पति साह तहां ॥
आभ्रसहार कुच भारवर । सुनित स्वामि संसार कहां[1] ॥
छं० ॥ ३४८ ॥

(१) ए.-कज-कु.-कय ।

सेरन का उत्तर देना कि मैं तेरे मारे लौट आया हूं अच्छा अब शाह को छुड़ा कर तब रहूंगा।

मे पावस अभ्भरिय। गिरिय घेरिय जनु मुक्के ॥
स्वामि मंच बरषंत। फेरि हिंदुअ दल लक्के ॥
तुव नेहिय देहिय निवाह। किं जाम कोह दह ॥
पुनि सुद्धौ सुखतान। हाउ जहां भाउ ग्राम ठह ॥
मंजाह लाज मभ्भाह रवनि। रवन मुष्प देषै मरद ॥
काम तरुनि करुनिय करन। उज उड़ाय सुक्किय गरद ॥

छं० ॥ ३४९ ॥

पुनः स्त्री का कहना कि स्वामी को सांकरे मे छोड़ कर घर का स्नेह करने वाले सेवक का जीवन धिक है।

ताइय तुह कामिय सु काम। कामनिय काम रत ॥
अप्प भ्रंम तजि स्वामि। भ्रंम छंड्यौ सनेह हित ॥
आय देह संदेह। देव देवन संचारहि ॥
आय धार बजि मार। मार मारन मन हारहि ॥
अंजिसिय हंसिय अंतर गसिय। ससिय सद्द उद्दर धसिय ॥
मामुद्द दुद्द दोजिगन चलि। उर अंकुस फेरिय रसिय ॥

छं० ॥ ३५० ॥

सेरन का युद्ध की विषमता का वर्णन करना।

कर कक्कस करिवार। खूर बहल दुति छुट्टिय ॥
परत भोमि रोचनिय। सस्त्र पुट्ठी अरुह फुट्टिय ॥
रवरि दवरि हिंदुअ। नरिंद भ्रत धरयं सुरतानह ॥
परि पारस पुंडीर। इथ्थ देषिय सु विहानह ॥
इहकारि हक्कि बोल्यौ सु बर। सु सब मुंकि मुरदार भष ॥
उन देव धीर चंदह ननौ। मनों सिंघ दथ्यौ जु चष ॥

छं० ॥ ३५१ ॥

सेरन का कहना कि शाह के छुड़ाने का भार बैजल खवास पर है।

षष दिष्पिय सक सिंघ। सेर भंजन सुरतानह॥
कर कट्टिय जमदट्ट। बट्ट बट्टन तुरकानह॥
भवन उंच तिहि नेज। सेज उच्छंग उछारिय॥
जनु कि सिंघ सावंग। उडु डंमर उप्पारिय॥
उर कररि सुट्ठि दिट्ठी दुअन। सत्त छुट्टत सुरतान कह॥
विज्जल षवास छप्पर गससु। गलग ढलगि भूमिय सु वह॥
छं० ॥ ३५२ ॥

किल कंक चहुआन। कंक मइमंद सवन्निय॥
ठिलिग ठट्ठ उट्ठाय। कोट बज्जे बर बन्निय॥
परे मत्त में मंत। दंत अंतिय आखं,भिअय॥
जनु कि केलि बिन पोन। वेलि वंकिय बलि बुझि भय॥
संग्राम धास धुंधर धरनि। धरनि प्रहर बज्जिय लहरि॥
ता पच्छ जाम जहों सुरन। अवसि सेव उत्तरि विवरि॥
छं० ॥ ३५३ ॥

उत्तर वै सुरतान। बंधि धीरह धर तंषिय॥
सुर नर गन गंभ्रव्व। चंद वंदिय सद भष्पिय॥
भग्गा भर सुरतान। आनि बरतिय चहुआनं॥
कासमीर लिल्ला पहार। ठट्ठा मुलतानं॥
जित्ता जुवान सोमेस सुअ। दुमसि बज्जि बज्जे इहां॥
जै जया सह आयास भौ। सु कविचंद छंदे जिहां॥
छं० ॥ ३५४ ॥

नीसानी॥ नेजे नंनीं सेरवान धरधार उपन्ना।
तिस का हथ्थ विहथ्थ वान वघ्घां बर जन्ना॥
तिस कै कुंडल चप्पवान कढि दिढ रहन्ना।
पाई पुना धंध देह दुहरी भर थन्ना॥ छं० ॥ ३५५ ॥

आनै छुट्टा इक्क मार मोरह विचभंना ।
डूलै मूआ अनूभि भया चिंदू तुरकन्ना ॥
विरच बोल उट्ठाइआ जाने थुतिकंना ।
हो अखिधीर दुराइया सेरन बर बन्ना ॥ छं० ॥ ३५६ ॥

जैतराव और तत्तारखां का युद्ध । तत्तार खां का मारा जाना ।

कवित्त ॥ धरिय पंच पामार । जैत जग इथ्थ उहन्ना ॥
है सो है गै सो गयंद । नरों नर इथ्थ निहन्ना ॥
निहसि निहसि झन झनिय । षग्ग षग्गा षग भग्गा ॥
कट्टारिय कट्टारि । मार छुलिका छुलि जग्गा ॥
है कंप इक्क जूटा सु घट । कुघट कटार कटंत घट ॥
तत्तार षान जुरि जैत सों । निहसि नियाहि निहंद् हट ॥
छं० ॥ ३५७ ॥

परयौ षेत तत्तार । षेत जैतह मल लग्गिय ॥
उभय सइस पठ्ठान । सइस पामार स भग्गिय ॥
चंपि राव चामंड । अगि अधिकांन उधाये ॥
आहों षान उभारि । बाय बादल उट्ठाये ॥
षंगिय सु पष्ष दाहर तवौ । घर विरह छज्जै मदह ॥
दाहंत दाह दुखह मरन । जिहि सु हिंदु रष्षीह दह ॥
छं० ॥ ३५८ ॥

विजय की सुकीर्ति के भाग ।

पंच भाग पामार । भाग चामंडराय तिय ॥
उभय भाग जहों जुवान । जैपत्त इथ्थ लिय ॥
एक भाग प्रथिराज । अद्ध भागह वरदाइय ॥
पाव भाग पज्जून । राव मंडौ मरदाइय ॥

भग्गाइ अट्ठ पुंडीर भुज । जिहि सु साहि सद्ध्यौ समर ॥
धम्मो जयंत विस आध अध । लिखि कवित्त छद्ध्यौ अमर ॥
छं० ॥ ३५९ ॥

दूहा ॥ राय पुंडीर सु झूझ जिति । ग्रिह आयौ प्रथिराज ॥
डोला पंच पचीस रजि । विय आदीत बिराज ॥ छं० ॥ ३६० ॥

कवित्त ॥ गहिव साहि करि पैज । जुद्ध जित विग्रह पत्तौ ॥
षेटति पब पाषंड । भेद सामंत निघत्तौ ॥
रिन रवह जित्तिग । नरिंद बाजे बज्जाने ॥
नछि हिंदू कढ़ितेग । सह बज्जे सहाने ॥
दिष्पहि न राज सुरतान कहुं । सक सहाब घुरसान पति ॥
पूंछत बत्त भग्गो भिरा । रह्यौ न जुध रोह्यो [1]हसति ॥
छं० ॥ ३६१ ॥

मलिक षान घुरसान । हनिग खष षग्ग धीर बर ॥
गज मै मत्त स धारि । दबटि दल मथ्यौ सबलकर ॥
लियौ साहि गहि हथ्थ । सथ्थ देषत सुरतानो ॥
षां ततार रुत्तमां । सीस धूनहि विलषानो ॥
पुंडीर सहस तिय षेत रहि । गह्यौ साहि गयौ धीर घर ॥
पुंडीर चंद नंदन रनह । भेद गह्यौ चालेत धर ॥
छं० ॥ ३६२ ॥

दूहा ॥ सहिय संगि सनमुष्ष सर । पानि ढरि मुलतान ॥
जैत पत्त रावत्त हुअ । बर बज्जे नीसान ॥ छं० ॥ ३६३ ॥

वैजल का धीर से कहना कि शाह को छुडा दो और धीर का उत्तर देना कि पांच दिन ठहरो ।

चामर छत्र रवत्त रन । ए लुट्टे सब कोय ॥

(१) को. हसति ।

बर षवास बैजल कह्यौ। धीर निहोरैं तोहि ॥ छं० ॥ ३६४ ॥

कहै धीर बैजल्ल सुनि। पंच दिवस नन कथ्थ ॥
गुदरो मति राजान सों। साहि ग्रहन सें इथ्थ ॥ छं० ॥ ३६५ ॥

गुरि न गयौ गोरी घरह। पर्यौ न षेत प्रमान ॥
उकति बंधि प्रथिराज चित। धीर ग्रह्यौ सुरतान ॥
॥ छं० ॥ ३६६ ॥

बैजल का पृथ्वीराज से शाह के छोड़ जाने की विनती करना।

करि मालम बैजलि सु तब। समह राज चहुआन ॥
पुरिन गयौ गोरी घरह। धीर पकरि सुरतान ॥ छं० ॥ ३६७ ॥

चौपाई ॥ इह सुनि राज अप्प ग्रह आइय। कहिय धीर सों बेजल धाइय ॥
षंडौ काटि आय षावासह। तबें बेजला बोल्यौ तासह ॥
॥ छं० ॥ ३६८ ॥

धीर का कुपित होकर बैजल का मारने के लिये दपटना।

इह सुनि क्रोध धर्यौ मन धीरह। बरजौ बत्त कही क्यों हीरह ॥
मारन असि कढ्ढी षावासं। प्रथीराज बरज्यौ तब तासं ॥
॥ छं० ॥ ३६९ ॥

पृथ्वीराज का धीर की वीरता की प्रशंसा करके उसे समझाना।

कवित्त ॥ गरजे बे संभरि नरेस। अरि विग्रह मंड्यौ ॥
षुरनि षेह ख,क्कयौ। ग्रभ्भ ग्रभनी जु छंड्यौ ॥
चंद तनौ पूरन सु चंद। तिहि ठां संचरयौ ॥
मारे मत्त मयंद। धनि सु धनि धनि तहां करयौ ॥
दुहु दलन बीच मच्छर कह्यौ। हाक्यौ हन्यौ पचारयौ ॥
सुरतान साहि साहाब दी। गहिव धीर रन पारयौ ॥ छं० ॥ ३७० ॥

सुंडा डंड प्रचंड। मुंड षंडनी षरक्की ॥
सिल्लारां असि तेज। वीज उज्जलो झलक्की ॥
गहि गोरी गंजयो। गहिव भुअ बल उप्पाष्यौ ॥
राय सरिस सामंत। पूरि धर रुहिर पषाष्यौ ॥
झगरौ जु प्रभन्यौ जेत करि। तातन टट्टर अभय हुअ ॥
सौ असिवर सज्जत वे जलहि। धीर खज्ज लग्गै न तुअ ॥छं०॥३७१॥

धीर का कहना कि इसने मेरे मना करने पर भी क्यों कहा।

स्वामि वचन बिन सुनै। कान लगि कहि इह वत्तिय ॥
तूं पामर बरजयौ। पंच दिन कथ्थ न कथ्थिय ॥
जैतराव चामंड। राव जइव जामानिय ॥
कूरंभा पज्जून। गरुअ गुज्जर रा मानिय ॥
सनमान राज चहुआन दल। भरत बिनोद मंडत रसन ॥
तिहि रीस सीस पामर पिसुन। करौं षग्ग मग्गह असन ॥
छं० ३७२ ॥

पृथ्वीराज का पुनः धीर का समाधान करना।

चिपति न किय तौ षग्ग। हनत कर करिय चन्दसुअ ॥
चिपति न भय गोरिय। नरिंद सुलतान मंत धुअ ॥
चिपति न छल्ले लाख। मल्लबाहन उभभारत ॥
चिपति न गज गुरइंद। बिंत उप्पर उप्पारत ॥
चिपतौ न तुअ पुंडीर सुअ। सुरतानह बंधत बसन ॥
बंगिय बखान वैजल विजल। न करि षग्ग मग्गा असन ॥
छं० ॥ ३७३ ॥

षग्गभार परिया। चंद बचा हसि कहे ॥
मैं बरजिय दिन पंच। पौथ पामर कह वहे ॥
पाउ लागि प्रथिराज। बाह दीनी प्रथराज ॥
दसइजार ह्वै बरष। दंडि छंडिय सुलतान ॥

दिट्ठाइ दिट्ठ जबी करी। गय गोरी ग्रब्बइ गरिय॥
आसन मुछंडि उभौ हुऐ। करि दुवास चंदइ धरिय।

छं० ॥ ३७२ ॥

पृथ्वीराज का दंड लेकर शाह को छोड़ देना और शाह का लज्जित होकर राजा को धन्यवाद देना।

दंड सीस सुलतान। तीस गजराज मत्त मद॥
पंच सत्त एराक। सुतर खष तीन उनंमद॥
बहु विभूति चतुरंग। डंड मान्यौ घुरसानौ॥
बर गोरी सुलतान। बंधि मुक्यौ चहुआनी॥
आजान बाह संगइ न्रपति। दंड काज सथ्थइ दियौ॥
घुरसान थान झोरी न्रपति। सुबर साहि सथ्थइ लियौ॥

छं० ॥ ३७३ ॥

पाय घालि प्रथिराज। बांह दीनी सुलतानं॥
करि सलाम तिहुं बार। धरिय अंगुरिय तुरकानं॥
तुम उमाह दुग्गाह। बार बारह चढ़ि आवहु॥
बज्जहीन दुअदीन। किया अप्पना सु पावहु॥
नन करहु सह जुग्गिनिपुरह। बांधि सामंतह मुक्कियो॥
बारह सुवार आवंत इहां। जाय सुषासन सुष्पियो॥

छं० ॥ ३७४ ॥

शाह को छोड़कर पृथ्वीराज का संयोगिता के साथ रस रंग में प्रवृत्त होना।

पकरि छंडि सुलतान। दंड पुंडीर समप्पिय॥
ता पच्छै प्रथिराज। केज दिन तप्पन तप्पिय॥
आनी पंग कुंआर। रूप धरनी धर धारह॥
जिन लीने सामंत। नाथ बरूनि बरबारह॥
मत्तान षत्त सूता रहे। पच लिहंदे देव दिन॥
उग्गाह बाह कविचंद कहि। सत सु छुट्टै स्वामि रिन॥

छं० ॥ ३७५ ॥

सामंतों और पृथ्वीराज का धीर से कहना कि तुम शाह को छोड़ दो।

इनुफाल ॥ प्रथिराज सामंत सब्ब । पुंडीर धीरज्ज तब्ब ॥
तू छंडि गोरी साहि । मो इच्छे बोल निबाहि ॥
छं० ॥ ३७६ ॥

तूं सर्ब सामँत सूर । प्रथिराज बप्पिस पूर ॥
तूं करै सब दिन पान । मन धुर मिष्ट बानि ॥ छं० ॥ ३७७ ॥

उम्म दिष्टि मंडिय राज । कनवज्ज देषन काज ॥
उन राज काज सुभग्ग । कलहंत कास समग्ग ॥ छं० ॥ ३७८ ॥

तुम्म छंडि मंडि सुभेद । हिंसार कोट सुभेद ॥
पुंडीर छंड्यौ साहि । प्रथिराज सामँत मांहि ॥
छं० ॥ ३७९ ॥

चंद राज सुमंडि । चैवार पट्टमि सुषंड ॥
उम्म मंच राज विनास । कलियंग छत्र सुतास ॥
छं० ॥ ३८० ॥

इय मंडि कीरति चंद । तिहि गज्जनै सुत चंद ॥
चिहुं चक्र दे सजि धक्कि । जिहि चन्द सूरज सष्प ॥
छं० ॥ ३८१ ॥

जिहि पातिसाह सुसाहि । तो धीर धन्नि सुमाय ॥
* * * * * * * ॥ ३८२ ॥

पृथ्वीराज का पूछना कि तुमने शाह को किस तरह पकड़ा।

कवित ॥ असिअ खप्प साहन ससुह । दस्स सै गयंदह ॥
धरनि धसय उड्डसय । बोल नहि गुर सुर छंदह ॥
तहां तिमीर झंमंभि । गोल हबसिय हय हंकहि ॥
तहां धानुक्क पाइक्क । अप्प अप्पन पय तक्किहि ॥
तहांति मेछ गज्जहि असुभ । मनो घोरि पावस रच्यो ॥
इम कहत साह पुंडीर सों । किम सुसाहितें संग्रच्यो ॥
छं० ॥ ३८३ ॥

धीर का रण का सब हाल कहना और पृथ्वीराज का शाह को सिरोपाव पहिनाकर सादर गजनी को विदा करना।

चौठक ॥ जहां हिंदुअ साहि खरंत रिनं। तहां बान परै बरसा सुघनं ॥
जु करै किरिवारिय हिंदु अमेछ। खहंगिय बालक षेलहि एछ ॥
छं० ॥ ३८४ ॥

परे गुरजे रिन गाजरि सूर। सजे रन साहि सुहिंदुअ पूर ॥
तेहँकि हमीर किए इक टौर। गयंदहि साहि गयौ गजि जोर ॥
छं० ॥ ३८५ ॥

यहीं परिठिलिय साहि करी। करिवार कुँभस्थल बीज भरी ॥
तबही धर धुक्कि गयंद गयं। लिय साहि गयंदति षोचि लियं ॥
छं० ॥ ३८६ ॥

इय लाज प्रताप तें राज रही। गजनेस असंभिय ईस गही ॥
विकसे प्रथिराज पुंडीर हियं। अद्भूत पराक्रम धीर कियं ॥
छं० ॥ ३८७ ॥

इम जंग जहां रन सोर हुअं। नह आवन पास लहे सुतुअं ॥
तब जंपिय धीर धरन्नि धुअं। न्निप संभरि जंग प्रताप तुअं ॥
छं० ॥३८८॥

तब साहि हजूर पुंडीर कियं। भरि अंक प्रथीपति मेछलियं ॥
बहु पुच्छिय प्रीति समाजि तदं। तुअ दिप्पत हिन्दुअ सुप्प इदं ॥
छं० ॥३८९॥

पहिरावनि साहि करी प्रथिराज। दिये तब अंबक बाजन बाजि ॥
दिये सत तीन तुरंग सुरंग। करिबार कटार जरे हिम नंग ॥
छं० ॥३९०॥

पहिराइय साहि दिबंगम वस्त्र। दिए षटतीस अनूपम सस्त्र ॥
षठ भोजन भाव सुभष्प लियं। जु सुगंध अनेकति पूर कियं ॥
छं० ॥ ३९१ ॥

दूमयं महि मानिय पुर भयं। पहचाइय कोस दूकं त्रपयं॥
दूम जित्तिय जंग सुदिल्लि नरेस। सामंतन मद्धि पुंडीर वपेस॥
छं० ॥ ३९२ ॥

करै सुष राज बिलास सँजोग। हिमवंत महारिति भोगहि भोग॥
* * * * * * छं० ॥ ३९३ ॥

कवित्त ॥ धनि सुधीर तुअ मात। साहि गजनी गहिय कर॥
गयपानी मुलतान। आनि संभरि ढिल्लियधर॥
उतरि अहं चावंड। राउ जैत सीस मह सब॥
बढे उरह बल राज। कुसुम सर चंद किति तवि॥
जंपिय सु राज प्रथिराज तव। बोल धरी अस पावयौ॥
फिरि चलत मग्ग गज्जन पुरह। राज साहि पहरावियौ॥
छं० ॥ ३९४ ॥

जैतराव और चामंडराय का पृथ्वीराज से कहना कि धीर को शाह के पकड़ने से बड़ा गर्व हो गया है।

साहि डंड डंडयौ। दंड पुंडीर समप्पिय॥
साहि समंदन मंगि। मुष्प राजनतं अप्पिय॥
गज्जनेस गोधीर। गयौ चावंड जैत लषि॥
हास अग्र किय राज। वक्र मुष भौंह नंषि चष॥
असपत्ति सेन भंजिय त्रपति। गहन ग्रह्व धीरह वहै॥
चलि सकट मग्ग नीचें भषन। वहन भार गरुअत वहै॥
छं० ॥ ३९५ ॥

पृथ्वीराज का धीर सहित समस्त पुंडीर वंश को देश निकाले की आज्ञा देना।

करिय रीस प्रथिराज। धीर सुअ नयर निकारिय॥
बाल हद्ध पुंडीर। छंडि नयरह नर नारिय॥
सहस पंच पुंडीर। जाय खाहौर सपत्ते॥

सहनिवास तह सजिय । मंडि सबहिन बलि मत्ते ॥
पट्ठइय दूत धीरह दिसा । लिखिय पत्र कागद करह ॥
सुनि बत्त चित्त धीरह धनी। गयौ सिंधु साहिब दरह ॥
छं० ॥ ३९६ ॥

देश निकाले की आज्ञा पाकर धीर का राजाओं की रीति नीति को धिक्कारना ।

दूहा ॥ मन चिंतन धीरह करै । इह न्रप पुन्नह रीति ॥
कोटि जतन जौ जोरिय । न्रपति न होवै मीत ॥
छं० ॥ ३९७ ॥

क्लीव हीक बंधि रज्जनह । महि पान तत चिंत ॥
तिय को काम न उपसमै । न्रिपति न काहू मीत ॥ छं०॥३९८॥

अहि पय पान पिबाइये । जतन करे नित नित्त ॥
जब पग चंपै तब डसै । त्यों न्रप अवगुन चिंत ॥छं०॥३९९॥

कवित्त ॥ सहसव तें न्रप मेर । करत वेखानह लग्गै ॥
जो थित सेवा करै । न्रपति कै पहुरै जग्गै ॥
अप्प राज न्रिप ताहि । रीझि धन धान्य समप्पै ॥
सांमि भ्रम्म धन धरै । काज पर सीसहि अप्पै ॥
यों करत बरत दुज्जन बिचें । फारि फोरि दस दिसि करै ॥
संजुग्यौ कुलफ मिलि कुंचिका । त्यों न्रप मन जू जू परै ॥
छं० ॥ ४०० ॥

दूहा ॥ राज वेश्या अगनि जम । अतिथि सु जाचक बाल ॥
पर दुष ए पावे नहीं । बहुरि गांव कुठवाल ॥
छं० ॥ ४०१ ॥

सेठ सुद्रस्सन मुक्कमनि । ए न्रप राजन थंभ ॥
जौ न्रप इनके ना भए । राष नवन के अंभ ॥ छं० ॥ ४०२ ॥

अरिल्ल ॥ समौ विचारि बोलिये बानि । दिष्टी करिय अदिष्टी ज्ञान ॥
अप्प अधीर ग्रह गमनम कीजै । हीर भगें न्रप के न रहीजै ॥
छं० ॥ ४०३ ॥

दूहा ॥ सांप सिंह न्रप सुंदरी। जौ अपनै वसि होइ॥
तौ पन इनकौं अप्प मन। करो विसास न कोइ॥ छं० ॥ ४०४ ॥
कबहूँ वक्र अवक्र कब। कब षंडौ कब अस्त ॥
राजा गति दुजराज सम। प्रकृति निवाहन सस्त ॥ छं० ॥४०५॥
न्रप अंदर सोचै नहीं। कह्यौ सुनै सद्भाव ॥
दुरजन हित जानै नहीं। अपनै अपनै दाव ॥ छं० ॥ ४०६ ॥
औगुन अप्पै मनै। न्रप के भाषें नांहि ॥
सो न्रप भ्रम बेदन कह्यौ। न्रप परमेसर आहि ॥छं०॥४०७ ॥
बिप्प घुटी माता दियै। बेचि पिता लै दाम ॥
राजा जो सरवसु हरै। नहिं सरनागत ठाम ॥ छं० ॥ ४०८ ॥
माता सरन न मुक्कियै। पिता सरन मन मानि ॥
सेवक औरह चिंतइ। बिना सरन राजानि ॥ ४०९ ॥

यह समाचार पाकर शाह का धीर को जागीर का पट्टा देना और धीर का उसे अस्वीकार करना।

कवित्त ॥ सुनिय बत्त सुलतान। धीर पट्टौ लिषि तथ्थइ ॥
सहस अट्ठ ग्रामइ सुदेस। धाभ देसइ दइ पत्तइ ॥
सहस पान सुलतान। धीर निज हथ्थ समप्पत ॥
कही धीर सुनि साहि। राज प्रथिराज सु तप्पत ॥
जो अबर पंच सौसइ धरौं। ईस कहां उजो अवर।
उग्गमै दिवाइर पच्छिमइ। सौ सेसइ छंडे सु धर ॥
छं० ॥ ४१० ॥

शाह का धीर को ढिल्ला की बैठक देना और धीर के कुटुंबियों का लाहौर लूट लेना।

धीर निवेसन साहि। दयौ ढिल्ला पहरत्तव ॥
अरु दै ठट्टा ठाम। कियौ आदर अनंत सब ॥
तब सु पत्र लिषि धीर। सोइ कर दूत समप्पिय ॥
तबहिं दूत लाहौर। पत्र पावस कर अप्पिय ॥

बंचिय सु पत्र पुंडीर तब। खुटि सहर छंड्यो सु वर॥
पट कूर कनक केसरि अगर। इय कपूर नग मुत्तिनर॥
छं० ॥ ४११ ॥

दूहा॥ हीर चीर करपूर इय। मानिक मुत्ति अमोल॥
खुटि लाहौर पुंडीरियां। उढ़ि कंचन वैमोर॥ छं० ॥ ४१२ ॥

सब पुंडीरों का ढिल्ला को जाना और धीर का उनको लाहौर लूटने के लिये धिक्कारना।

कवित्त॥ हरिय रिद्धि बर नयर। जाय ढिल्ला सापत्ते॥
तहां निवास निज करिय। सब्ब पुंडीर समथ्थे॥
आयो तथ्थह धीर। सुज्यो लाहौर सु लुथ्थो॥
करि पावस समकोय। अप्प हथ्थह हिय कुथ्थो॥
उथ्यो सु कोपि करिवार सजि। बीर भद्र पुंडीर रषि॥
रन सिंघ खूर धीरन धरहि। कोप समायो तीयरषि॥
छं० ॥ ४१३ ॥

दूहा॥ तहां निवेस पुंडीर किय। है गै सथ्थ समथ्थ॥
तहां निवेसह अट्ठ दिन। मास सत्त सुग तथ्थ॥ छं०॥४१४॥

पृथ्वीराज का धीर को बुलाने का पत्र भेजना।

तब धीरह कग्गर लिष्यो। प्रथीराज चहुआन॥
इम धर आगर धीर तूं। आनो तुम करि मान॥
छं० ॥ ४१५ ॥

धीर का राजाज्ञा को स्वीकार करना।

बंचि धीर कग्गर न्वपति। सिर धरि करि तसलीम॥
औछव आदर बहुत किय। उपजि हरष सम सीम॥
छं० ॥ ४१६ ॥

कवित्त॥ करन साज मन चिंति। चल्यो हय खेन पुंडीरह॥
कछुक सोन सामानि। हुए तब चिंते धीरह॥
भावी गति होइ है। कहा बहु बुद्धि विचारं॥

हुं पहुँचो नृप पाय। तो अप्प मनों चित सारं ॥
सें अट्ठ अस्व चहुआन घौ। और पुंडीर न वट्टिहो ॥
पै लग्गि राज अपराध षमि। पाय पराक्रम मिट्टिहो ॥
छं० ॥ ४१७ ॥

चल्यौ धीर कंगुर दिसह। उर धरि आलप अत्त ॥
जैतराव चामंड मिलि। कही राज सों वत्त ॥ छं० ॥ ४१८ ॥

धीर का सौदागरों के घोड़े खरीदना।

कवित्त ॥ सहस अट्ठ है सथ्थ। सहस पंचह सौदागर ॥
आय सपत्ते तथ्थ। धीर दीनौ आदर बर ॥
मास एक है परषि। सहस दूनह इय रष्पै ॥
और देस में अस्व। लिए अपजानि परष्पै ॥
दीए सु द्रव्य मुह मंगि बर। जाति भांति लष्पन सहित ॥
रवि रथ्थ जानि उच्चिश्रवा। कै अमोल मोलनि ग्रहति ॥
छं० ॥ ४१९ ॥

घोड़ों की उत्तमता का वर्णन।

इसे अस्व अंमोल। लिऐ पुंडीर चंद कहि ॥
ग्रम्भ जंघ अन चढ़े। जिसे दिए वस्त्र अग्य महि ॥
मिच सेन गंधर्व। लिये अंतेवर प्रब्बल ॥
नदिव नास झूलंत। आय जपर पंडव चलि ॥
अनभूत जुद्ध अन चिंति परि। पष गँभ्रव कौं बंधि कसि ॥
छंडाय जुधिष्ठिर पंचसय। लय पवंग ते पेस कसि ॥
छं० ॥ ४२० ॥

उन्हीं सौदागरों का गजनी घोडे लेकर जाना और उक्त समाचार सुन कर शाह का कुपित होना।

सोदागर गज्जन सपत्त। गोरी सहाव मिलि ॥
इय निरषत पतिसाइ। सोइ रष्पे जु अप्प कलि ॥

मिलि ततार घुरसान । सज्जि ममरेज सु मत्तिय ॥
सुनौ साहि साहाब । सु बर है धीर सपत्तिय ॥
कुप्पयो साहि इह बेन सुनि । सब सौदागर गहन किय ॥
सुनि बत्त भग्गि सौदागरह । जाय धीर सब सरन लिय ॥
छं० ॥ ४२१ ॥

दूहा ॥ अर्द्ध साथ दै सथ्थ हय । बहुराए पुंडीर ॥
अश्व अमोलक राज कों । लेन चल्यौ अग्रधीर ॥ छं० ॥ ४२२ ॥

कवित्त ॥ अश्व लैन गय धीर । अटक उत्तरि जाइँनवि ॥
अद्ध साथ पुंडीर । सथ्थ लै सव्व थान नव ॥
ढुंढि थान घुरसान । तुंग ताजौ बहु लिन्नौ ॥
भैरू थान बलोच । भेद घुरसान सु दिन्नौ ॥
लग्गए दूत गोरी सुबर । बर पुंडीर सु थट्टयौ ॥
बर भेष साजि सौदागिरह । गोरी सेन परट्टयौ ॥ छं० ॥ ४२३ ॥

शाह का सौदागरों के घोड़े छीन लेना और उनका भाग कर धीर की शरन लेना ।

लै सोदागिर द्रव्य । जाय गज्जनै सपत्ते ॥
मिले साहि साहाब । बत्त कहि कहि बिव रत्ते ॥
मिले ततार घुरसान । जागि ममरेज सु मत्तिय ॥
कह्यो साहि सों जाय । धीर दे है सुधि पत्तिय ॥
कोपियो साहि साहाब सुनि । सब सौदागिर गहन किय ॥
सुनि बत्त भग्गि सौदागरह । जाय धीर सब सरन लिय ॥
छं० ॥ ४२४ ॥

धीर का शाह को पत्र लिखना ।

दूहा ॥ धीर सु लिष्यौ साहि सों । सरन मुझ्झ सब आइ ॥
देहु द्रव्य सु है सहस । न्याय रीति सब राइ ॥ छं० ॥ ४२५ ॥
तुम इन के है मोल ले । अरु ताकें ग्रह बंधि ॥
ऐसी तुम्हैं न बूझियै । वेद कुरानन संधि ॥ छं० ॥ ४२६ ॥

शाह का मीरा खोखंद के हाथे घोड़ों की कीमत भेज देना और धीर का सौदागरों को राजी करना।

मीरां षोद मसंद अलि। तिन इथ्थह दिय द्रव्य ॥
पठए साह सु धीर सम। कनक वज्ज है सब ॥ ४२७ ॥
अली मसंद समप्पि सह। द्रव्य धीर इथ सोइ ॥
धीर समीप बुलाइ दिय। दांम सौदागर दोय ॥ छं० ॥ ४२८ ॥
आदर धीर सु भीर किय। सब सौदागर सथ्थ।
कालन मीर सु धीर सम। कहिय साहि सब कथ्थ ॥
छं० ॥ ४२९ ॥

गजनी के राज्य मांत्रियों का धीर पर क्रूर चक्र रचना।

राषि धीर सौदागरह। उभय मास गय जान ॥
तब घुरसान ततार मिलि। कियौ मतौ कहि सामि ॥ छं०॥४३०॥

सौदागरों को लिख भेजना कि धीर तुम्हें मार कर तुम्हारा द्रव्य छीन लेगा॥

करि सुमंत कग्गर लिषिय। पठयौ कालन मीर ॥
अरे मूढ़ तुम द्रव्य कज। इनन सुन्यौ है धीर ॥ छं० ॥ ४३१ ॥
जौ इम तुस एकंत मिल। तौ मारहिं पुंडीर ॥
दीन कौल पैगंबरी। इम तुम बंधै धीर ॥ छं० ॥ ४३२ ॥

सौदागरों का शंकित हो कर परस्पर सलाह करना।

मालन मीर कमाल कर। दियौ सु कग्गर दूत ॥
बंचि सुभर भय भीत भय। मंत परट्टिय नूत ॥ छं० ॥ ४३३ ॥

सौदागरों में यह मंत्र पक्का होना कि धीर को मार डाला जाय।

कवित्त ॥ कालन मीर कमाल। मियां मनहूर सु मन्निय ॥
सेषन खूब निजांम। फते मषत्यार सु पन्निय ॥

सबै मंचि मिलि रचिय। धीर अप्पां सह मारै॥
ता पहिले आपन्न। सबै धीरहि संघारै॥
सुद्धरै काम अप्पां सुबर। साहि सुबर मिलि मारियौ॥
संघार करै सबैं सुभर। जो जुध धीर हँकारियौ॥ छं० ॥४३४॥

सौदागरों का अपनी मदत के लिये शाह को अर्जी भेजना।

दूहा॥ मंत प्रपंच जु किज्जियै। लिषि भेजै करि धीर॥
अटक उतर तें सज्जियै। तो नहि विज्जै मीर॥ छं० ॥ ४३५॥

तब साजिय घुरसान षां। मंत मानि सजि भीर॥
षां गुज्जर भष्पर अली। षां बहाव चलि मीर॥ छं० ॥ ४३६॥

लै कागर पतिसाह पै। गुदराई सब बत्त॥
सौदागर बंदे तुमहि। मिलि भेज्यौ कर पत्त॥ छं० ॥ ४३७॥

शाही सेना के सिपाहियों का गुप्त रूप से सौदागरों के काफले में आ मिलना।

कवित्त॥ बर सौदागर एक। षान पीरोज सँपत्ते॥
मिलि आये पुंडीर। हय सु लै करि उनमत्ते॥
दाग भंजि सुरतान। अटक उत्तरि पुंडीरं॥
इम वंदे सविहान। साहि इम सज्जय बीरं॥
सुरतान सुबर चौकी बिहर। घात बंधि अप उत्तरै॥
तो सरन आय दै सथ्थ इम। सुबर सुभट इम उच्चरै॥
छं० ॥ ४३८॥

दूहा॥ दियौ हुकम गुज्जर भषर। बर बंधे करि तोन॥
जाय मिलै सौदागिरह। ग्रही आस मिसि मोन॥ छं० ॥४३९॥

एक बुद्धि करियै जु दृढ। मत लै बैठहि धीर॥
चुक करहि सबै चलत। तेक सजे करि मीर॥ छं० ॥ ४४०॥

सौदागरों का धीर को डेरे पर बुला कर एकान्त में सलाह करना और कालन कमाल का पीछे से पुंडीर का सिर धड़ से अलग कर देना।

कवित्त ॥ तब सज्जिय पट्टान । साहि बड़वत्त उड़ायिय ॥
कालन मीर कमाल । बोल धीरह लै आइय ॥
लै बैठे एकंत । साहि वत्तो भय बुझ्झै ॥
हम आये तो सरन । अबैं गुह्यां कह गुह्यै ॥
उच्चर्‌यौ धीर गरुअत्तनह । कोय साहि मो सरन इय ॥
नह डरो आज रष्यों तुमहि । जो जम आवै तुम्म जय ॥
छं० ॥ ४४१ ॥
अद्ध रयन पल्लानि । अटक सब सथ्थ सँपत्तौ ॥
मेछवान करि पंति । धीर हुंध्यौ बल मतौ ॥
चूक चूक संभरी । सब्ब पुंडीर समाही ॥
सबैं सेन आहुट्टि । धीर हुं धीरज साही ॥
कलहंत केलि लग्गी विषम । घाइ पुंडीर अहुट्टि घट ॥
धनि धनि नरिंद बर सह हुअ । जिहि पति रष भंजी विघट ॥
छं० ॥ ४४२ ॥
तब कालन करि क्रूर । कह्यौ तुम सरन बयट्टौ ॥
असि लै कालन उट्ठि । आय पिन पुट्ठि निहट्टौ ॥
कट्ठि तेग असि झारि । सीस उथ्यौ धर तुथ्यौ ॥
उवै तेक असमाँन । सीस गय ह्वर न घुथ्यौ ॥
निझ्झारि तेक धर ढारि धर । इय कमाल कालन न दुर ॥
सयदून सहि पट्टान रन । इह अचिज्ज अथ्थै अमर ॥छं०॥४४३॥

सौदागरों का धीर की लाश गजनी को भेज देना।

पत्ति पहर पुंडीर । जीय पति कै सथ मुक्यौ ॥
धीर धारि ढंढोरि । धार धारनि तन चुक्यौ ॥
जो जानत चहुआन । सोपि कीनो पुंडीरं ॥
तिन दंतिन बर बंडि । जुद्ध धर धर करि मीरं ॥

संग्रही लुथ्थि सुरतान पर। सब आइ,ट्ठिय राज भर ॥
गोरी नरिंद बाजे बजग। सुबर बीर ढिल्लिय सुधर ॥
छं० ॥ ४४४ ॥

धीर के बध की खबर पाकर पावस पुंडीर का धावा करना, पठानों और पुंडीरों का युद्ध, पठानों का भागना, पुंडीरों का जयी होना।

सहस च्यारि पट्ठान। मेलि पुंडीर धारि धर ॥
तत पावस पुंडीर। सुनी बत्तह चवि हरहर ॥
सजि पावस पुंडीर। चल्यौ कंधहै सुक रष्यै ॥
बीर भद्र नरसिंघ। तेज पुंडीर तरष्यै ॥
लषमसी सेन लष्यांह भरी। रंघर राघ समथ्थरिन ॥
संक्रमे सेल बंधे सुभर। पष्पर सिंघ सुसाजतन ॥ छं० ४४५ ॥

दूहा ॥ अति आतुर पावस गयौ। धाय सँपत्तौ तथ्थ ॥
मनौ पवन पावस घुरै। झरि लायौ षग हथ्थ ॥ छं० ४४६ ॥

कवित्त ॥ आय सँपत्ते सोय। साज ठटे पट्ठानह ॥
हक्कि धक्कि हय नंषि। असँष असिबर उट्ठानह ॥
तेग तार झक्कस करार। कहै मुष मार मार सुर ॥
भगि पठान उसमानि। विमुष जिम झारि डारि भर ॥
सें अट्ठ पट्ठ धर ढर धरिग। जित्ते बर पुंडीर रन ॥
जै जया सद्द आयास हुअ। धंनि धीर धीरप्प तन ॥ छं० ४४७॥

दूहा ॥ आए पछ पुंडीर सब। मिले भीर लष धीर ॥
बिनै सीस सब दून वहि। बधि धर रष्पन धीर ॥ छं० ॥ ४४८ ॥

जिहि असिवर झरगय ढरिग। जिन रन सध्यौ साहि ॥
सो सध्यौ सोदागिरह। करों ग्रव्व जिन काय ॥ छं० ॥ ४४९ ॥

धीर की मृत्यु पर पृथ्वीराज का शोक करना।

चूक तेक तुथ्यौ सुसिर। उठि कबंध बेबंग ॥
मिलि चबसह सें मारियो। गय प्रथिराजह रंग ॥छं०॥४५०॥

बँची पच प्रथिराज नृप। मन मंन्यो बहु सोक
इम धर अग्गर धीर हौ। सो पत्तौ सुरलोक ॥ छं० ॥ ४५१ ॥

धीर की मृत्यु का तिथि वार।

अरिल्ल ॥ भादों सेत चतुर्दसि भारी। बर बर धीर गयौ सुषकारी ॥
मानै महल ब्रषा रिति राजन। करै न महल भ्रत्त भर काजन ॥
छं० ॥ ४५२ ॥

तदन्तर राजा का राज्य काज छोड़ कर संयोगिता के साथ रस विलास में रत होना।

दूहा ॥ बरषा रिति राजन बिलसि। मिले जानि रति मेंन ॥
देस भूमि भर छंडि दिय। खबरि न है दिन रैंन ॥ छं० ॥४५३ ॥

इति श्री कविचन्दविरचिते प्रथीराजरासके धीर-
पुंडीर पातिसाहग्रहनमोषन धीर बंधनो
नाम चौसठमो प्रस्ताव संपूर्णम् ॥ ६४ ॥



विवाह सम्यो लिष्यते ।

[पैंसठवां समय ।]

पृथ्वीराज की रानियों के नाम ।

कवित्त ॥ प्रथम परनि परिहारि । राइ नाहर की आइय ॥
आ पाछै इंछनीय । सलष की सुता बताइय ॥
आ पाछै दाहिमी । राय डाहर की कन्या ॥
राय कुँअरि अति रीत । सुता हंमीर सुमन्या ॥
राम साह की नंदिनी । बडगुज्जरि बानी बरनि ॥
ता पाछै पदमावती । जादवनी जोरी परनि ॥ छं० ॥ १ ॥

राय धन की कुंअरि । दुति जमुगीरी सुकहियै ॥
कछवाही पज्जूनि । भ्रात बलिभद्र सुलहियै ॥
आ पाछै पुंडीरि । चंद नंदनी सुगायव ॥
ससि बरना सुंदरी । अबर इंसावति पायव ॥
देवासी सोलंकनी । सारँग की पुत्री प्रगट ॥
पंगानी संजोगता । इतें राज महिला सुपट ॥ छं० ॥ २ ॥

भिन्न भिन्न रानियों से विवाह करने के वर्ष ।

पद्धरी ॥ ग्यारहै बरस प्रथिराज तांम । परनियै आय परिहार ठांम ॥
पुहकर सुथान जोरी सुकिन्न । नाहर सुषेत परिसुता लिन्न ॥
छं० ॥ ३ ॥

बारमै बरस रा सलख सोय । दिन्नी सुआय इंछनी लोय ॥
आबू सुतोरि चालुक्क गंजि । किन्नौ सुब्याह परिभाव भंजि ॥
छं० ॥ ४ ॥

तेरहैं बरस दाहिमी व्याहि । दिन्नी सुबहिन चामंड चाय ॥
चवदमै बरस प्रिथिराज लोय । व्याही सुसुता हम्मीर सोय ॥
छं० ॥ ५ ॥

हाडुलि हमीर सुतिलक्क दिन्न । कन्या सुव्याहि उद्धार किन्न ॥
पन्नमै बरस चहुआन वीर । बडगुज्जरि परने अति गहीर ॥
छं० ॥ ६ ॥

राम साहि की सुता जानि । व्याहे सुन्नपति अति हेत मानि ॥
सोलहैं बरस सूबा संपेस । व्याहे सुजाय पूरब्ब देस ॥
छं० ॥ ७ ॥

गढ समद सिषर जादव पजाय । लिन्नी सुतारूनि बिहंसेन षाय
सचमै बरस हुआन साजि । राय धन की सुता गिरदेव गाजि ॥
छं० ॥ ८ ॥

अठारमैं बरस चहुआन चाहि । कछवाह वीर पज्जून व्याहि ।
इक मात उदर धनिगरभ सोय । बलिभद्र कुंअर जाये सदोय ॥
छं० ॥ ९ ॥

बरसें गुनीस पुंडीरि व्याहि । चन्द की सुता मुष चन्द चाहि ॥
बीसमें बरस चहुआन धारि । ससिवरता ल्याये बल बकारि ॥
छं० ॥ १० ॥

इकइमें बरस संभरि नरेस । इंसावति ल्याये गंजि देस ॥
बाईसैं बरस प्रिथीराज पूर । सारंग सुता व्याहे सुसूर ॥
छं० ॥ ११ ॥

छत्तीस बरस पट मास लोय । पंगानि सुता ल्याये सुसोय ॥
रट्ठौरि ल्याय चौसठि मराय । पंचास लाष अरिदल षपाय ॥
छं० ॥ १२ ॥

इति श्रीकविचन्दविरचिते पृथ्वीराजरासके प्रथिराज विवाह नाम पैंसाठमो प्रस्ताव सम्पूर्णम् ॥ ६५ ॥

बड़ी लड़ाई रो प्रस्ताव लिख्यते ।

[छाछठवां समय]

रावल समर सिंह जी का स्वप्न में एक सुन्दरी को देख कर उससे पूछना कि तू कौन है और उसका उत्तर देना कि मैं दिल्लीराज्य की राजश्री हूं ।

दूहा ॥ विलसत सुष दिन प्रति नवल । चित्रकोट चतुरंग ॥
सुपनंतर लषि सुन्दरी । सेत वस्त्र मन भंग ॥ छं० ॥ १ ॥

कवित्त ॥ प्रथा कंत करि प्रेम । जाम इक रही रजन्निय ॥
निद्रा रावर समर । पेषि चहुआन अवन्निय ॥
उज्जल वस्त्र पवित्र । षिनक रोवै षिन गावै ॥
षिनक लियै भर भौर । षिनक अप्पह संतावै ॥
नरलोइ देव देवंगना । तू रंभा कहि कित रहै ॥
पहु अच्छ वधू वीरहतनी । को तन गोरी संग्रहै ॥
छं० ॥ २ ॥

रावलजी का पृथा से कहना कि अब पृथ्वीराज पकड़ा जायगा और दिल्ली पर मुसल्मानों का राज्य स्थापित होगा ।

तब जग्गयौ पृथनाथ । सुपन लह्यौ सु विचारिय ॥
कह्यौ प्रिथा एकंत । सुपन पायौ अकरारिय ॥
दिल्ली पति गजनेस । करे कंदल धर सट्टै ॥
पकरै जब प्रथिराज । तबह गोरी तन तुट्टै ॥

जोगिनी ग्रहे भंजे सुधर। रेनसीह साको करै॥
म्लेछांह म्लेछ धर भोगवै। इह निहंच इम उचरै॥

छं० ॥ ३ ॥

रावल जी का अपने पुत्र रतनसिंह को राज्य देकर निगम बोध की यात्रा के लियं तैयार होना।

दुहा॥ सभा करी रावर समर। बैठे सूर सवान॥
निगम बोध भेटन सुतिय। चलियै दिल्ली थान॥

छं० ॥ ४ ॥

चित्रकोट गढ पट्ट काज। रावल पुत्र रतंन॥
निट्ठ सु रष्पिय इट्ठ करि। घन प्रमोधि परिजंन॥

छं० ॥ ५ ॥

कवित्त॥ समर सिंघ निज पट्ट। थप्पि रावल रतंनं॥
दोहित्तौ सोमेस। अनघ भरि कुंभ वारनं॥
दष्पिन दिसि संक्रमिय। मिलि यह बसी पति साहं॥
बिदुर नयर दिय पटें। रहिय अनुचरि तिहि ठाहं॥
वीराधि बीर बज्जाय घग। इनिय वज्र तन करि उतन॥
इह सुपन रयनि लहि चंद कहि। चलि धुमानगढ कं॥

छं० ॥ ६ ॥

रावल जी का अपने मातहत रावतों को इकट्ठा करके देवराज को गढ रक्षा पर छोड़ना और पृथा सहित आप निगम बोध को कूच करना।

दुहा॥ सुरज कोट गढ पौलि सजि। नालि गोलि चिहुं दीस॥
तीरंदाज अभूल भर। रषि चोकी अहनीस॥

छं० ॥ ७ ॥

षटकोस परिमान गढ। जरध प्रयुखंबाय॥
सजल सरोवर कुंड भरि। झिरना झरन सुहाव॥

छं० ॥ ८ ॥

कवित्त ॥ लिहि बेरां लिहि काख । फटै कम्मर चावहिसि ॥
अबूगढ आबोर । गए आमद बूंदी दिसि ॥
दैंडर गढ गोडवारि । धरा उज्जैन धरज्जिय ॥
रिनथंभोर धराइ । सांढि चढि तेरह तज्जिय ॥
पञ्जेर जोनि सिलहै पवंग । साज बाज सब दिष्पियै ॥
नीसान घाव बज्जे निहसि । कोंन चितोरह रष्पियै ॥
छं० ॥ ९ ॥

रष्पि थान देवराज । गढ़ चित्रकोट भलायौ ॥
सत्त सहस असवार । अट्ठ ग्रह जाप करायौ ॥
किय डेरा दस कोस । प्रिथा लीनी अप सथ्थह ॥
स्वाति सुकल पष तीज । चल्यौ रावर मनु पथ्थह ॥
हय सहस सथ्थ असवार इम्भ । प्रस्थानौ अप्पन कय्यौ ॥
दस दिवस रष्पि प्रस्थान तें । करे फौजै रह संचय्यौ ॥
छं० ॥ १० ॥

रावल जी की तैयारी और उनकी सेना के हाथी घोड़ों की सजावट का वर्णन।

पद्धरी। सजि चल्यो कटक रावर नरिंद । मानो कि पथ्थ दुरजोध इंद ॥
पंचास हालि सुंडाल सथ्थ । मैंमत्त चलै जनु इन्द्र पथ्थ ॥
छं० ॥ ११ ॥

उम्भारि सुंड क्रीडंत तेह । मानों कि नाग वन मरुत लेह ॥
गढ पारि झारि पाहोर गंभ । गुंजरे भोंर षठ रत्ति झुम्म ॥
छं० ॥ १२ ॥

पगथंभ फवै तन मेर रूप । सुंडाल सेस तिन चढे भूप ॥
उप्पंम चंद किरनाल जोति । नव जटित नवग्रह जानि द्योति ॥
छं० ॥ १३ ॥

गिर झरन जा मद स्रवत जात । धज नेज झुम्म घुघ्घर घुरात ॥
पट डोरि कसन गजवाग साहि । उपरस्स झूल झमकंत ताहि ॥
छं० ॥ १४ ॥

ढालें सिंदूर सीसह सुलाल। मनु स्याम कूट डारी गुलाल।
तिन देषि शत्रु होवत विहाल। अरिथट्ट भंजनह रूप काल॥
छं० ॥ १५ ॥

आतस चरिच अनभंग थान। गज थट्ट थट्ट गिरि चले जानि॥
तिन पुट्ठि तुरी पष्षर समेत। रथ सूर जानि आने सुहेत॥
छं० ॥ १६ ॥

उंचास भास परबत समान। ढिल्लै पहार छत्तिय प्रमान॥
षरगोस मधय पुट्ठीं सरोज। आछादि वस्त्र अनेक मौज॥
छं० ॥ १७ ॥

घरि एक पलक पल प्रान पील। नाचंत नट मानों असील॥
हाकंत सबद छुट्टंत वाय। हुंकरत तेज मुट्ठी समाय॥
छं० ॥ १८ ॥

[1]अपंम जरित नग जीन जोति। मानों कि सिद्ध उर प्रगटि द्योत॥
पष्षर समत जगमग पलान। मानों कि सघन महि डग्गि भान॥
छं० ॥ १९ ॥

तुरकी ऐराक कच्छी बँगाल। इबसीय गोल नाचंत झाल॥
ताजी मँग्राम ते धुंधमार। पुज्जै न वान मानै न सार॥
छं० ॥ २० ॥

अनेक जाति अनेक रूप। तिन चढ़े दिग्गवर जाति भूप॥
मानों समंद सरिता हिलोर। मिलि आय जानि बरषा सजोर॥
छं० ॥ २१ ॥

सजि समर फौज अप्पह समान। मानह, अषाढ जलहर प्रमान॥
* * * * * * * * छं० ॥२२॥

कवित्त ॥ ह्वै धुररज उच्छलिय। तिमिर विफुरिय धुंध पर॥
तरनि रंग रस मिलिय। घोर घुग्घरिय रुहिर सर॥
चष्प जुअल संजरिय। कमल उल्लसिय विमल जल॥
पषिक पयंबल खटिय। मथन घस नेह तुभ्भक दल॥

---

(१) को.—उषंम।

जोवंति सिंघ अरिदल दमन। नह सुभझै करमाल कर॥
टल टलिय परिय कंपिय सघन। समर पयाना रंभ भर॥
छं० ॥ २३ ॥

रावलजी का आंबेर में डेरा डालना और जुव्वन गढ़ के रावत रनधीर का रावलजी का लश्कर लूटने को धावा करना।

कूच कूच करि पैर। प्रथा डोला दोइ सथ्थइ॥
सत्त एक वाजिच। चले उमराव समथ्थइ॥
किय डेरा आंमेर। कोस दोइ उप्पर कट्ठिय॥
सहस तीस दोइ सथ्थ। जुव्वन गढ़ रायां हट्ठिय॥
किन कही वत्त रावर समर। इह राजा चीतौर पति।
तब कही वत्त रन धीर भर। इह अलोच किज्जै सुसति॥
छं० ॥ २४ ॥

दूहा॥ समर सिंघ रावर न्वपति। कटक लैहु सब घेरि॥
जो सद्धौ चीतोर पति। तौ डेरा आंबेर॥ छं० ॥ २५ ॥
हुई[1] हूह हलहल हुई। छुटि गयंद मै मत्त॥
मानों प्रव्वत [2]धन सिषर। चले फौज अनुरत्त॥ छं० ॥ २६ ॥
विराज॥ चल्यौ मंगि बाजं। रिनं धीर राजं॥
करी फौज अग्गं। इला मग्ग भग्गं॥ छं० ॥ २७ ॥
अनंमी जुवानं। षंचै तोन बानं॥
हुए हीस बाजं। चवंदिस्सि गाजं॥ छं० ॥ २८ ॥
मनों अग्ग होरी। दिसा संधि धोरी॥
चढै अप्प अप्पं। मनों सिद्ध दप्पं॥ छं० ॥ २९ ॥
बजे षग्ग रालं। उड़ै दब्बि नालं॥
मनों तुट्ठि तारं। लग्यौ सेस भारं॥ छं० ॥ ३० ॥
षइं लग्गि बानं। दब्यौ धूरि भारं॥
बजे तूर साजं। गयनं सु गाजं॥ छं० ॥ ३१ ॥

(१) मो.-कूह। (२) क. ए.-धन।

करे फौज तीनं । अगं चित्त दीनं ॥
घटा बंधि फौजं । धरा खेन मौजं ॥ छं० ॥ ३२ ॥

उक्त समाचार पाकर रावलजी का निज सेना सम्हालना ।

दूहा ॥ खबरि भई रावर समर । दोन्यौ पट्टन राय ॥
सद्यौ पट्ट प्रथिराज को । ल्यौं चित्रकोट सुभाइ ॥ छं० ॥ ३३ ॥
कह्यौ आइ रावर समर । तब सिर लग्गी झार ॥
को रनधीरह बप्पुरौ । मो सों मंडै आल ॥ छं० ॥ ३४ ॥
फौज फौज सिलहौं सजी । । यह गज्जे घनघोर ॥
कुरिय अप्प रावर चल्यौ । भयौ कुलाहल सोर ॥ छं० ॥ ३५ ॥
छुट्टे षंभू थान ते । चले मत्त गजराज ॥
दधि फटक्कि फट्टकि गगन । उलटि सुभट जुध साज ॥ छं० ॥३६॥

रनधीर का अपनी सेना को चक्रव्यूह रच कर रावलजी की सेना को घेर लेना ।

कवित्त ॥ चक्रव्यूह रन धीर । सहस दस बीस दोय सजि ॥
आडंबर बहु करिय । मनों पल्लव भद्रव गजि ॥
दंति सहस बर मत्त । फिरै चावहिसि बिंध्यौ ॥
चित्रकोट कन्हा नरिंद । जानि जस सों जम जुध्यौ ॥
दंताल देत लग्गा भिरन । मानो कट्ट कवार किय ॥
बिच फौज ढक्कि रनधीर मुष । जानि बाज तीतर परिय ॥
छं० ॥ ३७ ॥

रावलमीर रनधीर का युद्ध, रनधीर का मारा जाना ।

भुजंगी ॥ उठे वीर 'बद्दे बके थान थानं । जगी जोग माया सुरं अप्प मानं ॥
जगे भूत वेताल भूसाल पद्दं । भिरे एक जामं बिहद्दं सु हद्दं ॥
छं० ॥ ३८ ॥
बजे तार रनतूर षग्गं उनंगं । तिनं वेर कन्हं रमै रोस रंगं ॥
षलद्धंत ओनं बहै रत्त धारं । सिरं इष्य ईसं उड़ै तुट्टि सारं ॥
छं० ॥ ३९ ॥

(१) मो.- बद्द ।

इहकंत कूदंत नंचै कमंधं । कडक्कंत वज्जंत छुट्टंत संधं ॥
[1]खहक्कंत लूटंत तूटंत भूभं । झुकंते धुकंते दोऊ वथ्थ झूमं ॥
छं० ॥ ४० ॥
दडक्कंत दीसंत पीसंत दंतं । करी कन्ह केली परे सूर पंतं ॥
गयौ कन्ह चालुक्क अग्गें उतंगं । रिनं धीर वाही लगे कंध वग्गं ॥
छं० ॥ ४१ ॥
लगी नाग मुष्पी छती पुट्ठि फारे । पर्‌यौ धीर षेतं सु चंदं उचारे ॥
परे सेन चालुक्क सथ्थं समथ्थं । भरैं अच्छरी आनि अन्नेक रथ्थं
छ० ॥ ४२ ॥
कँहा आय मुर्छा लग्यौ धार भारं । धरे सत्त तोवार चिंतोर सारं ॥
परे चालुकं सेन यट्ठं सुघट्ठं । परे सत्त तीनं बियं पानि लुट्ठं ॥
छं० ॥ ४३ ॥

कवित्त ॥ पर्‌यौ सथ्थ रनधीर । भंजि सेना चालुक्की ॥
तीन सत्त धर परे । जानि लग्गी तन भूकी ॥
सौध्यौ रन सीसोद । कन्ह पट्टे बंधायं ॥
प्रथा कंत इम जैत । सषी मुगतान बंधायं ॥
दैदास सथ्थ अप्पन सुपर । बीस रोज मुक्काम किय ॥
जिन घाव अंग लग्गे भरन । तिनह सीष चित्रकोट दिय ॥
छं० ॥ ४४ ॥

संयोगिता के प्रधान का रावलजी को दस कोस की पेशवाई देकर लेना और निगम बोध पर डेरा देना।

कन्ह लयौ अपसथ्थ । चले दरकूच महाभर ॥
कुसल हुई सब सथ्थ । गयौ जोगिन प्रथ्थावर ॥
संजोगिता प्रधान । आय संमुह दस कोसह ॥
कोस पंच सामंत । पुच्छि परिगह आलोचह ॥

(१) ए. कृ. को.-हलक्कंत ।

डेरा कराय तीरथ्थ तट। निगम बोध मेंथ्यौ तवह ॥
मुत्तिय बधायौ थाल भरि। करि आनँद ईंछिनि जवह ॥
छं० ॥ ४५ ॥

रावलजी का सब आदर सत्कार होना परंतु पृथ्वीराज तक उनकी अवाई की खबर तक न होना।

लई प्रथा मधि राज। सुधि न पाई प्रथिराजह ॥
तीन सत्त सुभ नारि। सषी मनमुत्ति सु साजह ॥
संजोगित परधान। दियौ सौधौ उमरावह ॥
सत्त तीन भरि छाब। चली कनवज्जनि धावह ॥
चौडोल केक रथके अरुहि। बहिल केक तुरियन चढिय ॥
मानों कि देव इंद्रानि लै। रूप भाग सबगुन बढिय ॥
छं० ॥ ४६ ॥

संयोगिता के यहां से दासियों का रावलजी के डेरे पर भोजन पान लेकर जाना।

दूहा ॥ करि मंजन रंजन बहुल। सुरँग अगर घन सार ॥
नवला अंजित नयन जुग। कनक षंभ मनितार ॥ छं० ॥४७॥
बस्त्र अनेक सुरंग तन। दमनक 'सायह लाय ॥
जरि जेहरि पाइन जरिय। सजि भूषन षोड़साय ॥ छं० ॥ ४८ ॥
लघ,नराज॥ रजंत भूषनं तनं। अलक्क लुट्टयं मनं ॥
सुचंद मुष्प रागिनी। मनो बदन्न नागिनी ॥ छं० ॥ ४९ ॥
उवट्टनं स उज्जलं। सुरंग रत्ति मज्जलं ॥
सुधा सुसेत दिष्पही। सु रोमराइ पिष्पही ॥ छं० ॥ ५० ॥

(१) ए. कृ. को.-साषह।

मनो कि गंग भारथी। सुभान चक्र सारथी॥
अभूषनं विराजयं। ग्रहंत रत्ति साजयं॥ छं०॥ ५१॥
पगं अराइ जेहरं। मनों कि भइ मेहरं॥
गठीस खग्ग सथ्थही। सुपिंड पानि रथ्थही॥ छं०॥ ५२॥
सुमेषला सु कट्टयं। खगं सु राज घट्टयं॥
ग्रहं नषिच मंडयं। दुकेत राह छंडयं॥ छं०॥ ५३॥
जुहार कंठ सुभ्भई। सु मेर गंग घुभ्भई॥
वरिष्य बाहु बंधयं। सु साष सेस गंधयं॥ छं०॥ ५४॥
जरित्त चूरि फुंदिनी। सुमेर ज्यौं फुनंदिनी॥
विराज कंठ दोवरं। कि गंग मेर ओवरं॥ छं०॥ ५५॥
सुहप्प गुंथि वेनियं। कि दीपमाल रेनियं॥
वरिष्य अट्ठ अट्टयं। सवन्न हंस तट्टयं॥ छं०॥ ५६॥
चढी चौडोल अंबरं। मनों कि मेघ घुम्मरं॥
चली सु अग्ग पच्छयं। इंद्रानि जानि कच्छयं॥ छं०॥ ५७॥
पचीस छाव अंबरं। असीस मुक्कली भरं॥
मिष्टान छाव सट्टयं। अनेक रंग मिट्टयं॥ छं०॥ ५८॥
बतीस भांति मंसयं। सु सादि सुद्ध अंसयं॥
सुरंभ तीस कट्टयं। कपूर भार पट्टयं॥ छं०॥ ५९॥
जवादि केसरं सुरं। पलं सु सत्त अंतरं॥
हजार तीन ऊनयं। बतीस छाव दूनयं॥ छं०॥ ६०॥
पँचास सत्त छप्पियं। कपूर पान डब्बियं॥
जराव जेब सट्टयं। जैचंद पुत्ति पट्टयं॥ छं०॥ ६१॥

दासियों का रावल जी से संयोगिता की असीस और शिष्टाचार कहना।

दूहा॥ सषी सकल उत्तरि चली। पंकति करि सब सथ्थ॥
छत्र धर्‍यौ चित्तोर पति। आय घड़ी रहि तथ्थ॥ छं०॥ ६२॥
गाथा॥ संजोगिता असीसं। मुक्कलियं राज चिरकोटं॥
अति सनमान जगीसं। आइयं भाग अग्गाई॥ छं०॥ ६३॥

रावलजी का सखियों का आदर करना और उनसे पृथ्वीराज का हाल चाल पूछना।

दूहा ॥ आदर सषी अनंत किय। कहो दिल्लियपति वत्त ॥
चार मास संजोगि ग्रह। [1]सुष विलसै नित प्रत्त ॥ छं०॥ ६४ ॥

सखियों का रावलजी को मितीवार सब बीतक सुनाना।

कवित्त ॥ हाव भाव वग्गरि विथार। विनय पुंटी अति ढुक्किय ॥
कुचतरिया दुहु पष्ष। मूल चछ हरती छुट्टिय ॥
[2]हांकी अहर सुरत्त। लियो संभर पति घेरिय ॥
छुट्टे सब परिवार। कहै संभरि पति चेरिय ॥
संभलै वत्त रावर समर। है हथ्थी परिगह सुभर ॥
दरबार राज भय भीति दिषि। बहु [3]लिछी पतिसाह घर॥छं०॥६५॥
धर लीनी भेहरा। परयो वंधह पम्मारह ॥
लूटि सहर लाहौर। गए द्रब कोरि अपारह ॥
दुह कीनी पुंडीर। हयो सौदागिर धीरह ॥
बेरी चावंड राय। राउ भोंहा गँग तीरह ॥
माल दे मौति देवराज गय। हाहुलि फिरि बैठौ हियै॥
जादवन सेन संभी भिरै। दिल्लेसर मध्ये हुवै ॥ छं० ॥ ६६ ॥
जे विपरीतह देषि। हुए राजान समथ्थं ॥
जे गिरिवर न छिपंति। हुए धरपति सिर छथं ॥
जे डरि देते दंड। तेन फिरि दंड नगौरह ॥
वल्लोची वल राए। ढुरै सिर उप्पर चौंरह ॥
गोरी नरिंद दस लष्ष हय। संभरि पति सल्लै हियै ॥
पंचास दून दोबीस घटि। सो कनवज्ज झुझाइयै ॥ छं० ॥ ६७ ॥
हयो बान कै मास। सूर कनवज्ज झुझाये ॥
चौ अग्गानिय सट्ठि। सट्ठ पंगानी ल्याये ॥
पतिकुल पिता संघारि। ल्हेच्छ सुष हुओ ततच्छिन ॥
मतै गयो कै मास। सुहौ दिल्लिय धर रष्यन ॥

(१) मो.-सुख विलसत हुअ नित्त। (२) ए. कृ. को. कहा। (३) मो. लिनिय।

दरबान नहीं सिर 'खज्जियां। मरद मेष मिहरी रहै॥
सैतान भाग अवग्रह अहै। धर गोरी छत्ती दहै॥ छं०॥ ६८॥
चावँड वेरी घांत। किति घोई रस लहौ॥
यट्टा पंगुर देस। साहि कोरी धर यह्वी॥
रजनी ठग दिन ठग्ग। सुचित दुचिता सँसारह॥
इह गोरी तन रत्त। अही गोरी धर नारह॥
अवधूत भूत नागिनि डस्यौ। विष लग्गौ लोरै लवन॥
रहते सु अंसु रथ्यौ नहीं। भई वत्त तीनो भुअन॥ छं०॥ ६९॥

उक्त समाचार सुनकर रावलजी का शोक प्रगट करना।

दूहा॥ सिर धुन्यौ रावर समर। दई सीष सब नारि॥
पानि कपूर सु इथ्थ दिय। कहि संजोग जुहार॥ छं०॥ ७०॥

पृथा का रानी इंछनी के साथ रहना और जैतराव का रावलजी की खातिरदारी करना।

प्रथा रनत इंछिनि महल। सुख विलास मिलि जोग॥
भ्रात चरित्तह दिष्पि सब। लग्यौ मन्न सँयोग॥ छं०॥ ७१॥
कवित्त॥ जैतराय पम्मार। करिय मनुहार चिचपति॥
मधुर सु मेवा अनत। मंस मिष्टान अजब भति॥
सीधौ मन सैं पंच। साक पल्लव तैला श्रम॥
दही दूध अनपाइ। घृत मन असी अनोपम॥
ऐराक वंस जोनह जरे। भरी छाव विधि विधि भली॥
पहुंचाय निगम रावर समर। हुई जैत अप्पन वली॥
छं०॥ ७२॥

कुमार रेणसीजी का सब सामंतों सहित रावलजी के लिये गोठ रचना।

दाहिम्मै चावंड। करी मनुहारि सवन भर॥
एक पुरंगम अच्छ। फेरि सुह अग्गै रावर॥

(१) ए. कृ. को.-कट्ठिया।

बलिभद्रह कूरंभ। छून ऐसो अहारै॥
जर उजवक इय एक। ढिल्लि अंठ,नि गिरि डारै॥
रामदे राव षीची प्रसंग। जामानी जदव बखिय॥
पम्मार सिंघ इत्ते सुभर। इन सु गोठि छचपति कखिय॥
छं० ॥ ७३ ॥

दूहा॥ [1]रेन कुंअर गोंठह रचिय। विविधि भांति सब नूप॥
सुरंभ घृत सीघो सघन। कीनो जीमन भूप॥ छं० ॥ ७४ ॥

गुरुराम का रावलजी को आशीर्वाद देना और कविचंद का विरदावली पढ़ना।

पद्धरी॥ सामंत सबन मनुहार कीन। प्रोहित्त राम आसीस दीन॥
हर सिद्ध दिस वरदान भट्ट। उच्चर्यो चंद पेषै सुथट्ट॥
छं० ॥ ७५ ॥

दुइ, पष्प चवर सिर धरिय छच। वरदाय देत आसीस तच॥
उट्ठयो सिंघ वरदाइ देषि। बोलंत विरद बहु,विधि विसेषि॥
छं० ॥ ७६ ॥

षीतौरराइ काइम्म कीन। पुम्मान पाट पग अचल दीन॥
मेरगिरि सरि चित्तौर मानि। किरनाल तेज बहु पुमान॥
छं० ॥ ७७ ॥

जैचंद समह जिन जुद्ध कीन। मांनो कि गुरग [2]तनु मोर पीन॥
कलकियां राय केदारराय। कब देत विरद मनु उमँग चाय॥
छं० ॥ ७८ ॥

पापियां राइ प्राग्वट समान। कप्पन दरिद्र करतार जान॥
हित्यार राइ कासी अभंग। मदुआन राइ गंगा उतंग॥
छं० ॥ ७९ ॥

सुरतान मलन बंधन समोष। हिंदून राइ टालंन दोष॥
उज्जेन राइ बंधन समथ्थ। आचार राइ [3]जुट्टरह वथ्थ॥
छं० ॥ ८० ॥

(१) मो.-रेनं कुवरं गोठ सुकरिय। (२) ए. कृ. को.-जनु। (३) मो.-युनिट्ठरह।

भीमंग राइ भंजन सुषेत। जस लयौ धवल राजिंद जैत॥
रिनथंभ राइ सिर दंड कीन। अबू आ राइ गढ़ लेइ दीन॥
छं०॥ ८१॥
उथ्थाप राइ थापन समथ्थ। सोंपन सरीर प्रथिराज सथ्थ॥
दथ्थनी साहि भंजन अलग्ग। चंदेरि खिद्दि किय नाम जग्ग॥
छं०॥ ८२॥
दूहा॥ जग जपर जगदीस गनि। मृत्तलोक दिल्लेस॥
कै तूं फनि षिचंग पति। आइ हमो नरेस॥ छं०॥ ८३ *॥

रनधीर को परास्त करने के लिये कवि का कन्हा को भी बधाई देना।

गाथा। कंन्हा दिया आसीसं। सथ्थौ रनधीर षेत षै रंडे॥
अट्ठा अट्ठावीसं। षग्गं तेजाय तेजरं तुट्टं॥ छं०॥ ८४॥
असि गइ मद्दर वारं। भारं सेसाइ सेस फनि इंदं॥
विम्भूतं अनपारं। समवर करसार समर रावरयं॥ छं०॥ ८५॥

रावलजी का कविचंद से चंद्रवंश की उत्पत्ति पूछना और कवि का इला और बुध का इतिहास कहना।

कवित्त॥ रावर पुच्छिय समर। सोम रवि वंस प्रकारं॥
बरनि कहिय कविचंद। कथा मंडे विसतारं॥
एक समय बन षंड। सपतरिषि गये रमंते॥
उमया शंकर तहां। देषि रसकेलि करंते॥
लाजंत उभर मुनिवर फिरिय। आप दियौ सिव मन कुरषि॥
छूजियौ सहित आवत इहां। मेंदी मोबिन अनि पुरष॥ छं०॥ ८६॥
मारतंड सुत मंड। जग्य मंडाय पुचकजि॥
राजलोक परछन। देत आहुति सों कि दुज॥
प्रगट कुंड कन्यका। देषि वाचिहुति वारं॥
फेरि मंच तप जोर। करिय दसमन्न कुमारं॥

* छं० ८३ मो. प्रति में नहीं है।

षेंखत सिकार इक दिवस बह। महादेव कैवन गयौ॥
कहि चन्द आप मेटै कवन। पुरषा तन तें थिय भयौ॥छं०॥८७॥
काम जुवहि बुद्धि। देषि चयि रूप छुब्धि घर॥
संभलि रिषि बाषिष्ट। बहुत करि अस्तुति शंकर॥
प्रसंन होइ बर दियौ। पिता घर होय कुआरं॥
फिरि तिय की तिय होय। बुद्ध घर जाय जिवारं॥
इक इक मास की अवधि करि। दुअसु पतंगा रष्पि इम॥छं०॥८८॥
बुध अंस चद्र बंसह भयौ। दस मन सूरज बंस क्रम।

रजपूत शब्द की उत्पत्ति।

दस हजार ग्रभवंत। रिषि चिय ढंकि धरचौ॥
फरसराम कै करत। वार इक वीर न षिचौ॥
कासिप को से दियौ। उदधि सारौ महि मंडल॥
तपन तात पन छंडि। गयौ मन ग्रहै कमंडल॥
वसुधा विचार तब कहि। निज रक्षा कारन जपिय॥
उतपन्न सुतन तिन के सरज। दिष्पि नाम 'रजपूज दिय॥
छं॥८९॥

रावल जी का कवि चन्द को दान देना॥

मैदा मन पंचास। बीस मन बेसन दीनौ॥
मंस जाति बहु भंति। जमन तट भोजन कीनौ॥
आटा घृत अप्पार। षंड गुर सक्कर भंती॥
जैयोधान जिहान। दई इथ्थनी इक तत्ती॥
मनुहारि परग्गह सवन करि। भांति भांति आदर करिय॥
पहुंचाइ समुद रावर सुवर। अप्प घरघर विथ्थ,रिय॥छं०॥९०॥
दो इथ्थिय तरिवार। तुरिय ऐराक अच्छ गल॥
कंचन जरित पलान। एक जोजन मभक्क पल॥
इथ्थी संघल दीप। एक जमदट्ठ अमोलं॥
जर जर कसि सिर पाव। साज सावत्ति समोलं॥

(१) ए.-को.-रजपूत।

पहुचाय चंद भट्ट सुवर । कीरति कलिजुग विस्तरिय ॥
चित्रकोट राव दीनौ इतौ । रही कलिज्जुग [1]वत्तरिय ॥ छं०॥ ९१॥

बनवीर का कवि को एक हथनी और दो सुंदरी देना।

दूहा ॥ बनवीरह परिहार दिय । इथिनी एक सुरंग ॥
मोती माला सघन जल । दै सुंदरी सुचंग ॥ छं० ॥ ९२ ॥

रावलजी का शंक्रांति पर गुरुराम को एक गांव देना।

सूरजि भई संक्राति जब । प्रोहित दीनी राम ॥
लष्यहू न किसनारपन । दिय कारुंडौ ग्राम ॥ छं० ॥ ९३ ॥
गाथा ॥ दिन प्रति दीजै दानं । सठंहू नाय घरचयं कज्जं ॥
दोय पहर मिलि थट्टं । गइ मह दरबार भट्ट चारनयं ॥
छं० ॥ ९४ ॥
इह रावर उनमानं । भानं उग्गाइ दिज्जियै दानं ॥
दिन प्रति दीजै धानं । इह दिट्ठं न कथयं कब्बी ॥ छं० ॥ ९५ ॥
दूहा ॥ [2]भुंजाई रावर समर । आवै बरन अठार ॥
नइ को पूछै अप्प पर । दिज्जै अन्न अपार ॥ छं० ॥ ९६ ॥

रावलजी का इक्कीस दिन निगमबोध स्थान पर बास करना।

निगमबोध रिध बासकिय । रावर समर नरिंद ॥
हुए घोस इक्कीस तहां । पंच सहस भर इंद ॥ छं० ॥ ९७ ॥

पृथा का महलों से रावलजी के डेरों पर आना।

दिवस चपथ्थै राव रह । आवै प्रथा इकंत ॥
वासुर दोइ वासै रहै । परी श्रान्त मन चिंति ॥ छं० ॥ ९८ ॥
अति सुख सकुंच वरस तिय । रित रितिए आधार ॥
बिलसत दिन ग्रीषम अधर । सुपनौ राजन वार ॥ छं० ॥ ९९ ॥

पृथ्वीराज का स्वप्न में एक सुंदरी को देखना।

कवित्त ॥ निसा एक माधव सु मास । ग्रीषम रिति आगम ॥
निसा जाम पच्छलौ । सुपन राजा [3]लहि जागम ॥

---

(१) ए. क. को.-विस्तरिय । (२) ए. क. को.-भोजाई । (३) ए. क. को-माहि ।

सेत चीर छौनी। पविच आचंन अलंकिय॥
मुँकत बंध चाटंक। बंध बेनी अवलंकिय॥
निज बैरि धारि कज्जल नयन। हर हराइ सहइ करिय॥
मानिक राइ बंसह विषम। रञ्जि रञ्जि धरनी 'धरिय॥छं०॥१००॥

राजा का पूछना कि तू क्या चाहती है। सुन्दरी का उत्तर देना कि "वीर पुरुष"॥

साटक॥ का तूं सुंदरि इंधरा किमहिता इच्छा परा वांछिता॥
को वांछा वर राज कोवर रची दातार्य रूपानिवा॥
नं नं नं न्रप जान दानरुचयं रूपं न विद्वी चयं॥
षड गंधार सुमार दुत्तर अरी सो मे वरं सुंदरं॥ छं०॥ १०१॥
दूहा॥ इम वसुधा सुपनंत दिय। रजगति रजन विचार॥
विलसत दिन ग्रीषम अरध। सुधपिय पंग कुआरि॥छं०॥१०२॥
रञ्जि रञ्जि उचार वर। गति सिंघल अतिरूप॥
सुपनंतर चहुआन सों। चलन कहत इल भूप॥ छं०॥ १०३॥

उसी समय पृथ्वीराज की नींद खुलना और देखना कि प्रभात हो गया है।

धरकि चित्त जोगिनि न्रपति। दिषि प्रभात दुति गान॥
भान किरन दिसि दिसि फटी। तम घटि तमचर गान॥
छं०॥ १०४॥

पृथ्वीराज का संयोगिता को स्वप्न का हाल सुनाना।

कवित्त॥ जग्गि जलनि प्रथिराज। जग्गि संजोग सुपनि कहि॥
सो सपनंतर जंपि। पत्ति दिट्ठी जु रत्ति महि॥
सेत वरन उत्तंग। चित्त हरनी कुटिला गति॥
बैसम गुन गुर दुत्ति। दुत्ति उजलंत कुटीरति॥
जंघे वचन्न वर कठिनइ। घन कुलटा गति चलन कहि॥
भव भविस गत्ति न्रिम्मान कहि। नन जानै भव गतिय वहि॥
छं०॥ १०५॥

(१) मो.-ढरिय।

संयोगिता का उत्तर देना कि यह सब हुआ ही करता है।

सुनि सुकंत धरइंद । जोय दिखौ जुग्गिनि गति ॥
पुत्त मित्त दारा न बंध । रोवन पितुरनि पति ॥
दिष्टमान रोवै प्रमान । पच्छि अंछनि लच्छि कुछौ[1] ॥
भोग बिना बँधि जगत । अमवय जग भय तुछौ ॥
मायाति मट्ठ संसारनिय । न्विप नच्चवि मुक्के जगत ॥
जीवन्न प्रान प्रापति अवसु । तव लग इह भावी विगति ॥
छं० ॥ १०६ ॥

पुनः दंपति का केलिक्रीडा में प्रवृत्त होना।

मुरिल्ल ॥ इँसि आलिंगन दै चहआनं । पिय मयूष दंपति रसपानं ॥
सुरत सुरत मंनं बर मत्तं । करहि सार संसार सुरत्तं ॥ छं० ॥ १०७ ॥

रसकेलि वर्णन।

इनुफाल ॥ बर सुरत रत्त सुचंद । दुइं बढे आनँद कंद ॥
इह बुल्लि रसमुष बाल । बर कहत ओपम साल ॥ छं० ॥ १०८ ॥
ससिभाम कट्ठी रीस । मनु उदित भय ससि सीस ॥
मुषश्चंद विंद विराज । कविराज ओपम साज ॥ छं० ॥ १०९ ॥
कै किरन उलससि कुट्टि । कै ठौर मनमथ छुट्टि ॥
कसि कासमीर बिबंध । बर अग्र आठ सुचंद ॥ छं० ॥ ११० ॥
बर चिंत उपम बिसाल । उडि चलन मंगल बाल ॥
कुच अग्र लग मद विंद । रस बढे आनँद कंद ॥ छं० ॥ १११ ॥
[2]मुकि कमल वैससि बाल । अलि लै उडी जनु बाल ॥
कुच छुट्टि छुट्टि सुमग्ग । कुसमेष सीष बिलग्ग ॥ छं० ॥ ११२ ॥
दुति इात कबिन झकोर । बग उडै घन जनु कोर ॥
पिय मेन नेन सुरत्त । तिन मझिक बाल सुगत्त ॥ छं० ॥ ११३ ॥
प्रति ब्यंब ओपम सीय । जनु सीय से इसि दीय ॥
रति निद्ध रतिवर बीर । रति रयन रयन समीर ॥ छं० ॥ ११४ ॥

(१) मो.-कुछ, तुछ।
(२) ए छ० कां०—मुकि कमल वैस विसाल

अरिल्ल ॥ अवसर प्रीति बढ़ी रसपानं । कहि वर दूत सुनी सुलतानं ॥
सुनि वर गोरिय साहि नरिंदं । भईय गत्ति लिखिय छिन मंदं ॥
छं० ॥ ११५ ॥

पृथ्वीराज की इस दशा का समाचार पाकर शहाबुद्दीन का अपने सरदारों से सलाह करना ।

दूहा ॥ मति छीनी लिखिय तनी । सुनिय साहि चहुआन ॥
दाव न चुक्कै अप्पनौ । दुज्जन सौति उरगान ॥ छं० ॥ ११६ ॥
कवित्त ॥ बोलि षान षुरसान । बोलि गोरि तातार वर ॥
षां रुस्तम पीरोज । सेन लिख्खी चरिच वर ।
बार बेर गहि मुक्कि । दीन में दीन कहायौ ॥
चहुआना जुरि नीर । मन्न मंतौ गह छायौ ॥
जौ छोड़ गोर गोरी ग्रहां । तौ तोसल मन भग्गही ॥
चहुआन बंधे बंधन जुरां । सो दिन पंच तु खग्गही ॥
॥ छं० ॥ ११७ ॥

यह सलाह पक्की होना कि दिल्ली को दूत भेजकर पूरा हाल जान लिया जाय तब चढाई की तैयारी की जाय ।

सुमति सुरत्ती साहि । धाइ बंध्यो चहुआनं ॥
सोई मता विज्जिये । बोल पछे मत आनं ॥
सुधम निधम वीर । बोलि विधम परिवानं ॥
फोर सुकति सुलतान । जहां लिखी परधानं ॥
तत मत्त वत्त वर संग्रहै । अब हिरदै भेदै छिनह ॥
इम कहै साहि चतुरंग सजि । तब अरि ग्रहन विचार कह ॥
छं० ॥ ११८ ॥

शहाबुद्दीन का दिल्ली को गुप्त चर भेजना ।

तब सु साहि गज्जनै । दूत लिखीय पठाइ ॥

तु कहु तंत को मंत। [1]अंत कहि कहि समुझाइ ॥
कै आवहु अंगल नरेस। बग्गरि सब सुद्धिय ॥
राज काज चहुआन। तक्कत सामंत सुबुद्धिय ॥
फुरमान साहि सिर धरि लियो। भेष कियो सोफी तिनह ॥
उभै पथ्थ क्रम पंथह चलै। आगर काइथ [2]कर दिनह ॥ छं०॥११९॥

दूत की व्याख्या।

दूहा ॥ साम दान अरु भेद दँड। ए पयारों विधि आइ ॥
आन पनै सोइ दुत कहि। काम करै सुखदाइ ॥ छं० ॥ १२० ॥

दूतों का दिल्ली पहुँच कर धर्मायन के द्वारा सब भेद लेना।

गाथा ॥ घर घर विवरित सुद्धं। लिद्धं चहुआन राजधानीयं ॥
सह दूतं पंथानं। गोरीयं अथ्थ जानामि ॥छं० ॥ १२१ ॥
वचनिका ॥ धुम्माधुन आयव पै पवरि पाए। तबहिं दुत गज्जन को आए ॥
तिहि दिन सुरतानं आराम करि आनि घरे रहे। ततार खां सो बातें कहे॥
बहुत रोज कछु और न आई। कछु दिल्ली की पवरि न पाई ॥
तब ततार खान कहत है। पातिसाह कछु बात चूक है ॥

बहुत दिनों तक दूतों के वापिस न आने पर शाह का चिंता करना।

मुरिल्ल ॥ घर घर चिन्त चहुआनं। साम चिन्ति लिल्लीय चहुआनं ॥
पुच्छ साहि ततार बुलाई। अजहूं दूत गज्जन न आई ॥
छं० ॥ १२२ ॥

ततार खां का उत्तर देना कि दूत के लिये देर होना ही शुभसूचक है।

श्लोक ॥ चिरं जोगीअ सिद्धं। चिरं बंध प्रधानकं ॥
चिरं सेवक साधर्म। चिरं दूतस्य लक्षणं ॥ छं० ॥ १२३ ॥

(१) ए. क. को.—कंत। (२) ए. क. कां-दिन करह।

चिरं तपो प्रथं दाता। चिरं राज पथं प्रभो ॥
चिरं नाम धनी दाता। चिरं दूतस्य लक्षणं ॥ छं० ॥ १२४ ॥
दूहा ॥ दून लच्छिन तसकर सुलभ। तस पर दूत बसीठ ॥
रति दृग इंदग कुसल भख। कर बंधेन घसीट ॥ छं० ॥१२५॥

नीति राव कुटवार का सब समाचार शाह को लिख भेजना।

नीति राव कुटवार दर। तहि निवसै उन रीति ॥
सुमिलि साहि कागद दियै। लिषि दरबारह नीति ॥छं०॥१२६॥

प्रथम दूत का दिल्ली का समाचार कहना।

ए गल्हां सुरतान सों। कहि षिन षान ततार ॥
प्रथम पहुर संधम सुचर[1]। दर बोल्यो कुटवार ॥छं०॥ १२७ ॥
वचनिका ॥ प्रथम पहर वह्या, संधम दूत आप षड़ा रह्या।
सलाम कह्या, दिल्ली के चरित्र कह्या ॥
पातिसाह पहिलों सैं तान बढ़ै, राजा हुंआ रति चढ़े ॥
छं० ॥ १२८ ॥
गाथा ॥ षैरी दं सुलतानं। दुसमन दैवान महलह थानं ॥
भर सहरत्त विरत्ता। आघातं गोरियं साहिं ॥ छं० ॥ १२९ ॥
कवित्त ॥ एक समै इम्मीर राइ। दरबार सपन्नौ ॥
पिथ्थौरा चहुआन। इष्ठ संजोगि विकन्नौ ॥
नथ्थि बाज गजराज। सुनर भेवह वर नारिय ॥
मार मार उच्चार। खड्गरि लक्करि सिर रारिय ॥
हाइ हाय दिसि संध्ये[2] हुआ धुअ समान सुमर धुरह ॥
हरि द्रुग द्रुग्ग मुष उच्चरिय। जिन दरोग गंठे डरह ॥छं०॥ ३० ॥
दूहा ॥ इह चरित्र पिथ्थै सुचर[3]। लग्गे गज्जन राह ॥
नाम सुसंधम सुभग ते। कही सहि सों जाह ॥ छं० ॥ १३१ ॥

---

(१) मो. वर।
(२) ए. क. को. हुअ सब्द। (३) ए. क. को. दीये चित्तर।

भर अबंध अछिय महल। रति बढ़ि घटि महिसार॥
विपरीति दिल्लिय सहर। न्रपति अलभ्यो मार[1]॥ छं० । १३२॥

दूसरे दूत का समाचार।

वचनिका॥ दूजा पहर वह्या। विश्रम दूत आय घरा रह्या॥
सलाम लह्या। दिल्ली का चरित कह्या॥ ते कहा चरित॥
गाथा॥ भग्गीवा सुर संधी। बंधे चेमाइ खज्जखो पानां॥
अप्पा पर न गनिज्जै। आनिज्जै राज भंजाई[2]॥
॥ छं० ॥ १३३॥

कवित्त॥ जां निज्जै सुविहान। राज भज्जै राजानी॥
दर है गै भर मथ्थ। तेज भग्गो चहुआनी॥
बामर संधि विसंधि। नीति भग्गी ढिल्लो वै॥
आनिज्जै सु विहान। छोड़ छिंदवान सुहै वै॥
खज भगो प्रेम बहु बरह। दह दुज्जन महलैं ग्रसै॥
चहुआन चरन सेवन सुवर। नीति राव अप्पन वसे॥
छं० ॥ १३४॥

तीसर दूत का समाचार।

वचनिका॥ तीजा पहर वह्या। निश्रम दूत आय घरा रह्या॥
सलाम लह्या॥ दिल्ली का चरित कह्या। ते केहा चरित॥
गाथा॥ छिन्दू सयन सुदुष्यं। सुष्यं साहाव गोरियं साहिं॥
राजन विषम चरियं। सामंता रोजनं रोज॥
छं० ॥ १३५॥

कवित्त॥ रोज रोज सु विहान। घेर सामंत गैह घन।
सामि निंद उच्चरै। सामि निन्दा न सुनै कन॥
भर अरत्त साईं। विरत्त गोरी सुलतानं॥
संभ रूप संजोगि। गिल्यो चहुआन सुभानं॥
विपरीति वत्त ढिल्लिय सहर। राज नीति भग्गी रसं॥

(१) मो.-उलझ्यो मार। (२) ए. कृ. को. भज्जाई।

पंजाब पंच पंचै सुपत्र । चिंति तब गोरी वसं ॥
छं० ॥ १३६ ॥

चौथे दूत का समाचार ।

वचनिका ॥ चौथा पधर पद्धा । सिलास दूत आइ धरा रद्धा ॥
सलाम कद्धा । ढिल्ली का चरित्र कद्धा ॥ ते केहा चरित्र ॥
गाथा ॥ गाडंदूर उडंडा । ओद गद्धवार मरद्द धद्द अंदा ॥
धुनि धुनि सह सामंता । चावंडं वेरियं बधे ॥ छं० ॥१३७ ॥
दूहा ॥ थिया राज वसिवो नही । वसिवो नह वहुराज ॥
वाहराज वसिवो नही । कहै घर घर आज ॥ छं ॥ १३८ ॥
कवित्त ॥ जिन कंधे ढिल्ली नरेस । कंध जिनके ढिल्लिय पुर ॥
जिन कंधे लगि राज । अग्ग अवुझ वहुन धर ॥
मान तुंग वर अग्ग । मिरिग कनवज्ज अुझार ॥
चौंसट्ठिन सुद्धि कौ । भागि जोगिनि पुर आइ ॥
चहुआन सुवर आनै नृपति । सो वल भंगी साहि सुनि ॥
चादर सु अप्पि गोरी सुवर । पंच देस पंजाव धुनि ॥छं०॥ १३९ ॥

शाह का पीर को चादर चढाकर दुआ मांगना ।

वचनिका ॥ अमा सुविहानं । आइव दी सुलतान ॥
पैगंवर परवर दिगार । दुआइ करीम कवार ॥
सुलतांन अलाउ सिकंदर आया । सुलतान साहवदीन अलाइ उपाया ॥
सुसलमान महति । दीन भीमहति ॥
इतनी कही कहन लागे । पातिसाह साहावदीन आगे ॥
अपर पराजे टरे । सैतान परवरे ॥
सामंत मन अरे । चावंड राइ भो वेरी वीं भरैं ॥
छूरंम कुल संकोड़ा । परिगह पास छोड़ा ॥
धांमार परि गनाई । दाहुसि परिहांम अनाई ॥
राउ जैतसी पास वेहरा छुट्टा । मुंडीगों लाहौर खुट्टा ॥
राउ भोजा दुनिया सुखी । राउ माल दे मीत चुकी ॥

देव राव दीवान छंडया। आदवों वैर मंडया॥
खलक आलम आलोई। जोवती चढ़ आन वोई॥
दसोंदी दीसा जीती। कलवज्ज कहर वीती॥
हजरत पुदाइ पेख। असि मरदान भेख॥
वरन वरन भेरी। वहलों पंति नेरी॥
'धु आसाहि साहाव साहि। दिजिये आदर उचाय॥

शहाबुद्दीन का चढ़ाई के लिये देश देश को परवाने या पत्र भेजना।

दूहा॥ घर घर वजति सिंह किय। भ्रकि किय घाव निसान॥
सत्त सहस कागर फटे। देस देस सुरतान॥ छं०॥ १४०॥

वचनिका॥इतने मुखन कों फुरमान फाड़े। नीवी सदा ठौर ठौर बैठक ठड़े
फुरमान पेस कदखिवास। कैलास देस रोह धंधार॥
गज्जर गिरवान पुरासान मुखतान। भटनेर भज्जरवान॥

शहाबुद्दीन के चढ़ाई करने का समाचार दिल्ली में पहुंचना और प्रजा वर्ग का अत्यंत व्याकुल होना।

दुहा॥ फुट्टिय वत्त प्रचार चर। घर घर ढिल्लिय आन॥
चल्यो साहि चढ़आन पर। चढ़ि हय गय असमान॥छं०॥ १४१॥
वढि आवत ढिल्ली सहर। चल्यो साहि सुरतान॥
घर आंगन मंगल करिग। सुनत सूर अकुलान। छं०॥ १४२॥
ग्रह बंभन ग्रहवान नर। ग्रह छुटो छह हत्त॥
भई वाति नर नारि मुष। सब लग्गे सन सत्त॥ छं०॥ १४३॥

कवित्त॥ सुलम साहि वानीत। आय गज्जन संपत्ते॥
तिन कागर हथवार। आइ उत्ते इत तत्ते॥
सेत दुती रविवार। वार गुरु तेरह तत्ते।
चल्यो साहि साहाव। जोध दै गै सनि मत्ते॥
जिन करह, ग्रब्ब गोरी सुपहु। आनि पुरानो सेन सह॥
सज्जयो सूर साहाव पुर। आयो आतुर उप्परह॥ छं०॥ १४४॥

सुरिस ॥ मुनि कागर दुक्कर दिखी धर न भूमि कंप जिम कंप नर व्यर[1] ॥
बाल वृद्ध नर नारि समानह। लगौ धक्कधक्की चिंत चिंतानह ॥
छं० ॥ १४५ ॥

प्रजा के महाजनों का मिलकर नगर सेठ के यहां जाना।

भै लग्गौ दिखिलय पुर जामह। नगर सेठ पहि गय प्रजतामह ॥
मिलिय सकल एकंत महाजन। किम बुझ्झौं रतिवंतौ राजन ॥
॥ छं० ॥ १४६ ॥

नगरसेठ श्रीमंत के यहां जुड़ने वाले सब महाजनों के नाम ग्राम और उनकी धन पात्रता वर्णन।

पद्धरी। प्रज मिलिय ताम विचार कीन। बुल्लाय बुद्धि जन सेठ खीन ॥
श्रीवंत साह सब नयर सेठ। मति वत बुद्धि गुर गुन निदेठि ॥
छं० ॥ १४७ ॥
वर सिंह साह इंकारि अप्प। भोगवै विभौ लच्छी सु तप्प ॥
श्रीधर सुनाम सुंदरह दास। श्री करन जसोधर संक तास ॥
॥ छं० ॥ १४८ ॥
सोमल्ल साहि केसल्ल साहि। धन सागर आगर सगर ताह ॥
सोवन्न साह साजन्न बोलि। गरुअन्न गाज सुभ तेज तोलि ॥
॥ छं० ॥ १४९ ॥
अमरसी अगर ईसरह दास। करमसी उदैसिंघ राम आस ॥
केसर कपूर षेतसी नाम। गनपति गनेस गौरसी स्याम ॥
॥ छं० ॥ १५० ॥
घड़सीह धनू नेतसी साह। षेतल्ल चतुरभुज मिले माह ॥
छाजू अरु छोतर छविल आइ। जोधा जैसिंघ भांभन बुलाइ ॥
॥ छं० ॥ १५१ ॥
टोडर मल्ल टौ खाठ कुरसीह। चलि गए सांप डरपंत खीह ॥
डुंगर सी ढाला तुरत वेग। व्यापार धरम चाल्यै सुनेग ॥
॥ छं० ॥ १५२ ॥

(१) मो.—अनठार।

यानि गथ्थिरा दामा दयाल । धनराज धींग भोगी भुआल ॥
परवत्त पदारथ पदमसींह । फांदुरु फलावर सिंघ ईस ॥
॥ छं० ॥ १५३ ॥
भांमो अरु भोजो मेघराज । मौहन मथुरो जा बड़ विराज ॥
रनधीर लषमसी बीर दास । सेषो सिंघो हेमंग हास ॥
॥ छं० ॥ १५४ ॥
आये अनेक महाजन्न सन्न । संकरहदास षचो सुअन्न ॥
बहु भ्रम्म धरन अति तप्पतार । अति उंच उंच क्रति क्रम्मकार ॥
छं० ॥ १५५ ॥
नन लहै धाम छाया प्रचार । कोमलह गात लच्छी न पार ॥
बोलंत सास चालंत थूल । अति बध्यौ उदर चढि ग्रीव मूल ॥
छं० ॥ १५६ ॥
पहिरंत वस्त्र ढीले सु उंच । ग्रिह दै कपाट मुररंत मुंछ ॥
लेघिनी कान खेषौ करंत । हरि ब्रह्म रूप ताहू छरंत ॥छ०॥१५७॥
ग्राहंत कोप भौरंत मुट्ठ । पीसंत दसन उट्ठंत निट्ठ ॥
दाता दयाल ऐसो न और । बरजंत पाप क्रम ठौर ठौर ॥
छं० ॥ १५८ ॥
प्रब दान ग्यान तीरथ विनान । सोभंत साह दै अन्न पान ॥
सोभंत नगर जिहि बड़े साहि । लष कोट द्रव्य जिन हट्ट माह ॥
छं० ॥ १५९ ॥
ए मिले साह श्रीवंत ग्रेह । आये सु चिंतातुर चिंति तेह ॥
सुत सुतिय क्रम्म परिवार त्रिन्न । घरबार भरे भंडार निन्न ॥
छं० ॥ १६० ॥
कोटीस धज्ज बंदहि अनेक । बर धवल ताम मंडो विवेक ॥
उंच उंच भोमि साजै विलास । बर गौष अनत लग भाल श्वास ॥
छं० ॥१६१ ॥
प्रज्जंक विवध साजे अनूप । बासंसि विवह गुन गंठि भूप ॥
आए सुसन्न ग्रह नयर साह । आसन्न दिन्न सम मज्झि ठाह ॥
छं० ॥ १६२ ॥

श्रीमंत साह का सब सेठ महाजनों का आदर सत्कार करना और सब महाजनों का अपनी विपति कथा सुनाना।

दूहा ॥ मानि साह श्रीवंत धन। सब प्रति आदर दीन ॥
अप्पनाम गुन उद्धरिय। सब संबोधन कीन ॥ छं० ॥ १६३ ॥
प्रथुक संबोधित साहि सब। चंदन चरचि कुसम्म ॥
कस्तूरी करपूर युत। बीर सुगंध सुरम्म ॥ छं० ॥ १६४ ॥
आदर करि सब प्रज पसरि। दिय बैठन सुभ ठाइ ॥
मति प्रमान जिहि पुच्छियै। बोलि सुगुझ्झ गुराइ ॥ छं० ॥ १६५ ॥

कवित्त ॥ मंच बयठ्ठे साहि। जिके बड्डे गुन आगर ॥
सुष सरूप भोग बन। सजल लज्जी बुधि सागर ॥
सुतन मंत चिंतवै। चित चिंतै न कोइ नर ॥
रतिमत्तौ राजान को। सुगुदरै दुष अन्दर ॥
सामंत सब्ब अच्छै विरत। राषा बंड बेरिय भर्‌यौ ॥
कैमास खग्ग[1] जातह सकल। सुवर मत्त[2] सथ्थह सज्जौ ॥
छं० ॥ १६६ ॥
पामारौ पंर चित्त। विरत किन्नौ चहुआनह ॥
जो बुझ्झै सम विषम। ग्यान अप्पनौ परानह ॥
मधू साह परधान। सोय दरबार न दिष्पहि ॥
रयन कुमर सामंत। सींह सोइ पित न परष्पहि ॥
अनि तरुनि नेह छंड्यौ तमकि। कोइ न सुधि न्रप वर कहै ॥
संजोगि नेह रत्तौ नपति। मनमत्तौ निस दिन रहै ॥
छं० ॥ १६७ ॥
पुचिय रा कमधज्ज। सोइ जुव्वन गुन मत्तौ ॥
रूप द्रव्य सिंगार। नेह उर चौजन रत्तौ ॥
नह बुझ्झै पर अप्प। तैन रस राजन बंध्यौ ॥

(१) ए. को.-सुर्ग (२) ए. कृ. को.- तत्त

जिम अलियज अंबुजहि। गई बासुर निसि संध्यौ॥
चिचंग राह आयौ सु घर। भये बीस बासुर सुथह॥
मन भई बुझ्झि राजन किनो। तौ को गुदरै अप्प कह॥
छं० ॥ १६८ ॥

श्रीपति साह का सब साहुकारों को लिवाकर गुरुराम के घर जाना।

भुजंगी॥ तबै उच्चर्यो साह श्रीपति तामं। सबै मंच मंडी जुषंडी विरामं॥
भए सब्ब सामंत चित्तं विरत्तं। दरंतेन तज्यौ न्रिपं मन्नि मत्तं[1]॥
छं० ॥ १६९ ॥

पुरष्पं[2] दरब्बार पावै न जानं। रहैं चीय रुक्कै पुरुष्पं पुरानं॥
विरानंन[3] अप्पंन बुझ्झै न सायं। करं बेत लट्ठी तरस्सीत रायं॥
छं० ॥ १७० ॥

न्रिपं रस्स बंधे सुपंगानि तासं। भए तीस अग्गं बरं पंच मासं॥
निसा बासुरं संधि भूल्यौ नियानं। लगे मीनकेतं क्रतं पंच बानं॥
छं० ॥ १७१ ॥

कहै कोय राजंग सुझ्झै न अप्पं। ग्रिहं राज चल्यौ गुरं राजबिप्पं॥
लहै भंति एकंत कुम्मार थानं। बिना सेव देवन्न आहार पानं॥
छं० ॥ १७२ ॥

पुछै बैरि बर बीर चामंड धारं। करै कानि भानेज रेनं कुमारं॥
घरं घालि बरदाय सूतो सुअप्पं। करै किम्मि आनूप प्रागट्ट तप्पं॥
छं० ॥ १७३ ॥

कहै गुदरं अन्य सूझै न राजं। बिना राम देवं जिनं दिल्लि लाजं[4]॥
मतौ मंडि उट्ठै सबै साहि तामं। चली प्रज्ज सथ्थै ग्रिहं विप्प रामं॥
छं० ॥ १७४ ॥

---

(१) ए. कृ. को. वत्तं
(२) ए.-गुरष्पं
(३) मो.-विरामन्ना
(४) ए. कृ.को.-काजं

चढै जान एकं सुएकं अनोपं। नरं जान जानं चवं डोल जोपं॥
बहिल्लं सु अस्वं सजुत्तं बनेयं। केयं अग्ग रोहै सुषं राह रेयं॥
छं० ॥ १७५ ॥
बसंनं अनूपं जराबं सुधारे। मनों धूंम रूपं धरन्नीव तारै॥
चली प्रज्ज सथ्थंग हंकार सद्दं। गए विप्र गेहं गहं माह नद्दं॥
छं० ॥ १७६ ॥

गुरु राम का सब सेठ साहूकारों से सादर मिलना।

दूहा॥ सुने गहंमह विप्र दर। आयौ उट्ठे ताह॥
तब दर पति सनमुष कहिय। आये श्रीपति साह॥ छं० ॥ १७७ ॥
प्रजा षलक सथ उम्मही। जे बड़ दिल्ली साह॥
सो आये दरबार तुम। कोइ इक काज उगाह॥ छं० ॥ १७८ ॥
आए आतुर राज गुर। करिय विवह महमान॥
आदर करि आसन्न दिय। संबोधे बर बानि॥ छं० ॥ १७९ ॥

श्रीमंत सेठ का गुरु राम से शाह की चढ़ाई का समाचार कह कर सारा दुःख रोना।

कवित्त। सुनि अवाज सुरतान। षलक भज्जिय नद मंडल॥
कर कुसाव भेहरा। दान अरु मान अषंडल॥
मिलि परवान पुंडीर। सहर लुब्बौ द्रव साइय॥
इनि सोदागिरि बानि। बनिज उन्नित पट पाइय॥
अग्यान लुपै अग्या न्रपति। सत संपति संभर धनी॥
गुर राज काज अवसर अवसि। प्रज पुकार मंडिय घनी॥
छं० ॥ १८० ॥

दूहा॥ तुम सम राजन राज हित। बित रष्यन चित धम्म॥
कानन मंडै करन सों। तू धर रष्यन अम्म॥ छं० ॥ १८१ ॥
कवित्त॥ मंद राज माल दे। देष चिय तन असि किन भौ॥
लौहानौ आजानबाह। अजमेर द्रुग गौ॥
पावस रा पट्टनी। महि महि सार निरत्तौ[1]॥

(१) ए.-नारंनौ, नारतौ

जर जोवन तन मंद। तुंग तेजी रन असुभौ ॥
दाहिम्म दोह बंछै विषम। चरन बीर बेरी वहन ॥
घर घालि भट्ट सूतौ घरह। सुवर विप्र तोही कहन ॥
छं० ॥ १८२ ॥

का कलहंतरि नारि। धारि आनौ घर मभ्भै ॥
रवि समान प्रथिराज। गिल्यौ गोरी जिम संभै ॥
जिहि परिगह परिवार। मारि मारत उप्पारिय ॥
जिम रावन मंडलिय। बलिय बन्दर हरि बारिय ॥
पुच्छहु जो विप्र पच्छहि मरन। तौ अग्गै सोइ कहौ ॥
कर दरभ कमंडल छाग सग। बादरि द्रुग मारग गहौ ॥
छं० ॥ १८३ ॥

पाइंनौ रावर नरिंद। बर प्रथा सपत्तौ ॥
सोइ अचिज्ज गण्हां। सुनंत मन मंझह संतौ ॥
ता सज्जन दी लज्ज। बज्ज गोरी धर चंपिय ॥
नद नाहर पइन। प्रवेस अवनी आकंपिय ॥
इम सुषम निंद आवै नृपति। विषम अण्प डंकह डसिय ॥
गुर राज काज अवसर वसिय। किम सुनेह छंडै रसिय ॥
छं० ॥ १८४ ॥

राजहौं कूरम्म। हथ्थ खड्ग बिय बंधे ॥
चाहुआन सुरतान। कूर काबरि इन बंधे ॥
देव राज घीची प्रसंग। गंग टहं पट फुट्टिय ॥
जैत राव हय गय। भंडार साहन सह लुट्टिय ॥
गुज्जर गमार सस्चह बली। मंत दैव द्रुगन गनै ॥
बर विप्र राज राजंग गुर। कहै आज तोही बनै ॥ छं० ॥ १८५ ॥

गुरु राम का कहना कि मैं तो ब्राह्मण हूं पोथी पाठ जानता हूं राज काज की बातें क्या जानू।

प्रोहित वाक्य।

इम सु कज्ज प्रव पंच। पढ़ै पचा प्रभु रंजहि ॥

इम जु लच्छि आस रहि। चरन चंदन घसि बंदहि॥
इम सुदेव जग्योपवीत। सोइ तन मंडन॥
इम विरह बंदि न पढ़त। पापह पर षंडन॥
इह विकट भट्ट चंदहि चरित। कहै सुमानै न्रप नवल॥
परतष्षि द्रग्ग पुच्छन चलौ। मंच घत्त सज्जह सवल॥
छं० ॥ १८६ ॥

शाह का कहना कि राज गुरु होकर अब आप भी ऐसा कहते हैं तो हम किसके होकर रहें।

प्रजा वाक्य।

धर बाहर पंडवन बुद्धि। बँधवन रुधि छुट्टिय॥
धर बाहर वामंन। छलित्त बल दोष सुथट्टिय॥
धर बाहर जुरि जरासिंध। गुर गजा जुद्ध किय॥
धर बाहर सुर पत्ति। अस्ति दद्धीच मंगि लिय॥
जिहि जियत धरनि धर और प्रभु। तिहि जननी जुव्वन हरिय॥
बंभन सुकज्ज इह अज्ज तुम। प्रज पुकार मंडी करिय॥
छं० ॥ १८७ ॥

गुरु राम का श्रीपत साह और सब महाजनों सहित कविचन्द के घर जाना।

दूहा॥ प्रज्ज सु करिवर विप्र कज। सीस तिलक तन तुंग॥
कुसुम गंध सब सथ्थ मिलि। मनहु कमल रस भृंग॥
छं० ॥ १८८ ॥

जब सहाब बहर उठी। तब गरुहां फुटि चाय॥
प्रज पुकार गुर सों कहिय। चंद कहन गुर आय॥ छं० ॥ १८९ ॥

कवित्त। राज गुरू दरबार जाय। घर चंद सपत्तौ॥
छच चौडोल रु जान। दिव्य[1] आसन दीपत्तौ॥
हेमहार मुद्रित उ चंद। किरनिय जगमग्गिय॥

(१) ए. क. को.-दिव्य।

तिमिर पाप कट्टन । खिखाट प्राची दिसि उग्गिय ॥
प्रज सोर रोर पावस मनों । सुगर भट्ट चंदह मुनिय ॥
भट्टनि जगाय जग्यौ पुरस । सुगुर पच्छ सहह दुनिय ॥
॥ छं० ॥ १९० ॥

कवि का स्त्री बालकों साहेत गुरु राम की पूजा करना और गुरुराम का कवि से अपने आने का कारण कहना।

चंद वदनि जगि चंद । चंद वदनी मुख चाह्यौ ॥
हे चंद्राननि चंद्र । कंत चंदहि न सुहायौ ॥
अम्रित मित्त कलमित । नित्त वंदिन दुह बहिय ॥
छिन छिन घटि बढि बढै । राह भय भवन सुजंदिय ॥
दुज पुज्जि अज्ज लज्जा न करि । राज गुरू आयौ घरां ॥
सावंग धूप दीपह चरचि । सुवर विप्र मंडल वरां ॥
॥ छं० ॥ १९१ ॥

मुरिल्ल ॥ सकल लोइ पुच्छन गुरु अप्पहि । गुरु षट मास राज बिन दिप्पहि ॥
तब पर जानि प्रपंच उपायौ । तब गुरु पुच्छन चंदहि आयौ ॥
॥ छं० ॥ १९२ ॥

दूहा ॥ आदर चंद अनंत किय । ग्रह आवत गुरु राम[1] ॥
सम सुत चियनि सु चरन परि । सिर फेरिग सब ठाम[2] ॥
॥ छं० ॥ १९३ ॥

मुरिल्ल ॥ तब गुरराज राज कवि बुझ्झै ।
तुहि बरदाइ तीन पुर सुझ्झै ॥
अहि निसि देव सेव गुरु ठानिय ।
सो षट मास मिले बिन जानिय ॥
छं० ॥ १९४ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-राज । (२) ए. कृ. को.-साज ।

कवि का कहना कि जिस स्त्री के कारण सर्वनाश हुआ राजा उसी के प्रेम में लिप्त है।

दूहा ॥ हस्यौ चंद बर बिप्र सों। तुम जानहु बहु भंति ॥
जिहि कामिनि कलहौ कियौ। सो जामिनि बिलसंत ॥
॥ छं० ॥ १९५ ॥

गुरुराम का कहना कि पृथ्वीराज ऐसा उदंड पुरुष क्योंकर स्त्री के बश में है।

सुरिस्र ॥ कही चंद बर बिप्र न[1] मानिय।
रहि रहि कवि तैं बात न जानिय॥
जिहि धनु चिय रन चिन वर आनिय।
सुक्यौं देव चिय बसि करि मानिय ॥ छं० ॥ १९६ ॥

कवि का कहना कि अभी आप वह बात नहीं जानते।

तुम सम दिट्ठि अदिट्ठि न दिट्ठौ। अब असीलष्प दस्स गहि[2] भष्यौ ॥
प्रान समान परत दप छोड्यौ। मरन छंडि महिला सुष[3] मोड्यौ ॥
॥ छं० ॥ १९७ ॥
तिहि महिला महिला बिसराई। अरु गुरु देव सेव सुनि साई ॥
बिभौ भूमि थ्रित जाहु सुजाही। सुनि सौ समौ राज गुर नाहीं ॥
॥ छं० ॥ १९८ ॥

गुरुराम का कहना कि हां कवि कहो क्या बात है।

दूहा ॥ समौ[4] जानि गुर राज रहि। कहि कहि कवि इह बत्त ॥
किहिवै किहि रूपनि रवनि। किम राजन रस रत्त ॥ छं० ॥ १९९ ॥

कविचन्द का संयोगिता के रूप राशि का बर्णन करना।

जुब्बन ज्यों तन मंडनौ। सिसु मंडन तन डोल ॥

---

(१) मो.-सु। (२) ए. कृ. को.-गहि गहि।
(३) ए. कृ. को.-मन। (४) ए.-मनौ।

बालप्पन सह विच्छुरन । तिहि चित चंचल लोल ॥
॥ छं० ॥ २०० ॥

गाथा ॥ जंजोई संजोई । जोईतं सिद्ध जम्माई ॥
नंजोई संजोई । गोईतं सिद्ध जम्माई ॥ छं० ॥ २०१ ॥

मालती ॥ गुरु पंच सप्तति चामरे । चदुआन अच्छर धामरे ॥
सति पौय पिंगल बंधए । गिय मालती प्रति छंदए ॥
॥ छं० ॥ २०२ ॥

संजोगि जोबन जंबनं । सुनि सर्वदा गुरु राजनं ॥
नग हेम हंस जुथप्पनं । गै मग्ग हंस उथप्पनं ॥
॥ छं० ॥ २०३ ॥

तल चरन अरुनति अद्धयं । जनु श्रीय श्रीषँड लद्धयं ॥
नष कुंद मल्लि सुवेसनं । प्रति ब्यंब श्रोन सुदेसनं ॥
॥ छं० ॥ २०४ ॥

करि कासमीर सुरंगनं । विपरीत रंभति जंघनं ॥
रस नेव रंजि नितंबिनी । कुसुमेष दुक्ख बिलंबिनी ॥
छं० ॥ २०५ ॥

उर भार मध्य विभंगन[1] । दिय रोम राय सुथंभनं ॥
कुच कंज परसन जंघली । मुष मयुष[2] देषि[3] कलंकली ॥
छं० ॥ २०६ ॥

हिय[4] अयन सयनति सिद्धयौ । भजि ग्रहन ग्रहनति रिद्धयौ ॥
उर झीन झीलति कंचुकी । भुज ओट जोटति पंचकी ॥
छं० ॥ २०७ ॥

नलि नील पाणि वअच्छयौ । जनु कुंद कुंदन सुच्छयौ[5] ॥
कल ग्रीव रेह चिवल्लया । जनु पंच जन्य सुथल्लया ॥ छं० ॥२०८॥

अधरेव पाक सुबिंबनं । सुक साखि आखिन खंडनं ॥
दस नेव मुक्ति सुनंदनं । प्रति भास मुद्रित बंदनं ॥
छं० ॥ २०९ ॥

(१) ए. कृ. को.- विलंगनं (२) को.-नयुष (३) मो.-दोष
(४) ए.-सिय (५) ए.-चच्छयौ

मधु मधुरयं मधु सहया। कलयंत कोकिल वहया ॥
श्रम भवन जीवन नासिका। नसु अंजनी पिय पासिका ॥
छं० ॥ २१० ॥

झल मलत श्रवन तटंकता। रथ भंग अरक विलंबता ॥
तुछ तुच्छ दृष्यहि दृच्छसी। घष लज्ज सैसव संवसी ॥
छं० ॥ २११ ॥

सित असित उररि अपिंगज्यौ। जनु सेड बंदर बच्छज्यौ ॥
तसु मद्धि स्रग्ग मद बिंदुजा। दुति इंदुनिंदत सिंधुजा ॥
छं० ॥ २१२ ॥

कच वक्र चक्रति कुंतलं। तसु ओपमा नह भूतलं ॥
मनि बंध पुहपति दीसए। जनु कन्ह कालिय सीसए ॥
छं० ॥ २१३ ॥

चिस रावली वनि बंनियं। अवलंबि अलि कुल श्रिनियं ॥
चित चिच चिचत अंबरं। रति जानि दृहति सम्मरं ॥
छं० ॥ २१४ ॥

जनु सीस फूलति अच्छयौ। मनु कन्ह कालिय सुच्छयौ ॥
* * * * * * * छं० ॥ २१५ ॥

संयोगिता के शरीर में १४ रत्नों की उपमा वर्णन।

कवित्त ॥ जिहि उद्दि मध्य ए। रतन चौद्दह उद्धारे ॥
सोइ रतन संजोग[1]। अंग अंगह प्रति पारे
रूप रंभ गुन लच्छि। बचन अम्रत विष लज्जिय ॥
परिमल सुरतरु अंग। संष ग्रीवा सुभ सज्जिय ॥
बदन चंद चंचल तुरंग। गय सुगति जुवन सुरा ॥
धेनह सुधनंतरिसीख मनि। भौंह धनुष सज्जो नरा ॥
छं० ॥ २१६ ॥

दूहा ॥ समर समंडन समर ग्रह। समर सुरप्पर भोग ॥
समर सुजिम्मिय पंग न्यप। तिहि[2] चल्लन संजोग ॥
छं० ॥ २१७ ॥

(१) ए. कृ. को.-सोइ संजोग सुअंग (२) ए. कृ. को.-वल्लह।

मन्नि राज गुर राज रस । कवि वर वरनिय सत्ति ॥
जस भावौ तस भुग्गवै । तस विधि अप्पै मत्ति ॥
छं० ॥ २१८ ॥

उभै उभै रस उप्पयौ । मिले चंद गुर राज ॥
कब वयनन आनन मिलहि । नयन निरष्पहि राज ॥
छं० ॥ २१९ ॥

कविचन्द और गुरु राम का सब महाजन मंडली सहित राजद्वार पर जाना ।

भुजंगी ॥ मिले विप्र भट्ट अनूपं मधामं । मनोहिं दवानं सवानं[1] तकामं ॥
उभै सूर सांई सुअग्गा विनानं । चढ़े एक घोडोल नर एक जानं ॥
छं० ॥ २२० ॥

महा प्रीति अंगं मनं एक कीनं । मिले इष्ट इष्टं सुताखीय दीनं ॥
उभै ओपमा सूर चंद सुचंदं । उभै पूजनं राज राजंन बंदं ॥
छं० ॥ २२१ ॥

अनेकं सुभंती उभै जानि वानं । उभै भ्रम्म कित्ती रथं चाहुआनं ॥
उभै आस पासं महाजन्न चालैं । जिनं देख देसं महानौच हालैं ॥
छं० ॥ २२२ ॥

कहै जे समाचार दूरं म होता । मिलै लोक सथ्थें तमासा निजोता ॥
* * * * * * * छं० ॥ २२३ ॥

कवित्त ॥ एक रथ्थ आरुहिय । सरद दिन इंद मनोहर ॥
समुह राज दरबार । चलक उम्महिय सगोहर ॥
कलस बंधि बंधियन । सगुन संचारि विचारिय ॥
बढ़े कित्ति वल्ली[2] सुघट्टि । घट आउदि हारिय[3] ॥
उच्छह उतंग छंदह वयन । गयन गज्जि वज्जिय जलह ॥
दरबार राज धुंधरि धरनि । सरन रष्पि दुग्गा वलह ॥
छं० ॥ २२४ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-सवानंन
(२) मो.-त्रेली (३) मो.-भट आय निहारिय

संयोगिता की ओर से नरभेष धारण किए हुए पहरेदार स्त्रियों का सब लोगों को मार कर भगा देना।

दिष्पि दइय दरबार। पंग कुंअरि चर बारहि ॥
नारि भेष नर वस्त्र। सस्त्र लकरी कर झारहि ॥
मार मार उच्चार। बाल तरुनि सुगंध रस ॥
तुरिय नथ्थि गज नथ्थि। नथ्थि रथ विरद बंदि जस ॥
बाजहि विसाल रन तूर रव। भवर भीर भामिनि भवन ॥
दिठि परत खरथ्थर पय परत[1]। नकरि जीव अगाह गवन ॥
छं० ॥ २२५ ॥

धलक भग्गि गय सथ्थ। छंडि चौडोल लोग गय ॥
खास खइरि लक्करिय। छाह सिर विप्र भइ भय ॥
बिन अलच्छि लच्छि नइ। बिहनि इच्छा भइ सुगंइ ॥
उम्माह ग्राह मिल्लिग[2] पवारे[3]। रवरि राह ठिल्लित ठिल्लिग ॥
दासी दिवंग सम अच्छरिय। मिलित दरह दोउनि बुल्लिग ॥
छं० ॥ २२६ ॥

कविचन्द का ड्योढीवाली दासियों से बातें करना और कंचुकी का कलरव सुनकर कवि के पास आना।

चंद्रायना ॥ मिले चंद गुरराज विराजत राज दर।
जहां पंगा प्रभानु कियो प्रथिराज बर ॥
तहां अपुब्ब रस रास विलासति सुंदरिय।
धित बिन न्रप दरबार जिनग बिन सुंदरिय ॥
छं० ॥ २२७ ॥

दूहा ॥ इम जंपै कविराज गुर। कंपिग पहन वार ॥
को गुर देव नरेस सों। दिसि गज्जनी पुकार ॥
छं० ॥ २२८ ॥

---

(१) ए. कृ. को.-दिटि परतल रथ्थर पय परत। (२) ए. कृ. को.-पिल्लिग
(३) मो-दवरि, ए खवरि

सुनि सुनाइ आवंन मिटि। दिष्पि कविंद न्रप आन ॥
जे जीवन तौ पंच बुलि। दर बोले दरवान ॥

छं० ॥ २२८ ॥

बर किंचिक पुच्छह न्रपति। सुनि कलरव कवि बानि ॥
धाय चंद दरसन कियौ। ब्रम्ह परिग्गह ठानि ॥

छं० ॥ २२० ॥

सुनि कवि बानि प्रमान धन। कहि इंछनी सें जाइ ॥
जु कछु कहौ बरदाय बर। ज्यों हित दिसा पसाइ' ॥

छं० ॥ २३१ ॥

अन्दर से इस दासियों का आकर कविचन्द से कहना कि क्या आज्ञा है सो कहिए हम राजा से निवेदन करें।

चद्रायना ॥ तब कुटिल भौंह चख सोहति मोहति दासि दस।
कछुक हँसिय[2] पय लग्गिय जंपी अलीय[3] लसि ॥
तुम सरवग्ग सुकवि राज गुर राज सम।
तुम तन समुह निरष्पि गये पति पाय हम ॥ छं० ॥ २३२ ॥
दोहा ॥ आसन असु दिय चरन रज। कच झारिय तन रेन ॥
सब्ब सिंगार सु सुंदरिय। आदर आभर नेंन ॥

॥ छं० ॥ २३३ ॥

दिट्ठौ सो दिट्ठौ नहीं। अनदिट्ठौ दिट्ठाय ॥
तुम सरवंगिय कवि सुनिय। इह अचिज्ज किहि भाय ॥

छं० ॥ २३४ ॥

कवि अचिज्ज सब अप्प घर। तरह तरह बतिनाइ ॥
नेग्रिय धन तिन नाव दस। किह भूत गीताय ॥ छं० ॥ २३५ ॥
आदर दर दिन्नौ कविहि। आयस मंग्यो दासि ॥
कहा पयंपहु न्रपति सों। कहौ चंद गुर भासि ॥

छं० ॥ २३६ ॥

---

(१) मो.-पठाइ
(२) ए. कृ. को.-हसीय (३) ए. कृ. को.- अलिय

कविचन्द का राजा को एक पत्र और सँदेसा देना।

कग्गर अप्पह राज कर। सुष जंपह इह वत्त॥
गोरी रती तुअ धरनि। तूं गोरी रस रत्त॥

छं० ॥ २३७ ॥

कवित्त॥ नथ्थि कन्ह चहुआन। धीर पुंडीरन सिद्धर॥
नहि सुमंत कयमास। राय गोयंद अषंडर॥
नहि सुलोह लंगरिय। अत्तताई सुभंग भर[1]॥
नहि पज्जन पंवार। सलष लष्यन बघघेल नर॥
भोहांन भूप बंधुन बरन। सरन जाहि ढिल्लिय नयर॥
घर नयर राय रावर समर। सक सहाब गोरी वयर॥

छं० ॥ २३८ ॥

दासियों का पृथ्वीराज के पास जाना और कवि का पत्र देकर सँदेसा कहना।

दूहा॥ दासि संपत्तिय तिहि महल। जहं संजोगि नरिंद॥
सनमुष सघौ निरष्यौ। मनो पृथौपुर इंद॥ छं० ॥ २३९ ॥
कम कम दासिय संचरिय। दस दस दिसि दरबार॥
पग मुक्कत उक्कत लिषिय। न्रिप निय नयन निहारि॥

छं० ॥ २४० ॥

अन्य महल दासिय निरष। परषि पयंपन जोग॥
उच्चित मुष रुष राज किय। न्रपति सपत्तौ लोग॥

छं० ॥ २४१ ॥

इय कहि दासिय अप्पि कर। लिषि जु दियौ गुर चंद॥
पहिलौ औली बंचियौ। भूमिय जाय नरिंद॥

छं० ॥ २४२ ॥

कविचन्द का पत्र।

* धम तिस जस तिस दान तिस। तिस लग्गै हरि नाम॥

---

(१) मो.-मह सुम्भर

* यह दोहा मो० प्रति में नहीं है

अह लिस ते मन वीर वर। तिस रच्चे सं ग्राम ॥
छं० ॥ २४३ ॥

कवित्त ॥ गज्जनेस आयौ असंभ। सह सेन सकिल्लिय ॥
दै चादर आदर अनंद। दिल्लिय दिसि मिल्लिय ॥
दस हजार बारूनि विसाल। दस लाष तुरंगम ॥
तह अनेक भर सुभर। मीर गंभीर अभंगम ॥
आवरन बस्त चहुआन सुनि। प्रान रष्पि प्रारंभ करि ॥
सामंत नहीं सोमंत करि। जिन बोरहि ढिल्लिय सुधर ॥
छं० ॥ २४४ ॥

पृथ्वीराज का पत्र फाड़ कर फेंक देना और शृंगार से वीर रस में परिवर्तित हो जाना।

दूहा ॥ सुनि कग्गर फार्‌यो सुकर। धर रच्चै गुर भट्ट ॥
तरकि तोन सज्जौ नृपति। जिम बद्धौ रस नट्ट ॥
छं० ॥ २४५ ॥

कल किंचत किंचित भयौ। गुनियन मयन उघारि ॥
बर पंचों छिन छिन छुटति। लज्ज पंच बढ़ि पार ॥
छं० ॥ २४६ ॥

राजा का कुछ विमन होकर संयोगिता की ओर देखना और संयोगिता का पूछना कि यह क्यों।

प्रिय अप्रिय दिष्पौ बदन। किय जिय नृप भौ सच्च ॥
कुँ पूछौं बर बरह तुहि। कहि सम दौरति कच्च ॥छं०॥ २४७॥

राजा का कहना कि मुझे रात्रि के स्वप्न का स्मरण आगया है।

अदभुत इक दिष्पौ नृपति। रयनि गलित 'षिन प्रात ॥
सुरति एक सम्मुह रही। सा सुपनंतर बात ॥
छं० ॥ २४८ ॥

(१) ए. कु. को-बिन

संयोगिता का कहना कि यह तो हुआ ही करता है।

कवित्त ॥ कहै पीय पोमिनिय। कंत धन धन्यौ तोन धन ॥
सुष सुमार आरोह। सार संसार मरन मन ॥
दिन दिनयर निसि चंद। रैनि दिन दिनयर आवै ॥
जंतु मंतु इह बरनि। श्रवन लग्गवि समुझावै ॥
अरधंग धरा अरधंग हुअ। अरि अंग रंग अरधंग करि[1] ॥
जिम हंस रहत तस हंसनिय। सर सुक्कै जिम पंक परि ॥
छं० ॥ २४९ ॥

राजा का कहना कि नहीं वह अरिष्ट सूचक अपूर्व स्वप्न ध्यान देने योग्य है।

दूहा ॥ कहै राज सँजोगि सोँ। अदभुत चरित सुनंत ॥
निय पाइन लग्गिय सुप्रिय। कहि कहि कंत सुमंत ॥
छं० ॥ २५० ॥

संयोगिता का हठ कर कहना कि अच्छा तो बतलाइए।

कहै राज संजोगि सुनि। सुकयह कथ्थ अकथ्थ ॥
श्रवन मंडि कनवज्ज निय। सा सुपनंतर अथ्थ ॥
छं० ॥ २५१ ॥

राजा का रात्रि के स्वप्न का हाल कहना।

कवित्त ॥ अज्ज सुपन सुंदरिय। रंभ लग्गिय परि रंभइ ॥
तइं तुअ संग सुकिय। तेज अच्छिय रवि गिम्मइ ॥
तइं तुम मिलि झग्गरौ। गहहि करिवर कर जंपहि ॥
तइं अदिष्ट आरिष्ट। दुष्ट दानव तन चंपहि ॥
तइं तून हून नन अच्छरिय। हर हर हर सुर उप्पज्यौ ॥
जानै न देव दैवान मति। कहन्निमान कह निप्पज्यौ ॥
छं० ॥ २५२ ॥

(१) ए. क. को.- अरि अरधंग अरंग करि

राजा का महलों से निकल कर कवि के पास आना।

सुनि उट्ठिय संजोगि। बचन जै जै जंपत जस॥
धनि छूरति चहुआन। राज सिंगार बीर रस॥
इक्क मरन सुर नरा"। मरन सिध साधक मुक्कै॥
भरन रहै जग नाम। चित्त रष्पत व्रत चुक्कै॥
अध अध करे अरियन दुअध। तूं उधतदि अरधंग हौं"॥
सामंतन को सो मंत करि। राजस अप्प पधारिहौं॥
छं० ॥ २५३ ॥

राजा के स्वप्न का हाल सुनकर कवि और गुरुराम का बलिदान और दान पुण्य करवाना।

सुपनंतर पुच्छनह। राजगुर कविगुर बुल्लिय॥
सो सुपनंतर सुनवि। तेन मुष तिन प्रति घुल्लिय॥
सुबर इष्ष दै मष्ष। अभय पंजर पढि दिन्नौ॥
सहस कलस भरि धीर। अरघ रवि ससि को किन्नौ॥
दस बलि दिसान दस महिष हनि। मित अनंत मित दान दिय॥
तिहि दिवस देव प्रथिराज दर। संभ्रु सुभर भर महल किय॥
छं० ॥ २५४ ॥

दूहा॥ आवस्यक भावी विगति। कहा महिष बध होइ॥
जो जतननि टारी टरै। नल' पंडव सम कोइ॥
छं० ॥ २५५ ॥

पृथ्वीराज का बाहर के सब समाचार और रावलजी की अवाई की खबर सुनकर पश्चात्ताप करना और मंत्रियों से कहना कि जिस तरह हो रावल जी को लिवा लाने का उपाय करो।

पद्धरी॥ किय महल राज आरंभ संभ्रु। पद्धरी छंद ब्रन्नैति मंभ्रु॥

(१) मो.-भल।

धुक्कि निसान हुक्कि जिकीव। दिसि दिसि रिसान धाए नकीव॥
छं० ॥ २५६ ॥
घोलिय सुषग्ग है गै पलान। रथ अरब दिट्ठ गुट्ठिय गुमान॥
पट नरम गरम जरि जिमित षान। जे लए दंडि सुरतान षान॥
छं० ॥ २५७ ॥
आवध अरब्ब सिलहन सकोड़। जंपरिय किरन किरनाल होड़।
उच्छरिय सुच्छ बंकुरि कपोल। बिद्दिन बिरह उत्तंग बोल॥छं०॥२५८॥
छुह रंग छुक्क आहत्त दान। दूल मझ्झ नंज बंबरि विपान॥
खिषि खिप्त खिप्त कग्गर सुदृष्ट। जोगिन जमाति जन मिलि गरिष्ट॥
छं० ॥ २५९ ॥
सनमंध प्रियापति चिचकोट। बहु लज्ज बीस बासरति ओट॥
पुछ्यौ प्रधानह इंकरि हकारि। कह करी प्रथापति जनु जुहार॥
छं० ॥ २६० ॥
कामंध अंध बीसल कुखेन। अपराध कोटि कामिनि रसेन॥
जित महल पुरष रस बस अरङ्ग। भुग्गवै भूप ते निज नरङ्ग॥
छं० ॥ २६१ ॥
मो बर समान धरपति सुदृष्ट। मो कहि न कवन डर कवन कष्ट॥
गोग्रहन धरनि ग्रह अतिथ राज। रष्षहि सरीर सुष[1] कवन काज॥
छं० ॥ २६२ ॥
अप अप्प दोष चित चिंति बीर। इहि लज्ज अज्ज छंडो सरीर॥
धरनर नरिंद जोगिंद मंत। पति चिचकोट अरु प्रिया कंत॥
छं० ॥ २६३ ॥
उतर्‌यौ आय घर निगम बोध। मुहि दहन मुगध किन आय सोध॥
अब करिव कोइ जिहि तिहि उपाय। जिम चलै अप्प ग्रिह समर राइ॥
छं० ॥ २६४ ॥
रिस दिसर जान संजोगिबान। फिरि मझ्झ बोलि पिय सुनहु आनि॥
महिलान मंत पुच्छै न कोइ॥ हुं कहों नाथ ज्यों समझि होइ॥
छं० ॥ २६५ ॥

(१) ए. कृ. को.-सुष।

सब चिया बुद्धि नीची गिनंत। मानै न सच्च जो फुनि सुनंति॥
संसार चिया बिन नाहि होत। संजोगि सक्ति सिव माँहि जोत॥
छं० ॥ २६६ ॥
यह रस सरूप बहु भाँति जानि। गुन अगुन अविधि विधि सबै ठानि॥
यह चरित सबै जोतिग्ग माहिं। चिय चरित करत कवि सुद्धि नाहिं॥
छं० ॥ २६७ ॥
अग्गादि रीति सुनि यह बात। तिन काज कहै इम बुद्धि घात॥
इम सुष्प दुष्प बंटन समथ्थ। इम सुरग बास छंडै न सथ्थ॥छं०॥२६८॥
इम भूष प्यास अंग मै देव। इम सर समान पति हंस सेव॥
छं० ॥ २६९ ॥

संयोगिता का दासी भेजकर राजा को दरबार में से बुला भेजना।

कवित्त॥ अंग रष्पि संजोगि। नाम सुभना सुभ लष्छन॥
रूप तेज अति तास। सकल कल ग्यान विचष्पिन[1]॥
आइसु मझ्झ महल्ल। देषि द्रिग राजन उच्चिग॥
गहर लज्ज बर बान। नेम निज नाथ स दुच्चिय॥
इंछै सुमझ्झ संजोगि तुम। आवन राज षिनक्कनह॥
सुनि सुभर सबै बैठन कहिग। संजोगी संपत्त यह॥ छं० ॥ २७० ॥
दूहा॥ उठत राज मुह मुह दृगनि। भरमंडी सन सल्ल॥
चिया रसन तृपतो नहीं। राज काज नह मल्ल॥ छं० ॥ २७१ ॥

राजा का संयोगिता से पूछना कि तुम मन खिन्न क्यों हो।

दिष्पिय राज संजोगि द्रिग। मन मलिन्न चलचित्त॥
कहै राज पंगानि किम। तुं तन मनै अहित्त॥ छं० ॥ २७२ ॥

संयोगिता का कहना कि जिस विषय पर दरबार में बात चल रही थी उसीके लिये मैंने भी आपको कष्ट दिया है।

कहै संजोगिनि स्वामि तुम। सभा सु जंपिय बत्त।

(१) ए. क. को.-सुलष्छिन।

सोइ कारन प्रभु संभर्‌यौ। सुहौं पगि कहौं सत्त ॥

॥ छं० २७३ ॥

संयोगिता का कहना कि मैंने रावलजी का उचित आदर सत्कार साध दिया।

कवित्त ॥ प्रथी कंत आगमह। कंत मोंकलि प्रधान दिय ॥
सुभर अन्न वस्तर सुगंध। आदर अद्भ किय ॥
ननद देउँ सिंगार। हार उत्तंग दुति मुत्तिय ॥
विजै करत विजैपाल। तात कौ तात लिए निय ॥
विस लेष[1] प्रीति अंतर निमष। श्रवन राज आनंद दिय ॥
गुरमंच तंच जिम प्रौढ तिय। पिय पियूष ज्यों रैनि पिय ॥

॥ छं० २७४ ॥

पानिवृत वर्णन।

चिय जु प्रीय उच्चरिय। चिय जु प्रिय बिन जिय[2] रष्यै ॥
अग्गि लोपि रव रवन। रवन बिन घटिन परष्यै ॥
पवन पंथ हाइंत। रहिन ग्राहत ग्रह तन्नै ॥
अंसु रष्यि तजि अंसु। हार सिंगारत अन्नै ॥
जुरि[3] चक्क चक्क बोलह अगनि। चरित चित्त सुज लोक चित ॥
अरधंग अंग संदेह नहि। सुहो मोहि पिय पंग पित ॥

छं० ॥ २७५ ॥

दूहा ॥ पिय बिन तनपन अनन धन। भूषन वसन न रत्त ॥
जीवन बिन जीवन रयन। तो पति एह परत्त ॥

छं० ॥ २७६ ॥

पृथ्वीराज का संयोगिता को आलिंगन करना।

* हँसि आलिंगन अंग दिय। जुरि लोयन पिय पीय ॥

---

(१) ए. द. को.-विषलेष। (२) ए. द. को.-तिय।
(३) ए. क्र. को.-सुरि।
* यह दोहा मो. प्रति में नहीं है।

लव लावन्य समुंद सर। समुध सुधा रस दीय॥
छं० ॥ २७७ ॥

आलिंगन समय की शोभा वर्णन।

कवित्त ॥ इँसि आलिंगन देत। उपजि आनंद अपारह॥
कनक लता जनु उमड़ि। लपटि लग्गी सहकारह॥
नृप पयान सुनि कान। अंसु फिरि उभर समावत॥
मानो आगम झरमंडि। विरह पावक बुझावत॥
चहुआन चलत संजोगिता। पंग आनि करि कैं कहै॥
संदेस सास संभरि धनी। पलन प्रान पच्छै रहै॥
छं० ॥ २७८ ॥

पृथ्वीराज का इंछनी आदि अन्य सब रानियों से मिलना।

दूहा ॥ अंतर गति अंतर मिलन। ए सुष बुद्धि न कोइ॥
कै जानै बिछुरन मिलन। कै सरवग्ग जु होइ॥
छं० ॥ २७९ ॥

चिपति नयन बयनह चिपति। चिपति अलिंगन देह॥
रमन रमन्न विलास करि। फिरि दिय गंठि अछेह[1]॥
छं० ॥ २८० ॥

इंछिय इंछिनि बंछिनौ। सथ्थनि सुच्छ सुहाग॥
दस रवनी दस घटिक मिलि। जानि भवर कुसुमाँग॥
छं० ॥ २८१ ॥

कवित्त ॥ सुनि इंछिनि पम्मारि। लज्ज सागर मति नागर॥
सील लील लच्छिन बतीस। परसी रति आगर॥
लज्ज मेर दुति तन सुमेर। सत्त सीताहि समानन॥
अलप बानि नव रसति। जानि षट भाष प्रमाननि॥
जानै न मानि पइ विनय। भ्रम्म रूप लच्छी सहज॥
मंडिनि निवच्छ चहुआन कै। बंदि काम लीनी गहज॥
छं० ॥ २८२ ॥

(१) ए. कृ. को.-गेठिय छेह।

दसर वन्नि दस घटति। फिरिग कुसमंग भवर जिम॥
ग्रह ग्रहज्जि अलि मुक्कि। फिरिय कुंडली वाम द्रम॥
नयन कंति फिरि देषि। चंद ओपम फिरि पाई॥
कमल कोस ग्रह जुथ्थ। भँवर फिरि फिरि लग्गाई॥
संभरे षित रावर समर। दइ दुवाह दुज्जन हरन॥
जोगिंद राव जुग उप्परह। नर नरिंद करनी करन॥
छं० ॥ २८३ ॥

पृथ्वीराज का दरबारी पोशाक करके रावलजी से मिलने के लिये निगम बोध को जाना।

दूहा॥ चल्यौ राज संबोधि तिय। लिय बहु भांति वसत्त॥
प्रीति सहित अंतर उमग। करन सु सीतल गत्त॥
छं० ॥ २८४ ॥

कवित्त॥ कुसुम पट्ट सिर पग्ग। कुसुम रस गंध भवर सम॥
श्रवन साष दोउ लष्प। द्रव्य बहु मोरि[1] जोरि जम॥
सुरत रत्त अंतरह। रत्त तन बिरत मोहि मनि॥
फुरत इष्थ आतुरत। घुरत नीसान धुकि सुनि॥
मन मुदित मोह सेना सुरत। रुरत रात[2] सामंत सथ॥
न्विप समर सीह राजन मिलन। निगम बोध भिट्टन सुतिथ[3]॥
छं० ॥ २८५ ॥

दूहा॥ करिय मतौ मँडली महल। छँडि चावँड वर बंद॥
बगरि देव दरस्यौ नृपति। सुमन मानि आनंद॥
छं० ॥ २८६ ॥

आनंदेश्वत भर सुभर। दिन दुलंभ न्विप काज॥
सुवर बंध बंध्यौ नृपति। साहि गज्यौ जिहि साज॥
छं० ॥ २८७ ॥

---

(१) मो.-मोहि।
(२) मो.-रास
(३) प. कृ. को.-कथ

तब न्रप उत्तर अप्प दिय। समर सपत्तौ ग्रेह॥
तास मदन विधि अप करौ। होय भविस्यति[1] तेह॥
छं० ॥ २८८ ॥

पृथ्वीराज का सब सामंतमंडली सहित निगमबोध स्थान पर पहुंचना।

भुजंगी ॥ चल्यौ मेटनं राचि आवाज बज्जी। दिषी रत्ति निद्रौ रही ताहि लज्जी।
चवं मास पट्टं छहं रत्ति गज्जी। क्रमं मोह छंडे ग्रिहं क्रम्म लज्जी॥
छं० ॥ २८९ ॥
फिरै कुंडली डोरि त्रिम्मान तज्जी। मनों पातुरं चातुरं नृत्त सज्जी॥
मयं मोर मुत्ती हयं हीर मंडे। मनों सेत नेतं सुमेरं प्रचंडे॥
छं० ॥ २९० ॥
चल्यौ चाइ चहुआन दै कंध पानी। भई जैत आजैत आकास बानी॥
रवी जोग बैठौ अकासं सनीरं। दिसं बाम ईसान सद्यौ[2] करीरं॥
छं० ॥ २९१ ॥
फलं फूल पत्रं सुवंनं उड़ाये। मनौ बार बारं सुवाहं चढाये॥
सबै बोलि सामंत सामंत मन्ने। भई अग्गि या चहूनं सब्ब जन्ने॥
छं० ॥ २९२ ॥
चढे सथ्थ सामंत सब्बै समथ्थं। बजेह नीसान सद्दे अकथ्थं॥
चढ़े सेन चल्ले निगंबोध मग्गं। गए पासि सिंघं चरं चारि अग्गं॥
छं० ॥ २९३ ॥
चल्यौ रावलं संमुहं मंगि बाजी। चढी सब्ब सेना भरं नामसाजी॥
मिले संमुषं सेन दो राज राजं। दिठे[3] दिट्ठ दिट्ठी रसालं विराजं॥
छं० ॥ २९४ ॥
मिले प्रेम पूरन्न सामद्धि राजं। बजे अत्ति उच्छाह सुच्छाह बाजं॥
भए चित्त आनंद मानंद दूनं। बढी प्रेम बानं कुसल्लं सजनं॥
छं० ॥ २९५ ॥
मिले जाय बैठै निगंबोध थानं। चितं दोय रंजै प्रियं प्रेम पानं॥

(१) ए. कृ. को.-भविष्यति (२) मो.- चद्यौ (३) ए. कृ. को.-ठिले

घने आदरं सादरं सहि बैठे। मनों काम देवं दोज रूप पैठे॥
छं॥ २९६॥

एक दूसरे की कुशल प्रश्न होने पर पृथ्वीराज का रावल जी से अपना सब हाल कहना।

दुहा॥ कुसल तन पुच्छिय नृपति। हय गय भूमि भरान॥
ता पच्छै सुत सुति सुपरि। सुष दुष पुच्छि परान॥
छं॥ २९७॥

चौ अग्गानी सट्टि वर। पंगानी प्रभु आनि॥
रहे छत्र सामंत ते। नव जम्महि पहिचान॥
छं॥ २९८॥

सा संषेपक उच्चरिय। बिहुन बिरद्दह तोल॥
अग्गराज जयचन्द ग्रह। पुच्छि करै तिहि बोल॥
छं॰॥ २९९॥

रावल जी का कहना कि स्त्री संभोग से भला कोई भी संतुष्ट हुआ है।

कवित्त॥ * सोम वंस राजिंद। नाम ससि बंध विचक्षन॥
घर घर प्रति इक रूप। रूप लावन्य सुलच्छिन॥
दस हजार तिय परनि। करेहु अग्गैर महल्लं॥
एकादस हजार। गए संवच्छर चल्लं॥
भय कोडि लाष पचास दुअ। पुच तास बलवँत सरस॥
रावल पर्यंप प्रथिराज सम। ते पन धपिय न काम रस॥
छ०॥ ३००॥

कविचन्द का नवीन सांमतों के नाम कहना और रावल-जी का प्रत्येक से सादर मिलना।

दूहा॥ सामंतनि मेट्यो समर। प्रति प्रति आदर दीन॥
नाम कहे कविचंद नै। छंद अनुक्रम कीन॥ छं॰॥ ३०१॥

* यह कवित्त मो. प्रति में नहीं है।

दूसरे दिन की सन्ध्या होगई और दोनों दल दो दिन के परिश्रम से शान्त होकर रात्रि में विश्राम लेने लगे और तीसरे दिन दो घडी रात्रि रहते से फिर युद्ध होने लगा।

परन्तु यदि तू विदित वर्णन सुना चाहती है तो इसी संबन्ध में एक बात विशेष वक्तव्य है उसे सुन।

इसी तरह जब कि सामंत सेना के सिर पर असंख्य अस्त्र शस्त्रों की वर्षा हो रही थी कविचंद वरदाई ने युद्ध करने की इच्छा की और राजा की अनुमति चाही पर पृथ्वीराज ने कहा कि हे कवि जहां हम राजपूत लोग हथियार बांधे हुए जूझने को खड़े हैं वहां तुम्हारे हथियार उठाने की कोई आवश्यकता नहीं है, हम लोगों को मरने दो और हम लोगों का यश बखान करने के लिये तुम जीते जागते घर जाओ। इस पर कवि ने उत्तर दिया कि यश बखान करने के लिये मेरा पुत्र जल्ह है मैं मल्हन पुत्र कविचंद इस समय दो हाथ दिखाए बिना कदापि न मानूंगा। यह कहकर कविचंद घोड़े को एड़ देकर मैदान में जा पहुँचा। कविचंद के बाग बतलाते ही वह वायु के समान बेगवाला तेज तुरंग इस तरह से तड़प गया जैसे आकाश से तारा टूटता है और मैदान में खड़ा होकर ऐसी आंखें करने लगा जैसे नाट्यशाला में पंद्रह सोलह वर्ष की छोकड़ी छैलों को छकाती हो। पृथ्वीराज का दिया हुआ उच्चश्रवा कैसा बछेड़ा सिर से पैर तक जड़ाऊ साज से सजा हुआ कविचंद का घोड़ा ऐसा जान पड़ता था मानो अभी सूर्य्य के रथ में से खोलकर खड़ा कर दिया हो। उस घोड़े के दोनों अनयारे कान शत्रु के प्राण हरन हारे बाण के फलक, चतुरों के चित्त को चोर स्त्री की आंखो के कोए, प्रफुल्लित कमल पतिंगो को दहन करने वाली दीपशिखा के समान अनयारे प्यारे और मन मोहन वारे थे। उसके पुट्ठ चक्र से गोल और सुडौल थे गरदन का घूघट घूघट सरीखा और खुरों के नाल चंचल चंचला से चमाचम चमचमाते थे और उसकी पूंछ की ओर अच्छे चौर सी छहरा रहा थी। अस्तु कविचंद वरदाई को मैदान में चमकता हुआ देखकर राजा जैचंद ने हुसेन खां, कमाल खां खलीस खां, जलाल खां, फीरोज खां, गुलाब खां, फरीद खां और निवाज खां इन आठ मुसल्मान सरदारों को कविचंद पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। उधर से वे हल्ला करते हुए आए और इधर से कविचंद ने अपनी चंद किरण सी तलवार चलाई। कवि ने दो भीरों (बीरों) को तो मार गिराया पर आगे हाथ उठातेही एक ने घोड़े को बेकाम कर दिया। दूसरे ने उसका तंग काट दिया इसलिये जब घोड़ा बेदम हो कर गिर पड़ा तब कविचंद भी लौट कर राजा पृथ्वीराज के पास आ गया। अपने कवि का ऐसा साहस और पराक्रम देख कर राजा पृथ्वीराज अत्यंत प्रसन्न हुआ। कविचंद को पैदल देख कर नरनाह काका कन्ह ने उसे अपना घोड़ा दे दिया। कविचंद ने उसी समय जै बोलकर घोड़े की बाग पकड़ी और राजा को आशीर्वाद देता हुआ उसकी पीठ पर सवार हुआ।

राजा जैचंद ने जब अपने सैनिकों को ललकारा और उन्होंने कुपित होकर लगातार बाण बर्षा की तो उस समय ऐसा जान पड़ता था मानो मेघों से जल वर्षा हो रही हो अथवा कोई सपच्छ जंतु दल बांध कर बदल की सैन करने जा रहे हों। वे वांकी मूंछों वाले ज्वान जब परस्पर बरछी के वार करते तो उनके काले काले गांजें और उज्वल फल खिल्त मिल्त होने से ऐसे जान पड़ते जैसे राहु और चन्द्रमा डुरुआ खेल रहे हों। वे लोग अपने शत्रुओं पर सूल सांग आदि ऐसे सहजोर वार करते जैसे इन्द्र ने राजा वलि पर वज्र चलाया हो। गुर्ज या गदा के वार से मय टोप खोपड़ी फूटी हुई ऐसी जान पड़ती जैसे बद्दलों में से चन्द्रमा की कलाएं निकल रही हों, जालीदार सनाह में से बहता हुआ रुधिर ऐसा जान पड़ता जैसे वीर माली बीरों की सुकीर्ति का बगीचा सींच रहा हो। इसी तरह से मैं वहां का वीर दृश्य

तुझसे कहां तक कहूं उनका रणकौतुक देखतेही बनता है, मुझमें इतनी शक्ति कहां है कि मैं उसे यावत वर्णन कर सकूं। राजा जैचंद और पृथ्वीराज चौहान दोनों को दल के जो छत्री इस समय रणक्षेत्र मे परस्पर कट कर मरे जाते हैं वैसे फिर न होंगे। वे कट कट कर मुंड पर मुंड और रुंड पर रुंड परते जाते हैं कोई तरातर होकर गिरते जाते है उनके शरीर के सब अवयव छिन्न भिन्न होते जाते हैं और अति मोटा मेदा मज्जा आदि निकल बिथर जाते हैं जिन्हें हम पलचर लोग आनंद से नोंच नोंच खाते हैं पर शरीर में स्वासा रहते हुए वे धर मार से बाज नहीं आते। क्या कहूं वे ऐसे साहसी और पराक्रमी हैं कि देखने में तो वे एक साधारण भोले मनुष्य हैं पर जब उन्हें क्रोध आता है उनमें दसगुना बल आजाता हैं। शत्रु के सम्मुख बार करते हुए उनमें हज़ार का जोश आ जाता है और कबंध कट जाने पर तो वे लाख को भी लख में नहीं लाते। इत्यादि कहां तक कहूं चलती तो है आप देख लेना "हाथ कंगन को आरसी क्या"।

कहा जा चुका है उधर से संखधुनी वीरों के आक्रमण करने पर इधर से भोंहाराय चंदेल मोरचे पर गया परंतु जुड़तेही मारा गया इससे पंग दल का ज़ोर बढ़ गया और पहर रात्रि जाते जाते केहरि कंठेर ने पृथ्वीराज के गले में कमान आन डाली और बड़े जोर से हांक करके संयोगिता से बोला री माता पिता की आज्ञा भंग करने और यज्ञ विध्वंस करने वाली वाला तू आज चोरी से चहुआन के साथ चली जाती थी देख अब तेरे प्यारे का क्या हाल होता है। केहरिकंठेर की बात खतम भी न होने पाई थी कि संयोगिता ने उसकी कमान की डोरी काट दी। डोरी के कटतेही पृथ्वीराज ने जो हुमक कर एक हाथ मारा तो केहर कंठेर कट कर दो होगया। परंतु तब भी पंगदल के सिपाहियों का जमाव अधिक था इस लिये पृथ्वीराज को विशेष हस्तलाघवता से काम लेना पड़ा। राजा को बेढौल फँसा देख कर सारे सामंत लोग भी उसी मोरचे पर आ डटे और एक बड़ी वहां मार काट हुई। चन्द्रदेव की चांदनी रहते तक वहां सहस्त्र में से सात सौ संखधुनी समाप्त हो गए और सौ में सोलह सामन्त शान्त हुए। परन्तु पंगदल विचल गया और राजा पृथ्वीराज बच गया। इस चादँनी रात्रि की लड़ाई में जो सोलह सामंत खेत रहे उनमें मंडली राय, मल्हनराय, जावला मल्हराय, बग्गीराय बघेला, जामराय यादव, सारंगराय गोरी, पहरीराय पड़िहार, साखुल सिंह, भानुसिंह, सिंधुआराय, सदल्लराय गोरी, भोज राज, और भोंहा राय चंदेल इत्यादि थे। चौदह सामंत जब काम आ चुके तब रजपाल राय ने पृथ्वीराज के साम्हने आकर सिर झुकाया और कहा कि हे स्वामी देखिए अब मैं भी आपकी सेवा में सिर समर्पण करता हूं। यह कहकर मियान से तलवार निकालते हुए ज्योंही उसने आगे कदम दिया कि किसी संखधुनी के एकही हाथ मे उसका सिर उड़ गया। सिर के कटते ही उसके कबंध नें यह पराक्रम किया कि इतने बड़े पंग दल में हाय हाय हो उठी, बड़े बड़े राजा रजपूत और खानजादे पठान गरदन फाड़ कर चंपत होने लगे। उधर चन्द्रदेव के शान्त होने में भी कुछ थोड़ी कसर रह गई। यह देख कर जैचंद मारे क्रोध के गदेरी काटने लगा। उसने ऊंचा हाथ उठा कर अपने सैनिकों से कहा रे सिपाहियो ये सौ सामंत तुम्हारे बल के नहीं हैं। यह कह कर उसने काशी के राजा को आज्ञा दी कि एक लाख सैनिकों के साथ वह मोरचे पर जाय। अस्तु जैचंद की ऐसी आज्ञा पाकर काशिराज राजा कंचन राय एक लाख असवार पैदल और बहुत से हाथी लेकर स्वयं सामंत समूह के संमुख आया। पंगदल रूपी समुद्र का जल सोखने के लिये ये सामंत तो साक्षात अगस्त स्वरूप थे। उधर से वे एक लाख धरो पकड़ो करते हुए चढ़ चले और इधर से ये सच्चे स्वामिसेवी सामंत मरने पर उतारू हुए। उधर वे अपने स्वामी की जै चाहते थे इधर ये अपने स्वामी की, निदान

दोनों में वह बिकट मार काट मची कि रक्त की सरिता वह निकली और लोथ पर लोथ पट गई। सहस्त्रों सैनिकों के मुंड कट गए और रुंड पड़े पड़े मछली से तरफराने लगे, भसुंड से सुंड कट जाने पर सैकड़ों हाथी पहाड़ से चिक्कारते फिरने लगे। धन्य सूर सामंतो जिन्हे एक स्वामिसेवा के सिवाय और कुछ भी प्रिय नहीं था हम तुच्छ मनुष्य एक जीभ से उनकी क्या प्रशंसा कर सकें। उनके शौर्य्य और पराक्रम की सराहना करते हुए सूर समूह भी स्तंभित होते थे परन्तु कहते हैं कि एक की दवा दो होते हैं अस्तु सामंत लोग मारते भी जाते थे और हटते भी जाते थे उधर से पंग दल बराबर दबाता जाता था।

अतएव सामंत लोग जब बिलकुल कगार पर आ गए और मोरचे का ढंग बेडौल देख पड़ने लगा तब औरंगशाह के पुत्र अत्ताताई ने त्रिसूल की बांह भरी और अपने सब साथियों में से छट कर बीच पंगदल में पिल पड़ा। उसने दहिने हाथ से तलवार और बांये से त्रिसूल की मार करके पंग दल की व्यूह बिदार दी। उसने हरावल के हाथी और घोड़ों के कलेजे मे त्रिसूल भोंक भोंक कर उन्हे विचला दिया और फिर प्रकोष्ट में पैठकर बाजू ताड़ने लगा। यह देख कर उधर से यशवंतराय कमधुज्ज उसके साम्हने आया पर अत्ताताई ने एक ही हाथ में उसका सिर उतार दिया परन्तु उसका धड़ भी हांक कर जब ऊपर आने लगा तो उसे भी उसने त्रिसूल मेल कर शान्त कर दिया। इस पर काशिराज के सैनिकों के भी पैर उखड़ने लगे तब उधर से आठ हजार तातारी पठान ज्वान लेकर मीर सेना का अफसर गंभीर भीर अत्ताताई के मुकाबिले में आया। तब तक अत्ताताई के तलवार और त्रिसूल दोनों शस्त्र फट चुके थे इसलिये वह भी कटार निकाल कर मरने पर मुस्तैद हुआ। उसने अपने इष्ट देव को स्मरण करते हुए उच्च स्वर से सिंगीनाद करके सारे पंगदल को कंपायमान कर दिया, उतने में भीर गंभीर नें तलवार का एक ऐसा वार किया जिससे अत्ताताई का सिर तन से जूदा हो गया पर धर ने कलेजे में कटार मेल कर मीर गम्भीर को भी संसार से बिदा कर दिया। अत्ताताई का शीश तो योगिनियों ने उछंग में ले लिया और अंग गंगा जल में जा गिरा। यह कौतुक देखकर आकाश में स्थित सुर समूह जै जै कार बोल कर पुष्प वर्षा करने लगे। औरंगशाह का पुत्र अत्ताताई तो चल बसा पर शत्रु दल को इस तरह बेकाम कर गया कि फिर किसी मे मोरचे पर रुकने का हियाव बाकी न रहा।

अत्ताताई के धड को गंगा जी में डालने वाला एक गंधर्व था। अस्तु इधर यह कौतुक करके वह इन्द्र के पास पहुँचा और बोला कि हे देवपति ऐरावत को सजा कर शीघ्र ही सवार हुजिए और सामंत और पंगसेना का युद्ध देखने चलिए। उसने युद्ध का सारा वृतान्त वर्णन करके यह भी कहा कि मैं अत्ताताई के शव को गंगा मे डाल आया हूं। यह सुन कर इन्द्र अत्यन्त प्रसन्न हुआ और कतिपय देवता अप्सरा और किन्नरों को साथ लेकर आकाश मार्ग से वहां आ पहुँचा जहां दोनो दल खड्ग से खेल रहे थे। अत्ताताई के मोरचा रोकने पर सामँत लोग अवकाश पाकर गंगा कगोर पर से हट कर मैदान पकड़ चुके थे और वे इस समय फिर भी बड़े जोर शोर पर थे इसलिये दोनों दलों का बीच बचावा करने के लिये इन्द्र देव ने बीच से सौ हाथ ऊंची एक वज्र की दीवार प्रगट कर दी जिससे दोनों दल यथातथ्य रह गए। अब तक सामंत लोग लड़ते मरते कन्नौज से पचास कोस दूर पहुंच चुके थे।

वीर अत्ताताई का ऐसा अद्वितीय पराक्रम देख कर दोनों दल के योद्धा स्तंभित रह गए। राजा पृथ्वीराज ने कविचंद से पूछा कि क्या तुम इस अतुल साहसी बीर अत्ताताई की उत्पत्ति के विषय में कुछ कह सकते हो। तब कविचंद बोला कि हां अन्नदाता कहता हूं सो सुनिए—दिल्ली राज्यान्तर्गत आसापुरमंडल राज्य का मालिक औरंगी नामक एक

चहुआन वंशी क्षत्री था। वह राजा अलंगपाल के दरबार का प्रधान कर्मचारी था। औरंगी चहुआन स्वयं एक-नारी-व्रती धर्मज्ञ तथा सब भांति से उत्तम प्रकृति का पुरुष था। भगवत कृपा से उसका घर भी अन्न धन धान्यादि सब आवश्यक वस्तु सामग्रियों से परिपूर्ण था, परन्तु सन्तान के नाम से उसको केवल एक कन्या थी। जिस समय वह कन्या जन्मी तो उसकी माता यानी औरंग की प्रसूता स्त्री ने प्रकट किया कि उसको पुत्र जन्मा है। निदान उसके घर या सगे संबंधियों मे सर्वत्र पुत्रोत्सव मनाया गया। कुछ सयानी होने पर वह कन्या पुरुष वस्त्र पहिने हुए दरबार में जाने आने लगी। सब लोग औरंगी चौहान का कुंवर जानकर उसका राजकुमार का सा आदर करते थे परन्तु जब उसकी अवस्था बारह वर्ष की हुई और उसे स्त्री के अंग प्रगट होने लगे तो वह अपने मन मे बड़ी लज्जित हुई और उसकी माता भी बड़े संकट में पड़ गई। एक दिन उस कन्या के मन में कुछ ऐसी आई कि वह दस सखियों को साथ ले कर आधी रात्रि के समय हरिद्वार को चली गई और वहां गहन बन में जाकर तपस्या करने लगी। वह नित्य आधी रात्रि के समय षोड़सोपचार सहित शिव जी की पूजन करती और स्तुति करती कि हे असुरों का संहार करने वाले, गरल को गले में, चंद्रमा को माथे में स्थान देने वाले, जटाओं में गंगा और कटि मे मृगाल, और सब शरीर में सर्पोधारण करने वाले, माया मोहादि विकारों से रहित, पार्वती को बाएं अंग में धारण करने वाले तीसरे नेत्र से कामदेव को भस्म करके ब्रह्मताली लगाने वाले शृंगी विभूति की विशाल को धारण करने वाले अखंड ब्रह्मचारी शिव तेरे स्मरण मात्र से सेवकों के संकट हरण होते हैं। हे माया से रहित जगत के कारण अधम उधारण देवताओं के देव महादेव जब आप बैल पर चढ़ कर चलते हैं और आप के माथे से विभूति झरती है सो भास होता है मानों भानु की किरणें झकझका रही हैं। इसी तरह से नित्त पांच गोदानों युक्त त्रैकालिक पूजन करती और निरंतर व्रत करते हुए उस कन्या को छ महीने हो गए। तब एक दिन आशुतोष शिव जी प्रसन्न होकर उसके साम्हने प्रगट हुए और उससे बोले कि क्या चाहती है। तब कन्या ने आद्योपान्त सब वृतान्त कह प्रार्थना की कि मुझ में पुरुषत्व प्राप्त हो जाय जिसमें मेरे माता पिता की लज्जा रह जाय। तब शिव जी ने कहा मैंने तेरे पिता औरंगीशाह को पुत्र होने का वर भी दिया था जो तुझे भी वरदान दिया पर तू अभी साधना न छोड़ मैं तुझे ध्यान में दर्शन देकर तेरा मनोरथ सिद्ध करूंगा। यह कह कर शिव जी तो अन्तर्ध्यान हो गए और वह कन्या पुनः निश्चल चित्त से आसन लगा कर तपस्या में रत हुई। सच है किसी देवता का स्मरण पूजन क्यो न हो निश्चल चित्त और दृढ़ विश्वास से करना चाहिए तभी सिद्धि प्राप्त होती है यदि चल चित्त हो गए तब कुछ भी सिद्धि नहीं होती पर लोग अपना दोष न देख कर तपस्या को निष्फल या देवता को झूठा कहने लगते हैं। अस्तु जब उसे तीन दिन और भी अत्यन्त व्रत करते हुए व्यतीत हो गए तब शिव जी ने उससे स्वप्न में कहा कि सचेत हो। मैंने तुझे पुरुषत्व दिया अब से तेरा नाम अत्ताताई होगा। तू ऐसा बली पुरुषार्थी और साहसी होगा कि कोई भी तेरे अपार बल का पार न पा सकेगा और जब क्षत्रियों में आन्तिम युद्ध होगा तब तु ऐसा अद्वितीय समर कौशल करेगा कि सब लोग तमाशा देखते हुए रह जांयगे। मनुष्य की तो बात ही क्या है तेरे पराक्रम से देवता और दानव भी तुझसे शसंक रहेंगे। तू जब तक जियेगा संसार मे सुख से रहेगा और अन्त में रणक्षेत्र में प्राण तज कर शिव जी के अंश मे मिल जायगा। यह कह कर वह वीर अत्ताताई को विभूति डमरू माला और त्रिशूल देकर अन्तर्ध्यान हो गए।

इस प्रकार से शिव जी का वरदान पाकर वह भीम के समान बलवान अर्जुन के समान पराक्रमी इन्द्र के समान तेजस्वी और अपने पराक्रम के आ-

तंक से लोकपाल काल और दसों दिग्पालों को कंपायमान करने वाला अत्ताताई प्रसन्नता पूर्वक घर आया और अपने माता पिता से मिलकर उसने सारा वृतान्त कह सुनाया। यह सुन कर उसके माता पिता अत्यन्त प्रसन्न हुए उन्होंने कहा कि तू हमारे वंश मे कुल का तरनतारन करने वाला सुपुत्र उपजा है तूने अपने तपोबल से साक्षात शिव जी का दर्शन पा लिया इससे अधिक भला और क्या हो सकता है। निदान सब सर्वांग विभूति रमाए कंठ में रुद्राक्ष की कंठी पहिने हाथो मे सिंगी और त्रिसूल लिए लाल लाल नेत्र किए जटा फटकारता हुआ वीर अत्ताताई अपने पिता के साथ अनंगपाल के दरबार मे आया तो राजा अनंगपाल ने उसे देखते ही पूरी ताज़ीम दी। यह देख कर और सामंत लोग भी उठ खड़े हुए तब से अब तक उसका वैसाही आदर सत्कार चला आता था। ऐसा सब सामंतों मे श्रेष्ठ अतुलित प्राक्रमी अत्ताताई भी आज चल बसा। कविचंद के मुंह से ऐसी कथा सुन कर पृथ्वीराज के चित्त पर विशेष प्रभाव पड़ा। उसने कहा सच है वीर अत्ताताई का पौरुष देख कर मेरा भी दिल दंग हो गया। धन्य है! मैं उस वीर की हृदय से कृतज्ञता स्वीकार करता हूं। अतानाई का देहान्त होते ही काशिराज की बाजी फिर सहजोर होगई। एक तो अकेले एक सामंत से इस तरह मार खाना ऊपर से राजा जैचंद का बानी चढ़ाना, इस लिये काशिराज ने तीन सौ हाथी कई हजार सवार और पैदल लेकर अब की बार बड़े ताव से आक्रमण किया। उधर गंगा कगोर से दूर हटकर सामंत लोग भी मैदान पकड़ कर जोश में आ गए थे। आगे आगे काशिराज की सेना और उसके पीछे कमधुज्ज राजपूतों की जमात के बीच में श्वेत हाथी पर सवार राजा जैचंद स्वयं चला आता था अस्तु उस काशिराज की सेना से सामंत लोग इस तरह से जुट पड़े जैसे सूर्य्योदय होतेही चकवा चकवी से जा मिलता है। काशिराज की फौज के हाथी आषाढ़ के से बद्दल चले आते थे। उनकी अग्मारियों पर रंग विरंगी वेरखें और सुमेर शिखा की सी श्रृंगें सोने की कलीस सी भास होती थीं। उनके दांत बगपांत से सुशोभित होते और उनके बोलने से मेघों की गड़गड़ाहट की सी ध्वनि होती थी। उस काली काली अँधियारी सी हाथियों की बीड़ मे तलवार की धार पर धार बजाते हुए ये सौ सामंत झिल्ली सी झनकारने लगे। अपनी अपनी बान एवं स्वामिसेवा की आन पर डटे हुए दोनों दल के योद्धा एक दूसरे की तरफ़ सिंह के समान आंखें गुरेर कर हेरते और गठा नठेर नठेर कर दूसरे की चोटी पर हाथ फेरते थे। सामंतों की तलवार के साम्हने से काशिराज के हाथियों का हेला विचल गया इसलिये उधर से सवारों की पसर हुई और उन्होंने सामंत सेना को दबा कर फिर से गंगा की कगार पर लेजाना चाहा, परन्तु पृथ्वीराज इस चाल को परख गया और ज्योंहीं उसने सामंतो की तरफ नजर फिरा कर देखा कि हाहुलीराय हाड़ा हम्मीर और उसका भाई गंभीर सिंह दोनों अपने अपने घोड़ों को एड़ देकर काशिराज का दल बल बिदारने को उद्यत हुए। उन्होने दौड़कर चढ़ी चोट हरावल तोड़ दी और अत्ताताई की तरह प्रकोष्ट में पैठ कर बाजुओं का बल तोड़ने पर उतारू हुए। उनके पीछे और भी बहुत से सामंत सहायता पर थे, भीतर पैठ कर वे मारते और बाहर से ये लोग। इसी तरह मारा मार होते होते चंद्रमा की चांदनी बिल्कुल लोप हो गई बल्कि दो घड़ी अंधेरा भी हो गया तब तो परस्पर की जान पहिचान में गड़बड़ पड़न के कारण अथवा लगातार दो दिन के परिश्रम से अत्यन्त श्रमित होने के कारण दोनों दल किनारा कर गए। अस्तु सामंत लोग भी अपने नित्त नियमानुसार पृथ्वीराज को बीच में करके घन व्यूह बांध कर रह गए और उधर राजा जैचंद ने अपनी सेना के चार भाग करके सामन्तों को चारो ओर से घेर कर तब प्रस्थान दिया। एक तरफ जैचंद का भाई वनवीर राठौर था, एक तरफ मारूफ खां, एक तरफ कन्हराय राठौर, एक तरफ श्वेत धजाधारी जैचंद स्वयं था। इस तरह से सामंत सेना को

चौचक्क घेर कर पंगराज पुनः प्रभात होने की प्रतीक्षा करने लगा।

पंग ने तो चाहे पल भर पलक भी झपका लिये हो पर सामंतों को कब चैन पड़ता था। वे योंही कमर कस हुए इकट्ठे होकर गोष्ठी करने बैठ गए और उन्होने निर्णय किया कि अबतक जो हुआ सो हुआ पर सवेरा होतेही राजा को निकाल देना ही सलाह है। देखो अब तक हम लोगों में से २४ चौबीस सामंत खप चुके पर बाजी बनी हुई है क्या जाने हाथी छूटें घोड़े बिचलें जो राजा जैचंद के हाथ पड़गया तो बड़ी बदनामी हुई परन्तु जब यह बात पृथ्वीराज ने सुनी तो वह मारे गुस्से के लाल पीला होने लगा। वह बोला चलो बैठो बार बार वही बात, तुम सबको छोड़ कर मैं जैचंद के साम्हने से भाग जाऊं? इस समय तो मेरे साथ में तुम सौ सरदार हो यदि अकेला भी होऊं तौ भी दम में दम रहते पीछे को कदम देने वाला नही हूं। तुम लोग पड़े किस प्रपंच में हो मारने वाले से बचाने वाला बड़ा है। जिसकी आन लगती है वह संदूकों के अदर बंद करने से भी नहीं बचता और जिसकी नहीं है वह सिर पर खड्ग बर्षने से भी नहीं मरता। इस पर सामंतों ने कहा तो फिर मरजी आपकी. पर अब आप जान बूझ कर जीती बाजी हारते है। ये पंग सेना का जोर शोर, ये साथियों का कहना सुनना और ये संयोगिता का संयोग! पर धन्य पृथ्वीराज वह तनिक भी चलचित्त न हुआ। तू तूही था तेरा सा और कौन हो॥

सारी रात्रि इसी कहा सुनी में व्यतीत होगई परन्तु राजा पृथ्वीराज ने किसी की जब एक आंख न मानी तो सामंत लोग मरने पर उतारू होकर फिर से कमरे कस कस कर घोड़े पर सवार हुए और सूर्य निकलने के पहिलेही लोहा निकाल कर मैदान में आन अड़े। उधर ज्योंही चौथे पहर की घरियार बजी कि पंग सेना में भी सजा सजी होने लगी। एक घड़ी रात्रि शेष रहते ही अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित होकर स्वामिसेवा में सिर देने के लिये सब सन्नद्ध हो गए। राजा जैचंद ने अपनी सेना के बीच में हाथ उठाकर कहा कि हे सूरवीरो आज मैं तुम्हारे बाहु बल के भरोसे पर प्रतिज्ञा करता हूं कि यदि आज पृथ्वीराज को न पकड़ लिया तो यह तन तज दूंगा। यह कह कर उसने समस्त दल को यथा अवसर मोरचों पर चलने की आज्ञा दी। इधर राजा पृथ्वीराज भी सामंत समूह सहित व्यूह बद्ध हुआ। सबसे आगे यानी हरावल में जैतराय हुआ उसके पीछे काका कन्ह था और उसके पीछे संयोगिता सहित राजा पृथ्वीराज स्वयं रहा। उसके पीछे अपने भाई बेटों सहित अजमेर के किले का किलेदार गोरिया सरदार था।

अभी सूर्य भगवान के दर्शन नहीं हुए थे। परंतु रात्रि की अंधेरी शेष नहीं थी कि उधर से पंग दल इधर से सामंत समूह दोनों परस्पर जुट पड़े। दोनों दल के शूर वीर योद्धा एक दूसरे पर वार करके मरने मारने पर उद्यत थे। परंतु रण कुशल राजा पृथ्वीराज ने कुछ ऐसी चाल की जिससे पंग दल की तेजी आपही कम होगई। तात्पर्य्य यह कि पंग दल उस व्यूह से लोहा लेने योग न रहा जिससे उसने आक्रमण किया था। इसलिये सारा दल वल रुक कर रह गया। यह कौतुक होते होते दो घड़ी दिन चढ़ आया। अस्तु ज्योंही मोरचे की अदला बदली होने के लिये व्यूह विथर जाने का कारण पंग दल में गडबडी पडी कि सामंत समूह फौरन जा जुटा। सामंत लोगों ने जुटते ही तेजी से तलवारों के वे करारे हाथ फटकारे कि पंग दल के छक्के छूट गए। किसी सामंत का जब पंग दल के किसी बख्तरिया सवार के खोपडे पर हाथ पडता तो तलवार झिल्ली सी झनकारती या झाला सी झनझना उठती थी। उधर वह मय टोप के और बख्तर के सिर से पैर तक फिर कर दो हो जाता था। यद्यपि दोनों दलों के योद्धा एकही दीन के थे एकही इष्ट की आराधना करते थे और अंत में एकही में मिलते थे पर परस्पर में दो स्वामी

और उनकी इच्छाएं भिन्न होने के कारण वे इस पंचभौतिक रात को छिन्न भिन्न करते हुए जुदे जुदे देख पड़ते थे। क्या कहें इन दोनों दलों को जुड़ते समय पृथ्वी डगमगा उठी जिससे शेषनाग को कुण्डली कस कर फन फटकारने की नौबत आ गई।

राजा जैचन्द के हाथी पर खवास खाने में जो खवास था वह उसका भाई होता था अर्थात् जैचंद के पिता की खिदमत में एक खवासिन थी उसका जन्म उसी के गर्भ से हुआ था उसका नाम वीरम खवास था। वह ऐसा बली और पराक्रमी था कि तीस मन लोहा बांधता था और नित एक भैंसे का मांस भक्षण करता था। जब जैचंद ने पृथ्वीराज और उसके सामंतों का ऐसा पराक्रम और रणकौशल देखा और जान लिया कि सन्देह नहीं कि ये मुझ पर भी वार कर जांय तब उसने वीरम खवास से कहा रे मूर्ख आज तीन दिन से बराबर हथियार चल रहा है हाथ में आया हुआ शत्रु निकला जाता है पर तेरे जान मानो कुछ होताही नहीं है धिक्कार है तेरी करतूत पर! राजा के ऐसे बचन सुनकर वह ढाल तलबार सम्हालता हुआ तुरन्त हाथी पर से कूद पड़ा और मार काट करते हुए सामंतों के व्यूह में पैठ कर कहने लगा, बताओ तो मुझे वह पृथ्वीराज कहां है मैं देखूं वह कैसा रजपूत है। यह सुनतेही पृथ्वीराज लपक कर आगे उसके आने को ही था कि दोनों हाथों में कटार लिए हुए रनवीरराय परिहार आगया और उसने यह कहते हुए कि पहिले मुझे देख, खवास के सीने में दोनों कटार घुंसा दिए, इसके बदले में उसने भी एक हाथ ऐसा दिया कि रनवीर राय दो हो गए तब तक भीमराय याटब ने आकर वीर वीरम खवास को इस संसार से ही मिट्टी कर दिया।

अष्टमी के सबेरे से लेकर दसमी के सवेरे तक दो दिन दो रात्रि बराबर हथियार चलते हो चुका था। लज्जा के बांधे दोनो दल के योद्धा अब तक अपनी अपनी बान पर डेट हटाए नहीं हटते थे। वास्तव में उनके मन भी उमंग और उत्साह से भरे हुए थे पर आदमी के हाथ तो दो ही होते हैं कहां तक काम करें। सिपाही सरदारों को कौन कहे हाथी घोड़े तक बेदम हो रहे थे। मुद्दा यह है कि जैचंद पृथ्वीराज को पकड़ लेने की आशा से और पृथ्वीराज जीवित दिल्ली देखने की आशा से हाथ धो चुके थे। आज दसमी की सबेरे से लेकर दोपहर होने को आई पर केवल दो मोरचे हथियार चला जिसमें एक सामंत पृथ्वीराज की तरफ का और कुछ सौ पचास सिपाही जैचंद की तरफ के काम आए। दो दिन से बराबर संग्राम के श्रम से पृथ्वीराज का मुख झोपरा पड़ गया था चकचोरे गोरे ललाट पर पसीने की धारें बहती थीं और आलस्य से पल झपके आते थे। सुन्दरी संयोगिता की भी यही अवस्था थी। वह मारे संकोच और लज्जा के कुछ कह तो सकती न थी पर बार बार पृथ्वीराज के मुख की ओर देखती और आंखे नीची करके रह जाती थी मानो मनही मन अपने प्यारे के मस्तक के पसीने को पलकों से पोंछती अथवा उसके श्रम से शान्त हृदय को आंखों के अंचल से अँगोछती थी। इसी तरह पृथ्वीराज भी बार बार संयोगिता के मुख की ओर निहार निहार कर रह जाता था।

दंपति की यह दशा देख कर सामंतों ने अचलेशराय से कहा कि देखो दो दिन खेम कुशल बीते आज लाज का रखैया भगवान ही है। कृपा कर के कविचंद और काका कन्ह को समझा दो कि वे राजा को लेकर चले जांय नहीं तो बुरी होगी। यह सुनकर अचलेशराय ने कवि और काका से कहा कि इस दो दिन के घमासान में उनचास सामंत काम आचुके हैं। अब तक किसी तरह बात बनी हुई है परन्तु अब पद पद पर आपद दिखाई देती है। यदि अब भी रानी ने दिल्ली की राह न ली तो अच्छा न होगा। तब कविचंद राजा पृथ्वीराज के पास जाकर बोला "धन्य महाराज जैसा आपने किया वैसा कोई न करेगा, किसी कवि की क्या ताकत है कि कहे, साक्षात वासुक भी आपके पराक्रम को कथन नहीं कर सकते। आपने

पंगदल को दलन करके अपनी प्रिया को अपना लिया और वीर बाने की लाज रक्खी। अब कृपा करके दिल्ली जाकर आनन्द कीजिए और अपनी सुकीर्ति को सुनकर सुखी होइए। यह कहकर कवि चंद ने राजा के घोंड़े की बाग पकड़ ली और दिल्ली की तरफ को चल पड़ा। उसने पुनः कहा कि चाहुआन और कमधुज्ज वंशरूपी दो बांसो पर बधी हुई पुरातन संस्कार की बरद पर चढ़कर हे नटवर चहुआन तू ने सच्चा करतब कर दिखाया तेरी सुरत साधना के लिये सहस्रों भेरी ढोल और घंटे बज रहे हैं, तूने सुयश और प्रिया को भी पा लिया अब तो सकुशल रास्ते पर उतर चल। कविचंद की ऐसी युक्ति भरी बात सुनकर पृथ्वीराज दिल्ली चलने को सहमत हो गया। वह साज सम्हार होते होते पंगदल सहजोर होगया था अस्तु उसने सामंत समूह को बाएं बाजू से चलाने की इच्छा से बड़े जोर शोर से पसर की। यह देखकर सामंत लोग तो व्यूह बद्ध होकर पगदल से जूट पड़े और राजा पृथ्वीराज गंगा जी में उतर पड़ा उसने संयोगिता सहित स्नान किए और पुनः अस्त्र शस्त्र से सुसज्जित होकर सामंत समूह में आ मिला, जब तक पृथ्वीराज गंगा जी से स्नान करके आया तब तक पहर दिन चढ़ आया और इसी अर्से में पांच सामंत और भी कट मरे।

निज स्वामी राजा पृथ्वीराज को दिल्ली की ओर बाग उठाते देखकर सामंत लोग फूले अंग नहीं समाते थे वे जातीय लज्जा के निमित्त जीवन को तिलांजुली देने के लिये उद्यत असल पानी वाले राजपूत मूछों पर हाथ फेरते हुए परस्पर बोले हां! हमारा जीवन अब सफल हुआ। सुन्दरी संयोगिता सहित हमारा स्वामी दिल्ली राज्य सिंहासन पर सुशोभित होगा और उसके लिये हम लोग यहां तिल तिल होकर कट मरेंगे। निदान उधर पृथ्वीराज ने घोंड़े की बाग उठाई इधर सामंतों ने पंग दल का मोरचा रोकने के लिये हाथ उठाए। जब जैचंद ने देखा कि पृथ्वीराज तो संयोगिता को लेकर जाता है तब उसने अपने सिपाहियों से कहा पकडो जाने न पावे, देखो यदि पृथ्वीराज निकल गया तो तुम्हारी बडी बदनामी होगी। जैचंद के ऐसे बचन सुनतेही उधर से उसकी सेना के सिपाहियो का पसर करना हुआ और उधर से सामंतों ने उन्हें आडे हाथ लिया। उस समय बडा आनन्द आया। अपनी प्रिया को लिये दोनों दलो को चीरता हुआ पृथ्वीराज तो इस तरह से भागा जैसे बराही के खेत में से बराह भागता है और पंगदल के सिपाही ऐसे दौडे जैसे पारधी उसके पीछे लगें। सुन्दरी संयोगिता के स्नेह में सना हुआ संभरेश तो सटका परन्तु जातीय लज्जा को रज्जू एवं जंजीर में जकडे हुए दिलों के सच्चे राजपूत बच्चे सामंत अटल हो कर डट गए। उनके सनाहों पर पंग सेना के मुसल्मान सिपाहियो की तलवारों की टूकें उडने लगीं। उस समय ऐसा आभास होता था मानो आकाश से तारे टूट रहे हों। उस समय सूर सिपाहियो के सीने दूने हो रहे थे और कपूत कायरों के मुंह दिवाकर के प्रकाश में कुमोदिनी से कुम्हला रहे थे। कहीं कहीं सनाह कटकर जो छोटे छोटे छेद हो जाते सो ऐसे जान पड़ते मानों जाल फाड़कर लाल लाल मछली छछल रहीं हों। इधर से पंग सेना के मोरचे का नेता मारूफ खां नामक मुसल्मान था और इधर से अगुमा वीरसिंह राय सोलंकी था अस्तु ये दोनों कट मरे पर राजा पृथ्वीराज पंग दल के प्रकोट में से इस तरह निकल गया जैसे लंका को जाते हनुमान जी छाया राचसी की पीठ फोड़ कर निकल गए थे। धन्य रे सूर सामंतों जिनके बाहु बल जदल जल के समान पंगदल तत्ते तवे के की सी बूदे बिलाता गया और पृथ्वीराज पर फुई भी न पड़ने पाई! पंग दल के प्रकोट को तोड़ कर पृथ्वीराज मार्ग पर तो आया पर योंही दिल्ली पहुंच जाना क्या दिलग्गी था अब्बल तो जगह जगह मोरचों पर चौकी लगी हुई थी दूसरे पीछे से भी बराबर सुरगधार सी ठिली चली आती थी अस्तु इस तरह मौका बे मौल देखकर कुछ

सामंतों के सहित पञ्चून राय का भाई बलभद्र राय तो मोरचे पर डट रहा और शेष लोग राजा के साथ हो लिए। यह कौतुक देखकर जैचंद ने अपनी फ़ौज के दो मुसल्मान सरदारों को आज्ञा दी कि वे पांच हजार सवार लेकर पसर जाएं और जिस तरह हो सके पृथ्वीराज को जीता पकड़ लावें, बात यह थी कि दोनों मुसल्मान सरदार मल्लयुद्ध यानी पहलवानी में बड़े निपुण थे इसके सिवाय पटा बनेठी डंडे या लठ की लड़ाई में भी वे अपना सानी न रखते थे। वे सर से पैर तक काली पोशाक पहने हुए थे और जिन हाथियों पर सवार थे वे भी दोनों काले समान से सजे हुए थे। वे लोग अल्लाः हो अकबर कहते हुए ज्योंही मैदान में आए कि बलभद्रराय घोड़ा बढ़ाकर उनके सामने हुआ और हर हर कह कर घोड़े को एड़ देकर काल की सी डाढ़ कटारी लिए हुए मीर के हाथी के हौदे पर बिजली की तरह चमक गया। उसने दाएं हाथ से उसके बांए पंजर में कटार पेल दिया और बाएं हाथ से उसकी दाढ़ी पकर हौदे पर से खींचकर नीचे गिरा लिया और जब तक वह अपने को सम्हाले कि उसका सर भी तन से जुदा कर दिया। इतने पर उसके साथियों ने तो बलभद्र को घेर लिया और उसका भाई आगे बढ़ चला। यह देखकर पृथ्वीराज को प्रणाम करके हरसिंह राय उसके पास आया। अभी वह अपने भाई का तमाशा देख चुका था इसलिये फौरन हाथी पर से उतर कर घोड़े पर सवार हुआ इस पर हरसिंह राय पैदल होकर कहर करने लगा। तब तो मीरमल्ल भी पैदल होकर चला। उसके मेल में आतेही हरसिंह ने उस पर तलवार चलाई और उसने हरसिंह राय पर। दोनों के हाथ एक साथ भर पूर बैठे परन्तु वे गिरे नहीं तलवारें फेंक कर दोनों एक दूसरे से भिड़ पड़े और मल्ल युद्ध करते करते दोनों का एक साथ दम टूटा। हरसिंह राय का पराक्रम देखकर देवताओं ने भी उसकी वाहवाह की। कविचन्द कहता है कि हरसिंह के मोरचा बांधने पर पृथ्वीराज चार कोस जमीन जीत गया।

उक्त दोनों मीरबन्दों की यह दशा देखकर राजा जैचन्द ने अपने भाई वीरमराय को आज्ञा दी यद्यपि वह भापुत्र था परन्तु जैचन्द उसे सगे भाई के समान मानता था। वीरम राय भी जैसा गुणवान विद्वान बुद्धिमान और बीर था वैसाही जैचन्द का पूरा शुभचिन्तक भी था। जैचन्द की आज्ञानुसार लाल निशानवाला वह वीरमराय कई हज़ार सिपाही लिए हुए पृथ्वीराज की तरफ दौड़ पड़ा और जब शत्रु समूह रूपी भ्रमर पुनः चाहुआन कुल कमल पर आच्छादित होते देख पड़ने लगे तब कनकराय रघुवंसी ने हथयार सम्हाले। उसने पृथ्वीराज को झुक कर प्रणाम किया और कहा हे स्वामी अब मैं आप से सदा के लिये विदा होता हूं यदि कुछ अपराध हुआ हो तो क्षमा कीजिए अब शीघ्रही यह शीश शिव जी की रुंडमाला में पोहा जायगा और जीभ आदि जोत में जा मिलेगी। यह कह कर वह हृदय में अपने इष्ट देव को धारण कर मुख से वीर मन्त्र उच्चारण कर काल कैसी जीभ कायरों का हृदय कँपाने वाला दुधारा लपलपाता हुआ खड्ग ले कन्नौज राज की फौज पर लपक पड़ा। उसकी अवाई तवाई देखकर सेई जोर से चिल्लाने लगी योगिनी गला फाड़कर गाने लगी और भूत बैताल नाचने लगे। उस बीर कनकराय के एक एक हाथ में सैकड़ों ज्यान दो दो होते देख पड़ने लगे। यद्यपि वह अकेला था परन्तु पंगसेना को जिधर देखो तिधर अनेकों कनकराय देख पड़ते थे। वह बड़गुज्जर बीर इसी तरह अखाड़े करता हुआ वीरम के सम्मुख जिस समय आया उसने उसके खोपड़े पर एक हाथ मारा। खोपड़े पर घाव खाते ही कनक राय ने घायल बाघ की तरह बमक कर उसके दोनों बाहु काट डाले। बाहु कट जाने पर वीरमराय बड़ गुज्जर की तरफ काल की तरह मुंह बाकर दौड़ा परन्तु उसने बाएं हाथ से उसकी चोटी पकड़ कर सिर काट लिया। वीरम राय की यह दशा होतेही पंगसेना के सैकड़ों सिपाही उस पर टूट पड़े और उन्होंने उसे धज्जी धज्जी कर डाला। कनकराय

के हाथों वीरम राय के साथियों में कहीं आधे से खेत रहे। कनकराय के युद्ध करते समय में पृथ्वीराज छः कोस निकल गया।

कनकराय बड़ गुज्जर के गिरतेही पंगदल फिर पृथ्वीराज के सिर पर आगया। तब पृथ्वीराज ने निड्डुरराय की तरफ देखा। स्वामी का इशारा पातेही वीर निड्डुरराय फौरन पल्टा कर शत्रु सेना के सम्मुख खड़ा होगया। उस तरफ के मोरचे का मालिक निड्डुर राय का छोटा भाई बलिभद्र था और उसके साथ में चार कमधुज्ज सरदार और भी थे जिन्हें बीजापुर का किला फतह करने पर जैचन्द ने प्रत्येक को बारह बारह हज़ार की जागीर का पट्टा दे रक्खा था। वे चारों सरदार सब सेना के चार बिभाग करके चार मोरचे बांध कर पीछे पीछे आ रहे थे पर कुछ अश्वारोहियों को लिए हुए बलिभद्रराय आगे निकल गया। अनुज को आते देख के निड्डुरराय मतवाले हाथी की तरह अग्निकण के समान लाल आंखे किए हुए पैतरा बदल कर खड़ा होगया। उस सहज तेजस्वी निड्डुर राय के माथे पर का टोप बाल सूर्य्य सा प्रदीप्त होरहा था और सर्वाङ्ग सुसज्जित उज्वल सनाह बिजली सी चमचमा रही थी। वह हाथ में धनुष बाण लिए कन्धे पर तूनीर कसे हुए इस तरह से खड़ा था जैसे भारथ में पारथ या द्रोणाचार्य्य पग रोप रहे हों और वास्तव में उसने अपने अनायेर बाणों की वर्षा करके बड़े आवेग और बेग से बढ़ी आती हुई पंग सेना को स्वर्ग से पतित सुरसरि धारा को शिव की तरह से रोक लिया। निड्डुर राय की बानावली से भिदकर महावतों के हज़ार हज़ार अंकुश गड़ने पर भी पंग सेना के हाथी आगे पैर न देते थे वरन् चिक्कार कर लंगर डालते हुए पीछे को भागते थे। असवार आहत होकर लड़ते और घोड़ों पर से गिरते जाते थे और पैदल बिचारे तो इन दोनों की चल बिचल में आपही कुचले जाते थे। निड्डुर राय की बाण वर्षा से रुधिर की धारा बह निकली। परन्तु बढ़ते बढ़ते जब पंग सेना के सिपाहियों ने उनकी कमान काट डाली तो वह बिजली की तरह चमचमाती हुई तलवार से काम लेने लगा। निड्डुर राय का बिलक्षण रणकौशल देखकर देवता, गन्धर्व और क्षेत्रपाल भी उसकी प्रशंसा करते थे। निड्डुरराय की मार के मारे अपनी सेना को इस तरह बेहाल होते देखकर बलिभद्रराय स्वयं घोड़ा बढ़ाकर भाई के साम्हने आगया। दोनों भाइयों की नज़रें चार होतेही दोनों का हृदय समुद्र उमड़ आया परन्तु स्वामिसेवा की मर्याद से बाहर नहीं। दोनों अपने अपने घोड़े छोड़ जुट पड़े। बड़ी देर तक तो दोनों एक दूसरे पर तलवार कटार के वार करते रहे पर जब दोनों रक्त में लत्थ पत्थ होगए और दोनों के हाथ में हथयार भी न रहे तो वे दोनों क्षुभित मृगराज की भांति एक दूसरे से ऐसे भिड़ पड़े जैसे महाभारत में बिन्दु अनुबिन्दु भिड़ रहे हों। निड्डुर राय का देहान्त होतेही उसके शरीर से अतर की सी सुगन्ध फैल गई जिससे ४१ कोस तक भूमर भूम में पड़कर भिन्नाते फिरने लगे।

कमधुज्ज कुल कमल निड्डुर राय के कलेवर को रणभूमि में पड़ा देखकर जैचन्द ने उसे अपनी कमर का फेंटा छोड़कर ढांक दिया और हाय सांस लेकर आपही आप बोला। हाय क्षत्री कुल की लीक, मेरे समुद्र सरीखे दल से चाहुआन को पार उतारने वाली नैया, भैय्या निड्डुर राय आज तू भी बेभूल होकर सोरहा। तदनन्तर कुछ रुककर जैचन्द फिर झल्ला कर बोला, भला लेना है भाइयो जाने न पावे। जैचन्द का यह कहना क्या था मानो जलती हुई आग को उसकाना था। वहां तो उसके सवार आपही पृथ्वीराज के खुरों पर छुरी देते सर पर लार डारते और चमाचम तलवारें झारते हुए छुआ छाई सी करते बढ़ते हुए चले जाते थे। निड्डुरराय के मोरचा रोकने पर पृथ्वीराज आठ कोस निकल गया था पर जब फिर भी शत्रुओं ने आ लिया तब बिरसिंहराय राठौर बदल खड़ा हुआ, उसने भी अपना पराक्रम किया खूब

तलवार चलाई खूब मार काट की खूब राजपूतपन रक्खा, पर कुछ देर पश्चात उसने भी अपने अन्य भाइयों का साथ दिया।

आया है सो जायगा। विरीसिंह राय के मरतेही डंके पर चोट देते और रंग बिरंगी झंडियां झुलाते हुए पंगदल के सवार फिर सिर पर चीरह से मड़रा आए। यह देखकर नरनाह काका कन्ह ने अपने पट्टनपुर का मैदान मारनेवाले पट्टन नामक घोड़े का ऐड़ा सम्हाला। परन्तु जब तक कन्ह अपने आने बाने से दुरुस्त होकर मैदान में आवे आवे तबतक पंग दल आही गया और ऐसा जान पड़ा कि यदि यह अनी न टली तो बेवस होकर घिर जाना पड़ेगा। तब तो कन्ह का सेवक छग्गनराय मैदान पकड़ गया और लगा पंग सेना के सवारों को ककड़ी सा काटने। परन्तु एक की दवा दो होते हैं फिर वहां तो उसके शरीर पर सौ सौ हाथ इकट्ठे पड़ते थे। पर तब भी उसने वह कौतुक कर देखाया जो अबतक सुनने में भी न आया था। घोड़ा गिर जाने पर छग्गनराय पैदल युद्ध करने लगा पर जब उसके पैर भी कट गए तो वह बिच्छू चल कर लोगों के पैर पकड़ पकड़ कर गिराने लगा पर जब हाथ भी कट गए और सिर भी धड़ से अलग होगया तब उसका सर फुटबाल की तरह चोटें करते करते अन्त में बड़ी देर के बाद शान्त हुआ। इस छग्गन राय छत्री ने कौरवों के चक्रव्यूह में घिरे हुए अभिमन्यु का सा पराक्रम किया। धन्य है, यह तो गया गुजरा पर सुनो क्षत्रियो अभी उसकी सुकीर्ति नहीं गई। छग्गनराय के मरते मारते पृथ्वीराज ढाई कोस आगे निकल गया। निशान छग्गन राय के छै पांच होतेही जब हलचल मचाता हुआ पंगदल फिर से सिर पर आगया तब भूखे सिंह की भांति क्रोध से भरा हुआ खरे खेतवारे पट्टन पर सवार दहिने हाथ में काल नागिनी एवं काल की कन्या अथवा प्रलय काल की अग्निज्वाला के समान जाज्वल्य असल लोहे की बनी हुई लम्बी पूरी नराजी, और बांए हाथ में नवरंग गुरज लिए हुए नरनाह काका कन्ह मैदान में आगया। पग सेना से आमना सामना होतेही ज्यों कन्ह ने पट्टन को एड़ लगाई कि वह जोर से ठीं देकर हीं हीं करता हुआ बज्र सा उड गया। वाह रे पट्टन यदि कन्ह किसी करि के कुंभ को कृपाण से काटता तो पट्टन टापों से उसके दांत तोड देता। एक के सिर पर कन्ह की गुर्ज पडती तो दूसरे पर पट्टन की दुलत्ती झडती थी तात्पर्य यह है कि ये घोडा सवार दोनों मार करते थे और क्यों न करें। नरनाह कन्ह भी सूर्य्य भगवान के अंश से था और यह पट्टन इन्द्र-श्रवा का अवतार था।

क्रोधातुर कन्ह की तलवार जहां कहीं जरा भी छू जाती उसी अंग को इस तरह से काटकर डाल देती जैसे गरुड़ उरग को गड़ेर गड़ेर कर गिरा रहा हो। बांह कट जाने पर जो बाजू की सनाह दूर जा छटकती वह ऐसी जान पड़ती जैसे उसी सर्प की किचुली निकल पड़ी हो। यह काल की सी जीभ लपलपाती हुई नराजी कभी किसी को चीर कर दो कर देती कभी किसी को खंड खंड करके काट गिराती और कभी रुंड पर से मुंड इस तरह से उतार लेती जैसे कुम्हार मिट्टी उतार रहा हो। वह सर्पिणी की भांति लपक कर कभी किसी के भंडार में पैठ कर उसके मेदा मज्जा और कलेजे सहित आतें निकाल लाती और किसी की चोटी पर चोट करके वहां से लोहू की सेंट लटका देती थी। कभी किसी बदल सरीखे दीर्घ काय मदान्ध मेगल के कुंभ पर पड़कर वह उज्जल नराजी विज्जुमाला सी विलीन हो जाती, और गसाव में पड़कर कभी लपट कर तीन तीन हो जाती पर फिर उकास पाकर फनी की तरह फनफनाती हुई लोट फलट करके काठ कपट करने लगती। इस तरह से काका कन्ह एक हाथ से तो नराजी से फतह करता था और दूसरे हाथ से तर्ज तर्ज कर गुरज फटकार रहा था। जिस किसी पर बांके वीर कन्ह की गुरज का गट्टा पड़ जाता वह क्या सवार क्या प्यादा चूर चूर हो कर

चूर में मिल जाता था। अगर खोपड़ी पर हाथ पड़ता तो मय टोप के तालू टूट फूट जाता और भेजी गरी का सा भेजा अलग जा छटकती। कनपटी पर हाथ पड़ता तो गटा निकल पड़ता और यदि छाती पर हाथ पड़ा तो कलेजा मुंह से निकल पड़ता था।

नरनाह काका कन्ह के विषम पराक्रम एवं उसकी बिकट मार काट के कारण पंगदल आगे तो एक कदम भी न बढ़ सका पर सब का सब उसी पर सिमट पड़ा। उस समय कन्ह नें भी हाथ देने में क़सर न की। उससे काटे जाकर सहस्रों घायल सिपाही हाय हाय करके प्राण देने लगे लोथ पर लोथ अट गई और मुंडों के ढेर लग गए। इसी तरह से जब एक पहर के करीब हो गया और कन्ह का क्रोध शान्त न हुआ तब जैचंद की आज्ञा पाकर उधर से अरिदास नामक एक सरदार कन्ह के मुक़ाबले पर आया। उसने जुड़ते ही कन्ह की गरदन पर एक हाथ दिया और कन्ह ने उस पर जनेउ उतार वार किया। बसइधर तो कन्ह का सिर धड़ से अलग हुआ और उधर वह दो होकर सदा के लिये शान्त होगया। सिर तो कट गया पर कन्ह का कबंध खड़ा हुआ और चौमुखा मार करने लगा इसी बीच मे उसकी तलवार टूट गई तब वह साक्षात काल की सी डाढ़ असल अनियारी यानी उज्वल यमदाढ़ कटार काढ़ कर उसी से काम लेने लगा। शत्रु सेना के प्राणों की प्यासी रक्त रक्त पीने वाली काली काली कलाएं काल की सी जीभ वह बिकट कटार काका कन्ह के कर में इस प्रकार से सुशोभित होती थी जैसे उसके हस्ति सुंडाहल भुज दंड मे से लोह का अंकुर जम कढ़ा हो। जिस किसी पर उस कटार का एक बार हो जाता था, वह इस दुनियां से सदा के लिये पार हो जाता था। इस पार लगती तो उस पार निकलती, उदर पर बैठती तो पीठ के पार हो जाती और जो भेंडार में चुभती तो आतें निकाल कर डाल देती थी। क्षुधित सिंह की सी भिड़ा वह कटारी कभी कभी हाथी के कंठ पर भी जा लगती और वहां से रक्त की धार बहा लाती थी। कन्ह की कटारी ने भी कहर कर दिया उसके द्वारा उसने पांच हजार जवान मारे पर हाथ पर हाथ पड़ने से जब वह कटार भी बेकाम होकर टूक टूक होकर टूट कर गिर गई तब वह हत्था बाँही करने पर उद्यत हुआ। वाह रे नरनाह क्यों न हो। उस समय वह बांका काका कन्ह घरी भर के लिये साक्षात गोकुल के कन्हैया का अवतार बन गया। वह पंग दल के सिपाहियों को पकड़ पकड़ कर उन्हें इस तरह से पछारने लगा जैसे कृष्णभगवान ने कंस की मखशाला को चूर चूर कर दिया था। वह कभी किसी के पैर पकड कर उसे धोबी के वस्त्र सा पछार देता, कभी दोनों हाथों से दो की मुगरियां पकड कर उनके मुंड परस्पर भिड़ा कर नरियर से तोड देता, कभी किसी की मौर पर हाथ दे कर गरदन गरोड देता था परन्तु कभी तो वह मतवारे हाथी की तरह शत्रु का एक पैर पैर से चांपता और दूसरे को हाथ से पकड कर उसे दतौन सा चीर कर फेंक देता था। इसी तरह एक पहर पर्य्यंत विषम पराक्रम करते हुए नरनाह काका कन्ह भी टूक टूक होकर कट मरा उसका कबंध शान्त होते होते पृथ्वीराज दस कोस जमीन जीत गया। कन्ह का कलेवर पतित होते देख आकाश मार्ग मे स्थित अप्सराएं उसके हंसा को आलिङ्गन करने के लिये इस तरह से दौडीं जैसे आजन्म दरिद्री द्रव्य लूटने को टूट पड़े पर उस सच्चे सूर पुरुष ने परमहंस की तरह किसी की ओर आंख उठाकर भी न देखा और साक्षात सूर्य्य भगवान की ज्योति में जा मिला। इसी तरह उसका अंध पहन भी इस पंचतत्वमय शरीर के धज्जी धज्जी उड़ जाने पर दिव्य देह से उच्चश्रेणी के साथ सूर्य्य के रथ में जा जुता।

कवित्त।

जिम जिम तन जरजरधी,
बिहसि सर धायो तिम तिम।
जिम जिम अंत हसंत,

लष्य दल तिन गनि तिम तिम ॥
जिम जिम करिवर परत,
उठत जिम सीस सहित वर।
जिम जिम रुधिर झरंत,
सघन धन परखन सद्धर ॥
जिम जिम सु खग्ग बज्यौ उरह,
तिम तिम सुर नर मुनि मन्यो।
जिम जिम सुचाव धरनी परयो,
तिम तिम शंकर सिर धुन्यो ॥

इस तरह से भीष्म के समान भीम भट. एक लाख कई सहस्र और कई सौ शत्रुओं को काटकर पाट देने वाला पटूटन पति नरनाह काकाकन्ह चहुआन भी जब कण कण होकर काल कवलित हो चुका तब अल्हन कुमार परिहार ने कृपाण कर में लेकर पृथ्वीराज को सिर झुकाया। उसने कहा हे सूर शिरोमणि स्वामी अब मैं भी आप से सदा के लिये बिदा होता हूं चलते मिलते यह सौगाद समर्पण करता हूं सो लीजिये, यह कहकर उसने अपने हाथों से अपना माथा काटकर पृथ्वीराज के हाथ पर रख दिया और आप दाहिने हाथ में तलवार और बाएं हाथ में कटार फटकारता हुआ आषाढ़ के बदरों की भांति दबी चली आती हुई पंग सेना में पैठकर पछवाव वायु का काम करने लगा। जिस समय अल्हनकुमार ने अपनी इष्ट देवी महामाया का स्मरण करते हुए अपने धड़ से सिर जुदा किया उस समय एक महान भयानक अप्रांज और हुंकार शब्द हुआ और महामाया स्वयं उसके कबंध पर आ बैठी। बस फिर क्या था जिस तरफ को अल्हन कुमार का कबंध सीधा हो जाता उधर एक दम फाड़ा हो जाता था। अल्हनकुमार का यह अकथनीय कौतुक एवं उसके कबंध का विषम पराक्रम देखकर मनुष्य की कौन कहे देवता भी चकित चित हो रहे थे। जब इसी तरह खड्ग से खेलते खेलते अल्हनकुमार को देर हो गई और पंग सेना तीन तेरह होकर पीठ दिखाने को हुई तब उधर से वीरयानाथ नामक एक दक्षिणी सरदार हाथी पर चढ़ा हुआ अल्हन के सामने आया। परन्तु जुड़ते ही अल्हनकुमार ने एक हाथ ऐसा दिया जिससे हाथी का एक दांत उड़ गया। इसपर हाथी तो भागा परन्तु वीरयानाथ उसपर से नीचे कूद कर कबंध का पैर पकड़ने को झपटा पर इसके पहिलेही कबंध ने उसका गला घोंटकर उसे मार डाला। यह देख कर उसका छोटा भाई आगे बढ़ा। इस समय अल्हन की तलवार कट चुकी थी इस लिये उसने हाथी के भथार पर कटार की वार की जिससे हाथी तो चिक्कार कर भागा पर उस बांके वीर ने अल्हन पर एक हाथ आही जमाया. इसने भी उसे एक हाथ मारा और वे दोनों सदा के लिये शान्त हुए। इस अल्हनकुमार ने पंग दल के बहुत से चुने चुने मुखिया सरदार और कई सौ सिपाही मारे।

अद्वितीय पराक्रमी अल्हनकुमार के भी तिल तिल होकर कट गिरने पर पंग दल पुन सबल हो उठा और पकड़ो पकड़ो कहते हुए पृथ्वीराज के पास झुमकने लगा तब पृथ्वीराज ने अचलेस की तरफ देखकर कहा धन्य है सूरवीरों के यही लक्षण हैं कि सदा अपने स्वामी के सांकर में सहाय हों, पंचतत्व के पुतले हम तुम और ये आश्चर्य जनक प्रपंच सब चले जांयगे पर यह सुकीर्ति संसार में सदा स्थिर रहेगी कि सौ सामंतों ने असंख पंगदल का मुंह तोड़ कर संयोगिता सहित पृथ्वीराज को बेदाग बचा लिया। यह सुनते ही अचलेसराय ने पृथ्वीराज को सिर नवाकर घोड़े को एड़ दी। मगरेज लगतेही वह तेजताजी उस लोह की लहर मय समरसरिता मे त्रिनेत्र के नेत्र का सा तेज तेरता फिरने लगा। अचलेशराय ने शत्रु समूह पर पसर करते समय पृथ्वीराज से कहा कि महाराज मैं तो चला परन्तु इस पंगदल को बिचला कर छोड़ूंगा। मैं पेज करके कहता हूं कि इस तन पिंजर में प्राण पखेरु के रहते आप पर आंच नहीं आसकती। यह कह कर वह दुर्गा का ध्यान और स्मरण करता तथा संभरीनाथ की दुहाई देता हुआ अड़सट के हाथ झाड़ने लगा। उस समय उस भीमकाय अच-

लेसराय के मुख मंडल पर सूर्य्य का सा तेज विराज रहा था। उसकी करारी मार के कारण पंग सेना के सिपाहियों के सर नट के से बटा उछलते देख पड़ते थे। चौसठ योगिनियों सहित महाकाली स्वयं किलकार शब्द करके ताली बजाती हुई उसके साथ साथ चलती थी। और अंतरिक्ष में स्थित सुर समूह एवं अप्सरा यक्ष किन्नर और गंधर्वादि उसकी स्तुति करके पुष्प वर्षा करते थे। अतएव बड़े पराक्रम के साथ पंगदल के पांच सौ सिपाहियों को कत्ल कर के बाहर राय का पुत्र अचलेस आप भी अत्यन्त घायल होकर धराशायी हुआ।

अचलेसराय के चल बसने पर प्रलयकाल के जल के समान बेगवान और प्रबल पंगदल चलाचल पृथ्वीराज के सिर पर आ पहुंचा तब पृथ्वीराज ने बिम्फ राज सौलंकी की ओर रुख करके कहा। हे बीर चालुक्क इस खल दल का संहार कर। इसके उत्तर में उसने कहा जो आज्ञा महाराज, मैं इन लोगों का संहार करता हूं आप प्रसन्नता पूर्वक सकुशल रास्ता पार करते जाइए यह कह कर बीर बिंभराज चालुक्क भगवती अम्बा देवी का स्मरण करता हुआ शत्रु सेना के सम्मुख होगया। आगे आगे खड्गहस्त बिंभराज चलता था और उसके पीछे पीछे भरो भूत पिशाच ताल बजाते हुए बैताल और खून भरने के खप्पर लिए हुए योगिनी आदि चलते थे। पंगदल के बीच में पहुंचने पर बिंभराज के तलवार के हाथ देखकर सुर समूह प्रसन्न हो पुष्प वर्षा करते अप्सराएं उत्सुक हो उसे आलिंगन करने की इच्छा करतीं और गन्धर्व गला फाड़ फाड़ कर उसका गुण गान करते थे। उधर मतवारे हाथी के दांतों पर बिंभराज के घोड़े की टापें खड़खड़ाती थीं। इधर उस करके काटे गए उसके शत्रुओं के मुंड परस्पर झड़ाझड़ लड़ते थे। जो कोई उस राजपूत की तलवार के साम्हने आया वह उसके एक हाथ मे दो हो गया। एक घरी भर मे लोहू के कुण्ड भर गए और लोथ पर लोथ पटकर आंड लग गए तात्पर्य यह है कि पंगदल के सिपाहियों के पैर पीछे को पड़ने लगे। तब जैचन्द के ललकारने पर उधर से कृष्णराय तोमर, रुद्रसिंह कठैर, जयसिंह देव यादव, भीमदेव चालुक्क, देवीदास सांखुला और बीरभद्र बघेला ये छः सरदार आगे हुए, पर बीर बिंभा बढ़ता हुआ जैचन्द के हाथी के पास ही आधमका और उसने जुड़ते ही एक सूर्य्यबंशी सरदार चंदसेन, नैषदबंशी नरसिंहराय को मार गिराया। यह देख कर उक्त छहों सरदारों ने उसे चारों तरफ से घेर लिया। कृष्णराय तोमर ने बिंभ राज का घोड़ा मार दिया और उसके बदले मे उस ने कृष्णराय का सिर उतार दिया, पर जब तक उधर से निश्चित होकर दूसरी तरफ रुख करे कि रुद्रसिंह ने उसका सिर तन से जुदा कर दिया। सिर कट जाने पर दो घड़ी पर्य्यंत उसके कबंध ने बिषम पराक्रम किया। अंत में उस बीर बिंभ का कबंध भी कट गिरा और पंगदल पुनः प्रबल हो कर पृथ्वी राज के पीछे पड़ा। अस्तु जब पंगदल के एक हजार सिपाहियों को मार कर बांका बीर बिंभराज भी इस असार संसार से चल बसा तब उधर से तीन हजार सवारों का स्वामी सारंगराय जाट अग्रसर हुआ। उसने स्वयं जैचंद के सम्मुख सिर नवाकर प्रार्थना की कि यदि आज्ञा पाऊं तो मैं पृथ्वीराज को पकड़ लाऊं। यह सुनकर पंगराज अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसने जट्ट की प्रशंसा करते हुए हाथ उठा कर कहा वाह बांके बीर क्यों न हो। मालिक का इतना मुंह पाते ही अपने साथियों सहित सारंग जट्ट उधर से तीर सा छूटा। उसे इस तरह ताव में भरा हुआ देख कर इधर से आबूपति राज्यमंत्री जैतराव प्रमार उस पर बाज सा टूटा। वह अपने इष्ट देव बजरंगबली का स्मरण करते हुए जाट सेना के साम्हने आ गया। उसके साथ में उसीका एक सगा सम्बन्धी जयसिंहराय भी था अस्तु यह जतराव से आगे जाकर सारंगजाट से जा जुड़ा। उसने यद्यपि जाट सेना के तीन सौ सवार काट गिराए परन्तु सारंगराय ने उसे एक ही हाथ में मार गिराया। इस तरह से जैसिंह को मार कर सारंगराय ने जैतराव के सिर पर भी

एक हाथ दिया जिससे उसकी टोप कटकर खोपड़ी भी फट गई तब तक सुमनखां ने बाण छोड़ा जो कि जैतराव की कनपटी पर लगा और उससे जैतराव की फटी हुई खोपड़ी जुड़ गई। इतने में जैतराव ने सम्हल कर जङ्ग पर एक ऐसा दुहत्था वार किया जिससे उसका सिर भुट्टा सा कटकर दूर जा छटका। पर वाह रे वीर जङ्ग। वह चटपट कटारी काढ़ कर फिर भी झपटा और बेसुध होकर धराशायी होने के पहिले उसने जैतराव के वक्षस्थल पर एक हाथ ऐसा मारा जिससे जैतराव भी अशक्य होकर गिर पड़ा। राजमंत्री जैतराव को भी इस तरह बेकाम होते देखकर लक्खनराय बघेला मरने मारने पर उतारू हुआ। उधर से सारंगजाट के मरने पर जैचंद के ममेरे भाई प्रतापसिंह सौलंकी ने धावा किया उसके ताबे में छः हजार राजपूत थे जैचन्द की आज्ञा पाकर उसने अपने साथियों से कहा कि भाइयो चाहे जो हो पर चौहान भाग कर जाने न पावे। इसी तरह से और भी अनाई तनाई की बातें हांकते हुए प्रतापसिंह को आते देख कर लक्खन बघेला ने मूंठ पर हाथ रक्खा और अपने आराध्य इष्ट हनुमानजी का स्मरण करते हुए प्रतापसिंह के मुकाबले पर वहजा पहुँचा। वह बाएं हाथ से घोड़े की बाग थाम्हे और दहने हाथ से तलवार के वार करता हुआ जिस समय सौलंकी सेना में पैठ पड़ा उस समय आकाश मार्ग में स्थित सुर समूह भी उसकी प्रशंसा करते और पुष्प वृष्टि करते थे। घरी भर में सैकड़ों कमंध नाचने लगे। सिर इधर के उधर लुढ़कते फिरने लगे और भैरों भूत बैतालादि ताल देदेकर गाने और नितंब बजा बजाकर नाचने लगे। अप्सराएं उसके बरने की चिन्ता में व्यग्र थीं और गंधर्व गण उसकी हस्तलाघवता पर आश्चर्य चित हो रहे थे। निदान इसी तरह मारकाट करता हुआ जब तक लक्खन बघेला प्रतापसिंह के साम्हने आया तब तक उसकी तलवार टूट गई। इतने में प्रतापसिंह दौड़ कर उससे लपट पड़ा तब उसने कटारी से काम लिया। उधर प्रतापसिंह ने भी कटार निकाली और दोनों एक दूसरे के शरीर को छिन्न भिन्न करके एकही छन इस असार संसार से चल बसे। प्रतापसिंह को बेदम करके लक्खन बघेले का रक्तप्लावित कलेवर कटार का वार करता हुआ पुनः आगे बढ़ने लगा। इतने में किसी सिपाही ने उसे बीच से काट कर दो कर दिया परन्तु आंतों में लपटता और मतवारे की तरह झूमता हुआ वह आधा धड़ भी जब इधर उधर डोलता फिरने लगा तब किसी ने उसे भी खंड करके शान्त किया। कविचन्द कहता है कि सौ सामन्तों में से चंदलोक से भी परे जो गति सात सामंतो ने पाई सोई लक्खन बघेले ने पाई।

सात कमल ससि उप्परह, कन्ह चंद गोपन्द।
निडुर सलख वरसिंहनर, साख भरै सुर इन्द॥

क्या कहें! लक्खन बघेला ने ऐसा पराक्रम किया कि कुछ कहते नहीं बनता। जैचंद की सघन बनवत् चतुरंगिनी सेना में यह दवारि होकर लगा। उसकी उज्ज्वल तलवार की धार ही उस दवारि की लपट थी। धन्य बघेला वार मारते काटते धज्जी धज्जी होकर कट मरा मगर मजाल क्या कि मन में या आंख पर जरा सी मैल आ जाय।

निदान सारंगराय जाट के मारे जाने पर उधर जैचंद के जलेब के रिसाले के रिसालदार असोकराय ने स्वामी के सम्मुख आकर प्रार्थना की अब मुझे आज्ञा हो तो मैं पृथ्वीराज को पकड़ने का प्रयत्न करूं और इसपर जैचंद की आज्ञा पाकर वह निज के ताबे के आठ हजार सवारों सहित आगे को बढ़ा। उसे इस तरह बढ़ते देख सहदेवराय यादव भी जैचंद की आज्ञा लेकर उसके साथ हो लिया और तब दोनों अपने अपने दल लेकर पृथ्वीराज को पकड़ लेने के लिये उत्सुक होकर मोरचे पर आए। उन्हें इस तरह से ताव में भरा हुआ आता देखकर इधर पहाड़राय तूंअर ने तलवार की मूठ पर हाथ रक्खा। तूंअर पहाड़राय को खड्गहस्त होते देख पृथ्वीराज ने उसकी तरफ देख कर कहा। वाह धन्य हो पांडव वंशी वीर, आप उसी कुल में

उत्पन्न हो जिसकी सहायता में श्री कृष्णभगवान स्वयं थे और जिसकी पति रखने के लिये उन्होंने रथ तक हांका। इतना सुनतेही पहाड़राय का दिल दूना हो गया। उसने इष्टमंत्र उच्चारण करते हुए पृथ्वीराज को सिर नवाया और घोड़े को एड़ देकर फौरन असो कराय के सम्मुख वह जापहुँचा। अफसर के आगे सदा सौ दो सौ सिपाही रहा करते हैं। अस्तु पहाड़राय ने पहिले तो उन्हीं लोगों पर हाथ साफ करना शुरू किया और उस व्यूह बद्ध पंगदल के सवारों में इस तरह से झरपेंट करने लगा जैसे मांस के लोथड़े पर चिल्ह झपटती है। लोह पर लोह बजाता हुआ पहाड़राय ज्योंही कुछ पंद्रह पचास कदम आगे बढ़ा कि असोकराय स्वयं सांग की दोहत्था बांह भरे हुए उसके साम्हने आ गया और उसने जुड़तेही वार किया परन्तु पहाड़राय के वज्रवत् सीने पर उसकी सांग ने कुछ भी असर न किया। शत्रु का वार खाली देकर पहाड़राय ने ज्यों एक तलवार का वार किया कि असोकराय का सर धड़ से जुदा हो गया। अपने साथी असोकराय की यह दशा देखकर सहदेवराय से सहा न गया और वह भी दाहने हाथ से सांग ताने हुए पहाड़राय के साम्हने आया। ज्योंही पहाड़राय ने उसपर वार करने को हाथ उठाया कि उसने ऐन घंटी पर सांग छोड़ी। इधर उसकी सांग इसकी गर्दन फोड़कर पल्लेपार हुई उधर इसकी तलवार ने उसके रुंड से झुराड को अलग कर दिया। सांग के वारापार होने पर पहाड़राय के कण्ठ में से भरझोर रुधिर धारा बह निकली। परन्तु वह उसी तरह रुधिर में तरातर होता हुआ बराबर तलवार चलाता रहा और जब तक तन में तनिक भी स्वांसा का लेश रहा तब तक उसका हाथ न थम्हा। बड़ी देर लों लड़ते लड़ते पहाड़राय मूर्छित होकर गिर पड़ा और एक घड़ी बाद फिर से सचेत होकर मार करने लगा और जब मारते मारते पंग सेना के बारह सौ सवार मार कट सब दल पल बिचला दिया तब शान्त हुआ।

कवित्त।

बेद कोस हरसिंह, उभयश्रियत बड़ गुज्जर।
काम बान हर नयन, निडर निडुर भुमि सुमझूर॥
छग्गन पड्ड पलान. कन्ह खंचिय द्रगपालह।
अल्हबाल दादसह, अचल बिग्घ गनि कालह॥
शृंगार बिरुं सलखह सुकथ, लखन पहारति पंचचय।
इत्तने सूर सथ झुक्कतह, सोरोंपुर प्रथिराज अय॥१॥

निदान ६२ सामंत खेत रहने पर ८१॥ कोस जमीन पार कर चैत्र सुदि १० को ४ घड़ी दिन चढ़े राजा पृथ्वीराज सरोंपुर तक आ पहुंचा। जब पृथ्वीराज कन्नौजराज की भूमि लांघकर अपनी भूमि पर पैर देने लगा, तो यह देखकर जैचन्द के शोक चिन्ता का ठिकाना न रहा। वह भीतर ही भीतर हाथ मांस लेकर परऊपर से कड़क कर बोला बड़े आश्चर्य की बात है, बड़े खेद की बात है और बड़ी शरम की बात है कि इन सब शूरवीरों के रहते हुए भी अकेला पृथ्वीराज इस तरह से बेदाग निकल जाय। उसके ऐसे बचन सुनकर संयोगिता का मामा राजकुमार महादेवराव बोला कि आप तनिक भर भी सोच न करें मैं जाता हूं वीर पृथ्वीराज को पकड़ लाता हूं। यह कहकर वह षोड़सवर्षीय राजकुमार घोड़े को एड़ देकर पृथ्वीराज के पीछे पड़ा। यह देखकर उसका सहकारी लील प्रमार भी सारी सेना सहित उसके पीछे हो लिया। महादेवराव संयोगिता के मामा का लड़का था उसे आंख चढ़ा बढ़ता हुआ देख संयोगिता ने सहम कर सर नीचा कर लिया तब इधर से गुजरात के राजा भीमदेव का पुत्र कच्चरराय उसके मुकाबले पर जाने को सनद्ध हुआ। कच्चरराय के शरीर में पहिले भी बहुत से घाव आ चुके थे पर उनकी वह कुछ भी परवाह न करके अपने इष्टदेव भैरवजी का स्मरण करता हुआ पृथ्वीराज के पास गया और उसे सिर नवाकर आज्ञा चाही। पृथ्वीराज की आज्ञा पाकर ज्योंही वह राजकुमार मोरचे पर चलने को हुआ कि संयोगिता ने अपने गले से मोतियों की माला उतार कर उसके गले में पहना दी। गले में माला पड़ते ही

वह इस तरह से रोका उठा जैसे रामचन्द्र जी का बल पाकर सुग्रीव ने बाली को प्रचारा था। जिस समय कच्चरराय चंचला सी चमचमाती हुई तलवार निकाल कर शत्रु सेना में पिल पड़ा उस समय ऐसा जान पड़ता था मानो पार्थपुत्र अभिमन्यु चक्रव्यूह को भेदन कर रहा हो। इस किशोर वय राजकुमार ने ऐसा पराक्रम किया कि देखने वालों का दिल दंग हो गया। मनुष्य की तो बात ही क्या है उस समरभूमि में उपस्थित भूत बैताल भी उसकी बलाये लेते थे। उस समय उसका मुख मंडल साक्षात मंगल ग्रह के समान दमदमा रहा था और उसकी इकहरी कृपाण सौदामिनी के सौरभ को तिरस्कृत करती थी। वह जहां हाथ देता वहां बधिया बाकी न रहती बड़ी बड़ी दोहरी देह वाले जबरदस्त जवान दो होकर रह जाते थे। कच्चरराय का इस प्रकार विषम पराक्रम देखकर महादेव राव स्वय उसके साम्हने आया और उसने आते उसके सीने पर सांग का वार किया। उसी घड़ी इसने उस पर तलवार का वार किया। वह इधर उसकी सांग इसका पंजर पार कर गई उधर इसकी तलवार से उसका सिर तन से जुदा होगया। पर फिर भी दोनों दौड़ कर एक दूसरे से लपट गए और आखिर योंही गुथे गुथाए जमीन पर गिरे। उन दोनों षोड़स वर्षीय किशोर वय राजकुमारों का ऐसा ओज उत्साह और समरकौशल देखकर देवताओं का भी दिल दंग हो गया। उन्होंने उनकी स्तुति करके उनके कलेवरों पर पुष्प वृष्टि की और दिव्य विमानों में बैठी हुई देवाङ्गनाएं आकर इस संसार सागर से उनके हंसों को उड़ा ले चलीं।

महादेव राव के मारे जाने पर उधर से तीन हजार सवारों के साथ लीलराय प्रमार ने पसर की और इधर से उसके मुकाबिले मे धार का राजा जगदेव राव उतरा, ये दोनों सरदार बड़े डिलारे और अच्छे ऊंचे पूरे जवान थे। सारी सेना भर में उन दोनों के सिर हाथ हाथ भर ऊंचे मुनारे से उठे देख पड़ते थे। उनके शरीर पर के उज्वल सनाह की और सूरज की जोति एक हो रही थी। उनके सिर पर श्वेत श्वेत टोप तो ऐसे मालूम देते मानो गंगा जी को सिर पर रक्खे हुए दो मलयाचल चहल कदमी कर रहे हों। उन दोनों के हाथ में बड़ी बड़ी गेड़े की ढालें और लम्बे लम्बे दुधारे थे। वे दोनों स्वामि-धर्म-रसमाते वीर एक दूसरे पर बेकसर होकर वार करते, शत्रु को मारना चाहते और दांव पेच कर कर के अपना अपना बचाव विचारते थे पर उन दोनों मे से उन्नीस कोई न था इसलिये जब बड़ी देर लो फड़ रोप कर लड़ते लड़ते दोनो के दुधारे और कटार दोनों हथियार टूट गए और अगनित घावों के कारण दोनों के शरीर भी जर्जर हो गए तब उन्होंने एक दूसरे पर सांगें चलाई। बीच कलेजे पर सांगों की ठोकर खाने से दोनों बेसुध होकर चक्कर खाते हुए गंगा जी में जा गिरे।

राजा पृथ्वीराज कच्चरराय को बहुत चाहता था अस्तु जब महादेवराय और वह दोनों खेत रहे तब पृथ्वीराज को बहुत बुरा मालूम हुआ। इस समय ग्यारह सौ राजपूतों मे से केवल सौ मनुष्य बचे थे सो उनमें भी मरने मारने वाले केवल पैतालीस सरदार थे। शेष पचपन सागिर्द पेशा के आदमी थे। पीछे सोरो घाट की अगम अथाह गंगाजी भरी हुई थी और तीन तरफ से समुद्र के समान पंगदल चढ़ा आता था। इस समय पृथ्वीराज को निश्चय हो गया कि बचना कठिन है। यह बिचार कर और अपना मरना निश्चय ठान कर उसने संयोगिता को घोड़े पर छोड़ा और आप पैदल हो गया। उसने अपने इष्टदेव भगवान कृष्णचन्द्र आनन्दकन्द का स्मरण करके कंधे पर से कमान निकाली और शत्रु सेना पर वह सनासन बाण बर्षाने लगा। इस समय बारह बारह कर के चौबीस सामन्त संयोगिता के घोड़े के दोनों बगलों मे हो गए और शेष लोगों सहित जोगी जधारा भीमदेव जैचन्द का मोरचा रोकने को चला। एक हाथ मे तलवार और एक में कटार लिए हुए आगे भीमदेव और सेने

लिए हुए उसके पीछे चार सूरमा और चले। जीवन की आशा को तिलांजुली दिए हुए वे पांचों राजपूत जिस तरफ को सीधे हो जाते उस तरफ पंगदल के सैंकड़ों सिपाही काई से कटते जाते थे। तलवार पर तलवार पड़ने से लोह की चेली और आग की चिनगारियां उड़ती देख पड़ती थीं। जहां सेल या सांग लगती वहां से खून की सेंट बह निकलती और जहां तलवार का वार बैठता वहां से धारा बह निकलती थी। झलाझल झिलमो को फोर कर बीरों के कठोर कलेजे में बैठी हुई सांग ऐसी सुशोभित होती जैसे मल्लाह के जाल में से मछली निकली चली जाती हो अथवा धीमर स्वयं जाल मे से मछली निकाल रहा हो, इसी तरह से शत्रु सेना के बड़े बड़े बज्रकाय वीरों के कलेजे फोड़ता और कुलकलङ्क कपूत कायरो के कलत्र कँपाता हुआ वीर वारड़सिंह काम आया। वारड़सिंह को गिरते देखकर जंगमाला चंदेल उसके स्थान पर आया और बड़ी देर लों अत्यन्त पराक्रम करके अंत में वह भी धराशायी हुआ। इतने में करनाटक के एक सरदार ने दहना दबाव देकर झट बाईं ओर से छापा मारा परन्तु उस बाजू के रक्षक बिझमाल ने उसे आड़े हाथों लिया। वे दोनो चटपट परस्पर इस तरह से जुट पड़े जैसे ताजे मांस पर सिंह टूटे। उसने उसके खोपड़े पर हाथ दिया और उसने कंधे पर बस दोनों एकही दम दो से चार हो गए और दोनों के हंसा इस असार संसार से सदा के लिये पार हो गए। इतने में दो घड़ी और व्यतीत हो गई और इस अर्से में पन्द्रह सरदार पंगदल सेना के और पांच सरदार पृथ्वीराज के खेत रहे।

परन्तु पंगदल बराबर बढ़ता चला आता था और घरी घरी की कुशल परमात्मा के हाथ थी। ऐसा कठिन समय देखकर असिरूपी भस्म और शत्रु समूह रूपी पवन भक्षक, सर्प रूपी कटार से त्रिभूषित पंगदल रूपी कामदेव को मथन करने वाला गज चर्म को चीरने वाला दुष्टों के मुण्ड की माला बनाने वाला सिंधी का शत्रु करने वाला मस्तक में सदा शान्तरसमय चन्द्रमा को धारण करने वाला साक्षात शिव स्वरूप दृढ़ासन योगी जंधारा दृढ़ पैज से पंगदल रोप कर खड़ा हो गया और चार घड़ी पर्य्यंत अतुल पराक्रम करके जब वह भी इस दुःखमय संसार को त्याग कर शिवजी के स्वरूप में जा मिला तब अजमेर के किले के किलेदार सगरराय गौर ने मोरचा पकड़ा। इस वीर ने तो ऐसा पराक्रम किया कि सब के छक्के छुड़ा दिए। कविचंद कहता है कि वैसे तो स्वामिसेवा में सब सामन्त लड़कर मरे परन्तु आखरी खेत सगरराय का ही हाथ रहा अर्थात् उसके मरते ही फिर मातही हो गया। मार काट होते होते जिस समय अपनी माई का लाल सच्चा सपूत राजपूत बच्चा उद्धकुमार सगर राय गौर भी गिर गया उस समय दोनो दलों की विलक्षण दशा थी। न तो जैचन्द के दिल में पृथ्वीराज को पकड़ लेने की होस शेष थी और न पृथ्वीराज के हृदय में जीवन की आशा शेष थी। वाह रे राजपूतो खूब किया तुम्हारे सिवाय और किस का कलेजा ऐसा हो सकता है कि कटते फटते बेकाम हो गए पर तुम्हारे हाथों ने हार न मानी। हाथ करते करते हथियार भोथले हो गए पर तुमने मरने मारने से मुंह न मोड़ा। लोथ पर लोथ पटते पटते पृथ्वी तो थक गई पर तुमलोग पौरुषहीन न हुए, शिवाशिव! ज्यों ज्यो सार पर सार बजा त्यों त्यों तुम्हारा तेज तिगुना होता गया।

निदान दोनों दलों में द्वंद होते होते सुदी दसमी का भी दुपहर लौट गया। यद्यपि दोनों दलों के दिलों मे जय पाने की आशा शेष न थी पर उन्हों ने अभी मरने मारने से भी कच्ची नहीं खाई थी, गिरते परते मरते मारते हाथ पर हाथ देते जैसे तैसे तिल तिल जमीन जीतते चले जाते थे। अंत मे जब केवल चार घड़ी दिन शेष रह गया तब जैचंद स्वंय घोड़े पर सवार होकर पृथ्वीराज को पकड़ने के लिये चला पर गजमेल में जुमकते ही ज्योंही उसकी नजर संयोगिता पर पड़ी कि वह मुंह से पकड़ो पकड़ो पुकारते हुए बेहोस होकर जमीन पर गिर पड़ा।

यह देख कर उसके साथ के सरदार या सिपाही सब लोग घोड़े पर से उतर पड़े। किसी किसी फौजी सरदार की फिर भी पसर करने की इच्छा थी। पर समझदार राज्यकर्मचारियों ने कहा कि नहीं ऐसा ठीक नहीं। कन्नौज से यहां तक उनके केवल चौसठ सामंत खेत रहे पर अपने हाथ कुछ भी न लगा। अब तो पृथ्वीराज अपने राज्य मे आ गया फिर आगे क्या होगा सो किसने देखा। जैचंद का चित्त स्वयं मोहवश दुचिता हो रहा था अस्तु उसने भी इस बात को न काटा। और वहीं से वह पृथ्वीमाता को पांच परिक्रमा देकर यह कहता हुआ कन्नौज को लौट पड़ा कि हे राजसूय यज्ञ के बिगारने वाले और मेरी प्राणप्रिय पुत्री को हरण करने वाले पृथ्वीराज, दिल्ली का राज्य और अपनी प्रतिष्ठा और लाज आज तुझे दान देकर मैं कन्नौज को जाता हूं। यह कह कर बची खुची सेना सहित जैचन्द मलीन मन होकर घर को फिरा और नवदुलहिन संयोगिता सहित राजा पृथ्वीराज आनन्द की बंशी बजाता हुआ दिल्ली को चला।

इस प्रकार से अद्वितीय वीर्य्यवान चौसठ सामंतों और एक हजार अन्य राजपूतों को खपा कर केवल पैंतालीस सामंत और कुछ परिकर के लोगों सहित पृथ्वीराज ने एकादशी के दिन जंगल में पड़ाव दिया और वहां से कविचंद को दिल्ली में खबर देने के लिये भेजा। उधर संयोगिता का सम्बंध विचार कर विचारवान राजा जैचंद अछताता पछताता हुआ उलटा फिर गया। आगे पीछे की सब बातें विचार कर राजा जैचंद का हृदय अत्यन्त क्रोध लज्जा और इर्षा के कारण जला जाता था। परन्तु फिर भी वह मांस के लालच से फांसी मे पड़े हुए सिंह की तरह मन ही मन मसोस कर रह जाता था। उसने रास्ते में आते आते दोनों तरफ के मृत सरदारों की यथा विधि दाह क्रिया करवाई और साधारण सिपाहियों की लाशें हरि बोल कर गंगाजल मे विसर्जन करवा दीं। द्वादशी के सूर्य्योदय के बाद बीस पल पर कविचंद दिल्ली में जा दाखिल हुआ। वह सब से पहिले अपने घर जाकर अपनी एक कुमारी प्यारी सारिका से मिला और उससे सारा दुःख सुख कह सुन कर तब राजद्वार पर आया। वहां उसने कहा कि शत्रु समूह को शमन कर और सुन्दरी संयोगिता को साथ लेकर संभरीनाथ महाराज पृथ्वीराज दिल्ली को आ रहे हैं अस्तु जिसकी इच्छा हो सो दर्शन करने चले। यह सुखमय संदेसा सुनतेही बहुत से प्रजा के लोग और समस्त सैनिक सिपाही और सरदार तो उधर पेशवाई के लिये रवाना हुए। इधर कलकंठ से मंगल गीत गान करती हुई नवयोवना मंगल मुखी महिलाएं अपने अपने महलों के मोखों और झरोखों पर ऐसी लपक गईं जैसे तृन समूह पर अग्निज्वाला लपके अथवा कोई भारत की कथा सुनकर नाग कन्याएं अंतरिक्ष में जा विराजे।

निदान तेरस को सबेरे भीमदेव सौलंकी वग्गति राय, जैतराव प्रमार, जामराय यादव, लोहाना आजान बाहु, भरतसिंह पड़िता, जाजराय यादव, बलिभद्रराय, कूरंभ. ठंठरीराय चांटा, पीपा परिहार, लक्खन बघेला, हाहुलीराय हमीर, अचलेस भट्टी, चन्द्रसेन बड़गुज्जर, संग्रामसिंह बघेला, तेजझडोल प्रमार आदि घायल सामंतों की तैंतालीस डोलियों के बीच में चवालीसवीं संयोगिता की डोली लिवाए हुए राजा पृथ्वीराज दिल्ली में आया। उस दिन दिल्ली नगर की कुछ छटा ही निराली थी। जहां तहां अटारियों पर बैठी स्त्रियां आनन्द के अच्छत छोड़ रही थीं, द्वार द्वार पर नवीन कलश और वंदनवार सजे हुए थे और आबाल वृद्ध सब लोग खुशी के मारे फूले अंग नहीं समाते थे। राजद्वार की शोभा का तो कहनाही क्या है जहां हजारों मधुर स्वर बाजे बज रहे थे और चारण और कवि लोग राजा पृथ्वीराज की विरदावली पढ़ रहे थे। ज्योंहीं राजा ने राजद्वार के सम्मुख आ घोड़े से उतर कर पृथ्वी पर पैर दिया त्योंही सिर पर सोने के कलश लिए हुए सोलहों शृंगार और बारहों आभूषणों से सुसज्जित सैंकड़ों षोड़सवर्षीय नवयौवना नायिकाएं एक स्वर से मंगल गीत गाने लगीं। राज्य कर्मचारी और नगर के

सेठ साहूकार तथा सगे सम्बन्धी सरदार लोग हीरा, जवाहिर, रुपया, मोहरें और नाना प्रकार के पाटंबर और जरतारी वस्त्र राजा को न्योछावर करने लगे। पटरानी इंछनी अपने पति की आरती उतारने लगी और अन्यान्य रानियां अपने चिक्कन सूक्ष्म और मुलायम केशों से राजा पृथ्वीराज के पैरो पर की धूलि झाड़ने लगीं। क्या कहें उस समय दिल्ली के राज्यमहल सुरबीर को और वे रानियां साक्षात नागकन्या या देवांगनाओ को तिरस्कृत करती थीं।

अभी राजा पृथ्वीराज को दिल्ली में आए हुए दो दिन भी नहीं हुए थे कि राजा जैचन्द का भेजा हुआ श्रीकंठ प्रोहित विवाह की सब सामग्री लिए हुए आ पहुंचा। राजा पृथ्वीराज ने उसे बड़े आवभाव से लिया और उसे निड्डुरराय के घर में डेरा देकर उसका यथोचित आतिथ्य सत्कार किया। एक सप्ताह विश्राम करके राजा पृथ्वीराज ने वैसाख बदी पंचमी को प्रातःकाल बड़ा दर्बार किया और उसमें कन्नौज में काम आए हुए सामंतों के पुत्र पौत्रों को बुला कर उनके सिर सामंतपने की पगड़ी बांधी। उसने निड्डुरराय के पुत्र बीरचंद को बुलाकर अपने हाथ से उसका तिलक किया और इस बधाई में उसे बीस गांव पांच घोड़े और एक हाथी और सिरोपाव दिया। कन्ह चहुआन के पुत्र ईसरदास को पन्द्रह गांव एक हाथी और आठ घोड़े दिए। गोयंदराय गहलौत के पुत्र सामंतसिंह को बारह गांव और पांच घोड़े बधाई में दिए और चन्दसेन पुंडीर के पुत्र धीरपुंडीर को उसके पिताकी जागीर का पट्टा दिया। इसके सिवाय और भी सब सामंत पुत्रों को उनकी पैतृक जागीर के पट्टे सिरोपाव और मोती माला आदि देकर सब को उचित मान पान और सम्मान से संतुष्ट किया।

उसी दिन पुष्य नक्षत्र का वेध होने पर गोधूली बेला में व्याह होने का मुहुर्त था। कहा जा चुका है कि श्रीकंठ का डेरा निड्डुरराय की हवेली में दिया गया था, वहीं पर दहेज में देने के लिये जैचन्द का भेजा हुआ सब सामान सजाया गया। उसने दहेज में देने के लिये यह सामान भेजा था। जरीदार जड़ाऊ साज और गंगाजमुनी हौदे और अम्मारियों से सजे हुए एरावत के से पुत्र एक सौ आठ हाथी, जड़ाऊ जीन रेशमी पटे, और सुन्हरी पाखरों से सजे हुए अच्छे खेत के आठ हजार अच्छे अच्छे घोड़े और पलंग सेज सुपेती बरतन गहने और कपड़े और नगदी की गिनती कौन करे। निड्डुरराय के घर लड़की की तरफ का मंड़वा गाड़ा गया। कन्नौज से आई हुई संयोगिता की सखियों ने उबटन करके उसे मज्जन करवाया और यथा विधि शृंगार बनाव किया। उन्होंने संयोगिता के केश संवार कर बेणी गुही बीच बीच मे रंग बिरंगे सुगंधित पुष्प भरे। शीश पर शीशफूल लगाए, ललाट पर जड़ाऊ तिलक सँवारा, बड़े बड़े खंजन से नेत्रों में काजल लगाया, नाक में बेसर पहिनाई, मुख में तमोर खिलाया, कंठ में नाभी तक रुरती हुई मोतियों की माला पहिनाई, हाथों में चूड़ी, पटेले, नौगरई, पोहुंची, बरा, बाजूबंद और जोसन आदि सजे, कमर मे क्षुद्रघंटिका मेखला और करधनी पहिनाई, पैरों में नूपुर पैजनी और पाजेब पहिनाए और उसके सहज अरुणारे तलुओं मे महावर लगाया। यह ऊपरी सजाव बनाव तो किया ही गया परन्तु संयोगिता के लज्जामय कटाक्ष, मंद मुस्कान, नवीन वयः, मन की मनेज, रति में प्रीति, स्त्रियोचित भय, स्वामी से सच्चा प्रेम, शृंगार रस की सरसता, हंस की सी चाल, धैर्य्य, क्षमा, मीतमन-हारिणी शक्ति, उसके गुप्त स्थानों की सुन्दरता और कोमलता और स्वाभाविक शील यह सोलह शृंगार उस की शोभा के लिये अलम् थे।

गोधूली बेला होने पर दिल्लीपति पृथ्वीराज सब तरह से बन ठन कर और जड़ाऊ मुकुट माथे पर बांध कर घोड़े पर सवार हो अपने सिपाही और सामंतों सहित इस गली उस गली होते हुए निड्डुरराय के घर जा पहुंचे वहां जाते ही निड्डुरराय के पुत्र वीरचन्द ने महाराज का टीका किया और उन्हें सादर मंडप में लिवा लेगया। राजा पृथ्वीराज के

पटा पर बैठते ही मंडप में उपस्थित ब्राह्मणों ने जै जैकार की ध्वनि की। इतने में सखियों में मिली हुई संयोगिता भी मंडप में आई और राजा के बाएं पार्श्व में बैठ गई। कवि लोग बिरदावली बखान करने लगे और उधर से श्रीकंठ और इधर से गुरु-राम ने शाखोचार करके दंपति की गांठ जोड़ी।

निदान कन्या के कुल के और सब नेगचार भी वीरचंद ने किए और सकुशल व्याह समाप्त हुआ। व्याह के अन्त में भूरसी हुई और असंख्य धन ब्राह्मणों को दान दिया गया जिस समय संयोगिता अपने प्राण प्यारे पति के साथ राज महलों को चलने लगी तो सैंकड़ों मन चांदी के फूल और जड़ाऊ जेवर आदि न्यौछावर में लुटाए गए। राजा पृथ्वीराज संयोगिता सहित गद्दी पर विराजमान हुआ उस समय सैंकड़ों गनिकाएं स्त्रियां मंगल गीत गाती और नृत्य करती थीं, कवि और चारण लोग आशीर्वादात्मक कवित्त पढ़ते और ब्राह्मण लोग अचक्क दान मान पाकर स्वर से बचन बोलते थे। कनौज के राजा जैचंद का भेजा हुआ दहेज का जो सामान आया था सो महलों में जमा किया गया और पन्द्रह दिन पहुनई में रख कर चार घोड़े एक हाथी और बहुत सा धन रत्न देकर श्रीकंठ प्रोहित बिदा किया गया।

प्रिय पाठको! अब जरा इस अन्यन्य प्रेमी दम्पति के सुख सहवास की बात सुनिए। सच तो यों है कि जो एक दूसरे के लिये वर्षों से बेहाल हो रहे थे जिनके लिये हजारों जानें गईं उन दोनों का सुख सहवास उनकी हार्दिक उत्कंठा और उनकी प्रसन्नता का यावत् वर्णन करना किसी कवि की कथन शक्ति से बाहर है।

आग की तरह गरमी बरसाने वाले ग्रीष्म के दिन थे इसलिये सुन्दरी संयोगिता का सुहाग महल बरसाती बहार से सजाया गया। जहां तहां उत्तमोत्तम तरु और लताओं के तान बितान मय लता पता लगाकर उसी की शीतलता सरसाई गई। अगर के धुवें के मेघ बनाकर गुलाबजल की नन्ही नन्ही बूंदे बरसाई गई और नाना प्रकार के बरसाती पक्षियों की बोली भी सुनाई गई। वहां राज महल के उज्वल कलसे आप बिजली से दमदमा रहे थे और हास्यरस में निमग्न स्त्रियां स्वयं दादुरों को मात कर रही थीं। इसके सिवाय और भी नाना प्रकार के राग रंग होते और अप्सराओं के समान सजी बनी वाराङ्गनाएं सरस रस मय गीत गाती और नाचती थीं। रात्रि का विशेष भाग बीतने पर तीस आगे और तीस पीछे ऐसी साठ सखियों के बीच में गसी हुई संयोगिता पृथ्वीराज के पास आई। उसे देखते ही पृथ्वीराज ने बढ़ कर उसका हाथ पकड़ लिया और कलेजे से लगाकर उसे अपनी गोद में बिठा लिया। उस समय सुन्दरी संयोगिता के रस वस होकर पृथ्वीराज ऐसा मुग्धमन हो गया जैसे केतकी के पुष्प की सुवास पाकर भ्रमर सब भूल जाता है॥ ऐसा वीर ऐसा प्रतापी ऐसा चतुर ऐसा कामक्रीड़ा में कुशल और ऐसा विषय बिलासी राजा पृथ्वीराज किं-कर्त्तव्य-विमूढ़ होकर रह गया। अपनी प्रिया को ऊपर से नीचे तक भर नजर देखता और कुछ हाथ पैर चलाने की इच्छा भी करता पर फिर न जानें क्यों आपही आप झिझक कर रहता था। पृथ्वीराज की ऐसी विलक्षण चेष्टा देखकर संयोगिता की एक सखी असल मतलब ताड़ गई। उसने समझ लिया कि यह मनमुग्ध राजा पृथ्वीराज इस सुकुमारी कुमारी के शरीर की सूक्ष्मता और कोमलता देखकर डरता है। उस क्रियाविदग्धा सखी ने तुरन्त ही अपनी आंख के कोए से काजर ले कर गदेरी पर एक चित्र खींचा जिसमें उसने दिखलाया कि एक रसाल वृक्ष की नवीन कोंपों में हो कर कोमल कोमल मंजरी निकल रही हैं, उनमें से एक अत्यंत सूक्ष्म मंजरी पर एक मदोन्मत्त भ्रमर बैठा हुआ है। उस नवीन मंजरी का रसपान करता हुआ उनमत्त भ्रमर लुर लुर जाता है और उसी तरह उसके बोझ से दबी हुई मंजरी भी लचलच कर चौबाई हो हो जाती है पर न मंजरी टूटती है न भ्रमर रस लेना छोड़ता है। यह दृश्य दिखला

कर उसने कहा हे राजन आप तो वीर पुरुष हैं, जरा तलवार की बारीक धार का ध्यान तो कीजिए जो मदोन्मत्त दतारे हाथियों के कुंभस्थल को सहज ही काट डालती है। यह सुनते ही पृथ्वीराज के होश ठिकाने आ गए। और

(दोहा)

अलिय अलिय एकत मिलिय, रसरस वर संजोगि।
सो कविचंद त्रय वरस रस, पुह प्रगटित रति भोगा॥१॥

शुक्रचरित्र।

बासठवां समय।

सच है! तनमद, धनमद, राज्यमद और मद्यमद इन चार में से एक का भी जहां संचार तथा प्रचार होता है वहां सब चौपट होकर चौका लग जाता है फिर पृथ्वीराज के सिर पर तो ये चारों एक होकर के सवार थे। और सब सुखसारे तो उसे ईश्वर ने जन्म से ही दिए थे युवा होने पर उसने अपने सब शत्रुओं को परास्त किया और सब से सबल सुलतान शहाबुद्दीन को कई वार बंदी बना बना कर छोड़ दिया, बाकी थी कन्नौज की फैज सो वह भी पूरी हो गई। अब इस समय उसके कोटि रोम में से एक में भी किसी प्रकार के दुःख या खटके का लेश भी शेष न था। वह अपनी नवयौवना प्राण प्रिया के हिये का हार बना हुआ अहर्निशि के आठों प्रहर विषय बासना में बिताता था, वह अपने को पृथ्वी पर के सब प्राणीयों में श्रेष्ठ सुखी मानता और यह भी न जानता था कि सूर्य्य भगवान कब कहां से उदय होते हैं और कब कहां अस्त होते हैं।

एक दिन राजा पृथ्वीराज ने योंही मौज में आकर असाढ़ सुदि दुतिया को, अपने अंतर महल में एक महिलामंडल रचा। उस मडल में पंमारिनी रानी इंछनी आदि को लेकर सब रानियां उपस्थित थीं। जेष्ठा रानी होने के कारण अब तक रानी इंछनी ही पटरानी के पद पर थी और कभी कोई विशेष शुभ कार्य्य पाकर ऐसाही अंतरंग उत्सव होता तो रानी इंछनी ही गांठ जोड़कर राजा के साथ गद्दी पर बैठती थी। परन्तु अब की यह बात न हुई। इस बार पंग पुत्री रानी संयोगिता राजा पृथ्वीराज की अर्द्धाङ्गिनी बनकर गद्दी पर बैठी और रानी इंछनी को अन्य सब रानियों की भांति साधारण आसन मिला। यद्यपि यह बात और सब रानियों को भी बुरी मालूम हुई पर रानी इंछनी के कलेजे पर तो कील सी ठट गई। वह चतुरा चेत गई कि यह सब चरित्र मेरीही मानहानि करने को रचा गया है। वह प्रौढ़ा मनही मन उसासें लेती हुई सोचने लगी। हाय जिस प्राण प्यारे को मैंने अपनी प्रेम की प्रतीति या स्त्रियोचित विनय से आज लों अपना करके रक्खा उसके मन में आज इस सौति ने ऐसा अंतर डाल दिया। हा उसे भी क्या दोष दें उसकी चढ़ती जवानी है और मेरी अवस्था उतर गई है। योंही सोचती विचारती वहां से उठ कर वह अपने महलों में आई। एक तो एक साल से पति का सहवास न होने के कारण वह आपही काम बिथा की मारी मर रही थी ऊपर से दूसरा यह दुःख। बस वह मुरझाई हुई बेल की तरह झमी खाकर गिर पड़ी।

उसी छिन से छिन छिन पतिव्रता पंमारिनी इंछनी की कैसी दशा बदलने लगी सो कह नहीं सकते। अत्यन्त मन मलिन होने के कारण वह तन मलिन भी हो गई। जिस शरीर पर सदा चंदन चढ़ा रहता था उस पर अब मिट्टी पड़ी रहने लगी। अंजन बिहीन नैन सूने से हो गए और पान की पीक रहित मुख फीका पड़ गया और शृंगार विहार की कौन कहे उसका आहार भी कहने को रह गया। उसने बहुत दिनों से एक सुग्गा पाल रक्खा था बस बैठी बैठी उसी को दूध भात खिलाती और उसी को अपनी आंतरिक व्यथा की कथा सुनाया करती थी। योंही होते होते जब बहुत दिन हो गए तब एक दिन वह सुआ खिसिया कर बोला री रानी क्यों वृथा मुझ बरबस बंदे का सिर खाया करती है बहुत बकबक करेगी तो मैं तेरी ये सब बातें राजा से कह दूंगा। रानी बिचारी हाय सांस लेकर चुप हो गई, तब वह सुआ पुनः बोला हे सलख पुत्री मै जानता हूं कि राजा संयोगिता के हिये का हार हो रहा है और तेरा मन सौतियाडाह और विरह बिथा के कारण अत्यन्त बेकल हो रहा है पर किया क्या जाय! हां एक बात अवश्य है। यदि तू किसी तरह मुझे संयोगिता की चित्रसारी में रख सके तो अच्छा हो मैं भी तो देखूं संयोगिता में

ऐसा कौन सा जादू है, फिर कुछ बन पड़ा तो देखा जायगा। रानी इंछनी इस बात पर राजी हो गई। सच है, सर्वस विरोधी से रावरसम हो सकता है। बाप को मारने वाले से भी मन मिल सकता है पर सौति बैर सदा दिन दूना रात चौगुना होता जाता है। दो सौतें परस्पर इकट्ठी होकर मुंह देखी मीठी मीठी दो बातें भले ही कर लें पर असल में उनके जी की ज्वाला और भी जर्जरीभूत होती है। एक दूसरी को देखतेही उसके अंग अंग में बज्र सा लग जाता है। और वे ज्यों ज्यों एक दूसरी का आदर करती हैं त्यों त्यों उनके कलेजे में छेद होने लगते हैं। वे सदा एक दूसरी के लिये यही सोचती रहती हैं कि कब इसका सत्यानाश हो जाय और कब इसका धुवां देखूं।

दैवयोग से कुछ दिनों के बाद संयोगिता ने एक उत्सव किया और अपनी सब सौतों को न्योता दिया। स्त्रियां सहज से ही लोभी स्वभाव की होती हैं। वे एक एक डोरे के लिये लड़ लड़ मरती हैं फिर पति का प्रेम बांटने वाली प्रेम सौति का सुख सारा देखकर सिहायँ तो कैसे सिहायँ। पर किसी न किसी तरह सबने संयोगिता का न्योता मान लिया और पुंडीरनी, इन्द्रावती, हम्मीरनी, ससिव्रता, कूरंभी, कंचानी, हंसावती, और दाहिमी आदि सब रानियां नियत समय पर संयोगिता के महलो में जा पहुंची। सब के पीछे एक दासी से सुआ का पिंजरा लिवाए हुए रानी इंछनी भी जा पहुंची। वैसे तो रानी इंछनी उस सुग्गे को योंही अधिक प्यार करती थी पर फिर भी आज उसकी सजावट बनावट विशेष थी। सुग्गे के गले में हीरों की कंठी पड़ी हुई थी पिंजरे के ऊपर जड़ाऊ जरदोजी की झूल पड़ी हुई थी और भीतर सोने की कटोरियों में ताजा दूधभात परोसा हुआ था। रानी इंछनी संयोगिता की चित्रसारी में पहुंच कर देखती क्या है कि वह कमरा शृंगार रस के असल रसिया मनसिज का निवास स्थान बन रहा है। चारों ओर चोवा और चंदन का छिड़काव है बीच बीच में मृगमद के छींटे दिए हुए हैं। जहां तहां नाना भांति के लता पता एवं बेल बूटे सजे हुए हैं और उन पर बैठे हुए मलिंद वृन्द मंद मंद गुंजार कर रहे हैं। द्वार और द्वारियों में जरी के परदे पड़े हुए हैं और बीच मे रानी पंगानी का पलंग सजा हुआ है। बड़ी बड़ी आंखों में काजल लगाए और हाथों में कुंकुम का लेप चढ़ाए हुए संयोगिता रानी इंछनी से बड़े आदरभाव से मिली और दासी के हाथ में सुए का पिंजरा देखकर फौरन उसे अपने हाथ में ले लिया।

राजा पृथ्वीराज भी वहीं था। निदान कुछ देर में वह तो उठकर चला गया और सब रानियां परस्पर एक दूसरी को अपना अपना दुःख सुख सुनाने लगीं। वैसे तो औरतों की बातें हैं गोरखधंधेर से कम नहीं पर असल में सब का यही उलहना था कि आज एक साल से ऊपर हो चुका तब से हमने राजा का मुख नहीं देखा। न जाने ये पापी प्राण किस आशा बिधे शरीर मे रम रहे हैं। जैसे बरसात बीतने पर तलाब शनैः शनैः तट को छोड़ने लगता हैं, वृद्धापन में बुद्धि, और पावस गए मोर शोर करना छोड़ने लगता है उसी तरह अब प्रेमपात्री की जवानी उतरने पर पति की प्रीति भी कम होने लगती है। कुछ समय पश्चात् रानी संयोगिता ने सब को नाना प्रकार के पाट पाटम्बर और जरतारी सारी आदि अनेकानेक वस्त्र देकर विदा किया। निदान सब तो उठकर अपने अपने महलों को गई पर सुए के आसेर रानी इंछनी बैठी रही। अंत में वह भी यह कहती हुई उठ खड़ी हुई कि अच्छा तब इसे आज की रात अपनेही पास रखिए, ईश्वर चाहेगा तो इसके द्वारा सवेरे मुझे आपकी प्रेम कथा सुनने को नसीब होगी।

यह कहकर उधर तो रानी इंछनी अपने महलों को रवाना हुई इधर संयोगिता उस सुए का पिंजरा लिए हुए अपने अंतर आवास मे पहुंची। संयोगिता की उस अंतरशाला के देहरी द्वार, खिड़की, किवार और दीवारों में भांति भांति के सच्चे नग जड़े हुए थे, नाना प्रकार के चित्र खचित थे और भांति भांति

के बेल बूटे रचित थे। सोंधी सुगंधि भरपूर होने के कारण यहां माधव मास का आभास होता था और बीच में बिछा हुआ पर्य्यंक तो साक्षात मनोज महाराज की गद्दीसा छबि छा रहा था। उसी मुख्य आवास के आसपास भोजन मज्जन और शृंगार आदि के अलग अलग कोठे थे और वे सब अपने अपने रकम की आवश्यक सामग्रियों से सजे रहते थे। संयोगिता सुग्गे के पिंजरे को लिए हुए मज्जनागार में चली गई और अपने बदन पर से डोरा डोरा करके सब कपड़े और गहने अलग करके स्नान करने लगी। उस स्नानागार में जहां तहां गरम जल के हंडे और कंडालें भरे रक्खे थे, शरीर को स्वच्छ करने वाले भांति भांति के सुगंधित मसाले और तेलों से अलमारियां तर थीं, जगह जगह अग्निसदन बने हुए थे जिनमें अगर छुवाया गया था और अंग प्रत्यंग को धोकर साफ करने के लिये भिन्न भिन्न भांति के फुहारे बने हुए थे। वहां पर अपने सुकोमल शरीर को नख नख से धो मांज करके उसने सुगंधि लेपन की और फिर सुग्गे सहित शृंगारागार में आई। वहां उसने अपने कमर लों लटके हुए कारे सटकारे और सुकोमल केशों में कंघी लगाकर उन्हे साफ किया और फिर बीच बीच में रंग बिरंगे फूल गूंथ कर बेंदी गुही, ललाट पट पर जड़ाऊ तिलक संवारा, रुचि कर सुचि भौहें बनाई, कानों में ताटंक पहने, गालों को साफ किया, ठोढ़ी पर तिल जमाया, कुचों पर चोली कसी और और भी अंग प्रत्यंग को नाना प्रकार के गहनों से सजबज कर रंगदार नोनी सारी सँवार कर काम कैसी कमान टाढ़ी हुई। उसने फिर सुए को हाथ में ले लिया और चमकती हुई चल कर पुनः अपने अंतर अवास की चित्रसारी में चली आई। इस समय दिया लगने की बेला हो चुकी थी। अस्तु संयोगिता की चित्र सारी में तो दिवाली की बहार दिप रही थी। अतर और धूप की सुगंधि से चारों दिशाएं सुवासित होती थीं और उसके पौढ़ने का पलंग देखकर तो सुए का दिल दंग हो गया। पैताने से उसीसे तक सारी सज्जा प्रसूनों से इस प्रकार से सजाई गई थी मानो कामदेव रूपी भ्रमर को फांसने को फटेकी लगाई गई हो।

सुन्दरी संयोगिता ने अपनी सौति के दूत उस सुग्गे का पिंजरा एक तरफ रख दिया और आप प्रिय प्यारे की बगलगीर होकर पर्य्यंक पर पौढ़ गई। पहिले तो संयोगिता ने सुए के सबब से कुछ संकोच किया परन्तु जब हृदय में कामज्वर का अधिक जोर हुआ और विकट हरहराहट उत्पन्न होने से सारा शरीर थर थर कांपने लगा तब तो उससे रहा न गया और लज्जा को अलग कर दुकूल सम्हारती हुई राजा की छाती से चिपट गई। उस समय उस रसिक दंपति मे विपरीति केल रचा गया। चन्द्रमा चुपहोकर चिमा गया पर मृग भयभीत होकर भागने लगे किन्तु जब अंग अंग अनंग का रंग स्वेद होकर निकलने लगा तब तो लज्जा का नाम निशान बाकी न रहा, सारांश यह कि उन दोनों ने परम मनोहर केलि का आनन्द लूटा, उनका यह आनन्द बिहार देख कर इधर सुआ भी मनही मन मुसकाता और सब बातें एक एक करके चित्त में देता चला जाता था।

दुतिया के दिन जो कुछ थोड़ा बहुत लज्जा का अंश शेष था सो तृतिया को न रहा, तृतीया को था सो चतुर्थी को न रहा और चतुर्थी को था सो पंचमी को न रहा। इसी तरह पूर्णिमा तक काम की कलाएं पूर्ण होने पर संयोगिता राजा पृथ्वीराज के चित्त रूपी चंदा की चांदनी होगई। जवानी की जोर में शैशव की कसक निकल जाने से रस के फुहारे छुटने लगे और संयोगिता निपट निर्लज्ज और निर्भय होकर पति के साथ स्वतंत्र रूप से रमण करने लगी। पहिले दिन तो उसका यह हाल था कि हाथ पकड़ते ही हाय हाय करती थी। अपने हृदय सर्वस्व को प्रेम रस का प्याला पीने ही नहीं देती थी। पृथ्वीराज की नजर का रुख परख कर मुख मोड़ लेती और अंचल

[१] हलकेरे फंदे की झटकदार फांसी जिसमें छोटे बड़े सब जीव फांसे जा सकते हैं।

से आंखें ढांक कर खसकती फिरती थी। दूसरे दिन दाव में गस गई, तीसरे कसकती मसकती सिस कती और उसकती फुसकती अवश्य थी परन्तु कुछ संतुष्ट होने के कारण खिसकती न थी। चौथे दिन यह कुछ न रहा, पांचवें दिन हँस हँस कर बातें करने लगी और छठे दिन लज्जा को तिलांजुली देकर स्वयं राजा का हाथ धरने लगी। सातवें दिन रस का श्रोत सवाया हो गया, आंठवें दिन आठ अंग पूरे होने पर नवें दिन उसके अंग अंग में नौरस भरपूर भर गए। दसमी से दंपति प्रेम दिन दूना होने लगा और एकादशी को दोनों एक मन हो गए। द्वादसी को दून गठी। तेरस को लोकलाज पर पानी पड़ने लगा, चतुर्दशी को राजा का चित्त उसका चेरा हो गया और पूर्णिमा को तो पृथ्वीराज तन मन से संयोगिता का हो रहा। संयोगिता के रति रमण से पृथक होने पर जो उसके शरीर पर किंचित स्वेदकण झलक पड़े सो ऐसे सुशोभित होते थे मानो काम कारीगर ने इस मनोज मंजरी पर चन्द्रमा की किरचें काट कर पच्चीकारी की हो, पर कविचन्द कहता है, नहीं उस कुन्दकली सी लली के ऊपर प्रेम रस की ओस की बूंदे दरस रही थीं। अपने अप्राप्त पति को पाकर संयोगित के आनन्द का बारा पार न था। पर फिर भी निश्चित न होकर उसने राजा को ऐसे प्रेमजाल में फांसा कि जिससे निकल कर वह आजन्म भी किसी सौति के पास जाने की जी मे न लावें।

सबेरा होते ही सुआ रानी इंछनी के पास लाया गया और वह लगा रात की देखी हुई सब बातें कहने। तब एक सखी हँस कर बोली अरे सुग्गा तेरी ऐसी बातें सुन कर हम सब तो हँसती हैं पर एक मुग्धा वधू के लिये यह एक बड़ी लज्जा का कारण है, रे पक्षी पहिले पापों के कारण तो अबकी सुआ हुआ पर फिर भी तू पिंजरे मे पड़ने का काम करता है। सुआ बोला अरी रानी तेरी सौति बड़ी सयानी है। वह पहिले तो हाव भाव से ही पति का मन भर देती है फिर कोकिला के से मीठे बचन बोल कर उसका चित्त चुराती है और फिर गाढ़ आलिङ्गन में आड़े आने वाले आभूषणों को उतार कर तब पति के हिये की हार होती है। वह मुंह से हूंहूं करती और लज्जा से आंखें लुकाती हुई बड़े छल बल से अंगस्पर्श करने देती है। तब कहीं हृदय से लग कर पर्य्यंक पर पौढ़ती है और रसकोलि में प्रवृत्त होती है। गजब हुआ। जिस रस को रसिक दंपति के सिवाय दूसरा कदापि नहीं जान सकता पर वे भी अपने अपने होंठ दबा कर अपने मन का भाव एक दूसरे पर प्रगट नहीं होने देते उस रस को इस सुए ने सौति और सखियो को सुना कर गलियों में बहा दिया। यह समाचार सुनकर संयोगिता लज्जा के मारे गड़ गई और बहुत पछताई पर क्या करे अपनी आंख उघार कर आपही लाजों मरना था।

रानी इंछनी सुग्गे से बोली--अपनी सौति के विषय में जो मैं पूछूं सो बतलाएगा। सुग्गे ने उत्तर दिया हां पूछो। तब वह बोली कि उसके गुप्त अंगों का वर्णन कर। यह सुनकर सुआ बोला सुन जैसा उसका मूल अंग सूक्ष्म स्थूल रंच स्याही मायल असल सफेद है वैसेही उसके अन्यान्य अवयव भी इन चारों में से एक एक सिफत के सांचे है उसके हाथ पैर कमर और हृदय कमल अत्यन्त मुलायम एवं सूक्ष्म है। कुचमण्डल भूगमूल नितम्ब और जंघा स्थूल है उसके नख दंत कान और मांग उज्वल हैं और उसके कुचों का अग्र भाग आंखों के तिल सा श्याम है। हे रानी जब वह सोलहो शृंगार बारहों आभूषणो से सज बज कर सन्नद्ध होती है तो राजा पृथ्वीराज का दिल बेमोल मोल ले लेती है।

सुन रानी इंछनी जिस समय संयोगिता आनन्द में उन्मत्त होकर कलकंठ से मधुर मधुर गान करती हुई बेनी के बीचो बीच मालती की कलियां भरती है तो ऐसा आभास होता है मानो कलकल करते हुए जमुना जल में गंगा की धारा धस रही हो और सिर पर सुनहले सीसफूल जमुना में सुमेर शिखर से सुशोभित होते हैं। उसके चन्द्रमा से चौड़े चकरे और उज्वल ललाट पर केशर का तिलक उसके

शीश में श्री की सुरखी और नीचे कस्तूरी का बूंदा ऐसे सुशोभित होता है कि यह सूक्ष्म रूप राहू मंगल सहित अन्य सब ग्रहों का ग्रास किया चाहता है। उसकी बांकी भौंहे सर्पनी सी और सेत श्याम नेत्र साक्षात चन्द्रमा के कलेजे पर अंधकार सा चुभे जान पड़ते हैं उसकी नाक पर नीलम की तीली ऐसी जान पड़ती है जैसे छोटे छोटे चन्द्रमा और राहु लड़ रहे हों, उसके मुलायम और कामगीदार होंट, चन्द्रमा से चाक की हुई किरचें सी कपूर कुन्दकली एवं अनार कैसे दांत, अनंग के रंग से सीची, सरसिज सुमन के दल की तरह सुढार और रंगदार रसना, सचक्कन सुढ़ार गोलाकार गुलाबी मोती के सीप से गाल सोहते हैं। उसके कुचों के बीच में ढरती हुई मोतियों की माला मे मुख के सित असित और अरुण शृंगार की छाया गंगधारा में विद्रुम को लिए भृंग और मीन के उछलने की झलक मारती है और कुचों के ऊपर से पड़ा हुआ नौरत्नी हार तो ऐसा जान पड़ता है मानो त्रिवेणी का पूर्व्व वैर स्मरण करके कामदेव ने ज्वाल माला प्रचण्ड की हो और उसके कोर पर मोतियों का गसाव राहु को ग्रास करने के लिये चन्द्रमासा चढ़ता जान पड़ता है। जड़ाऊ बेल बूटेदार सुरंग कंचुकी के नीचे चीटियों की सी कतार रोमराजि देखते ही हृदय में सुरसुराहट उठाती है, क्षुद्र कटि तट में जड़ाऊ क्षुद्र घांटिका सिंह राशि पर नव ग्रहों सा गसाव जान पड़ता है, उसके भरी और गुदगुदे नितम्ब, मोटी सुढ़ार जंघा खराद की सी खरादी सुढ़ार पिंडुरी और केसर और महावर से रंगे हुए दर्पण से दुतिदार पतले पैर अजब ही छबि छाते हैं। उस के नख चन्द्रमा से चमचमाते हैं और पैरों में जड़ाऊ जेहर और पाजेब आदि गहने चन्द्रमा के दरबार में उड़गन समूह से जुटे जान पड़ते हैं।

हे रानी सो ऐसी उस कुसुमकली सी सुकुमार पंगकुमारी के प्रेम पाश में पड़ा हुआ राजा पृथ्वीराज गुरु बांधव और भृत्य आदि सब को भूलकर बसंत ऋतु के भौंरे की भांति बेसुध हो रहा है। बसंत ऋतु में जब जब प्रातः काल के समय शीतल को शीतल करने वाली सुगंधित पवन मंद मंद चलती है तो उसके स्पर्श से आनन्द से उन्मत्त मन भौंरी जाग उठती है और मालती की लता पर बेसुध सोए हुए अपने प्राण प्यारे भ्रमर के मुख पर लगे हुए पराग को पंखों से झालती हुई, मंद स्वर से प्रेममय गीत गाती हुई अपना मन समझाने लगती है परन्तु मालती की मुलायम डाली हिलने से ज्योंही मलिन्द की निद्रा भंग होती है त्योंही वह उड़कर किसी स्वच्छ सलिल मय सरोवर में प्रफुल्लित नलिनी में जा बैठता है और सूर्य्योदय पर नलिनी की कली बंद होने से वह सारे दिन उसी में बंद रहता है। सौभाग्यवश सायंकाल के समय नलिनी खिली और भौंरा उड़ भागा, उस समय भौंरी तो उसके पीछे पीछे लगी फिरती है, परन्तु वह रस लोलुप मालती लवंग सुगंधरा गुलाब, मौरसिरी, कुंद, करोंदा कलंब आदि सुगंधित कुसमों का रस लेता फिरता है। इसी समय संध्या की सरसर पौन जो डालियों को हिला कर झरझर शब्द उत्पन्न कर देती है उससे भ्रमर को भौंरी की पुकार भी नहीं सुन पड़ती। सो हे रानी तू उस बसंत ऋतु की विरहिनी भौंरी के समान है। हाय भौंरी तो केवल बसंत में यह दुःख भोगती है पर तेरे लिये अब बारहो मास बसंत है।

परन्तु पश्चात्ताप करने से क्या। सुन रानी ऐन आधी रात्रि के समय जब कुसुमायुध की सेना की पसर होती है तो एक ही छापे में लज्जा का किला लुट जाता है, दोनों के थर थर करते हुए अधर एक दूसरे से जुट पड़ते हैं और गाढ़ आलिङ्गन करके जब पृथ्वीराज अपनी प्रिया को पलंग पर लिटा देता है तो वस्त्र और आभूषण रूपी कवच छिन्न भिन्न होजाते हैं और पृथ्वीराज जंग के हाथ खेत रहता है परन्तु जब कर कंकन मुद्रिका क्षुद्रघंटिका चोटी चुटवंद कंचुकी भुजबंद बाजूबंद हिए का हार और नूपुर आदि साज शृंगार सम्हार के संयोगिता हँसती हुई राजा को पान देने लगती है तो उस समय राजा परास्त होता है और तेरी सौति विजयी होती है।

इस तरह से विजय पाकर जब महाराज मकरकेतु की प्रतिनिधि स्वरूप तेरी सौति संयोगिता आसन मार कर बैठ जाती है तो उसके सिर पर प्रीति का छत्र आच्छादित हो जाता है। हाव भाव विभ्रम कटाच्छादि उसके नीति चतुर मंत्रीगन अपने अपने कार्य्य में चंचलता दिखाने लगते हैं। बचन चातुर्य्य और स्नेह रूपी सेनानायक अपनी धाक बांध देते हैं। लज्जा रूपी पण्डित शास्त्र की मर्य्यादा समझाता है। इस प्रकार से उसके विजित शरीर रूपी प्रजा के सब प्रबन्ध हो चुकने पर मोह की शृंखला में बंधा हुआ राजा पृथ्वीराज रूपी बंधुआ इजलास के साम्हने लाया जाता है और तब रूप रस की बेड़ी पहिना कर उसे आजन्म कैद की सजा का हुक्म सुनाया जाता है। हे रानी इंछनी मैं क्या कहूं वे दोनों हंस हंसिनी की तरह एक पल भर का भी विछोह नहीं सह सकते। सौंदर्य्य रूपी समुद्र मे जवानी की तरंगे उठती हैं और एक दूसरे के गुण रूपी मोतियों को चुन कर वह जोड़ा अत्यन्त प्रेम के वशीभूत हो रहा है। गुरुजन भृत्य और राज-काज की कौन कहे राजा पृथ्वीराज अपने को भी भूला हुआ है।

हे रानी, संयोगिता के छवि रूपी समुद्र में स्नेह रूपी अमूल्य मोती भी है इसीसे शत्रु दल रूपी अंधकार को बिदारनेवाला चहुआन चन्द्रमा अन्य परिचारक रूपी चकवा चकवी एवं चकोरों की कुछ भी परवाह न करके उसी पर लटूट हो रहा है। स्त्री को स्त्री के स्वरूप की खूबी नहीं नजर आती इसी से कहता हूं कि संयोगिता संयोगिता ही है, उसके हृदय पर कठोर कुच ऐसे जान पड़ते हैं जैसे स्वर्ग से भागा हुआ मतवारा ऐरावत स्वयं उसके दिल में हुक रहा हो और उससे उसके कुम्भ निकल पड़े हो। और उन पर की श्यामता से मद की कालिमा का आभास होता है, उसका मुख मण्डल ऐसा प्रदीप्त होता है जैसे सूक्ष्म बदली में दबा हुआ सूर्य्य हो। उस पर हाथ की हवा लगने से मैल चढ़ती है उसके अंग प्रत्यंग मे अनंग का रंग कोल कोल कर भरा हुआ है उसके श्याम सेत और रतनारे दृग देखकर तीनों ताप नाश होते हैं उसका चन्द्रमा सा चमकीला ललाट पट देखकर साधु हृदय में सात्विक भाव उत्पन्न हो जाता है। आहा उसकी बाणी में क्या विलक्षण लावण्य है इसका बखान करना तो किसी कवि की कथन शक्ति से बाहर है। हे रानी इंछनी सौतिया भाव की रीस छोड़कर मेरी बात सच्ची मान कि संयोगिता सी सुन्दर दूसरी स्त्री है ही नहीं। चन्द्रमा मानों उसी के मुख लावण्य से चिढ़कर आकाश में चढ़ गया है। कामदेव मानों उसी के अंगों की लुनाई पर बारियां होकर अनंग हो गया है। उसी का कंठ स्वर सुनकर मानों कोकिला काली हो गई और नेत्रों की चंचलता लख हिरण बन मे जा बसे हैं इस लिये हे रानी अब तू आशा और शोक दोनों को त्याग कर शान्त हो जा। इसी में भला है।

उस चतुर सुग्गे ने जो कुछ कहा सो आबाल वृद्ध सबने सुना। रानी इंछनी की अवस्था पर सबको अफसोस हुआ जहां तहां लोग कहने लगे हाय परमेश्वर बुढ़ापा किसी को न दिखावे फिर विशेष कर स्त्री का बुढ़ापा तो और भी बुरा। यह चरचा उड़ती हुई राजा के कान तक भी जा पहुंची। उसने भी एक क्षण के लिये इंछनी की अवस्था पर विचार किया, परन्तु संयोगिता के प्रेम पाश के कारण उसके उद्धार का उपाय न विचार सका।

इंछनी बोली गंगाराम सच है होनी की औषधि एक मात्र संतोषही है पर क्या करूं सौतिया डाह सही नहीं जाती। यह सुनकर सुआ बोला अच्छा सुन एक राजनैतिक चुटकुला बतलाता हूं सो कर। यानी मुझे महलों से निकाल दे। यह सुनकर रानी इंछनी ने सुग्गे को सोने के पिंजरे में रखकर दो कंचुकियों को सुपुर्द किया और उन्हें आज्ञा दी कि वे उसे हाथी पर रखकर संयोगिता के महलों के साम्हने से ले निकलें। अस्तु ऐसा ही किया गया परन्तु जब राजा पृथ्वीराज की उस पर नज़र पड़ी

तो उसने सुग्गो का पिंजरा अपने पास मंगा लिया, यह देख कर लज्जा ग्लानि और क्रोध के कारण संयोगिता की नज़र चढ़ गई जिसे देखकर उसी समय सुआ बोला कि आज मैंने रानी इंछनी को आंखो नहीं देखा न जाने उसका क्या हाल है। इसके बाद उसने रानी इंछनी की सारी हार्दिक व्यथा कह सुनाई और अपनी बुद्धि के अनुसार राजा को साम दाम सब तरह समझाया। इस पर संयोगिता ने तो सुग्गो को झूठा बतलाकर बहुत बिराया पर राजा के मन में पतिव्रता इंछनी का अनुराग उत्पन्न हो आया और वह उसी समय वहां से उठ कर अचेत अवस्था मे पर्य्यंक पर पड़ी हुई रानी इंछनी के पास जा पहुंचा। पृथ्वीराज के सिर पर हाथ रखते ही रानी इंछनी पानी पड़ने पर मुरझाई हुई लता सी सचेत हो उठी। राजा ने उसे बहुत कुछ पोंछा पुचकारा और दिलासा दिया जिससे उस खिन्न मन माननी के जी मे जी आया। राजा पृथ्वीराज रात्रि भर उसी के महलों में रहा भोर के पहर जब राजा की कुछ आंख झपी तो स्वप्न में देखता है कि मानों उससे कोई कह रहा है कि हे पृथ्वीराज सचेत हो सब दिन बराबर नहीं जाते—

दोहा।

मान करें मतिहीन नर, जोबन तन धन रूप।
कौन नहि नदै गए, बिना ज्ञान रस कूप॥

आखेटक आप प्रस्ताव।

(तिरसठवां समय।)

सच है इस परिवर्तन शील और विषम संसार सागर में राव रंक कोई भी सदैव सुख की नींद नहीं सोता। एक जाती है तो एक आती है। सब के कलेजे पर एक न एक खटका लगाही रहता है।

जिस दिन से राजा पृथ्वीराज कन्नौज को पैन-कर के आया उस दिन से उसका चित्त और भी बेचैन था। क्यों न हो। यदि पाला हुआ सुआ पिंजरे से उड़ जाता है तो सारा घर सूना सा लगता है फिर उसके तो वे काका पोते मामा भांजे और ससुर सार आदि सगे सम्बन्धी सुर सामन्त समाप्त हो चुके थे जिनके बिना वह छिनभर नहीं रहता था। अपने सच्चे मदतगारों और प्यारे लंगोटिया यारों का बिछोह उसकी छाती पर त्रिशूल सा सालता था और इसी से वह निपट उचाट चित्त होकर हर दम गहरी साँसें लिया करता था।

राजा पृथ्वीराज को इस प्रकार मन-मलीन देखकर रानी इंछनी आदि सब रानियों ने हाथ जोड़कर बिनय पूर्वक उससे कहा कि महाराज! आप हमलोगों को शिकार का खेल दिखलाइए। हम देखना चाहती हैं कि सिंह मृग और सूअर आदि जंगली जन्तु किस तरह से मारे जाते हैं। बाराह बागुर में किस तरह से फंसता है, हिरण बाण से कैसे मारा जाता है, डोर से छोड़कर कुत्ते किस तरह छुछकोर जाते हैं और फिर वे अपने शिकार पर किस तरह से घात करते हैं। चीते क्या कौतुक करते हैं और चिड़िया चिड़ियों को क्यों मार लाती हैं। हम कुछ भी नहीं जानतीं। यह सुनकर पृथ्वीराज ने हँस कर कहा यदि तुम लोग वहां चलकर गोठ रचना स्वीकार करो तो चलूं। राजा की यह बात सब रानियों ने प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार कर ली और रानी संयोगिता ने सब खर्च अपने जिम्मे लिया।

वह रात्रि व्यतीत हुई और प्रातः काल हुआ। सितारों सहित तारापति अस्तमित हुए और तरु लताओं ने अपनी अपनी शिथिल शाखाओं को उत्थान दिया। योगी जन जप यज्ञ करने लगे और देवालयों में झालरें झंकारने लगीं। घर घर के किवार खुल गए और सब स्त्री पुरुष शैय्या से उठकर झटपट लज्जा से अपने अपने पट सम्हालने लगे। राजा पृथ्वीराज की भी निद्रा भंग हुई, वेद मंत्र उच्चारण करते हुए गुरुराम ने आकर आशी-र्वाद दिया और दर्शनी गो खूंटे से खोल दी गई। दरवाजे पर नौबत निशान बजने लगे, चोर चुप हो गए, सहनाई के स्वरों से दिशाएं गूंज उठीं। गायन गण गान करने लगे, पण्डित पोथी पुराण पढ़ने लगे और ज्योतिषी ग्रहों का जप दान करने लगे। उसी समय रानी संयोगिता शैय्या से उठी। उसने आंखे मलते हुए ही झगरूशाह को बुलाए जाने की आज्ञा दी और तदनुसार जब वह दरवाजे पर आकर हाजिर हुआ तब संयोगिता ने अपनी गुन-बेली, नवेली, मदनावती, मालती, कमला, बिमला, मोहनियां, सोहानियां, लीलावती, लाजमती, लालिता, कलिआ, रत्नावली, रामगिरी, जमुनिया, वल्लभा, कुंजबेली, जुही, सुहियर, मृनालिनी, गुलाला, मधु-मालती, मुग्धा, चंपाकली, सेवती और हरदासी आदि दासियों से कहा कि तुम झगरू शाह से समझा कर कह आओ कि उसे जितना द्रव्य आव-श्यक हो हमारे खज़ाने से ले और इसी समय पानीपत के बगीचे में जाकर गोठ के लिये रसोई की सामग्री प्रस्तुत कर रक्खे। भला खट्टे मीठे से कोई चीज छूटने न पावे। खांड, बताशा, शक्कर, गोरस, पीपर, अचार, हरदी, धनिया, मिर्च, सोंठ, चन्दन, केसर, कल्हरी, कपूर, लौंग, लाइची, आदि सब सामग्री यथा संभव शीघ्रही जुटा रक्खी जाय। संयोगिता का इतना आदेश होतेही एक के बाद दस दौड़ पड़ीं और शब्द प्रति शब्द सब बातें झगरूशाह को भी समझाआई।

संयोगिता की आज्ञानुसार झगरूशाह उसी स

इस साज समाज लेकर पानीपत जा पहुंचा और बगीचे को अच्छी तरह साफ सुथरा करा कर उसने एक तरफ गोठ का सामान रचा और एक तरफ रनवास के रहाइस का स्थान बनाया, पर यहां भी संयोगिता का डेरा सबसे अलग बगीचे के आग्नेय कोण में था जहां वह आप पति के साथ आनन्द लूटती थी और उसकी सौतें विरह की ज्वाला में जला करती थीं।

यह समाचार पाकर राजा पृथ्वीराज ने एक महीने पर्य्यन्त पानीपत में रहना निश्चय किया और सब रानियों को आज्ञा दी कि वे पहिले से वहां पहुंच कर गोठ की सामग्री रचें। उस समय प्रथा कुमारी भी वहीं थी। निदान रानी इंछनी आदि सब रानियां और पृथा कुमारी ने पानीपत की तैयारी की। प्रस्थान के समय सैकड़ों पालकी पीनस डोला डोली सुखपाल रथ बहली सुखासन और मुकाम वाले हाथी सजकर दरवाजे पर हाजिर हुए। अस्तु अपनी अपनी इछानुसार सब रानियां अपनी अपनी सवारी पर सवार हुई और उनके आस पास रंग बिरंगे वस्त्र पहिने लौंडी बांदियां चलने लगीं। वे बांदिया इत्रदान, पानदान, पीकदान, और सफरी जमदान लिए हुए लचक लचक कर चलती हुई ऐसी भली मालूम ती थीं जैसे झूम झूम कर सावन भादों के रंग बरंगे बदर दौड़ रहे हों। उनके पीछे पीछे लाठी ए हुए पुरुष के अंग से हीन खोजों के झुण्ड चलते थे, उनके भी पीछे या सबको घेरे हुए बीर वस्त्रासपात्र वृद्ध राजपूत योद्धाओं की फ़ौज चलती ऊपरी इन्तजाम के लिये साथ में चौदह कायस्थ और इस सब समाज का मुख्य अफ़सर गुरुराम प्रोहित था।

रनिवास की सवारी पानीपत जा पहुंची। झगरुराह की रुच कर सवारी हुई जगहों में रानियों के यथा स्थान डेरे पड़ गए। जब तक दास बांदियां डेरों का इन्तजाम करने लगीं क सब रानियों ने कहा चलो जब तक इस प्राण प्यारे के प्यारे बगीचे की भी सैर कर आवें। अस्तु वे सब रानियां एक झुण्ड होकर बगीचे में चारों ओर चहल कदमी करने लगीं तो देखती क्या हैं कि उस बगीचे की समतल क्यारी और रौंसों पर की बारी बड़ी ही रुचि कर बनाई गई है। भांति भांति के वृक्ष और बेल फल फूलों से लद रहे हैं और उन पर बैठे हुए नाना भांति क पंछी कल्लोल कर कर बोल रहे हैं। एक तरफ आम निंबू नारंगी निमुरियां और जामुन की कतारे लगी हैं। एक तरफ चंपा और चीनियां की भरमार है। एक तरफ नारियर सुपारी बदाम और पिंड खजूर खड़े हैं जिनकी डालों पर बैठे सुआ सारो चिकचिक करके चोंच चुभा रहे हैं। एक तरफ अनार ही अनार लगे हैं जिनके दानों पर पिडकी चोटें कर कर भागती हैं। किसी किसी हरे पेड़ पर लालों के झुण्ड के झुण्ड फुदक रहे हैं। बीच बीच में क्यारियों मे जूही मालती चमेली कुन्द गुलाब आदि फूल फूल रहे हैं और उन पर बैठकर गुंजार करते हुए झुण्ड के झुण्ड मलिन्द वृन्द झूल रहे हैं। एक तरफ़ केलों का बन है और एक तरफ़ दाखें लगी हैं तथा मूंगफली आदि के छोटे छोटे पेड़ फूलों से लदे खड़े हैं। इन सब की बरदास और सिचाई के वास्ते जहां तहां चरसे चल रहे हैं रहँट ढल रहे हैं और जहां कहीं उचाई के सबब से पानी नहीं चढ़ सकता वहां ढेकुरी से काम लिया जाता है। बाग की ऐसी बहार देखकर सब रानियों का चित्त प्रसन्न होगया।

रनिवास के पानीपत में पहुंच जाने का समाचार पाकर राजा पृथ्वीराज ने अपनी तैयारी की। जिस समय पवन के वेग को परास्त करने वाले तेज तुरी पर सवार होकर राजा पृथ्वीराज पानीपत को चला तो राजमंत्री जैतराव आदि सब राजपूत सरदार भी अपने घोड़ों पर सवार हो कर उसके साथ हो लिए। पीछे से भागते हुए हिरन को लपक कर लेने वाले बाराह और सिंह को पकड़ कर पछार देने वाले काले कान और लाल मुँह वाले कुत्तों की

डोरी पकड़े हुए डोरियें, आंखों पर पट्टे चढ़े रथ पालकी और बहलियों पर बैठे हुए चीतो को लिए हुए चीतेवान, जुरी कुत्ती बाजे पिटका सिचान और हुरमो आदि शिकारी चिड़ियों और फदेत हिरनों को लिए हुए बहेलिए आदि शिकारी परिकर के लोग भी चले। रोज़ दस दस कोस जमीन में शिकार खेलते हुए राजा पृथ्वीराज कुछ दिनों में पानीपत के जंगल मे जा पहुंचे। उक्त बगीचा अर्थात् सदर पड़ाव जब थोड़ी दूर रह गया तो राजा ने मैदान से मिलता हुआ एक मुंडा पहाड़ देख कर उसी जगह खेल होने की आज्ञा दी। सब सरदारों सहित पृथ्वीराज पहाड़ पर चढ़ गया और वहां उनकी लैगाई लगाई। पहाड़ के एक तरफ बांगरें लगीं और तीरंदाज बैठे और एक दूसरी तरफ कुत्ते छोड़ दिए गए। इधर से हेकों वाली बनरखों ने जंगल हांका। फिर क्या था चारों ओर मार मार होने लगी। एक पहर भर में सेकड़ों सुअर सांवर हिरनो को पाट कर पहाड़ लगा दिए गए। ससा शृगाल और सेइ स्यार की तो गिनती कौन करे। निदान दिन भर तो वहीं पड़ाव रहा। रात्रि के चौथे पहर कूच करके राजा उक्त बगीचे में जा पहुंचा और अपने प्राणपति की अवाई सुन कर सब रानियां अत्यन्त प्रसन्न हुईं।

पृथ्वीराज के डेरों पर पहुंचते ही भीतर से आ कर दासी ने समाचार दिया कि भोजन तैयार है। यह सुनतेही राजा ने वस्त्र उतारे और नव यौवना मदीनियों ने आकर सुगंधित तेल लगा कर राजा का मर्दन किया। मर्दन हो चुकने पर उसने उष्ण जमुना जल से स्नान किए और केसर रंजित चन्दन का लेप करके उसने श्राद्ध और तर्पण किया और फिर नित्य नियमानुसार ब्राह्मणों की सेवा करने के लिये आसन पर आ बैठा। उधर से पांच वेदपाठी ब्राह्मणों ने आकर राजा को तुलसी दल दिया और उसने उसे सिर पर धारण करके तलवार कटार से अपनी मौत मांगी। राजा ने उन ब्राह्मणों को चरणोदक लिया और उन्हें उचित आसन देकर आप पुनः अपने स्थान पर बैठ गया। खुरों में चांदी और सींगों में सोना मढ़ा हुआ ऐसी सर्वांग सुन्दर सौ गौएं लाई गईं उन्हें राजा ने ब्राह्मणों को दान दिया और फिर सिर पैर से उत्तमोत्तम वस्त्र आभूषणों से शृंगारित ६ कुमारी कन्याएं लाई गईं जिन्हें उसने नौग्रहों का दान दिया और फिर एक हजार वेद-पाठी और दिव्य ब्राह्मणों को इच्छा भोजन कराया। इस प्रकार से अपना नित्त नियम पूरा करके माथे पर जूड़ा बांधे ललाट पर त्रिपुंड लगाए, मुख से नन्दलाल का नाम लेते और हाथ में माला फेरते हुए ब्राह्मणों की मंडली में मिला हुआ देवता स्वरूप राजा पृथ्वीराज अटाले में गया। अटाले में भोजनों के लिये निर्मित समतल स्थान गोबों के गोबर से लीप कर स्वच्छ किया गया था और राख की चाकें खींच कर चौके काटे गए थे, प्रत्येक चौके में अंगारों से भरी हुई सिगरी रक्खी हुई थी। बीचों बीच राजा पृथ्वीराज के लिये एक मुलायम आसन बिछा हुआ था और साम्हने पीलीठ लगी हुई थी। राजा अपने आसन पर बैठा इधर उधर सब सामंत लोग भी पांती पांती से बैठाए गए और राजा के साम्हने कविचंद बैठा।

राजा पृथ्वीराज के आसन पर आसीन होतेही पण्डित मण्डली ने एक स्वर से ओंकार शब्द का उच्चारण किया और फिर वे दशशीश और बीस भुजावाले रावण को मारने हारे रामचन्द्र जी का गुणानुवाद गान करने लगे। पहिले साफ पानी से पखारे हुए नूतन पत्तों के पत्तल और दोनें रक्खे गए और फिर पवित्र और उज्वल ब्राह्मणों ने जिस की परस आरम्भ की। सबसे पहिले लड्डुओं की झावें निकाली गईं। इसके बाद पूरी सुख पूरी (मौन दी हुई) और गुठेनदार बेला कटी हुई लुचइयें परसी गईं। तदनन्तर पिठी की कचौरी, खस्ता, तेव

[१] जंगल में शिकार खेलने के लिये जानवर की अवाई के दल पर बेढ़ आने को लगाई कहते हैं।

[१] यह पीला जिस पर भोजनों का थाल आता।

सूचना ।

—o—

निम्न लिखित पुस्तकें "सेक्रेटरी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी" को लिखने से मिल सकती हैं ।

	मूल्य	डाकव्यय
मलिक मुहम्मद की अखरावट	।=)	)॥
कविवर बिहारीलाल–(बाबू राधाकृष्णदास) रचित ...	=)	)॥
हिन्दी के सामयिक पत्रों का इतिहास (बाबू राधाकृष्णदास रचित)	।)	)॥
ना-(पण्डित गंगाप्रसाद अग्निहोत्री द्वारा अनुवादित) ...	=)	)॥
बनादर्श-पद्य–(बाबू जगन्नाथ दास रचित)	≡)	)॥
कर्तव्यशास्त्र-(पण्डित नारायण पांडे रचित)	॥)	–)
बिसूचिका चिकित्सा	।)	)॥
रिश्चन्द्र–पद्य–(बाबू जगन्नाथ दास रचित) ...	=)	)॥
भगवद्गीता–(बाबू गदाधरसिंह द्वारा अनुवादित) ...	।–)	)॥
उथेलो–(बाबू गदाधरसिंह द्वारा अनुवादित) ...	≡)	)॥
नागरीप्रचारिणी पत्रिका (सभा द्वारा सम्पादित) १४ भाग छप चुके हैं (आठवां भाग नहीं है) मूल्य–प्रति भाग	१)	–)
हिन्दी लेकचर–(बाबू हरिश्चन्द्र रचित)	–)	)॥
ध्रुवदास की भक्तनामावली, टिप्पणी सहित	॥≡)	–)
सदलमिश्र की चन्द्रावती	।–)	)॥
सूदन कवि का सुजानचरित्र	२)	≡)
लाल कवि का छत्रप्रकाश	१।)	–)
नन्ददास की रासपञ्चाध्यायी	।≡)	)॥
प्राचीन-लेख-मणि-माला–१ भाग (बाबू श्यामसुन्दर दास लिखित ...	१)	–)
अशोक का जीवनचरित्र (ठाकुर सूर्यकुमार वर्म्मा लिखित)	।)	)॥
नेपाल का इतिहास (पण्डित नारायण पांडे लिखित)	।–)	)॥
पृथ्वीराजरासो–पहिला भाग (समय १–११)	४)	।)
,, दूसरा-तीसरा-चौथा भाग(समय १२–६१)	१८)	॥।)
कुमारसम्भवसार (पण्डित महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा अनुवादित)	≡)	)॥
भीधर का जंगनामा	॥।)	–)
धम्मपद (ठाकुर सूर्यकुमार वर्म्मा लिखित	।–)	।॥
सभा के पुस्तकालय की सूची	≡)	)॥
मनोविज्ञान (पण्डित गणपत जानकी राम दूबे लिखित)	॥)	–)
अमृतेश्वर का हम्मीर हठ	॥)	)॥

महिलामृदुवाणी (मुंशी देवीप्रसाद लिखित)	...	...	१)	-	
दादूदयाल की बानी	...	...	१।)	•	
कवि नूरमुहम्मद की इन्द्रावली १ भाग .	...	...	१॥)	=	
यूरोपीयन दर्शन (पण्डित रामावतार पांडेय लिखित)	...	...	॥।)	-	
प्रबोधचन्द्रिका	...	...	॥।)		
विरहलीला-आनन्दघन कृत ...	...	. .	=)	)	
दादूदयाल का सबद	...	...	१।=)		
जोधराज का हम्मीररासो		...	।र ५८	=	
सरल व्यायाम (बाबू कालिदास लिखित)	..	...	कराया।		
पद्माकर कृत हिम्मतबहादुर विरुदावली	...	...	। करके		
प्रतापनाटक			॥) मुद्र	९	
परिचर्या प्रणाली			)	३	
हिन्दीरेखाक्षर या शीघ्रलिपि प्रणाली	..	...	१)		
मित्रलाभ	...		-)॥		
दुःखिनी बाला	...		-)॥	)॥	
निःसहायहिन्दू	...		।)	)॥	
भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का जीवन चरित	...	. .	॥=)	-)	
गोभिलीय गृह्य कर्म प्रकाशिका	..	...	१।)		
अन्त्येष्टिदीपिका	...	.	।=)		
सुघड़ दर्जिन (बाबू ठाकुर प्रसाद लिखित)	...	...	।॥)	-	
वनिताविनोद ...			१)	=।	
नवीन दृष्टि में प्रवीन भारत		...	१।	-)॰	
गीतावली	...		।)	)॥	
योगदर्शन ...		.	२)	-)	
गुरु गीता ..			।)	॥)	

नोट—ऊपर लिखी पुस्तकों में से अन्त की १२ पुस्तकों को छोड़कर शेष पुस्तकें आधे मूल्य पर काशी नागरीप्रचारिणी सभा के सभासदों को मिल सकती हैं।